

अथश्री वेदान्त सिद्धांत मुक्तावली भाषापूर्वाद्धिगत
विषयानुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अथफलसहितटीकाके आरम्भ की प्रतिज्ञा५	आत्मामें श्रुतिप्रमाणकी अपेक्षा निरूपणापूर्वक अव्ययपदार्थका निरूपण२१
अथमूलग्रन्थव्याख्या प्रारम्भः५	अथपूर्वपक्ष। आत्मामें प्रमाण के अभावसे असत्यताका निरूपण२३
आत्माके चार विशेषणोंका फलनिरूपण६	आत्मामें तौकिकप्रमाणका अभावनिरूपण२३
शंकापूर्वकग्रन्थके व्याख्यान की योग्यताकानिरूपण७	अथ आत्मामें वेदप्रमाणकी वि- पयताकानिपेधनिरूपण२६
आत्मपदार्थकी विशेष्यता कानिरूपण१०	अथ एकदेशिवेदान्तीकी रीति से पूर्वपक्षका समाधाननिरूपण	२६
श्रुतिपदके अर्थकानिरूपण११	अथ एकदेशीकी रीतिसे अविद्या के आश्रय तथा विषयका भेद निरूपण३१
अथ पूर्वपक्षकी रीतिसे आत्मा में श्रुतिप्रमाणकी निषेधता और देहादिकोंकी आत्मरूपताका निरूपण१२	प्रत्यक्षादिकों में प्रामाण्यका निषेध३४
पूर्वपक्षके संग्रहका श्लोक१४	अथ एकदेशीके मतका खंडन४२
अथ पूर्वपक्षके निराकरणपूर्वक अव्ययपदव्याख्याननिरूपण१५		

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
आत्मा तथा सुखके संबन्ध		कार्मणतथा ब्रह्ममें तात्पर्य	
भावकानिरूपण ५१	निरूपण ६८
अथ स्वाश्रयास्वविषयाश्च वि		अज्ञानके एकत्वकानिर्धार ७१
द्याकानिरूपण ५२	अथ अज्ञानके एकत्वसाधन	
अथ जीवब्रह्मके भेदका खंडन	✓ ५४	काफलनिरूपण ७२
अथ भेदमें उपाधिके अभाव	✓	अथ अज्ञान तथा जीवके एकत्व	
कानिरूपण ५६	तथा अनेकत्वकथन करनेवाली	
अज्ञानको उपाधिरूपता		श्रुतियों की व्यवस्था कानिरूपणः ७३	
निरूपण ५८	अथ एकजीववादमें बद्धमुक्ता	
अथ औपाधिकभेदका खंडन	५८	दिव्यवस्थाका प्रकारनिरूपण	७६
त्रिविधतन्त्रताकानिरूपण ६०	अथ वेदके तात्पर्यका एक	
अथ अज्ञानको जीवब्रह्मप्रति		अद्वैतमें निर्धार ८३
योगिकभेदकी अधिकरणता		अथ पूर्वपक्षीकी रीतिसे अधि	
का निषेध ६१	कारीके अभावसे मोक्षका अ	
अज्ञानको शुद्धचेतन या श्रुत्व		भावनिरूपण ८६
औविषयत्वका स्थापन ६४	अथ स्वप्नदृष्टान्तमें द्रष्टाके	
शंकापूर्वक अज्ञानके एकत्वकी		एकत्वका प्रतिपादन ८८
प्रतिज्ञा ६६	अथ दार्ष्टान्तमें द्रष्टाके एक	
अथ अज्ञानमें लौकिकादिप्रमाण		त्वका प्रतिपादन ९४
के खंडनपूर्वकलाघवसहकृततर्क		अथ पूर्वार्थके अनुवादपूर्वक एक	
सेतिसके एकत्वका स्थापन ६७	देशिपूर्वपक्षीकी रीतिसे अज्ञान	
पूर्वकांड तथा उत्तरकांडरूपवेद		सत्ताकानिरूपण ९८
		अथ त्रिविधसत्ताके खंडनपूर्वक	

विषय	पृष्ठ
ख्यातियोंकास्वरूपनिरूपण	१०२
अथदृष्टिसमकालीनदृष्टि सृष्टिवादमेंप्रतिज्ञानसृष्टिका भेदऔरतिममेंप्रत्यभिज्ञाकेविरोध कीशंकाकासमाधाननिरूपण	१०८
शंका पूर्वक सुषुप्तिमेंप्रपंचा भाव की बोध कृता श्रुति को देवताऽधिकरणान्यायकीरीति से निरूपण	११३
अथ पूर्व पक्षी की रीति से पूर्वउक्तअर्थके अनुवादपूर्वक सर्पज्ञानसेजाग्रतज्ञानमें विल- क्षणताका निरूपण११५
पूर्व अर्थके अनुवाद पूर्वक इन्द्रियादिकों को प्रपंचज्ञान के प्रतिकारणताकाखंडन११६
अथ प्रमानिष्ठ कार्यता की दुर्निरूप्यता निरूपण१२०
अथ प्रमाण के विषय विवे- चन पूर्वक चक्षु आदिकों में प्रमाणाता का खंडन	१२२
मनकी करणाता के निषेध पूर्वक अविद्या मूलक प्रपंचोप	

विषय	पृष्ठ
लब्धिकास्थापन	१२६
शंकापूर्वकप्रपंचको अविद्यो पादानकत्वस्थापन ✓	१३०
अथ अवान्तर विषय की समाप्ति पूर्वक प्रपंच निष्ठ ज्ञात सत्ता केनिरूपणकाउपसंहार	१३१
अथ पूर्वपक्षी की रीति से अविद्याको प्रपंचकी कारणता का असंभव निरूपण	१३२
अथसिद्धांत सत्तथाअसत् कीउत्पत्तिकेनिरासपूर्वकअवि- द्या को जगत् कारणता की सिद्धि का प्रकार	१३६
परिशेषसे प्रपंच की अनिर्व- चनीयता के स्थापन पूर्वक अविद्योपादानकत्वकानिर्धार	१४४
अविद्या मात्र कारणवादमें वादी उक्त दोषों का परिहार निरूपण	१४५
प्रपंचके आविद्यक पक्षमेंपूर्व कांड निष्ठ प्रमाणाताका निरूपण	१४६
जगत्के आविद्यकत्वसाधन काफलतथादृष्टिसमकालीन	

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
दृष्टिसृष्टिपक्षका उपसंहार निरूपणा	१५०	का समाधान	१८८
अथ दृष्टि मात्र सृष्टिरूप दृष्टिसृष्टिवाद। तथाज्ञानज्ञेय केभेदका निराकरणनिरूपणा	१५१	प्रमाणाऽभाव से आत्मा में असत्त्वापत्तिका अन्य प्रकारसे परिहार	१९१
अथज्ञानज्ञेयकेभेदमें प्रत्यक्ष प्रमाण का खंडन	१५३	प्रमाणके अभावसे आत्मा मेंअसत्त्वापत्तिका अन्यप्रकार सेपरिहार	१९४
स्वप्रकाशप्रत्यक्षको भेदकी ग्राहकताकानिषेधनिरूपणा	१५४	आत्मा के असत्पने की शंका का अन्यप्रकारसेपरिहार	१९५
ज्ञान पर प्रकाश पक्षमें प्रत्यक्षां तरकोज्ञानज्ञेयकेभेदकी ग्राहक ताकानिषेध	१५९	प्रमाणाऽभाव से आत्मा में असत्पने की शंका का अन्य प्रकारसेपरिहार	१९७
अथ अनुमान प्रमाण को ज्ञानज्ञेय के भेद की ग्राहकता का निराकरण	१६१	अथ आत्मामें सर्वप्रमाणों कीविषयताकानिरूपणा	२००
अथज्ञानज्ञेयकेभेदमेंआगम को प्रमाणाताका निराकरण	१६३	अथ अनात्मा के भानका प्रकार निरूपणा	२०२
अथज्ञानज्ञेयकेभेदमें अर्था पत्ति प्रमाण का निराकरण	१६८	अथ स्वयंप्रकाश चिदात्मा मेंअज्ञानकी विषयताका अन्य प्रकारसेनिरूपणा	२०५
अथसिद्धांत निरूपणा	१८२	अथआत्माकीस्वयंप्रकाशता मेंअनुमानप्रमाण कानिरूपणा	२०६
अथप्रमाणाऽभावसे आत्मा मेंअसत्पनेकीशंकाकासमाधान	१८५	अथआत्माकीस्वप्रकाशताके साधकअनुमानका खंडन	२०६

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अथसिद्धान्तरीतिसेतिसअनु मानकामंडन	... २१३	अथशून्यादीकोअभिमत आत्माकेखंडनकाप्रकार २५३
अथपुनःशंकासमाधानपू र्वकआत्माकी स्वयंज्योतिरूप ताकाप्रकारांतरसेनिरूपण २१८	अथआत्माकीसुखरूपता कानिषेध २५५
अथआत्मासेभिन्नघटके स्वरूपकाखराडन २३०	अथदुःखाऽभावकीपुरुषार्थरूप ताकानिरूपण २६५
अथआत्मासेभिन्नकरकेसर्व अनात्माकाखराडन २३५	अथसिद्धान्त।पूर्वपक्षकेअनु वादपूर्वकआत्माकीपुरुषार्थरूप ताकामंडन २६६
शंकाकेनिराकरणपूर्वकज्यो तिपदकीव्याख्याका उपसंहार २३६	अथ आत्माकोसर्वशेषित्व निरूपण २७७
(इतिपूर्वाद्धिम्)		अथआत्मामेंसुखतथादुःखा ऽभावरूपताकानिरूपण २७८
अथउत्तराद्धिम् । -		अथज्ञानीतथाअज्ञानीकी विलक्षणताकानिरूपण २९०
अथआनंदपदव्याख्या २४०	अथआत्मसाक्षात्कारके करणकाविचार २९३
अथपूर्वपक्षात्आत्माकीपुरुषार्थ रूपताकाखंडन २४०	अथएकदेशीकेमतकीरीति सेपूर्वपक्षकाखंडनऔरमनको	
अथसिद्धान्तीद्वारा अनुपादे यत्वसाध्यकाखराडन २४७	आत्मसाक्षात्कारकीकरणा कानिरूपण २९६
अथपूर्वपक्षीकासमाधान । उपादेयत्वकानिरूपण २५२	शब्दकोसाक्षात्कारकीकरण ताकाप्रतिपादन २९८
अथआत्मामेंदुःखाऽभावत्व कानिषेध २५३		

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अथ अपरोक्षत्वका स्वरूप निरूपण ३०२	अथ स्वरूपभेदकानिरूपण	
अथ पुनः पूर्वपक्षमहावाक्यों में लक्षणाकानिषेध ३०६	पूर्वपक्षीकाममाधान ३४७
अथ एकदेशीकी रीतिसे महा वाक्योंमें लक्षणाकानिषेध ३१३	अथ किसीवादीकी रीतिसे भेदत्रयकानिरूपण ३५१
अथ एकदेशीके मतसे जीव के स्वरूपका विचार ३१५	अथ दोनोंभेदोंके निराकरण पूर्वकस्वरूपभेदका स्थापन ३५२
अथ महापूर्वपक्षीकी रीतिसे सिद्धान्तमुद्राको आश्रयणकर एकदेशीके मतका खंडन ३१७	अथ तटस्थकी शंकाके समा धानपूर्वकपूर्वपक्षका उपसंहार	३६०
अथ सिद्धान्तमहावाक्योंमें लक्षणाके संभवका प्रकार ३२२	अथ सिद्धांततत्त्वंपदार्थके शोधनपूर्वकवाक्यार्थनिरूपण	३६१
अथ साक्षीकी सिद्धिका प्रकारनिरूपण ३३३	अथ स्वरूपभेदका खंडन ३६८
अथ उभयपदमें लक्षणाका प्रकारनिरूपण ३३६	अथ अज्ञानकारणत्ववादिनी तथा ब्रह्म कारणत्ववादिनी श्रुतियोंके विरोधका परिहार निरूपण ३७४
अथ ब्रह्मात्माके अभेदरूप प्रमेयमें प्रत्यक्षादिप्रमाणोंके विरोधका परिहारशंकासमा धानपूर्वकनिरूपण ३३६	अथ अज्ञानकी असिद्धिका निरूपण । पूर्वपक्ष ३८०
अथ धर्मभेदके निराकरणका प्रकारनिरूपण । सिद्धांतीकी आशंका ३४३	अथ सिद्धान्तमहावाक्योंकी सिद्धिका प्रकारनिरूपण ३६०
		अथ पूर्वपक्षमहावाक्योंमें लक्षणाके संभवका प्रकार ३३२
		अथ साक्षीकी सिद्धिका प्रकारनिरूपण ३३३
		अथ उभयपदमें लक्षणाका प्रकारनिरूपण ३३६
		अथ ब्रह्मात्माके अभेदरूप प्रमेयमें प्रत्यक्षादिप्रमाणोंके विरोधका परिहारशंकासमा धानपूर्वकनिरूपण ३३६
		अथ धर्मभेदके निराकरणका प्रकारनिरूपण । सिद्धांतीकी आशंका ३४३

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
निराकरणका प्रकार ३१८	रूपताकी असिद्धि निरूपण ४३३
अथ सिद्धान्तरीतिसे वाधका		अथ एकदेशिसंज्ञेपशारीका	
स्वरूपनिरूपण ४०२	ऽचार्यके मतसे पूर्वपक्षका समाधान निरूपण ४१८
अथ पूर्वपक्ष। संज्ञेपसे अन्य		अथ एकदेशीके मतकी असमीचीनताकानिरूपण ४३३
ख्यातियोंके स्वरूपप्रदर्शन पूर्व		अथ एकदेशिविवरणाऽचार्य	
कअनिर्वचनीयख्यातिका खंडन	४०७	की रीतिसे पूर्वपक्षका समाधान	४३१
अख्यातिवादादिकों के खंडन		अथ एक देशीके मतका	
पूर्वकअनिर्वचनीयख्यातिका		निराकरण ४४१
स्थापन तथा वाधका उपसंहार	४०८	अथ सिद्धान्तरीति से पूर्व	
अथ पूर्वपक्ष। विद्या औ		पक्षका समाधान ४४२
अविद्याके विरोधका असंभव		अथ आचार्यकी कृतकृत्यता	
निरूपण ४१२	का निरूपण ४४५
अथ सिद्धान्त। विद्या		अथ आत्माकी आनंद	
तथा अविद्याका उपमर्द्य		रूपताके अस्फुरणमें प्रति	
उपमर्दकभाव लक्षण विरोध		बंधकनिरूपणद्वारा ग्रहद्वय	
निरूपण ४१४	पदकी व्याख्याका प्रारंभ।	
अथ पूर्वपक्ष। जीवन्मुक्ति		अथ पूर्वपक्ष ४५३
के अभावप्रतिपादनद्वारा संप्र		अथ आनंदरूपताके अभान	
दायकालोपनिरूपण ४१८	में प्रतिबंधकका विचार ४५५
अथ सिद्धान्त। तात्का		अथ द्वैतद्रष्टाके स्वरूपका	
लिक मुक्तिपक्षका स्वीकार		विचार और तिसकानिषेध ४५८
तथा संप्रदायके लोपका परिहार	४२८		
अथ पूर्वपक्ष। आत्माकी आनंद			

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अथगुरुशिष्यकेसंवादद्वारा		पुरुषोंकरतुच्छत्ववादकाअनंगी	
पुनःद्वैतद्रष्टाकेस्वरूपकाविचार	४६२	कारनिरूपण	४६५
अथसंक्षेपसेदेहात्मवादादि		अथश्रुतिप्रमाणसे तुच्छत्व	
कोंकानिरूपण ४६५	वादकाउपपादन	४६७
देहात्म वादादिकों का		विचर्तवादादिकोंकेस्वीकार	
निराकरण ४६७	की व्यवस्था तथा जगत्की	
अथसिद्धान्त ४७१	तुच्छतानिरूपणकाउपसंहार	५००
अथआत्मदर्शनसेसर्वजगत्		अथ अदृष्टद्वयपदकी व्या	
कादर्शननिरूपण ४७६	ख्याका उपसंहार ५०१
अथविधिनिषेधउपदेशकी		अथ आत्मासाक्षात्कारका	
व्यवस्थानिरूपण ४७७	फलतथातिसको निषेधमोक्ष	
पुनः द्वैतद्रष्टाके स्वरूपका		कीसाधनताकानिरूपण ५०२
विचार ४८०	अथ विद्यासेसंसारकीअनि	
द्वैतद्रष्टापदार्थकेअवयवन		वृत्तिनिरूपण ५१०
का निरूपण ४८१	अथ तत्त्वज्ञानसे संसारकी	
अथअसत्कानिर्वर्तकरूपकर		निवृत्तिकाप्रकारनिरूपण ५१२
शास्त्रकीसफलताकानिरूपण	४८१	अवान्तरप्रयोजन निरूपण	
अथअद्वैतनिष्ठअप्रामाणिक		तथाग्रंथकाउपसंहार ५१५
त्वशंकाकापरिहारनिरूपण	४८३	(इति उत्तरार्द्धम्)	
अथ द्वैतदर्शित्व पदार्थके		अथ मूलकारिकाकी भाषा टीका	
विचारनिरूपणपूर्वक द्वैतनिष्ठ		इति विषयानुक्रमणिका	
तुच्छत्वकाप्रतिपादन	४८४	ममाप्ता ॥	
अथलौकिक तथापरीक्षक			

❀ ओ३म् ❀

भूमिका

—०००००—

इस संसार मंडल में महा मोह रूप महान् शत्रु को तथा तिसकी कामादिक सैना को समूल नाश करने वाला विचारजन्य ब्रह्मात्मा का अभेदज्ञान एक ही अतिरथि योधा समर्थ है। जिसके होने से सत् ब्रह्म भाव की प्राप्ति तथा जिसके न होने से महान्-हानि की प्राप्ति श्रुति भगवती बोधन करती है ॥ तथाहि—

इहचेदवेदीदथ सत्य मस्तिनचे दिहवेदीन् महति
विनाष्टिः के० उ० ॥ २ ॥ १२

अ०—इस लोक में यदि यह मनुष्य ब्रह्म को अपना आत्मा रूप कर साक्षात्कार करता है तो सत्य ब्रह्म स्वरूप ही होता है। और यदि इसलोक में यह मनुष्य ब्रह्म को अपना आत्मा रूप कर नहीं जानता तो जन्मादि रूप अनंत विस्तारवाली हानि की प्राप्त होता है ॥ इति ॥ और तिस अभेद ज्ञान को सर्व अनर्थ का साधकपना तथा मोक्ष का साधकपना यह अर्थ भी श्रुति भगवती ने बोधन किया है तथाहि—

तमेव विदित्वाति मृत्यु मेतिनान्यः पन्था विद्यते
ऽयनाय ॥ अ० उ० ३-६।१५

अ०-तिस ब्रह्म को अपने आत्मा से अभिन्न जानकर ही यह पुरुष अज्ञान तत्कार्य को बाध करता है । इसलिये मोक्ष के अर्थ अन्य कोई साधन नहीं किंतु ब्रह्मात्मा का अभेद ज्ञान ही एक साधन है ॥ इति ॥ याते जो अधिकारी मनुष्य अभेद ज्ञानरूप अतिरथि योधा की शरण को प्राप्त होता है । अर्थात् साधन संपत्ति से अपने अन्तःकरण में तिसको संपादन करता है सो अधिकारी महामोह रूप शत्रु को सैना के सहित समूल नाश करके अमृत भाव रूप मोक्ष को प्राप्त होता है । यह अर्थ भी श्रुति में प्रसिद्ध है-

ज्ञात्वा देवं सर्वपाशाऽपहानिः ॥ श्वे० उ० ॥ १॥ ११॥

ये पूर्वं देवा ऋषयश्च तद्धिदुस्ते तन्मया अमृतावै
वभूवुः ॥ श्वे० ॥ १॥ ६॥

अ०-स्वप्रकाश ब्रह्मको अपने से अभिन्न मात्रात्कार करकरके यह अधिकारि । अविद्यादिपञ्च क्लेशरूप पाशोंको अत्यंतनाशकरता है । और पूर्वकाल में जिसदेवता तथा ऋषियों मनुष्यादि ने तिम ब्रह्मको अपना आत्माजाना वह सर्व ही मृत्यु से रहित ब्रह्मभाव रूपमोक्ष को प्राप्तहूये इति । और जिस आत्मज्ञान कामहान् प्रभाव देवराजइन्द्र ने महाराज प्रतर्दन के प्रति कथन किया है और मनुष्यों के प्रति अत्यंत हिततमरूप कर जिमका वर्णन किया है । यह वार्ता कौपीतिकी उपनिषद् मे प्रसिद्ध है । और श्री वसिष्ठ भगवान् जी ने श्री रामचन्द्र जी के प्रति जिम अभेद ज्ञानका ही वांवार उपदेश किया है । तथा श्री मद्भगवद्गीता मे श्री कृष्ण भगवान्

जी ने अनेक प्रकारसे जिस अभेद ज्ञान का प्रशंसन किया है ॥ और इस कलियुगमे होने वाले श्री शंकराचार्य तथा श्री गुरु नानक देव आदिक सर्वज्ञ महापुरुषों ने भी अभेद ज्ञान ही मोक्ष का साधन अनेक विध से निरूपण किया है ॥ इस प्रकार श्रुतिस्मृति इति हास पुराण तथा सर्वज्ञ पुरुषों को संमत वह अभेद ज्ञान ही मोक्ष के अर्थ मुमुक्षु जनों को अत्यंत यत्न से संपादन करने योग्य है । और भेद ज्ञान दूर से ही त्यागने योग्य है । क्योंकि भेद अनर्थ का हेतु है । तथा हि—

यदाह्यैवैषए तस्मिन्दुर मन्तरं कुस्ते अथ तस्य
भयं भवति ॥ तै० उ० ब्र० अ० ७॥

सर्वतंपरादाद्यो ऽन्यत्रात्मनः सर्वं वेद ॥

ब्र० उ० पै० ब्रा०

अ०—जिस काल में यह पुरुष इस ब्रह्मात्मामें अल्प मात्र भी भेद देखता है तिस को भेद दर्शन से अनंतर भय अर्थात् जन्मादि अनर्थ की प्राप्ति होती है । और सर्व ही तिस का तिरस्कार करते हैं । जो सर्व को अपने आत्मा से भिन्न जानता है ॥ इति ॥ इत्यादिक अनेक श्रुतियोंने भेदको अनर्थ की हेतुता प्रतिपादन की है । और पक्षपात से रहित होकर यदि विचार किया जाए तो व्यवहार भूमि में भी भेद दर्शन अनर्थ का हेतु है परमार्थ में भेद दर्शन को अनर्थ की हेतुता में तो क्या ही कथन करना है । ॥ तथाहि ॥ यदि राजा मंत्री को अथवा मंत्री राजा को अपने आत्मा से भिन्न जानता है तो दोनों द्वेष को प्राप्त होकर राज्य

संपदा से भ्रष्ट होजाते हैं और गृहस्थ में पति स्त्री को अथवा स्त्री पति को यदि अपने आत्मा से परस्पर भिन्न जानते हैं तो तिस द्वैत दर्शन से वह दोनो सांसारिक सुख से भ्रष्ट होजाते हैं । तैसे सूक्ष्म शरीर गत इन्द्रिय तथा मन एक भाव को यदि न प्राप्त हों तो वह किसी रूपादिक विषय के ज्ञान को नहीं प्राप्त हो सकते ! और स्थूल शरीर गत वात पित्त कफ यह तीनों दोष जब समता को त्याग विषमता रूप भेद को पाते हैं तब अनेक रोगों कर यह शरीर पीडित होता है । बहुत क्या कहें अद्वैत के आश्रयण से बिना कोई व्यवहार नहीं सिद्ध हो सकता । इस प्रकार व्यवहार दशा में भेद दर्शन अनर्थ का कारण है । और आत्मा से ब्रह्म का भेद दर्शन तो महान् जन्मादि अनर्थ का हेतु है इस कारण से अनर्थकारि भेद भ्रम को त्याग कर अभेद साक्षात्कार मुमुक्षु पुरुषों को अवश्य संपादनीय है यह सिद्ध हुआ । तिस अभेद ज्ञान के दो साधन श्रुति में प्रसिद्ध हैं । तथाहि—

तत्कारणं सांख्य योगाधि गम्यं ॥ श्वे० उ० टी० १३॥

अ०—वह प्रकृतकारणता उपलक्षित ब्रह्म सांख्य तथा योग करके विद्या द्वारा प्रत्यक्ष रूपता से प्राप्त होने योग्य है । और श्री कृष्ण भगवान् जी ने भी यह दो ही साधन अर्जुन के प्रति निरूपण किये हैं ॥ तथाहि ॥—

यत् सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ॥

एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विदते फलम् ॥

गी० ५ । ४ ।

अ०—जिस ब्रह्म को अपना आत्मारूप कर विद्या द्वारा सांख्यी अर्थात् श्रवणादिकों के अनुष्ठान करने वाले पुरुष प्राप्त होते हैं। तिसी ब्रह्म स्वरूप को योगी अर्थात् निर्गुण ध्यान करने वाले पुरुष भी प्राप्त होते हैं। इन दोनों साधनों में किसी एक को भी सम्यक अर्थात् सांगोपांग अनुष्ठान करता हुआ पुरुष दोनों के फल को अर्थात् मोक्ष को विद्या द्वारा प्राप्त होता है ॥ इति ॥ यद्यपि इस वाक्य में योगपद को निर्गुण ध्यान परता नहीं सिद्ध होसकती। क्योंकि गीताभाष्य में भाष्यकारों ने तिस पदको कर्म योग परताकर व्याख्यान किया है। तिन से विरोध होगा। तथापि योग पद को ध्यान में रूढ होने कर वास्तव से कर्म परता का अभाव है ॥ और इस वचन के मूलभूत पूर्व उदाहरण की हुई श्रुति में योग पद का ध्यान अर्थ भाष्यकारों ने शारीरक भाष्य में कथन किया है इस कारण से इस गीता वाक्य में भी योग पदध्यान का ही वाचक है। और कर्मयोग को मुख्ययोग अर्थात् निर्गुण ध्यान द्वारा ब्रह्मज्ञान की साधनता है। साक्षात् साधनता नहीं। इस अर्थ के बोधन करने के लिये कर्म विषयक योगपदका प्रयोग श्रीभगवान् जीका तथा तिसके अनुसारी भाष्यकारों का व्याख्यान कर्मपरता से संभवता है। याते तिनसे किंचित् भी विरोध नहीं। और गीता के त्रयोदशोऽध्याय में श्रीभगवान् जीने स्पष्ट ही आत्मविद्या के दोनों साधन विकल्प करके निरूपण किये हैं ॥ तथाहि ॥

ध्यानेनात्मनि पश्यंतिकेचिदात्मान मात्मना ।
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरं ॥

४० नी० १३ । २४ ।

अ० । शब्दादिक विषयों से श्रोत्रादिक इन्द्रियों को मनमे उपसंहार करके और मन को ब्रह्मात्मामे उपसंहारकर एकाग्रता से जोचितन है अर्थात् तैल धाराकी न्याई निरंतर विच्छेद रहित प्रत्ययों का नाम ध्यान है ॥ तिस ध्यान करके योग मार्ग में निष्ठा वाले कोईक अधिकारि अपने अंतःकरण मे ध्यान संस्कृत मन से आत्मा को ब्रह्मरूप कर साक्षात्कार करते हैं । और यह सत्व रज तम तीनों गुण तथा तिनके कार्य्य मुझ आत्मा के दृश्य हैं और मै गुण तथा तिनके कार्य्यों से भिन्न तिनके व्यापार का साक्षि नित्य गुणों से विलक्षण ब्रह्मस्वरूप हूं । इस प्रकार के विचार का नाम सांख्य है । तिस सांख्य योग करके सांख्य मार्ग में निष्ठा वाले कोईक अधिकारि अपने अंतःकरण में विचार संस्कृत मन से आत्मा को ब्रह्म रूपता से साक्षात्कार करते हैं । और कोईक अधिकारी कर्म योग से अंतस्करण की शुद्धि द्वारा सांख्य अथवा योग मार्ग मे आरूढ होकर आत्मा को देखते हैं । इति ॥ कोईक सज्जन योग मार्ग के अत्यंत प्रेमी सांख्य मार्ग को भी योग के अंतः पाति ही निरूपण करके योग मार्ग से विना आत्म साक्षात्कार का असंभव कथन करते हैं । परंतु यदि पक्षपात से रहित होकर पूर्व उक्त वाक्यों को तथा इनके सदृश और अनेक वाक्यों को अवलोकन किया जाय तो योग की

न्याई सांख्य नाम वेदांत विचार स्वतंत्र आत्म-साक्षात्कार का साधन है। और श्रीवसिष्ठ भगवान् जी ने वासिष्ठ ग्रंथ में बाहु-ल्यता से विचार को ही आत्मज्ञान की हेतुता निरूपण की है। तिन के कितनेक वचन यहां पर इसी अर्थ के बोधक लिखे जाते हैं।

सामान्येन विचारेण क्षयमायाति दुष्कृतं ।

योग्य वाक्य विचारेण कोनयाति परं पदम् ।

३० प्र० स० ८। ४१

अ०—यदि सामान्य से वेदांत विचार कर पाप नाश को प्राप्त होता है। तो अभेद बोधक वाक्यों के विशेष विचार से कौन अधिकारि परम पद को नहीं प्राप्त होता किंतु अवश्य प्राप्त होता है। इसी अर्थ को स्पष्ट करते हैं।

अज्ञान मुच्यते पापं तद्विचारेण नश्यति ।

पाप मूलच्छिदं तस्माद्विचारं न परित्यजेत् ।

स० ८। ४२

अ०—सर्व पापों का हेतु होने से यहां अज्ञान को ही बुद्धिमानों ने पाप कहा है वह अज्ञान वेदांत विचार कर नाश होता है। तिस से पापों का मूल अज्ञान जिस विचार से विद्या द्वारा बाधित हो जाता है। तिसी कारण से यह अधिकारि विचार को कभी न त्यागे। तथा—

वल्लिघत् प्रविवेकेन नित्योहमिति निश्चयात्

पदमासादयाद्वैतं पौरुषेणैवराधव । ३० स० २६। ४०।

अ०—हेराम बलि की न्याईं पुरुष प्रयत्न से तीक्ष्ण विवेक कर
नै नित्य ब्रह्मस्वरूप हूं ऐसा निश्चय उत्पन्न होता है तिससे तुम
अद्वैत पदमोक्ष को संपादन करो । तथाहि—

सर्वसंभ्रम संशांत्यै परमाय फलाय च ।

ब्रह्म विश्रांति पर्यंतो विचारो ऽस्तुतवानघ ।

अ०—हे निष्पाप श्रीराम सर्व भ्रमों को अत्यंत नाश करने के
लिये और परमफल अर्थात् मोक्ष के लिये और ब्रह्म में विश्रांति
पर्यंत तुम्हको विचार ही करने योग्य है । तथाहि—

नास्त्यविद्येति संजाते निश्चये शास्त्र युक्तिः

गलत्यविद्या तापेन तुषार कणिका यथा

उ० स० ३७।४०

अ०—शास्त्र तथा युक्तिसे अविद्या तत्कार्य तीनों काल में मुझ
ब्रह्मात्मा में नहीं है ऐसा निश्चय उत्पन्न हुए यह अविद्या कार्य
सहित बाधित हो जाती है । जैसे सूर्य के तेज से हिमकाकण
विनाश होजाता है । और—

विचारोत्थात्म विज्ञानं ज्ञान भंगविदुर्बुधाः

स० ८३।२१

अ०—हे प्रिय श्रीरामजी वेदांत विचार से उत्पन्न हुआ जो अपरोक्ष
ज्ञान है तिसी को तत्त्वदर्शी महात्मा ज्ञान कहते हैं । तिस विचार
का ही अभ्यास सर्वदा करना योग्य है यह कहते हैं ॥

अश्नन्गच्छन्स्वपंस्तिष्ठन्नितिराधवचेतसा ।
सर्वत्रप्रज्ञयातज्ज्ञः प्रत्यहंप्रविचारयेत् ॥

३० स० ८२ । १७ ॥

अ०॥ हे श्रीरामब्रह्मतत्त्वकाजिज्ञासुशुद्धचित्ततथा एकाग्रबुद्धि से सर्वदेशोंमें तथा सर्वकालोंमें अर्थात् भोजन करता हूया तथा गमनकरताहूया औ शयनकरताहूया तथास्थितहूया निरंतरब्रह्मात्मा का विचार करे । इति और—

अथातोब्रह्मजिज्ञासा—

इस वेदान्त शास्त्र के आदि सूत्र में श्रीवेदव्यासजी ने भी ब्रह्मज्ञानके अर्थ वेदान्त विचारही विधान किया है और महाभारत के शांति पर्वगत मोक्ष धर्म में स्वपुत्रके प्रति तिन्होंने दोनों मार्ग पृथक् निरूपणकरके सांख्यमार्गकोयोगसेश्रेष्ठताकथनकीहै । तथाहि सांख्ययोगौतुयावुक्तौमुनिभिः समदर्शैभिः । मार्गौतावप्युभावेतौसंश्रितौ न च संश्रुतौ ॥

मो० अ० १८६ । ८

अ० ॥ ब्रह्मदर्शनसम्पन्न मुनियोंने सांख्य तथायोग यह दोनों जो मार्ग कथनकियेहैं । वह दोनों ही मार्ग मुमुक्षुपुरुषोंने आत्मसाक्षात्कारके अर्थसम्यक् आश्रयणकियेहैं । तिनदोनोंमें सांख्यमार्ग में जपादिक्रियाका विधाननहीं । इसप्रकार दोनोंमार्गोंकोकथनकरके सांख्य तथायोगके अनुष्ठाना पुरुषोंके लक्षण और तिनकोब्रह्मविद्या द्वारा मोक्षकालाभ कथनकरके सांख्यमार्गको योगमार्गसे श्रेष्ठकथन किया । तहां नीलकंठी टीका ॥

सांख्ययोगपक्षयोर्मध्येसांख्यमेवश्रेय इत्याह ।
अथेति ॥

अ० ॥ सांख्य तथायोग इनदोनोपत्तोंमें सांख्यही बुद्धिमान् पुरुषको आत्मज्ञान द्वारामोक्षका श्रेष्ठसाधनहै । यहअर्थअगलेश्लोक में कहते हैं ॥

अथज्ञानप्लवांधीरोगृहीत्वाशांतिमात्मनः ।
उन्मज्जंश्चनिमज्जंश्चज्ञानमेवाभिसंश्रयेत् ॥

अ० ॥ गुरुके उपदेशसे अनन्तर यहविवेकादि साधन सम्पन्न पुरुष अपने मोक्षका साधन ज्ञानाभ्यासरूपनावको ग्रहणकरकेविषय रूप संसार सागर में ऊर्ध्व अधः को प्राप्तहोताहूयाज्ञानाभ्यासको ही सम्यक् आश्रयणकरे ॥

और सिद्धांतलेशकेसंग्रहकर्ताअप्ययदीक्षित आचार्यनेप्रथम श्रवणादिरूपसांख्यमार्गकोनिरूपणकरकेपश्चात्योगमार्गकानिरूपण किया और तिसयोगमार्गके निरूपणकीसमाप्तिमें यह कथन किया-

इयांस्तुविशेषः प्रतिबंधरहितस्यपुंसः श्रवणादि प्रणाड्याब्रह्मसाक्षात्कारोभाटितिसिद्धयति इतिसांख्य मार्गोमुख्यः कल्पः । उपास्त्यातुविलंबेन इतियोग मार्गोऽनुकल्पः ॥ मि० ले० १० ३

अ० ॥ परन्तु योगमार्गसे सांख्यमार्गमें इतनी विशेषताहै कि बुद्धिमंदतादिप्रतिबंधसे रहितपुरुषको श्रवणादिकों की परंपरासे ब्रह्म साक्षात्कारशीघ्रसिद्धहोताहै । यातेसांख्यमार्गही प्रधान्यतासेअनुष्ठान करने योग्य है और निर्गुणध्यानसे विलंबकरके ब्रह्मसाक्षात्कारसिद्ध

होता है। याने योगमार्ग अनुकल्प है अर्थ यह कि सांख्यके अलाभ हुए पश्चात् योग अनुष्ठान करने योग्य है। इस प्रकार शीघ्र सिद्धि का हेतु सांख्य मार्ग ही सुमुत्तुवोंको अनुष्ठान करने योग्य है। और जिस अधिकारिकी रुचियोग मार्गमें हो वह तिसीका अनुष्ठान करे इसमें कुछ आग्रह नहीं ॥ क्योंकि रुचियोंकी विचित्रता है। दोनोंका फल एक ही आत्मसाक्षात्कार है। याते दोनोंमें से जिस मार्ग में रुचि हो उसीको श्रद्धापूर्वक अनुष्ठान करे। केवल दोनों मार्गोंकी वार्तामें कुशल पुरुष फलको नहीं पाता ! फल तो किसी एक साधनके अनुष्ठानसे ही होगा। याते तिनके अनुष्ठान परायण सुमुत्तुको होना उचित है ॥ इति ॥ पूर्व श्रेष्ठ रूपताकर कथन किया जो सांख्यमार्ग है तिसमें यह भी विचारणीय है। बहुते आचार्योंके मतमें तो श्रवणमनन निदिध्यासन इन तीनोंका नाम सांख्य है। तथा विचार भी इन तीनोंको ही कहते हैं। और वार्तिककार सुरेश्वर आचार्योंके मतमें श्रवण तथा मननको ही सांख्यया विचार कहा है ॥ तथा हि ॥ बृहदारण्यक उपनिषद् के चतुर्थ तथा षष्ठ्यायगत मेत्रेयी ब्राह्मणमें यह पठन किया है—

आत्मावा अरेद्रष्टव्यः श्रोतव्यो मंतव्यो निदि-
ध्यासितव्यः ॥

तिसके अनंतर चतुर्थ्यां षष्ठ्यायगत मेत्रेयी ब्राह्मणमें यह पठन किया—

आत्मनोवा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेन ।

और षष्ठ्याय गत मेत्रेयी ब्राह्मण में यह पठन किया—

आत्मनि खल्वरे दृष्टेश्रुते मते विज्ञाते ।

तहां यह शंका रूप वार्तिक वचन है =

अनुवादेयथोक्तानां प्रकृते दर्शनादिषु ।

विज्ञानेनत्यथकथंनिदिध्यासनमुच्यते ॥ १ ॥

अ०—“आत्मा वाच्यरेद्रव्यः”

इत्यादि श्रुतिसे कथनकियेहुए दर्शनादिकोंका अनुवादप्राप्तहुए तिन दर्शनादिकोंके मध्यश्रवणकिया जो निदिध्यासनहे । सोविज्ञान पदसेकेसेअनुवादकियाहे । क्योंकिदर्शनादिदोंकासमानपदोंसेअर्थात् दर्शनादिपदोंसेही अनुवाददेखने में आताहे । याते निदिध्यासनका भी “निदिध्यासनेन” इस समान पदसेही अनुवादहोना योग्य था “विज्ञानेन” इसपदसेतिसका अनुवादकरनायुक्तनहीं ॥इति॥इसशंका का समाधान रूपवार्तिक वचन—

ध्यानाशंकानिवृत्त्यर्थं विज्ञानेनेति भण्यते ।

निदिध्यासनशब्देनध्यानमाशंक्यते यतः ॥२॥

अ० ॥ निदिध्यासनशब्दध्यानकावाचकहै । इसकारणसेश्रवण तथा मननसे अनंतर आत्मसाक्षात्कारका अंग रूपताकरध्यानही निदिध्यासनशब्दसे श्रुतिनेविधानकियाहै । ऐसीआशंकापूर्वपक्षिकी जिसकारणसेप्राप्तहोतीथी इसीकारणसेतिस आशंकाको निवृत्तकरने के लियेअनुवादकालमेस्थितहोकर पूर्वावाक्यमे “निदिध्यासन” जो है वह ज्ञानरूप विवक्षित है तहां तिसपदसे ध्यानविवक्षित नहीं याते“निदिध्यासितव्यः”इसपदसेपूर्वउक्तश्रुतिमेध्यानविधिकीआशंका काअवकाशनहीं।इसअभिप्रायवालीश्रुतिभगवती‘विज्ञानेन’इसविज्ञान पदसे निदिध्यासनकाअनुवादकरतीहै । इति । ध्यानकोअनुभवका अंगमाननेमे कौनदोपहे जिससे तिसआशंकाको श्रुतिनिरासकरती है ऐसीजिज्ञासाके हुए कहते हैं ॥

विज्ञानोत्पत्तिहेतुत्वं ध्यानादेः प्रागवादिषम् ॥

अ० ॥ ध्यानादिकोंको विज्ञान उत्पत्तिकी कारणतामे जो दोष कहनेयोग्यथासोहमपूर्वग्रंथमेविस्तारपूर्वककहयाएहैं। औरतिसीवार्तिक के अन्यस्थलमेभी यहअर्थनिरूपणकियाहै तत्त्वंपदार्थविषयकश्रवण तथा मननकाअनेकवार अभ्यासकरनेमेतत्त्वंपदार्थके लक्ष्यअर्थोंका निर्णयहुएवाक्यार्थज्ञानकाहीअवसरप्राप्तहोनेकरध्यानविधिकाअवकाश नहीं औरयदिऐसेकहोकितिनदोनोंसे प्रमाणतथाप्रमेयगतअसंभावना के निवृत्तहुएभी विपरीत प्रत्ययकर प्रतिबंध होनेसे वाक्यार्थरूपअभेद ज्ञानकी उत्पत्ति नहीं होगी तिसप्रतिबंधकेनिवारणकरनेकेलियेध्यान की आवश्यकता है सोयह कथनभीनहींसंभवता। क्योंकि श्रवणतथा मननका अनेकवार क्रियाजोअभ्यासतिसके प्रभावसेही विपरीतप्रत्यय की निवृत्तिभीसंभवतीहै। औरवाक्यार्थज्ञानकरनिवृत्तहोने योग्यविपरीत प्रत्ययकोवाक्यार्थज्ञानकाप्रतिबंधकपनाभीनहींसंभवता। क्योंकि लोक मे विपर्यय को स्वविरोधिज्ञानका प्रतिबंधकपनाकहीं भी देखा नहीं। यांतेविपर्ययकीनिवृत्तिअर्थध्यानकीअपेक्षानहीं॥इति।यदिनिदिध्यासन शब्द का अर्थयहां ध्याननहीं है तोतिसका क्याअर्थ है। ऐसीआकांक्षा के हुए कहतेहैं। वार्तिकवचन ॥

अपरायत्तबोधोऽन्ननिदिध्यासनमुच्यते ॥

अ०—“श्रोतव्यः” इसवाक्यमें अपरायत्तबोधही निदिध्यासन शब्दसे कहाजाताहै। जैसेध्यानमें पुरुष प्रयत्नकीअपेक्षाहै तेसे बोध मेंनहीं किन्तुपुरुष प्रयत्न अनपेक्षत्व है यहही तिस बोधमें अपराय तत्व है। ऐसे बोधके अर्थश्रवणतथा मननका अभ्यासकरने योग्य

है यह कहते हैं ॥

यावद्यथोक्तविज्ञानमाविर्भवतिभास्वरम् ।

श्रवणादिक्रियातावद्कर्तव्येति प्रयत्नतः ॥

अ०—यावत्कालपर्यंतपूर्वजैमाकथनक्रियाबोधप्रकाशात्मकप्रादुर्भाव
अर्थात् उत्पन्नहो तावत्काल पर्यंत श्रवण तथा मनन अत्यंत प्रयत्न से
अनुष्ठान करने योग्य है ॥ इति ॥ श्रवण तथा मनन के अभ्यास की प्रपक्वता
से आत्मसाक्षात्कार होता है यह कहते हैं ॥

श्रुत्वामत्वात्तु तं साक्षादात्मानं प्रतिपद्यते ॥

अ०—श्रवण तथा मनन की प्रपक्वता से उत्पन्न हुआ जो
तत्त्वपदों के लक्ष्यार्थों का निर्णय तिससे अनंतर यह अधिकारि महावाक्य
से ब्रह्मको अपना आत्मारूप करके साक्षात् अनुभव करता है ॥ इति ॥

इस प्रकार वाक्यार्थ के ज्ञानवाले पुरुष को कृतार्थता की प्राप्ति होती
है यह कहते हैं ।

अनन्यायत्तविज्ञानेश्रवणादेरुपायतः ।

जातेनापेक्षते किंचित्प्रतीचोऽनुभवात् परम् ॥

अ०—श्रवण तथा मनन रूप उपाय के अभ्यास से अपरायत्तबोध
के उत्पन्न हुए तिसकर अविद्या तत्कार्य की निवृत्ति पूर्वक निजस्वरूप
प्रत्यगात्मा में ब्रह्मभाव के स्फुरण से अनंतर यह अधिकारि किंचित्मात्र
भी अपेक्षा नहीं करता किंतु कृतकृत्यता को प्राप्त होता है ॥ इति ॥ इसरीति
से वार्तिककार के मत में श्रवण तथा मनन का नाम ही सांख्य है । यद्यपि
वार्तिककार का पूर्व उक्तश्रुतिका व्याख्यान माने हुए निदिध्यासनपद
की द्रष्टव्यपदके साथ पुनरुक्ति होगी ॥ क्योंकि दोनोपदों से साक्षात्कार

काही ग्रहणकियाहै । तथापिदर्शनका उद्देशकरके श्रवण औरमननके विधानसे अनंतरपुनःफलकाजोकथनहै तिसकोपूर्वउपक्रम कियेदर्शन के उपसंहार परताका संभवहोनेसे पुनरुक्तिकी शंका नहीं संभवती । अथवा द्रष्टव्यपदसे विचारके प्रयोजक आपात दर्शनका अनुवादहै । और निदिध्यासनपदसे विचारके फलभूत साक्षात्कारका अनुवादहै । इसप्रकार पुनरुक्तिकी शंकाका परिहार संभवता है ॥ इति ॥ इसप्रकार वार्तिककारसुरेश्वराचार्यके मतमे सांख्यमार्गमे ध्यानका अभावहै । और भाष्यकारोंकोभी सांख्यमार्गमे ध्यानका अभावसंमतहै । तथाहि—

एतेनयोगः प्रत्युक्तः ॥ शा० २।१।२

इस अधिकरण के भाष्य मे ॥

तत्कारणं सांख्ययोगाधिगम्यं ॥

इसश्रुतिकेव्याख्यानमेभगवान्भाष्यकारोंने यहकथनकियाहै ॥

वैदिकमेवज्ञानं ध्यानं च सांख्ययोगशब्दाभ्याम-
भिलष्येते ॥

अ०—पूर्वउक्त श्रुतिमे सांख्य और योग शब्दसे वेदोक्तज्ञान अर्थात् ज्ञानाभ्यास और ध्यान यह दोनों ही कथन किये हैं ॥ इति॥ और सांख्य मार्गमे ध्यानाभावके अभिप्रायसेही सर्वज्ञात्म मुनियों ने भी निदिध्यासन पदका ज्ञान ही अर्थ कहा है ॥ तथा हि—

श्रवणमनन बुद्ध्योर्जातयोर्यत्फलं तन्निपुण-
मातीभिस्त्वेरुच्यतेदर्शनाय। अनुभवनविहीनार्यैवमेवे-
तिबुद्धिः श्रुतमननसमाप्तौतन्निदिध्यासनंहि ॥ सं० शा०

अ०—श्रवण तथा मनन जन्य निश्चयके उत्पन्न हुए जो फल होता है वह कुशल बुद्धि वाले पंडितों ने आत्म दर्शन के अर्थ उच्च स्वर से कहा है इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं । श्रवण तथा मनन यह दोनों ही दीर्घ काल तथा निरंतर और आदर से अनुष्ठान किये हुए तिनकी प्रपक्वता से अविद्या के निवर्तक साक्षात्कार से भिन्न “यह इस प्रकार ही है” ऐसी जो बुद्धि उदय होती है अर्थात् मे चिदात्मा ब्रह्मस्वभावही हूं और ब्रह्मचिद् एकरस प्रत्यगात्म स्वभाव ही है । इस प्रकार जो तत्त्वंपदके लक्ष्यार्थका निर्णयरूप ज्ञानसो निदिध्यासनशब्द का अर्थ है ध्यान तिसका अर्थ नहीं ॥ इनके मत में भी श्रवण तथा मननही दीर्घकाल पर्यंत अनुष्ठान करने योग्य हैं निदिध्यासन अनुष्ठान करने योग्य नहीं । क्योंकि तिसके उत्पन्न हुए उत्तर काल में साक्षात्कार उत्पन्न हो जाता है । इस प्रकार जो आचार्य्य श्रवणादि तीनों को ही सांख्य कहते हैं । तिनके मत में भी निदिध्यासन ध्यान रूप विवक्षित नहीं । और जिन आचार्य्यों के मत में निदिध्यासन क्रिया रूप माना है तिन की रीति से भी वह योग मार्ग गत ध्यान से विलक्षण है । क्योंकि निदिध्यासन श्रवण तथा मनन पूर्वक ही होता है और ध्यान में तिन की अपेक्षा नहीं । और सांख्य मार्ग में ध्यानाऽभाव के अभिप्राय से ही स्वामि विद्यारण्य जी ने भी ध्यान दीप में ज्ञान के उदय होने पर्यंत विचार की कर्तव्यता ही विधान करी है ॥ तथाहि—

विचार्याप्यपरोक्षेण ब्रह्मात्मानं नवेतिचेत् ।

अपरोक्ष वसानत्वात् भूयोभूयो विचारयेत् ॥

विचार यन्नामरणां नैवात्मानं लभेत् चेत् ।
जन्मांतरे लभेतैव प्रति बंधत्तये सति ॥

पं० द० ध्या० दी० ३२।३३

अ०—यदि यह अधिकारिपुरुष वेदांतविचारकरकेभी अपरोक्षरूपताकर ब्रह्मात्मा को नहीं जानता । तौपुनः पुनः विचारका ही अनुष्ठान करे। क्योंकि अपरोक्षबोधपर्यंत विचारही करनेयोग्यहै॥१॥ और यदि किसी प्रतिबंधके बलसेमरणपर्यंतविचारकरतेहुएपुरुषकोभी आत्मसाक्षात्कार उदय नहो तो प्रतिबंधके नाशहुएदूसरे या तीसरेजन्ममें अवश्य आत्म साक्षात्कारकोयहपुरुषप्राप्तहोताहै।इति। औरतिसीपंचदशीगतआत्मानंद प्रकरणा के अंत में ध्यानसे रहित केवल सांख्यनामवाले विचारकोभीसर्व अंशमें ध्यानकेतुल्य आत्मसाक्षात्काररूप फलकीजनकतानहुतप्रकार से निरूपणाकीहै।इति। पूर्वउक्तसमग्र श्रुतिआदिक वचनोंका यहरहस्यहै॥ कि विचारकाअपरपर्याय सांख्यमार्गयोगमार्गसेभिन्नस्वतंत्रआत्मसाक्षात्कारकासाधनहै।योगसेविनावोधनहींहोतायहकईकपुरुषोंकाकथनश्रुति स्मृति तथाविद्वानोंके अनुभवसे विरुद्धहै । इसप्रकारमुमुक्षुपुरुषोंको आत्मसाक्षात्कारकासुगम तथामुख्यउपाय सांख्यसंज्ञकविचारहै । सो विचारश्रीशंकराचार्यतथा तिनकेशिष्यसंप्रदायमेंप्रविष्टसुरेश्वराचार्यादिकोंनेबहुतविस्तारसे स्वस्वग्रन्थों मे निरूपणाकिया ॥ तिन ग्रंथोंको अतिविरतृतथाकठिनदेखकर श्रीप्रकाशानंदसरस्वतीसंज्ञकमहानुभाव ने वेदांतसिद्धांतसुक्तावलीग्रन्थमें इसमार्गका निरूपण संक्षिप्त औ मनोहर युक्तियोंसे किया ॥ यहमहानुभाव श्रीसर्वज्ञात्ममुनियोंसे कुछ कालपश्चात्तहुएहैं । ऐसाअनुमानहोताहै ॥ क्योंकिउनकेवचनप्रमाण

रूपतासे अनेकस्थानोंमें इसग्रंथमें देखेजाते हैं । इनका रचनाकिया हुआ यह एकहीग्रंथभेदवादरूप अंधकारके दूर करनेको मार्तराडकी न्याईप्रसिद्धिहै ॥ इसग्रन्थकीअद्भुत रचनासर्वविद्वानों के चितकोरंज न करनेवाली तथाविस्मयकाजनकहै । औरएकहीप्रथमकारिकाका व्याख्यानरूप समग्र ग्रंथहै ॥ क्योंकि तिसमेंकथनकियेविशेष्य आत्म वस्तुके चारविशेषणोंकाहीविस्तारसे निरूपणसमग्रग्रंथमेंहै । और तिन विशेषणोंके निरूपणकालमें प्रसंगसे प्राप्त अन्यभी वेदांतप्रक्रियाका समस्त तथाव्यस्तरूपतासेनिरूपण है ॥ तथाहि ॥ प्रथम देहादिकों की आत्मरूपता पूर्वपक्षीकी रीतिसे कहकर सिद्धांत मेदेहादिभिन्न आत्माकीसिद्धि तथाअव्ययपदकी व्याख्यानिरूपणकी।पुनःएकदेशी कीरीतिसे अज्ञानके आश्रय और विषयका भेदकहकर सिद्धान्तमतमे अज्ञानके आश्रयऔ विषयकाअभेदनिरूपण किया । औरपुनःतिस मे उपयोगी जीवब्रह्मके स्वाभाविकतथाऔपाधिकभेदका खंडनकरके अज्ञानतथाजीवकाएकत्वस्थापनकिया।और पुनःउत्तमअधिकारियोंको अद्वैतबोधमेंउपयोगी एकजीववादमेंबंधमोक्षादि व्यवस्थाश्रुतिप्रमाण पूर्वक अनेक युक्तियोंसेस्थापनकी। औरसर्वअनात्मपदार्थोंकीअज्ञात सत्ताकाखंडनकरके ज्ञातसत्तातिनमेंस्थापनकी । औरतिसकेअवांतर मध्यमअधिकारियोंको दृष्टिसमकालीनसृष्टि पक्षकाभीनिरूपणकिया। औरपुनःउत्तम अधिकारियोंकेलिये ज्ञानज्ञेयकाभेद अनेकयुक्तियोंसे निराकरणकरकेदृष्टिमात्रसृष्टिपक्षकानिरूपणकिया।पुनःप्रमाणकेअभाव सेआत्माकोअसत् कहनेवाले नारितकका पक्षअनेकयुक्तियोंसेनिराकरणकरकेआत्माका स्वतःसद्भावऔरखयंज्योतिपनानिरूपणकिया ।

औरपुनःविशेष्यआत्म पदार्थकानिरूपणकरके तिसमेंअपुरुषार्थत्वकी आशंकाके निषेधपूर्वकतिसकीपरमपुरुषार्थरूपतानिरूपणकी। तिसके अनंतरआत्मसाक्षात्कारमें एकदेशिकेमतसेमनकोकरणाता दिखलाकर तिसके निराकरणपूर्वक महावाक्यरूप शब्दको करणतास्थापनकी। तिसके अनंतर महावाक्योंमें लक्षणाकेअभावकी शंकाकरके तिसके निषेधपूर्वकभागत्यागलक्षणाका निरूपणतथा बीचमेंही लक्ष्यार्थके उपस्थायकसत्यादिपदोंमें शक्तिवृत्तिसेलक्ष्यार्थका उपस्थापकत्वनूतन रीतिसेप्रतिपादनकिया। औरपुनःअनात्मप्रतियोगिकऔरआत्मअनु-योगिकधर्मभेद तथा स्वरूपभेदका निराकरणअनेक नूतनशुक्तियोंसे करकेप्रपंचमेंमित्यात्वकी सिद्धिकेअर्थब्रह्मकारणत्ववादिनी औरअज्ञान कारणत्ववादिनी श्रुतियोंका परस्परविरोध परिहार करके साक्षिसिद्ध अज्ञानकोप्रपंच भ्रममेंनिमित्तमात्रतास्थापनकी। औरपुनःअज्ञानकी असिद्धिकी शंकाके निषेधपूर्वकभ्रमसिद्ध अनादिअनिर्वचनीयत्वादि रूपअज्ञानकास्वरूप निरूपणकिया॥ औरपुनःअज्ञानादिकोंकेबाधका स्वरूप निरूपण में एक देशियोंकी रीतिसे बाधका स्वरूप निषेधकर के नूतन रीतिसे बाधकास्वरूपनिरूपण किया। औरतिससे अनंतर विद्या औ अविद्याके विरोधका स्वरूप निरूपण करके एक जीववादमे गुरुशिष्यकीपरम्परारूपसंप्रदायकेलोपकी आशंकाकासमाधाननिरूपण किया॥औरपुनःआनंदस्वरूप आत्मामे आनंदत्वादि धर्मनका विचार चलाकर आनंदत्व सामान्यतथा आनंदव्यक्ति उभयरूपताआत्माकी अपूर्वरीतिसे प्रतिपादनकी ॥ औरतिससेअनंतर आत्माकी आनन्द रूपता दृढकरानेकेलिये अद्रयानंदके आविर्भावमेंमिव्याद्वैतदर्शनको

प्रतिबंधकपना निरूपणाकिया। औरपुनःद्वैतदृष्टाके स्वरूपविषयकगुरु शिष्यद्वारा अनेकप्रकारका विचारचलाकरद्वैतदृष्टाका अभावनिरूपण करकेआत्माकी अदृष्टद्वयता प्रतिपादनकी औरखीचमेंही उत्तमअधिकारियोंकेप्रति प्रपंचका तुच्छवाद और मध्यम अधिकारियोंके प्रति विवर्तवादभी अनेकयुक्तियोंसे निरूपणाकिया ॥

औरपुनः विद्वन्केअनुभव सिद्धकृतकृत्यताकोनिरूपणकरकेग्रंथ कोसमाप्तकिया। इसप्रकारउक्तानुक्त अनेकवेदांत सिद्धांतरूप अमूल्य मौक्तिकोंकीयहश्रेणीहै। जोसुकृतिपुरुष इसकोअपने कंठमेंधारणकरतेहैं वहअतिशयशोभावलेहोतेहैं। औरसुमुत्तुपुरुषोंकोयहग्रंथश्रवणरूपभीहै क्योंकिवेदान्तवाक्योंकेतात्पर्यकानिर्णयअनेकस्थानोंमेंकियाहै। और यहग्रंथमननरूपभी है क्योंकिभेदकीबाधक तथाअभेदकीसाधक अनेक श्रुतिअनुसारीतर्कोंइसमेंनिरूपणाकीहैं। इससेयहग्रंथसाक्षात्हीआत्मज्ञान काजनकहै। औरग्रंथोंमेंकहींकहींआत्मविचारकालाभहोताहै। औरइस ग्रंथमें शीघ्रही जिज्ञासुकी बुद्धि आत्मविचारको प्राप्तहोतीहै। यहभी अन्यग्रंथोंसे विचित्रता है। इसलिये संस्कृतके पाठकजिज्ञासु जनोंको यहग्रंथ आत्मविद्याके संपादनमें अत्यंतहीउपयोगीहै। औरवादियोंके जयकरनेकी इच्छावाले पुरुषोंकोभी इसीकाअभ्यास करनेयोग्यहै। यहअंतरफलभी इसका स्वयंमूलकारने कथनकियाहै। सर्वथायह ग्रंथअनुपम है। औरजैसे उत्तमजातिवाले मौक्तिकोंकी श्रेणी सुंदर मंदरमेंदीपकसे प्रकाशितकीहुई अत्यन्तशोभाको धारणकरती है तैसे यहसिद्धान्तमुक्तावली जिज्ञासुओंके हृदयरूपमंदिरमें श्रीनानादीजित विद्वान्कर निर्मित दीपकानाम्नी दीकारूपदीपककर प्रकाशितकीहुई

अत्यन्तशोभायुक्त है। परन्तु व्याकरणादिरूप द्रव्यसेविना भाषाग्रंथों के पठनपाठनमें निपुणमति सज्जनपुरुष अत्युत्तम इसमुक्तावलीको स्वकंठमें धारण कर अपूर्वशोभाको नहीं लेसकते थे वहसज्जनभी इसको कंठमें धारण कर सुशोभित हों यह विचार करके शमादिनिस्त श्रीमुक्ति-प्रदसृगेंद्रशांतात्मास्वमित्रवर्य ने मुझको इसग्रंथके भाषा करनेकी प्रेरणा की। तिनकी प्रेरणाको हृदयमें धारण कर उन्हींकी सहायतासे इसदुर्गम ग्रंथ वाले ग्रंथके मूलतथा टीकाको यथायोगमिलाकर भाषा करना आरंभ किया। यह शरीर प्रायः व्याधिग्रस्त था। परन्तु जिसजिसकाल मे शरीरकी किंचित् स्वस्थ दशा देखी तिस तिसकालमे किंचित् भाषा अनुवाद लिखते हुए यह ग्रंथ निर्विघ्न समाप्त हो गया। तिससे अनंतर रिवीकेशनिवासी श्रीमान् विरक्तात्मा पंडित स्वयंज्योतिजीकी सहायतासे यह ग्रंथ संशोधन किया गया। यद्यपि इसग्रंथको भाषा करते हुए अनेक बार चित्तमेलज्जाभी आती थी। क्योंकि शास्त्र मे निपुणमति पंडित इसके देखकर हंसेंगे। यह विचार कर चित्त ऊपरतभी होजाता था परन्तु यह वक्षमाण विचारचित्तको पुनः उसी कार्यमेलगा देता था कि शास्त्र मे निपुणमति पंडित इसभाषाको दूषित जानकर और सुंदर रचनावाली इसग्रंथकी भाषा करनेमे प्रवृत्त होंगे तिससे भी सर्वउपयोगी यह कार्य सिद्ध होजायगा। अथवा वह पंडित जन दयालु भी होते हैं। इसलिये इसकी ही न्यूनता तथा दोषोंको दूर करके इसी भाषाको सुधारकर सुभूषित कर देंगे तिससे भी यह कार्य सिद्ध होगा। और परमकारुणिक श्रीगुरुके सुखाचिंदसे श्रवण किया हूँ अर्थविस्मरण नहो। इसलिये भी इसग्रंथको भाषामे लिखना उचित जाना। यद्यपि वेदांत सिद्धांत मुक्तावलीगत सिद्धांत मौक्तिकोंकी पहचान अत्यंत दुर्लभ

तथा वह अमोलिक हैं । तथापि जैसे अमोलिक मौक्तिकों की पहचान स्वस्वबुद्धि अनुसार सवीपरीजिक पुरुष करते हुए अन्यपुरुषों को तिनका स्वरूप स्वस्वभापामें यथायोग्य कहते हैं । तैसे इन सिद्धांत मौक्तिकों की पहचान स्वबुद्धि अनुसार परमकारुणिक श्रीगुरुोंसे पाकर भापामें इनके स्वरूपका अनुवाद करना उचित ही है । आशा है कि समग्र महात्माविद्वान् तथा औरसज्जन विचारशील पुरुष मेरे दोषोंको क्षमा करेंगे और इसको अवलोकन करके मेरे प्रयत्नको मफल करेंगे ।

॥ इति ॥



❀ ओ३म् ❀

अथ

श्रीवेदान्तसिद्धान्तमुक्तावलीभाषा

पूर्वार्द्ध प्रारम्भः ।

दोहा—सत्यचिदानन्द, विभुजो कर्तापुरुषत्रकाल ॥

ताहि निजातमलखरिदे, होवत सदा त्रकाल ॥ १ ॥

कवित्त—सांख्यत्र्यादितर्कसेन चालितकदापिजोऊ वेदकेसिद्धान्त
माहि जोऊसेदागतहै । मूलहीनथागमन ताहिकोऊजानसके
यातेभूतपञ्चककी जनिलयथितहै ॥ जनमविनाशते विहीन
जोचिदातमाहै व्यापककर्तासब जननकोगतहै । ताहिजान-
कीशको भर्जोंमें सदावारवारजोऊजगनामरूप प्रकटकरतहै ॥२॥

दीनप्रतिपारनको संतनउवारनको असुरसंहारनको सदाजह
चाउहै । एकनारीव्रतजोऊ पितुथाज्ञारतजोऊ धरमधरतजोऊ
सीतलस्वभाउहै ॥ पटभगपूरन नहोवेंकवीऊरन त्रिलोकमाहि
पूरन सुजाहिकोप्रभाउहै । ताहिरघुनाथको निवाऊंसदामाथको
दिखावेंमोछपाथको जोआनन्दस्वभाउहै ॥ ३ ॥

वेदीकुलव्योममाहि जगगुरुशशिआहि सुयशप्रभाहैताहि
फैलीतीनलोकमें । गुरुमुखचकोर दोनोदृगनकोजोर करेध्यान
ताहियोर हीहोवतत्रशोकमें ॥ मनमुखब्रेहीवाम जलेंदुःखथाठो
जाम सुनकरजाहिनाम धरेचितशोकमें । शशियरुनानक त्रिताप
करेहानक सुध्यावोंसुखदानक नसावेपापरोकमें ॥ ४ ॥

स्वैया-भूमिसमानक्षमाजिनमे पुनःशोधकवायु समानहैजोई।व्योमसमंजु
 असंगसुभाव रुदोपनदाहकपावकजोई ॥ शीतल नीरसमंपिखिये
 वरतेंसबकेहितमेपुनजोई ॥ तागुरुअंगदके पदपंकजजोर नमो
 करहोंकरदोई ॥ ५ ॥

स्वैयाछंद-जाकीकरनीसकललोकमेहैप्रसिद्धजानतसबकोय । गुरु
 सेवाकीरीतिदिखारीजिन सम कर नसकत है कोय ॥ शीलवंत
 तपसातनुधारी सहनशीलजासमनहिकोय । श्रीगुरुअमर अमर
 पदवीप्रदध्यावों विघ्ननलागेकोय ॥ ६ ॥

त्रिभंगीछन्द-सोढीकुलभानू कलितमभानू भक्तिप्रभानुनामरते ।
 जहवाक्यरसाम्रित अचकरपाम्रितहोवतआम्रित सामगते ॥ जो
 जनहितकारी परमउदारी भवदुखटारी शरणगते । तागुरुमदा-
 सह पदकमलासह ममरिदवासह जामहते ॥ ७ ॥

स्वैया-जहहारद के तमनाशन को रविकीरसमं उपदेश विधारा ।
 भवसिन्धुपरे जनतारनको गुरुग्रंथ जहाज कियोवहुसारा ॥ गण
 आसुरकौरव कोदलजो समयजुनके जहने दलडारा । तागुरु
 अर्जुनपापविभर्जन केपदकञ्जनमो बहुवारा ॥ ८ ॥

द्वैलछंदील रमीलजुवेन सुलोचनहैं करुणारममाते । पीरन
 पीरसुमीरनमीर जुवीरनवीरसदा रणमाते ॥ अमरासिलेच्छन
 मेघनकेदलवायु समानकरे जिनहाते । ताहरिगोविन्द राजनके
 पदकञ्ज सदा मनमोर सुहाते ॥ ९ ॥

यहयाहजहान असायमहा तहमाहियिजीवसहें दुखभारे ।
 तांअतिदीनदशा पिखेके हसिय गुरुकरुणा चितधारे ॥ हाससं

निजद्वैउपदेशह काठथरराय सुकीनसुखारे । पंकजतेवरंतायुरुके
पद वारहिवार प्रणामहमारे ॥ १० ॥

चौ०—कृष्णभये हरिकृष्ण स्वरूपा । इन्द्रियगणगोपिनके भूषा ॥
मनकाली रिपुमर्दनहारे । नमोंकरोंसदवयसकुमारे ॥ ११ ॥

कवित्त—जाहिउपदेशसुन होवतवैरागमन भयेज्ञानवानजन काठें
भवबन्धको । संपदविपदमाहि सदासमचित्तजाहि पालहशरणा-
गताह धर्मधुरन्धको ॥ तिलकजनेऊकाज निजशिरदीनोगाज
हिन्दुनकीराखीलाज काटीजरथन्धको । तांहरिगुविन्दनन्द
जुकेजोपदाविंद करोंसदाताहिवन्द काठहपापबन्धको ॥ १२ ॥

स्वैया—शेशनिशेशदिनेशमहेश सदापदपंकजजाहिमनावें । व्यास
पराशरनारदथौ सनकादिकसेजहकोयशगावें ॥ सोउत्रकालभये
गुरुगोविन्द सिंहसरूपमलेच्छनघावें । तांयुस्तेगवहादुरनन्दन
दूखनिकन्दनकोहमध्यावें ॥ १३ ॥

कवित्त—कोऊन्यासमुनिभनेरामगुरुकोऊगने कपिलस्वरूपकहकोऊ
गुनगावते । योगवचजिनोसुनाशेपरूपतिनोभना भीपमस्वरूप-
कोऊथौरनचतावते ॥ जाहिकोचरितपेख होवतहुलासमन विसम
विसमहीयेहोतसवीजावते । यातेसखातमस्वरूपहरिहरजान ताहि
गुरुमूरतिकोसदाहमध्यावते ॥ १४ ॥

दो०—तां गुरुके पदपद्मकी, गहीशरण जवथाय ।

हरीहीयकी जाब्यता दोपमूलसवधाय ॥ १५ ॥

चौपाई—महानुभाव जुजगतमभारी । अभिवंदन है तिनैहमारी ॥

। यहममकाजहोयनिर्विघ्नो । जोसबजनकेहितकरवरनो ॥ १६ ॥

दो०—विदांतसिद्धान्तमुक्तावलिदुर्गमार्थविशाल ।

तहभाषाकरनेविषेमममतिअल्पविहाल ॥ १७ ॥

तथापिश्रीगुरुवदनतेजहविधश्रवणसुकीन ।

तामे जोस्मरन रहियोवरनों तिसे अदीन ॥ १८ ॥

सोरठा—श्रीगुरु चरन मनाय वाकवादिनी ध्यायकै ।

भाषा करों बनाय पेख मुदित ह्वैधीरजन ॥ १९ ॥

❀ अथमूलटीकाकारकृतमंगल ❀

सर्वजगत् के ईश्वर जो श्रीमहादेव तिनको मैं प्रणामकरता हूँ । तथासर्वजगत्कीउत्पत्ति औ स्थिति तथा संहारके करनेवाले जो श्रीगणेशजी हैं । तिनकोमैं प्रणाम करता हूँ । तथावाक् अभिमानी देवता जो श्रीसरस्वती जी हैं तिनकोमैं प्रणामकरताहूँ । तथा अल्पअक्षरोंवालेपदोंकर घटितऔविस्तृततथासारभूतार्थ के कर्ता जो श्रीवेदव्यासजीहैं । तिनको मैं प्रणाम करता हूँ । तथासूत्रअनुसारीपदोंसेसूत्रकेअर्थ जिसमेकथनकीएजाएँ औ अपनेकठिनपदों की व्याख्याहो जिसमे इसलक्षणयुक्तभाष्यके कर्ता औतीनोंलोकोंमे प्रकटताहैजिनकी ऐसेश्रेष्ठआचार्यजो श्रीशंकरजीहैंतिनकोमैं प्रणाम करताहूँ ॥ १ ॥

तथा आनंदहेअंतमेजिसके सो आनंदअंतकहीएहै । तिससे अभिन्नजो प्रकाशानुभवपद अर्थात् प्रकाशकेअनुभवकाजनक जो प्रकाशपद वहहैपदकहियेनामजिनका सो आनंदान्त प्रकाशानुभव पदपदकहेजातेहैं ॥ ऐसेजो सद्गुरुश्रीप्रकाशानंदसरस्वतीतिनको मैं प्रणामकरताहूँ । औविद्याकेनिधि जोश्रीनृसिंहाश्रम तथाशमदमादि

साधनोंमें प्रीतिवाले तथा संन्यासीयों के स्वामीश्रीराघवेन्द्रसरस्वती इनदोनों विद्यागुरुओंकोमै प्रणाम करताहूँ ॥ २ ॥

संन्यासियोंकरके वंदनाकरनेयोग्य तथाजिनके शिष्यपरशिष्यों केसमूहसे भारतवर्षके सर्वदेशप्रतिहोरहेहैं तिन ईश्वरस्वरूप श्री प्रकाशानन्द स्वसद्गुरुओंको पुनः मै प्रणामकरताहूँ ॥ ३ ॥

* अथफलसहितटीकाकेआरम्भकीप्रतिज्ञा *

वेदान्त सिद्धान्तरूपी गौक्तिकोंकी जोश्रेणीतिसके प्रकाशार्थ तथाप्रतिपक्षरूपीसमूहग्रन्थकारके नाशकरनेवाली प्रदीपिकानाम्नी टीकाको मैरचनाकरताहूँ ॥ ४ ॥

✽ अथमूलग्रन्थव्याख्याप्रारम्भः ✽

पथमतिसग्रन्थके आदिमें शिष्टपुरुषोंके आचारसे प्राप्तत्वानुसंधानरूपमंगलकोसूचनकरतेहुए औरवेदान्तोंका विषयतथाप्रयोजन साक्षात् प्रतिपादनकरके कर्तव्यार्थकी प्रतिज्ञाकरतेहैं क्योंकि प्रतिज्ञा से अनन्तरहीनिरूपण करनेयोग्य अर्थनिरूपण कियाजाताहै ॥

अदृष्टद्वयमानंदमात्मानंज्योतिरव्ययम् ।

विनिश्चित्यश्रुतेः साक्ष्यबुक्तिस्तत्राभिधीयते ॥ १ ॥

दो०—अद्वय दृष्टि आनंद चित अव्यय आत्म जान ।

साक्षात् वेदसे ताहमे युक्ती करों वखान ॥ १ ॥

जाके चिंतन करते होवत बुद्धि विशाल ।

तति ज्ञान सुदृढ भयो नाश करे भ्रमजाल ॥ २ ॥

टीका—यहां मूलकारिकामें 'अदृष्टद्वय' और 'आनंद' तथा 'ज्योति' और 'अव्यय' यहचारआत्माके विशेषणहैं औरआत्मवस्तुविशेष्यपदार्थ

हे । तिनकथनकिये चारविशेषणयुक्त आत्माको साक्षात् उपनिषत् प्रमाणसे जानकर चारविशेषणयुक्त तिसआत्मामें श्रुतिअनुसारीतर्क निरूपण करतेहैं ॥ अर्थयह किद्वैतदर्शनसेरहित तथा परमपुरुषार्थ तथास्वप्रकाश तथाविनाशसे रहित आत्माको सोमेंहूं इसप्रकारसाक्षात्महावाक्योंसे जानकर तिसकेज्ञानकीप्रतिष्ठाकेलिये श्रुतिअनुसारीतर्क निरूपणकरतेहैं । क्योंकि श्रुतिसेविरुद्धतर्क आत्मज्ञानमें उपयोगीनहीं यहवार्ताश्रुतिमें प्रसिद्धहै ॥

नैपातर्कणमतिराप्तेया ॥ क० उ० अ० १।३०२ म० ६

अ०—यहआत्मविद्या शुष्कतर्कसे प्राप्तहोनेयोग्यनहीं । याते श्रुतिअनुसारीतर्कही यहांग्रहणकरनेयोग्यहै । तिसके चिंतनकरनेसे बुद्धितीक्ष्णार्थात्सूक्ष्मार्थकेग्रहणकरनेयोग्यहोतीहै । औरबुद्धिकी सूक्ष्मतासे आत्मज्ञान अतिदृढताकोप्राप्तहोताहै । भावयहहैकिभेदवादीपुरुषोंकी तर्कोंसेसंशयरूप कलंकसहित नहींहोता । औरदृढ अपरोक्षज्ञानसे अविद्यातत्कार्यरूपभ्रमजालकी अत्यन्तनिवृत्तिपूर्वक ब्रह्मभावकीप्राप्तिरूप मोक्षहोताहै ॥ इति ॥

*** आत्माकेचारविशेषणोंकाफलनिरूपण ***

देहादिकोंसे आत्माकेभेदकी सिद्धिकेलिये (अव्ययं) यह विशेषणकथनकियाहै । औरआत्मामेंयदि कोईप्रमाणकहो तोप्रमाण काविषय होनेसे घटादिकोंके समान अनात्मपनाहोगा । औरयदि आत्मामेंकोई प्रमाणनहींकहोगेतो बंध्यापुत्रकेसमान असत्पनाहोगा । ऐसीप्रतिवादीकीशंका दूरकरनेकेलिये (ज्योतिः) यहविशेषणकथन

किया है। और आत्मा ही परम पुरुषार्थ रूप है इस अर्थ के कथन करने के लिये (आनन्द) यह विशेषण कथन किया है। और सजातीय विजातीय स्वगत भेद के दूर करने के लिये तथा प्रपंच को मिथ्यात्व प्रतिपादन करने के लिये (अदृष्टद्वयं) यह विशेषण कथन किया है। और यद्यपि “श्रुतेः विनिश्चित्य” इतने कथन से ही आत्मामें श्रुतिप्रमाण की सिद्धि हो सकती थी पुनः साक्षात्पद कथन करना निष्फल है। तथापि महावाक्य रूप श्रुति ही अपरोक्ष ज्ञान का साधन है। इस अर्थ के प्रकट करने के लिये (साक्षात्) यह पद कथन किया है ॥ इति ॥

शंका पूर्वक ग्रन्थ के व्याख्यान की योग्यता का निरूपण

शंका—यह ग्रन्थ व्याख्यान के योग्य नहीं। क्योंकि विप्रलिप्तादिक दोषों से रहित अथवा वेदप्रमाण के अंगीकार करने वाला जो शिष्ट पुरुष तिसकराचित नहीं है। जो शिष्ट पुरुष होता है वह ग्रन्थ के आदिमें मंगल का अनुष्ठान अवश्य करता है। इस ग्रन्थ के कर्ताने मंगल अनुष्ठान नहीं किया याते अशिष्ट है। और नमः आदिक पद के अभाव से मंगल का अभाव स्पष्ट ही है। और तैसे ही ग्रन्थ के आरम्भमें चार अनुबंध अवश्य निरूपण करने योग्य होते हैं क्योंकि अनुबंधों के जाने बिना श्रोताजनों की ग्रन्थ के पठन पाठनमें प्रवृत्ति नहीं होती। यह सम्प्रदाय वेता पुरुषों की मर्यादा है। यद्यपि तिन अनुबंधोंमें युक्तिको विषय पना प्रतीत होता है। तथापि प्रयोजन का कथन यहां नहीं किया। जो ऐसे कहो कि महावाक्य जन्य अपरोक्ष ज्ञान ही युक्तिका प्रयोजन है। सो कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि यहां “क्त्वा” प्रत्यय का कथन होने से तिस ज्ञान की प्रथम ही सिद्धि है। जैसे (स्नात्वा गच्छति) अ०—स्नान करके गमन करता है यहां परस्नान प्रथम

हीसिद्धहै। तैसे (श्रुतेः विनिश्चित्य) अ०--श्रुतिसे निश्चयकरके तिसमें युक्ति कहते हैं। यहां पर भी ज्ञान प्रथम ही सिद्ध है। याते तिसको युक्तिका प्रयोजन नहीं कह सकते। और जो ऐसे कहो कि यहां "आनन्द" पद प्रयोजन कथन करने के लिये है सो कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि तिसको महावाक्यजन्य ज्ञानका प्रयोजन होनेसे युक्तिका प्रयोजन तिसको नहीं कह सकते। तैसे विषय और प्रयोजनके अभावसे अधिकारी और संबन्ध भी यहां निरूपण नहीं किये। याते अनुबंधचतुष्टयके अभावसे भी यह ग्रन्थ व्याख्यान करनेके योग्य नहीं ॥

समाधान—हे वादिन् प्रथम जो मंगल केन अनुष्ठान करनेसे दोष कहा। सो नहीं संभवता क्योंकि अनारोपित ब्रह्मतत्त्वका अनेक प्रकार से चिंतन रूप मंगल यहां किया है। और ब्रह्मके बोधक अनेक पदोंका यहां प्रयोग होनेसे चिंतनको अनेक पना है। और जो पूर्व कहा कि यहां प्रयोजन नहीं कहा सो भी संभवे नहीं। क्योंकि आनंद पद ही तिस प्रयोजनका बोधक है। और महावाक्यजन्य अपरोक्ष ज्ञानका फल आनंद है युक्ति का फल नहीं। यह कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि प्रधानके फल करके ही अंगफलवाले होते हैं। जैसे दर्शादिक अंगीयागके फल करके ही प्रयाजादिक अंगफलवाले होते हैं। तैसे महावाक्यजन्य अपरोक्ष बोधरूप अंगीका फल आनंद है और तिस ज्ञानमें अंगयुक्ति है। याते जो ज्ञानका फल है वही युक्तिका फल है। ज्ञानमें युक्तिको अंगपना भट्टपादोंने भी कथन किया है ॥

धर्मे प्रमीयमाणो हि वेदेन करणात्मना ।

इति कर्तव्यता भागं मीमांसा पूर्यिष्यति ॥ १ ॥

अ०-प्रमाणरूपवेदसेहीधर्मकानिश्चयसंपादन करनेमे कथं भावअकांचारूपइतिकर्तव्यता भागको युक्तिपूर्णाकरेगी ॥ १ ॥ जैसे यहांधर्मज्ञानमेयुक्तिकोअंगरूपताहै। तैसेहीब्रह्मज्ञानमेंयुक्तिकोअंगरूपताहै यद्यपिज्ञानकोपूर्वहीसिद्धहोनेसेतिसकेप्रतियुक्तिकोअंगरूपतानहीं संभवती। तथापि ज्ञानकोपूर्वसिद्ध मानेहूएभीतिसकीदृढताका हेतु पनायुक्तिकोसंभवताहै। यहवार्ताभाष्यकारोंनेभीकथनकी है ॥

ब्रह्मात्मैक्यविद्याप्रतिपत्तयेसर्ववेदान्ताआरभ्यंतइति॥

शा० भा० अ० १ पा० १

अ०-ब्रह्मात्माके अभेदज्ञानकीदृढताकेअर्थसर्ववेदांत आरंभ अर्थात्विचारकियेजातेहैं। औरयदिवादीऐसेकहेकियुक्तिकोआत्मज्ञान कीदृढताकाहेतुमानेहूए आत्मज्ञानकीदृढताही तिसकाफलहै आनंद तिसकाफलनहीं यहकथनभीनहींसंभवता। क्योंकिसाक्षात्तथापरंपरा करकेदोनोफलपुक्तिकेमाननेमेकोईविरोधनहीं। तहां साक्षात्फलतो आत्मज्ञानकीदृढताहै। औपरंपरा फल आनंदहै जैसेग्रंथकासाक्षात्विषय युक्तिहैऔरपरंपराविषय जीवब्रह्मकाअभेदहै। तैसेप्रयोजनभीदोप्रकारका जानना। इसप्रकारदोप्रकारकाविषयऔरप्रयोजनहोनेसेही“वेदांतोंका विषयऔरप्रयोजनसाक्षात्प्रतिपादनकरकेकर्तव्यकीप्रतिज्ञा करतेहैं”ऐसा पूर्व कथनकियाहै ॥ इति ॥

अथवा-युक्तिकाकथनआचार्य को अपनेअर्थतोनहींसंभवता क्योंकिवहआपतोदृढज्ञानवालाहै। किंतुजिज्ञासूकेअर्थयुक्तिकाकथन है। तिसकोज्ञानकीउत्पत्तिके लिये युक्ति कीअपेक्षाहैयातेयुक्तिको अभिधेयताहै। इसप्रकारजिज्ञासूको आत्मसाक्षात्कारकेअर्थयुक्तिकी

अपेक्षाहोनेसेवहज्ञानकाग्रंथ कैसे नहींहोसकतीकिंलुहोसकतीहै।और मूलकारिकामें (अदृष्टद्रयमात्मानं) इनदोनोंपदोंकीसमानाधिकरणता सेब्रह्मात्माका अभेदरूपविषय साक्षात् कथन कियाहै । सोयहग्रंथ कापरंपराविषयहै । और (आनंदं) इसपद से प्रयोजन साक्षात्कथन कियाहै । सोयहग्रंथ का परंपरा प्रयोजनहै । औरइसग्रंथमेयुक्तिप्रतिपादनकरनेयोग्यहैयाते कथनकाविषय युक्तिइसग्रंथकासाक्षात्विषयहै यद्यपि साक्षात् प्रयोजन इस ग्रंथका आदिमें नहीं कथन किया । तथापिग्रंथकेअंतमेकथनकीजो बुद्धिकी अतिशयतारूपविशालतासो यहांग्रंथआदिमेभीजाननेयोग्यहै । औरसाक्षात्तथापरंपराभेदसेजोदो प्रकारकाप्रयोजनतिसकीकामनावालापुरुषहीअधिकारीजानना । और विषयादिकोंकेसाथग्रंथादिकोंका प्रतिपाद्यप्रतिपादकतादिरूपसंबंधभी भलीप्रकारसंभवताहै।याते अनुबंधचतुष्टकेसंभव से भीयहग्रंथअवश्य व्याख्यानकरनेयोग्यहै ॥इति॥

❀ आत्मपदार्थकीविशेष्यताकानिरूपण ❀

शंका ॥ जिसवस्तुके बोधकशब्दका प्रथमउच्चारणकरें सोवस्तु उद्देश्यकहाजाताहै ॥ इसन्यायसेअदृष्टद्रय पदार्थकी प्रधानताप्रतीत होतीहै ॥ क्योंकितिसके बोधकशब्दका प्रथमउच्चारणहोनेसेतिसको उद्देश्यताहै ॥ औरजोउद्देश्यहोताहै वही प्रधान होताहै ॥ इसरीतिसे अदृष्टद्रयको प्रधानता होनेसेविशेष्यताहै आत्माभेविशेष्यता नहीं॥ समाधान ॥ हेवादिन्, “प्रसिद्धपदार्थकाउद्देश्यकरके अप्रसिद्धपदार्थ विधान कियाजाताहै” इसन्यायसे आत्माकोविशेष्यपनाहै क्योंकि, अहमस्मि, इसप्रकारके अनुभवसे आत्मासर्वको प्रसिद्धहैतिसकाउद्देश्य

॥ करके अप्रसिद्ध 'अदृष्टद्रयादि' पदार्थविधानकियेहैं ॥ औरजोउद्देश्य होताहैवहीप्रधानहोताहै । इसप्रकारप्रधानता होनेसेआत्माकोविशेष्य पनासंभवताहै औरइतरपदार्थ गौणहोनेसेतिसकेविशेषणहैं ॥ औरश्लोकों मेंयो जनावाक्यसे अन्वयबोधहूआकरताहै इमलियेयहां " आत्मानं अदृष्टद्रयमित्यादि" योजनाकरनेसे पूर्वउक्तन्यायका विरोधभी नहीं प्राप्तहोता ॥ इति ॥

✽ श्रुतिपदकेअर्थकानिरूपणा ✽

यहां मूलकारिकामें कथनकियाजो श्रुतिपदतिससे उपनिषदग्रहणकरने योग्यहै ॥ क्योंकि—

तंत्वौपनिषदंपुरुषंपृच्छामि । ए० उ० अ० ३ ब्रा० ६ कं० २६

अ० ॥ उपनिषदोंकरकेजाननेयोग्यआत्माकास्वरूप में तुम्हको पूछताहूं ॥ इसश्रुतिमें "औपनिषदत्व"अर्थात् उपनिषदोंकरकेजानने योग्य यह आत्माका विशेषणकथनकियाहै । यातेश्रुतिपदसेउपनिषद् का ग्रहणहै ॥ अथवा ॥

सर्वेवेदायत्पदमामनन्ति ॥ क० उ० अ० १ । ब० १।० १.५॥

अ० ॥ सर्ववेद जिसपरमपदको तातपर्यवृत्तिसेबोधनकरतेहैं ॥ इस श्रुतिकोआश्रयणकरनेसे श्रुतिपदवेदमात्रका बोधकहै ॥ इति ॥

शंका ॥ मूलकारिकामें "तत्र"इसपदसेआत्माकापरामर्शनहींसंभवता क्योंकि अनेक पदोंका व्यवधान है ॥ समाधान ॥ हेवादिर् सर्व नामशब्दोंको बाधकके अभावहुए प्रधानपरामर्शित्वका ही नियमहै याते"तत्र"इसपदसेचारविशेषणयुक्त आत्माकाहीपरामर्शसंभवताहै । क्योंकि आत्मपदार्थप्रधानहै ॥ और इतरपदार्थनका "तत्र" पदसे

परामर्शनहींसंभवता॥क्योंकिवहआत्माकेविशेषणहोनेसेगौणहै॥इति॥

✽ अवपूर्वपक्षीकीरीतिसेआत्मामेंश्रुतिप्रमाणाकी
निर्पेक्षताऔरदेहादिकोंकीआत्मरूपताकानिरूपण ✽

शंका ॥ मूलकारिकामें श्रुतिपदइतरप्रत्यक्षादिक प्रमाणोंके
बोधन करनेकेलियेहै ॥ अथवातिनकी निवृत्तिकेलियेहै ॥ प्रथमपक्ष
में श्रुतिकोव्यर्थनाहोगी ॥ क्योंकि श्रुतिसेभिन्नप्रत्यक्षादिकोंकरके
हीआत्माकासाक्षात्कार होजायेगा ॥ पुनः श्रुतिकीकृद्ध्यपेक्षानहीं
औरशक्यार्थकी अनुपपत्तिसेविनाहीलजणाकीप्राप्तिरूपदोषभीहोगा॥
औरयदिइनदोनों दोषोंके दूरकरनेकेलिये श्रुतिपद “अवहन्यात्”इस
पदके समान अपने विधानकेलिये और दूसरेप्रमाणोंके निषेधकेलिये
है अर्थ यहजेसेयागमे उपयोगी ग्रीहोंके लुपोंकी निवृत्ति दोउपायनसे
होतीहै ॥ एकनखविदलनसे और दूसरामूमल अवहननसे ॥ तहां ॥
“अवहन्यात्” यहपदनखविदलनकीनिवृत्तिकरके अपनाविधायकहै ॥
तेसेश्रुतिपद अन्यप्रमाणोंका निषेधकरके अपनाविधायकहै ॥ यह
दूसरापक्षयादिस्वीकारकरो तोयहभी नहींसंभवता । क्योंकि आत्म
साक्षात्कारमेंश्रुतिकी किंचित्भीअपेक्षानहीं । यद्यपिचुधापिपासादि
पट्टर्मायोंसेरहितआत्माका प्रत्यक्षादिकप्रमाणविषयनहींकरसकते ॥
तिममेंश्रुतिकीअपेक्षा केमेनहींसंभवती । तथापिदेहादिकोंमें भिन्न
औरफोर्डयात्मानहीं । किंतुदेहादिकहीआत्माहैं ॥ यहांयहतात्पर्यहै ।
ज्ञानकाआश्रयआत्माहोनाहै यहवार्ताविवादरहितहै ॥ औरज्ञानप्रथम
देहकाधर्मप्रतीतहोताहै क्योंकि “भेमनुष्यहं” इसप्रतीतिकेवलमेअहं

शब्दके अर्थचेतनका मनुष्यत्व जातिवाले देहके साथ धर्मधर्मीभाव प्रतीत होता है ॥ और चेतनही ज्ञान है या ते स्थूल देहको ज्ञानका अधिकरण होने से आत्मपना प्रसिद्ध है । इसी रीतिसे इन्द्रियादिकोंको भी आत्मपना ऊहा करने योग्य है ॥ तथाहि ॥

काणोऽहम् “वधिरोऽहम्” इत्यादिक प्रतीतियों से काणत्वादि धर्मविशिष्ट इन्द्रियनके साथ अहंशब्दके अर्थ चेतनका धर्मधर्मिभाव प्रतीत होता है । और चेतनही ज्ञान है और ज्ञानका अधिकरण आत्मा होता है यह पूर्वकथन किया है । या ते ज्ञानका अधिकरण इन्द्रियादिकभी आत्मा हैं । यहां (इन्द्रियादिक) इस आदिपदसे प्राण और मन तथा बुद्धि आदिकोंका ग्रहण करना । इस प्रकार प्रत्यक्षप्रमाणसे देहादिकोंमें आत्मरूपता सिद्ध है । तैसेही इच्छादि परिशेषाऽनुमानसे भी तिनमें आत्मरूपता सिद्ध है तिस अनुमानका यह आकार है—

* इच्छादयः देहाद्याश्रिताः अन्यानाश्रितत्वे सति गुणत्वात् व्यतिरेकेण घटादिवत् *

अ० इच्छादिक जो हैं वह देहादिकोंके आश्रित हैं । अन्यके अनाश्रित हुए उगण होनेसे । जो जो देहादिकोंके आश्रित नहीं है सो सो अन्यके अनाश्रित हुआ उगण भी नहीं है । जैसे घटादिक हैं ॥ इति ॥ इस प्रकार इच्छादिकोंकी अधिकरणात्ता देहादिकोंमें सिद्ध हुए पुनः इच्छादिमत्त्वलिङ्ग से तिनमें आत्मता सिद्ध करनी तिस अनुमानका यह आकार है ।

❀ देहेंद्रियादयः आत्मा भवितुमर्हन्ति इच्छादि-
मत्त्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथा घटादि ❀

अ० देह तथा इन्द्रियादिक आत्मा होनेको योग्य है । इच्छादि धर्मवाले होने

से। जो आत्मानहीं हैं। सो इच्छादि धर्मवाले भी नहीं हैं। जैसे घटादिक जड़ पदार्थ हैं। इति। और जो सिद्धांती ऐसे कहें कि देहादिकों की आत्मता हम निवारण नहीं करते। तथापि तिस देहादिरूप आत्माको श्रुति प्रमाणकी अपेक्षा क्यों न हो। सो यह कथन भी नहीं संभवता क्योंकि अनधिगत अर्थका बोधक ही प्रमाण होता है और देहादिरूप आत्मामें प्रत्यक्षादिक प्रमाणकी विषयता होनेसे अनधिगत पनेका अभाव है। इसी कारणसे श्रुतिको तिसमें प्रमाण तानहीं संभवती।

यद्यपि साक्षिरूप प्रत्यक्षसे देहादिरूप आत्माकी सिद्धि माने हुये भी अनधिगत पना दूसरी नहीं हो सकता क्योंकि साक्षी करके ही विषयनिष्ठ अज्ञात पना मिद्ध होता है। और चेतन रूप साक्षीसे विना अन्य किसी प्रमाणसे अज्ञानकी सिद्धि भी नहीं संभवती। क्योंकि अज्ञानके साथ इन्द्रियादिकोंके संबंधका अभाव है। याते देहादिरूप आत्मामें अज्ञातताके सिद्ध हुये तिसमें श्रुति प्रमाणकी विषयता संभवती है। तथापि लौकिक प्रत्यक्षादिकोंकरके सिद्ध देहादिरूप आत्मामें अनधिगत पनेका अभाव है याते तिसमें श्रुति प्रमाणकी विषयता नहीं संभवती अथवा अव्यय पदसे निवृत्तिके योग्य देहादिकोंकी आत्मरूपता सो इस पूर्व पक्षमें कथन की है ॥ इति ॥

❀ पूर्वपक्षके संग्रहका श्लोक ❀

देहादिरात्मानः सिद्धो लौकिकादेवमानतः ।

नापेक्षते श्रुतितस्मात् स्वसाक्षात्कृतये पुनः ॥ १ ॥

अ० ॥ चो० ॥ देहादिक आत्म है जोई ॥ लौकिक मान सिद्ध भासोई ॥ याते रवे सिद्धी के माहीं ॥ श्रुति प्रमाण सुचाहे नाहीं १। समाधान।

❀ अथपूर्वपक्षके निराकरणपूर्वक

अव्ययपदव्याख्या निरूपणा ❀

आत्मानित्योऽथवा नित्योभेदस्त्वाद्येस्फुटोमतः ।

अन्त्येतुकृतहानिः स्यादकृताभ्यागमस्तथा ॥ २ ॥

॥ स्वैयाच्छंद ॥ आत्मनित्यकहोतुमवादिन अथवाताहिअनि
त्यवखान ॥ आदिपक्ष महिभेदस्पष्टा यहउरनीकेलेहुपचान ॥ अंत-
पक्षमेंकृतकर्मनकोभोगे विनासुहोवतहान । तथानकीपेहोवहप्राप्तयही
दोषभाषेंमतिमान ॥ ३ ॥

टी० हेवादिन् आत्मानित्यहैअथवाअनित्यहै ॥ प्रथमपक्षजो
स्वीकारकरोतोदेहादिकोंसे भेदस्पष्टहीसिद्धहोताहै । औरजोदूसरापक्ष
कहोतो “कृतनाश” अर्थात्कियेहुयेकर्मनकाफलभोगसे विनाहीनाश
रूपदोषतथा “अकृताभ्यागम” अर्थात्नकियेहुयेकर्मनकीप्राप्तिरूपदोष
प्राप्तहोगा । यहांयहतात्पर्यहै । आत्माको नित्यहोनेसे देहादिकोंको
आत्मरूपतानहींसंभवती ।

यद्यपि देहात्मवादि के प्रति आत्माका नित्यत्व असिद्ध है ।
तथापि आगे कथनकीहुईयुक्तिसे सो नित्यत्वप्रसिद्धहै । तिसयुक्तिको
ही दिखलातेहैं ॥ इससंसारमंडलमें कोईसुखीहै कोईदुःखीहै कोईबर्द्धहै
कोईमुक्तहै ॥ इसप्रकार जगत्की रचना विचित्र प्रतीतहोतीहै ।
इसमें कोईविवादनहीं । सोविचित्रता कार्यहोनेसे हेतुसहितहै । यहां
यह अनुमान जानना ।

। जगद्वैचित्र्यं सहेतुकं कार्यत्वात् पटवत् । ॥ ३ ॥

॥ ३ ॥ अ०-जगत्कीविचित्रता कारणसहितहै कार्यहोनेसे जोजोकार्य

होता है सोसो कारण पूर्वकही होता है पट कीन्याई ॥ इति ॥ इस अनुमान से जगत्की विचित्रताको कारण पूर्वकताके सिद्ध हुये सो कारण भी विचित्र ही कथन करना होगा अन्यथा कार्यकी विचित्रता सिद्ध नहीं होगी । यहवार्ता अन्यग्रंथमें कथनकी है ।

वैचित्र्यं न समस्येति ।

अ०—विचित्रतासे रहितपदार्थको विचित्रताकी कारणतानहीं संभवती ॥ इति ॥ सो विचित्रकारण अदृष्टहीमानना होगा । क्योंकि दृष्टजो यागादिक हैं तिनको शीघ्रविनाशी होनेसे कालांतरमें होनेवाले सुखादिकों का वह कारण नहीं होसकते इसी अभिप्राय से जगत्की विचित्रताके हेतु अदृष्ट कथन किये हैं । यहां यह अनुमान जानना—

इदं जगत् विचित्रकारणकं विचित्रकार्यं

त्वात् विचित्रपटवत् ।

अ०—यह जगत् विचित्रकारण वाला है विचित्रकार्य होनेसे जो जो विचित्रकार्य होता है सोसो विचित्र कारण पूर्वकही होता है विचित्रपट कीन्याई ॥ इति ॥ इस अनुमानसे विचित्रकारणकी सिद्धि है सो विचित्र कारण अदृष्ट ही है । इस प्रकार विचित्रताके कारण अदृष्टकी सिद्धि हुये तिसका आश्रय रूपताकरके नित्य आत्माकी सिद्धि होती है ॥ इति ॥ शंका । विचित्रकार्य क्रियाजन्य होता है वह क्रियादेह जन्य है । क्योंकि देहमें ही क्रिया देखी जाती है । याते देहको ही क्रियाद्वारा सुखादिकोंका जनक होनेसे वह देह ही आत्मा है । और वह ही विचित्रताका कारण है । तिससे भिन्न और कोई अदृष्ट विचित्रताका कारण नहीं । जिसका आधार रूपताकर नित्य आत्माकी सिद्धि हो । समाधान । दृष्टकारण जो क्रिया

रूपतुमने कथनकियाहै । तिसकोशीघ्र विनाशी होनेसे चिरकालमें होनेवाले सुखादिकों का वहसाक्षात् कारणतो नहीं संभवता । और यदि कोई द्वार कल्पना करोगे । तौहमको अभिमत अदृष्टवलात्कार से सिद्ध होगा ॥ शंका ॥ शरीरके सिद्ध हुये अदृष्टकी सिद्धितथा अदृष्टके सिद्धहुए शरीरकी सिद्धि ऐसेमानेहुये दोनोंको अपनी सिद्धि में परस्पर आपेक्षा होनेसे अन्योन्याश्रयदोषकी प्राप्ति है ॥ समाधान ॥ जैसे बीज और अंकुरका परस्पर कार्यकारणभावनिमित्तक अन्योन्याश्रयदोष प्रवाहरूपताकर अनादि होनेसे परिहार किया जाता है । तैसे शरीर और अदृष्टके प्रवाहको अनादि होनेसे परस्पर आपेक्षा हुये भी अन्योन्याश्रय दोषकी प्राप्ति नहीं हो सकती ॥ शंका ॥ अदृष्टको अनादि माने हुये भी तिसका आश्रयरूपताकरके आत्मा की सिद्धि नहीं संभवती । क्योंकि अदृष्ट आकाशादिक भूतोंके आश्रित है ॥ समाधान ॥ पञ्चभूतोंको सर्वशरीरोंमें सम होनेसे तिनके आश्रित अदृष्टभी सर्वको साधारण होगा । और तिसका फल सुख तथा दुःखका भोग भी सर्वको साधारण होगा । सोयहवार्ता अनुभवसे विरुद्ध है । क्योंकि सर्वको भिन्नभिन्न ही भोग देखा जाता है । याते प्रतिनियत भोगके असंभवसे अदृष्टका आश्रय पञ्चभूत नहीं हैं । और निराश्रय भी वह अदृष्ट नहीं रह सकता इसलिये अन्य प्रकारसे अनुपपन्न हुया वह अदृष्ट अपना आश्रयरूपता करके आत्माकी कल्पना करता है । इस प्रकार अदृष्टका आश्रय आत्मा सिद्ध हुया ॥ शंका ॥ पूर्व उक्त प्रकारसे आत्माकी सिद्धि हो तथापि तिसको नित्यपना कैसे सिद्ध हुया ॥ समाधान ॥ अदृष्टको पूर्वजन्म का संबंधि होनेसे प्रवाहरूपताकर तिसकी अनादिता सिद्ध है । तिस अनादि अदृष्टके प्रवाहका आधार होनेसे आत्मा भी अनादि है । याते

आत्मानित्यहै ॥ शंका ॥ अनादित्वमात्रहेतु नित्यत्वकासाधकनहीं क्योंकि प्रागभावमें अनादित्वहेतु व्यभिचारीहै ॥ समाधान ॥ जो अनादिभावहोताहै सो नियमकरके नित्यहोताहै । आत्माभीअनादि भावरूपहै यातेनित्यहै और प्रागभावमें अनादित्वकेहुयेभी भावरूपता नहीं यातेअनादि भावत्वहेतु निर्दोषहै ॥ शंका ॥ जगतके उपादान कारणअज्ञानको अनादिभावरूपता आपके सिद्धांतमें स्वीकारहै । यातेपूर्वउक्तहेतुका पुनःअज्ञानमें व्यभिचारहै ॥ समाधान ॥ अज्ञानको अनिर्वचनीयरूप होनेसे सदरूप भावत्व तिसमें स्वीकारनहीं । इस लियेपूर्वउक्त हेतुनिर्दोषहै ॥ शंका ॥—

❀ आत्मानित्यः अनादित्वेसतिसदरूपभावत्वात् ❀

इस अनुमानमेंयदि आकाशादिकोंको दृष्टांतमानोगेतो तिस दृष्टांतमें हेतुकी विकलता होगी ।

क्योंकिवेदान्तसिद्धांतमेंआकाशादिकोंको अनिर्वचनीयहोनेसेसदरूप भावत्वतिनमें स्वीकारनहीं । समाधान ॥ आकाशादिकोंमेंहेतुकी विकलताहमकोइष्टहै । शंका ॥ अनादिसदरूपभावत्वहेतुकोआकाशादिकसपक्षसेव्यावृत्तमानेद्वये वहअसाधारणहत्वाभासहोगा । क्योंकि जोविपक्षसपक्ष दोनोंसेव्यावृत्तहोकर पक्षमात्रमेंवृत्तिहो सोअसाधारण हत्वाभासहोताहै । औरयहअसाधारणकालक्षणपूर्वउक्तहेतुमेंप्राप्तहै । क्योंकि अनादिसदरूपभावत्वहेतु घटादिकविपक्षतथाआकाशादिक सपक्षसेव्यावृत्तहोकर पक्षमात्रआत्मामेंवृत्तिहै यातेदुष्टहेतुहै । समाधान श्रुतिमेंआकाशादिकोंकी उत्पत्तिकथनकीहै औरउत्पत्तिवाला यदार्थ घटादिकोंकीन्याईनियम करकेअनित्यहीहोताहै । यातेनित्यत्वसाध्य

काभीआकादिकोंमें अभावहोनेसेसपत्तत्वकाअभावहै।यातेहेतुगतपूर्व उक्तदोषनहींप्राप्तहोसकता। औरयहांकेवलव्यतिरेकिलिंग स्वीकार होनेसेभीपूर्वउक्तदोषनहीं। यहांकेवलव्यतिरेकिकायहआकारहै।

***आत्मानित्यः अनादिभावत्वात्**

यन्नैवं तन्नैवंयथा घटादि *

अ०॥ आत्मानित्यहैअनादिभावरूपहोनेसेजिसमेंनित्यत्वकाअभावहै तिसमेंअनादिभावत्वकाभीअभावहैजैसेघटादिकहैं॥इति॥यद्यपि केवल व्यतिरेकिलिंगमानेहूयेनित्यत्वसाध्यकीअप्रसिद्धिहोगी तथापिसामान्य तोदृष्टानुमानसे अनिश्चितहैधर्मजिसका ऐसेनित्यत्वधर्मके सिद्धहूये केवलव्यतिरेकियनुमान आत्मामेढीनित्यत्वको स्थापनकरताहै॥याते नित्यत्वसाध्यकी अप्रसिद्धिनहीं। यहांसामान्यतोदृष्टानुमानका यह आकार है।

*** नित्यत्वंकचिदाश्रितं धर्मत्वात् रूपादिवत् ***

अ० ॥ नित्यत्वधर्मकिसीके आश्रितहै धर्मरूपहोनेसेजो जो धर्महोताहैसोसोकिसी धर्मिकेआश्रितहोताहै रूपादिकोंकीन्याई।इति। अथवायहानैयायिकमतकेअनुसारआत्मामेंनित्यत्व सिद्धकरनेसेआकाशादिकसपत्तमेंनित्यत्वसाध्यऔअनादिभावत्वहेतुइनदोनोंकीविकलता नहीं। क्योंकि वह आकाशादिकोंको नित्य तथा अनादिभावरूप मानते हैं ॥इति ॥ यहांतककारिका के पूर्वार्द्धका व्याख्यानहूया ॥ अब नित्यत्वके साधकअनुमानमें विपक्षविषयक साधकको निरूपण करतेहूये कारिकाके उत्तरार्द्धका व्याख्यान करतेहैं। यदिआत्मा को अनित्यमानोगे तो कियेहूयेकर्मनका फलभोगसेविनानाश और न

कियेहुएकर्मनका फलभोगजो कृतनाशतया अकृताभ्यागमरूप दोष तिसकीप्राप्ति होगी, भावयहपूर्वउक्तअनुमानसे आत्माकी नित्यता सिद्धहोनेपरभी जोवादीका अनित्यताकथनहै यहहीविपक्षहै, और पूर्वउक्तदोषकी प्राप्तिही विपक्षमेंबाधक है । औरआत्माको अनित्य मानेहुयेकर्ता औभोक्ताकाभी एकत्वनहींहोगा । क्योंकि वादीकेमत मेंदेहरूप आत्माहीकर्मकाकर्ता है । वहतोयहांहीभस्मीभूत होगिया औरनवीन उत्पन्नहूयादेव शरीररूपआत्मा कर्मफलकाभोक्ताहोगा । ऐसेमानेहुयेलोकमें प्रसिद्धकर्ताभोक्ताकेएकत्वका नियमभंगरूपदोष वादीकोप्राप्तहोगा । क्योंकिलोकमेंजोभक्षणक्रियाकाकर्ता है वहीतिस केफलतृप्तिकोप्राप्तहोताहै । अन्यनहीं यदि ऐसानमाने तोदेवदत्तके भोजनकरनेसेयज्ञदत्ततृप्तहूयाचाहिये । सोऐसादेखनेमेंनहींआता याते कर्ताऔ भोक्ताका एकत्वहीमानना उचितहै । जब ऐसे माना तब आत्माकीनित्यता बलात्कारसेसिद्धहूयी ॥ शंका ॥

❀ धर्मिकल्पनातोधर्मकल्पनावरमिति ❀

अ० ॥ धर्मिकीकल्पनासेधर्ममात्रकी कल्पनाकरनेमेंलाघवहै । इसन्यायसे शरीरादिक प्रसिद्धधर्मियोंमें आत्मत्व धर्मकीकल्पना क्यों नहींकरते । समाधान ॥ शरीरादिककार्यवर्गमें आत्मत्वकाअसंभव है । क्योंकि, इसकोअनित्यहोनेसेऔ कार्यहोनेसे तथारूपवालाहोनेसे औजडहोनेसे तथापरिच्छिन्नहोनेसे औदृश्यहोनेसे अनात्मतानिश्चित है । इसकथनसेकारिकाके द्वितीयपादका व्याख्यानहूया ॥ शंका ॥ पूर्वउक्त युक्तिकेवलसे आत्माकीनित्यता सिद्धहुयेभी नैयायिकमतमें तिसकोमानसप्रत्यक्षका विषयहोनेसे तिसके साक्षात्कारकेअर्थ श्रुति प्रमाणकीकिंचितभी अपेक्षानहीं ॥

* आत्मामे श्रुतिप्रमाणकी अपेक्षानिरूपणा

पूर्वक अव्ययपदार्थका निरूपणा *

समाधान ॥ विशिष्टात्माको मानस प्रत्यक्षका विषय हूयें भी शोधनकिया हूया तत्त्वपदकाल द्वयार्थ अकर्ता अमोक्षा शुद्ध आत्मा मानस प्रत्यक्षका विषय नहीं होसकता याते ।

* अविनाशी वाऽरे अयमात्मानुच्छितिधर्मा ।

निष्कलमिति *

दृ० उ० पै० ब्रा० कं० (१४)

अ० ॥ अरे भैत्रेयी यह आत्मा अविनाशी है तथा विनाशसे रहित धर्मवाला है और निस्वयम् है । इत्यादिक श्रुति सिद्ध नित्य आत्माके साक्षात्कारके अर्थ अन्य प्रमाणका अभाव होनेसे श्रुतिप्रमाणकी अवश्य अपेक्षा है । यहां पूर्व उक्त श्रुतिने तीन प्रकारका विनाश जो आत्मामे भ्रान्ति कर प्राप्त था । तिसका निषेध किया है । वह तीन प्रकारका विनाश यह है । एक तो स्वरूपनाश प्रयुक्तनाश है । जैसे विद्युतका विनाश स्वरूपसे होता है । और दूसरा धर्मनाश प्रयुक्तनाश है । जैसे कुंडलरूपधर्मके अभाव होनेसे सुवर्णरूपधर्मका अभाव है । क्योंकि उत्पत्ति तथा विनाशको प्राप्त होता हुआ धर्म अपने आश्रयरूप धर्मको भी विकारिकर देता है । और तीसरा अवयवोंके विनाश प्रयुक्तनाश है । जैसे तंतूरूप अवयवके विनाश होनेसे वस्त्रकानाश है । इसीको शास्त्रमे अपक्षयशब्दसे कथन किया है । इनमे स्वरूपनाश प्रयुक्तनाशका आत्मामे निषेध करने के लिये " अविनाशी " यह पद श्रुतिने कथन किया है । और दूसरेनाश

कें निषेधकरनेकेलिये “अनुच्छितिधर्मा” यहपदकथनकियाहै । और तीसरेविनाशके निषेधकरनेकेलिये “निष्कलं” यहपदकथनकियाहै । इसीअभिप्रायसेप्रथमकारिकामें (अव्ययं) यहआत्माकाविशेषणकथन कियाहै । यद्यपियहांव्ययनामविनाशकाहै नजोविनाशहोउसकानाम अव्ययहै । इसप्रकारकासमास कियेहुयेअविनाशीरूपताआत्माकी सिद्धनहींहोसकती । क्योंकिअपनेविनाशसेभिन्नजो घटादिकप्रतियोगीहैं तिनमेंअनित्यपनाहीदेखाहै । तैसेस्वनाशसेभिन्नआत्मामेंभी अनित्यपनाहोगा । तथापियहांपूर्वउक्तसमासनहीं किन्तुसमासांतर है । सोदिखलातेहैं ॥

न विद्यतेव्ययेविनाशोधर्मतः स्वरूपतोऽव्यवतो
यस्यसत्रव्ययः ॥

अ०—जिसकाधर्मसे औरस्वरूपसे तथाअव्ययवसे विनाशनहो तिसकोअव्ययकहतेहैं । “अर्थयह” आत्माकोनिस्वयवहोनेसे अव्यवनाशप्रयुक्त नाशनहींहोता । और निर्धर्मकहोनेसे धर्मनाश प्रयुक्तनाश नहींहोता ॥ औरनित्यहोनेसे स्वरूपनाशप्रयुक्त नाश नहींहोता ॥ शंका ॥ सांख्यमतमें प्रकृतिको परिणामिनित्यमानाहै तिसका स्वरूपसे जैसेनाशहोताहै तैसे आत्माकाभीनाशहोगा समाधान । परिणामिनित्यपदार्थकीन्याई आत्माकास्वरूपसे अर्थात्परिणामरूपसेनाशनहींहोता, क्योंकिआत्माकूटस्थनित्यहै, अर्थात्परिणाम रूपविकासे रहितनित्यहै और परिपूर्णहै ॥ इतिअव्ययपदव्याख्या ॥

❀ अथ ज्योतिपदव्याख्याप्रारंभः ॥ ❀

श्रुतिसिद्धआत्माके साक्षात्कारकेअर्थ श्रुतिप्रमाणकीअपेक्षाहै।

यह अर्थ पूर्व निरूपण किया ॥ तहां आत्माको श्रुतिसिद्धयत्न निषेध करने
के लिये पूर्वपक्षी कोई एकनास्तिक भूमिका रचना करता है ॥

॥ अथ पूर्वपक्ष ॥

❀ आत्मामे प्रमाणके अभावसे,

असत्यताका निरूपण ❀

हे सिद्धांतिन् जिस आत्माकी नित्यता आप प्रतिपादन करते हो
तिसमे कोई प्रमाण है अथवा नहीं ॥ यहां प्रथम पक्षमें बहुत वक्तव्य होनेसे
द्वितीय पक्षमें प्रथम दूषण दिखलाते हैं ॥ तहां द्वितीय पक्ष तो नहीं संभवता।
क्योंकि प्रमाणके आधीन ही वस्तुकी सत्ता है। प्रमाणके अभावहुये आत्मा
को असत् रूपताकी प्राप्ति अवश्य होगी ॥ शं १ ॥ हेवादिन् प्रमाणके
आधीन वस्तुकी सत्ता है। इस तुम्हारे नियमका प्रमाणमें व्यभिचार है ॥
क्योंकि प्रमाणमें प्रमाणका अभावहुए भी तुमने प्रमाणकी सत्ता मानी है।
समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् यह आपका कथन नहीं संभवता ॥ क्योंकि
स्वपरका साधक जो प्रमाण तिसको हम प्रकाशक स्वभाव मानते हैं ॥ याते
तिसमें प्रमाणके अभावहुए भी असत् रूपता नहीं हो सकती ॥ और आत्मा
तो प्रमेय एक स्वभाव है ॥ इसीसे प्रमाणके अभावहुए आत्माको असत्
रूपकी प्राप्ति आवश्यक है ॥ यदि ऐसे माने तो प्रमाणके अभावहुए नर
शृंगादिकभी सत्यहुए चाहिये। सो नरशृंगादिकोंकी सत्ता हम देखते नहीं ॥
याते प्रमाणके अभावसे जैसे नरशृंगादिक असत् हैं। तैसे आत्मा भी असत्
रूप होगा ॥

❀ आत्मामे लौकिक प्रमाणका अभाव निरूपण ❀

और यदि प्रथम पक्ष माने तो तिसमें यह कहना चाहिये। वह प्रमाण

लौकिक है अथवा वेद है। प्रथम पक्ष में भी यह विचार करने योग्य है। वह लौकिक प्रमाण प्रत्यक्ष है वा अनुमान है अथवा शब्द है वा इनसे कोई भिन्न है। प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि शब्दादिक गुणों को आकाशादिक भूतों का धर्म होने से और सृतिज्ञान तथा इच्छादिक गुणों को अंतस्करण का धर्म होने से आत्मा सर्वधर्मों से रहित है। और यदि निर्धर्मक आत्मा में भी इन्द्रिय की विषयता मानो तो नहीं संभवती। क्योंकि नेत्र इंद्रिय रूपवान् वस्तु को ही विषय करता है। रूप रहित को नहीं। अन्यथा वायु का प्रत्यक्ष भी नेत्र इंद्रिय से दृष्टा चाहिये। ऐसे ही श्रोत्रत्वक् रसना प्राणायह चारों इंद्रिय भी शब्द और स्पर्शान्त धारस्र और गंधमात्र को विषय करते हैं। शब्दादिकों से विलक्षण आत्मा को नहीं विषय कर सकते। और इंद्रियों को वाह्य वस्तु के देसने का स्वभाव है। आत्मा तुमने सर्वसे अंतर माना है। याते भी इंद्रियों की आत्मा में प्रवृत्ति नहीं हो सकती। और अनुमान प्रमाण का भी आत्मा विषय नहीं। क्योंकि आत्मव्याप्त हेतु का अनिश्चय है। भाव यह आत्मा का निश्चयक जो हेतु है सो आत्मा करके व्याप्त ही ग्रहण करने योग्य है। तिस आत्मव्याप्त लिंग के ग्राहक इंद्रिय हैं यह कथन तो नहीं संभवता। क्योंकि रूपादि चान्तथा वाह्य वस्तु को ही इंद्रिय विषय करते हैं। यह पूर्व कथन किया है। और अनुमान से भी तिस आत्मव्याप्त लिंग का ग्रहण नहीं हो सकता। क्योंकि अनवस्था दोष की प्राप्ति है। भाव यह आत्मा को अतीन्द्रिय होने से आत्मविशिष्ट हेतु भी अतीन्द्रिय कहना होगा। तिस हेतु के ज्ञान अर्थ और अनुमान की अपेक्षा होगी। तथा दूसरे अनुमान को भी लिंगज्ञान जन्य होने से लिंग के ज्ञान अर्थ तीसरे अनुमान की अपेक्षा होगी। और तीसरे अनुमान को त्रैथेकी अपेक्षा होने से अनवस्था की प्राप्ति अवश्य होगी ॥ शंका ॥

हेवादिन् जहां अन्वयिलिंगसे साध्यकी सिद्धि होवहां साध्यव्याप्तहेतुका निश्चय अनुमानका अंग है । और जहांकेवल व्यतिरेकिलिंगसे साध्यकी सिद्धि होवहां व्यतिरेकव्याप्तिका निश्चय अनुमानका अंग है । इस कथनसे यह अर्थ सिद्ध हुआ । प्राणादिमत्व रूपव्यतिरेकिलिंगसे आत्माकी सिद्धि होती है । तिस अनुमान का यह आकार है ।

❀ जीवच्छरीरं सात्मकं प्राणादिमत्वात्
यन्नैवं तन्नैवं यथा घटादि ❀

अ०—जीवत्शरीर आत्मासहित है । प्राणादिवाला ज्ञानसे जो जो आत्मासहित नहीं है । सो सो प्राणादि वाला भी नहीं है । जैसे घटादिक हैं ॥ इति ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् प्रतियोगी ज्ञान विना अभाव का ज्ञान नहीं होता यह नियम है । जैसे अग्निरूप प्रतियोगीके ज्ञान विना अग्निके अभावको कोई नहीं जान सकता । तैसे ही आत्मारूप प्रतियोगीके ज्ञान विना आत्माके अभावरूप साध्याभावकी प्राणादिमत्वाभावरूप साधनाभावके साथ व्याप्तिका ग्रहण कैसे होगा । और इसी अनुमानसे आत्माका ज्ञान माने हुए कैसे अन्योऽन्याश्रय दोष नहीं प्राप्त होगा क्योंकि आत्माकी सिद्धि हुए इस अनुमानकी प्रवृत्ति और अनुमानके प्रवृत्त हुए आत्माकी सिद्धि माननी होगी ॥ ऐसे दोनोंको अपनी सिद्धि में परस्पर आपेक्षा होनेसे अन्योऽन्याश्रय दोष स्पष्ट ही है ॥ और इसकेवल व्यतिरेक अनुमानमें अप्रसिद्ध विशेषण वाला पक्ष भी है ॥ क्योंकि ॥

सर्वकार्यं सर्ववित्तकर्तृपूर्वकं कदाचित्क-

त्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथा आकाशादि ।

अ०—सर्वकार्यं सर्ववित्तकर्तृपूर्वकं अर्थात् किसी सर्वज्ञकर्ताकर

रचितहैं । कदाचित्कहोनेसे जोजोसर्ववित्कर्तृपूर्वकनहींहैं सोसोकदा-
चित्कभीनहींहैं । जैसेआकाशादिकहैं ॥ इति ॥ जैसेइसअनुमानसे
पूर्वसर्ववित्वादिविशेषणकीअप्रसिद्धिहोनेसे अप्रसिद्धप्रविशेषणवाला
पत्रहै । तैसेहीसिद्धांतीनेआत्माकीसिद्धिअर्थकथनकियाजो अनुमान
तिसकीप्रवृत्तिसेप्रथमजीवतशरीररूपपत्रमें सात्मकत्वरूपसाध्यकीअप्र-
सिद्धिहोनेसे अप्रसिद्धविशेषणवालापत्र प्रसिद्धहै । यातेप्राणादि
मत्वहेतु आश्रयसिद्धिरूपदोषकर दुष्टहोनेसेभी आत्माकासाधकनहीं ।
इसप्रकारआत्माअनुमानकाविषयनहीं। अथवासरेपत्रकोदूषितकरतेहैं ।
औरलौकिकशब्दभी आत्माकोविषयनहींकरसकताहैं । क्योंकिप्रत्यक्ष
औरअनुमानकीजहांविषयताहोवहांहीलौकिकशब्दप्रवृत्तहोताहै। और
आत्मामेंपूर्वउक्तरीतिसे पूत्यक्षादिकोंकी विषयताकाअभावहै । याते
लौकिकशब्दभीतिसमें प्रमाणनहीं । औरइनतीनोंसेभिन्नअन्यकिसी
प्रमाणकीसंभावनाभीनहींहोसकती । क्योंकिअर्थापत्तिप्रमाणतो अन्य
प्रकारसे उपपन्नहै । सोऐसेहै । शरीरकाजीवनप्राणोंसेविना अनुप-
पन्नहुया प्राणआत्माकी कल्पनाकरताहै ॥ इति ॥ औरअनुपलब्धि
प्रमाणकी आत्मामेंयोग्यताहीनहीं ।

❀ अथआत्मामेंवेदप्रमाण की विषयता का निषेध निरूपण ❀

अथआदिमें कथन कियाजो दूसरापत्रथा तिसको वादीनिषेध
करताहै । दूसरेपत्रमेंभी यहविचारकरने योग्यहै । वेदजन्यज्ञानभास्यत्व
रूपविषयत्वआत्मामेंहै ॥ अथवा ॥ प्रकारांतरसेभासमान आत्मामें
वेदजन्य ज्ञानसे निवृत्तहोनेयोग्य अज्ञानकी विषयत्वरूप विषयत्व है

यहाँवेदजन्यज्ञानसेनिवृत्तिके योग्यअज्ञानकरजोआच्छादितपनाहैयही
आत्मामेंअज्ञानकीविषयताजाननी॥ वेदजन्यज्ञानभास्यत्वरूपविषयत्व
हैइसप्रथमपक्षकोरूपितकरतेहैं । प्रथमपक्षमेंआत्माकोवेदजन्यज्ञानका
विषयहोनेसेघटादिकोकीन्याईजडताहोगी । औरजडताहोनेसेअनात्म
पनाहोगा । यहाँयहअनुमानजानना ॥

आत्माअनात्माभवितुमर्हतिजडत्वात्घटादिवत्

अ० ॥ आत्माअनात्माहोनेकेयोग्यहै । जडहोनेसे । जोजो
जडहोताहैसोसोअनात्माहोताहै । जैसेघटादिकहैं ॥ इति ॥ शंका॥
हेवादिन्तुयहाँचिद्काविरोधिजडत्वकहतेहोअथवाचिद्काअनधिकरणत्व
जडत्वहै । यहदोनोंप्रकारकाजडत्वआत्मामेंनहींसंभवता । क्योंकि
आत्माचिद्रूपहै । तिसमेंज्ञानकीविषयतासेजडपनालुमकैसेआपादन
करतेहो । औरजडत्वहेतुअनात्मताकासाधकभीनहीं । क्योंकितिसमें
ज्ञानाज्ञाश्रयत्वउपाधिहै । सोएसेहै । जहाँजहाँअनात्मत्वहैतहाँतहाँ
ज्ञानाज्ञाश्रयत्वहै । जैसेघटादिकोंमेंहै । औरजहाँजहाँजडत्वहैतहाँ
तहाँज्ञानाज्ञाश्रयत्वनहीं । जैसेआत्मामेंहै । इसप्रकारअनात्मत्वसाध्य
केसाथव्यापकऔरजडत्वहेतुकेसाथअव्यापकहोनेसे ज्ञानाज्ञाश्रयत्व
कोउपाधिरूपताकासंभवहै । यातेजडत्वहेतुसोपाधिकनामाहेत्वाभास
है । स्वसाध्यकासाधकनहीं । समाधान । हेसिद्धांतिन्आत्मामेंज्ञान
भास्यत्वमानेहूएचेतनरूपताकीअसिद्धिहै ॥ क्योंकि भास्यरूपअर्थात्
दृश्यभीहोपुनः वहचेतनहोएसेकहींभी प्रसिद्ध नहींहै । औरज्ञानमें
वेद्यत्वभीस्वीकारनहींउलटातिसकोअवेद्यस्वभावमानाहै। औरज्ञानाज्ञा
श्रयत्वमेउपाधिरूपताभीनहींसंभवती । क्योंकिनैयायिकमतमेवदपक्ष

इतरत्व है । यदि पक्षेतरत्वको भी उपाधिरूपमान लें तो सर्वही सतहेतु दुष्ट हो जायेंगे । क्योंकि सर्वही सतहेतु पक्षेतरत्वरूप उपाधिकर युक्त ही हैं । याते पक्षेतरत्वको उपाधिरूपतानहीं संभवती । किंवा यह उपाधिसाधन के साथ भी व्यापक है । क्योंकि जहां जहां जडत्व है तहां तहां ज्ञानाज्जाश्रयत्व भी है । जैसे शरीरवाह्यदेशावच्छिन्न आत्मा मे है । इसरीतिसे ज्ञानाज्जाश्रयत्वको उपाधि पनेके नवननेसे जडत्वहेतु निर्दोषहूया अनात्मत्वका साधक है ॥ इति ॥ और द्वितीयपक्षमे भी यह विचारकर्तव्य है । वह प्रकारंतरसे आत्मामे भासमानत्व क्या है । स्वयं भासमानता है अथवा अन्य किसी प्रमाणसे भासमानता है । अंत्यपक्षमे तो दोषपूर्वक थनकर आये हैं याते पुनः कथनकी आवश्यकतानहीं । और स्वयंप्रकाशरूपतासे भासमान आत्मा अज्ञानकर आच्छादित है यह प्रथमपक्ष शेषरहता है वह भी नहीं संभवता । क्योंकि स्वयंप्रकाशस्वरूप आत्मामे अज्ञानकी विषयताका ही असंभव है । अर्थ यह अज्ञानका विषय आत्माको माने हूये अभासमानता होगी । सो स्वयं भासमान आत्मामे निरूपण नहीं हो सकती ॥ शंका ॥ हेवादि नृजेसे स्वयं भासमान सूर्यमे अभासमानताकी संभावना उल्लूकादिक करते हैं । तैसे ही स्वयं भासमान आत्मामे भी अभासमानताकी संभावना अज्ञानोंको हो जायेगी ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांति नृजेसे मय्यान्हकाल वर्ति स्वयंप्रकाशमान सूर्यमे कोई भी अंधकारकी संभावना नहीं कर सकता । और सूर्यको अंधकारकरके आच्छादित होनेसे उल्लूकादिक तिसको नहीं देखते यह वार्ता नहीं । किन्तु सूर्यके प्रकाशसे तिनकी द्रष्टि मंद हो जाती है तिसदिवांधत्वरूप दोषसे वह सूर्यको नहीं देख सकते । तैसे ही स्वयंप्रकाश आत्मामे अज्ञानविषयत्वके असंभवसे वेदप्रमाणकी विषयतानहीं संभवती ।

यातेदेहादिकोंसेभिन्नआत्माअसतहै । यहअर्थसिद्धहुआ ॥ इति ॥

* अथएकदेशिवेदांतिकीरीतिसेपूर्वपक्षका
समाधाननिरूपण *

हेवादिन्आत्मामें अज्ञानविषयत्वके अभावसे वेदप्रमाणकीवि-
षयतानहीं संभवती यहपूर्वतुमनेकथनकिया। सोक्याअज्ञानकीविषयता
जीवमेंनहींसंभवती यहतुमकहतेहो । अथवा ब्रह्ममेंनहींसंभवती यह
तुमकहतेहो । तिनमेंप्रथमपक्षतोहमकोभी स्वीकारहै । क्योंकिकर्ता
औरभोक्तारूपसंसारजीवको वेदनहींप्रतिपादनकरता । तिसकेप्रति-
पादनमेंकोईप्रयोजननहीं । औरद्वितीयपक्षतोनोंसंभवता । क्योंकि
ब्रह्ममेंअज्ञानकीविषयता “ब्रह्मनजानामि”इसअनुभवसेसिद्धहै । याते
वेदजन्यज्ञानकरके निवृत्तिकेयोग्य अज्ञानविषयत्वरूपवेदप्रमाणकीवि-
षयताकैसेनहींसंभवती । इसप्रकारकाजोएकदेशीकामतहै । तिसको
दूषितकरनेकेलिये पूर्वपक्षीतिसकोप्रकटकरताहै । पूर्वआत्मामेंप्रमाण
काअभावनिरूपणकिया। तिसप्रमाणकपनेके निषेधमेंकोईकर्मंडनमत
को आश्रयणकरनेवाले औरआगेकथनकीहुईरीतिसे आत्माअज्ञान
काविषयहै इसकोनसहनकरतेहुये उत्तरदेनेकोपूर्वपक्षीके सन्मुखअव-
स्थितहोतेहैं ॥ शंका ॥ पूर्वब्रह्माविषयकअज्ञान तुमनेमानाहै और
जीवविषयकनहींमाना ॥ सोकथननहींसंभता ॥ क्योंकि—

* अथमात्माब्रह्म *

अ०—यहआत्माब्रह्मस्वरूपहै। इसश्रुतिवचनसेजीवब्रह्मसेअभिन्नहै
यातेवहकैसेअज्ञानकाविषयनहीं किंतुअज्ञानकाविषयहै॥समाधान॥ हे
वादिन्श्रुति सिद्धअद्वैतकोसंकोचकरके जीवऔरब्रह्म तथाजीवोंका

परस्परभेदहमकल्पनाकरतेहैं । यातेजीवत्रज्ञानकाविषयनहीं ॥शंका॥
यदिवास्तवद्वैतके आश्रयणकरनेसेही जीवात्मात्रज्ञानका विषयनहीं
यहनिषेधवनसकताहै तोप्रमाणशून्यत्रद्वैतकामंकोच किसलियेकरतेहो
॥ समाधान ॥ हेवादिन् ॥

❀ यत्परःशब्दःसशब्दार्थ ❀ पृ० पृ०

अ०-जिसकोतात्पर्यवृत्तिसे शब्दबोधनकरे सोईशब्दकाअर्थ
होताहै । इसन्यायकोआश्रयणकरनेसे अद्वैतश्रुतिप्रत्यक्षादिकप्रमाणों
को अभासरूपताकरके प्रत्यक्षादिसिद्धद्वैतकोबाधकर अद्वैतकोस्थापन
करतीहै । यातेअद्वैतअप्रमाणकनहीं । इसीकारणसे अपनेमतकीसिद्धि
केअर्थअद्वैतकासंकोच अवश्यकरनेयोग्यहै । इसमेंकारणयहहै । एक
जीवश्रौतिसकासंपादक एकअज्ञानस्वीकारकियेहुये साधनोंके अनु-
ष्ठाताकिसी एकपुरुषकोतत्त्वज्ञानके उत्पन्नहुयेजगत्के उपादानभूतअ-
ज्ञानकाविनाशहोनेसे इसवर्तमानकालमें किसीकोभी संसारकाअनुभव
नहींहोगा । श्रौतसेहीकोईबद्धहै कोईमुक्तहै । इसप्रकारकीव्यवस्था
भी सिद्धनहींहोगी । यातेजीवब्रह्मकेभेदसे विनाबद्धमुक्तादिकव्यव-
स्थाकीअनुपपत्तिसेअद्वैतकासंकोचअवश्यकरनेयोग्यहै॥इति॥शंका॥
हेएकदेशिन् यदिआत्माविषयकअज्ञाननहींहै तोक्याअज्ञाननिर्विषयही
है । श्रौत्यदियहकहो अज्ञानकाविषयब्रह्महै॥मोनहींसंभवता॥ क्योंकि
ब्रह्मस्वयंप्रकाशस्वरूपहै । तैसेअज्ञानकाआश्रयभी कोईनहींनिरूपण
होसकता।यद्यपिजीवहीअज्ञानकाआश्रयहैतथापितिसकोअज्ञानविशि-
ष्टहोनेसे अज्ञानकीआश्रयतानहींसंभवती । क्योंकिआत्मआश्रयदोष
रहितहोताहै ॥ सोइसप्रकारहै ॥

❀ विशिष्टवृत्तिधर्मस्यविशेषणवृत्तित्वनियमात् ❀

अ०—विशिष्टमेंवर्तनेवाले धर्मकाविशेषणमें वर्तनेकानियमहै । इसन्यायसे अज्ञानविशिष्टमेंवृत्तिजोअज्ञानकीआधारता सोविशेषणी भूतअज्ञानमेंभी अवश्यवर्तेंगी यातेआत्माश्रयदोषहोनेसे जीवभीअज्ञान का आश्रयनहीं । औरब्रह्मकोभी अज्ञानकीआश्रयतानहींसंभवती । क्योंकि ब्रह्मकोतुमनेअज्ञानकाविषयमानाहै । विषयहोनेसेहीतिसको आश्रयतानहींसंभवती । औरअज्ञानकोआश्रय तथाविषयके भेदकी अपेक्षाहोनेसेभीएकहीआश्रय तथाविषयनहीं बनसकता। औरब्रह्मको अज्ञानकाआश्रयमानेहुये जीवकीन्याई अल्पज्ञहोनेसे सर्वज्ञताकीभी हानीहोगी । इसरीतिसेअज्ञानकाआश्रय तथाविषयकोईभी निरूपण नहीं होसकता ॥ इति ॥ समाधान ॥

❀ अथएकदेशीकीरीतिसेअविद्याकेआश्रय
तथाविषयकाभेदनिरूपण ❀

जीवाश्रयाब्रह्मपदाह्यविद्यातत्त्वविन्मता ।

तद्विरुद्धमिदंवाक्यमात्मात्वज्ञानगोचरः ॥ ३ ॥

चौ०—जीवाश्रितयौब्रह्मविषैनी । आहियविद्याबुधजनवैनी ॥ अज्ञान विषयआत्मपुनगायो । ततविरुद्धयहवचननभायो ॥ ४ ॥

टी०—ब्रह्मकोस्वयंप्रकाशहोनेसे तिसमेंअज्ञानकी विषयतानहीं संभवती यहपूर्ववादीनेकथनकिया सोअसंगतहै । क्योंकिअविद्याकी क्रल्पनाकरनेवालेजीवकेप्रति वहब्रह्मस्वयंप्रकाशरूपतासे सम्यक्भात्र

नहीं होता । और जिसके ज्ञानसे मोक्ष हो तिसके अज्ञानसे ही बंध होता है यह निर्विवाद है । और ब्रह्मके ज्ञानसे मोक्ष होता है यह वार्ता —

✽ ब्रह्मवेदब्रह्मैव भवति ✽

अ०—ब्रह्मके जाननेवाला ब्रह्मस्वरूप होता है । इस श्रुतिमें प्रसिद्ध है । इसी कारणसे बंध भी ब्रह्मके अज्ञानसे ही होता है । याते किस प्रकार तुम ब्रह्ममें अज्ञानकी विषयताका अभाव प्रतिपादन करते हो । और जीव को अज्ञानका आश्रय मानने में जो आत्माश्रय दोष तुमने पूर्व कहा था । वह भी नहीं संभवता । क्योंकि अज्ञानको उपाधिरूपता से तटस्थ होकर जीवभावकानियामक होनेसे जीवकोटिसे वह ब्रह्म है । इतना मूलकारिकामे जो (हि) शब्द है तिसका अर्थ जानन ॥ शंका ॥ व्याकरणमें (आप्) धातुव्याप्ति अर्थान्पूर्णा अर्थमे है तिसधानुसे आत्म शब्दकी सिद्धि होनेकर तिसको ब्रह्मका वाचकपना ही प्रतीत होता है ॥ और ब्रह्ममें अज्ञानकी विषयता तुम मानते हो ॥ और पूर्व उक्तीतिसे ब्रह्म और आत्मा एक ही पदार्थ है ॥ याते आत्मामे अज्ञानकी विषयताका अभाव तुम कैसे कथन करते हो ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यद्यपि योगवृत्तिसे आत्मशब्द ब्रह्मका वाचक है ॥ तथापि ॥

✽ रूढियोगमपहरति ✽

अ० ॥ रूढिवृत्तियोगवृत्तिको हर लेती है ॥ इस न्यायसे आत्मशब्द जीवका ही वाचक है ॥ सो जीव अज्ञानका आश्रय है विषय नहीं ॥ विषय तो अज्ञानका ब्रह्म ही है ॥ इस प्रकार अज्ञानकी विषयता होनेसे ही वेदजन्य ज्ञानकरके निवृत्तिके योग्य अज्ञानविषयत्वरूप जो वेदप्रमाणाकी विषयता सो ब्रह्ममें संभवे है ॥ इति ॥ शंका ॥ जीव अज्ञानका आश्रय हो परन्तु तिस

को एक होने से ब्रह्ममुक्तादिक व्यवहार कैसे सिद्ध होगा ॥ समाधान ॥ हे
 वादिन् ब्रह्मज्ञानका आश्रयरूप जीवनाना हैं अन्यथा ब्रह्ममुक्तादिक
 व्यवहार नहीं वनेगा। जीवोंका भेद ब्रह्ममुक्तादिक व्यवहारका साधक है इसी
 अर्थको स्पष्ट करते हैं ॥ जिस अधिकारिको श्रवणादिकोंके अभ्यासकी
 पुष्कलतासे ब्रह्मही आत्मा में हूँ ॥ इस प्रकारका साक्षात्कार हुआ है ॥ तिस
 पुरुषका मोक्ष होता है और तिससे भिन्न ब्रह्म रहता है ॥ यहां मुख्य सामानाधि
 करणकी न्याईपदोंका बाध सामानाधिकरणमाने हुये भी ब्रह्मस्वरूपही
 आत्मा है तिस ब्रह्मसे इतर नहीं क्योंकि कल्पितपदार्थकी अधिष्ठानसे भिन्न
 सत्तानहीं होती ॥ याते पूर्व उक्त बोधका आकार बन सकता है ॥ यह भाव
 है ॥ शंका ॥ यद्यपि पूर्व उक्तरीतिसे जीव अनेक हों तथापि तिनका उपाधि
 रूप ब्रह्मज्ञानको एक होनेसे ब्रह्मज्ञान करतिस एक ब्रह्मज्ञानके निवृत्त हुये पुनः
 संसारकी प्रतीतिकिसीको नहीं होगी ॥ समाधान ॥ हे वादिन् पूर्व उक्त
 ब्रह्ममुक्तादिक व्यवहारकी अनुपपत्तिसे ब्रह्मज्ञानभी अनेक कल्पना किये
 जाते हैं ॥ याते संसारकी प्रतीतिका संभव है ॥ शंका ॥ साधारण तथा
 असाधारण प्रपंचका उपादान और प्रतिबिंबतुल्य अनेक जीवोंके आश्रित
 और ब्रह्मको विषय करने वाला एक ही ब्रह्मज्ञान ब्रह्ममुक्तादिक व्यवहार
 का साधक क्यों न हो ॥ इसी अर्थको दिखलाते हैं जिस अधिकारिकी जीव
 में तत्त्वसाक्षात्कार उत्पन्न होता है । तिरा आश्रयको विरोधसे त्याग
 कर और आश्रयरूप जीवोंमें ब्रह्मज्ञान वर्तता है । जिस आश्रयको ब्रह्म
 न त्यागता है । तिसको मुक्त कहते हैं । जिनमें स्थित होता है तिन
 को ब्रह्म कहते हैं । तैसे माने हुये एक ब्रह्मज्ञानसे ही अनेक प्रकार का
 ब्रह्ममुक्तादिक व्यवहार सिद्ध हुये पुनः अनेक ब्रह्मज्ञानोंकी कल्पना

निष्फल है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् हमयहपूछते हैं । तत्त्वज्ञान अपने
 आश्रयसे अज्ञानको निकासदेता है यथवातिसको नाशकरदेता है ।
 यदि प्रथमपक्षमानो तो अज्ञानकी निवृत्ति नहीं होगी । क्योंकि ज्ञानसे
 भिन्न और कोई अज्ञानकानिर्वर्तक है नहीं और न तुमने माना है । तैसामाने
 हुये अज्ञानको नित्यत्व प्रसंग होगा । और अज्ञानको नित्य होनेसे द्वैतकी
 भी प्राप्ति होगी याते प्रथमपक्ष असंगत है । और यदि द्वितीयपक्ष कहो
 तो अज्ञानको एक माने हुये एक पुरुषके ज्ञानसे अज्ञानतत्कार्य सर्वप्रपंचकी
 निवृत्ति हुये प्रत्यक्षादि प्रमाणमिच्छ जगत् का किसीको भी अनुभवन नहीं होगा
 और यदि वादी ऐसे कहे यत्र पर्यन्त किसीको ज्ञान ही नहीं हुआ सो कथन
 असंगत है । क्योंकि पूर्वकालमे जो व्यासवसिष्ठादिक महान् पुरुष हुये हैं ॥ यौ
 सम्यग्रूपों तथा उपांगों सहित साधनोंका अनुष्ठान जिन्होंने किया है ॥
 तिनको भी जव ज्ञान नहीं उत्पन्न हुआ तो इसकालमे होनेवाले अस्मदादिक
 जीवोंको ज्ञान उत्पत्तिकी संभावना भी अशक्य होनेसे श्रवणादिक साधनों
 के अभ्यासमे प्रवृत्तिके अभाव हुये अनिर्माज्ञप्रसंग होगा यथा कि किसीको
 भी मोक्षकाला मन नहीं होगा ॥ यहां श्रमादिक ज्ञानके अंग हैं और अज्ञादिक
 उपांग हैं और श्रवण आदिक साधन हैं ॥ और दीर्घकाल तथा आदर और अंत
 रायसे रहित जो श्रवणादिकोंका अनुष्ठान है यह ही अनुष्ठानमे सम्यकरूपना है
 ॥ इति ॥ शंका ॥ जैसे बद्धमुक्तादिक व्यवस्थाके अनुसार अनेक अज्ञान
 कल्पना किये हैं जैसे प्रत्यक्षादिक प्रमाणोंके अनुसार मत्त्व ही द्वैत क्यों न हो
 ॥ समाधान ॥

ॐ प्रत्यक्षादिकोंमें प्रामाण्यताकानियेध ॐ

हेवादिन् प्रत्यक्षादिक प्रमाणोंके अनुसार द्वैतको मत्त्वमाने हुयेति-
 समंतुमको यह कथन करनेके योग्य है ॥

प्रत्यक्षादिप्रमाणानां प्रमात्वंपरतोयदि ।

अनवस्थास्फुटांतत्रस्वतस्त्वेदोपसंशयः ॥ ४ ॥

स्वैया ॥ यहलौकिकमानजितेजगमेपरतोपरमात्वयदीतिन
मार्हीं ॥ अनवस्थविख्यातभयीतिनमेयहनीकविचारकरोमनमार्हीं ॥
परमात्वसुतस्त्वकहोजवहीतदोपसंदेहभयोतहिमार्हीं ॥ इहकारण
द्वैतअसत्यविचारधरोअदुतीयसदामनमार्हीं ॥ ५ ॥

टी० ॥ प्रत्यक्षादिकप्रमाणोंमेयहप्रमात्वक्याहै ॥ अर्थयहसो
प्रमात्वजातिरूपहैअथवाउपाधिरूपहै ॥ प्रथमपक्षनहींसंभवता ॥
क्योंकि 'इंद्रजतं' इसभ्रमज्ञानमेसंकरहै ॥ सोऐसैहै ॥ केवलप्रमात्व
'अयंघटः' इसज्ञानमेरहताहै ॥ औरकेवलअप्रमात्वस्वान्गजादिज्ञान
मेवर्तताहै ॥ तिनदोनोंकाएकत्रप्रवेश 'इंद्रजतं' इसभ्रमज्ञानमेअंश
भेदसेविद्यमानहै ॥ सोसंकरदोपजातिकाबाधकहोताहै ॥ यातेप्रमात्व
जातिरूपनहीं ॥ परस्परअत्यंताभावकेअधिकरणमेरहनेवालेदोधर्मों
काजोएकत्रप्रवेशहैइसीकानामसंकरहै ॥ इति ॥ अथउपाधिरूपप्रमात्व
पक्षकेदूषितकरनेकेलियेदोविकल्पदिखलातेहैं ॥ तहां "व्यवहारमे
समर्थअर्थविषयत्वरूपप्रमात्वहै" अथवा सर्वकालमे अन्वहितअर्थ
विषयत्वरूपप्रमात्वहै ॥ प्रथमविकल्पमेअर्थविषयत्वरूपप्रमात्वकहेंतोभ्रम
ज्ञानमेअतिव्याप्तिहोगी ॥ तिसदोपकेदूरकरनेकेअर्थ "व्यवहारमेंसमर्थ"
यहअर्थकाविशेषणकहाहै ॥ भ्रमकाविषयजोअर्थसोव्यवहारमेसमर्थ
नहीं ॥ यदितिसकोभीव्यवहारमेसमर्थमाने ॥ तोमरुस्थलमेजलके
भ्रमसेप्रवृत्तहुयेपुरुषकीभीपिपासानिवृत्तहूयीचाहिये ॥ औरमरुस्थल
केजलसेकिसीकीभीपिपासाउपशमनहींहोती ॥ यातेभ्रमकाविषयजो

अर्थवहव्यवहारमेसमर्थनहीं ॥ इसलिये “व्यवहारमेसमर्थ” यहअर्थ काविशेषणकथनकीयाहै ॥ तैसेसर्वकालमेअत्राधितअर्थविषयत्वरूप प्रमात्वहै ॥ इसदूसरेविकल्पमेयदि “सर्वकाल” यहपदनकहतेतोभ्रम ज्ञानमेअतिव्याप्तिहोती ॥ क्योंकिअत्राधितअर्थविषयत्वभ्रमकालमे भ्रमज्ञानमेभीहै ॥ यातेभ्रमज्ञानमेअतिव्याप्तिकेपरिहारअर्थ “सर्वकाल” यहविशेषणकथनकीयाहै ॥ इसप्रकारदोनोंविकल्पोंमें विशेषणोंकी सफलतादिखलाकरअवतिनदोनोंविकल्पोंकोक्रमसेनिषेधकरतेहैं ॥ हे वादिन्भ्रमकेविषयभूतअर्थकोव्यवहारमें समर्थपनाकिया? भ्रमकालमें नहीं है ॥ अथवावाधकालमेनहीं है ॥ प्रथमपक्षतोर्नहींसंभवता ॥ क्योंकिभ्रमकालमेप्रवृत्त्यादिकरूपव्यवहारकी सामर्थ्यरजतादिरूपअर्थमे देखीजातीहै ॥ औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै ॥ क्योंकिवाधकालमेभ्रमज्ञान काअभावहोनेसेतिसकेविषयभूतअर्थकाभीअभावहै ॥ यातेभ्रमज्ञान मेप्रथमप्रमात्वकेलक्षणकीअतिव्याप्तिहोनेसे प्रमात्वकालक्षणदुष्टहै ॥ औरभ्रमकालमेकल्पितपदार्थकोव्यवहारकासाधकमाननेमे कोईविरोध नहीं ॥ यातेप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥ औरद्वितीयपक्षमेभीयहविचार कर्तव्यहै ॥ वहसर्वकालमे अत्राधितअर्थविषयत्वरूपप्रमात्वक्यास्वतः ग्राह्यहै ॥ अथवापरतोग्राह्यहै ॥ अर्थयहप्रमात्वकाआश्रयजोप्रमाज्ञान तिसकाग्राहकजोसामग्रीतिसकरग्राह्यत्वहै ॥ अथवा ॥ अपनेआश्रयकाग्राहक जोसामग्रीतिससेभिन्नसामग्रीकरग्राह्यपनाहै ॥ तिनमेप्रथमपक्षनहींसंभवता क्योंकिप्रत्यक्षादिकप्रमाणोंमेदोषकीसंभावनाहै ॥ यहांयहअनुमान जानना ॥

❀ विमतं प्रत्यक्षादिज्ञानं दोषवत्करणाजन्यं

जन्यज्ञानत्वाऽविशेषात् भ्रमवत् ❀

अ०—विवादकातिषयं जो प्रत्यक्षादिज्ञान है सो दोषवाले करणसे जन्य है। जन्यज्ञान पना लुल्य होनेसे जो जो जन्यज्ञान होता है सो सो दोषवाले करणसे जन्य है जैसे भ्रमज्ञान है ॥ इति ॥ इस अनुमानसे प्रत्यक्षादिज्ञानमें दोषकी संभावना हुए तिस दोषकी निवृत्ति अर्थ प्रवृत्ति संवादिरूप दोषाभाव का ग्राहक जो अन्य प्रमाण तिसकी प्रत्यक्षादि ज्ञान अपेक्षा करता है वा नहीं। यदि अपने प्रमात्व ग्रहणमें दोषाभावके ग्राहक अन्य प्रमाणकी प्रत्यक्षादिज्ञान अपेक्षा नहीं करता यह अन्त्यपक्षक होतो निष्कंप प्रवृत्ति पुरुषकी नहीं होगी ॥ क्योंकि दोषका संदेह प्रवृत्ति का प्रतिबंधक है । और यदि अन्य प्रमाण की अपेक्षा करता है यह प्रथम पक्षक होतो स्वप्रमात्वके प्रति दोषाभावके ग्राहक अन्य प्रमाणकी अपेक्षा होनेसे स्वतः ग्राह्यत्व का भंग होगा । और वह दोषाभावका ग्राहक प्रमाण कोई ज्ञान मात्रका ग्राहक तो है नहीं । जिससे तिसकी अपेक्षा हुये भी स्वतः ग्राह्यता बनी रहे । और यदि दोषाभावके ग्राहक प्रमाणको ज्ञान मात्र का ग्राहक मान लें । तो भ्रमज्ञानका ही उच्छेद हो जायेगा । याते द्वितीय पक्ष भी असंगत है । और ज्ञान मात्रके ग्राहकसे भिन्न प्रमाणक स्वह प्रमात्व ग्रहण होता है यह आदिमें कथन किया जो द्वितीय पक्ष सो भी नहीं संभवता क्योंकि ग्रहण हुआ है प्रमाणय जिसका तिस प्रमाणको प्रमात्वका निश्चायक माने हुए अनवस्था दोषकी प्राप्ति होगी । यहां यह अर्थ जानने योग्य है । प्रथम ज्ञानके प्रमात्वका जो ग्रहण है । सो अपने विषयके निश्चय अर्थ है । वह प्रमात्व स्वाश्रय भूत ज्ञानके ग्राहकसे किसी भिन्न पदार्थकर ही ग्रहण करने योग्य है । तहां वह प्रमात्वका ग्राहक क्या ज्ञेय रूप है ॥

अथवाज्ञानरूपहे । यहविचार कियाचाहिये । इनमें प्रथमपक्षतो नही संभवता । क्योंकि तिसज्ञेयपदार्थको जडहोनेसे प्रकाशकताकाही अभाव है । और द्वितीय पक्षमेंभी यहविचार कियाचाहिये । प्रथमज्ञान के प्रमात्वका ग्राहक जोज्ञानहे सो गृहीत प्रमात्वहुया अपने विषयभूत प्रथमज्ञानके प्रमात्वकाग्राहकहे अथवाअगृहीतप्रमात्वहुया निश्चायक है । जिसका प्रमात्व किसीदूसरे ज्ञानकर ग्रहणहुयाहो तिसको गृहीत प्रमात्व कहतेहैं । औरजिसका प्रमात्वकिसी करग्रहण न हुआहो । तिसकोअगृहीत प्रमात्वकहतेहैं । प्रथमपक्षमेंभी यहविचारकरनेयोग्य है । ग्रहण करनेयोग्य प्रमात्वके ग्राहकभूतज्ञानका प्रमात्व किसने ग्रहणकियाहै । क्याआपही अपने प्रमात्वका ग्राहकहै । अथवा ग्रहणकरनेयोग्य प्रमात्वका आश्रयभूतजो प्रथमज्ञानवह तिसकेप्रमात्व काग्राहकहै । अथवाइनदोनोंज्ञानोंसे भिन्नकोईतृतीयज्ञानतिसप्रमात्व काग्राहकहै । इनमेंप्रथम पक्षनहीं संभवता । क्योंकि अपनेग्रहणमें अपनीअपेक्षा होनेसे आत्माश्रयदोषकीप्राप्तिहे । औरस्वतः प्रमात्व काग्रहणप्रसंगभीहोगा । तिमसे परतोग्राह्यत्वपक्षकी हानीहोगी । भावयह । स्वप्रमात्वकाआश्रयजोद्वितीयज्ञानवहआपको विषयकरता हुया अपनेप्रमात्वकोभी आपही विषयकरताहे याते आपको विषय करनेसे तथा आपही प्रमात्वकाग्राहकहोनेसे आत्माश्रयदोष तथा स्वतस्त्वपक्षकीप्राप्तिस्पष्टहीहै । औरद्वितीयपक्षभी अन्योऽन्याश्रय दोषकीप्राप्तिसेनहींसंभवता । सोइसप्रकारहै । प्रथमज्ञानको अपनेप्रमात्वकेग्रहणमें द्वितीयज्ञानकीअपेक्षाहै । औरद्वितीयज्ञानकोअपनेप्रमात्वकेग्रहणमेंप्रथमज्ञानकीअपेक्षाहै । यातेअन्योऽन्याश्रयदोषहै । और

प्रथमज्ञानको स्वप्रमात्वकेग्राहकीभूतज्ञानकेप्रमात्वका ग्राहकपनाभी नहींसंभवता । क्योंकिजोज्ञानजिसपदार्थको विषयकरताहै । सोज्ञान तिसपदार्थकीआकारताकोप्राप्तहोताहै। औरयहांप्रथमज्ञानकोस्वप्रमात्वके ग्राहकद्वितीयज्ञानकाविषयहोनेसेस्वविषयकज्ञानकेप्रमात्वकीआकारता तिसकोनहींसंभवती। यातेद्वितीयपक्षभीअसंगतहै। औरद्वितीयज्ञानके प्रमात्वकाग्राहक इनदोनोंसेभिन्नकोईतृतीयज्ञानहैयहतृतीयपक्षभीअशु क्तहै । क्योंकिवहतृतीयज्ञानभीगृहीतप्रमात्वहीकहनाहोगा । तिस तृतीयज्ञानकेप्रमात्वकाग्राहकतिसीकोमानेतो आत्माश्रयदोषतथास्वत- स्त्वपक्षकीप्राप्तिहोगी । औरतृतीयज्ञानकेप्रमात्वकाग्राहक यदिद्वितीय ज्ञानकोमानेतो अन्योऽन्याश्रयदोषकीप्राप्तिहोगी । औरप्रथमज्ञानको तृतीयज्ञानकेप्रमात्वकाग्राहकमानेतो चक्रकादोषप्राप्तहोताहै । औरयदि इसचक्रकादोषकेदूरकरनेकीइच्छासेतृतीयज्ञानके प्रमात्वकाग्राहककोई चतुर्थज्ञानमानोगेतो अनवस्थादोषप्राप्तहोगा । यातेपरतोग्राह्यत्वपक्ष भीअसमीचीनहै । अथअगृहीतप्रमात्ववालाजो द्वितीयज्ञानवहमथम ज्ञानके प्रमात्वकाग्राहकहै इसपहिलेकथनकियेहूये द्वितीयपक्षकोदूषित करतेहैं । औरअगृहीतप्रमात्ववालेद्वितीयज्ञानको मथमज्ञानकेप्रमात्व काग्राहक माने तो प्रथमज्ञानके प्रमात्वका निश्चय व्यर्थ होगा ॥ क्योंकिअगृहीतप्रमात्वजोप्रथमज्ञानहैतिसकरहीअपनेविषयकानिश्चय होजायेगा ॥ प्रमात्वकेग्रहणकीकुछआपेक्षानहीं ॥ यातेद्वितीयपक्ष भीअसंगतहै ॥ सर्वकालअवाधितअर्थविषयत्वरूपप्रमात्वप्रत्यक्षादि ज्ञाननिष्ठग्राहककेअभावसेनहींसंभवता ॥ अथवा।जिसकिसीपूकारसे अर्थात्स्वतस्त्ववापरतस्वरीतिसेप्रमात्वकाग्रहणहो ॥ परन्तुसर्वकाल अवाधितअर्थविषयत्वरूपप्रमात्वप्रत्यक्षादिज्ञानमेनहींसंभवता ॥ क्योंकि

श्रुतिहीतिसकोनिपेधकरतीहै ॥ इसदूसरेहेतुकोकथनकरतेहैं ॥ किंवा
प्रत्यक्षादिकोंकीअप्रमाणाताश्रुतिनेहीदिखलाईहै ॥ यद्यपिप्रत्यक्षादिक
अप्रमाणरूपहैंऐसेश्रुतिनेसाक्षात्तर्हीकथनकिया ॥ तथापिप्रत्यक्षादि
ज्ञानकेविषयभूतजगत्कामिथ्यापनादिखलातीहुईश्रुतिप्रत्यक्षादिकोंकी
अप्रमाणाताअर्थसेबोधनकरतीहै ॥शंका॥ प्रत्यक्षादिकज्ञानअप्रमाण
रूपहैं ॥ जगत्कोमिथ्याहोनेसे ॥ यहहेतुव्यधिकरणहै ॥ क्योंकि
प्रत्यक्षादिकज्ञानमेतोअप्रमात्वसाध्यवर्तताहै ॥ औमिथ्यात्वहेतुजगत्
मेवर्तताहै ॥ यातेभिन्नअधिकरणमेवृत्तिहोनेसेयहहेतुअपनेसाध्यका
साधकनहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्प्रत्यक्षादिज्ञानकेविषयभूतजगत्
कोश्रुतिमिथ्यापनादिखलातीहै ॥ यातेयहांयहअनुमानविचचितहै ॥

❀ प्रत्यक्षादिरूपमाणांमिथ्यार्थकत्वात्परजतज्ञानवत् ❀

अ० ॥ प्रत्यक्षादिज्ञानअप्रमारूपहै ॥ मिथ्याअर्थविषयकहोने
से ॥ जोजोज्ञानमिथ्याअर्थविषयकहोताहैसोसोअप्रमारूपहोताहै ॥
जैसेरजतज्ञानहै ॥ इति ॥शंका ॥ अर्थकोअवाधितहोनेसेमिथ्यापना
अयुक्तहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्श्रुतिहीसर्वभ्रमंचकानिपेधकरतीहै॥
सोश्रुतियहहै ॥

❀ नेहनानाऽस्ति किंचन ❀ सं० उ० अ० ६ प्र० ४ मं० २६

अ०॥ असिद्धजगत्काअधिष्ठानरूपजोब्रह्महैतिसमेभेदविशिष्ट
भ्रमंचकिंचतमात्रभीनहीं ॥ इसश्रुतिमेसकलभ्रमंचको निपेधकाप्रतियो
गिपनाकथनकियाहै ॥ औरजोनिपेधकाप्रतियोगिहोताहैसोमिथ्याही
होताहै ॥ निपेधशब्दसेयहांत्रैकालिकनिपेधग्रहणकरना ॥ शंका॥

जो बाधित होता है सो अज्ञानजन्य देखा है ॥ जैसे बाधित रजतादिक शुक्त्यादिकों के अज्ञानसे जन्य हैं ॥ और घटादि जगत् अज्ञानजन्य नहीं ॥ क्योंकि मृत्तिकादिक तिसके उपादानकारण हैं और मृत्तिकादिक उपादान गोचरज्ञानवाले कुलालादिक तिसके निमित्तकारण हैं ॥ याते भ्रमं च मिथ्या नहीं किन्तु सत्य है ॥ समाधान ॥ हेवादि न्श्रुतिने जगत्का उपादान कारण अज्ञान ही कहा है ॥ सो श्रुति यह है ॥

❀ मायांतु प्रकृतिं विद्यात् ❀ ॥ ३० ॥ अ० ४० ॥ १०

अ० ॥ मायाको जगत्का उपादानकारण जाने यद्यपि श्रुतिमे मायापद है ॥ अज्ञानपद नहीं तथापि माया और अज्ञान दोनो एक ही पदार्थ हैं ॥ याते विरोध नहीं ॥ और वह अज्ञान ही मृत्तिकादिरूपपरिणामको प्राप्त हुआ घटादिकोंका उपादानकारण है ॥ याते अज्ञानको उपादान माने हुये भी कोई विरोध नहीं यहाँ मूलग्रंथमे (निपिद्धमानत्वमायाभ्रुति त्वाभ्याम्) यह तृतीया विभक्ति अंतपदकथन किया है ॥ वह तृतीया विभक्ति कर्ता करणादि अर्थमे नहीं किन्तु इत्थं भाव अर्थमे तृतीया जाननी ॥ याते यहाँ ऐसा अर्थ करना ॥ निषेध भतियोगित्वतथा माया उपादानत्व रूपमिथ्याभूतजोजगत् है ॥ इति ॥ इसरीतिसे व्यवस्थाके अनुसार अनेक अज्ञान माने हुये भी प्रत्यक्षादिप्रमाणके अनुसार जगत्का सत्यत्व जिस कारणसे पूर्व उक्त युक्तिकेवलसे नहीं संभवता । तिसी कारणसे व्यवस्थाके अनुसार जीव आश्रित और ब्रह्मको विषय करनेवाले अनेक अज्ञान बन सकते हैं ॥ शंका ॥ व्यवस्थाकी अनुपपत्तिरूपतर्कसे ही अनेक अज्ञान तुमने सिद्ध किये हैं ॥ परन्तु वह तर्क आभासरूप है । क्योंकि तिसमे उपजीव्यप्रमाणका अभाव है ॥ जिसप्रमाणके आश्रित होकर तर्क अपने

अर्थको सिद्ध करे सो प्रमाण तर्क का उपजीव्य कहिये है ॥ समाधान ॥ हे
वादि न्यहां उपजीव्य प्रमाण रूप श्रुति विद्यमान है ॥ याते तर्क को आभास
रूपतानहीं ॥ सो श्रुति यह है ॥

* इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते ❀ ६०३० अ० ४ ब्रा ५ कं० १-६

अ० ॥ परमात्मा माया वों से नाना रूप प्रतीत होता है ॥ इस श्रुति
मे (मायाभिः) इस बहुवचन के अनुसार अनेक अज्ञान प्रतीत होते हैं ॥
यहां माया और अज्ञान दोनों पर्याय शब्द हैं ॥ वह अनेक अज्ञान ब्रह्म को विषय
करते हैं ॥ इसलिये आत्मा को अज्ञान विषयत्व लुमने कै से कथन किया ।
यहां आत्मा अज्ञान का विषय नहीं यह जो निषेध है सो इस अर्थ का भी बोधक है
ब्रह्म को अज्ञान का विषय होने से तिसमें श्रुति प्रमाण कत्व का आक्षेप जो पूर्व
पक्षी ने कहा था सो कै से कथन किया किन्तु वह भी नहीं संभवता ॥ यहां
तक एक देशी के मत का संक्षेप से निरूपण हुआ ॥ यहां इस मत के संग्रह का
श्लोक ॥

❀ अज्ञानं प्रति जीवस्याद्भिन्नं ब्रह्म पदं च तत् ॥ बद्धमुक्तव्य
वस्थाऽतो ब्रह्म श्रौतं च सिद्ध्यति ॥ १ ॥ ❀

दो० ॥ बद्धमुक्तविवहार से प्रती जीव अज्ञान ॥ भिन्न ब्रह्म गोचर
अहै ब्रह्म श्रौत पहचान ॥ १ ॥

❀ अथ एकदेशि के मत का खंडन ❀

अथ सिद्धांत मत को आश्रयण करके एकदेशि के मत को पूर्व पक्षी
निषेध करता है ॥ यहां सिद्धांत मत को आश्रयण करके एकदेशि के मत
खंडन करने में पूर्व पक्षी का यह गूढ अभिप्राय है ॥ परम सिद्धांती ने चेतन

मात्रके आश्रित और तिसीको विषय करनेवाली अविद्यामानी है ॥ और स्वयंप्रकाशचेतनमें अविद्याकी विषयता नहीं संभवती ॥ यह वार्ता पूर्व निरूपणकी है ॥ और अविद्याकी विषयता का अभाव होनेसे वेदप्रमाणात्ता का भी तिस आत्मामें अभाव है ॥ याते देहादिकोंसे भिन्न कोई आत्मानहीं यह हमारा मत सुखेन ही सिद्ध होगा ॥ इस गूढतातपर्यवाला पूर्वपक्षी जीव आश्रित और ब्रह्मविषयक अविद्या है इस पूर्वकथन कियेहुये एकदेशीके मतमें दूषण कथन करता है ॥

मू० ॥ जीवब्रह्मप्रयोगाभ्यामेकं वस्त्वथवा द्वयम् ॥

आद्ये त्विष्टं ममैव स्यात् द्वितीये त्वन्मतक्षतिः ॥५॥

तोटकछंद ॥ यह जीव परेश दुऊपद जो भन एक पदार्थवा दुयिको पक्ष आदि विषे ममवांछित है । पक्षदूसरहानहिते मत है ॥६॥

टी० ॥ हे एकदेशिन तु मजीव और ब्रह्मशब्दसे एक ही वस्तु प्रतिपादन करते हो । अथवा दो पदार्थ कथन करते हो ॥ यद्यपि जीव और ब्रह्मशब्द का वाच्यार्थ भिन्न ही है याते विकल्प नहीं संभवता ॥ तथापि जीव और ब्रह्मके उपाधिका परित्याग करके एक लक्ष्य प्रतिपादन करते हो अथवा लक्ष्यों का भेद कथन करते हो ॥ ऐसा विकल्प संभवता है ॥ प्रथम पक्ष मानोगे तो मेरा ही इष्ट सिद्ध होगा ॥ यद्यपि जीव और ब्रह्म का अभेद एकदेशीको भी इष्ट है ॥ इसलिये मूलकारिकामें (एव) शब्द का उच्चारण अयुक्त है ॥ तथापि अज्ञानके आश्रय तथा विषयका अभेद एकदेशीको अनिष्ट है ॥ याते (एव) शब्द का उच्चारण अयुक्त नहीं किन्तु युक्त है ॥ और द्वितीय पक्ष अंगीकार करोगे तो तुम्हारे मतकी हानी होगी ॥ क्योंकि लक्ष्यार्थका भेद एकदेशीको भी स्वीकार नहीं ॥ यहां मूलकारिकामें (तु) यह शब्द हेतु का सूचक

है ॥ सोयागेस्पष्टहोगा ॥ अथवा वाच्य और लक्ष्यके भेदको त्यागकरके सामानतासे ही द्रूपणदेनेके लिये विकल्प करते हैं ॥ हे एकदेशिन् जीव और ब्रह्म इन दोनों शब्दोंसे एक आत्मा ही तुम कह सकते हो अथवा जीवशब्द तो आत्माका वाचक है और ब्रह्मशब्द तिससे भिन्न अर्थका वाचक है ॥ ऐसे कहते हो ॥ प्रथमपक्षमें आत्माको अज्ञानकी विषयता कैसे नहीं बनेगी। यहां पर (कैसे) और (नहीं) इन दो निषेधकशब्दोंसे आत्माको अज्ञानविषयता की प्रतिज्ञा करके अतिसमे (तु) शब्दसे सूचन किये हुये हेतुको कहते हैं ॥ क्योंकि ब्रह्मशब्दसे भी जीवशब्दकी न्याय आत्माका ही कथन होनेसे तिसमें अज्ञानकी विषयताका संभव है ॥ यहां यह निष्कृष्ट अर्थ है ॥

❀ आत्मा अज्ञानविषयः अज्ञानाभासकत्वे सति ब्रह्मशब्द वाच्यत्वात् ब्रह्मवत् ❀

अ० ॥ आत्मा अज्ञानका विषय है ॥ अज्ञानका अप्रकाशक हुया ब्रह्मशब्दका वाच्य होनेसे जो जो अज्ञानका अप्रकाशक हुया ब्रह्मशब्दका वाच्य है सो सो अज्ञानका विषय है ॥ जैसे ब्रह्म है ॥ इति ॥ इस अनुमानसे आत्मामें अज्ञानकी विषयता सिद्ध है ॥ याते तुम आत्मामें अज्ञानकी विषयताका अभाव कैसे कहते हो ॥ शंका ॥ हेवादि न्यह तुम्हारा अनुमान सत्प्रतिपक्षरूपहेत्वाभासवाला होनेसे दुष्ट है ॥ जिस हेतुके साध्याभावका साधक और हेतु हो तिस हेतुको सत्प्रतिपक्ष कहते हैं ॥ सो इस प्रकार है ॥

❀ आत्मानतमो विषयः भासमानत्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथा अंधकारावृत्तो घटः ❀

अ० ॥ आत्मा अज्ञानका विषय नहीं ॥ भासमान होनेसे जो जो अज्ञानका विषय होता है सो सो भासमान नहीं होता ॥ जैसे अंधकारसे आवृत्त

घट्टे ॥ इस अनुमानसे पूर्वकथन कियावादीका अनुमानसत्प्रतिपक्षरूप हेत्वाभासयुक्त है ॥ और लुम्हारे अनुमानमे अभासमानत्व उपाधिभी है ॥ सो इस प्रकार है ॥ जहां जहां अज्ञानकी विषयता है तहां तहां अभासमानता है ॥ जैसे ब्रह्म है ॥ इसरीतिसे उपाधिसाध्यके साथ व्यापक है ॥ और जहां जहां अज्ञानका अप्रकाशक हुआ ब्रह्मशब्दका वाच्य है ॥ तहां तहां अभासमानत्व नहीं ॥ जैसे आत्मा है ॥ इसरीतिसे उपाधिसाधनके साथ व्यापक है ॥ याते पूर्वकथन किया जो हेतु वह सोपाधिक हेत्वाभास होने से दुष्ट है। स्वसाध्यका साधक नहीं ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् यह जो लुम्हने पूर्वकथन किया सत्प्रतिपक्ष और अभासमानत्व उपाधि इन दोनोंको तंत्रसे नियेध करते हैं ॥ एकवार उच्चारण किया हुआ वचन बहु अर्थका जो ज्ञापक हो तिसको तंत्र कहते हैं ॥ जैसे एक दीपक प्रज्वलित किया हुआ अनेक पदार्थोंको प्रकाश करता है । तैसे यहां एक ही उक्तिसे सत्प्रतिपक्ष और उपाधिकानिराकरण करते हैं । तिस उक्तिरूप तंत्रको ही दिखलाते हैं । हे एकदेशिन् अद्रयानंदरूपतासे तिस आत्मामे अज्ञानकी विषयता है । और चेतनमात्ररूपतासे तिस आत्माको भासमान होनेसे अज्ञानकी विषयताका अभाव है । अन्यथा प्रकाशकके अभावसे अज्ञानकी भी सिद्धि नहीं होगी । यहां यह अर्थ जानने योग्य है ॥ एकदेशिने प्रतिपक्षाऽनुमानमे आत्मशब्दसे क्या? अद्रयानंदरूपपक्ष किया है । अथवा चेतनमात्रपक्ष किया है । तहां प्रथमपक्षमाने हुये प्रतिपक्षाऽनुमान वाधित होगा । क्योंकि अद्रयानंदरूपपक्षमे अज्ञानकी विषयता विद्यमान होनेसे अज्ञान विषयत्वाभावरूपसाध्यका अभाव है । और द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता । क्योंकि प्रथम अनुमानमे चेतनमात्रको पक्षत्वका अभाव है । इसीसे प्रतिपक्षाऽनुमानमे भी चेतनमात्रको पक्षपना

युक्तनहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन् अद्वयानंदरूपको पञ्चमानने मेवाध है यहतुम्हाराकथन असंगत है ॥ क्योंकि तिस अद्वयानंदको आत्मा से अभिन्नरूपता कर भासमान होने से तिसमे अज्ञानकी विषयता नहीं संभवती समाधान ॥ अद्वयानंदको आत्मा से अभिन्न हुये भी अविद्याके प्रभाव से चेतन मात्र का ही भान होता है अद्वयानंद का नहीं । इस कथन से यह सूचन किया प्रतिपत्ता अनुमान स्वरूपा सिद्ध है ॥ क्योंकि अद्वयानंद पक्षमे भासमानत्व हेतु स्वरूप से ही असिद्ध है ॥ शंका ॥ हेवादिन् अज्ञानका विषय आत्मा है और चेतनको ही आत्मा कहते हैं तिस चेतन स्वरूप आत्मामे अज्ञानकी विषयता होने से तिसकी भासमानता कैसे कहते हो ॥ समाधान ॥ हे एक देशिन् चैतन्यरूपता से तिस आत्माको अज्ञानका विषय होने से भासमानता है ॥ और यदि ऐसे कहो कि चेतन रूप भी अज्ञान कर क्यों नहीं आवृत्त होता किन्तु हुया चाहिये । सो यह कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि चेतनको भी आवृत्त माने हुये अज्ञानकी ही सिद्धि नहीं होगी ॥ भाव यह ॥ अज्ञान चेतन रूपसाक्षि मात्र कर सिद्ध होता है किसी प्रमाण कर नहीं यह वार्ता हम दोनोंको स्वीकार है ॥ याते चेतन रूपता से आत्मा आवृत्त नहीं हो सकता और प्रकाशकके अभाव से जगत्मे किसी वस्तुका भान भी नहीं होगा ॥ इतने कथन से सत्प्रतिपत्तके निषेध पर ग्रंथका व्याख्यान किया ॥ अब उपाधिके निषेध करनेके लिये भी इसी ग्रंथकी पुनः योजना करते हैं ॥ स्थापना अनुमानमे अर्थात् प्रथमा अनुमानमे अद्वयानंद स्वरूप आत्माको पक्षपना है ॥ तिस अनुमानमे अभासमानत्व उपाधि नहीं संभवता ॥ क्योंकि साधनके साथ वह व्यापक है ॥ इसी अभिप्राय से अद्वयानंद स्वरूप आत्मामे अज्ञानकी विषयता स्वीकार की है ॥ तिस अद्वयानंद रूपयत्नमें अभाममानत्व उपाधिके वर्तने से वह साधनके साथ कैसे व्यापक नहीं किन्तु व्यापक है

यहभावहै॥शंका॥आत्मासेअभिन्नअद्वयानंदकैसेनहींभानहोतेकिंतुहुये
चाहिये॥समाधान॥आत्मत्वभानकाप्रयोजकनहींकिंतुभानकाप्रयोजक
चेतन्यहै यातेचेतनमात्रको अज्ञानकाअविषयहोनेसे भासमानताहै ।
अद्वयानंदकोनहीं।इसप्रकार उपाधिकेअभावसेपूर्वउक्तअनुमाननिर्दोष
है।शंका॥ अद्वयानंदरूपतासे आत्माकोअभासमानहोनेसे अज्ञानकी
विषयताहै । औरचेतनरूपताकर भासमानहोनेसे तथाअविद्याकासा-
धकहोनेसे आत्माको अज्ञानकीविषयतानहींहैं । यहपूर्वकथनकिया
सोअसंगतहै । क्योंकि-

❀ विज्ञानमानंदब्रह्म ❀

अ०-विज्ञानऔरआनन्दस्वरूपब्रह्महै । इसश्रुतिवचनसे अद्व-
यानंदऔरचेतन्यएकस्वरूपहैं । इनकाभेदनहीं। यद्यपिअभेदकीन्याई
भेदभीहै तथापिविरुद्धस्वभावहोनेसे भेदऔरअभेददोनों एकअधिकर-
णमेंनहींरहसकते । यातेअद्वयानंदको अज्ञानकीविषयताकाकथन
नहींसंभवता ॥ समाधान ॥ अद्वयानंदऔरचेतनकावास्तवभेदनहीं
इसलियेअद्वयानंदकोभी भासमानहोनेसेअज्ञानकी विषयतावास्तवसे
नहींहै यहतुमकहतेहो अथवा । कल्पितभीअज्ञानकीविषयतानहींहै
यहकहतेहो । प्रथमपक्षतोहमकोभीस्वीकारहै । क्योंकिवास्तवअज्ञान
कीविषयताहमभीनहींमानते । द्वितीयपक्षको प्रश्नपूर्वकनिषेधकरतेहैं ।
प्रश्न-अद्वयानंद औरचेतनकेभेदका अभावहुये अज्ञानविषयताकी
व्यवस्थाकिसप्रकारहै ॥ समाधान ॥ हेएकदेशिन् अद्वयानंदस्वरूप
आत्माको अज्ञानकीविषयताकाकथनहै । चेतनकोनहींयातेव्यवस्था
बनसकतीहै । यद्यपिभेदकाअभावहोनेसे विषयतानहींसंभवती यह

पूर्वकथनकियाहै । तथापिस्वयंप्रकाशपरिपूर्ण आनन्दस्वरूपतासे भासमानआत्मामेंभी भेदकीमिथ्याकल्पनाकरकेही अज्ञानकीविषयता काकथनहै वास्तवसेनहीं ॥ इति ॥ शंका ॥ जोभानहोताहै सोअज्ञान करआवृत्तनहींहोता औरअद्वयानंदरूपता आत्माकीभान नहींहोती यदिभानहोतो निर्यत्नहीसर्वपुरुषोंकोमोक्षकालाभहोगायातेभेदकल्पना व्यर्थहै । भावयहचेतनसे अद्वयानंदकी भेदकल्पनाअभानताकेलिये करतेहो सो अभानतापूर्व कथनकियेप्रकारसे बनसकतीहै पुनः भेद कल्पना से क्या प्रयोजन है ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् आत्मातोप्रथमभानहोताहीहै । यदिआत्माकाभाननमानेतोतूकौनहैंऐसे पूछेहुयेमेंहूंबानहींहूँऐसासंदेहपुरुषकोहोनाचाहिये ॥ औरऐसासंदेह किसीको नहींहोता ॥ यातेआत्माकाभानसर्वको प्रसिद्धहै ॥ तिस आत्मासेअभिन्नअद्वयानंदकेसेनहींभानहोंगे ॥ औरखहइसअविद्याकाल मेंनहींभानहोतेइसीसेतिनअद्वयादिकोंकेअभानकाप्रयोजकभेदकल्पना संभवतीहै इसीकारणसेपूर्वग्रंथमेकहाहै ॥ चैतन्यमात्रहीभानहोताहै अद्वयानंदस्वरूपकाभाननहींहोता ॥ इति ॥ शंका ॥ मैंअद्वयानंद स्वरूपनहींहूँ ॥ इसप्रकारकीअद्वयानंदऔरचेतनकेभेदकोविषयकरने वालीप्रतीतिकाबाधनदेखनेसेतिसप्रतीतिकाविषयजोभेदहै । सोवास्तव हीक्योंनहो ॥ समाधान ॥ भ्रमप्रतीतिकेअनुसारभेदकीकल्पनाहैयाते भ्रमप्रतीतिकाविषयभेदवास्तवनहींबनसकता । यद्यपिब्रह्म अद्वितीयहैतिस कोभ्रमकिसीरीतितसेनहींसंभवता ॥ क्योंकि अपनेस्वरूपमेंआपकोहीभ्रम होनाअयोग्यहै ॥ तथापिजैसेभूताविष्टजोमनुष्यहै ॥ तिसकोअपने हीशरीरमेंभूतकाभ्रमहोताहै ॥ तेसेहीअविद्याकेप्रभावसेअद्वितीयब्रह्म कोभीभ्रमबनसकताहै ॥ शंका ॥ देवीभावकानामभेदहैअर्थात्एक

वस्तुकेंदोखंडनकानामभेदहै ॥ सोसावयवकाष्टादिकोंकाधर्महै ॥ और
 आत्मानिखयवहै ॥ क्योंकि (निष्कलं) इसश्रुतिमेआत्माकोनिखयव
 कहाहै ॥ यातेतिसआत्मामेभेदकल्पनाअयोग्यहोनेसेकिसीप्रकारभी
 नहींसंभवती ॥ समाधान ॥

❀ निर्गुणोनिरूपेप्यखंडोचितिसर्वकल्पनाशून्येघट
 यतिजगदीशजीवभेदान्तस्मादघटनघटनापटीयसी
 माया इति ❀

अ० ॥ निरूपऔरनिर्गुणतथाअखंडचेतनतथासर्वकल्पनासे
 शून्यआत्मामेजगत्त्र्योईशतथाजीवकेभेदकीकल्पनानहींवनतीतिसके
 वनानेमेजोकुशलहोतिसकोमायाकहतेहैं ॥ सोऐसामायारूपअज्ञानहै
 इति ॥ इसन्यायसेनिखयवआत्मामे भीअनादि सिद्धअनिर्वचनीय
 अज्ञानकेसंबंधसेमिथ्याभेदकल्पनावनसकतीहै ॥ शंका ॥ चेतनमात्र
 हीभानहोताहैअद्वयानंदस्वरूपनहीं इसप्रतीतिकोभ्रम रूपताकैसेहै ॥
 क्योंकिभ्रमरूपताकेहुयेहीवाधितपनायुक्तहै ॥ समाधान ॥ परमप्रीति
 केविषयभूतआत्माकोआनंदरूपतासेहीभासमानहोनेसेपूर्वउक्तप्रतीति
 कोभ्रमरूपहमकहतेहैं यहांहअनुमानजानना ॥

❀ आत्मापरमानंदरूपःपरमप्रेमास्पदत्वात्विषया
 नंदवत् ❀

अ०—आत्माआनन्दस्वरूपहै परमप्रीतिकाविषयहोनेसे जोपरम
 प्रीतिकाविषयहोताहै सोआनन्दस्वरूपहोताहै जैसेविषयानंदहै॥इति॥
 मैंनहोवों ऐसेमतहोकिंतुमैसदाहीहोवों इसप्रकारकी इच्छाकानामभेदहै

सोयहइच्छाकिसीउपाधिके सम्बन्धसे आत्माविषयकनहीं किंतुनिरुपाधिकहै । यदिकेवल “ प्रेमास्पदत्वात् ” इतनाहीहेतुकहते परमयह विशेषणकहते । तोदुःखाभावऔरसुखकेसाधनोंमेंयहहेतुव्यभिचारी होता । क्योंकिसुख तथादुःखाभावके साधनोंमेंभीपुरुषोंकाप्रेमहै परन्तु परमप्रेमनहीं। परमप्रेमतोदुःखाभावरूपतथासुखस्वरूपआत्मामेंहीहै। याते हेतुव्यभिचारीनहीं ॥इति॥ इसप्रकारसुखऔरआत्माका अभेदहोनेसे आत्माकेभासमानहुयेतिससेअभिन्नआनंदअवश्यमानहोताहीहै। याते आनंदकेअभासमानताकीजोप्रतीतितिसकोवाधितहोनेसेभ्रमरूपतायुक्त है॥शंका॥हेवादिन्विषयानंदरूपदृष्टांतमेंजोप्रेमहैसोआत्म उपाधिकहै क्योंकिसुखमात्रकीकोईप्रार्थनानहींकरता। किंतुमुझकोसुखहोइसप्रकार आत्माकेसम्बन्धसे सुखकीप्रार्थनाकरतेहैं । यदिऐसेनमाने तोवैरीके सुखविषयकभी प्रार्थनाकी प्राप्तिहोगी । औरवैरीके सुखकी कोई वांछानहींकरता ॥ याते विषयानंदरूप दृष्टांतमें निरुपाधिक प्रेम विषयत्वकाअभावहोनेसे साधनकीविकलताहै । समाधान ॥ हेएक देशिन् सुखमेंप्रेमकीविषयताआत्मउपाधिकनहीं। क्योंकिसुखतथादुःखा भावरूपजोफलहेतिसफलरूप उपाधिके संबंधसेसाधनोंमेंप्रेमहोताहै । और आत्माकोनित्य होनेसेवहसुखका फलनहींहै । जिसकारणसे सुखमेंप्रेमआत्मउपाधिकहो । औरआत्माविषयकसुखसेउत्पन्नहुयाकोई उपकारभीनहींपूतीतहोता । क्योंकिसुखसेभिन्न औरउपकारकाअभाव है। तिसीसेसुखमें आत्मउपाधिकप्रेमनहीं । यद्यपिसुखमात्रकीप्रार्थना मानेहुयेवैरीकासुखभी उपादेयहुयाचाहिये । तथापिस्वरूपसेसुखको उपादेयताकेहुयेभीतिसमेंहेयताबुद्धि अन्यउपाधिकहै ।

❀ आत्मा तथा सुखके संबंधाभावकानिरूपण ❀

और सुख तथा आत्मा का कोई संबंध भी नहीं निरूपण हो सकता याते भी सुख में प्रेम आत्म और पाधिक नहीं ॥ सुख तथा आत्मा का संबंधा भाव ही स्पष्ट करते हैं ॥ हे एक देशि सुख तथा आत्मा का कौन संबंध है ॥ संयोग संबंध है वा समवाय संबंध है । अथवा तादात्म्य संबंध है वा और ही कोई संबंध है ॥ इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि सुख द्रव्य नहीं है ॥ संयोग द्रव्यों का ही होता है ॥ और द्वितीय पक्ष भी असंगत है ॥ क्योंकि आत्मा को निर्गुण कहने वाली श्रुति का विरोध है ॥ और सुख को अतःकरण में समवेत होने से भी सुख और आत्मा का समवाय नहीं संभवता । और तृतीय पक्ष में यह विचार किया चाहिये । तादात्म्य अभेद कानाम है । अथवा भेदाभेद कानाम है । प्रथम पक्ष नहीं संभवता । क्योंकि सुख तथा आत्मा का अत्यंत अभेद प्रसंग होने से तिनका उपाधि उपहित भाव नहीं सिद्ध होगा । और भेदाभेद का परस्पर विरोध होने से द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता । और इनसे भिन्न चतुर्थ पक्ष कोई निरूपण ही नहीं हो सकता । याते विषयानंद रूप दृष्टांत में परम प्रेम विषयत्वरूप हेतु की विकलता नहीं । इसलिये पूर्व उक्त अनुमान निर्दोष है । तिसका अद्वयानंद और आत्मा के भेद को विषय करने वाली प्रतीति का बाध संभवता है ॥ शंका ॥ यद्यपि चेतन से कल्पित भेद करके भिन्न जो अद्वयानंद स्वरूप आत्मा है । तिसमें अज्ञान की विषयता पूर्व कथन की ॥ तथापि वास्तव से अविद्या के आश्रय और विषय का भेद नहीं निरूपण किया क्योंकि जैसे घटपद की शक्ति घटपद में रहती है ॥ और कंचुकी वादि मानव्यक्ति को विषय करती है याते आश्रय और विषय का भेद वास्तव है ॥ तैसे अविद्या भी एक शक्ति है तिसको भी वास्तव

आश्रय और विषयके भेदकी अपेक्षा सहित होनेसे तिसके विषय और आश्रय का कल्पित भेद अयुक्त है ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् अविद्याके आश्रय तथा विषयका भेद वास्तवसे नहीं निरूपण किया यह तुम्हारा कथन सत्य है ॥ शंका ॥ हेवादिन् यदि आश्रय और विषयका भेद वास्तवसे नहीं निरूपण किया तो तुमको निरूपण किया चाहिये ॥ क्योंकि आश्रय और विषयके वास्तव भेदकी अविद्याको अवश्य अपेक्षा है ॥

✽ अथ स्वाश्रयास्वविषया अविद्याकानिरूपण ✽

समाधान ॥

मू०—अविद्यास्वाश्रयाभिन्नविषयास्यात्तमोयतः ॥

यथावाह्यतमोदृष्टं तथाचैयंततस्तथा ॥६॥

संकरच्छंद ॥ सुनले अविद्यास्वाश्रयापुनरेक्यविषयाजान ॥ जिसहेतुते है तमोरूपातापनीमेगान ॥ बाह्यतमसजियुं देखियो है तथा विषयह आहि ॥ तिसहेतुते है तथाविधक्रीकहितबुधजनताहि ॥७॥

टी० ॥ प्रथमयहां यह अनुमान जानने योग्य है ॥

अविद्यास्वाश्रयाभिन्नविषयिणी तमस्त्वात्वाह्यतमोवत्

अ० ॥ अविद्या अपने आश्रयसे अभिन्नको विषय करनेवाली है तमरूप होनेसे। जो जो तम है सो सो अपने आश्रयसे अभिन्नको विषय करता है जैसे बाह्यतम है ॥ याते अविद्याको आश्रय तथा विषयके भेदकी अपेक्षा नहीं ॥ शंका हेवादिन् इस अनुमानमे बाह्यतमको दृष्टांतरखा है ॥ वह बाह्यतमद्रव्यरूप है। अथवा आलोकाभावरूप है ॥ यदि प्रथमपक्षस्वीकार करो तो दृष्टांतसाध्यसे ही न होगा। क्योंकि जैसे अपने अवयवोंके आश्रित जो धर्म है सो अन्यदेशको आच्छादन करता है ॥ तैसे ही तमरूपद्रव्य अपने

अवयवोंके आश्रितहूयाग्रहके उदरवर्तीदेशको आच्छादनकरताहै ॥ याते
जिमको आश्रयणकरताहै तिसीको विषयकरताहै यह "स्वाश्रयाभिन्न विष
यत्व" रूपजोसाध्यहै तिसको वाह्यतमरूप दृष्टांतमे नहीं वर्त्तनेसे साध्य
विकृतदृष्टांतहै ॥ औरद्वितीयपक्षमे भी यह दृष्टांतमे साध्यकी विकलतारूप
दोषही प्राप्तहोताहै ॥ क्योंकि आलोकभावका प्रतियोगी जो आलोकहै
तिसका समवायि जो आलोक स्वयवरूप देशतिसके आश्रित आलोक
ऽभावको घटादिकोंका आवरणकपनादेखाहै ॥ याते वाह्यतमरूपदृष्टांतइस
पक्षमे भी साध्यसे हीनहै ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिज्ञसे अपने अवयवों
के आश्रितजो घटहै तिसका आश्रयपना भूतलको देखाहै ॥ तैसे अपने
अवयवोंके आश्रितजो वाह्यतमसो गृहके भी आश्रितरहताहै ॥ औरतिसी
को विषयकरताहै ॥ याते वाह्यतमको द्रव्यमाने हुयेकोई विरोधनहीं अर्थात्
आश्रयतथाविषयके भेदका अभावहै ॥ औरद्वितीयपक्षमे आलोकसंसर्गा
ऽभावको तमरूपताहै ॥ संसर्गाभावपदसे अत्यन्ताभाव औरप्रागभाव तथा
प्रध्वंसाभावइनतीन अभावोंका ग्रहणहै ॥ तिनमे प्रागभावको तथा प्रध्वंसा
भावको प्रतियोगीके समवायिदेशमे वृत्तिहूए भी अत्यन्ताभावको
प्रतियोगीके समवायिदेशमे वर्तनेके नियमका अभावहै । इस प्रकार
वाह्यतमको संसर्गाभावरूपताकर प्रतियोगिसंबन्धिदेशमे ही वर्तनेका नियम
नहीं ॥ याते वाह्यतमको द्रव्यरूपमाने हुये अथवा अभावरूपमाने हुये दृष्टांतमें
साध्यकी विकलतानहीं होसकती ॥ इस प्रकार अनुमानकी निर्दोषतादिखला
कर अश्लोककी व्याख्याकरते हैं ॥ तिसतमशब्दका वाच्यजो वाह्यतम तथा
अंतरअज्ञानरूपतमहै ॥ तिसको आश्रयतथाविषयके भेदकी अपेक्षा नहीं है
पूर्वकथनकी हुई युक्तिसे यह अर्थसिद्धहै । परन्तु तिसी अर्थको पुनः स्पष्ट करने
केलिये आश्रयऔरविषयके भेदकी अपेक्षाप्रथमदृष्टांतमे सिद्धकरते हैं जैसे

गृहके भीतर खरतनेवाला जो अंधकार है सो अपने आश्रयरूप गृहके अंतरवर्ती देशको क्या? नहीं विषय करता जिससे भिन्न देशकी अपेक्षा करता है ॥ सो ऐसा तो देखनेमें नहीं आता ॥ किन्तु अंतरवर्ती देशको वह तम विषय करता है ॥ तैसे अविद्यारूप तमभी आश्रय और विषयके भेदकी अपेक्षा नहीं करता ॥ इति ॥ पूर्वयह दो विकल्प किये थे ॥ जीव और ब्रह्म शब्दसे एक आत्माको ही कहते हो अथवा दोनोंका भिन्न भिन्न अर्थ है ॥ इनमें प्रथम विकल्पको निषेध करके अत्र द्वितीय विकल्पको निषेध करते हैं ॥ जिस कारणसे अविद्या आश्रय और विषयके भेदकी अपेक्षा नहीं करती इसी हेतुसे जीव और ब्रह्मका भेद नहीं संभवता ॥ शंका ॥ जीव और ब्रह्म परस्पर अभिन्न हैं ॥ अविद्याको आश्रय तथा विषयके भेदकी अपेक्षा होनेसे ॥ यह हेतु व्यधिकरण है ॥ क्योंकि परस्पर अभेद रूपसाध्य तो जीव ब्रह्म रूपपक्षमेव तै है ॥ और आश्रय विषय भेद अनपेक्षत्वरूपहेतु अविद्यामेव तै है ॥ याते पूर्व उक्त हेतु स्वरूपा सिद्ध है ॥ समाधान ॥

❀ अथ जीव ब्रह्म के भेद का खंडन ❀

हे एकदेशिन्यहां और ही हेतु है सो तुम श्रवण करो ॥

मू० ॥ ब्रह्मात्मनोर्विभिन्नत्वे भेदः स्वाभाविको यदि ।

औपाधिकोऽथवा भेदः सर्वथानुपपत्तिकः ॥ ७ ॥

नाराज छंद ॥ परेश यातमा विभेद भापहो सुनायके । स्वभावि कोकहो थवा उपाधिको वनायके । सवी प्रकार भेदकी वनौतना पछानिये ॥ अभेदको निहार खेदने कहूँ नयानिये ॥ ८ ॥

टी० ॥ और हेतुके प्रतिपादन करनेके लिये भिन्नपक्षमे विकल्प करते हैं ॥ ब्रह्म तथा आत्माका स्वाभाविक भेद कहते हो अथवा औपा-

धिकभेदकहतेहो ॥ द्वितीयविकल्पका अर्थतो आगे स्पष्ट होगा ॥ प्रथम विकल्पका यह अर्थ है। इतरकी अपेक्षासे रहित जो वस्तुका स्वरूप मात्र है तिसको स्वभावकहते हैं । तिसवस्तुके स्वरूप प्रयुक्त भेदको स्वाभाविकभेद कहते हैं । तिस स्वाभाविकभेदपक्षका अनुवाद पूर्वक खंडन करते हैं। यहां जीवतया ब्रह्मका परस्परभेद माननेमें दो भेद सिद्ध होते हैं । तिनमें आत्मप्रतियोगिक और ब्रह्म अनुयोगिक एक भेद है । और ब्रह्मप्रतियोगिक तथा आत्म अनुयोगिक द्वितीय भेद है । तिनमें यदि प्रथम भेद मानो तो ब्रह्ममें जडताकी प्राप्ति होगी । क्योंकि आत्मा चिद्रूप है तिससे यदि ब्रह्म भिन्न होगा तो घटकी न्याईं अवश्य जड होगा । यहां यह अनुमान जानना ॥

❀ ब्रह्मजडं भवितुमर्हति। आत्माभिन्नत्वात्। घटवत् ❀

॥ १ ॥ अ० ॥ ब्रह्मजड होनेके योग्य है आत्मासे भिन्न होनेसे जो जो आत्मासे भिन्न होता है सो सो जड होता है जैसे घट है ॥ इति ॥ और यदि तुम ब्रह्मकी जडता स्वीकार करोगे तो (विज्ञानमानंदं ब्रह्म) इस श्रुतिकारो धारणा होगी । क्योंकि इस श्रुतिमें विज्ञान और ब्रह्मपदकी समानाधिकरणतासे अर्थ प्रतीत होता है । यदि ब्रह्मको विज्ञानसे भिन्न मानोगे तो जडपणा अवश्य होगी । सो ब्रह्मका जडपणा पूर्व उक्त श्रुतिके विरोधसे तुमको भी इष्ट नहीं ॥ शंका ॥ हेवादि नूज्ञान और ब्रह्मपदके समानाधिकरणय मात्रसे ब्रह्म तथा ज्ञानका अर्थ नही सिद्ध हो सकता क्योंकि जैसे (शुक्लः पटः) अ० शुक्ल गुणवाला पट है। यहां गुणगुणीभावको लेकर समानाधिकरणता है तैसे ज्ञान और ब्रह्मपदकी समानाधिकरणता भी गुणगुणीभावको लेकर बन जायेगी ॥ तिससे अर्थ नही सिद्ध हो सकता : । समाधान ॥ हे एक देशिनः ब्रह्मको यदि तुम जड मानोगे । तो अज्ञानकी विषयता भी नही

वनेगी । क्योंकिजडमेंअज्ञान कृतयावराणके प्रयोजनकाअभावहै ॥
 यातेअज्ञान विषयताकी सिद्धिअर्थज्ञान औब्रह्मका अभेदहीमानना
 उचितहै।इसप्रकारआत्माप्रतियोगिकतथा ब्रह्मअनुयोगिकभेदकोनिरा
 करणकरकेअवब्रह्मप्रतियोगिकतथाआत्मअनुयोगिक द्वितीयभेदको
 दूषितकरतेहैं । औरहेएकदेशिन् यदिब्रह्मसेभिन्नआत्माको मानोगेतो
 घटादिकोंकीन्याईआत्मामें अनात्मपनाप्राप्तहोगा । अर्थयह ॥ अप
 रिच्छिन्नतथासुख्यअपरोक्षताहोनेसेब्रह्मकोप्रत्यक्षपनाहै । तिसप्रत्यक्ष
 ब्रह्मसेआत्माकोभिन्नमानेहुये अवश्यहीपराक्षपनाअर्थात् अनात्मपना
 होगा । यातेद्वितीयभेदभीनहींसंभवता । इसप्रकारजीवतथाब्रह्मका
 स्वाभाविकभेदनिराकरणकरके अतितनदोनोंके औपाधिकभेदमेंअनु
 वादपूर्वकविकल्पकरतेहैं ॥ जीवब्रह्मकाऔपाधिकभेदहै यहद्वितीयपक्ष
 पूर्वकहाथा । तिसमेंयहविचारकरनेयोग्यहै । उपाधिजन्यका नाम
 औपाधिकहै । वाउपाधिभास्यअर्थात् उपाधिककेप्रकाशने योग्यका
 नामऔपाधिकहै। अथवा।उपाधितंत्रअर्थात् उपाधिकेआधीनकानाम
 औपाधिकहै ॥ शंका।।जीवब्रह्मकायदि औपाधिकभेदसंभवैतोऔपा
 धिकशब्दकेअर्थका विचारकिया चाहिये । सोऔपाधिकभेदहीनहीं
 संभवता । क्योंकिउपाधिकेनिरूपणका अभाव है ।

*** अथभेदमें उपाधिकेअभावका निरूपण ***

सोदिखलातेहैं। जीवब्रह्मकेभेदका उपाधिअज्ञानहैवाअंतस्करण
 है।अथवा।अतिरेकहै ॥ यहांजीवब्रह्मके भेदाऽभेदकासंपादककोईधर्म
 विशेषअतिरेकशब्दकाअर्थजानना । इनमेप्रथमपक्षतानहींसंभवता ।
 क्योंकितिसअज्ञानकोधिकाररहितब्रह्मतथाईश्वरकेभेदका संपादकपना

है जीवब्रह्मके भेदका वह संपादक नहीं । यह वार्ता ॥

✽ कारणोपाधिरीश्वरः । ✽

अ० ॥ कारणरूप अज्ञान उपाधिवाला ईश्वर है ॥ इस श्रुतिमें कथनकी है । और द्वितीयपक्षभी नहीं संभवता । क्योंकि तिस अंतस्करणको वास्तव माने हुये भेदको भी वास्तवपना प्राप्त होगा ॥ और यदि अंतस्करणको कल्पित माने तो वह अनादि है वा । सादि है यह विचार कर्तव्य है ॥ सादिपक्षकानिराकरण आगे करेगे । प्रथम अनादिपक्षमे यह विचार किया चाहिये । वह अंतस्करण सुषुप्ति आदिक अवस्थामे स्थित रहित है । वा । नहीं । पुनः प्रथमपक्षमे यह विचार कर्तव्य है ॥ क्या ? वह अंतस्करण स्थूलरूपतासे रहित है वा । सूक्ष्मरूपतासे रहित है ॥ प्रथमपक्ष नहीं संभवता क्योंकि

✽ मनः सर्वैर्ध्यानैः सहाप्येति ✽

अ० ॥ सर्ववृत्तियों सहित अंतस्करण सुषुप्ति अवस्थामे लीन हो जाता है ॥ इस श्रुतिके विरोध होता है । और मनरूप अंतस्करणको स्थूलरूपतासे विद्यमान हुये सुषुप्तिका भी अभाव होगा ॥ और द्वितीयपक्षभी नहीं संभवता । क्योंकि सूक्ष्मपनेका शक्तिवाले कारणरूप अज्ञानसे भिन्न निरूपण नहीं हो सकता । और यदि कारणरूपतासे अंतस्करणकी स्थितिमाने तो कारण ही ब्रह्म स्थित होगा । अंतस्करण नहीं । तिस अंतःकरणके निवृत्त हुये जीवब्रह्मका भेद भी नहीं सिद्ध होगा ॥ इसीरीतिसे अंतस्करण सुषुप्ति अवस्थामे नहीं रहित । यह पक्ष भी निरास हुया जान लेना ॥ और अंतस्करणको उपाधिरूपताके निराकरणकी जो युक्ति है । तिसीसे अतिरेकपक्षभी निरास करने योग्य है ॥ और भेदाऽभेदका परस्पर विरोध होनेसे भी अतिरेकको उपाधिरूपता नहीं संभवती ॥ इस प्रकार उपाधिके निरूपण होनेसे जीव

त्रौब्रह्मकाभेदत्रौपाधिकहैयहकथनअयुक्तहै ॥ समाधान ॥

✽ अज्ञान को उपाधि रूपता निरूपण ✽

जो अज्ञान शुद्ध ब्रह्म तथा ईश्वरके भेदका उपाधि है सोई ही अज्ञान जीवब्रह्मके भेदका उपाधिकहने योग्य है ॥ क्योंकि अज्ञानके कार्य अंतःकरण आदिकोंको कदाचित् कहोनेसे जीवब्रह्मके भेदका उपाधिपनानहीं संभवता ॥ यद्यपि ईश्वरका उपाधि जो अज्ञान है सोई जीवका उपाधि है ॥ ऐसामाननेसे ईश्वर तथा जीवके सर्वज्ञतादिक धर्मोंका संकर होगा तथापि आवरणशक्ति प्रधान अज्ञान जीवब्रह्मके भेदका उपाधि है और विज्ञेयशक्ति प्रधान अज्ञान ईश्वरका उपाधि है ॥ इसी कारणसे वेदांत ग्रंथोंमें माया उपाधिवाला ईश्वर कहा है ॥ यातेदोनोंके धर्मोंका संकर नहीं ॥ इति ॥

✽ अथ त्रौपाधिक भेद का खंडन ✽

इस प्रकार त्रौपाधिकपक्षमें तीन विकल्पकरके और तिसमें अज्ञान को उपाधि रूपताकी संभावना करके तिस त्रौपाधिकपक्षको दूषित करनेके लिये आरंभ करते हैं ॥ पूर्व त्रौपाधिकभेदपक्षमें तीन विकल्प किये थे तिनमें अज्ञानजन्य जीवब्रह्मका भेद है ॥ यह प्रथमपक्ष है तिसमें यह विचार कर्तव्य है ॥ वह जीव ब्रह्म का भेदसादि है अथवा अनादि है ॥ यदि अनादिकहो तो तिम को अज्ञान जन्यता नहीं वनेगी ॥ क्योंकि जो अनादि होता है सो अजन्य होता है यदि अनादिकी भी उत्पत्ति मानोगे । तो ब्रह्मकी भी उत्पत्ति हुई चाहिये । और जो ऐसे कहो कि भेद व्यक्तियोंसादि है परन्तु तिसका प्रवाह अनादि है । सो कथन भी नहीं संभवता । क्योंकि भेदव्यक्तिमें भिन्नाभिन्नरूपताकरके प्रवाहकानिरूपण नहीं होसकता । तथाहि भेदव्यक्तिसे यदि प्रवाहको भिन्नमाने तो प्रवाहको

ही अनादिपनासिद्धहोगाभेदव्यक्तिको नहीं। और भेदव्यक्तिसे प्रवाहको अभिन्नमाने तो प्रवाहको भी अनादिपना नहीं सिद्ध होगा। या तो भेदको सादिपना ही शेष रहता है ॥ तिसमें भी यह विचार किया चाहिये ॥ क्या? अज्ञानप्रयोजनसे विना ही भेदको उत्पन्न करेगा अथवा किसी प्रयोजनके अर्थ उत्पन्न करेगा ॥ प्रथम पक्ष नहीं संभवता। क्योंकि निष्फल वस्तुको कारणाता का ही असंभव है ॥ सफल वस्तुको ही कारण कहते हैं ॥ और द्वितीय पक्ष में भी वह प्रयोजन कोई जीव का है वा अज्ञानका अपना कोई प्रयोजन है ॥ यह विचार करने योग्य है ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि भेदकी उत्पत्तिसे पूर्व जीवभाव ही अस्ति है ॥ और द्वितीय पक्ष में भी यह विचार कर्तव्य है ॥ क्या? आश्रय तथा विषयकालाभ यह अज्ञानका अपना प्रयोजन है ॥ अथवा अन्य कोई प्रयोजन है ॥ अंत्य पक्ष तो असंगत है। क्योंकि जीव ब्रह्मके भेदसे उत्पन्न हुआ अज्ञानगत और कोई प्रयोजन निरूपण नहीं हो सकता और प्रथम पक्ष भी नहीं संभवता क्योंकि भेदकी उत्पत्तिसे पूर्व ही जीव ईशभेदसे रहित आत्मानिष्ठ अज्ञानकी सिद्धि होनेसे भेदकी तिस अज्ञानको किंचित भी अपेक्षा नहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन् भेदकी उत्पत्तिसे पश्चात् अज्ञान आश्रय तथा विषयको प्राप्त होगा ॥ भेदकी उत्पत्तिसे पूर्व तिसको आश्रय और विषयकालाभ नहीं ॥ सामाधान ॥ हे एकदेशिन "किसको किस विषयक अज्ञान है" ॥ इस प्रकार का प्रश्न लोक में प्रसिद्ध है। तिससे आश्रय तथा विषयकी अपेक्षा सहित ही अज्ञान प्रतीत होता है। अन्य प्रकारसे नहीं। क्योंकि तिसको स्वतंत्रता का अभाव है। या तो भेदका उत्पन्न करना व्यर्थ है। यह भाव है। और अज्ञान भास्य जीव ब्रह्मका भेद हे यह द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि अज्ञानको ज्ञानसे

भिन्नहोनेकरजडपनाहै जडहोनेसेप्रकाशकताका अभावहै । और
अज्ञानकेआधीनजीवब्रह्मका भेदहैयहतृतीयपक्षभीअसंगतहै ।

* त्रिविधतंत्रताका निरूपण *

क्योंकितंत्रताअर्थात् पराधीनतातीनप्रकारकी लोकमेंदेखीहै ।
एकतोघटादिकार्यको अपनेकारण मृत्तिकादिकोंकी आधीनताहै ।
औरदूसरीमनुष्यादिशरीरोंको अपने आधारभूम्यादिकोंकीआधीनता
है ॥ औरतीसरीघटादिक पदार्थोंकोअपनेप्रकाशकेलिये सूर्यादिक
प्रकाशकोंकी आधीनताहै । तैसेजीवब्रह्म केभेदकोअज्ञानरूपउपाधि
करकेजन्यतारूपआधीनताहै।वा।उपाधिकेआश्रितपनारूपआधीनता
है वा।उपाधिकरकेप्रकाश्यत्व रूपआधीनताहै। इनतीनोंकेमध्यकोई
भीअज्ञानजन्यत्वादि प्रकारप्रकरणगतजीवब्रह्मकेभेदमेंनहीं संभवता
क्योंकिजीवब्रह्मकेभेदको अज्ञानजन्यताऔरअज्ञानभास्यताकातोपूर्व
निषेधकरहीआएहैं यातेपुनःनिषेधकरनेका कुछफलनहीं॥ औरतीसरी
अज्ञानआश्रयता रूपतंत्रताभीजीवब्रह्मके भेदनिष्ठनहीं संभवती ।
क्योंकिवहभेदजीवऔर ब्रह्मइनदोनोंकेमध्यकिसीएकमेंरहताहै । यदि
जीवप्रतियोगिकऔर ब्रह्मअनुयोगिकभेदहैतो ब्रह्ममेंवर्तताहै औरयदि
ब्रह्मप्रतियोगिकऔरजीव अनुयोगिकभेदहैतो जीवमेंवर्तताहै ॥ याते
वहभेदअज्ञानको कैसेआश्रयणकरेगा किंतुनहीं करसकता ॥ शंका ॥
हेवादिन्जैसे “महाकाशसे घटाकाशभिन्नहै” इसप्रतीतिमें महाकाश
प्रतियोगिकभेदका घटाकाशकोधर्मिपनाहुये विशेषणरूपघटकोभी
धर्मिताहै ॥ तैसे “ब्रह्मसेअज्ञानीजीवभिन्नहै” इसप्रतीतिमेंभीब्रह्म
योगिकभेदकाजीवको धर्मिपनाहुयेभीजीवके विशेषणरूपअज्ञानको

तिस भेद की अविहरणता क्यों नहीं होती किन्तु अवश्यहूँ चाहिये ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् हमारोसिद्धांतमें अज्ञानको जीव भावकी उपाधिरूपता होनेसे तटस्थ होनेकर भेदके धर्मिजीवका विशेषण पनास्वीकार नहीं है । जैसे पाकरूप क्रियापाचकका उपाधिहुयीभी पाचकका विशेषण नहीं हो सकती ॥ और यदि पाकक्रियाको पाचकका विशेषण मान लें तो पाकक्रियामें भी पाचरूपना प्राप्त होगा । “क्योंकि विशिष्टवृत्तिधर्मका विशेषणमें वर्तनेकानियम है” ॥ अर्थ यह ॥ पाक क्रियाविशिष्ट पुरुषमें वर्तमान जो पाचकत्वधर्म है सो पाचककी विशेषणीभूतक्रियामें भी प्राप्त होगा । सो ऐसा देखनेमें नहीं आता ॥ याते जीवब्रह्मके भेद ही अज्ञानमें अधिकरणता नहीं संभवती ॥ पाकक्रियाको पाचककी विशेषणता निराकरण करनेसे घटभी घटाकाशका विशेषण नहीं किन्तु उपाधि है याते पूर्वउक्तदृष्टांतभी असमीचीन है ॥ शंका । जीवअनुयोगिकजो ब्रह्मका भेद है वह अज्ञानमें क्यों नहीं वर्तेगा किन्तु अवश्य वर्तेगा ॥ क्योंकि एकही भेदके अनेक धर्मिस्वीकार हैं । जैसे एक ही घटभेदके पटादिक सर्वही धर्मि हैं । तैसे यहां भी भेदका धर्मिपना अज्ञानको बन जायेगा ॥ समाधान ॥

✽ अथ अज्ञानको जीवब्रह्मप्रतियोगिकभेदकी

अधिकरणताका निषेध । ✽

अज्ञानमें ब्रह्मका भेदस्वाभाविक है ॥ वायौपाधिक है प्रथमपक्षतो नहीं संभवता, क्योंकि एकही ब्रह्मप्रतियोगिकभेदको जीवमें वायौपाधिक मानेहुये और अज्ञानमें स्वाभाविक मानेहुये द्विरूपता होनेसे विरुद्धपना है अर्थ यह स्वाभाविकत्व तथा वायौपाधिकत्वदो विरोधिधर्म एकभेदरूपधर्ममें

नहीं संभवते ॥ और भेदको वास्तव होनेसे द्वैतापत्ति भी होगी ॥ याते भी प्रथमपक्ष असंगत है ॥ और द्वितीयपक्षमें अविद्यासे भिन्न और कोई उपाधि निरूपणा नहीं कर सकते । किन्तु अविद्या को ही उपाधि कहना होगा ॥ और अविद्यानिष्ठ भेदमें अविद्याको ही उपाधि माने हुये आत्माश्रयदोष कैसे नहीं प्राप्त होगा ॥ इस प्रकार भेदोत्त्वाभाविक तथा औपाधिकरूपता से निरूपणा होनेकर स्वभावका भेद अविद्यामें है यह कथन निरर्थक है ॥ इतने कथनसे जीवप्रतियोगिक भेदकी आश्रयता भी अविद्यामें निषेधकी गयी ॥ क्योंकि जीवप्रतियोगिक भेदको ब्रह्ममें औपाधिक होनेकर तिसको अविद्यामें भी औपाधिक माने हुये कैसे आत्माश्रयदोष नहीं होगा जिसकारणसे अविद्यासे भिन्न उपाधिका अभाव है और तिस जीवप्रतियोगिक भेदको अविद्यामें स्वाभाविक माने हुये द्विरूपताकी प्राप्तिभेदको होगी । क्योंकि ब्रह्ममेव भेद औपाधिक है और अविद्यामे स्वाभाविक है ॥ एक ही भेदमें द्विरूपताकी प्राप्ति विरुद्ध है । और पूर्वकी न्याई द्वैतापत्तिदोष भी इसपक्षमें प्राप्त होगा किंवा जीवसे भिन्न अज्ञानको जीवभेदका उपाधिपना है अथवा जीवसे अभिन्न अज्ञानको उपाधिपना है ॥ अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि अपने विषयक आपको ही उपाधिपना अयुक्त है ॥ और आपको उपाधिरूपता माननेमें आत्माश्रयदोष भी होगा ॥ और अन्योऽन्याश्रय दोष होनेसे प्रथमपक्ष भी असंगत है । क्योंकि भेदसिद्धिके आधीन उपाधिकी सिद्धि है । और उपाधिकी सिद्धिके आधीन भेदकी सिद्धि है । इस प्रकार स्वाभाविक तथा औपाधिक भेदको अज्ञान आश्रितत्व नहीं संभवता । यह भाव है ॥ और जो एक ऐसी ऐसे कहे कि जैसे अज्ञान और आत्माका संबंध अज्ञानके आ-

धीन है । तैसे ब्रह्मात्माका भेदभी अज्ञानके आधीन है । सो यह कथनभी नहीं संभवता । क्योंकि संबंधकों संबंधियोंके आधीन रहने कानियम है ॥ और भेदमें संबंधरूपताका अभाव है ॥ शंका ॥ हेवादिन् पूर्वकथनकी हुयी तीन प्रकारकी तंत्रतासे भिन्न ही जैसे द्रव्यत्व और गुणवत्ताका नियमनियामकभाव है । तैसे जीवब्रह्मके भेद और अज्ञानकानियमनियामकभाव क्यों न हो भाव यह ॥ जैसे द्रव्यत्वको नियमनियामकभाव से अपने नियामक गुणवत्ताकी आधीनता है तैसे नियमनियामक जीवब्रह्मका भेद तिसको भी अपने नियामक अज्ञानकी आधीनता क्यों नहीं होती किंतु हुयी चाहिये ॥ यहां व्यापकानाम नियम है और व्यापकानाम नियामक है ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् एक अधिकरणमें रहनेवाले पदार्थोंका ही नियमनियामकभाव देखा है ॥ जैसे द्रव्यत्व और गुणवत्ता इन दोनोंको एक द्रव्य वृत्ति होनेसे समानाधिकरणात् है ॥ याते तिनका नियमनियामकभाव वनै है और यहां प्रसंगमें जीवब्रह्मके भेद और अज्ञानकी एक अधिकरणात्ताका अभाव है ॥ क्योंकि अज्ञानजीवनिष्ठ है और जीवप्रतियोगिकभेदब्रह्मनिष्ठ है । इस प्रकार एक अधिकरणात्ताका अभाव होनेसे दृष्टान्तविषम है ॥ याते जीवब्रह्मके भेद और अज्ञानकानियमनियामकभाव नहीं संभवता ॥ शंका ॥ हेवादिन् भेद और अज्ञानकी एक अधिकरणात्ता वन सकती है । क्योंकि "मैं अज्ञानी हूं" इस प्रतीतिसे अज्ञानजीवनिष्ठ है और "मैं ब्रह्म नहीं हूं" इस प्रतीतिसे ब्रह्मप्रतियोगिकभेदभी जीवनिष्ठ है । इसरीतिसे ब्रह्मभेद और अज्ञानको जीवनिष्ठ होनेसे तिनकी समानाधिकरणात्ताका अभाव कैसे कहते हो ॥ समाधान ॥ हे एकदेशिन् यहां अहंशब्दसे अतःकरणका द्वितीय पर्याय जो अहंकार है तिसका कथन है

अथवा अंतःकरणके साथतदात्मभावको प्राप्तचैतन्यका अहंशब्दसे कथनहै । वाशुद्धब्रह्मकाकथनहै। प्रथमयौद्वितीयपक्षतोनहींसंभवते। क्योंकितिनदोनोंको अज्ञान हेयाधीनहोनेकर अज्ञानकाआश्रयपना नहींसंभवता। औरतृतीयपक्षमेंहमकोइष्टा रतिहै। क्योंकिशुद्धचिन्मात्र हीअज्ञानका आश्रयतथाविषयहै ।

* अज्ञानको शुद्धचैतन्याश्रयत्वऔर विषयत्व का स्थापन *

शंका ॥ चैतनमात्रनिष्ठाअज्ञानहोपरंतुविषय तिसकाब्रह्महो जायेगा ॥ समाधान ॥ हेएकदेशिन्यहंयहतात्पर्यहै ॥ ब्रह्मअज्ञान काविषयहैयहजोलुमकहतेहो ॥ इसमेब्रह्मशब्दकाअर्थकौनहै ॥ क्या विषयप्रतिविषयभावसेरहितशुद्धचिन्मात्रहै अथवाविषयभावको प्राप्तचैतन्य ब्रह्मशब्दकाअर्थहै ॥ प्रथमपक्षमेतोहमकोभीइष्टापतिहै ॥ क्योंकिशुद्ध चिन्मात्रकोहीअज्ञानकीविषयताहममानतेहैं ॥ औरद्वितीयपक्षमेंविषय भावकोअविद्यासेउत्तरकालमेहोनेकरवहअविद्यातिसकोविषयनहींकरती किंवाअज्ञातब्रह्मकीसिद्धिक्याप्रमाणसेहै अथवाभ्रमसेहै। अथवास्व प्रकाशतासेहै ॥ प्रथमपक्षमेतोब्रह्मकोजडपनाहोगा। क्योंकिजोप्रमाण काविषयहोताहै ॥ सोघटकीन्याईजडहीहोताहै। औरब्रह्मकाविशेषणी भूतअविद्याकोप्रमाणसिद्धहोनेकरद्वैतापत्तिभीहोगी ॥ औरविरोधसे भीप्रथमपक्षअसंगतहै क्योंकिप्रमाणकरनिवृत्ति केयोग्यजोअज्ञानवह प्रमाणकेसंबद्धकोनहींसहनकरसकता। औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता क्योंकिजबभ्रमसे अज्ञातब्रह्मकीसिद्धिमानेतोअविद्याकीविषयताकाअ- भावप्रसंगहोगा। विषयकेबाधहोनेकरहीज्ञानकोभ्रमपनाहोताहै। और

तृतीयपक्षभीअसमीचीनहै ॥ क्योंकिअज्ञातब्रह्मका स्वप्रकाश रूपता
 करस्फुरणनहींहोता ॥ यातेसोब्रह्मकिसप्रकारअज्ञानकाविषयहोसकताहै
 इसीसेसर्वथाभेदकेनबननेसेजीवब्रह्मकेभेदसेरहितशुद्धआत्माकोअज्ञान
 आश्रयणकरकेतिसआत्माकोहीविषयकरताहै ॥ इसप्रकारअज्ञानकी
 विषयताआत्मानिष्टसिद्धहुई ॥ इति ॥अविद्याजीवब्रह्मविभागसेरहित
 शुद्धत्रिदात्माको आश्रयणकरतीहै ॥ औरतिसीको विषयकरतीहै ॥
 यहअर्थपूर्व निरूपणकिया ॥ तिसमे वृद्धोंकी संमत्तिकहतेहैं ॥ यह
 वार्तासर्वज्ञात्ममुनीयोंनेभीकथनकीहै ॥ उन्होंनेक्याकथनकियाहै ॥
 ऐसीआकांक्षाकेहुये कहतेहैं ॥

आश्रयत्वविषयत्वभागिनीनिर्विभागचितिरेवकेवला
 पूर्वसिद्धतमसोहिपश्चिमोनाश्रयोभवतिनापिगोचरः॥

सं० शा० अ० २ श्लो० ३१६ ॥

चौ० ॥ आश्रयत्वविषयत्वविभागन । निर्विभागचितिकेवल
 थास्वन ॥ पूर्वसिद्धतमोहैयतिआश्रयविषयोनकार्यताते ॥१॥

टी० ॥ अज्ञानकेआश्रय तथाविषयके भजनेवालाचेतनहै ॥
 यद्यपिअज्ञानकाआश्रयजीवकोमानेहुयेतथा विषयब्रह्मकोमानेहुयेभी
 चेतनकोअज्ञानकीआश्रयतातथाविषयताकीअनुपपत्तिनहीं । क्योंकि
 जीवऔंब्रह्मइनदोनोंमेचेतनअनुगतहै ॥ तथापिजीवऔंईश्वरकोअज्ञान
 केआधीनहोनेकर जीवईशभेदसे रहितही चेतन अज्ञानका था .य
 तथाविषयहै ॥शंका॥ जैसेचेतनमात्रकोअज्ञानका आश्रयतथाविषय
 तुमनेमाना है ॥ तैसेअनात्माभीअज्ञानका आश्रयऔंविषयक्योंनहो
 ॥ समाधान ॥ तुम्हारीइसआशंकाकोमूलभेकथनकियाजो“एवकार”

तिसके अर्थको स्पष्ट करनेवालेकेवलपदनेनिवारणकियाहै ॥ शुद्धचेतन
सेभिन्नअनात्मवर्गअज्ञानकाआश्रयऔरविषयनहीं इसमेहेतुकहतेहैं ॥
जिसकारणसेअज्ञानप्रथमहीसिद्धहै॥इसीसेपश्चात्तहोने वालाअनात्मा
तिसअज्ञानकाआश्रयऔरविषयनहींबनसकता ॥ इति ॥

* शंका पूर्वक अज्ञान के एकत्व की प्रतिज्ञा *

शंका॥हेवादिन्अज्ञानकाआश्रयएकमानेहुयेतिसकीअनेकता-
निरूपणकरनीकठिनहै॥ जिसकारणसेजीवजीवप्रतिजगत्केउपादान
भूतअज्ञानकीअनेकताएकदेशीनेभीनहींकानी।किंतुएकजीवकेआश्रित
एकहीअज्ञानमानाहै औरअज्ञानकोएकमानेहुयेबद्धमुक्तादिव्यवस्था
कीअनुपपत्तिहै॥ इसप्रकारअज्ञानके एकत्वतथा अनेकत्वपक्षमे दोष
देखनेसेहमयहप्रवृत्तहैं।आश्रयतथाविषयकाएकत्वमानेहुयेभीसोअज्ञान
एकहैअथवाअनेकहै ॥ यहनिर्णयकैसेहुया ॥ इसप्रकारएकतदस्थ
की आशंका को सुनकर “ धर्मिकी कल्याणसे धर्ममात्र की कल्याण
श्रेष्ठहै ” इस न्याय को आश्रयण करके सिद्धांत मुद्राको आश्रयण
करने वाला पूर्व पक्षी उत्तर कथन करता है ॥ समाधान ॥
हेतदस्थ एकही अज्ञान है यह हम कहते हैं ॥ शंका ॥ देवा
दिन्तिसअज्ञानकी एकतामें साधककौनहै । भावयह ॥ यदितुम
अज्ञानकेएकत्व विषयकप्रमाणकहोगे । तोअपसिद्धांतहोगा।क्योंकि
प्रमाणसिद्धअज्ञानको सत्यहोनेकरद्वेनापत्तिरूप दोषप्राप्तहोताहै ।
औरविरोधभीहै । क्योंकिअज्ञानप्रमाणके संबंधकोमहानहीनहींकरता
औरयदितुमकोईप्रमाणनहींकहोगे । तोअज्ञानकाएकत्व सिद्धनहीं
होगा । औरयदिकेवलयुक्तिही तिमकामाधककहोगेतोमूलप्रमाणसे

रहिततिसयुक्तिको आभासरूपताहोगी । यातेकिसीप्रकारसेअज्ञान काएकत्वसिद्ध नहींहोसकता ।

*अथअज्ञानमे लौकिकादिप्रमाणकेखंडनपूर्वकलाघव

सहकृततर्कसेतिसके एकत्वकास्थापन ।* समाधान

मू० ॥ लौकिकीवैदिकीचापिनाऽज्ञानेदृश्यते प्रमा ।

कार्यदृष्ट्याथकल्प्यं चेल्लाघवादेकमेवतत् ।८*

भुजंगप्रयात० ॥ प्रमालौकिकी वैदिकीमोहिष्यारे ॥

अज्ञानं विपेनाहिकोईदिखारे ॥ यदीमृष्टिको देख,

ऊहाकरैहो । लघूतासितो एकहीजानलैहो ॥ ९ ॥ *

टी० ॥ यहांकारिकाके पूर्वार्द्धसेअपसिद्धांतकी आशंकाका परिहारजानना । औरउत्तार्द्धसे लाघवसंज्ञकतर्क अज्ञानकेएकत्वको सिद्धकरताहै।शंका।मूलकारिकामें (नाज्ञाने दृश्यतेप्रमा) अ० अज्ञान मेंकोईप्रमाणनहीं देखाजाता । यहजोकथनहैसोअयुक्तहै । क्योंकि अज्ञानके स्वरूपमें प्रमाणकाजो अदर्शनहै तिसकाप्रकरणके साथ किंचित्भीसंबंधनहींहै । जिसकारणसेअज्ञानके स्वरूपमेतोअज्ञानहैवा नहींइसप्रकारकेविवादका अभावहै । किंतुतिसके एकत्वऔरअनेकत्व मेंहीविवादहै ॥ यातेपूर्वकथननहींसंभवता ॥ समाधान । अज्ञानका जोसाधकहैवह तिसकेएकत्वकोभी सिद्धकरदेगा । इसअभिप्रायसेपूर्व कथनसंभवताहै । इसीअभिप्रायकोलेकर श्लोककीव्याख्याकरतेहैं । अज्ञान।क्या ? वेदप्रमाणकरसिद्धहैवा।मत्यक्षादिप्रमाणकरसिद्धहै।यहां आदिपदसेअनुमान तथालौकिकशब्दका ग्रहणकरना ॥ अथवा ॥ दृश्यमानजगत्स्वरूपकार्यकी अन्यथाऽनुपपत्ति रूपतर्कसेवह अज्ञान

कल्पनाकरनेयोग्यहै ॥ अथ

❀ सर्वेवेदायत् पदमामनन्ति ॥ ❀

इसश्रुतिकोनआश्रयण करकेप्रथमपक्षकोदूषित करतेहैं ।

❀ पूर्वकांडतथा उत्तरकांड रूपवेदकाधर्म,
औरब्रह्ममेंतात्पर्यनिरूपण । ❀

इनतीनोंपक्षोंमें प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिसाक्षात्तथा परम्परासेपूर्वकांडरूपवेदकाकर्ममात्रविषयहै औरउत्तरकांडरूपवेदांतोंका साक्षात् तथापरंपरासे परिपूर्ण सच्चिदानंद ब्रह्ममात्र विषयहै ॥ शंका ॥ धर्मतथाब्रह्महीवेदवाक्योंकाविषयहै यहनियमआपक्योंकरते हो किन्तुजिसवाक्यसेजोअर्थश्रवणकियाहै तिसअर्थमेंसोवाक्यक्योंन प्रमाणहो॥समाधान॥धर्मतथाब्रह्मकेप्रतिपादनमेंहीफलकासंबंधहै भाव यह ॥ जिसकारणसेअध्ययनविधिफल वालेअर्थकाजोज्ञान तिसका उद्देशकरकेवेदाध्ययनकाविधानकरताहै॥औरसाक्षात्वेदसेप्रतिपादन कियाहुयाअर्थसर्वत्र फलवाला नहींहोसकता ॥ क्योंकिनामधेयऔर देवतादिरूपअर्थभीअनेकवाक्योंमेंप्रतीतहोनाहै ॥ परन्तुतिनकेप्रतिपादनमें सुखतथादुःखाभावरूपफलका अदर्शनहै ॥ औरधर्मकाज्ञान अपनेविषयभूतधर्मका अनुष्ठानकराताहुया स्वर्गादिरूपफलकोउत्पन्न करताहै ॥ औरब्रह्मज्ञानतो अनुष्ठानकी अपेक्षासेबिनाहीअनेकदुःखरूपअज्ञानकीनिवृत्तिपूर्वकपरमानंदकाप्रापकहै ॥ इसरीतिसेधर्मतथा ब्रह्मकेप्रतिपादनमेंहीफलकासंबंधहै ॥ इनसेभिन्नअज्ञानरूपअर्थतथा श्रवणादिरूपअर्थकेप्रतिपादनमेंफलकासंबंधनहीं ॥ यातेअज्ञानमेंवेद प्रमाणकाअभावहै ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिस्पष्ट

प्रत्यक्षादिसिद्ध अज्ञानकोमानेहुये वादियों कापरस्पर विवादनहोना
 चाहिये ॥ यहांविवादग्रस्तईश्वरादिप्रत्यक्षसेजोभिन्नपनाहै ॥ यहही
 प्रत्यक्षनिष्ठस्पष्टपनाहै ॥ इसरीतिसेअज्ञानकोप्रमाणकाअविषयहोनेसे
 अपसिद्धांततथाविरोधकीभीप्राप्तिनहींहोतीयहभावहै ॥यहांतकश्लोक
 केपूर्वाह्नकाव्याख्यानकिया॥अबअज्ञानकोलौकिकतथावैदिकप्रमाण
 करअसिद्धमानेहुयेप्रमाणकेअभावसे तिसकाएकत्वनहींसिद्धहोगा ॥
 इसप्रकारकीआशंकाकालाथवहैसहिकारीजिसकाऐसीजोअन्यथाऽनुप
 पतिरूपयुक्तिवहअज्ञानकेएकत्वकासाधकहैइसप्रकारकापरिहाररूपता
 करउत्तरार्द्धकाव्याख्यानकरतेहैं ॥ जिसकारणसेअज्ञानविषयकप्रमाण
 नहींसंभवता ॥ इसीकारणसेस्वभावसेअसंगऔरउदासीनतथास्वानंद
 करतृप्तआत्मानिष्ठमिथ्याऔरअनेकप्रकारकेसुखदुःखादिरूपपूंपंचरचना
 कीअन्यथाऽनुपपत्तिसेअज्ञानकल्पनाकियाजाताहै॥यहहीकथनकरना
 योग्यहै॥ क्योंकिअन्यकिसीरीतिसेपूंपंचरचनाकीउपपत्तिनहींसंभवती
 भावयह ॥ अज्ञानसेविनाअसंगईश्वरसेजगत्त्रचनाकीअनुपपत्तिहै ॥
 यातेअज्ञानकल्पनाकियाजाताहै ॥ शंका ॥ जैसेकुलालघटकोउत्पन्न
 करताहुयाअज्ञानकीअपेक्षानहींकरता॥ तैसेईश्वरभीअज्ञानसेविनाही
 जगत्त्रचनाकरलेगा ॥ अज्ञानकीकल्पनाकरनेकाकिंचित्भीप्रयोजन
 नहीं ॥ समाधान ॥ सोईश्वरशरीरतथा इन्द्रियोंके संबंधसेरहितहै ॥
 यहवार्ताश्रुतिमेंप्रसिद्धहै ॥ यातेअसंगकोकर्तृत्वनहींसंभवता॥शंका॥
 जैसेवस्त्रस्वभावसेजलकेसाथ संबंधवालाभीहै परन्तुमोमसे लिप्तहुया
 जलकाअसंसर्गीहोताहै ॥ तैसेईश्वरस्वभावसेसंगिहुयाभीकिसीउपाधि
 केवशसेअसंगिक्योंनहो ॥ समाधान ॥ वहईश्वरस्वभावसेहीअसंग

है ॥ क्योंकि ॥

❀ असंगोह्ययं पुरुषः ❀

अ० ॥ यहपुरुषअसंगहै ॥ इसश्रुतिमेईश्वरका असंगस्वभाव कहाहै ॥ औरकिसीउपाधिकेननिरूपणहोनेकरअसंगपनाओपाधिक नहीं किंतुस्वाभाविकहै ॥ शंका ॥

❀ तत्तेजोऽसृजत् ॥ छं० उ० अ० ६ तं २॥३❀

अ० ॥ सोपरमात्मा तेजको उत्पन्नकरताभया ॥ इस श्रुतिसे ईश्वरमेकर्तृत्वप्रतीतहोताहै ॥ यातेअसंगपनाअसिद्धहै ॥ समाधान॥ हेवादिन्वहईश्वरउदासीनहै अर्थात्थकर्ताहै ॥ भावयह चेतनकर्ता किसीप्रयोजन काउद्देश करकेकार्यको रचनाकरताहै ॥ औरईश्वरको जगत् रचनाकाप्रयोजनक्या? दुःखाभावरूपहै अथवासुखरूपहै ॥ प्रथम पक्षतो नही संभवता ॥ क्योंकि दुःखाभावतो ईश्वरमेस्वतः सिद्धहै ॥ और द्वितीयपक्षभी असंगतहै ॥ क्योंकि वह ईश्वर अपने स्वरूपभूत आनंदकर ही तृप्तहै ॥ तिसीसे दोनों प्रकारके प्रयोजनसे मून्यहोनेकर वह ईश्वर उदासीनहै ॥ याते तिसको तेजादि जगत् का कर्तृत्व युक्त नहीं है ॥ और

❀ यतोवाइमानिभूतानि जायंते ॥ तै० उ० मृ० व० अ१❀

अ० ॥ जिसकारणसे यह सर्वभूत उत्पन्नहोते हैं ॥ इसश्रुतिने जगत् रचना ईश्वरसे कथनकी है । इसीकारणसे असंगतथा उदासीन आत्मानिष्ठ प्रपंच रचना अज्ञानसे विना नही संभवती । याते अज्ञान कल्पना किया जाता है । शंका ॥ रजतको उत्पन्न करती हुयी शुक्ति अज्ञानकी अपेक्षा करती है । क्यों कि वह रजत मिथ्या है । और प्रपंचको तो सत्य होनेकर तिसके उत्पादनमे

ईश्वरको अज्ञानकी अपेक्षासंभवती ॥ समाधान ॥ "नेति-
 नेति" इसश्रुतिसेईश्वरमेपंचका निषेधश्रवणहोताहै ॥ यातेरजतकी
 न्याईपंचभीमिथ्यारूपहै ॥ तिसकीउत्पत्तिमेईश्वरकोअवश्यअज्ञानकी
 अपेक्षासंभवतीहै ॥ औरअनेकप्रकारकेसुखदुःखादिरूपजगत्कीरचना
 अन्यप्रधानादिकोंसेनहींसंभवती ॥ किन्तुजैसेरज्जुअज्ञातहुयीअनेक
 प्रकारकेसर्पमूत्रधारामालादिरूपप्रातिभासिकपंचकोरचनाकरतीहुयी
 देखनेमेआतीहै ॥ इसीप्रकारअसंगस्वभावहुया भीईश्वरअज्ञानकेवश
 सेनानाप्रकारकेपंचकोरचनाकरताहै। इसरीतिसेअज्ञानकीसिद्धिहैयहां
 अन्यरीतिकाअभावहै ॥ तात्पर्ययह। पृथग्ब्रह्मकोअसंगस्वभावहोने
 सेअज्ञानसेविनातिससेपंचरचनाकाअसंभवहै। औरअन्यकिसीप्रधान
 प्रमाणुआदिकसत्यउपाधिउपहितब्रह्मसेभी जगत् रचनाका संभवनहीं
 क्योंकिकार्यमिथ्याहै। मिथ्याकासत्यकारणनहींहोसकता। औरअन्यकिसी
 मिथ्याउपाधि सेभीजगत् रचनाकासंभवनहीं। क्योंकितिसउपाध्यांतरको
 सादिपनाहैवाअनादिपनाहै। यहपूष्टव्यहै। प्रथमपक्षमेतोअनादिप्रपंचके
 उत्पन्नकरनेमेतिसकोउपाधिपनानहींसंभवता। औरद्वितीयपक्ष मानेहुये
 अज्ञानकाहीनामांतरकराहै। तिससेअज्ञानकीसिद्धिवलात्कारसेहुयी ।
 औरअज्ञानकोप्रपंचरचनाकी साधकताकाअसंभवभीनहीं। क्योंकिरज्जु
 निष्ठअनेकसर्पादिरूपप्रातिभासिकप्रपंचकीरचनामेअज्ञानकोसाधकपना
 देखनेसेअसंभवकाअभावहै । इसप्रकारप्रपंचरचनामेअन्यकिसीप्रकार
 केनवननेसेअज्ञानकीकल्पनाकरनीयुक्तहै । इति ॥

शंका ॥ ❀ अज्ञानके एकत्वकानिर्धार । ❀

इसपूर्वउक्तरीतिसे अज्ञानकी कल्पनाकरो परंतुतिसकाएकत्व

किसकारणसेहै । समाधान ॥ तिसपूर्वकथनसे कल्पनाका विषय भूतसोअज्ञानएकहै वाअनेकहै इसप्रकारकेविवाद हुएएकहीअज्ञानहै यहनिर्णयहुया । यद्यपिक्रमसे होनेवाले अनेककार्योंके देखनेसे अनेकअज्ञानोंकी कल्पनाप्राप्त होतीहै । तथापि वहएकही अज्ञान विचित्र शक्तियोंवालाहै ॥ यातेतिससे विचित्रकार्यकीउपपत्तिहै ॥ औरएकही विचित्रशक्तिवाले पदार्थको अनेककार्यकीजनकताकोई दृष्टिकाअगोचरभीनहीं।क्योंकिस्वप्नमें अनेकप्रकारकेकार्यकीजनकता निद्रादोषमेंदेखीहै ॥ इसीसेअज्ञानएकहै । औरयदिएकदेशीऐसेकहे। अज्ञानरूप धर्मिका ग्राहकजो प्रपंचरचनाकी अन्यथाऽनुपपत्तिरूप तर्कहैतिसकावाधहोगा ॥ क्योंकिअज्ञाननिष्ठएकत्वमानेहुए अनेक प्रकारकेसुखदुःखादिरूपप्रपंचरचनाकीतिसमेंअधटमानताहै । सोयह कथनभीनहीं संभवता ॥ क्योंकिप्रपंचरचना अज्ञानकेएकत्वतथा अनेकत्वकल्पना करनेमेंउदासीनहै ॥ औरएककोअनेकविधकार्यका जनकपनाभीपूर्वदृष्टांतसे सिद्धकरआएहैं ॥ यातेधर्मिकेग्राहकअन्यथा ऽनुपपत्तिरूपतर्कका बाधनहीं ॥ शंका ॥ अनेकअज्ञानकल्पनाकिये जावें ॥ वाअनेकशक्तियोंकीकल्पनाहो । इसमेंक्याविलक्षणताहै ॥ समाधान ॥ धर्मिकीअनेकताकल्पना करनेसेधर्मकीअनेकताकल्पना करनीश्रेष्ठहै ॥ इसन्यायसेधर्मिका एकत्वकल्पनाकरनेमें लाधवहै ॥ तिसलाघवसहकृत अन्यथाऽनुपपत्ति रूपतर्क विचित्रशक्तिवालेएक अज्ञानकोग्रहणकरके विश्रामकोप्राप्तहोताहै। यहकथनहीयुक्तहै।इति।

❀ अथअज्ञानके एकत्वसाधनका फलनिरूपणा ❀

शंका॥ प्रपंचरचनाजैसेएक अज्ञानसे बनसकतीहै । तैसेअज्ञाननाना

मानेहुएभीवनसकतीथी पुनःअज्ञानकेएकत्वसाधनकाकोईफलनहीं।
समाधान ॥ यद्यपिमिथ्या प्रपंचरचनामें अज्ञानकाएकत्वसिद्धकरना
निष्फलहै तथापि वहअज्ञानकाएकत्वजीवके एकत्वकासाधकहै॥याते
तिसकाएकत्वसिद्धकरनाउचितहीहै। इसीकारणसेएकजीववादी जीव
एककहतेहैं ॥ अज्ञानकाएकत्वजीवके एकत्वकासाधककैसेहै ॥ ऐसी
आकांक्षाके हुएकहतेहैं । अज्ञानकोजीव भावकाउपाधिपनाहै यह
पूर्वकथनकरआएहैं । औरउपाधिकायहलक्षणहै ॥ उपकहियेसमीप
स्थितहोकरअन्य पदार्थमेंअपने स्वरूपकोजो धारणकरेसो उपाधि
कहियेहै । जैसेघटतथादर्पणादि प्रसिद्ध आकाश तथामुखादिकोंका
उपाधिहै । तैसेअज्ञानभी चिदात्मामेंअध्यस्त होनेकरसमीपहैऔर
चिदात्माकेसमीपस्थित होकरअपनेएकत्व धर्मकोउपहित चिदात्मामें
समर्पणकरताहै। यातेउपाधिरूपहै। ताअज्ञानउपहितचिदात्माभीजीव
भावकोप्राप्तहुया एकहीहोताहै ॥शंका॥ एकअज्ञानरूप उपाधिवाला
आत्माजीवभावकोप्राप्त हुयाअनेकरूपक्योंनहो ॥ क्योंकिजिसकारण
सेएकहीदर्पणादि रूपउपाधिमेंमुखस्तंभ पुरुषादिकअनेक रूपप्रतीत
होतेहैं ॥ समाधान ॥ हेएकदेशिन् उपाधिकेएकहुएभी विंवोंकेभेदसे
प्रतिविंवोंकीअनेकता दृष्टांतमेंतोउक्तहै औरअकरखमेंतो विंवकानाना
पनाहैनहीं । तिसीकारणसेउपाधिकेएकहुए औरविंवकेएकहुएतत्तउप
हितप्रविंवभीएकहीहै । ऐसेएकजीववादी कहतेहैं इति ॥

❀अथअज्ञानतथाजीवके एकत्वतथाअनेकत्वकथन
करनेवाली श्रुतियोंकीव्यवस्थाकानिरूपण। ❀

शंका ॥ हेवादिन् लाघवसेएकही अज्ञानस्वीकारकरनेयोग्यहै।

१॥ यह तुमने पूर्वकथन किया सो असंगत है, क्योंकि ॥

❀ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते ॥ ❀

इस श्रुतिसे अज्ञानका नानापना प्रतीत होता है। और प्रमाणवाले

१ गौरवको युक्त होनेसे अप्रामाणिक लाघव अकिंचित्करहें। अर्थात् अर्थ
२ का साधक नहीं। और जो पूर्वकहा था जीवका एकत्व सिद्ध करनेके अर्थ
३ अज्ञानका एकत्व सिद्ध करतेहैं। सो यह कथन भी अयुक्त है क्योंकि ॥

❀ रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव । ❀ (क० उ० व० ५॥१६)

अ० ॥ उपाधि उपाधिके प्रति सो आत्मा तत्सदृशताको प्राप्त हुआ।
इस श्रुतिसे जीवका नानापना ही प्रतीत होता है ॥ याते अज्ञान एक है
और जीव एक है यह कथन श्रुतिसे विरुद्ध है। समाधान ॥ हे एकदेशिन्
असंगत था उदासीन चिदात्मासे प्रपंचकी रचना अज्ञानसे विना संभवती
नहीं ॥ यह पूर्वकथन किया हुआ लाघव सहकृत अन्यथाऽनुपपत्तिरूपतर्कतिस
कर सिद्ध जो अज्ञानका एकत्व और तिसका प्रयोजन जीवका एकत्व इन दोनों
अर्थोंके अनुवाद करनेवाली श्रुति भी विद्यमान है। और अज्ञानको एक माने हुये
(मायाभिः) इस बहुवचनरूपा श्रुतिके विरोध भी नहीं हो सकता। क्योंकि वह
श्रुतिमायागत शक्तियोंके नानापनको प्रतिपादन करती है और शक्तियोंको
मायाका धर्म होनेसे लक्षणावृत्तिकरमायाशब्दबोधयता तिनको संभवती है।
यदि ऐसी व्यवस्थान करे तो ।

❀ मायां तु प्रकृतिं विद्यात् ❀

इस श्रुतिमेक कथन किये हुये (मायां) इस एकवचनका विरोध होगा ॥
तिसकारणमेव बहुवचनरूपा श्रुति अज्ञानके नानापनको नहीं कहती ॥ और

प्रामाणिकहोनेसेगौरवभीस्वीकारकियाजाताहै। यहकथनभीनहींसंभवता^क क्योंकिपूर्वउत्तरीतिसे प्रामाणिकपनेकीहीअसिद्धिहै ॥ औरजोश्रुति जीवकेनानापनेमेप्रमाणकहीवहभीअसंगतहै। क्योंकिवहमंत्रएकजीव केअज्ञानकरकल्पितअनेक प्राणियोंकेभेदपरहै ॥ कोईजीवकेनानात्व परनहीं ॥ यदिऐसेनमानोगेतो

✽ अजोह्येकअनीशयाशोचतिमुह्यमानः ✽

अ०॥ एकहीजन्मसेरहितआत्माहै ॥ अविद्याकरमोहकोप्राप्त हुयाशोककरताहै। इत्यादिकजीवकाएकत्वकथनकरनेवालेश्रुतिवचनों काविरोधप्राप्तहोगा ॥ यातेजीवका नानापनानहींसंभवता ॥ इसपूर्व उक्तअर्थकेअनुवादकरनेवालीश्रुतिअवयवांपठनकरतेहैं ॥

: अजामेकांलोहितशुक्लकृष्णां वह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः ॥ अजोह्येकोऽनुपमाणाऽनुशेतेजहात्येनां भुक्त भोगामजोऽन्यः ॥ श्वे० उ० अ० (४) मं० (५)

मत्तद्रमला० ॥ एकअविद्याजन्मोंरहितालालश्वेततमरूपीहै। अनिकप्रजाकोजनतीसोईजोअपनेसमरूपीहै ॥ एकअजातमचिदहै जोई तहिसेवतअनुसोताहै ॥ ऐसअविद्याभुक्तभोगकोअन्यअजो तजदेताहै। १॥ इसश्रुतिरूपमंत्रकायहअर्थहै ॥ यहाँप्रथममंत्रकेद्वितीय पादकोअर्थसेव्याख्यानकरतेहुये (अजां) इसपदकरके निवारणकरने योग्यअंशकोकथनकरतेहैं ॥ मिथ्याभूतजगत्कोअविद्याहेलुककथन करनायोग्यहै ॥ ऐसेद्वितीयपादकेअनुसारप्राप्तहुये यहसंशयहोताहै। वहअविद्याजन्यहैअथवाअजन्यहै ॥ समाधान॥ वहअविद्या(अजां)

कहियेजन्मरहितहै ॥शंका ॥ इसमंत्रमेअविद्याकेवाचकपदकाअभाव होनेसेयहमंत्रअविद्याकोहीबोधननहींकरसकता तोतिसकाएकत्वकिस कारणसेहोगा ॥ औरअविद्या उपहितजीवकाएकत्व तोअतिदूरहै ॥ समाधान ॥ अविद्याकेवाचकपद काअभावनहीं ॥ क्योंकिस्त्रीलिंग रूपताकरनिर्देशकियाहुयाजो (अजां) यहपदहै तिसीको अविद्याकी वाचकताहै ॥ औरतिसअविद्यामे अनेकतानहीं किन्तु (एकां) कहिये वहएकहै ॥ यहांयहभीजानलेना ॥ अनिर्वचनीयरूपतासे जगत्और अविद्यादोनोंसामनहैं ॥ अतिसअविद्याकोविचित्रकार्यकेउत्पन्नकरने कीसामर्थ्यत्रियुगात्मकरूपतासेकथनकरतेहैं ॥ (लोहितशुक्लकृष्णां) कहियेरजोगुणसतोगुण तमोगुणरूपवहअविद्याहै ॥ यातेविचित्रकार्य केउत्पन्नकरनेमेवहसमर्थहै ॥ तिसत्रियुगात्मकतथा जन्मसेरहितऔर एकअविद्याउपाधिवालाजीवभीउत्पतिसेरहितहै ॥ यहकहतेहैं(अजः) कहियेअविद्योऽपहितजीवजन्मरहितहै ॥ औरवहजीवनानानहींकिन्तु “एकः” कहियेएकहै ॥ शंका ॥ जीवगतनानापनालोकमेअनुभव सिद्धहै ॥ तिसकाएकत्वतुमकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥

✽ एकोदेवःसर्वभूतेषुगूढः ॥ श्वे० उ० अ० ६।११ ✽

✽ नान्योतोऽस्तिद्रष्टानान्योतोऽस्तिश्रोता ॥

इ० उ० अ० ५ अ० ७।१० २१

✽ एकएवहिभूतात्माभूतेभूतेव्यवस्थितः ॥ स्मृ० ✽

अ० ॥ एकहीस्वप्रकाशचिदात्मासर्वभूतोंमेअविद्याकरआवृत होरहाहै ॥ औरइसआत्मासे भिन्नऔरकोईद्रष्टानहीं । औरनइससे भिन्नऔरकोईश्रोताहै ॥ औरएकही सर्वभूतोंका आत्माहरएकशरीरमे

अवस्थित है ॥ इसस्मृतिसहित उपनिषद्मे जीवका एकत्वप्रसिद्ध है ॥
 और उपाधितथा विंशका जो एकत्व है सो प्रतिविंशके एकत्वका नियामक है ॥
 इत्यादिक युक्ति कर भी एकत्वप्रसिद्ध है ॥ इतना अर्थ प्रसिद्धि अर्थक जो
 मंत्रमे "हि" यह पद है तिसने बोधन किया ॥ और जीवके अनेकत्वका
 अनुभव तो जीवके अज्ञान कर कल्पित अनेक प्राणियोंके भेदको विषय करता
 है । कोई जीवके भेदको नहीं ॥ शंका ॥ स्वयं प्रकाश ब्रह्मसे अभिन्न जो जीव
 है तिसको विलक्षण विज्ञेय युक्त अवस्था कैसे प्राप्त हुयी ॥ समाधान ॥
 पूर्व कथन किये हुये लक्षण युक्त तिस अविद्याको आश्रयण करके निद्रावाले
 पुरुषकी न्याई शयन करता है ॥ अर्थात् अज्ञानसे आवृत्त हुया ज्ञाननेत्रको
 निमीलन कर लेता है ॥ पश्चात् कार्याकाररूपतासे स्थित तिस अविद्याको
 ही (जुपमाणः) कहिये सेवन करता हुया स्वप्नद्रष्टा पुरुषवत् नाना प्रकारके
 विज्ञेय युक्त जाग्रतादिरूप संसारको अनुभव करता है ॥ शंका ॥ अविद्या
 को अनादिरूपतासे अविनाशितना है ॥ यद्यपि यहां प्रागभावमे अतिव्याप्ति
 दोषनिवारणके अर्थ अनादिके साथ भावरूपता भी कही चाहिये ॥ तथापि
 सत्कार्यवादीके मतमे प्रागभावके अनंगीकारसे भावरूपता कहनेकी आव-
 श्यकतानहीं ॥ इसप्रकार अविद्याको अविनाशिता होनेसे मोक्षका अभाव
 प्रसंग होगा ॥ समाधान ॥ तत्त्वमस्यादि महावाक्यसे उत्पन्न हुया जो
 आत्मतत्त्वका साक्षात्कार तिसकर (जहात्येनां) कहिये इस अविद्याको
 निवृत्त करता है ॥ अविद्यामे अनादित्वकल्पित होनेसे तत्त्वज्ञानसे निवृत्ति
 का अशंभवनहीं ॥ शंका ॥ यदि अविद्या त्यागने योग्य अर्थात् निवृत्त
 करने योग्य है तो तिस अविद्याको आत्मा किसलिये आश्रयण करता है ॥
 समाधान ॥ भोगके निमित्त अविद्याका आश्रयण आत्मा करता

है ॥ क्योंकि भोगको तिस अविद्याकर जन्यता है । अत्र स्वस्वरूप के साक्षात्कारसे प्रयोजनसे रहित तिसको मानता हुआ त्याग देता है ॥ इसी अर्थको कहते हैं ॥ (भुक्तभोगां) कहिये भोग लिया हो भोग जिसकर तिसको “भुक्तभोगा” कहते हैं ॥ तिस भुक्तभोगा अविद्याको प्रयोजन रहित जानकर त्याग देता है ॥ यहां “भुक्तभोगो यया” इस प्रकार का विग्रह करनेसे “यया” यह पद तृतीया विभक्त्यंत है ॥ और कर्ता तथा करणमे तृतीया विभक्ति होती है ॥ यहां यदि तृतीया विभक्ति कर्ता अर्थमे मानेतो अविद्या निष्ठ चेतनता होगी । और अविद्या में चेतनता है नहीं किंतु जडता है । याते कर्ता अर्थ मे तृतीया नहीं किन्तु साधनमे तृतीया जानने योग्य है ॥ इसी कारण से भोग का साधन होनेकर अविद्याको भोक्तृत्वका अभाव होनेसे चेतनताका असंभव है ॥ शंका ॥ अज्ञोजंतुः ॥ “ इसप्रतीतिसे अज्ञान विशिष्टमे जीवपना प्रसिद्ध है ॥ याते अविद्याको जीवके स्वरूपमे प्रविष्ट होनेकर ॥ तिस अविद्याको त्याग देता है ॥ वह कथन कैसे वनेगा ॥ क्योंकि अनेक स्वरूप का त्यागना असंभव है ॥ समाधान ॥ अजोऽन्यः” कहिये वह जन्मरहित जीव अविद्यासे भिन्न है । कोई अविद्याको अंतर्भाव करके जीवपना नहीं । क्योंकि अविद्या जड है और जीव चेतन है । दोनों एक रूप नहीं हो सकते ॥ शंका ॥ अविद्याको जीवभावका अधिकरण माने हुये चेतनताकी प्राप्ति अर्थसे तुमने कथन की सो अयुक्त है ॥ क्योंकि विशिष्टवृत्तिधर्मको विशेषण मेवर्तनेका नियम नहीं ॥ यदि ऐसा मानेतो “रक्तघटमानय” यहां पर भी रक्त रूप औघटत्वजातिका आनयन प्रसंग होगा । क्योंकि वह दोनों घटके विशेषण हैं । उभयविशिष्टघटमे वस्तनेवाली आनयन क्रिया तिन दोनोंमें

प्राप्तहोगी ॥ सोऐसा देखनेमें नहीं आता ॥ तैसे अज्ञानको जीवका विशेषण मानेहुये भीचेतनताकी प्राप्ति का कथन अयुक्त है ॥ समाधान ॥ यदि तुमको पूर्वकथनमें तोपनहीं तो औरहेतु श्रवण करो ॥ अज्ञानजीवभावका उपाधिरूपहमको स्वीकार है । इसी कारणसे अविद्यानिष्ठचेतनताकी प्राप्ति नहीं संभवती । क्योंकि उपाधिवस्तुके स्वरूपसे वहिरभूत होता है ॥ याते तिसका त्याग भी बनसकता है ॥ इति ॥

✽ अथ एकजीववादमें बद्धमुक्तादिव्य

वस्थाका प्रकारनिरूपण ॥ ✽

पूर्वयह कथन किया प्रपंचरचनाका साधक अविद्या है और वह लाघवसे एक है । तैसी अविद्यारूप उपाधिवाला आत्मा जीवभावको प्राप्तहुया एक ही होता है ॥ इति ॥ अतिस एकजीववादमें बंधमोक्षदिव्यवस्थाके उपपादन अर्थजिज्ञासाको प्रगटकरते हैं ।

मू० ॥ बंधमोक्षव्यवस्थास्याज्जीवाऽभेदे कथं तव ।

अथादृष्टं तथैवाऽस्तुदृष्टत्वात् स्वप्नदृष्टवत् । १६ ।

सांगी० । बंधमोक्षोयेव्यावस्थाजीवाऽभेदेकैसे जी । तोने मानी जैसे है सोमोको भापोतैसे जी ॥ जैसे देखी तैसे है सोयामेका आनीती है । स्वप्नेनाई जागेमाही देखोयाकी रीति है ॥ १० ॥ टी० ।

शंका ॥ हेसिद्धांतिन् तैरेमतमें एकही जीवमानेहुये तत्त्वज्ञानसे प्रथम "बद्ध है" इस प्रकारका ही व्यवहार होगा । और तत्त्वज्ञानसे अनंतर व्यवहारकर्ताका ही अभाव होनेसे मुक्तव्यवहार नहीं होगा ॥ और इदानीकालमें बद्ध तथा मुक्तयह दोनों व्यवहार देखे जाते हैं । इस कारणसे एकजीववादमें पूर्वउक्त दोनो व्यवहारोंकी अनुपपत्ति है । समाधान ॥

हेवादिन् जैसे नाना जीववादमें कोई वद्ध है कोई मुक्त है इस प्रकारके व्यवहारका विषय भूतजगत् देखा है तैसे एक जीववादमें भी वद्ध मुक्त व्यवस्था वाला जगत् विद्यमान है ॥ यद्यपि एक जीववादमें बंधमोक्षादिव्यवस्था की अनुपपत्ति पूर्वकथनकी है ॥ तथापि वह अनुपपत्ति नहीं संभवती । क्योंकि दृष्टार्थमें अनुपपत्तिका अभाव है । अर्थात् एक जीववादमें भी चिदात्माके अज्ञानकरकल्पित वद्धमुक्तादिव्यवस्थाका संसारमें दर्शन बन सकता है याते अनुपपत्ति नहीं ॥ शंका ॥ अविद्याकरकल्पितपदार्थको बाधित होनेसे व्यवहारकी साधकता नहीं संभवती । समाधान ॥ हेवादिन् अविद्यासे कल्पितपदार्थको अविद्याकालमें व्यवहारका साधकपना नहीं अथवा अविद्याके बाधकालमें तिसको व्यवहारका साधकपना नहीं ॥ प्रथमपक्षमें तो कोई अनुपपत्ति नहीं । क्योंकि जैसे स्वप्नमें स्वप्नद्रष्टा पुरुषकी अविद्याकरकल्पित अनेक गजतुरंगादिक पदार्थोंको अपने व्यवहारका साधकपना देखा है । तैसे जाग्रतकालमें भी क्यों न हो । और द्वितीयपक्षमें अविद्याको बाधित होनेसे व्यवहारका अभाव हमको इष्टही है । याते एक जीववादमें किंचित् भी दोष नहीं ॥ इति ॥ अकारिकाके पूर्वार्धका विस्तारसे व्याख्यान करते हैं । शंका ॥ यदि एक ही जीव है तो एक पुरुष वद्ध है और एक मुक्त है । यह व्यवस्था कैसे बनैगी ॥ और यदि सिद्धांती ऐसे कहे । एक जीववादमें व्यवस्थाकी क्रिया अनुपपत्ति है । क्योंकि द्वैत अनुभव सिद्ध है । और दृष्टार्थमें कोई अनुपपत्ति नहीं संभवती । सो यह कथन भी असमीचीन है । क्योंकि स्वरूपलाभवाला अनुभव अनुपपत्तिको परिहार करता है यह तो सत्य है ॥ परंतु एक जीववादमें तो अनुभवका स्वरूप ही नहीं सिद्ध हो सकता वह अनुपपत्तिको कैसे दूर करेगा ॥ अनु.

भवकेअभावमें यहकारणहै । एकवामदेवसंज्ञक पुरुषजोश्रवणादि साधनसंपन्नहै तिसकोतत्त्वमत्यादि महावाक्यसे तत्त्वसाक्षात्कारहोकर सर्वसंसारकेउपादानकारणरूप अविद्याकीनिवृत्तिरूप मुक्तिहोतीहै । तिससेद्वैतगोचर अनुभवकाकरण अंतःकरणथी इंद्रियादिकतथावद्ध मुक्तादिविषयरूप संसारकाअभावहोनेसे अनुभवकोस्वरूपलाभकाही अभावहैतोवह अनुपपत्तिकोकैसे परिहारकरेगा । समाधान ॥ हेवा दिन्वामदेवशब्दसे शरीराञ्चिद्भ्रन्नचैतन्यकहतेहो अथवा अनवच्छिन्न अज्ञानीचैतन्यकहतेहो । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिशरीराञ्चिद्भ्रन्नकोकल्पित होनेकरबंधमोक्षका अनधिकरणपनाहै । जिस कारणसेअविद्या वालाहीवद्धहोताहै । औरशरीराञ्चिद्भ्रन्नअविद्या वालाहैनहीं । क्योंकिवहअविद्याकाकार्य होनेकरअविद्यासेपश्चात् भावीहै । यातेशरीराञ्चिद्भ्रन्नचैतन्यवद्धनहीं । इसीसेवहमुक्तभी नहींकहाजाता क्योंकिवद्धकोही मुक्तहुयाकहतेहैं । औरअज्ञानो पाधिकअज्ञानीचैतन्यवामदेव शब्दकाअर्थहै । इसद्वितीयपक्षमेंसो अज्ञाननिवृत्तनहींहुया । क्योंकि “ मैअज्ञानीहूं ” इसअनुभवसेवह अज्ञानअवभीपूतीत होरहाहै । यातेअज्ञान कीनिवृत्तिकाअभावहोने सेअज्ञानकर कल्पित नानापूकारकेकरण समुदायका अज्ञानपर्यंत सद्भावहोनेकर द्वैतकाअनुभवचनसकताहै । यहांयहअर्थजानना । अनुभयनहीं संभवता यहजोवादीने कहाथा इसमेंहम यहपूछतेहैं । क्यों?करणकेअभावसे अनुभवकाअभावहै वा विषयकेअभावसेतिसकी अनुपपत्तिहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिअंतःकरणथीवाह्य इंद्रियतथाअनुमान औरशब्दादिक यहअनुभवकेकरण यथायोग्य

स्वीकारहैं ॥ शंका ॥ तिनकेस्वीकार करनेसे द्वैतकीप्राप्तिहोगी । समाधान ॥ वहसकलकरणअविद्याकेकार्य होनेकरमिथ्याहैं ॥ याते द्वैतकेसाधकनहीं । औरद्वितीयपक्षमेंभीयह विचारकरनेयोग्यहै ॥ जिसविषयसेविनाअनुभवकी अनुपपत्तिकथनकी । सोविषयक्या ? अनुभवकेरूपकाउपयोगीहै । अथवा।तिस अनुभवकेप्रमात्वकाउपयोगीहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिविषयके अविद्यमानहुए भीअतीतादिज्ञानदेखनेमेंआताहै औरयदिवादीद्वितीयपक्षकीआशंका करे विषयकेअभावसेअनुभवमेप्रामारायकीअनुपपत्तिहै ॥ औरयदिकोई ऐसेकहेविषयऔर अनुभवकेबीच प्रामारायसेक्याप्रयोजनहै, अपनेकरण सेउत्पन्नहुयाअनुभववद्भ्रमुक्तादिकव्यवस्थाकीअनुपपत्तिकापरिहारकर देगा । सोयहकथनभी नहींसंभवता । क्योंकिप्रामारायके असंभवसे अनुभवकार्यमेअसमर्थहोगा । भावयहएकजीववादमे वद्भ्रमुक्तादिक व्यवस्थाकीअनुपपत्तिद्रूकरनेमे समर्थनहींहोगा।इसप्रकारप्रामारायकी अनुपपत्तिसेअनुभवकी अनुपपत्तिरूपद्वितीयपक्ष मेवादीने यहकहा चाहिये। किअपनेप्रामारायकेअर्थअनुभवकोकेसाविषयअपेक्षितहै।क्या? अर्थक्रियामेसमर्थविषयहोवापरमार्थसत्यविषयहो। प्रथमपक्षकहोतोऐसा विषयविद्यमानहीहै।तिसव्यवहारकेयोग्यविषयकेसद्भावहुयेअनुभवकेवल सेएकजीववादमेव्यवस्थाकासंभवहै ॥शंका॥ मिथ्याअर्थप्रामारायका संपादकनहीं अन्यथाभ्रमज्ञानमेभी प्रमात्वहोगा इसलियेपरमार्थसत्य विषयहीप्रामारायकाप्रयोजक माननेयोग्यहै।औरअविद्याकर कल्पितवद्भ्र मुक्तादिकपदार्थोंकोपरमार्थपनेकाअभावहोनेसे स्वगोचरअनुभवनिष्ठ प्रामारायकाउपपादकपना तिनकोनहींसंभवता ॥ इमप्रकारप्रपंचकी

सत्यतामानेहुयेजीवोंके अनेकपनेकी सत्यतामेतो क्याही कहनेयोग्यहै यहभावहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्त्यदिपरमार्थसत्यविषयहैयहद्वितीय पञ्चतुममानोगे।तोयहऐसेकिसप्रकारवनेगा ॥ अर्थात्बद्धमुक्तादिभेद विशिष्टपूंचसत्यकैसेहोगा ॥ क्योंकिपूंचसत्यनहींकिन्तुमिथ्याहै ॥ औरभेदविशिष्टपूंचसत्यहीक्योंनहोऐसेयदितुमकहोतोतिसमेयहकथन कियाचाहिये ॥

❀ अथवेदकेतात्पर्यकाएकअद्वैतमेनिर्धार ❀

क्या? अद्वैतकेग्राहकप्रमाणकाअभावहोनेसेभेदकोतुमसत्यकहते हो। अथवा।भेदकेमिथ्यापनेकाग्राहककोईप्रमाणनहींयातेभेदकोसत्यकहते हो॥ प्रथमपक्षतो नहीसंभवता।क्योंकिअद्वैतहीवेदकेतात्पर्यकाविषयहै। अर्थ यहतात्पर्यअर्थकेग्राहकउपक्रमदिपदलिंगोंकेसहित तत्त्वमस्यादि महावाक्यरूपवेद त्रिविधपरिच्छेदसेरहित वस्तुकोवास्तवरूपतासेबोधन करताहै।तिसकारणसेभेदपरमार्थसेसत्यनहींहोसकता॥औरमहावाक्यों कोअद्वैतमात्रबोधनमेयहहेतुभीहै।जिसकारणसेअध्ययनविधिफलवाले अर्थकेबोधवास्तेवेदवाक्योंके अध्ययनकीकर्तव्यताबोधन करताहै।और अद्वैतसाक्षात्कारहीफलवालाहै क्योंकि ॥

❀ तरतिशोकमात्मवित् ३० छ० अ० ७ ख० १।१❀

अ० ॥ आत्मसाक्षात्कारवालापुरुष शोकउपलक्षित अज्ञान तत्कार्यकोबाधकरताहै ॥ ऐसेश्रुतिनेकहाहै ॥ यातेअद्वैतकेप्रतिपादन मेहीफलकासंबंधहै अन्यअर्थकेप्रतिपादनमेनहीं। इसकारणसेअद्वैत हीवेदकेतात्पर्यकाविषयहैयहअर्थसिद्धहुया ॥ इति ॥ अत्रद्वितीयपक्ष कोदूषितकरतेहैं ॥ औरहेवादिन्सर्वभेदका मिथ्यापनाभीप्रसिद्धहै ॥

क्योंकि प्रसिद्ध जगत्का अधिष्ठान जो ब्रह्म है तिसमे "नेतिनेति" इस वाक्य से भेद वशिष्ट सर्वजगत्कानिषेधप्रतीत होता है या तो द्वितीयपक्ष भी असंगत है ॥ शंका ॥ हे सिद्धांति च्चेदका अद्वैतमेही तात्पर्य है यह आपका कथन नहीं संभवता। क्योंकि वेदमेही वामदेवादिक प्राचीन पुरुषोंको ज्ञान भी सुना जाता है ॥

तद्वैतत्पश्यन्नृषिर्वा मदेवः प्रतिपेदे । ६० उ० अ० १ ब्रा० ४१०

यह श्रुति वामदेवज्ञानसे सुक्तहुया इस अर्थको प्रतिपादन करती हुई भेदको भी विषय करती है ॥ तिससे अद्वैतही श्रुतिक विषय है यह कथन कैसे बन सकता है ॥ और यहां (वामदेवादिक) इस आदिपदसे ॥

यो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत् । ६० उ० अ० १।

ब्रा० ४१०

अ० ॥ जो जो देवताओंके मध्यमे ब्रह्मबोधवाला हुया वही ब्रह्म रूपहुया ॥ इत्यादि श्रुतिमे प्रसिद्ध अद्वैत साक्षात्कारवाले देवतामनुष्य तथा असुरोंका ग्रहण है यह जानना ॥ इति ॥ और यदि सिद्धांतीयथा श्रुत अर्थको अंगीकार करे तो जीवोंका भेदवलात्कारसे सिद्धहुया ॥ समाधान ॥ हेवादि तिसमे यह कथन करने योग्य है ॥ क्या? यह श्रुति वाक्य साक्षात् भेदको प्रतिपादन करता है ॥ अथवा "एतत्" कहिये आत्माको "तत्" कहिये ब्रह्मरूपदेखता हुया अर्थात् "मंत्रब्रह्म" इस प्रकार साक्षात्कार करता हुया मैं ही मनुहुया मैं ही सूर्यहुया ऐसे सर्वात्मभाव की प्राप्तिके प्रतिपादक मंत्रोंके देखता भया ॥ यह श्रवण किया जो अर्थ तिस की अनुपपत्तिसे जीवभेदकल्पना किया जाता है। इनमे प्रथमपक्ष तो नहीं

संभवता। क्योंकि तिस वाक्यको जीवके भेदकी प्रतिपादकतानहीं है ॥ इस
मेयहेहेतुहै। कि एकतो वामदेववाक्यमेभेद कोकिसीपदका अर्थनहोनेसे
वाक्यार्थपनानहीं। और दूसरा तिस वाक्यको भेदाकारज्ञानका जनकपनाभी
नहीं ॥ शंका ॥ वामदेवकर्तृकज्ञानसे वामदेवसर्वात्मभावकी प्राप्तिवाला हुआ
यह जो श्रवणकिया अर्थवहतवचनसक्ताहै यदि वामदेवपदका वाच्यकोई
मुक्तजीवसुभवद्धसुमुत्तुसे भिन्नहो। इसप्रकार जीवोंके भेदसे बिना वामदेव
को सर्वात्मभावकी प्राप्तिके अनुपपद्यमानहोनेसे श्रुतार्थकी, अनुपपत्ति
जीवोंके भेदका ज्ञापकहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यहद्वितीयपक्षभी
नहीं संभवता ॥ जिसकारणसे कल्पना पुरुषबुद्धिमूलकहोतीहै। वह विरोधा
अधिकरणन्यायसे निश्चितार्थवाली, श्रुतिकर_बाध होजातीहै ॥ पूर्व
मीमांसाके प्रथमाऽध्यायगत तृतीयपादके तृतीयसूत्रमे श्रुतितथास्मृतिका
एकविषयमे परस्परविरोधहुए प्रत्यक्षश्रुतिसे स्मृतिका बाधनिर्णयकियाहै
तिसको विरोधाऽधिकरणन्यायकहतेहैं तिसमे यही तिकथनकीहै ॥

* औदुंवरीवेष्टनीया सर्वा *

अ० ॥ यागमें उदुंबरवृक्षकी शाखासर्वही वेष्टनकरके सामगाय
नकरेयह स्मृतिप्रमाणहै अथवा। अप्रमाणहै ॥ इसप्रकार संशयकेहुए पूर्वपक्ष
प्राप्तहुआ। कि अष्टकादि स्मृतिकी न्यायह स्मृतिभी प्रमाणरूपहै । सिद्धांत।

* औदुंवरी स्पृशन् गायेत् *

अ० । उदुंबरकी शाखाको हस्तसे स्पर्शकरता हुआ गायनकरे ॥
इसप्रत्यक्ष श्रुतिका विरोधहोनेसे तिस स्मृतिके मूलवेदका अनुमाननहो
नेकरमूलके अभावसे तिसको अप्रमाणताहै ॥ अथवा ॥ प्रत्यक्ष और

अनुमितदोनों श्रुतियों का परस्परविरोध देखने से दोनोंको अप्रमाणाताकी शंका प्राप्त हुई ॥ तिसी कारणसे यहां पर अनुमानका बाधनिरूपण किया है । और यदि वेद न स्मृतिका मूल पर प्रत्यक्ष वेद है ऐसे कहो तो निःसंदेह वह मूल हो । परंतु ऐसे माने हुए भी अपनेको प्रत्यक्ष वेदके अनुसार ही अनुष्ठान करने योग्य है । याते प्रत्यक्ष श्रुतिसे अनुमित श्रुति मूलक स्मृतिका तथा पर प्रत्यक्ष वेद मूलक स्मृतिका बाध अवश्य होता है । तिसी रीतिसे ।

❀ अजोह्येक एको देवः सर्वभूतांतरात्मा ❀

इत्यादि निश्चित अर्थवाले तथा जीवके एकत्व प्रतिपादक श्रुति वचनोंका विरोध होनेकर पुरुषबुद्धिमूलक कल्पनाकी अनुपपत्ति है । शंका ॥ जीवके एकत्व प्रतिपादक वाक्योंको निश्चितार्थपना युक्त नहीं । क्योंकि एकजीववादमें एकजीवकी सुक्तिसे सर्वमुक्त हुए चाहिये इस तर्कका विरोध है । समाधान । हेवादिन् यह तर्क अभासरूप है । क्योंकि एकत्ववादीके प्रति सर्वत्वका निरूपण ही अशक्य है । और यदि ऐसे कहो कि तर्कके साथ विरोधका अभाव हुए भी अनुभवका विरोध तो अवश्य होगा क्योंकि जीवोंकानानात्वसर्वके अनुभवसिद्ध है । सो यह कहन भी अयुक्त है । क्योंकि तिस अनुभवको चेतनके अज्ञानकर कल्पित देहोंके भेद विषयक होनेकर भ्रमरूपता होनेसे तिसकर श्रुतिका बाध युक्त नहीं है । याते स्वप्नकी न्याई सर्वव्यवस्थाका संभव है । इति ॥

❀ अथ पूर्वपक्षीकी रीतिसे अधिकारिके अभाव से मोक्षका अभाव निरूपण ❀

अवसिद्धांतीके अभिप्रायको न जानता हुआ वादी कारिकामें

कथनकियेहुएदृष्टांतदाष्टांतभागको व्याख्यान करताहुआ सिद्धांती केअनिष्टकी आशंकाकरताहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् जैसेस्वप्नमेंएक हीस्वप्नदृष्टापरमार्थसत्यहै। अन्यसर्वपदार्थ तिसकेभ्रमकरकल्पितहैं । इसीरीतिसेजाग्रतमेंभी एकहीदृष्टापरमार्थसत्यहै। औरसर्वदृष्टातिसकेभ्रम करकल्पितहैं । तैसेअंगीकारकियेहुए बहुतदृष्टावोंकेमध्यकौनवहपर मार्थद्रष्टाहै ॥ इसप्रकारके निश्चयकाअभावहुए श्रवणादिकसाधनों केअनुष्ठानमें कौनप्रवृत्तहोगा ॥ औरसाधनोंके अनुष्ठानकाअभाव होनेसेमोक्षकाअभाव प्रसंगतधामोक्षप्रतिपादक शास्त्रभीनिष्फल होगा। औरयदिसिद्धांतिऐसीआशंकाकरे। किस्वप्नदृष्टापरमार्थ सत्यहैयह प्रतीतिस्वप्नकालमेंहोतीहै। वा। स्वप्ननिवृत्तिकेउत्तरकालमेंहोतीहै । प्रथम पक्षतोर्नहींसंभवता । क्योंकिस्वप्नकीन्याईजाग्रतमेंभी परमार्थद्रष्टा कानिश्चयहोजाएगा तवअनिश्चयके अभावसेश्रवणादिकोंमेंप्रवृत्ति क्योंनहोगी । औरसाधनोंकेअनुष्ठानसे मुक्तितथातिसकेप्रतिपादक शास्त्रकीसफलताभी अवश्यहोगी । औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै ॥ क्योंकिस्वप्ननिवृत्तिके उत्तरकालमेंजैसेयह प्रतीतिलुमनेमानीहै। तैसे जाग्रत् निवृत्तिकेउत्तर कालमेंहीइसप्रतीतिनेहोनायोग्यहै । औरवह संभवतीनहीं । तैसेहीदिखलातेहैं॥ जाग्रत्निवृत्तिकाउत्तरकालक्या ? स्वप्नकालहै ॥ अथवा। सुषुप्तिकालहै ॥ चासुप्तिकालहै। प्रथमपक्षतो नहींसंभवता। क्योंकिस्वप्ननिवृत्तिके उत्तरकालमेंही लुमनेऐसीप्रतीति कीउत्पत्तिमानीहै । औरद्वितीयपक्षभी असमीचीनहै । क्योंकि सुषुप्तिमेंविशेषज्ञानका अभावहै अन्यथासुषुप्तिकाही अभावहोगा । औरइसीकारणसेतृतीयपक्षभी नहींसंभवता। औरमोक्षकालमेंप्रमाता

के अभावसे भी तृतीयपक्ष असंगत है । याते पूर्वकथनकी हुईवादीकी शंका नहीं संभवती । सोयह सिद्धांतीका कथन भी अयुक्त है ॥ क्योंकि हमारे करकथन किये हुए अर्थका ही तुमको ज्ञान नहीं हुआ । मैं परमार्थ सत्य हूँ तथा अन्य सर्व मेरे भ्रम करके कल्पित हैं इस प्रकार स्वप्न द्रष्टा जानता है । यदि ऐसे हम कहते तो पूर्व उक्त तुम्हारे विकल्पोंका अवकाश होता सो ऐसे तो हम नहीं कहते किन्तु स्वप्नके पदार्थोंको स्वप्न द्रष्टा पुरुषकी अविद्याका परिणाम होनेसे तिस स्वप्न प्रपंचके उत्पन्न करनेवाली अविद्याकी अधिष्ठाता स्वप्न द्रष्टाको है ॥ इसीसे वह परमार्थ सत्य है ॥ यह वार्ता युक्तिसे निश्चय होती है ॥ तिस दृष्टांतसे इस जाग्रत अवस्थामें भी द्रष्टाके परमार्थ सत्यताकी संभावनाके हुए नाना द्रष्टावोंके मध्यमें किस द्रष्टाकी अविद्याका परिणाम यह जगत है ॥ इस प्रकारका संशय अवश्य होता है ॥ क्योंकि निश्चयका कारण कोई प्रतीत नहीं होता याते पूर्व उक्त शंका युक्त है ॥ इति ॥ समाधान ॥

* अथ स्वप्न दृष्टांतमें द्रष्टाके एकत्वका प्रतिपादन *

हेवादि जाग्रत अवस्थामें अनेक द्रष्टावोंके निरूपणका अभाव होनेसे संशयके असंभव हुए श्रवणादिक साधनोंके अनुष्ठानमें प्रवृत्ति हो जायेगी तिस कारणसे अनिर्माण प्रसंग नहीं हो सक्ता ॥ याते निश्चय कर दे हात्मवादको श्रयण करके तू भ्रांतिको प्राप्त हूँ या है किस प्रकारमें भ्रांतिको प्राप्त हूँ या हूँ यदि ऐसे कहें तो श्रवण कर स्वप्नकालमें स्वप्न द्रष्टासे भिन्न और जीव कल्पित हैं इसका क्या अर्थ है क्या? देवगंधर्वादि संज्ञक शरीर कल्पित हैं अथवा । हमको अभिमत जो अज्ञान उपाधिक जीव है वह अज्ञान उपाधिक ही बहुत अनुभूत होते हैं तिन

अज्ञानोपाधिक अनुभूतोंके मध्यमें एक सत्य है और अन्य सर्व कल्पित हैं यह तुम कहते हो। यद्यपि तिन अनुभूतोंके मध्य एक सत्य है और अन्य सर्व कल्पित हैं यह कहना नहीं संभवता। क्योंकि अनुभवके विषयको अनुभूत कहते हैं तिसको नियमसे दृश्यरूपता होनेकर शुक्तिरजतकी न्याईं मिथ्यापना है ॥ अनुभविताको ही सत्यपनायुक्त है ॥ याते द्वितीयविकल्प असंगत है ॥ तथापि तिनसर्व अज्ञानउपहितोंनिष्ठ अनुभवितापना भी विद्यमान है। इस कारणसे लाघवताकर क्या? एक ही परमार्थसे अनुभविता है अन्य अज्ञानी अनुभविता भी हैं ॥ परन्तु कल्पित हैं यह विकल्प बन सकता है ॥ इति ॥ इसरीतिसे विकल्पकी संभावनाकरके अब इन दोनों विकल्पोंमें प्रथम विकल्प को दूषित करते हैं ॥ प्रथमपक्षनहीं संभवता ॥ क्योंकि देवादि शरीरोंको कल्पित हुए भी द्रष्टापनेका अभाव होनेकर अनेक द्रष्टाओंकी कल्पनासे संशयके प्राप्त हुए अनिमोक्षकी प्राप्तिलाक्षणविरोधका अभाव है ॥ शंका ॥ देहको अथवा देहाऽच्छिन्नचेतनको द्रष्टापना कल्पित होनेसे अनेक द्रष्टाओंकी कल्पना कैसे नहीं संभवती। और संशयके प्राप्त हुए अनिमोक्षप्रसंगलक्षणविरोधके से नहीं प्राप्त होगा किन्तु अवश्य होगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् देहको अथवा देहाऽच्छिन्नको हम श्रवणादिकोंमें अधिकारी नहीं कहते जिसकर विनगमनाविरह रूपदोषहो। अर्थ यह। जो द्रष्टा होता है वही श्रवणादिकोंमें अधिकारी होता है और अज्ञानका आश्रय ही द्रष्टा होता है ॥ देह अथवा देहाऽच्छिन्न अज्ञानका आश्रय नहीं ॥ क्योंकि तिन दोनोंको अज्ञानका कार्य होनेसे अज्ञानके आश्रयपनकी अनुपपत्ति है ॥ तिसी कारणसे देहादिकोंको कल्पित हुए भी कौन परमार्थ सत्य श्रवणादिकोंमें अधिकारी है। इस प्रकार एक अर्थके निश्चायक युक्तिका अभाव होनेसे श्रव-

णादिकोंमें प्रवृत्तिके अभावहुए अनिर्मुक्त प्रसंगलक्षणविरोधनहीं है ॥ और
 स्वप्नमें अज्ञान उपहित जीवोंका भेद अनुभव होता है यह द्वितीयपक्ष भी नहीं
 संभवता ॥ क्योंकि अज्ञान उपहित जीवोंका भेद स्वप्नमें अनुभव नहीं होता
 यद्यपि “मैं अज्ञानी हूँ” इस प्रकार अज्ञान उपहित स्वप्नद्रव्य अपने स्वरूप
 को तो अनुभव करता ही है ॥ तथापि जीवोंका भेद अनुभव नहीं होता ॥
 क्योंकि अज्ञान उपहित जीवका भेद प्रत्यक्षप्रमाण ग्रहण करता है अथवा
 अनुमानग्रहण करता है ॥ मथमपक्षमें भी यह विचार किया चाहिये जिस
 अज्ञान उपहित जीवके भेदको प्रत्यक्ष ग्रहण करता है ॥ वह अज्ञान
 क्या? एक ही अनेक जीवका उपाधि है अथवा जीवजीवप्रति अज्ञान भिन्न है
 प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि उपाधिके एकहुए तथा विंवके एकहुए
 प्रतिविंवका भेद देखनेमें नहीं आता ॥ यह पूर्वनिरूपण कर आए हैं ॥ और
 द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि जैसे अपनेसे भिन्न दूसरे पुरुषका
 ज्ञान प्रत्यक्ष नहीं होता तैसे दूसरे पुरुषके अज्ञानको भी अतीन्द्रिय होनेसे तिस
 अज्ञान उपहितको अन्य पुरुष प्रत्यक्ष करनेको मर्म नहीं होसक्ता ॥ शंका ॥
 यद्यपि प्रत्यक्षप्रमाण स्वप्नकालमें जीवके भेदको नहीं ग्रहण करसक्ता ॥
 तथापि तिस तिमदेहकी चेष्टा करवह जीवका भेद अनुमान किया जाता है ॥
 तिसकी यह रीति है ॥ शरीर अतीमके हस्तपादादिक अथव वामें समवाय
 संबंधसे रहनेवाली और धर्माधर्म हैं निमित्त जिसमें ऐमी कोई विशेष क्रिया
 चेष्टानामसे कही जाती है ॥ वह चेष्टा देहके भेदसे भिन्न ही प्रतीत होती है ॥
 तिसचेष्टाके उपादानभूत देह अतीमके अथव वामें समवाय संबंधसे रहता
 हुआ जो प्रयत्नवाले आत्माका संयोगवह उस चेष्टाका अममवायिकारण है
 और वह चेष्टा प्रयत्नवत् आत्म संयोगरूप अममवायिकारणका अनुमान

करातीहुईस्वअसमवायिकारणकाविशेषणरूपताकरआत्माकाभीअनु-
मानकरावतीहै ॥ तिसअनुमानकाआकारयहहै ॥

❀ देवदत्तदेहनिष्टचेष्टाप्रयत्नवदात्मसंयोगाऽ
समवायिकारणकाचेष्टात्वात्तमचेष्टावत् ❀

अ० ॥ देवदत्तकेशरीरमेजोचेष्टाहै ॥ वहप्रयत्नवालेआत्मा
केसंयोगरूपअसमवायिकारणवालीहै ॥ चेष्टारूपहोनेसेजोजोचेष्टा
होतीहैसोसोप्रयत्नवदात्मसंयोगरूपअसमवायिकारणवालीहोतीहैजैसे
मेरेशरीरनिष्टचेष्टाहै ॥ इति ॥ इसप्रकारवहआत्माप्रतिदेहभिन्नभिन्नहै ॥
यदिऐसेनमानेतोएकदेहमेचेष्टाकेहुएसर्वहीदेहचेष्टावालेहोंगे ॥ क्यों-
किचेष्टाकाहेतु आत्मातथा शरीरकासंयोग सर्वत्रविद्यमानहै ॥ तिसी
कारणसेतिसतिसशरीरकाअधिष्ठाताआत्मा तिसतिस शरीरकीचेष्टासे
भिन्नभिन्नअनुमानकियाजाताहै ॥ तिसअनुमानकाआकारयहहै ॥

❀ देवदत्तशरीराऽधिष्ठातात्मायज्ञदत्तात्मनः भिद्यते
यज्ञदत्तशरीरानधिकरणचेष्टासमवायिकारणसंयोगा
श्रयत्वात् ॥ यन्नैवंतन्नैवंयथायज्ञदत्तात्मा ❀

अ० ॥ देवदत्तकेशरीरकाअधिष्ठाताआत्मायज्ञदत्तकेआत्मासे
भिन्नहै ॥ यज्ञदत्तकाशरीरनहींहैअधिकरणजिसकाऐसीचेष्टाकेअसम-
वायिकारणरूपसंयोगकाआश्रयहोनेसे ॥ जोजोयज्ञदत्तकेआत्मासेभिन्न
नहींहै ॥ सोसोयज्ञदत्तशरीराऽधिकरणचेष्टाकेअसमवायिकारणरूप
संयोगकाआश्रयभीनहींहै ॥ जैसेयज्ञदत्तकाआत्माहै ॥ इति ॥ इस
प्रकारस्वप्नकालमेजीवकाभेदअनुभवसिद्धहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकियहांयहअर्थजाननेयोग्यहै ॥

तिसतिसशरीरकीचेष्टासेपृथक्आत्माकाअनुमानजोतुमकरतेहो इसमे कौनकारणहै॥ क्या?एकदेहमेचेष्टाकेद्विएसर्वहीदेहचेष्टाकरेंगेयहअति प्रसंगप्राप्तहोताहै अथवा एकआत्मासेअनेकदेहगतचेष्टानहींवनसकती अथवा अनेकशरीरोंमेएकहीआत्माकोअधिष्ठाता मानेहुएदूसरेशरीरोंमे कियेहुएकार्यकाअनुसंधानप्राप्तहोगा ॥इनमेप्रथमपक्षतोनहींसंभवता क्योंकि आत्मा का संयोग मात्र तो चेष्टा का कारण है नहीं किन्तु प्रयत्नवाले आत्माकासंयोगचेष्टाका कारणहै औरप्रयत्नजिसशरीर ज्वच्छेद कर उत्पन्न हुआहै तिसी शरीरकी चेष्टा का हेतु है ॥ याते अतिप्रसंगकैसे प्राप्तहोगा किन्तुनहीं होगा । और तिसतिस शरीरके आरंभकथर्मादिनिमित्तकोभी नियामकहोनेसेअतिप्रसंगनहींहोसक्ता। अबद्वितीयपक्षको दूषितकरतेहैं॥जिसकारणसे तिसतिस शरीरमेंवर्तने वालीचेष्टास्व असमवायिकारण आत्मशरीरके संयोगकी अपेक्षा करतीहै ॥ तिससंयोगकाविशेषण आत्माएकहो अथवाअनेकहो ॥ इसमेंवहउदासीनहै ॥ तिसीकारणसेइसचेष्टाकर आत्माकेभेदकाअनु माननहींकियाजाता ॥ किंवा । यहाँयहअनुमानजानना ॥

❀अनेकशरीरवर्तिन्यश्चेष्टा एकात्मसंयोगा

ऽसमवायिन्यः ॥चेष्टात्वात् ॥

एकशरीरमात्र समवेतचेष्टावत् ॥ ❀

अ० ॥ अनेकशरीरोंमें वर्तनेवालीजोचेष्टाहै ॥ एकआत्माके संयोगरूपअसमवायिकारणवालीहै ॥ चेष्टारूपहोनेसे ॥ जोजो चेष्टाहोतीहैसोसोएकआत्माकेसंयोगरूपअसमवायिकारणवालीहोती है ॥ जैसेएकशरीरमात्रमें समवायसंबंधसे रहनेवालीचेष्टाहै ॥ इति ।

और यदिवादीऐसेकहे ॥ कि ॥ शरीरमात्रनिष्टचेष्टात्वरूपउपाधिइंस
 अनुमानमेंविद्यमानहै ॥ क्योंकिजहां जहांएकआत्मसंयोगरूपअस
 मवायिकारणकत्वहै। तहांतहांएकशरीरमात्रनिष्टचेष्टात्वहै जैसेएकशरीर
 मात्रसमवेतचेष्टामेंहै। इसप्रकारउपाधिसाध्यके साथव्यापकहै ॥ और
 जहांचेष्टात्व”हैतहांएकशरीरमात्रनिष्टचेष्टात्वकाअभावहै। जैसेअने-
 कशरीरसमवेतचेष्टावोंमेंहै। यातेसाधनकेसाथउपाधिकोअव्यापकताहै
 इसरीतिसेपूर्वउक्तहेतुसोपाधिकहोनेसेदुष्टहै। सोयंहवादीकाकथनभी
 नहींसंभवता ॥ क्योंकियोगीके अनेकशरीरोंकीचेष्टामेंसाध्यकेसाथ
 यहउपाधिअव्यापकहै ॥ तहां “एकात्मसंयोगरूपअसमवायिकारण
 कत्वरूपसाध्यके विद्यमानहुएएकशरीरमात्र निष्टचेष्टात्वकाअभावहै।
 यतिपूर्वउक्तहेतुदुष्टनहीं ॥ इसप्रकारएकही आत्मासे अनेकदेहगत
 चेष्टाकेसंभवमेंदृष्टांत कहतेहैं। जैसेनैयायिकोंके मतमेंयोगीपुरुषको
 योगसिद्धिके बलसेसमूहशरीरोंकी रचनादशामेंएकआत्मसंयोगेसेही
 अनेकदेहोंमेंचेष्टास्वीकारकीहै। तैसेयहांप्रकरणमेंभीएक आत्मसंयोग
 सेहीअनेकदेहगतचेष्टा बनसक्तीहै ॥ शंका ॥ जैसेयोगीपुरुषको
 अनेकशरीरोंमेंकियेहुए कार्यका अनुसंधानहोताहै तैसेयहांभी अनु
 संधानहुआचाहिये क्योंकि सर्वदेहोंमेंएकहीआत्मा आपनेमानाहै।
 समाधान ॥ हेवादिन्द्रहसतृतीयपक्षमेंभी यहविचारकर्तव्यहै ॥ शरीरा
 ऽनुपहितअविद्याऽवच्छिन्नजोसाक्षिहै। तिसकोअनुसंधानतुमआपादन
 करतेहो। अथवा शरीराऽवच्छिन्नकेप्रति आपादनकरतेहो। प्रथम
 पक्षकहोतोवहहमकोभीस्वीकारहै। क्योंकिअविद्याऽवच्छिन्नसाक्षिको
 अनुसंधानहोताहीहै ॥ औरद्वितीय पक्षनहींसंभवता क्योंकितिन

योगीकेदेहोंमेंभी उपाधिकेभेदसे तिसतिस देहाज्वच्छिन्नको अनुसंधाननहींहोता । योगीकेदेहोंमेंकौनअनुसंधानकरनेवालाहै । ऐसी आकांक्षाकेहुएकहतेहैं।तहांभीअज्ञानमात्रउपहितकोअनुसंधातापनाहै। तैसेही दार्ष्टान्तमे जानना ॥ इसकथनकियेहुएअर्थको अनुभवसेदृढ करतेहैं।इसीकारणसेएकहीशरीरमेपादाज्वच्छिन्नचेतनमस्तकाज्वच्छिन्न चेतनकेदुःखकोनहींअनुसंधानकरता।अन्यथा “मैंपादाज्वच्छिन्न” शिरोवच्छिन्नकेदुःखवालाहूं ॥ ऐसाअनुभवहुआ चाहिये सोऐसा तोअनुभवनहींहोताकिन्तु “मेरेपादमेसुखहै ” औरमेरेशिरमेदुःख है”ऐसाअनुभवसर्वकोहोताहै।यातेअज्ञानउपहितकोहीअनुसंधातापनाहै शरीराज्वच्छिन्नकोनहीं।इसप्रकारपूर्वउक्तयुक्तिसेअज्ञानाज्वच्छिन्नजीव काभेदस्वप्रकालमेप्रत्यक्षप्रमाणसेवाअनुमानप्रमाणसेनअनुभवहोनेकर जीवोंकेभेदकाअनुभवशरीरोंकेभेदकोहीविषयकरताहै।यहअर्थसिद्धहुआ यातेविनगमनाविरहदोषकाअभावहोनेसे बद्धमुक्तव्यवस्थाकीअनुपपत्तिनहीं ॥ इति ॥

* अथदार्ष्टान्तमेद्रष्टाकेएकत्वकाप्रतिपादन *

इसप्रकारस्वप्नदृष्टान्तमेद्रष्टाकाएकत्वप्रतिपादनकरकेअबदार्ष्टान्तमेंभी द्रष्टाकाएकत्वऔरजीवोंकेभेदकाअनुभवशरीरोंकेभेदकोविषयकरताहै। औरअर्थसेबद्धमुक्तादिव्यवस्थाइनसर्वअर्थोंके प्रतिपादनकरनेकेलिये जिज्ञासाकोपूकटकरतेहैं ॥ यद्यपिस्वप्नमे पूर्वउक्त रीतिसे व्यवस्थाका संभवहै।तथापिइसजाग्रतअवस्थामेजीवोंकेभेदकाअनुभवकिसरीतिसे होताहै ॥ ऐसीजिज्ञासाकेहुएजीवोंकेभेदकाअनुभवसिद्धांतीउपपादन करताहै। हेवादिचतुसवधानहोकरश्रवणकरो। सोईजाग्रतअवस्था

मे भ्रांतिसहितहोताहै ॥ वहकौनहै। ऐसीआकांक्षाकेहुएकहतेहैं ॥ वह सजातीयविजातीयस्वगत भेदसेरहिततथा भेदाऽभेदसेरहितआत्माहै औरस्वहनित्यहै। इसीसेदेहादिकोंसेभिन्नहै। औरअविद्यातत्कार्यसेरहित शुद्धहै ॥ इसीसेअविद्यातत्कार्यको अनित्यहोनेकर औरआत्माकोतिन सेभिन्नहोनेकरआत्माको पूर्वनित्यपनाकथनकियाहै। औरस्वहआत्माबुद्ध कहियेचेतनस्वरूपहै ॥ इसीहेतुसेअविद्यातत्कार्यआत्मानहीं। और जडस्वरूपअविद्यातत्कार्यसेभिन्नपना चेतनरूपआत्माकोयुक्तहीहै ॥ शंका ॥ आत्मासंसारहीहैयांतेअविद्याकावहकार्यहै तिसकोआपनित्य कैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन्वह आत्मासुक्त स्वभाव है ॥ यद्यपितिसमेसंसारीभावअविद्याकाकार्यहै ॥ तथापिविशेषस्वरूपचेतन मात्रकल्पितनहींइसीअर्थकोश्रुतिभीकहतीहै ॥

❀ विमुक्तश्चविमुच्यते ❀

अ० ॥ वहमुक्तस्वभावआत्माआविद्यकबंधको स्वरूपबोधसे निवृत्तकरकेपुनःमुक्तव्यवहारकेभजनेवाला होताहै। इति ॥ इसीसेवह आत्माउपनिषद्प्रमाणमात्रकरहीवास्तवसेजाननेयोग्यहै ॥ यहांमात्र पदकहनेकायहभावहै ॥ यदिप्रत्यक्षादि प्रमाणोंकेसाथ उपनिषद्की संमतहोगी। तोअधिगतअर्थगोचरहोनेसेउपनिषदोंकोअप्रमाणाताहोगी यदिइतप्रमाणोंसे विरोधहोगा। तोभीअप्रमाणाताहोगी। औरमात्रपदके कहनेसेकिसीप्रकारभीअप्रमाणातानहींहोती ॥ शंका ॥ शुद्धचेतनको जाग्रतादिअवस्थाकीप्राप्तिनहींसंभवती। क्योंकि तिनकोजीवकाधर्मपना है। समाधान। हेवादिन्वहशुद्ध चेतनहीजीवभावकोप्राप्तहोताहैयद्यपि शुद्धआत्माकोहीजीवभावकीप्राप्तिमानेहुएमुक्तत्वऔंसंसारित्वदोविरुद्ध

रूपकमेप्राप्तहोगे। तथापि जेमे शुक्तिके अज्ञानकरकल्पितरजतरूपसे प्रतीत हुई शुक्तिको विरुद्धद्विरूपवत्ताकी प्राप्ति नहीं होती। तैसे पूर्व उक्त आत्माके अज्ञानकर जीवभावको कल्पितहोनेमें चेतनमे विरुद्धद्विरूपवत्ताकी प्राप्ति नहीं हो सकती॥ इमप्रकार आत्मा अज्ञानको या श्रयण करके जीवभावको प्राप्त होकर देवतिर्यकमनुष्यादि शरीरोंको रूपनाशना है ॥ और पुनः तिन देवादि शरीरोंका महिकारिरूपताकर ब्रह्मांडपर्यंत चतुर्दश लोकोंको रचना करता है ॥ और तिन देहोंमें कोई देव है कोई मनुष्य है कोई असुर है कोई सर्वशरीरोंके उत्पन्न करनेवाला ब्रह्मा है ॥ और कोई जगत्का पालन करनेवाला विष्णु है ॥ और कोई अन्यप्रलयकालमें सर्वके संहार करनेवाला रुद्र है ॥ इन तीनोंकी उपाधि मत्त्वादि गुण हैं ॥ तिन सत्त्वादि गुणोंके वशसे तिनमें उत्पादकत्वपालकत्वसंहारकर्तृत्वादि सर्वसामर्थ्य है ॥ इस प्रकार जीवोंके भेदका अन्वय और जगत्का अन्वय उपपादनकरके अत्र अधिकारित्वके अन्वयको उपपादन करते हैं ॥ और में ब्राह्मणकुमार अथवा अवस्थाकर युक्त हैं ॥ यहां शमादिसंपन्न अधिकारी ही ब्राह्मणशब्दसे गृहीत है ॥ तिसका ही वेदांत श्रवणमें अधिकार है। यह सूचन करनेको ब्राह्मणका ग्रहण है कोई जाति मात्र ब्राह्मणके वास्ते ब्राह्मणपदका ग्रहण नहीं ॥ और खानप्रस्थ आश्रमसे अन्तरही संन्यास करे ॥ इसक्रमसंन्यासके नियमाभाव सूचन करनेके लिये “कुमार” पदग्रहण किया है ॥ भाव यह संन्यास ग्रहणमें वैराग्य कारण है ॥ वह जिस किसी आश्रम तथा अवस्थामें होत वी यह जीवसंन्यास ग्रहण करे ॥ इति ॥ श्रवणादिकसाधनोंमें जो प्रवृत्ति है तिसमें प्रतिबंधका भाव सूचन करनेके अर्थ कहते हैं ॥ तिन विष्णु आदिकोंकी पूजानमस्कार पादसेवन श्रवणकीर्तनस्मरणदास्यसख्य आत्मनैवेदनरूपभक्तिका अनुष्ठान

करके श्रणादिकसाधनों को संपादन करने में मोक्षको सिद्ध करूंगा ॥ इस लिये आत्मज्ञानके अर्थी जिज्ञासूजनों ने ईश्वरभक्तिसकलविघ्नोंके निवारणार्थ अर्थअवश्यकनीचाहिये यहभाव है ॥ इति ॥ इस प्रकार सर्वका अधिपति हुआ भी यह आत्मदेव अज्ञानके प्रभावसे जाग्रत अवस्थामे भ्रांतियुक्त होता है ॥ पुनः जैसे पूर्वकथन किया हुआ जो जाग्रत प्रपंच तिसको उपसंहार करके स्वप्रकालमे निद्रारूपदोषकर सहकृत हुआ आत्मदेव तैसे प्रपंचको कल्पना कर तिस तिस शरीर तथा इन्द्रियों कर सिद्ध होने योग्य भोगोंको भोग कर पुनः यह भ्रम होता है ॥ वसिष्ठादिक मुनि मुक्त हुए हैं उनसे भिन्न और जीव बद्ध हैं ॥ और मैं भी कोई बद्ध हूँ । दुःखी हूँ । तथा संसारी हूँ । किसी प्रकार मुक्त हो जाऊँ ॥ ऐसे कल्पना करके पुनः तिस स्वप्रवस्था को उपसंहार करके सर्वभ्रमकी निवृत्तिरूप जाग्रत अवस्था अथवा सुषुप्ति अवस्थाको प्राप्त होता है ॥ इति ॥ इस प्रकार आत्मानिष्ठ अज्ञानके वशसे जीवभाव तथा ईश्वरभाव और जगत् रूपता और अवस्थावत्ताकी कल्पनाके हुए जो अर्थ सिद्ध हुआ सो कहते हैं । एक ही आत्मा व्यापक और स्वप्रकाश तथा आनंद एक स्वरूप अपने अज्ञानके वशसे जीव है । संसारी है इत्यादि शब्दोंका विषय होता है । जीव कल्पित ही है ऐसे जो कोई मानता है तिसका मत निषेध करते हैं । तिस शुद्ध आत्मासे भिन्न कोई संसारी है ऐसी संभावना भी नहीं कर सके । अन्यथा मुक्ति और संसारका एक अधिकरण ही बनेगा । याते आत्मासे भिन्न कल्पित जीव कोई नहीं यह अर्थ सिद्ध हुआ । इस प्रकार ब्रह्मात्माको अपने अज्ञानमे संसारीपना प्रतिपादन करके अत्र सुक्तपना भी तिसीमे प्रतिपादन करते हैं । तिस पूर्णानंद स्वरूप आत्मदेव की ही जिस कालमें अनादि संसारमें संचित किये हुए पुराय कर्मनूके समुदायसे पापकर्म निवृत्त हो जाते हैं और विवेकादि चतुष्टयमाधन संपन्न

होताहै । औरशास्त्रतथागुरुकी कृपासेप्राप्त तथाआदरनैरंतर्यदीर्घ
कालकरसेवनकियेहुए श्रवणादिसाधनोंकी पुष्कलतावालाहोताहै ।
तिसकोजिसकालमें तत्त्वमस्यादि महावाक्यसे उत्पन्नहुआस्वरूप
साक्षात्कारउदय होताहै । तिसकालमें अज्ञानतत्कार्यसर्वकोउप
संहारकरके स्वरूपानंदकर तृप्तहुआऔरअपने स्वरूपभूत महिमामें
स्थितहुआसोईआत्मा "मुक्तहै" इसव्यवहारका विषयहोताहै ॥ इस
प्रकारअनेकशरीरादिजगत् भ्रमकाउपादानरूप अज्ञानकीतत्त्वसाक्षा
त्कारसेनिवृत्तिकालमें तिससेभिन्न औरकोईसंसारीजीव तथातिसकर
अनुभूतद्वैतकिंचित्मात्रभीशेषनहींरहता यहपरस्मरहस्यहै ॥ ६ ॥
इसपूर्वउक्तसिद्धांतके संग्रहका श्लोक ॥

ब्रह्माज्ञानादीशजीवादिभावात् भ्रान्तं जाग्रत्स्वप्न
सुषुप्तीर्विभविभर्त्ति । स्वात्मज्ञानादज्ञताया निवृत्तौ
नान्योजीवोनास्तिचाऽज्ञातमन्यत् ॥ १ ॥

कवित्त ॥ व्यापकआनंदएक रसशुद्धब्रह्मजोई तमोजन्यभ्रान्त
युतविविधलसतहै ॥ जीवईशभावहोय जगतविधारकर जाग्रतसुपन
सुखपतकोधरतहै ॥ सोईजवईशध्याय गुरुकी शरणजायसुनमहावाक्य
निजबोधकोभरतहै ॥ तवहीअज्ञानसहकारज विनाशहोतकोऊअन्य
जीवनाहि द्वैतकोलखतहै ॥ १ ॥ इति ॥

✽ अथपूर्वअर्थके अनुवादपूर्वक एकदेशिपूर्वपक्षी-
कीरितिसे अज्ञातसत्ताकानिरूपणा ॥ ✽

आत्माकाअज्ञान देवादिशरीररूपतासे औरतिनशरीरोंका
सहकारिब्रह्मांडरूपतासे परिणामकों प्राप्तहोताहै । वहीअज्ञानतिस

तिसपदार्थगोचर वृत्तिरूपतासे विषयोंका चैतन्यके साथ संबंध होनेके अर्थपरिणामको प्राप्त होता है ॥ और सो विषयाकार अविद्याकी वृत्तिचेतन रूपबोधकर प्रकाशित हुई ज्ञानाभास और भ्रम इस नामसे कही जाती है । विषयका स्फूर्ण भी तिसीसे होता है । तिसी कारणसे देवादिशरीर और जगत् रूपविषय और तिनका ज्ञानरूप अविद्याकी वृत्ति इन सर्वका अविद्या ही उपादान कारण है । इसी कारणसे अद्वैतबोधकर अविद्याकी निवृत्ति हुए कार्यरूपविषय और भ्रमज्ञान तिनसर्वकी निवृत्ति होती है । यह कथन वनसक्त है ॥ इति ॥ जगत् अज्ञातसत्तावाला नही रहता इस पूर्वकथन को वादीन सहन करता हुआ शंका करता है ।

मू० । अज्ञातसत्त्वं नेष्टं चेद्व्यवहारः कथं भवेत् ।

नह्यदर्शनमात्रेण विपरणोनाशनिश्चयात् । १० ।

सो० ॥ अज्ञातसत्त्वनहि इष्टकहुविहारकत संभवे ।

अदर्शनते नहि क्लिष्ट तात्प्रभावके ज्ञानते ॥ ११ ॥

टी० ॥ अनुभूयमानद्वैत नहीं है ऐसे कहनेवाला सिद्धांती प्रकृष्टने योग्य है ॥ कि अनुभव के विषयको अनुभूयमान कहते हैं ॥ तिस अनुभव शब्दसे क्या? प्रमाणजन्यज्ञानका ग्रहण है अथवा अविद्याकी वृत्तिकग्रहण है । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि विषयनिष्ठ अज्ञातसत्ताका अभाव होनेसे प्रमाणजन्यज्ञानकी विषयता अंगीकार ही नहीं । यदि द्वितीय पक्षकहो तो सर्वजगत्को अपरोक्ष आत्माके अज्ञानका परिणाम होनेसे तिस जगत्को और तत्गोचर अविद्याकी वृत्तिको अपरोक्ष एकरूपता प्राप्त हुई । जिस कारणसे अपरोक्षशुक्तिके अज्ञानका परिणाम जो रजत और तिसका ज्ञान यह दोनों परोक्ष नहीं देखे जाते । किंतु अपरोक्ष ही देखे हैं । तिस

कारणसे अपरोक्ष अविद्यावृत्तिकी विषयताको अप्राप्तजोदिततिसकीसत्ता यदिस्वीकारनहींहै । तोपरोक्षपुत्रादिरूपविषयका ग्रहणत्यागरूपजो व्यवहारहेवहपरोक्ष अर्थके अभावहोनेसेनहींहोगा । यदिइसीअर्थमें इष्टापत्तिकरोतोनहींसंभवती । क्योंकिनदेखनेमात्रसे नाशकानिश्चय होनेसकोईपुरुषविपादयुक्तनहींहोता ॥ याते अविद्या उपादानकजगतहे यहकथनहीअसंगतहै ॥ अक्संक्षेपसेकथनकियेहुएश्लोकके अर्थको विस्तारसेनिरूपणकरतेहैं ॥ हेसिद्धांतितुमक्योंइसप्रकारकहतेहो ॥ जोतिसजीवकर अनुभूयमानद्वैत नहींहै ॥ क्योंकिजिसकारणसे अज्ञातद्वैतकी सत्ताभीज्ञातद्वैतकीसत्तावत् नैयायिकादिक । अथवा हमारेएकदेशीवेदांती अंगीकारकरतेहैं ॥ अज्ञातद्वैतकीसत्तामेंविवरणां चौर्योकाअंगीकारभी प्रमाणरूपहै ॥ सोदिखलातेहैं ॥ इसीकारणसे पारमार्थिकतथा व्यवहारिकऔंप्रातिभासिक यहतीनप्रकारकीसत्ता विवरणाचार्य मानतेहैं ॥ सत्ताकीत्रिप्रकारताका अंगीकारअज्ञात सत्ताकद्वैतकोकेसे उपपादकहै । ऐसीअकांक्षाकेहुएकहतेहैं ॥ हेसिद्धांतितुमहसत्ताकी त्रिप्रकारताका अंगीकारअज्ञातसत्ताके नमानेहुएनहीं वनसंकता ॥ इसमेंयहकारणहै ॥ पूर्वउक्तयुक्तिसे प्रपंचकीप्राति भासिकंसत्ताहै । औरसर्वप्रकारबाधसेरहितहोनेसेब्रह्मकीपारमार्थिकसत्ता है । इसरीतिसेदोनोंप्रकारकीसत्तास्वीकारकरनेसेद्रष्टातथादृश्यपदार्थकेस्वरूपकेनिरूपणसंभवहुएसत्ताकीत्रिप्रकारताकाअंगीकारतिनकाव्यर्थहोगा ॥ याते अविद्यकरजतादिज्ञातसत्तावालेहैं ॥ औरप्रपंचकोअविद्योपादान क नहोनेसे तिसकीअज्ञातसत्ताहै । इसप्रकार त्रिविधसत्ताकेअंगीकारकी अनुपपत्तिअज्ञातसत्ताकद्वैतमेप्रमाणहै ॥ यहनिरूपणकरके अथअज्ञात

सत्ताके अंगीकाररूपविपक्षमे दंडकहतेहैं ॥ यदि अज्ञातद्वैत कीसत्ता नहींमानोगेतोगृहसेवाहरदूरदेशमे गयेहुएपुत्रतथापशु आदिकसकल साधनसामग्रीकोनदेखतेहुएपुरुषकोपुत्रादिकोंका अभावनिश्चयहोकर शोकअग्निसेदग्धहुए औररुदन करतेहुएको मरणहीप्राप्त होगा ॥ याते अज्ञातद्वैत अथवा अंगीकारकरनेयोग्यहैयह अर्थयुक्ति औरप्रमाणसेसिद्ध हुआ ॥इति॥ शंका ॥ हेवादिन् पश्चादिक साधनसामग्रीके दर्शनका अभावतिनकेअभावकानिश्चयकनहीं । क्योंकिसुप्तमे पुत्रादिकोंके दर्शनकाअभावहुएभीतिनकेअभावकानिश्चयनहींहोता । यदिवहभी अभावकानिश्चयमानेतोसुप्तिकाहीउच्छेदप्राप्तहोगा । औरजोसत्ता कीत्रैप्रकारताकाअंगीकार अज्ञातसत्त्व कासाधक रूपप्रमाण पूर्ववादीने कथनकियावहभीनहींसंभवता । क्योंकिप्रातिभासिकसत्ताकाहीअर्वांतरभेदमाननेसेसत्ताकीत्रिविधतावनसकतीहै । भावयह किजिनप्रातीतिकपदार्थोंकाअदर्शनकालमेअसत्त्व निश्चयनहोवह व्यवहारिकसत्ता वालेहैं । औरजिनकाअसत्त्व निश्चयहोवहप्रातीतिक सत्तावालेहैं॥ फिर जुदीअज्ञातसत्ताद्वैतकीमाननीनिष्फलहै॥ औरजोऐसेकहोकिज्ञात सत्ता वालेरजतादिकोंकोजैसेव्यवहारकासाधकपनानहींदिखा। तैसेहीज्ञातसत्ता वालेद्वैतप्रपंचकोभीव्यवहारका साधकपनानहींहोगा ॥ सोयहकथन भीनहीं संभवता ॥ क्योंकिजैसे स्वप्नमेदेखेहुए ज्ञातसत्ताकगजअश्वा दिकोंको आरोहणादिव्यवहारका साधकपनाहै ॥ तैसेजाग्रत प्रपंचभी ज्ञातसत्तावालाहीव्यवहारकासाधककैसेनहींवनसत्ता किंलुवनसत्ता है ॥ और प्रातिभासिकरजतादिकों कोभीप्रवृत्त्यादि व्यवहारका साधकपनाविद्यमानहीहै ॥ यहाँयहअनुमानजानना ॥

कारणसे अतरोक्ष यविद्यावृत्तिकी विषयताको अप्राप्त जो द्वैत तिसकी सत्ता यदि स्वीकार नहीं है । तो परोक्षपुत्रादिरूपविषयका ग्रहणत्यागरूपजो व्यवहार है वह परोक्ष अर्थके अभाव होनेसे नहीं होगा । यदि इसी अर्थमें इष्टापत्तिकरो तो नहीं संभवती । क्योंकि न देखने मात्रसे नाशकानिश्चय होनेसे कोई पुरुषविषय युक्त नहीं होता ॥ याते अविद्या उपादानकजगत् है यह कथन ही असंगत है ॥ अथ संक्षेपसे कथन किये हुए श्लोकके अर्थको विस्तारसे निरूपण करते हैं ॥ हे सिद्धांति न तु मक्योऽसप्रकारकहते हो ॥ जो तिस जीवकर अनुभूयमान द्वैत नहीं है ॥ क्योंकि जिस कारणसे अज्ञात द्वैतकी सत्ता भी ज्ञात द्वैतकी सत्तावत् नैयायिकादिक । अथवा हमारे एकदेशी वेदांती अंगीकार करते हैं ॥ अज्ञात द्वैतकी सत्तामें विवरणा चर्याका अंगीकार भी प्रमाणरूप है ॥ सो देखलाते हैं ॥ इसी कारणसे पारमार्थिक तथा व्यवहारिक औप्रातिभासिक यह तीन प्रकारकी सत्ता विवरणाचार्य मानते हैं ॥ सत्ताकी त्रिप्रकारताका अंगीकार अज्ञात सत्ताक द्वैतकोकेसे उपपादक है । ऐसी अकांक्षाके हुए कहते हैं ॥ हे सिद्धांति न्वहसत्ताकी त्रिप्रकारताका अंगीकार अज्ञात सत्ताके नमाने हुए नहीं बनसकता ॥ इसमें यह कारण है ॥ पूर्व उक्त युक्तिसे प्रपंचकी प्रातिभासिक संसत्ता है । और सर्वप्रकारवाधसे रहित होनेसे ब्रह्मकी पारमार्थिक संसत्ता है । इसरी तिसे दोनों प्रकारकी संसत्ता स्वीकार करनेसे द्रष्टा तथा दृश्यपदार्थके स्वरूपका निरूपण संभव हुए सत्ताकी त्रिप्रकारताका अंगीकार तिनका व्यर्थ होगा ॥ याते अविद्यकरजतादि ज्ञात सत्तावाले हैं ॥ और प्रपंचको अविद्योपादानक न होनेसे तिसकी अज्ञात सत्ता है । इस प्रकार त्रिविध सत्ताके अंगीकारकी अत्र प्रपत्ति अज्ञात सत्ताक द्वैतमे प्रमाण है ॥ यह निरूपण करके अब अज्ञात

सत्ताके अंगीकाररूपविपक्षमे दंडकहतेहैं ॥ यदि अज्ञातद्वैत कीसत्ता नहींमानोगेतोगृहसेवाहरद्वेशमे गयेहुएपुत्रतथापशु आदिकसकल साधनसामग्रीकोनदेखतेहुएपुरुषकोपुत्रादिकोंका अभावनिश्चयहोकर शोकग्रमिसेदग्धहुए औररुदन करतेहुएको मरणहीप्राप्त होगा ॥ याते अज्ञातद्वैत अथवा अंगीकारकरनेयोग्यहैयह अर्थयुक्ति औरप्रमाणसेसिद्ध हुया ॥इति॥ शंका ॥ हेवादिन् पश्चादिक साधनसामग्रीके दर्शनका अभावतिनके अभावकानिश्चायकनहीं । क्योंकिसुपुत्रिमे पुत्रादिकोंके दर्शनका अभावहुएभीतिनके अभावकानिश्चयनहींहोता । यदिवहांभी अभावकानिश्चयमानेतोसुपुत्रिकाहीउच्छेदप्राप्तहोगा । औरजोसत्ता कीत्रैप्रकारताका अंगीकार अज्ञातसत्त्व कासाधक रूपप्रमाण पूर्ववादीने कथनकियावह भीनहींसंभवता । क्योंकिप्रातिभासिकसत्ताकाही अत्रांतरभेदमाननेसेसत्ताकीत्रिविधतावनसकतीहै । भावयह किजिनप्रातीतिकपदार्थोंका अदर्शनकालमे असत्त्व निश्चयनहोवह व्यवहारिकसत्ता वालेहैं । औरजिनका असत्त्व निश्चयहोवहप्रातीतिक सत्तावालेहैं ॥ फिर जुदी अज्ञातसत्ताद्वैतकीमाननीनिष्फलहै ॥ औरजोऐसेकहोकिज्ञात सत्ता वालेरजतादिकोंकोजैसेव्यवहारकासाधकपनानहींदिखा । तैसेहीज्ञातसत्ता वालेद्वैतप्रपंचकोभीव्यवहारका साधकपनानहींहोगा ॥ सोयहकथन भीनहीं संभवता ॥ क्योंकिजैसे स्वप्नमेदेखेहुए ज्ञातसत्ताकगज अश्वदिदिकोंको आरोहणादिव्यवहारका साधकपनाहै ॥ तैसेजाग्रत प्रपंचभी ज्ञातसत्तावालाहीव्यवहारकासाधककैसेनहींवनसत्ता किंनुवनसत्ता है ॥ और प्रातिभासिकरजतादिकों कोभीप्रवृत्त्यादि व्यवहारका साधकपनाविद्यमानहीहै ॥ यहांयह अनुमानजानना ॥

* जागरावस्थं द्वैतं ज्ञातमेव सद्भवितुमर्हति व्यव हियमाणात्वात् ॥ स्वप्नप्रपंचवत् *

अ० ॥ जाग्रत् अवस्थामेजो द्वैत प्रपंच है ॥ सो ज्ञात सत्तावाला होनेके योग्य है ॥ व्यवहारका विषय होनेसे ॥ जो जो व्यवहारका विषय है सो सो ज्ञात सत्तावाला होनेके योग्य है ॥ जैसे स्वप्न प्रपंच है ॥ इति ॥ वादी का समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् यह तुम्हारा अनुमान “वाधितत्व” रूप उपाधिकर दूषित है ॥ सो इस प्रकार है ॥ जहां जहां ज्ञात सत्तावाला द्वैत है ॥ तहां तहां “वाधितत्व” कहिये वाध ज्ञान विषयत्व है ॥ जैसे स्वप्न प्रपंच मे है ॥ याते उपाधिसाध्यके साथ व्यापक है ॥ और जहां जहां व्यवहारकी विषयता है ॥ तहां तहां वाध ज्ञान की विषयता रूप “वाधितत्व” का अभाव है ॥ जैसे जाग्रत् प्रपंच मे है ॥ इस प्रकार प्रपंच मे उपाधिसाधनके साथ व्यापक है ॥ इसीसे जाग्रत् तथा स्वप्न प्रपंचकी विलक्षणता है ॥ क्योंकि जाग्रत् बोधसे तिस स्वप्न प्रपंच का वाध होजाता है ॥ और इस जाग्रत् प्रपंचमें आत्मसाक्षात्कारसे पूर्व वाध नहीं होता ॥ यह कथन सिद्धांतीके अभिप्रायसे अथवा एक एक देशीके अभिप्रायसे जानना याते अज्ञात सत्ताक द्वैत स्वीकार करने योग्य है ॥ १० ॥ इति ॥ ।

* अथ त्रिविधसत्ताके खंडनपूर्वक ख्यातियों का स्वरूप निरूपण *

जाग्रत् द्वैत प्रपंच अवाधित होनेसे अज्ञात सत्तावाला है यह पूर्व वादीने कथन किया अतिसको सिद्धांती दूषित करता है ॥ यहां एक देशीकामत निरास करनेसे नैयायिकादिकोंकामत भी निरास होजावेगा

इसअभिप्रायसे एकदेशीका मतखंडन करनेकेलिये सिद्धांती तिस से पूछताहै ॥

मू० । सत्त्वत्रयंवदन्वादीप्रष्टव्योऽत्राधुनामया ।

सत्यंद्वैतमसत्यंवानाऽसत्येत्रिविधंकुतः ॥ ११ ॥

भुजंगपूयात ॥ त्रिधासत्त्ववादीभलेजोवखाने ॥ इहांपूछने योग्यमैनेवजाने ॥ कहोद्वैतसत्यं असत्यंवहोई ॥ उभेनावनेतोत्रिधा कैससोई ॥ १२ ॥

टी०—हेएकदेशिन् क्या? वास्तवद्वैतको आश्रयणकरकेअज्ञात सत्ताकोतुमसिद्धकरतेहो । अथवाअनिर्वचनीयद्वैतको आश्रयणकरके तिसकोसिद्धकरतेहो ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिजहां प्रत्यक्षादिप्रमाणोंनिष्ठप्रामाण्यकानिपेध कियाहै तहांवास्तवद्वैतका भी निपेधकरआएहैं ॥ औरद्वितीयपक्षमेंयहविचारकियाचाहिये । सत्यरूपतासेतथा असत्यरूपतासेत्रौउभयरूपतासे जोकथनकेयोग्य नहोवहअनिर्वचनीय पदार्थप्रथमकहींशुक्ति रजतादिस्थलमेंप्रसिद्ध हैवानहीं ॥ अंतिमपक्षकहोतो वहनहींसंभवता । क्योंकिदृष्टांतका अभावहै । अर्थयहआकाशादि पंचनिष्ठ अनिर्वचनीयताकोअंगी कारकरकेतिसकी अज्ञातसत्ता सिद्धकरनेकी हेवादिन्तइच्छाकरताहैं यातेतिसप्रपंचकी अनिर्वचनीयतामें यहविचारकरनेयोग्यहै । प्रपंच निष्ठअनिर्वचनीयता प्रत्यक्षप्रमाणसेसिद्धहै ॥ अथवाअनुमानप्रमाण सेसिद्धहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिअनिर्वचनीयता को स्पष्टप्रत्यक्षकर सिद्धमानेहुयेवादियोंका परस्परविवाद नहीं होगा ॥ औरद्वितीयपक्षभी असंगतहै ॥ क्योंकिदृष्टांतकेअभाव

* जागरावस्थं द्वैतं ज्ञातमेव सद्भवितुमर्हति व्यव हियमाणात्वात् ॥ स्वप्नप्रपंचवत् *

अ० ॥ जाग्रत् अवस्थामेजो द्वैत प्रपंच है ॥ सो ज्ञात सत्तावाला होनेके योग्य है ॥ व्यवहारका विषय होनेसे ॥ जो जो व्यवहारका विषय है सो सो ज्ञात सत्तावाला होनेके योग्य है ॥ जैसे स्वप्न प्रपंच है ॥ इति ॥ वादी का समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् यह तुम्हारा अनुमान “वाधितत्व” रूप उपाधिकर दूषित है ॥ सो इस प्रकार है ॥ जहां जहां ज्ञात सत्तावाला द्वैत है ॥ तहां तहां “वाधितत्व” कहिये वाध ज्ञान विषयत्व है ॥ जैसे स्वप्न प्रपंच में है ॥ याते उपाधिसाध्यके साथ व्यापक है ॥ और जहां जहां व्यवहारकी विषयता है ॥ तहां तहां वाध ज्ञान की विषयता रूप “वाधितत्व” का अभाव है ॥ जैसे जाग्रत् प्रपंच में है ॥ इस प्रकार पक्ष में उपाधिसाधनके साथ व्यापक है ॥ इसीसे जाग्रत् तथा स्वप्न प्रपंचकी विलक्षणता है ॥ क्योंकि जाग्रत् बोधसे तिस स्वप्न प्रपंच का वाध होजाता है ॥ और इस जाग्रत् प्रपंचमें आत्मसाक्षात्कारसे पूर्व वाध नहीं होता ॥ यह कथन सिद्धांतीके अभिप्रायसे अथवा एक एक देशीके अभिप्रायसे जानना याते अज्ञात सत्ताक द्वैत स्वीकार करने योग्य है ॥ १० ॥ इति ॥ ।

* अथ त्रिविधसत्ताके खंडनपूर्वक ख्यातियों का स्वरूप निरूपण *

जाग्रत् द्वैत प्रपंच अवाधित होनेसे अज्ञात सत्तावाला है यह पूर्व वादीने कथन किया अतिसको सिद्धांती दूषित करता है ॥ यहां एक देशीकामत निरास करनेसे नैयायिकादिकोंकामत भी निरास होजावेगा

इसअभिप्रायसे एकदेशीका मतखंडन करनेकेलिये सिद्धांती तिस से पूछताहै ॥

मू० । सत्त्वत्रयंवदन्वादीप्रष्टव्योऽत्राधुनामया ।

सत्यंद्वैतमसत्यंवानाऽसत्येत्रिविधंकुतः ॥ ११ ॥

भुजंगपूयात् ॥ त्रिधासत्त्ववादीभलेजोवखाने ॥ इहांपूछने योग्यमैनेवजाने ॥ कहोद्वैतसत्यं असत्यंवहोई ॥ उभेनावनेतोत्रिधा कैससोई ॥ १२ ॥

टी०—हेएकदेशिन् क्या? वास्तवद्वैतको आश्रयणकरकेअज्ञात सत्ताकोतुमसिद्धकरतेहो । अथवाअनिर्वचनीयद्वैतको आश्रणकरके तिसकोसिद्धकरतेहो ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिजहां प्रत्यक्षादिप्रमाणोंनिष्ठप्रामाण्यकानिषेध कियाहै तहांवास्तवद्वैतका भी निषेधकरआएहैं ॥ औरद्वितीयपक्षमेंयहविचारकियाचाहिये । सत्यरूपतासेतथा असत्यरूपतासेऔरउभयरूपतासे जोकथनकेयोग्य नहोवहअनिर्वचनीय पदार्थप्रथमकहींशुक्ति रजतादिस्थलमेंप्रसिद्ध हैवानहीं ॥ अंतिमपक्षकहोतो वहनहींसंभवता । क्योंकिदृष्टांतका अभावहै । अर्थयहथाकाशादि पंचनिष्ठ अनिर्वचनीयताकोअंगी कारकरकेतिसकी अज्ञातसत्ता सिद्धकरनेकी हेवादिन्तुइच्छाकरताहैं यातेतिसप्रपंचकी अनिर्वचनीयतामें यहविचारकरनेयोग्यहै । प्रपंच निष्ठअनिर्वचनीयता प्रत्यक्षप्रमाणसेसिद्धहै ॥ अथवाअनुमानप्रमाण सेसिद्धहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिअनिर्वचनीयता को स्पष्टप्रत्यक्षकर सिद्धमानेहुयेवादियोंका परस्परविवाद नहीं होगा ॥ औरद्वितीयपक्षभी असंगतहै ॥ क्योंकिदृष्टांतकेअभाव

से, अनुमानकरके आकाशादिपंचनिष्ठअनिर्वचनीयता किसप्रकार
 तुमसिद्धकरोगेकिंतुनहींकरसक्ते ॥ यातेप्रथमपक्षही स्वीकारकरने
 योग्यहै ॥ क्योंकिअनिर्वचनीयताको आश्रयणकरकेहीअज्ञातसत्ता
 एकदेशीने सिद्धकरनीहै ॥ यहीअनिर्वचनीयताके सिद्धकरनेका
 प्रकरणमेंउपयोगहै इसलियेवहअनिर्वचनीयपना शुक्तिरजतादिकों
 में प्रथमसिद्धहै ॥ इसप्रथमपक्षको-एकदेशीस्वीकार करता
 है ॥ यहांपरयहअर्थजाननेयोग्यहै ॥ “ इंदरजतम् ” यहप्रतीति
 रजतकेसंबंधाकारतथा इदंत्वविशिष्ट पुरोवर्तिकोविषय करनेवालीहै
 अथवानहीं ॥ यदिअंत्यपक्षकहोतो रजतार्थी पुरुषकी-सन्मुखदे
 शवर्ति पदार्थमेंप्रवृत्ति नहींहुईचाहिये ॥ क्योंकि प्रवृत्तिकेकारण
 रूपविशिष्टज्ञानकाअभावहै ॥ औरयदिकोईअख्यातिवादीऐसेकहे। कि
 यहांदोज्ञानहैंइदंतागोचरतो सामान्यज्ञानप्रत्यक्षरूपहै औररजतगोचर
 स्मृतिरूपज्ञानहै ॥ तिनदोनोंकेविवेकज्ञानाऽभावसेपुरोवर्ति विषयक
 प्रवृत्तिहोतीहै। सोयहकथनअख्यातिवादीकानहींसंभवता। क्योंकिजैसे
 दोज्ञानोंकातथादोविषयोंका विवेकज्ञानाऽभाव प्रवृत्तिकीसामग्री तुमने
 मानीहै। तैसेउसीसमयमेदोनोंज्ञानोंकेतथादोनोंविषयोंकेस्वरूपभिन्नहोने
 सेअविवेकज्ञानाऽभावनिवृत्तिकीसामग्रीभीविद्यमानहै ॥ तिससेनिवृत्तिभी
 अवश्यहुईचाहिये ॥ औरएककालमेपरस्परविरुद्धप्रवृत्तितथानिवृत्तिनहीं
 देखीजाती। औरसर्वत्रअर्थात्सत्यरजतादिस्थलमेभीविवेकज्ञानाऽभाव
 सेहीप्रवृत्तिहोजावगीतोप्रयोजनसेरहित विशिष्टज्ञानका संसारमेलोपहो
 जाएगा। यातेविवेकज्ञानाऽभावसेपुरोवर्तिमेप्रवृत्तिनहींहोसकतीकिन्तु
 विशिष्टज्ञानसेहीहोतीहै इसलियेअंत्यपक्षअसंगतहै। औरवह प्रतीतिहै

यह प्रथमपक्ष यदि कहो तो तिसमे भी यह विचारणीय है। क्या? वह प्रतीति निर्विषय होती है। अथवा। सविषय होती है। प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि निर्विषयको इज्ञान नहीं होता। और यदि विषयसे विना भी ज्ञान मानोगे तो विज्ञानवादीबोधकामत प्राप्त होगा। और विषयसहित वह प्रतीति है यह द्वितीयपक्ष यदि कहो। तो तिसमे यह विचारकर्तव्य है। क्या? तिसप्रतीतिको विषयसत् है अथवा असत् है। अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि वह प्रतीति अपरोक्ष है। और असत्की अपरोक्षप्रतीति नहीं हो सकती। और यदि प्रथमपक्ष कहो। तो तिसमे यह विचारकर्तव्य है। क्या? वह विषयपुरोवर्ति में सत् है अथवा अन्यस्थलमें सत् है पुरोवर्तिमें यदि सत् कहो तो उत्तरकालमें तिसको अमरूपता तथा बाधयह दोनों नहुए चाहिये। ॥ क्योंकि सत्पदार्थके यह दोनों नहीं होते ॥ और द्वितीयपक्ष में यह विचार करने योग्य है ॥ वह अन्यस्थल क्या? बुद्धि है ॥ अथवा कान्ता करादि है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि बुद्धि मे रजत है इसमें प्रमाण का अभाव है। और "इंदरजतम्" ॥ इस प्रकार का रजत विषयके प्रत्यय अथवा "नेंदरजतम्" इस प्रकार का बाध प्रत्यय भी रजतकी विज्ञानरूपताको बोधन नहीं करता। क्योंकि प्रथमप्रत्ययको इंदंता विशिष्ट पुरोवर्ति विषयकर जतका बोधकपना है ॥ और बाधप्रत्यय भी इंदंता विशिष्ट पुरोवर्तिको रजतसे विवेचन करता है ॥ और वहरजत नित्य है अथवा कार्य है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि नित्यरजतको स्थाईरूप होनेकर ज्ञानके विज्ञानरूपता कैसे होगी ॥ और कार्यरूपरजतको बुद्धिसे अत्यंत अभिन्न मानेहुए तिनका कार्यकारण भाव नहीं सिद्ध होगा ॥ और यदि मायाके बलसे तिनका कार्यकारण भाव मानोगे। तो स्वसिद्धांतकी हानि होगी ॥ याते नित्यत्व और

से, अनुमानकरके आकाशादिपूष्वनिष्ठग्रनिर्वचनीयता किसप्रकार तुमसिद्धकरोगेकितुनहींकरसक्ते ॥ यातेप्रथमपक्षही स्वीकारकरने योग्यहै ॥ क्योंकिग्रनिर्वचनीयताको आश्रयणकरकेही यज्ञातसत्ता एकदेशीने सिद्धकरनीहै ॥ यहीग्रनिर्वचनीयताके सिद्धकरनेका प्रकरणमेंउपयोगहै इसलियेवहग्रनिर्वचनीयपना शुक्तिरजतादिकों में प्रथमप्रसिद्धहै ॥ इसप्रथमपक्षको एकदेशीस्वीकार करता है ॥ यहांपरयहयर्थजाननेयोग्यहै ॥ “ इदंरजतम् ” यहप्रतीति रजतकेसंबंधाकारतथा इदंत्वविशिष्ट पुरोवर्तिकोविषय करनेवालीहै अथवानहीं ॥ यदिग्रत्यपक्षकहोतो रजतार्थी पुरुषकी सन्मुखदे शवर्ति पदार्थमेंप्रवृत्ति नहींहुईचाहिये ॥ क्योंकि प्रवृत्तिकेकारण रूपविशिष्टज्ञानका यभावहै ॥ औरयदिकेईग्रख्यातिवादीऐसेकहे। कि यहांदोज्ञानहैंइदंतागोचरतो सामान्यज्ञानप्रत्यक्षरूपहै औररजतगोचर स्मृतिरूपज्ञानहै ॥ तिनदोनोंकेविवेकज्ञानाभावसेपुरोवर्ति विषयक प्रवृत्तिहोतीहै ॥ सोयहकथन ग्रख्यातिवादीकानहींसंभवता ॥ क्योंकिजैसे दोज्ञानोंकातथादोविषयोंका विवेकज्ञानाभाव प्रवृत्तिकीसामग्री तुमने मानीहै ॥ तैसेउसीसमयमेदोनोंज्ञानोंकेतथादोनोंविषयोंकेस्वरूपभिन्नहोने सेअविवेकज्ञानाभावनिवृत्तिकीसामग्रीभीविद्यमानहै ॥ तिससेनिवृत्तिभी अज्ञश्यहुईचाहिये ॥ औरएककालमेपरस्परविरुद्धप्रवृत्तितथानिवृत्तिनहीं देखीजाती ॥ औरसर्वत्र यथातसत्यरजतादिस्थलमेभीविवेकज्ञानाभाव सेहीप्रवृत्तिहोजावेगीतोप्रयोजनसेरहित विशिष्टज्ञानका संभारमेलोपहो जाएगा ॥ यातेविवेकज्ञानाभावसेपुरोवर्तिमेप्रवृत्तिनहींहोसकतीकिन्तु विशिष्टज्ञानसेहीहोतीहै इसलियेग्रत्यपक्षयसंगतहै ॥ औरवह प्रतीतिहै

यह प्रथमपक्षयदिकहोतो तिसमे भी यह विचारणीय है। क्या? वह प्रतीतिनिर्विषय होती है। अथवा। सविषय होती है। प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि निर्विषयको इज्ञान नहीं होता। और यदि विषयसे विना भी ज्ञान मानोगे तो विज्ञानवादीबोधकामत प्राप्त होगा। और विषयसहित वह प्रतीति है यह द्वितीयपक्षयदिकहो। तो तिसमे यह विचारकर्तव्य है। क्या? तिसप्रतीतिक विषयसत् है अथवा असत् है। अत्यपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि वह प्रतीति अपरोक्ष है। और असत्की अपरोक्षप्रतीति नहीं हो सकती। और यदि प्रथमपक्षकहो तो तिसमे यह विचारकर्तव्य है। क्या? वह विषयपुरोवर्तिमें सत् है अथवा अन्यस्थलमें सत् है पुरोवर्तिमें यदि सत्कहो तो उत्तरकालमें तिसको भ्रमरूपता तथा बाधयह दोनों नहुए चाहिये। ॥ क्योंकि सत्पदार्थके यह दोनों नहीं होते ॥ और द्वितीयपक्ष में यह विचारकरने योग्य है ॥ वह अन्यस्थल क्या? बुद्धि है ॥ अथवा कान्ता करादि है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि बुद्धिभेरजत है इसमें प्रमाण का अभाव है और "इदं रजतम्" ॥ इस प्रकार का रजतविषयक प्रत्यय अथवा "नदं रजतम्" इस प्रकार का बाधप्रत्यय भी रजतकी विज्ञानरूपताको बोधन नहीं करता क्योंकि प्रथमप्रत्ययको इदंताविशिष्टपुरोवर्तिविषयकरजतके बोधकंपना है ॥ और बाधप्रत्यय भी इदंताविशिष्टपुरोवर्तिकोरजतसे विवेचन करता है ॥ और वहरजतनित्य है अथवा कार्य है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि नित्यरजतको स्थाईरूप होनेकरक्षणके विज्ञानरूपता कैसे होगी ॥ और कार्यरूपरजतको बुद्धिसे अत्यंत अभिन्नमानेहुए तिनकार्यकारणभावनहीं सिद्ध होगा ॥ और यदि मायाकेवलसे तिनका कार्यकारणभावमानोगे तो स्वसिद्धांतकी हानि होगी ॥ याते नित्यत्व और

कार्यत्वरूपताकरबुद्धिरूपरजतकानिरूपणनहींहोसकता ॥ औरकांता
करादिदेशमेवहरजतसत्तहै ॥ यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि
कांताकरादिगततिसरजतकासन्मुखशुक्तिदेशमेग्रहणनहींहोसकता ॥
व्यवधानहोनेसेनेत्रभीतिसकाग्राहकनहीं ॥ औरयदिदोपकेवलसेतिस
काग्रहणमानेतोक्या?दोपमात्रसेउसकाग्रहणहोताहै ॥ अथवादोपसह-
कृतनेत्रसेग्रहणहोताहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवताक्योंकिअंधपुरुषको
भीकांताकरादिगतरजतकाग्रहणप्राप्तहोगा ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभ-
वता ॥ क्योंकिमध्यदेशवर्तिऔरपदाथोंकाभीनेत्रइन्द्रियसेग्रहणहुआ
चाहिये ॥ इसप्रकारअख्यातिवादादिकोंकाभ्रमस्थल मेअसंभवहोनेसे
पुरोवर्तिशुक्तिदेशमेवहरजतनसत्तहैनअसत्तहै औरपरस्परविरोधहोनेसे
सत्तअसत्तजभेरूपभीवहरजतनहीं ॥ किन्तुसत्तअसत्तसेविलक्षण अनिर्वच-
नीयवहरजतहै ॥ यहअर्थसिद्धहुआ ॥ यातेभ्रमकाविषयअनिर्वचनीयहै ॥
इसरीतिसेतिसदृष्टांतकोआश्रयणकरकेआकाशादिप्रपंचनिष्ठभीअनिर्व-
चनीयपनाअंगीकारकरकेअज्ञातसत्ता सिद्धकरनेयोग्यहै ॥ यहस्थित
हुआ ॥ इसकोअवसिद्धांतीदूषितकरताहै ॥ हेवादिन्यदितुमपूर्वउक्त
अर्थकोस्वीकारकरतेहोतोदृष्टांतऔदाष्टांतकी विषमतादूर करनेकेअर्थ
तिसशुक्तिरजतमेअनिर्वचनीयताकेउपपादनसेजैसीज्ञातसत्तामानीहै ॥
तैसीहीसत्ताआकाशादिप्रपंचनिष्ठभीमाननेयोग्यहै ॥ ऐसेमानेहुएयह
विचारकरनेयोग्यहै ॥ क्या?आकाशादिकोंकीअज्ञातसत्ताहैवातिनकी
ज्ञातहीसत्ताहै ॥ अन्त्यपक्षमेतोविरोधकाअभावहै ॥ औरयदिद्वितीय
पक्षकहोगेअर्थात्आकाशादिकोंमेतुमअज्ञातसत्ताकीकल्पनाकरोगे ॥
तोदृष्टांतदार्ष्टांतमेसमीचीनरूपताकरकेसेउपसंहारकोप्राप्तहोगा ॥ क्योंकि

दोनोंका विरोधहै । अब अज्ञातसत्त्वके साथकर्तृको अनुवाद करके सिद्धांतीदूषित करताहै । औरपुत्रादिक साधन सामग्रीकेगृहसे बाहर निकसेहुएअदर्शनमात्रसेनाशनिश्चयहोनेकर रुदनादिकोंकीप्राप्तिरूप दोपजोवादीनेपूर्वकहाथावहभीनहींसंभवता । क्योंकिबाधकप्रमाणकी प्रवृत्तिकेअभावसेतहांअभावनिश्चयकाअनंगीकारहै । अर्थयह जैसे “इदंरजतम्” यहमथमभ्रमज्ञानहोताहै ॥ पश्चात् ॥ नेदंरजतम् ॥ इसबाधकप्रत्ययसेरजतकाअभावनिश्चयहोताहै तैसेयहांबाधकप्रत्ययकेनप्रवृत्तहोनेकर तिनपुत्रादिकोंकाअभावनिश्चयनहींहोता । इसीसेरुदनादिकोंकीप्राप्ति भीनहींहोती । यातेस्वप्नकीन्याईसर्वव्यवहारकासंभवहै । और

❀ जाग्राज्वस्थं द्वैतं ज्ञातमेव सद्भवितुमर्हति व्यवहिय
मारात्वात् स्वप्नप्रपंचवत् ❀

इसअनुमानसेभीआकाशादिकपूर्वचकीज्ञातसत्ताहीसिद्धहोती है । यद्यपिपूर्वइसअनुमानमे “बाधितत्व” उपाधिका निरूपणकिया था । तथापिवहउपाधिसाध्यकेसाथव्यापकनहोनेकरदूषितहै । अर्थात् रजतादिभ्रमकालमेअथवास्वप्नकालमे जाग्रत्अवस्थाकीन्याईबाधका अभावहोनेसे पूर्वउक्तउपाधि साध्यकेसाथ अव्यापकहै । औरबाधक प्रमाणकीप्रवृत्तिहुएबाधकालमेतोस्वप्नरूपधर्मीकाहीअभावहै ॥ इसीसे उपाधिऔसाध्यकीव्याप्तिकाग्रहरूपव्यवहारका अभावहोनेसेउपाधि कोसाध्यकेसाथव्यापकपनेमेप्रमाणकाहीअभावहै ॥ औरवृद्धोंकेत्रिविध सत्त्वकेअंगीकरणकीअनुपपत्ति अज्ञातसत्ताकाकल्पिकहै यहकथनभी नहींसंभवता ॥ क्योंकितिनकाअंगीकारअन्यप्रकासेवनमकताहैसोई दिखलातेहैं ॥ सर्वद्वैतनिष्ठभातिभासिकसत्ताका तिन्होंने न त्यागकरके

भ्रांतपुरुषोंकोसंतोषमात्र करायाहै ॥ इसीसे तिनके अंगीकारकेसाथ
विरोधनहीं ॥ भावयह ॥ प्रतिभासिकसत्ता प्रपंचनिष्ठमानेहुएभी
भ्रांतपुरुषोंकी बुद्धिकरसिद्धजोजाग्रत् स्वप्नकीअवांतरविपमतातिसको
याश्रयणकरकेव्यवहारकिसत्ताकेकथनसेविरोधकाअभावहै॥१॥ पूर्व
अर्थकेसंग्रहकाश्लोक ॥

स्वप्नवद्दृष्टिसृष्टः सन्सर्वव्यवहृतिक्षमः ।

प्रपंचोनाञ्चदोषो ऽस्तितस्यपरिहृतत्वतः ॥ १ ॥

दो० ज्ञातसत्त्वप्रपंचजो सुपनेसमहै जोइ ॥

सबविवहार समर्थसोयामें दोषनकोइ ॥ १ ॥ इति ॥

❀ अथदृष्टिसमकालीनदृष्टिसृष्टिवादमेंप्रतिज्ञानसृष्टि
काभेदत्रौतिसमेंप्रत्यभिज्ञाके विरोधकीशंकाका
समाधाननिरूपण ❀

आत्माकाअज्ञानदेवादिदेहाकारसेतथातिकासहकारीब्रह्मांडाकारसेऔर
तिसतिसपदार्थगोचर वृत्त्याकाररूपताकरपरिणामकोप्राप्तहोताहै ॥ इस
पक्षमेंवृत्तिसमकालीनहींसोसोपदार्थहै ॥ वृत्तिसेपूर्वऔरवृत्तिसेपश्चात्
वहपदार्थनहींवर्तते ॥ वृत्तिसमकालीनज्ञातहीघटादिक पदार्थहैं ॥
यहअर्थपूर्वनिरूपणकिया ॥ तिसमेंयहविचारकियाजाताहै ॥ तिस
तिसपदार्थगोचरजो वृत्तिहैवहवाधसेरहित अनुवृत्तिहोतीहै ॥ अथवा
शीघ्रविनाशहोजातीहै ॥ इनमेंमथमपजनहींसंभवता ॥ क्योंकिएकतो
सुषुप्तिकाअभावभाप्तहोगा ॥ औरदूसरीवृत्तिभी नहींउत्पन्नहोगी ॥
तात्पर्ययहहै । किसीविशेषज्ञानके विद्यमानहुए सकलविशेषज्ञानोंकी
उपरमअवस्थारूप सुषुप्तिकाअसंभवहै । औरवृत्तिज्ञानोंकी “अयोग

पद्य" अर्थात् एककालमें न होना स्वीकार है । यदि एकवृत्तिके विद्यमान कालमें दूसरी वृत्तिमानोगेतो ज्ञानोंको "यौगपद्य" होनेसे वृद्धोंके थंगीकारके साथ विरोध होगा । और द्वितीयपक्ष भी असंगत है । क्योंकि वृत्तिके समान ही योगक्षेमवाले षपंचका भी शीघ्रविनाशिपना होगा । और ज्ञानकी उत्पत्ति से द्वैत षपंचकी उत्पत्ति होनेकर ज्ञानके भेदहुए षपंचका भी भेदसंग होगा । और यदि इसमें अर्थात् प्रतिज्ञान षपंचके भेदमें सिद्धांती दोषाभाव कथन करतो वह नही संभवता । क्योंकि प्रत्यभिज्ञाका विरोध प्राप्त होता है सोई दिखलाते हैं ।

मू० । द्वैतभेदे प्रतिज्ञानं प्रत्याभिज्ञाकथं वद ।

दशानां युगपत् सर्पभ्रमे यद्वत्तथैव सा ॥ १२ ॥

अडिल १० प्रतिज्ञानमें द्वैतभेद जो राखीए ।

प्रतिभिज्ञाहुइ तामें किहविध भापीए ॥

उ० ॥ एककालमें दशको जहविध सर्पभ्रम ।

तामें जस प्रतिभिज्ञातस विधइहांक्रम ॥ १३ ॥

टी० । सोईयह घट है सोईयह गृह है ॥ इत्यादिक प्रत्यभिज्ञा ज्ञानज्ञानमति घटादिक विषयोंका भेद मानेहुए नही हुई चाहिये । जिसकारणसे प्रत्यभिज्ञाका विषय जो घटादिकोंका अर्थभेद तिसका अर्थभाव है । और वह प्रत्यभिज्ञासर्वके अनुभवसिद्ध है तिसकालोपनही संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादि न एकत्व रूपविषयके अभावसे क्या? प्रत्यभिज्ञाका स्वरूपही नही सिद्ध होता यह लुम कहतेहो । अथवा । तिसमें प्रामारायका असंभव है यह कहतेहो । प्रथमपक्ष तो नही संभवता ॥ क्योंकि जैसे दशपुरुषोंको "युगपत्" कहिये एककालमें रज्जु विषयक सर्पभ्रम होता है तहां एकसर्परूपविषयके अभावहुए भी जैसे प्रत्य

भिज्ञाहोतीहै । तैसेयहांप्रकरणमेंभीजानो । कालांतरमेंहोनेवालेभिन्न
 भिन्नसर्पभ्रममें प्रत्यभिज्ञाकी प्राप्तिहीनहींहोसکتی । इसलियेयहांमूल
 कारिकामें“युगपत्”यहपदकथनकियाहै ॥ तैर“यहघटहै”इत्यादिक
 प्रमास्थलमेंवेदांतमतमेंप्रतिज्ञान द्वैतकाभेदहोनेसे विषयकाभीभेदमाना
 है औरअन्यवादियोंके मतमेंविषयकाभेदनहींमाना ॥ इसप्रकारकाविवाद
 होनेसे “मूलकारिकामें “भ्रमे” यहपदकथनकियाहै ॥ क्योंकिआगे
 कथनकरनीजोरीतिहै ॥ तिससे भ्रमस्थलमें विषयके भेदका विवाद
 नहीं है ॥ यहां पर यहकथन होताहै ॥ देवदत्त पुरुषके नेत्र
 इन्द्रियकारज्जुरूप अधिष्ठानमेंसंबंधहुएदोपकेवशसेरज्जुकेविशेषरूपको
 नग्रहणकरनेवाली इदमाकारग्रंथस्करणाकीवृत्ति उत्पन्नहोतीहै ॥
 तिसवृत्तिके उत्पन्नहुए पूर्वदृष्टसजातीयवस्तुके संस्कारकेवशसेरज्जु
 अचिच्छन्नइदमाकार देवदत्तकेग्रंथस्करणाकी जोवृत्तिहै ॥ तिसमें
 प्रतिविवृतचैतन्यनिष्ठ यविद्यात्तोभकोप्राप्तहुई सर्पऔतिसकाज्ञान
 रूपताकरपरिणामको प्राप्तहोतीहै ॥ औरवहउत्पन्नहुयासर्प जिसके
 ग्रंथस्करणाकीवृत्तिमेंप्रतिविवृतचैतन्यनिष्ठयविद्याकापरिणामहै। तिसी
 केसन्मुखउत्पन्नहोताहै। औरतिसीकरजानाजाताहै॥क्योंकिसर्पाकार
 वृत्तिकोभीतिसीपुरुषकेग्रंथस्करणाकी वृत्त्युपहितचैतन्यनिष्ठयविद्याका
 कार्यपनाहै ॥ इसदेवदत्तकेदृष्टांतसे भैत्रादिनवपुरुषोंको भिन्नभिन्न
 सर्पभ्रमइसीरीतिसे जानलेना ॥ इसप्रकारभ्रमको प्रतिपुरुषयविद्याका
 परिणामहोनेसेदशपुरुषोंको रज्जुरूप अधिष्ठानमेंएककालमेंहीसर्पभ्रमके
 उदयहुएदशसर्पऔरदशही तिनकेज्ञानउत्पन्नहोतेहैं ॥ तिसप्रकारएक
 सर्पकेअभावहुएभी जैसेतिनको “एकहीसर्पहमसवने अनुभवकियाहै

यहप्रत्यभिज्ञाजैसेस्वरूपसे उत्पन्नहोतीहै तैसेदार्ष्टान्तमेंभीघटादिविषय की एकतासेविनाभी “सोईयहघटादिकहै” इसप्रत्यभिज्ञाकास्वरूपबन सक्ताहै ॥ औरविषयकेअभावहुए प्रमापनाप्रत्यभिज्ञा निष्ठनहींहोगा यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिजैसेविषयके अभावहुएभी दृष्टान्तमें भ्रमरूपप्रत्यभिज्ञा होतीहै ॥ तैसेदार्ष्टान्तमेंभी भ्रमरूप प्रतिभिज्ञाहोतीहै ॥ इति ॥ अथविस्तारपूर्वक श्लोककीव्याख्याकरते हैं ॥ शंका ॥ पूर्वउत्तरीतिसे अज्ञातसत्ताकप्रपंचकेनयंगीकारकरेहुए सुषुप्तिसेजागेहुएपुरुषको “सोईयह प्रपंचहै” ऐसीप्रत्यभिज्ञा होतीहैसो नहींहुईचाहिये ॥ क्योंकिआपकेमतमेंसुषुप्तिसेप्रथमप्रपंचकातथासुषुप्ति सेउत्तरप्रपंचकाभेदहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यहतुह्यारीशंकानहीं संभवती । क्योंकिविशेषदर्शनकेअभावकाकारणजोमंदग्रंधकारतिसमे वर्तमानजोएकहीरज्जुरूपअधिष्ठानहै । तिसमेदशपुरुषोंको एककाल मेसर्पभ्रमहोताहै । तिससेभयभीतहोकरभागतेहुएतिनपुरुषोंकापरस्पर यहसंवादहोताहै “जोसर्पतुमनेअनुभवकियावहीहमनेभीदेखाहै” यहप्रत्य भिज्ञाजैसेभ्रमरूप तिनकोहोतीहै तैसेयहांदार्ष्टान्तमेंभी जानकर संतोष करनेयोग्यहै ॥ शंका ॥ तिनदशपुरुषोंकोभीवह “प्रत्यभिज्ञाएकहीसर्पविषय कक्योंनहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन् तिन पुरुषोंनेभिन्नभिन्नहीसर्पकाअनुभवकियाहैएककानहीं ॥ अर्थयह । देवदत्तपुरुषकीरज्जुविषयकअंतस्कर णकीइदमाकारवृत्तिमेप्रतिबिंबतचैतन्यनिष्ठअविद्याकापरिणामरूपभ्रमकर सिद्धभिन्नहीसर्पदेवदत्तने अनुभवकियाहै । सर्वपुरुषोंनेएकही सर्पनहीं अनुभवकिया । यातेवहप्रत्यभिज्ञाभ्रमरूपहै ॥ शंका ॥ जैसेएकहीघटको सर्वजनअनुभवकरतेहैं । तैसेभ्रमसिद्धविषयकोभीसर्वही जन अनुभव

भिज्ञाहोतीहै । तैसेयहांप्रकरणमेंभीजानो । कालांतमेंहोनेवालेभिन्न
 भिन्नसर्पभ्रममें प्रत्यभिज्ञाकी प्राप्तिहीनहींहोसक्ती । इसलियेयहांमूल
 कारिकामें“युगपत्”यहपदकथनकियाहै ॥ और“यहघटहै”इत्यादिक
 भ्रमस्थलमेंवेदांतमतमेंप्रतिज्ञान द्वैतकाभेदहोनेसे विषयकाभीभेदमाना
 हैऔरअन्यवादियोंके मतमेंविषयकाभेदनहींमाना॥इसप्रकारकाविवाद
 होनेसे “मूलकारिकामें “भ्रमे” यहपदकथनकियाहै ॥ क्योंकिआगे
 कथनकरनीजोरोतिहै ॥ तिससे भ्रमस्थलमें विषयके भेदका विवाद
 नहीं है ॥ यहां पर यहकथन होताहै ॥ देवदत्त पुरुषके नेत्र
 इन्द्रियकारञ्जुरूपअधिष्ठानसेसंबंधहुएदोपकेवशसेरञ्जुकेविशेषरूपको
 नग्रहणाकरनेवाली इदमाकारअंतस्करणाकीवृत्ति उत्पन्नहोतीहै ॥
 तिसवृत्तिके उत्पन्नहुए पूर्वदृष्टसजातीयवस्तुके संस्कारकेवशसेरञ्जु
 अविच्छिन्नइदमाकार देवदत्तकेअंतस्करणाकी जोवृत्तिहै ॥ तिसमें
 प्रतिबिंबतचेतन्यनिष्ठ अविद्याज्ञोभकोप्राप्तहुई सर्पऔरतिसकाज्ञान
 रूपताकरपरिणामको प्राप्तहोतीहै ॥ औरवहउत्पन्नहुआसर्प जिसके
 अंतस्करणाकीवृत्तिमेंप्रतिबिंबतचेतन्यनिष्ठअविद्याकापरिणामहै । तिसी
 केसन्मुखउत्पन्नहोताहै॥ औरतिसीकरजानाजाताहै॥क्योंकिसर्पाकार
 वृत्तिकोभीतिसीपुरुषकेअंतस्करणा की वस्तुपहितचेतन्यनिष्ठअविद्याका
 कार्यपनाहै ॥ इसदेवदत्तकेदृष्टांतसे मैत्रादिनवपुरुषोंको भिन्नभिन्न
 सर्पभ्रमइसीरीतिसे जानलेना ॥ इसप्रकारभ्रमको प्रतिपुरुषअविद्याका
 परिणामहोनेसेदशपुरुषोंको रञ्जुरूपअधिष्ठानमेंएककालमेंहीसर्पभ्रमके
 उदयहुएदशसर्पऔरदशही तिनकेज्ञानउत्पन्नहोतेहैं ॥ तिसप्रकारएक
 सर्पकेअभावहुएभी जैसेतिनको “एकहीसर्पहमसवने अनुभवकियाहै

यहप्रत्यभिज्ञाजैसेस्वरूपसे उत्पन्नहोतीहै तैसेदार्ष्टांतमेंभीघटादिविषय की एकतासेविनाभी “सोईयहघटादिकहै” इसप्रत्यभिज्ञाकास्वरूपबन सकताहै ॥ औरविषयकेअभावहुए प्रमापनाप्रत्यभिज्ञा निष्ठनहींहोगा यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिजैसेविषयके अभावहुएभी दृष्टांतमें भ्रमरूपप्रत्यभिज्ञा होतीहै ॥ तैसेदार्ष्टांतमेंभी भ्रमरूप प्रतिभिज्ञाहोतीहै ॥ इति ॥ अवविस्तारपूर्वक श्लोककीव्याख्याकरते हैं ॥ शंका ॥ पूर्वउत्तरीतिसे अज्ञातसत्ताकपंचकेनअंगीकारकरेहुए सुषुप्तिसेजागेहुएपुरुषको “सोईयह पंचहै” ऐसीप्रत्यभिज्ञा होतीहैसो नहींहुईचाहिये ॥ क्योंकिआपकेमतमेंसुषुप्तिसेमथमपंचकातथासुषुप्ति सेउत्तरपंचकाभेदहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यहतुह्यारीशंकानहीं संभवती । क्योंकिविशेषदर्शनकेअभावकाकारणजोमंदअंधकारतिसमे वर्तमानजोएकहीरज्जुरूपअधिष्ठानहै । तिसमेदशपुरुषोंको एककाल भेसर्पभ्रमहोताहै । तिससेभयभीतहोकरभागतेहुएतिनपुरुषोंकापरस्पर यहसंवादहोताहै “जोसर्पतुमनेअनुभवकियावहीहमनेभीदेखाहै” यहप्रत्यभिज्ञाजैसेभ्रमरूप तिनकोहोतीहै । तैसेयहांदार्ष्टांतमेंभी जानकर संतोष करनेयोग्यहै ॥ शंका ॥ तिनदशपुरुषोंकोभीवह “त्यभिज्ञाएकहीसर्पविषय कक्योंनहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन्तिन पुरुषोंनेभिन्नभिन्नहीसर्पकाअनुभवकियाहैएककानहीं । अर्थयह । देवदत्तपुरुषकीरज्जुविषयकअंतस्करणाकीइदमाकारवृत्तिमेप्रतिबिंबतचैतन्यनिष्ठअविद्याकापरिणामरूपभ्रमकर सिद्धभिन्नहीसर्पदेवदत्तने अनुभवकियाहै । सर्वपुरुषोंनेएकही सर्पनहीं अनुभवकिया । यातेवहप्रत्यभिज्ञाभ्रमरूपहै ॥ शंका ॥ जैसेएकहीघटको सर्वजनअनुभवकरतेहैं । तैसेभ्रमसिद्धविषयकोभीसर्वहीजन अनुभव

करलेंगे। इसमेकौनबाधकहै ॥समाधान॥ हेवादिन्अन्यपुरुषकेभ्रमकर सिद्धविषयकाअन्यपुरुषकोज्ञाननहींहोसकता । क्योंकिदेवदत्तकेअंत-
स्करणाकीवृत्तिमेप्रतिबिंबतचैतन्यनिष्ठअविद्याकापरिणामरूपजोभ्रमहै।
वह देवदत्तसेभिन्नयज्ञदत्तकेअंतःकरणाकी वृत्तिसेजाननाकठिनहैयाते
अन्यकेभ्रमकाविषयअन्यकोप्रत्यक्षनहींहोसकता ॥ शंका ॥ पूर्वउक्त
श्रुक्तिसेसर्पादिकभ्रममे यदिविषयकाभेदहै। तोसर्पादिकोंकेअभेदका
अनुभवकैसेहोताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्दशपुरुषोंकेभ्रमकरसिद्ध
दशसर्पोंको अत्यंतसादृश्यहोनेकरपरस्परतिनकाभेद ग्रहणनहींहोता
इसीसेतहांअभेदविषयकप्रत्यभिज्ञाहोतीहै ॥ एकहीसर्पहम सवनेअनु-
भवकियाहै।।ऐसेहीजाग्रत अवस्थामेनानाप्रकारकेप्रपंचकोयहपुरुषअनुभ-
वकरकेसुषुप्तिअवस्थाकोप्राप्तहोताहै। औरपुनःतिससेउठकरजोयहप्रपंचका
अनुभवहोताहै।वहअनुभवदूसरेप्रपंचकोहीविषयकरताहै। और“सोईयहप्र-
पंचहै”ऐसीप्रत्यभिज्ञातोदोनोंप्रपंचोंकोअत्यंतसादृश्यहोनेकरतिनकाभेद
नग्रहणहोनेसेभ्रमरूपहोतीहै।।यद्यपिजाग्रत अवस्थामेही वृत्तिकोशीघ्र
विनाशीहोनेकर तिसके समानयोग्यक्षेमवाले प्रपंचकाभी नाशसिद्ध
करनाउचितथाअवस्थाओंमेप्रपंचकाभेदसिद्धकरनेसेक्याप्रयोजनहै ॥
तथापिभिज्जुपादप्रसारणन्यायकोआश्रयणकरके अवस्थाओंमेप्रपंचका
भेदसिद्धकियाहै ॥ पूर्वउक्तन्यायका यहअर्थहै ॥ जैसेकिसीभिज्जुको
जबकिसीधनिककेगृहमेप्रवेशकाअवसरमिलजावे।तोपादप्रसारणअर्थात्
अनेकपदार्थउससेमांगलेताहै।तैसेहीअवस्थाओंमेप्रथमजबप्रपंचकाभेद
सिद्धहोजाएगा तोजाग्रतअवस्थामेप्रपंचकाभेदज्ञानज्ञानप्रतिभीसिद्ध
करसकतेहैं ॥ यातेपूर्वकथनउचितहीहै ॥ इति ॥

✽ शंकापूर्वकसुषुप्तिमेप्रपंचाऽभावकीबोधकता
श्रुतिकेदेवताधिकरणान्यायकीरीतिसेनिरूपण ✽

शंका ॥ हेसिद्धांतिन् प्रत्यभिज्ञातो हमदोनोंकोस्वीकारहै ॥
परन्तुतिसकोभ्रमरूपतायुक्तनहीं ॥ क्योंकिबाधकप्रमाणकाअभावहै।
विषयकेबाधविनाज्ञानको भ्रमरूपतानहींसंभवती॥ औरदशसपोंकीप्रत्य
भिज्ञामेकथनकीहुईयुक्तिभीतिसकाबाधकनहीं ॥ क्योंकि मूलप्रमाण
केअभावसेयुक्तिको आभासरूपताहै ॥ यातेप्रत्यभिज्ञाको प्रमाणरूप
होनेसेअवस्थाओंमेप्रपंचकाभेदनहीं सिद्धहोसक्ता। किन्तु तिनमेभी
प्रपंचकाअभेदअनुभवहोनेसे प्रपंचकाएकत्वही सिद्धहोताहै ॥ इसी
अभिप्राय से सुषुप्ति मे प्रपंचलीन होजाताहै इसमेकोईप्रमाणनहीं ॥
समाधान ॥ हेवादिन्साक्षात्श्रुतिवचनहीसुषुप्तिमेप्रपंचकेविलयहोने
मेप्रमाणहै ॥ सोदिखलातेहैं ॥

✽ पश्यन्वैतत् ✽

(वृ० उ० अ० ६ ब्रा० ३।२३)

अ० ॥ सुषुप्तिअवस्थामेभी आत्माद्रष्टाहीहै ॥ इसकथनसेयह
आशंकाहोतीहै ॥ व्यापारवालेचक्षुआदिकरणोंकासुषुप्तिमेअभावहोने
सेहमयहनिश्चयकरतेहैं ॥ जोसुषुप्तिमेआत्माद्रष्टानहीं किन्तुजडहै ॥
इसशंकाकाआपहीश्रुतिसमाधानकरतीहै ॥

✽ नहिद्रष्टुदृष्टेर्विपरिलोपोविद्यतेऽविनाशित्वात् ✽

वृ० उ० अ० ६ ब्रा० ३।२३ ॥

अ० ॥ “द्रष्टुः” कहियेआत्माको “अविनाशित्वात्” कहिये

मू० ॥ सर्पभ्रमाद्विशेषोऽस्तिजाग्रद्वोधेऽन्यथाकथम् ।

इन्द्रियादेरुपादानंतदभावेयतो नधीः १३ ॥

हरगीतका० ॥ सर्पभ्रमतेहै विलक्षण बोधजाग्रतजानीए ॥

होइन्द्रियनकोग्रहणकैसेऐसजोनहिमानिए ॥ इन्दीनके अभावतेनहीं
बोधजाग्रतहोकही ॥ याहेतुतेलखइन्द्रियनकोबोधप्रतिकारणसही ॥१४॥

टी० ॥ हेसिद्धांतिन् सर्पादिकोंको अपनेअपने भ्रमकर सिद्ध
होनेकर प्रातिभासिकपनाहो ॥ ॥ परन्तुजाग्रतादि प्रपंचकोतोभ्रांति
कर सिद्धपना नहीं क्योंकि वह इन्द्रिय जन्य प्रमाका विषयहै ॥ यदि
इन्द्रिय जन्य प्रमा की अविषयता प्रपंच निष्ठ मानोगे तो घटादिप्रपंच
के ज्ञान अर्थ इन्द्रियादिकों का ग्रहण कोईकैसे करेगा ॥

शंका ॥ हेवादिन् भ्रमसिद्धप्रपंचहै ऐसेकहनेवाले वादीकेपूति
इन्द्रियादिकोंकोप्रपंचज्ञानकेप्रतिकारणपनाहीअसिद्धहै ॥ समाधान ॥
हेसिद्धांतिन् इन्द्रियोंके अभावहुए जिस कारणसे प्रपंचज्ञाननहींहो
सक्ता इसीसे इन्द्रियकारणहैं ॥ यहाँयहअनुमानजानना ।

❀ जाग्रतादिप्रपंचज्ञानं भ्रमज्ञानादिलक्षणां ऐन्द्रियकत्वात्

यन्नैवं तन्नैवं यथाभ्रमज्ञानं ❀

अ० ॥ जाग्रतादिप्रपंचकाजोज्ञानहै । सोभ्रमज्ञानमेविलक्षणहै ।
इन्द्रियजन्यज्ञानहोनेसे ॥ जोजोज्ञानभ्रमज्ञानसे विलक्षणहै ॥
सोसोज्ञानइन्द्रियजन्यभीनहीं है जैसेरज्जुमर्पादि भ्रमज्ञानहै ॥ इति ॥
अबपूर्वकथनकियेहुए अर्थकोविस्तारसे निरूपणकरतेहैं ॥ पूर्वउक्त
युक्तिसेप्रपंचको भ्रममात्रशरीरहोनेकर प्रातीतिकसत्ताके सिद्धहुएभी
रज्जुसर्पकेज्ञानसे आकाशादिप्रपंचकेज्ञानमें कोईकविलक्षणताहै ॥

शंका ॥ हेवादिन् अपंचज्ञानमें अविद्याजन्यत्व औऱ् अर्थगोचरत्वरज्जु सर्पज्ञानके तुल्यहोनेसेकैसे तिसमेंरज्जुसर्पज्ञानसे विलक्षणताहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् कारणाकृत तथा विषयकृत पूपंचज्ञान में रज्जुसर्पज्ञानसे विलक्षणता है ॥ तैसे ही दिखलाते हैं ॥ पूपंच ज्ञान में प्रत्यक्षादि श्रमाणाको कारणाताहै और अविद्याको कारणाताकाअभावहै ॥ यही सर्पज्ञानसे अपंचज्ञानमे विलक्षणता है औरसर्पज्ञानमेंअविद्याकोकारणाताहै औरप्रत्यक्षादिश्रमाणाकोकारणाता नहीं॥यहीअपंचज्ञानसे सर्पज्ञानमेंविलक्षणताहै ॥ इसप्रकारतिनदोनों ज्ञानोंमेंकारणाकृतविशेषताहै॥अवतिनदोनोंज्ञानोंमेंविषयकृतविलक्षणता कहतेहैं ॥ जैसेअज्ञातसत्ताकअर्थको इन्द्रियादिजन्यज्ञानविषयकरताहै तैसेहीअर्थको अविद्या जन्यभूमभी विषय करताहै यहनहीं संभवता असंभवमें हेतुकहतेहैं ॥ ज्ञानमात्रशरीरहोनेकर भूमसेपूर्वविषयकी सत्यताकाअभावहै ॥ औरभूमकेविषयसे इन्द्रियादिजन्यज्ञानकेविषय मेंविशेषताहै॥ क्योंकिइन्द्रियादिकोंसे उत्पन्नदृष्टज्ञानकोसन्निकर्पादि जन्यहोनेकरज्ञानसे पूर्वविषयकीसत्ता अवश्यकहनेयोग्यहै । अर्थयह प्रत्यक्षज्ञानकोइन्द्रियऔऱ् अर्थ केसन्निकर्पजन्यहोनेसे तिसज्ञानसेप्रथम तिसकाकारणरूपताकरसन्निकर्पकीसिद्धिअवश्यकहनेयोग्यहै।औरतिस सन्निकर्पकाआधाररूपताकरज्ञानसे पूर्वचक्षुकी न्याईविषयकीसत्ताभी अवश्यकहनेयोग्यहै ॥ औरअनुमितिरूपज्ञानको लिंगज्ञानजन्यत्व कानियमहै॥औरलिंगको पक्षतथाव्याप्तिकरघटितपनाहै औरपक्षतथा व्याप्तिकोसाध्यकर घटितपनाहै तिसीसे अनुमितिज्ञानसेअध्यम साध्य कीसत्ताअवश्य अन्वेषणकरनेयोग्यहै ॥ औरयदिसिद्धांतीऐसेकहे !

❀ अयमाश्रवृक्षः फलवान्भविष्यति । आमृत्वेसति
वर्द्धमानत्वात् ॥ संप्रतिपन्नामृवत् ॥ ❀

अ० ॥ यहआप्रकावृक्ष फलवाला होगा आप्र हुआवर्द्धमान् होनेसे ॥ प्रसिद्धआप्रकीन्याई ॥ इसभविष्यत् अर्थकोविषयकरने वालीअनुमितिमें व्यभिचारहै ॥ क्योंकिअर्थसे विनाभीज्ञान होगया सोयहकथनभीनहींसंभवा ॥ क्योंकितिसअनुमानमेंभीभविष्यत्अर्थको अनुमितिसेप्रथमही विद्यमानताहै अर्थात् विद्यमान प्रागभावकाप्रति योगिरूपताकर अनुमितिसे पूर्वभविष्यत्अर्थकी विद्यमानताहै ॥ याते अनुमितिसेपूर्व भविष्यत् अर्थ नहींहै यह कथन असंगत है ॥ और भविष्यत्अर्थकाअभाव मानेहुएवर्तमान अर्थवाली अनुमितिकीही प्राप्तिहोगी तिसकर भविष्यत्अर्थकअनुमितिका लोप होजाएगा ॥ इसप्रकारअनुमितिसेपूर्व अर्थको विद्यमान होनेकर भविष्यत् अर्थक अनुमितिमेंकैसे व्यभिचार होसकताहै ॥ इति ॥ औरशाब्द ज्ञानको शब्दऔरअर्थकवाच्यवाचकरूपसंबंधज्ञानकर जन्यहोनेसे शब्दकर्णक ज्ञानसेप्रथमहीअर्थकीसत्ताभीऊहाकरनेयोग्यहै ॥ यातेइन्द्रियादिजन्य ज्ञानसेप्रथमविषयकीसत्ताअवश्यकहनेयोग्यहै ॥ यहीभ्रमज्ञानसेप्रपंच ज्ञानमेंविलक्षणताहै ॥ औरअन्वयव्यतिरेकरूपप्रमाणकरकेइन्द्रियादि कोंकोप्रपंचज्ञानकेप्रतिकारणता सिद्धहोनेसे प्रपंचमिथ्यात्ववादीनेभी तिनकार्य कारणभावअवश्य अंगीकार कियाचाहिये ॥ शंका ॥ हेवादिन् प्रपंचज्ञानमें भ्रमज्ञानसे विलक्षणता यद्यपिहो तथापिइससे तुम्हाराकौनइष्टसिद्धहुआ ॥ समाधान ॥ हेसिद्धातिन् पूर्वउक्तयुक्ति सेज्ञानसेपूर्वअर्थकी सत्ता अवश्यस्वीकार करनेयोग्यहोनेसे प्रपंचकी

अज्ञातसत्ताअवश्यस्वीकारकरनेयोग्यहै ॥ अन्यथाभ्रमसेविलक्षणता नहींसंभवैगी ॥ अर्थयह प्रपंचज्ञानकी उत्पत्तिसेअथम प्रपंचरूपविषय कीसत्तानमानेहुएप्रपंचरूपविषयतथा इन्द्रियकेसन्निकर्षकोज्ञानके प्रति कारणातानहींहोगी किन्तुअविद्याकारणकत्वमात्रता प्रपंचमेप्राप्तहोने करभ्रमरूपताहीहोगी। भ्रमसेविलक्ष्णतानहींसिद्धहोगी ॥ याते प्रपंच कीअज्ञातसत्ताअवश्यमाननीचाहियो।यहीहमाराइष्टसिद्धहुथा१३॥इति

❀ पूर्वअर्थकेअनुवादपूर्वकइन्द्रियादिकोंकोप्रपंचज्ञान केप्रतिकारणाताकाखंडन ❀

समाधान॥ हेवादिन्आकाशादि रूपप्रपंचज्ञानकेप्रति इन्द्रियादिकोंको कारणाताहोनेकर भ्रमज्ञानसे तिसकीविलक्षणताहै तिसविलक्षणताके उपपादनअर्थप्रपंचकीअज्ञातसत्ता माननेयोग्यहै ॥ यहअर्थलुमनेपूर्व निरूपणकिया।सो नहींसंभवता ॥ क्योंकि

मू० ॥ इन्द्रियाणांकारणात्वेभवेच्चोदंतदातव ।

स्वप्नभ्रमेयथातेषामन्वयव्यतिरेकधीः ॥१४॥

वसंततिलकका० ॥ इन्द्रीनकारणयदाभवतोसुजाना।तौहोत कालपनकातुमरीप्रमाना॥ स्वप्नेभ्रमेजसतिनांकरणोदिखाना ॥ तैसे सुज्ञानव्यतिरेक अन्वेवखाना ॥ १५ ॥

टी० ॥ इन्द्रियोंको यदि प्रपंचज्ञानकीकारणाताहो।तोतुम्हारा विकल्पवने औरआगे कथनकीहुईरीतिसेइन्द्रियोंको प्रपंचज्ञानकेप्रति कारणाताअसिद्धहै ॥ औरजोपूर्वप्रपंचज्ञानकेप्रतिइन्द्रियोंकी कारणाता काग्राहक अन्वयव्यतिरेकरूपप्रमाणकहाथा वहभीभ्रमरूपहै क्योंकि

जैसे स्वप्नभ्रममे इन्द्रियोंका अन्वयव्यतिरेक भ्रमसे प्रतीत होता है। तैसे जाग्रत मे भी जानना ॥ इति ॥ अत्र वही अर्थको विस्तारसे निरूपण करते हैं ॥

हेवादिन् इन्द्रियादिकोंको वास्तवसे प्रपंचज्ञानकी कारणतानहीं संभवती । किसहेतुसे इन्द्रियादिकोंको प्रपंचज्ञानकी कारणतानहीं ? ऐसी जिज्ञासाके हुए कहते हैं । हेवादिन् तिन इन्द्रियोंको ज्ञानके प्रति जो कारणता है तिसमें यह विचार करने योग्य है ।

❀ विनाकार्यन कारणं ॥ ❀

अ० ॥ कार्यसे विना कारण नहीं कहा जाता ॥ इसन्यायसे इन्द्रियनिष्ठकारणता ज्ञाननिष्ठकार्यताके आधीन कहने योग्य है । और सो कार्यतानिरूपण करनी कठिन है । याते कार्यताकर निरूपण करने योग्य इन्द्रियनिष्ठ कारणता भी अलीक है ।

❀ अथ प्रमानिष्ठकार्यताकी दुर्निरूप्यतानिरूपण ❀

अत्र इन्द्रियनिष्ठकारणताके निषेधार्थ प्रमानिष्ठ कार्यताकी दुर्निरूप्यता उपपादन करनेके लिये विकल्प करते हैं । हेवादिन् क्या ? इन्द्रियादिकोंको प्रमामात्रकी कारणता है । अथवा भ्रम तथा प्रमारूपसाधारण ज्ञानमात्रमें तिनको कारणता है । अथवा भ्रममात्रमें तिनको कारणता है ॥ यहां प्रथम विकल्पमें यद्यपि प्रमामात्रमें इन्द्रियोंको कारणता नहीं संभवती ॥ क्योंकि ईश्वर प्रमामें व्यभिचार है ॥ तहां इन्द्रियोंको कारणता नहीं ॥ याते प्रथम विकल्प असंगत है ॥ तथापि यहां “मात्रत्र” प्रत्ययका अवधारणार्थ है ॥ कात्सर्यन्यार्थ नहीं ॥ अर्थ यह प्रमाकी कारणता है कोई संपूर्ण प्रमाकी कारणतानहीं । याते प्रथम विकल्प संभवता है ॥ और दूसरे विकल्पमें भी “मात्रत्र” प्रत्ययका अवधारणार्थ ही जानना ।

इति ॥ प्रमामात्रमें इंद्रियादिकोंको कारणाताहै । यहप्रथमपक्षनहीं
संभवता । क्योंकिइंद्रियादिजन्य ज्ञानमेंजोप्रमात्वहै ॥ वहभ्रमके
विषयसेभिन्नअर्थ विषयत्वरूपताकर सिद्धकरनेयोग्यहै ॥ अर्थात्
भ्रमकेविषयसेभिन्न अर्थकोविषयकरनेवालाज्ञान प्रमाकहाचाहिये ॥
औरभ्रमकेविषयसे भिन्नअर्थत्व प्रमाज्ञानकी विषयताकर सिद्धकरने
योग्यहै । अर्थयहप्रमाज्ञानका जोविषयहैवहभ्रमके विषयसेभिन्न
अर्थकहनेयोग्यहै । ऐसेमानेहुएअन्यो ऽन्याश्रयदोषस्पष्टहीप्राप्तहोता
है।सोदिखलातेहैं।भ्रमकेविषयसेभिन्नअर्थकाज्ञानप्रमाज्ञानकेआधीनहै।
औरप्रमात्वकाज्ञान भ्रमकेविषयसे भिन्नअर्थकेज्ञानके आधीनहै ॥
इसीसेप्रमाकाज्ञान दुर्घटहोनेकरतिसके प्रतिइंद्रियादिकोंकोकारणातातो
अतिदुर्निरूप्यहै यहभावहै । इसीमेंऔरदूषणकहतेहैं । औरहेवादिन्
अर्थको भ्रमविषयसे भिन्नपनेमें प्रमाविषयत्व साधकनहीं क्योंकि
“मिथ्याहीयहरजत भानहुया” इसप्रमानेमिथ्याभृत रजतकोभीविषय
कियाहै । अर्थात्इसप्रमाके विषयरजतको भ्रमका असंबंधिपनानहीं
देखा याते प्रमाज्ञानकी विषयताअर्थके सत्यत्वकाअर्थात्भ्रमज्ञानकी
अविषयताकाप्रयोजकनहीं ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्अर्थकोभ्रमसेव्या
वृत्तत्वप्रमाज्ञानकी विषयताकरहमनहींसिद्धकरते जिससे अन्योऽन्या-
श्रयदोषतथा व्यभिचारदोषहो किन्तु अबाधितत्वरूपतासे हमभ्रमसे
भिन्नत्वअर्थमेसिद्धकरतेहैं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् ॥

❀ अतोऽन्यदार्त्तं नेहनानास्ति किंचित ❀

इत्यादिक श्रुतियोंकरद्वैतको मिथ्यापनावोधन होनेसेविषयमे
अबाधितत्वकी असिद्धिहै यातेपूर्वउक्तदोषदूर नहींहोसकते इसप्रकार

नेत्रादिकोंको प्रमाज्ञानकी करणता रूपप्रमाणाता स्वीकार करके प्रमाका ज्ञानकठिन होनेकरतिसकरनिरूपित इन्द्रियादि निष्ठकारणता का ज्ञानतो अत्यंत कठिन है ॥ यह अर्थ पूर्व निरूपण किया ॥

❖ अथ प्रमाणके विषयविवेचनपूर्वक चक्षु
आदिकोंमें प्रमाणाताका खंडन ❖

अव इंद्रियादिकोंमें प्रमाणाताका ही अभाव है इस अर्थको निरूपण करते हैं ॥ किंवा ॥ हेवादिन् ।

❖ अनधिगतार्थ गंतृप्रमाणां ❖

अ० । अज्ञात अर्थका ज्ञापक प्रमाण होता है । यह प्रमाणके जाननेवालोंकी मर्यादा है । और अज्ञात अर्थ विषयक अनुभवकी उत्पत्तिद्वारा इंद्रियोंको अज्ञात अर्थकी विषयता कहने योग्य है ॥ शंका ॥ हेसिद्धांति प्रमाणोंको अज्ञात अर्थविषयक माननेमें कोई दोष नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अज्ञातगोचरतातिनको ज्ञमानो गेतो अधिष्ठान मात्रविषयत्वही तिनको प्राप्त होगा क्योंकि अधिष्ठानमें ही अज्ञातता है । अधिष्ठानमें ही प्रमाणोंकी विषयताकिस हेतुसे है ऐसी आर्कात्ताके हुए कहते हैं ॥ निश्चयकर प्रमाणोंका विषय अज्ञात ही होता है । वह अज्ञातत्व अधिष्ठानमें ही है प्रपंचमें नहीं क्योंकि तिस प्रपंचको जड होनेकर स्वभावसे ही आवृत्तपना है ॥ पुनः तिसमें अज्ञानकी विषयतारूप अज्ञातता कल्पनमें कोई प्रयोजन नहीं ॥ भाव यह कि अज्ञानकी विषयताका प्रयोजन आवरणकरना था सो आवरणजड प्रपंचमें प्रथम ही स्वभावसिद्ध है । यहाँ यह अनुमान जानना ।

● विमतः प्रपंचोनाज्ञातः जडत्वात् ।

व्यतिरेकेण आत्मवत् ॥ ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजोप्रपंचहै ॥ वहअज्ञातनहीं ॥ जडहोनेसे जोजोअज्ञातहैसोसोजडभीनहीं ॥ जैसेआत्माहै ॥ इति ॥ यद्यपि 'अज्ञातोघटः' इसप्रत्यक्षअनुभवकाविरोधहोगा ॥ तथापिअज्ञानकेसहित घटादिकोंका साक्षिचेतनमे अध्यासहोनेकर तिसप्रतीति काअन्यथा संभवहै ॥ भावयहसाक्षिचेतनमेअज्ञानऔरघटदोनों अध्येस्तहोनेकर तिनकासामानाधिकरारहै ॥ तिससंबंधसेघटनिष्ठभीअज्ञातताप्रतीति होतीहै ॥ वास्तवसेघटाज्ञानकाविषयनहीं ॥ यातेप्रत्यक्षकोभ्रमरूपता होनेकरतिसकाविरोधनहीं ॥ शंका ॥ अधिष्ठानहींअज्ञानकाविषयहो ॥ और तिममेप्रमाणोंकीभीविषयताहो ॥ तोभीप्रपंचकाएकदेशजोशुक्तिरज्जुमरु भूम्यादिकहैं ॥ तिनकोरजतादिकोंकाअधिष्ठानहोनेकरअज्ञातताहोने सेइंद्रियोंकीविषयता तिनमेप्राप्तहुई ॥ समाधान ॥ हेवादिन्तैसेमाने हुएअधिष्ठानताएकचिदात्मामेहीविश्रांतिकोप्राप्तहोतीहै ॥ औरमिथ्या रजतादिकों को भी शुक्ति आदि अवच्छिन्न चेतन निष्ठ अविद्याका परिणाम होने से चेतन ही सर्वत्र भ्रमों का अधिष्ठान है ॥ शुक्ति आदिक नहीं । याते सर्वाधिष्ठान प्रत्यक् आत्मा विषयक इन्द्रियों कोप्रमाणताहै यहकहनेयोग्यहै । औरप्रत्यक्आत्मविषयत्वरूपतासे तिनकोप्रमाणता नहींसंभवती । क्योंकिप्रत्यगात्मा इन्द्रियोंकाअविषयहै । अनिर्वचनीयप्रकाशने योग्यविषयोंसे विपरीतरूपतासेअर्थात् सत्त्वित्थानंदादिरूपतासेप्रकाशकरतेहुएकीन्याईजोप्रतीतहो । तिस कोप्रत्यक्कहतेहैं । वहप्रत्यक्हीआत्माहै तैसेमानेहुएअपने प्रकाशके

अर्थ आत्मा इन्द्रियोंकी अपेक्षा नहीं करता ॥ शंका ॥ स्व आश्रित अज्ञानकी निवृत्ति करनेवाली स्वविषयक जो वृत्ति है । तिसकी उत्पत्ति केलिये इन्द्रियोंकी अपेक्षा आत्मा करेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अज्ञानकी निवृत्तिके अर्थ आत्मा इन्द्रियोंकी अपेक्षा करता है । यह तुम्हारा कथन यद्यपि सत्य है । तथापि इन्द्रियोंकी आत्मामें प्रवृत्ति नहीं हो सकती ॥ क्योंकि रूपादि गुणोंको सन्मुखकरके प्रसिद्ध इन्द्रियोंकी प्रवृत्ति होती है ॥ अर्थ यह रूपादि धर्मविशिष्टमें इन्द्रिय प्रवृत्त होते हैं । और आत्मारूपादि धर्मसे रहित निर्धर्मक है ॥ ऐसा श्रुतिमें सुना है तिस कारणसे इन्द्रियोंकी विषयता आत्मामें युक्त नहीं ॥ रूपादि धर्म रहित आत्मामें इन्द्रिय प्रवृत्त नहीं होते इस अर्थमें श्रुतिभी प्रमाण है ॥ सो श्रुति यह है ॥

* परांचि खानि व्यतृणात् स्वयंभूः तस्मात्

परांङ् पश्यति नांतरात्मन् * (क० उ० व० ४११)

अ० ॥ (“स्वयंभूः”) परमात्मा (परांचि) बाह्य वस्तुओंको विषय करनेवाले (खानि) इन्द्रियोंको (व्यतृणात्) हिंसा करता भया ॥ भाव यह बाह्य वस्तुके विषय करनेका स्वभाव तिनका ईश्वरने रचना किया है ॥ याते अनात्मदर्शनकी साधनताही तिनका हिंसन अर्थात् मारना है । (तस्मात्) जिस कारणसे इन्द्रिय बाह्य वस्तुको ही विषय करते हैं तिसी कारणसे सकल जन इन्द्रियोंसे (परांङ्) अनात्म पदार्थोंको ही (पश्यति) देखता है ॥ और (नांतरात्मन्) सर्वसे अंतर आत्माको निर्धर्मक होनेसे कोई तिसको नहीं देखसक्ता ॥ इति ॥

इसप्रकारपूर्वउक्तयुक्तिसे जैसे प्रपंचज्ञानमें इंद्रियों को साधनताका अभावहै ॥ तैसेउक्तश्रुतिसे आत्मज्ञानमेंभीतिनको साधनताका अभावहोनेसेकहींभी इंद्रियोंकोप्रमाणतानहीं यहभावहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् "तस्मात्पराङ्पश्यति" यह श्रुतिइंद्रियोंकोप्रपंचज्ञानकी कारणताभतिपादनकरतीहुई तिनकोप्रपंच विषयत्वदिखलातीहै। याते किसरीतिसेतिनमें प्रमाणताकाअभाव तुमकहतेहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यहश्रुतिइंद्रियोंकोप्रपंचविषयत्वके दिखलानेमें तात्पर्यवाली है यहतुमकहतेहो ॥ अथवाइंद्रियोंकोप्रपंचविषयत्वकाअनुवादकरके आत्मामेंइंद्रियोंकी अविषयताभतिपादनमें तात्पर्यवालीहै ॥ मथम पक्षतोनहीं संभवता क्योंकिनिष्फलतथा ज्ञातार्थके भतिपादनमें श्रुतिकेतात्पर्यकी अयोग्यतहै। औरद्वितीयपक्षमेंभीयहविचारकरनेयोग्य है। अनुवादक्या? प्रमाणसिद्धकाश्रुतिकरतीहै। अथवाभ्रमसिद्धकाकरती प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिप्रपंचप्रमाकेप्रतिइंद्रियोंमेंकारणता केग्राहकप्रमाणरूपतासे अंगीकारकिये जोअन्वयव्यतिरेकादिहैं तिन कीआगेकथनकी हुईरीतिसे अन्यथाहीउपपत्तिहै ॥ औरभ्रमसिद्धके अनुवादपक्षमें इंद्रियोंकोप्रपंचविषयकप्रमाकीकारणतारूपसेप्रमाणाता नहींसंभवती ॥ जैसेस्वाप्नज्ञानके प्रति इंद्रियोंका अन्वयव्यतिरेकभ्रम रूपहै ॥ तैसेजाग्रतमेंभ्रमरूपअन्वयव्यतिरेककर सिद्धजोप्रपंचज्ञानकी इंद्रियोंकोकारणताहै तिसकाअनुवादकरकेआत्मामेंइंद्रियोंकीविषयता काअभावदिखलानेमेंश्रुतिकातात्पर्यहै ॥ यातेप्रपंचप्रमाकेप्रतिइंद्रियों कोकारणताकेनहोनेसे प्रमाणाताकाअभावहै ॥ इसप्रकार प्रामात्रमे

इंद्रियोंकोकारणताहै ॥ यहप्रथमपक्षथा । सोप्रमात्वकेनिरूपणकीकठि-
 नताहोनेकर तिसप्रमांनिष्ठकार्यता निरूपितकारणता तिनइंद्रियोंमेन
 ग्रहणहोनेसे और प्रमाकीकरणताकातिनमेअभाव होनेसेनहीं संभवता
 यहपूर्वकथनकिया ॥ औरइंद्रियोंकोप्रमाज्ञानकीकरणताकाअभावरूप
 जोहेतुहै तिसकरभ्रमप्रमासाधारणज्ञानमात्रमेइंद्रियोंको कारणताहै ॥
 यहद्वितीयपक्षभीनिरासहुआ । क्योंकिपूर्वउत्तरीतिसेप्रमाकी कारणता
 इंद्रियोंमेनिरूपण नहींहोसकती ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिनपूर्वउत्तरीति
 सेभ्रमप्रमासाधारणज्ञानमात्रमेइंद्रियोंकोकारणताकेअभावहुएभ्रममात्र
 मेतिनकोकारणताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्वहवृतीयपक्षभीअसंगतहै
 क्योंकियहएकदेशीकाविकल्पहैअथवानैयायिकादिकोंकाहै । यहविचार
 करनेयोग्यहै ॥ तिनमेप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥ क्योंकिभ्रमज्ञानकोअविद्या
 मात्रकारणकत्वतुमनेआपहीपूर्वकथनकियाहै ॥ यदिइंद्रियोंकोभ्रमज्ञान
 केप्रतिकारणमानोगे तोअपनेकथनकाविरोधप्राप्तहोगा ॥ औरद्वितीय
 पक्षमेतिननैयायिकादिकोंसे हमयहपूछतेहैं ॥ इंद्रियोंको भ्रमज्ञानकी
 कारणताकाग्राहकप्रमाणअन्यव्यतिरेकहीहै । अथवाकोईअन्यप्रमाणहै
 प्रथमपक्षतो नहीसंभवता ॥ क्योंकिजेसेस्वप्नमेइंद्रियोंकीप्रवृत्तिकेअभाव
 हुएभीइंद्रियोंकाअन्यव्यतिरेकज्ञानकेप्रतिदेखनेमेआताहै । वहअन्वय
 व्यतिरेकअप्रमाणरूपहोनेकरकारणताकाग्राहकनहींहोसकता ॥ तैसे
 जाग्रतमेभीइंद्रियोंका अन्वयव्यतिरेकज्ञानकेप्रतितिनको कारणताका
 ग्राहकनहीं ॥ औरकारणताकाग्राहक कोईअन्यप्रमाणहै यहद्वितीय
 पक्षभीनहींसंभवता क्योंकितिसकीअप्रतीतिहै ॥ शंका ॥

रूपोपलब्धिःकरणसाध्या क्रियात्वात् ॥

छिदिक्रियावत् ॥

अ० ॥ रूपकाजोज्ञानहैवहकरणसाध्यहै । क्रियारूपहोनेसे । जोजोक्रिया होतीहैवहकरणसाध्यहोतीहै जैसेछेदनरूपक्रियाहै ॥ इति ॥ इत्यादिक अनुमान नेत्रादिकोंको प्रपंचस्वरूप रूपादिकोंकी उपलब्धिके प्रतिकारणताकेग्राहकहैं । याते प्रमाणका अभाव कथन नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादिउपलब्धिशब्दसेस्फुरणरूपशुद्धचेतनमात्रकहतेहो अथवावृत्तिरूपज्ञानकहतेहो अथवावृत्त्युपहितचेतनकोकहतेहो ॥ प्रथम पक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकि

✽ नित्यंविज्ञानं ✽

अ० ॥ नित्यविज्ञानस्वरूपहै ॥ इसश्रुतिसे चेतनस्वरूपज्ञान कोनित्यत्वसिद्धहुएकरणकीअपेक्षानहींहै ॥ औरयदिद्वितीयपक्षकहो तोवहवृत्तिरूपउपलब्धिकरणसेरहितहुईहीअनुमानमेपक्षहै अथवानेत्रसेभिन्नकरणवालीहुईपक्षहै ॥ अथवानेत्ररूपकरणवालीहुईपक्षहै ॥ प्रथमऔर्द्वितीयपक्षतोनहींसंभवते ॥ क्योंकिउपलब्धिको अकरणिक मानेहुएअथवाचक्षुभिन्नकरणिक मानेहुए करणसाध्यत्वरूपसाध्यका अभावहोनेसेअनुमानमेत्राध्याप्तहोगा ॥ औरतृतीयपक्षमेअन्योऽन्याश्रयदोषकीगतिहै ॥ सोऐसेहै ॥ चक्षुहैकरणजिसकाऐसीवृत्तिकेसिद्ध हुएचक्षुकरणिक उपलब्धि रूप पक्षवाले अनुमानकी भ्रुत्तिहोगी ॥ और अनुमान के भ्रुत्त हुए चक्षु करणिक वृत्ति की सिद्धि होगी ॥ इस प्रकार वृत्तिको पक्षत्वके अभावसे ही वृत्ति उपहित चेतनको भीपक्षपानहींसंभवता क्योंकितिसमेभी अन्योऽन्याश्रय दोषहीगप्त होताहै ॥ औरपूर्वउक्तविकल्पोंकोत्यागकर उपलब्धिमात्रकोपक्षकहो

तोवहभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि

❀ तस्मादापिपृष्टत उपस्पृष्टोमनसाविजानाति ❀

वृ० उ० अ० ३ ब्रा० ५॥३

अ० ॥ तिससेभीपृष्टसेसमीपस्पर्शहुएपदार्थकोमनसेयहपुल्ल
जानलेताहै ॥ इसश्रुतिसेमनकी स्वतंत्ररूपतासे बाह्यभृतिसिद्धहै ॥
यातेरूपादिउपलब्धिनेत्रादिकरणसाध्यनहीं किन्तुमनोजन्यहै अथवा
अविद्याजन्यहै ॥ औरयहांयहअनुमानभीजानना ॥

विमतंचक्षुर्नरूपस्यतदाश्रयद्रव्यस्यवाग्राहकं असा
धारणोद्रियत्वात् ॥ घ्राणादिवत् ॥

अ० ॥ विवादकाविषयजोनेत्रइन्द्रियहै । वहरूपऔरतिसके
आश्रयभूतद्रव्यकाग्राहकनहीं॥असाधारणइन्द्रियहोनेसे । जोजोअसा
धारणइन्द्रियहै।सोसोरूपऔरतिसके आश्रयभूतद्रव्यकाग्राहकनहींहै।
जैसेघ्राणादिकइंद्रियहैं ॥ इसअनुमानकरनेत्रइंद्रियकोरूपकीग्राहकता
कानिपेधहोनेसेघ्राणादिक इंद्रियोंको गंधादि विषयोंकी ग्राहकताका
निपेधभीजानलेना ॥ इसअनुमान मे “असाधारणोद्रियत्वात्” यह
हेतुहै । तिसकायदिबाह्यइंद्रियहोनेसे । ऐसाअर्थकरें ॥ तोजिनकेमतमे
मनकोइंद्रियरूपताहै।उनकेमतकोलेकरतोअसाधारणपदसफलहोसकता
हैं । परन्तुजिनके मतमेमनइंद्रियनहीं तिनकेमतमे असाधारण पदकी
निष्फलताहोगी ॥ औरयदिऐसा निर्वचनकरें “यत् किंचत् कार्यता
निरूपित कारणात् आश्रयत्व” कानामअसाधारणत्वहैतोअनुमानमे
बाधप्राप्तहोगा ॥ क्योंकियत्किंचत्कार्य रूपकीउपलब्धिहै तत्निरू-
पितकारणात्काआश्रयपनानेत्रइंद्रियमेमानेहुएरूपऔरतिसकेआश्रय

भूतद्रव्यका अग्राहकत्वरूपसाध्यका अभावहोनेसे बाधकी प्राप्ति स्पष्टही है। याते यह निर्वचनभी समीचीन नहीं। किंतु “यत्किंचित् कारणात् निरूपितकार्यता आश्रयत्वरूप” ही असाधारणत्व जानना ॥ अर्थ यह तेजादिभूतोंके सतोगुणमें यत्किंचित् कारणात् है तिसकर निरूपित कार्यतानेत्रादि इन्द्रियोंमें विद्यमान है याते उक्त निर्वचन ही समीचीन है ॥ इति ॥ और मन भी प्रपंच उपलब्धि ॥

❀ मनकी करणात्ताके निषेधपूर्वक अविद्यामूलक प्रपंच उपलब्धिका स्थापन । ❀

का करण नहीं है। अइसीको निरूपण करते हैं ॥ वह मन क्या? आत्माकी उपलब्धि अर्थात् ज्ञान का करण है अथवा सुखादि उपलब्धि के अति करण है ॥ प्रथम पक्ष तो कर्तृकर्म रूपविरोध होनेसे नहीं संभवता। क्योंकि शुद्धात्माको तो स्वप्काशस्वरूप होनेसे मनोजन्य ज्ञानकी विषयता का अभाव है और अंतःकरण विशिष्ट आत्माके ज्ञान कामनको करण माने ॥ तो विशिष्टवृत्तिधर्मको विशेषणमें वर्तनेका नियम होनेसे एक ही मनको उपलब्धिका आश्रय रूपसे कर्तापना होगा। और उसीको विषय रूप होनेसे कर्मपना होगा ॥ सो दोनों एक कालमें एक अधिकरण विषयक विरुद्ध हैं ॥ यही कर्तृकर्म रूपविरोध है। याते आत्माके ज्ञानकी करणात्ता मनमें नहीं संभवती ॥ और द्वितीय पक्ष भी असंगत है। क्योंकि सुखादि कर्साक्षिभास्य हैं ॥ इस प्रकार इन्द्रिय तथा मनको प्रपंच ज्ञानकी करणात्ता का अभाव होनेसे अविद्यामूलक ही जगत्का ज्ञान है किसी भी हेतुसे इन्द्रियादिकोंको प्रमाण तानहीं ॥

❀ शंकापूर्वक प्रपंचको अविद्योपादान

तोवहभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि

❀ तस्मादापिपृष्टत उपस्पृष्टोमनसाविजानाति ❀

बृ० उ० अ० ३ ब्रा० ५॥३

अ० ॥ तिससेभीपृष्टसेसमीपस्पर्शहुएपदार्थकोमनसेयहपुरुष जानलेताहै ॥ इसश्रुतिसेमनकी स्वतंत्ररूपतासे ब्राह्मणवृत्तिसिद्धहै ॥ यातेरूपादिउपलब्धिनेत्रादिकरणसाध्यनहीं किन्तुमनोजन्यहै अथवा अविद्याजन्यहै ॥ और्यहांयहअनुमानभीजानना ॥

विमतंचक्षुर्नरूपस्यतदाश्रयद्रव्यस्यवाग्राहकं असा
धारणोद्रियत्वात् ॥ घ्राणादिवत् ॥

अ० ॥ विवादकाविषयजोनेत्रइंद्रियहै । वहरूपऔरतिसके आश्रयभूतद्रव्यकाग्राहकनहीं ॥ असाधारणइंद्रियहोनेसे । जोजोअसा धारणइंद्रियहै।सोसोरूपऔरतिसके आश्रयभूतद्रव्यकाग्राहकनहीं है ॥ जैसेघ्राणादिकइंद्रियहैं ॥ इसअनुमानकरनेत्रइंद्रियकोरूपकीग्राहकता कानिपेधहोनेसेघ्राणादिकइंद्रियोंको गंधादि विषयोंकी ग्राहकताका निपेधभीजानलेना ॥ इसअनुमान मे “असाधारणोद्रियत्वात्” यह हेतुहै । तिसकायदिब्राह्मणइंद्रियहोनेसे । ऐसाअर्थकरें ॥ तोजिनकेमतमे मनकोइंद्रियरूपताहै।उनकेमतकोलेकरतोअसाधारणपदसफलहोसकता है । परन्तुजिनके मतमेमनइंद्रियनहीं तिनकेमतमे असाधारण पदकी निष्फलताहोगी ॥ और्यदिऐसा निर्वचनकरें “यत् किंचत् कार्यता निरूपित कारणता आश्रयत्व” कानामअसाधारणत्वहेतोअनुमानमे बाधप्राप्तहोगा ॥ क्योंकियत्किंचत्कार्य रूपकीउपलब्धिहै तत्निरूपितकारणताका आश्रयपनानेत्रइंद्रियमेमानेहुएरूपऔरतिमकेआश्रय

भूतद्रव्यका अग्राहकत्वरूपसाध्यका अभावहोनेसे बाधकी प्राप्ति स्पष्टही है।
याते यह निर्वचनभी समीचीन नहीं। किंतु “यत्किंचित् कारणात्
निरूपितकार्यता आश्रयत्वरूप” ही असाधारणत्व जानना ॥ अर्थ यह
तेजादिभूतोंके सतोगुणमें यत्किंचित् कारणात् है तिसकरनिरूपित
कार्यतानेत्रादि इन्द्रियोंमें विद्यमान है याते उक्तनिर्वचनही समीचीन
है ॥ इति ॥ और मनभी प्रपंच उपलब्धि ॥

❀ मनकी करणात्ताके निषेधपूर्वक अविद्यामूलक
प्रपंच उपलब्धिका स्थापन । ❀

का करण नहीं है। अब इसीको निरूपण करते हैं ॥ वह मन क्या?
आत्माकी उपलब्धि अर्थात् ज्ञान का करण है अथवा सुखादि उपलब्धि
के भतिकरण है ॥ प्रथम पक्ष तो कर्तृकर्म रूपविरोध होनेसे नहीं संभवता।
क्योंकि शुद्धात्माको तो स्वप्काशस्वरूप होनेसे मनोजन्य ज्ञानकी विषय
ताका अभाव है और अंतःकरणविशिष्ट आत्माके ज्ञानकामनको करण
माने ॥ तो विशिष्टवृत्तिधर्मको विशेषणमें वर्तनेका नियम होनेसे एकही
मनको उपलब्धिका आश्रयरूपसे कर्तापना होगा। और उसीको विषय
रूप होनेसे कर्मपना होगा ॥ सो दोनों एककालमें एक अधिकरणविषयक
विरुद्ध हैं ॥ यही कर्तृकर्मरूपविरोध है। याते आत्माके ज्ञानकी करणात्ता
मनमें नहीं संभवती ॥ और द्वितीयपक्षभी असंगत है। क्योंकि सुखा
दिकसाक्षिभास्य हैं ॥ इस प्रकार इन्द्रियतथामनको प्रपंचज्ञानकी करणात्ता
का अभाव होनेसे अविद्यामूलक ही जगत्का ज्ञान है किसी भी हेतुसे इन्द्रि-
यादिकोंको प्रमाणतानहीं ॥

❀ शंकापूर्वक प्रपंचको अविद्योपादान

कत्वस्थापन ॥ ❀

॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् अविद्याहैउपादानजिनका ऐसेजो ।
मिथ्यारजतादिकहैं तिनको अविद्याकी वृत्तिकर ग्राह्यपनातो
संभवताहै । परंतुघटादिजगत्कातोअविद्याउपादानकारणनहीं । क्यों
किघटादिकोंकेअर्थीकुलालादिकोंकोमृत्तिकादिकारणविशेषकाग्रहण
देखनेमेंआताहै । तिसकारणसेअन्वयव्यतिरेककरसिद्ध मृत्तिकादिक
घटादिकोंके उपादानकारणहैं । यातेघटादि प्रपंचकोअविद्योपादान
कत्वकाअभावहोनेसे अविद्यावृत्तिकी विषयता किसप्रकारसंभवैगी
किंतुनहींसंभवती ॥ समाधान ॥ हेवादिन्मथमघटादिपदार्थ कार्य
रूपहैं । यहांकार्यताके साधकअनुमानका यहआकारहै ।

❀ घटादिकार्यं मध्यमपरिमाणत्वात् व्यतिरेकेण आत्मवत् ॥ ❀

अ० ॥ घटादिजगत्कार्यरूपहै ॥ मध्यमपरिमाणवालाहोनेसे।
जोकार्यनहींहै । सोसोमध्यम परिमाणवालाभीनहींहै । जैसेआत्मा
है ॥ इति ॥ औरवहघटादिजगत्भावरूपहै । क्योंकिनिष्प्रतियोगिक
है । इसप्रकारसर्वघटादि भावकार्यमेंउपादानकारणकी अकाराकेहुए
आत्माकोतोअसंगहोनेसे किसीकावहकारणनहींसंभवना । परिशेषसे
अविद्याहीउपादानकारणरूपतासेकल्पनाकरनेयोग्यहै । यद्यपिघटादिकों
कोअविद्याउपादानक मानेहुएघटादिकोंकेअर्थीकुलालादिकोंकोमृत्ति
कादिकोंकाग्रहणदेखाजाताहै तिससेमृत्तिकादिकोंकोउपादानकल्पना
काविरोधहोगा ॥ तथापिघटादिकोंके अर्थियोंको तिसतिसकारण
विशेषकाग्रहणआविद्यकपनेकाविरोधिनहीं। क्योंकिमृत्तिकादिआकार

से अविद्याही परिणामको प्राप्त हुई है ॥ अविद्याको उपादान होनेसे अविद्या स्वरूप सृष्टिकादिकोंको घटादिकोंके प्रतिकारणताकी कल्पना आविद्यक पनेके साथ विरोधवाली नहीं ॥ जैसे स्वप्ने वास्तवसे न कोई घट है और न कोई सृष्टिका है किंतु अविद्याही सृष्टिरूपताको प्राप्त होकर आविद्यक कुलाल कर गृहीत हुई आविद्यक घटादिकोंको रचना करती है ॥ क्योंकि

*** नतत्ररथाः ***

अ० ॥ स्वप्न अवस्थामे व्यवहार करत नहीं है ॥ इत्यादि कश्रुति से तहां वास्तव सृष्टिकानिषेध किया है ॥ तथा जाग्रतकालमे भी

*** नेहनानाऽस्ति ***

इत्यादि श्रुतिसे घटादि प्रपंचकानिषेध सुना जाता है ॥ और

❁ मायांतु प्रकृतिं विद्यात् ❁

इस श्रुतिसे मायारूप अविद्याको जगत्की उपादानता श्रवण होनेसे सृष्टादि आकार परिणामको प्राप्त हुई अविद्याही घटादिकोंका उपादान कारण है इस प्रकार माननेमे किंचित् मात्र भी विरोध नहीं ॥ इति ॥

❁ अथ अत्रांतरविषयकी समाप्तिपूर्वक प्रपंचनिष्ठज्ञात

सत्ताके निरूपणाका उपसंहार ❁

यहां प्रथम जगत्की ज्ञात सत्ता प्रधानरूपता कर कथन करने लगे थे तिसकी सिद्धिके अर्थ प्रपंचनिष्ठ आविद्यक पना कथन किया ॥ अब तिस अत्रांतर विषयको समाप्त करते हैं ॥ पूर्व उक्त युक्तिसे घटसे भिन्न सर्वकार्य मात्र ज्ञान और ज्ञेय स्वरूप वह सर्वही आविद्यक है अर्थात् अविद्याका कार्य है ॥ इस प्रकार प्रपंच और तिसके ज्ञानको आविद्यक होनेसे सर्वप्रपंचकी ज्ञात सत्ता है ॥ यह अर्थ सिद्ध हुआ ॥ इसरीतिसे ज्ञान तथा ज्ञेयको आविद्यक होनेकर ज्ञान

कालमेहीज्ञेयकीसत्ताहै।ज्ञानसेपूर्वतथाउत्तरकालमेज्ञेयकीसत्तानहीं।और
ज्ञानकीस्थितिसेप्रपंचस्थितहोताहै।औरज्ञानकीनिवृत्तिसेनिवृत्तहोजाता
है। यार्तेज्ञातसत्ताकहीप्रपंचहै ॥ यहअर्थपूर्वनिरूपणकिया।अबइसी
अर्थमेवसिष्टमुनिकेवचनकीसंमतिदिखलातेहैं ॥ यहीअर्थश्रीवसिष्ठ
भगवान्जीनेभीकहाहै ॥

मू० ॥ अविद्यायोनयोभावासर्वमीबुद्बुदाइव ।

क्षरामुद्भूयगच्छंतिज्ञानैकजलधौलयं ॥१॥

अ० ॥ (सर्वेयमी) यहसर्व (भावाः) ज्ञानज्ञेय रूपपदार्थ
(अविद्यायोनयः) अविद्याउपादानकहैं ॥ और (बुद्बुदाइव)जैसेसमुद्र
मेबुद्बुदेक्षणमात्रमे उत्पन्न होकरलय होजातेहैं ॥ तैसेयहज्ञानज्ञेयरूप
पदार्थभी (क्षण) एकक्षणमात्रमे (ज्ञानैकजलधौ) एकरस चेतनरूप
समुद्रमे (उद्भूय) उत्पन्नहोकर (लयंगच्छंति)लयहोजातेहैं ॥ इति ॥१४

❀ अथपूर्वपक्षीकीरीतिसेअविद्याकोप्रपंचकीकारणता
काअसंभवनिरूपण ❀

अथपूर्वपक्ष ॥ घटपटादिकोंके अर्थियोंकोमृत्तिकातंतुआदिक
कारणविशेषकाग्रहणस्वप्नकीन्याईउपपादनकरनेयोग्यहै।ऐसेकहने
वालेसिद्धांतीसे हमयहपूछतेहैं।मृद्घटादिकोंकाकार्य कारणभाव
तुमअंगीकारहीनहींकरते अथवातिनकाकार्यकारणभावतुमअंगीकार
करतेहो।इनमेंप्रथमपक्षमें दूषणकहतेहैं।

मू० ॥ मृदादीनां कारणात्वंनचेदिष्टं घटंप्रति ।

अविद्यायाः कारणात्वंकथंसिद्धयेत् प्रमांविना ॥१५

चित्रपदा० ॥ जेकरइष्टनहोगा । कारणमाटिघटोंका ॥

कारणसोतमएसे । मानविना कहुकैसे ॥ १६ ॥

टी० ॥ हेसिद्धांतिन् यदिमृदादिकोंको घटादिकोंकी कारणात्ता तुमअंगीकारनहींकरोगे।तोकहींभीकार्यकारणभावनअंगीकारहोनेकर अविद्याकोप्रपंचकीकारणात्ता कैसे सिद्धहोगी ॥ क्योंकिदृष्ट्यर्थके अनुसारहीअदृष्टकी कल्पनाहोतीहै।औरयदि तुमकार्यकारणभावमानो तोवहकार्यकारणभाव मृद्घटादिकोंका प्रमाणसिद्धहै अथवाभ्रम सिद्धहै ॥ अंत्यपक्षतो नहींसंभवता ॥ क्योंकिविषयके बाधहोनेसेही ज्ञानमेंभ्रमपनाहोनाहै ॥ जबकार्यकारणभाव रूपविषयकाबाधहुआतो अविद्याकोकारणात्ता कैसेसिद्धहोगी ॥ यहपूर्वउक्तदोपहीपुनः प्राप्त होताहै । औरयदिप्रथमपक्षकहोतोघटादिकोंकीकारणात्ता अविद्याको नहींसंभवेगी ॥ क्योंकिकारणात्ताके ग्राहकअन्वयव्यतिरेकादिरूप प्रमाणकोमृत्तिकादि कारणविषयकहोनेकर अविद्याविषयकत्वतिनको नहींहै ॥ यातेप्रमाणसेविना अविद्यामेंकारणात्ताका अभावहै । अब इसीअर्थको विस्तार पूर्वकनिरूपणकरतेहैं ॥ हेसिद्धांतिन् अविद्या सर्वभावकार्योंका उपादानकारणहै ऐसेकअनकरनेवाले तुमकोकहीं कार्यकारणभाव स्वीकारहैवानहीं ॥ यदिअंत्यपक्षकहोतो प्रपंचको अविद्याउपादानकत्व कैसेसिद्धहोगा ॥ क्योंकिकार्यकारणभावात्तो कहींभीस्वीकारनहीं । औरजोप्रथमपक्षकहो । तो यथायोग्यअन्तस्य व्यतिरेकादि प्रमाणसेही कार्यकारणभावका ग्रहणकरनाचितहै ॥ यहां “अन्वयव्यतिरेकादि” इसथादिपदसेधर्मके ग्राहकप्रमाणका ग्रहणहै । तिसीकारणसेप्रत्यक्ष मृद्घटादिकोंकाकार्य कारणभावतो

अन्वयव्यतिरेककरके औरशब्दतथाआकाशादिकोंकाकार्यकारणभाव धर्मिग्राहकअनुमान प्रमाणसेयथायोग्य ग्रहणहोताहै ॥ तिसकार्य कारणाभावमेंऔर कोईप्रकारनहींसंभवता यहांधर्मिग्राहकअनुमानका यहआकार है ॥

❖ शब्दःपृथिव्यादि अष्टद्रव्यातिरिक्तद्रव्याश्रितः।
अष्टद्रव्यानाश्रितत्वे सतिद्रव्याश्रितत्वात् ॥
यन्नैवंतन्नैवं यथारूपादि ❖

अ० ॥ शब्दजोहै सोपृथिव्यादिक अष्टद्रव्योंसे भिन्नद्रव्य केआश्रितहै ॥ अष्टद्रव्यके अनाश्रितहुआ द्रव्यके आश्रित होनेसे जोजोअष्टद्रव्योंसे अतिरिक्तद्रव्यके आश्रितनहीं । सोसो अष्टद्रव्योंके अनाश्रितहुआद्रव्यके आश्रितभीनहीं । जैसे रूपादिकगुणहैं ॥ इसअनुमानमेंहेतुगत विशेषणभागकी असिद्धिदूरकरनेके लियेतीन अनुमानऔरहैं । तिनमेंप्रथमकायह आकारहै ॥

❖ शब्दोऽनस्पर्शवद् विशेषगुणः । अग्निसंयोगा
ऽसमवायिकारणकत्वा भावेऽतिअकारणगुण
पूर्वकप्रत्यक्षत्वात् ॥ सुखवत् ❖

अ० ॥ शब्दजोहै सोस्पर्शवाले द्रव्योंकाविशेष गुणनहींहै ॥ अग्निसंयोगरूप असमवायिकारणकत्वके अभाववालाहुआ अकारण गुणपूर्वक प्रत्यक्षहोनेसे ॥ जोजोअग्नि संयोगरूप असमवायिकारण कत्वकेअभाव वालाहुआ अकारणगुणपूर्वक प्रत्यक्षहोताहै । सोसो स्पर्शवालेद्रव्योंका विशेषगुणनहींहोता । जैसेसुखरूपगुणहै ॥ इस अनुमानसेपृथिवीजल अग्निवायुइनचार द्रव्योंकेआश्रितशब्दनहींहै

यहसिद्धहूया । इसअनुमानगतहेतुमें यदिविशेष भागहीकहतेतो पाकजरूपादिकोंमें व्यभिचारहोता । क्योंकिकारणगुणपूर्वकतासेविना हीतिनका प्रत्यक्षहोताहै ॥ तिसव्यभिचारके दूरकरनेके लियेहेतुमें विशेषगणभाग कथनकियाहै ॥ तिनमेंअग्नि संयोगरूपअसमवायि कारणकत्वका अभावनहीं ॥ किंतुसद्भावहै । औरसदिहेतुमेंविशेष भागनकहते ॥ तोपटगतरूपादिकोंमेंव्यभिचारहोता । क्योंकिअग्नि संयोगरूप असमवायिकारणकत्वकाअभावतिनमेंभीहै ॥ तिनमें व्यभिचार दूरकरनेकेलिये अकारणगुणपूर्वकत्वयहविशेषभागकथन कियाहै ॥ तिनमेंअकारणगुणपूर्वकत्वनहीं।किंतु कारणगुणपूर्वकत्वहै औरजलपरमाणुगतरूपमें व्यभिचार दूरकरनेकेलिये “प्रत्यक्षत्व” यहपदहेतुमेंकहाहै ॥ क्योंकि “अग्निसंयोगाऽसमवायिकारणकत्वके अभाववालाहूया अकारणगुणपूर्वकत्व” इतनाहेतुभाग तोजलपरमाणुकेरूपमेंविद्यमानहै परन्तुतिसका प्रत्यक्षनहीं होतायातेव्यभिचार नहीं । औरद्वितीयअनुमानयहहै ॥

❀ शब्दोनदिक् कालमनसांगुणाः

विशेषगुणात्वात् रूपवत् ❀

अ० ॥ शब्दजोहैसोदिशातथाकालऔमन इनतीनोंकागुण नहींहै।विशेषगुणहोनेसे।जो जो विशेषगुणहोताहै।सोसोइनतीनद्रव्योंका गुणनहींहोता । जैसेरूपादिकहैं । इसअनुमानसेदिगादितीनद्रव्योंके आश्रितभीशब्द नहींहै यहअर्थ सिद्धहूया ॥ इति ॥ औरतृतीयअनुमानयहहै ॥

❀ शब्दोनात्मविशेषगुणः बहिरिन्द्रिय

योग्यत्वात् रूपवत् ❀

अ० ॥ शब्दजोहैसोआत्माकाभी विशेषगुणनहीं।वाह्यइन्द्रिय करग्रहणकेयोग्यहोनेसे ॥ जोजोगुण वाह्यइन्द्रियकर ग्रहणकेयोग्य होताहै । सोसोआत्माका विशेषगुणनहींहोता ॥ जैसेरूपहै ॥ इस अनुमानसे शब्दआत्मा केभीआश्रितनहीं। यहसिद्धहुआ ॥ औरहेतु गत विशेषभागकी असिद्धिदूरकरनेके लियेयह अनुमानहै ॥

❀ शब्दोद्रव्यसमवेतः। गुणात्वात्। संयोगवत् । ❀

अ० शब्दजोहै। सो द्रव्यमेंसमवेतहै ॥ गुणहोने से ॥ जो जो गुणहोताहै सोसोद्रव्यमेंही समवेत होताहै। जैसेसंयोगहै ॥ इसअनुमानसेशब्दको द्रव्यसमवेतत्वसिद्धहोताहै । औरइसअनुमानमे स्वरूपासिद्धिकेदूरकरनेवाला यहअनुमानहै ॥

❀ शब्दोविशेषगुणः। चक्षुर्ग्रहणायोग्यवहिरेंद्रियग्राह्य

जातिमत्वात् स्पर्शवत् ❀

अ० ॥ शब्दजोहैसो विशेषगुणहै ॥ चक्षुइन्द्रियकर ग्रहणके अयोग्यहुआवाह्यइन्द्रियकरग्राह्यजातिवालाहोनेसे। जोजोचक्षुइन्द्रिय करग्रहणकेअयोग्यहुआवाह्य इन्द्रियकरग्राह्यजातिवालाहै सोसोविशेष गुणहै ॥ जैसेस्पर्शगुणहै ॥इति॥ इसप्रकारनिर्दोषपूर्वउक्तपरिशेषानुमानसेगगननामवालानवमद्रव्यही शब्दकाआधारहै। यातेयहअनुमान शब्दतथाआकाशकेकार्यकारणभावकाग्राहक होनेसे धर्मिग्राहकप्रमाण जानना ॥ इति ॥शंका॥ हेवादिन्मृदघटादिकोंमेंअन्वयव्यतिरेकादि प्रमाणासिद्धकार्यकारण भावहो तिससेक्यासिद्धहुआ ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्तेसे मानेहुए अन्वयव्यतिरेकादिसिद्ध जोमृत्तिकादिकोंमें

कारणता है ॥ तिसको त्याग कर अविद्याको कारण कहना उचित नहीं ॥ यह सिद्ध हुआ ॥ किंवा ॥ “कारणात्वेनाऽविद्यैव उपसंहरतव्या” अ० ॥ कारणस्वरूपतासे अविद्या ही ग्रहण करने योग्य है ॥ इस वाक्यमें “अविद्यैव” यह जो (एव) शब्द है सो अविद्यासे भिन्न मृदादिको मे कारणताकी योग्यताको दूर करता है । अथवा अविद्यामें कारणताकी अयोग्यताको निवारण करता है ॥ दोनों रीतिसे “एव” शब्द का प्रयोग नहीं संभवता ॥ इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं ॥ अविद्या ही सर्वभावों का उपादान कारण है ऐसे कहनेवाले वादीसे यह पूछा चाहिये क्या ? इतर कारण जो मृत्तिकादंडकुलाल अट्टईश्वरादि हैं तिनकी अपेक्षासे बिनाकेवल अविद्या ही कारण है अथवा अट्टईश्वर तथा मृदादिकारणोंकी अपेक्षासहित अविद्या कारण है ॥ एव शब्द का जो प्रथम अर्थ अन्ययोगव्यवच्छेद तिसको प्रथम निषेध करते हैं ॥ प्रथम पक्ष नहीं संभवता ॥ क्योंकि यदि केवल अविद्याको ही कारण मानोगे तो प्रपंचरूपकार्यमें नानापना नहीं होगा ॥ कारणनिष्ठ विचित्रता के अभाव होनेसे कार्यनिष्ठविचित्रताकी अनुपपत्ति है एकपदार्थको अविचित्र होनेसे कार्यमें अनेकरूपता नहीं हो सकती ॥ क्योंकि सामग्रीको भेद कार्यके भेद का साधक है ॥ जैसे श्वेतपीतादिवर्ण युक्त तंतुओंसे विचित्र पटकी उत्पत्ति होती है केवल श्वेत तंतुओंसे नहीं ॥ तैसे दाष्टीतमें भी जान लेना ॥ किंवा ॥ कारणरूपतासे स्त्रीकारकी हुई जो अविद्या है वह चेतन तो है नहीं ॥ क्योंकि तिसको चेतन माननेकर अविद्यात्वकी हानि होती है ॥ याते वह जड है । और यदि तिसको जड मानो तो इसमें यह प्रपञ्च है क्या ? वह आप ही कार्य करनेमें प्रवृत्त होती है ॥ अथवा चेतनकर प्रेरित हुई प्रवृत्त होती है ॥ अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि चेतनको भी तिसकी अधिष्ठानता

रूपसेकारणाताकीप्राप्तिहुए अविद्यामात्रकारणहै इसतुम्हारे कथनकी हानीहोगी ॥ यातेचेतनकीअधिष्ठानतासेविनाआपहीकार्यकरनेको अविद्याप्रवृत्तहोतीहैयहप्रथमपक्षहीकहनाहोगा।वहभीनहींसंभवता।क्यों किजडशक्तिकोचेतनरूपअधिष्ठानसेविनाकार्यकरनेकीसामर्थ्यकहींदेखनेमेनहींआती ॥ अत्रएवशब्दकाअर्थजोअयोग्यव्यच्छेदहै।तिसकेनिरास करनेलियेकारणांतरसापेक्षअविद्याकार्यकोरचतीहै इसद्वितीयपक्षकोनिषेधकरतेहैं।औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता।क्योंकि अविद्याकोकारणाता कहनेवालेसिद्धांतीनेभीअदृष्टईश्वरादिकोंकोकारणातातोअवश्यकहनी होगी ॥ यातेघटादिकार्यकानिमित्तकारणरूपताकरअदृष्ट ईश्वरादिकों काकारणसामग्रीमेप्रवेशहोनेसेऔरउपादानताकीअपेक्षाकोमृदादिकों करपूर्णहोनेसेलाघवकेवलकर तिनसेही विचित्रकार्यसिद्ध होजाएगा कारणरूपतासेअभिमत जोमिथ्याअज्ञानरूपअविद्यातिसके माननेका किंचित्मात्रभीफलनहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन् अदृष्टादिकोंकी न्याई अविद्याकोभीप्रमाण सिद्धहोनेकरतिसको कारणाताकैसेनहीं सिद्धहो सकती ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् “मैअज्ञानीहूँ” यहप्रतीतिही अज्ञानमेप्रमाणरूपकहनीहोगी।सोतोज्ञानकेप्रागभावकोविषयकरतीहै तिसकरअविद्याकी सिद्धिनहीं होसकती ॥ यातेअप्रमाणिक अविद्या जगतकाकारणनहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन्वेदांतशास्त्रकी प्रमाणताके अर्थज्ञानज्ञेयरूपपदार्थअविद्योपादानकअवश्यमानेचाहिये॥समाधान॥ हेसिद्धांतिन्पंचको अविद्याउपादानकताके अभावहुएपृत्यक्षादि लौकिकप्रमाणको औरपुत्रपशुस्वर्गादिकोंकेप्रति यागादिकोंकोसाधनताकेबोधक पूर्वकांडरूपवेदकोप्रमाणता संपादित होसकीहै ॥

और यदि घटादि प्रपंचको आविद्यक माने तो मिथ्या अर्थको विषय करनेवाले प्रत्यक्षादि लौकिक प्रमाण निष्ठशुक्तिरजतज्ञानकी न्याई प्रमाणाता नहीं होगी ॥ और स्वर्गादितथायागादिकोंको आविद्यक माने हुए तिनका परस्परसाध्य साधनरूपसंबंधभी आविद्यक ही होगा ॥ तिसको विषय करनेवाले पूर्वकांडरूपवेदको भी प्रमाणातानहीं होगी ॥ और लौकिक तथा वैदिक प्रमाणाकी अप्रमाणाता माने हुए लोकवेदसे विरुद्ध किसपक्षको यहवादी आश्रयण करेगा ॥ अर्थ यह कियह आविद्यकजगत्वादी वैदिकभी नहीं ॥ क्योंकि पूर्वकांडकी प्रमाणातानहीं मानता ॥ और यहबोधभी नहीं ॥ क्योंकि प्रत्यक्षादिकोंको भी अप्रमाणाकहता है ॥ इन दोनोंपक्षोंसे भ्रष्टहुआ यह आविद्यकजगत्वादी किस पक्षको आश्रयण करेगा ॥ और यह जो पूर्वकहा था कि जगत्को आविद्यक माने हुए वेदांतोंमें अप्रमाणाता प्राप्त होगी ॥ सो कथनभी नहीं संभवता ॥ क्योंकि वेदांतोंको जपादि अर्थ होनेकर भी प्रमाणाता बनसक्ती है ॥ जिसकारणसे अविद्याको कारण माने हुए विचित्रताकी अनुपपत्ति है ॥ और जिसकारणसे अविद्याजड शक्ति है ॥ और जिसकारणसे प्रत्यक्षादिकोंमें प्रमाणाता है ॥ तिसीकारणसे ज्ञानज्ञेयरूपपदार्थोंको अविद्यामात्र उपादानकताका अभाव है ॥ यात्ते अविद्या मात्रको जगत्की कक्षात्ताकथनकेवल सिद्धांतीका साहसमात्र अर्थविचारविना कथन है ॥ इति पूर्वपक्ष ॥ १५ ॥

❀ अथ सिद्धांत । सत् तथा असत्की उत्पत्तिके निरास पूर्वक अविद्याको जगत्कारणताकी सिद्धिका प्रकार ❀

समाधान ॥ जोवादीने पूर्व यह कथन किया कि मृदादिकारणको त्यागकर अविद्याको कारणताका कथन अनुचित है ॥ इस पूर्वपक्षमें अविद्या

को कारणता का कथन उचित है। इस सिद्धांत को हम निरूपण करते हैं।
अविद्या को कारणता कैसे सिद्ध होती है। ऐसी आकांक्षा के द्वारा कथन करने
योग्य अर्थ को कहते हैं ॥

मू० ॥ यथासतो जनिर्नैवमसतोपि जनिर्न च ।

जन्यत्वमेव जन्यस्य मायिकत्वसमर्पकम् ॥१६॥

विद्युन्माला ॥ साचा जैसे नार्ही जामे । नार्ही भूओतैसे जामे ।

जन्यायासंसारैर्नार्ही । मायाकी ताबोधे तार्ही ॥१७॥

टी० ॥ हेवादि नकार्य क्या? निर्वचन के योग्य है अथवा निर्वचन
के योग्य नहीं है। प्रथमपक्ष मे भी यह विचार कर्तव्य है ॥ वह कार्य क्या?
आत्मा की न्याई सत् रूप है। अर्थात् पारमार्थिक स्वरूप है। अथवा शशश्रृंग की
न्याई असत् रूप अर्थात् तुच्छ रूप है। प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि

❀ स्वसत्तासंबंधो हि जनिः ❀

अ० ॥ “स्व” कहिये कार्य के साथ सत्ता का जो संबंध है तिसको
“जनि” कहिये उत्पत्तिकहते हैं ॥ वह यहाँ नहीं संभवती क्योंकि अपनी
सत्ता के साथ संबंध वाले सत्पदार्थ मे अन्य सत्ता के संबंध की अपेक्षा व्यर्थ है ॥
और उत्पात्तिवाला ही कार्य होता है ॥ और सत्त्वस्तु सर्वकाल मे उत्पत्ति रहित
है ॥ तिसी से सत् रूपता कर पूंचका निर्वचन किये हुए तिसमे कार्यत्वकी
हानि होगी ॥ और ❀ एकमेवाद्वितीयम् ❀

यह शास्त्र सजातीयादि भेद रहित एक अद्वैत आत्मा मे उपक्रम आदि
परिनिर्गो से तात्पर्यवाला है ॥ कार्यको पारमार्थिक माने हुए तिसके साथ
विरोध भी प्राप्त होगा ॥ शंका ॥ ❀ मृत्तिकेत्येव सत्यं ❀

अ० ॥ मृत्तिकाहीसत् रूप है । यहशास्त्रप्रपंचकीसत् रूपताभी बोधनकरताहै । आप्रपंचकोअसत् रूपकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ हे वादिन्जो आगमतुमनेकहा सोयद्यपिसत्यहै । परन्तु तिसकास्वार्थमे तात्पर्यनहीं ॥ क्योंकि “एकमेवाद्वितीयम्” यहपूर्वकथनकिया जो शास्त्रसोआगेकथनकियेहुएअनुपपत्तिरूपतर्कसहकृतहुआ बलवानहै तिसकेसाथविरोधहोनेसेवहआगमअन्यार्थपरहै । अर्थयहवहआगम कोईमृदादिप्रपंचकोसत् रूपनहींकहता । किंतुतिनकेअधिष्ठानसत्त्वह्य कोहीसत्यरूपप्रतिपादनकरताहै । इसीअभिप्रायसेप्रपंचकेसत्यत्वमेअनुपपत्तिकोनिरूपणकरतेहैं।कार्यप्रपंचमेसत्यपनेकीअनुपपत्तिहैजिसप्रकार सोअनुपपत्तिहैसोदिखलातेहैंहेवादिन्क्या?उत्पत्तिसेपूर्व यहकार्यसत् है वाअसत् है । यहांप्रथमअसत्पक्षकोअनुवादपूर्वक निराकरणकरतेहुए “मसतोपिजनिर्नच” यहजोकारिकाकादूसरापादहै तिसकाव्याख्यान करतेहैं ॥ हेवादिन् यदिकार्यको असत्कहोतो तिसमें यहविचार कर्तव्यहै ॥ ❀ स्वसत्तासमवायोजनिः ❀

अ० ॥ कार्यमेंजोसत्ताकासमवाय संबंधहैतिसकानाम उत्पत्ति है ॥ अथवा ॥ ❀ स्वकारणसंसर्गोजनिः ❀

अ०॥ कार्यकाकारणकेसाथजोसंबंधहै तिसकानामउत्पत्तिहै । सोयहदोनोंप्रकारकी उत्पत्तिअसत्निष्ठनहींसंभवती । क्योंकिअसत्में संबंधकीआधारता वासंबंधकी निरूपकतानहींहै ॥ औरकहींदेखनेमें भीनहींआती । तिसीसेप्रपंचकोयदि असत् रूपताकरनिरूपणकरोतो उत्पत्तिमत्ताकेअसंभवसेतिसमेंकार्यत्वकीहानिहै॥यातेकार्यअसत् रूपता

नहीं होजाती ॥ यातेसत्प्रसत्पन्नभीनिर्द्युक्तिकहे ॥

*** परिशेषसेप्रपंचकीअनिर्वचनीयताकेस्थापनपूर्वक
अविद्योपादानकल्पकानिर्धार ***

इसप्रकारसत्प्रतासेतथाप्रसत् रूपतासेऔरउभेरूपतासेकार्यका
निर्वचनन होनेकर सत्प्रसत्सेविलक्षण अनिर्वचनीयहीकार्यहे यह
माननाहोगा । ऐसेमाननेसेपूर्वउक्तदोषोंकी प्राप्तिनहींहोती ॥ औरजब
कार्यरूपप्रपंचकोअनिर्वचनीयमाना ॥ तोसत्प्रस्तुकोतोतिसकीउपादान
तानहींसंभवती ॥ क्योंकिलोकमेकार्यकारणकीविलक्षणतादेखनेमे नहीं
आती किंतुकार्यकेसदृश्यहीउपादानकारणकल्पनाकरनेयोग्यहे ॥ और

*** योग्यःयोग्येनसंवध्यते ***

अ० ॥ योग्यहीयोग्यकेसाथसंवेधवालाहोताहे । जैसेमनुष्यों
कीउत्पत्तिमनुष्योंसे औरपशुओंकीउत्पत्तिपशुओंसेहोतीहे ॥ इसन्यायसे
भीअनिर्वचनीयप्रपंचकाअनिर्वचनीयहीकारणकल्पनाकरनेयोग्यहे ॥
सोऐसाअनादिअनिर्वचनीयमायारूपअज्ञानहे । तिसअज्ञानकोउपा-
दानत्वकीकल्पनाकार्यप्रपंचनिष्कार्यत्वही अन्यथाअनुपपन्नहुआकरा
ताहे ॥ यातेतिसअज्ञानकोउपादानकारणताकाकथनअनुचितनहींकिंतु
उचितहीहे ॥ इति ॥ शंका ॥ विलक्षणताकेहुएभीकार्यकारणभावक्योंनहीं
होताकिंतुहोसक्ताहे ॥ जैसेसत्यशुक्तिमिथ्या रजतका कारण लोकमे
प्रसिद्धदेखनेमेआतीहे ॥ तैसेसत्हीअसत्प्रपंचकाकारणवनजायेगा ॥
समाधान ॥ हेवादिन्तर्हाभीशुक्तिका अज्ञानहीरजतकाकारणहैशुक्ति
नहीं ॥ अन्यथा "नेदंरजतम्" इसबाधकालमेभीरजतरूपकार्यकीप्राप्ति

हूई चाहिये ॥ क्योंकि तिस रजतका कारण शक्तिविद्यमान है ॥ याते विलक्षणोंका कार्यकारणभाव लोकमे नहीं देखा जाता ॥

✽ अविद्यामात्रकारणवादमेवादी उक्तदोषोंका परिहार निरूपण ✽

श्रौतवादीने यह पूर्वकथन किया था । कि कारणकी विचित्रता के अभावसे कार्यमें विचित्रताकी अनुपपत्ति है ॥ सो कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि विचित्रशक्तिवाला अज्ञान ही उपादानरूपता कर कल्पना किया है ॥ यह पूर्वकथन कर आए हैं ॥ “विचित्रशक्तिवाले एक अज्ञान को ग्रहण करके अन्यथा अनुपपत्तिरूपतर्कविश्रामको प्राप्त होता है “ऐसे पूर्वकथन किया है” यद्यपि अविद्या ही कारण है । इस पक्षमें चेतनरूप अधिष्ठानसे विना जडशक्तिको कार्यजननकी सामर्थ्य नहीं । तथापि अविद्याकी अधिष्ठानता चेतनमें माने हुए भी ज्ञानज्ञेयरूपपदार्थोंको अविद्यामात्र उपादानकताका विरोध नहीं ॥ क्योंकि तिस चेतनको निमित्तमात्रता है ॥ श्रौतचेतनगत जो अविद्याकी अधिष्ठानता है ॥ तिसको अविद्यारूप अधिष्ठेयकी अपेक्षा सहित होनेसे आविद्यकपना है याते अविद्यामात्रकारणताकी हानी नहीं ॥ श्रौतदृष्टादिसापेक्ष अविद्याकार्यको करती है ॥ इस पक्षमें जोवादीने कहा था ॥ किलाघवसे दृष्टादिक ही कारण बन सक्ते हैं अविद्यासे क्या प्रयोजन है ॥ सो यह पक्ष भी निरास हुआ ॥ क्योंकि दृष्टादिकोंको भी आविद्यक होनेकर तिनकी कारणतासे अविद्याको ही कारणता सिद्ध होती है ॥ श्रौतसीकारणसे मृदादिकोंको घटादिकोंके प्रति उपादानकारणता होनेसे अविद्यासे क्या प्रयोजन है ॥ इसवादीके कथनका भी निरास हुआ ॥ क्योंकि तिन घंटादिकोंमें भी मृदादिआकारपरि

णामको प्राप्त हुई अविद्याको ही उपादान कारणता है ॥ तिस कारणसे प्रपंच आविद्यक ही है यह अथनिर्दोष सिद्ध हुआ ॥ इति ॥ और जो वादीने पूर्व यह कथन किया था। कि मिथ्या प्रपंच गोचर जो लौकिक प्रत्याक्षादि प्रमाण तिनमें प्रमाणाता की अनुपपत्ति है और मिथ्या स्वर्गतथायागके साध्यसाधन रूपसंबंधका ग्राहक पूर्वकांड रूपवेदको माने हुए तिसमें भी प्रमाणाता की अनुपपत्ति है। सो कथन भी असंगत है। क्योंकि लौकिक प्रमाणाताको तो पूर्व उक्त युक्तिसे अप्रमाणाता होनेसे ही तिनमें प्रमाणाता की अनुपपत्ति दोषके अर्थ नहीं है। इसलिये तिनकी तो उपेक्षा ही है।

❀ प्रपंचके आविद्यकपक्षमें पूर्वकांड

निष्ठ प्रमाणाताकानिरूपण ❀

और पूर्वकांड रूपवेदमें प्रमाणाता की अनुपपत्ति नहीं सो ईदिले लाते हैं हेवादि न पूर्वकांड रूपवेद स्वर्ग और यागके साध्यसाधन रूप संबंधमात्रमें तात्पर्यवाला है। अथवा तिनके साध्यसाधनभावके प्रतिपादन द्वारा ब्रह्ममें ही तात्पर्यवाला है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवना ॥ क्योंकि—

❀ स्वाध्यायोऽध्येतव्यः ❀

इस अध्ययनविधिका विरोध है ॥ तिस विरोधको ही स्पष्ट करते हैं ॥ अध्ययनविधि प्रयोजनवाले अर्थके ज्ञानका उद्देश्य करके वेदाध्ययनका विधान करता है ॥ और यागको प्रयोजनवत्ता संभवती नहीं ॥ क्योंकि स्वर्गादिकोंको विनाशी होनेसे प्रयोजनाभासपना है। तिस स्वर्गके साधन यागको पारमार्थिक प्रयोजनकी साधनता अनुपपन्न है ॥ याते स्वर्ग और यागके साध्यसाधनमात्र अर्थमें यदि पूर्वकांडात्मक वेदका तात्पर्य कथन करें तो अध्ययनविधिका विरोध कैसे नहीं प्राप्त होगा ॥ और अध्ययनविधि वैशेषिक पुरुषोंको कोई वहकावनेके निमित्त नहीं है ॥ याते साध्यसाधनमात्र

मेपूर्वकांडकातात्पर्यहैयहकथनव्यर्थ है ॥ और द्वितीयपक्षमे प्रमाणाता कीअनुपपत्ति नहीं ॥ क्योंकितिस पूर्वकांडका ब्रह्ममेहीतात्पर्यहै ॥ शंका ॥ पूर्वकांडमेब्रह्मकीअप्रतीतिहोनेसेतिसमेतात्पर्यका संभवकैसे होसकताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्पूर्वकांडप्रथमयागथौस्वर्गादिकों केसाध्यसाधनभावकोबोधनकरताहै तिसकेज्ञानसेप्रथमपुरुष कर्मोंका अनुष्ठानकरताहै ॥ अनुष्ठानकियेहुएकर्मब्रह्मज्ञानको सिद्धकरतेहैं ॥ यातेतैसेकर्मोंकाबोधकजोपूर्वकांडहै ॥ तिसकाब्रह्ममेतात्पर्य परंपरासे बनसकताहै ॥ शंका ॥ उपनिषदरूपवेदांतोंकोही ब्रह्मज्ञानकासाधन होनेसेतिसज्ञानकेप्रतिकर्मोंकोसाधनतानहींसंभवती ॥ समाधान ॥ हे वादिन्अंतःकरणकीशुद्धिप्रथमज्ञानकाअंगहै ॥ क्योंकिस्मृतिमेअंतःकरणकीशुद्धिकोज्ञानकाअंगत्वकथनकियाहै ॥

❀ ज्ञानमुत्पद्यतेपुसांक्षयात्पापस्यकर्मणः ❀

अ० ॥ “पुंसां” पुरुषोंको (पापस्यकर्मणः) पापकर्मके (क्षयात्) नाशहोनेसे (ज्ञानं) ज्ञान (उत्पद्यते) उत्पन्नहोताहै ॥ औरअंतःकरण कीशुद्धिकर्मोंसेहोतीहै ॥ यहवार्ताभीस्मृतिमेकथनकीहै ॥

कषायेकर्माभिःपक्वे

अ० ॥ कर्मोंसेपापोंकीनिवृत्तिहुएशुद्धअंतःकरणसेज्ञानहोता है ॥ यातेअंतःकरणकीशुद्धिद्वाराकर्मोंकाज्ञानमेउपयोगहै ॥ इसरीति सेकर्मोंकाज्ञानमे उपयोगबोधनकरनेवाले पूर्वकांडात्मकवेदकाब्रह्ममे तात्पर्यहै ॥ शंका ॥ नित्यकर्मोंकोफलसे शून्यहोनेकर तिनकोअंतःकरणकीशुद्धिकीकारणताहो। परन्तुकाम्यकर्मोंकातोअन्यस्वर्गादिफल होनेसेतिनकोशुद्धिकीकारणताकैसेहोसकतीहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्

नित्यकर्मोंकोनिष्फलताकीअसिद्धिहै ॥ क्योंकि-

❀ कर्मणापितृलोकः ❀

इसश्रुतिनेसाधारणकर्म मात्रसेपितृलोककीप्राप्तिकहीहै ॥ और

संयोगपृथक्त्वन्यायसेयागादिकर्मोंकोशुद्धि अर्थतामाननेमेकोईविरोध नहीं ॥ संयोगपृथक्त्वन्यायकायहअर्थहै ॥ पूर्वमीमांसामे

एकस्यतूभयत्वेसंयोगपृथक्त्वं ॥ अ० (४) पा० (३) सू० (१)

यहसूत्रहै ॥ तिसकायहअर्थहै । (एकस्य)एककर्मको (उभयत्वे)

उभयअर्थत्वमेंसंयोगपृथक्त्वनियामकहै अर्थात्विधिवाक्यकाजोभिन्न पठनहैसोनियामकहै जैसे“खादिरोयूपोभवति”और “खादिरं वीर्यकामस्य” यहांएकहीखादिरको यज्ञार्थत्वऔरपुरुषार्थत्वरूप उभयअर्थत्वमेंइसपूर्वउक्तविधिवाक्यकाभिन्न पठननियामकहै। तैसेस्वर्गादिफलकेअर्थजोयागादिकर्महैं तिनकोविविदिपावाक्यनेअंतस्कारण कीशुद्धिकेअर्थबोधनकियाहै । यातेइसन्यायसे सर्वकर्मोंकोसंस्कार अर्थत्वमाननेमेंविरोधनहींहै॥ अथवाविविदिपामेंकर्मोंका विनियोगहै इसपक्षकोआश्रयण करकेपूर्वकांडकी अप्रमाणताका परिहासकरतेहैं ॥ श्रवणादिकोंमेंपृथ्तिद्वारा पूर्वकांडकाब्रह्ममेंतात्पर्यहै। यहांयहअर्थज्ञात व्यहै ॥ कर्मकेस्वरूपमात्रका बोधकविधिवाक्यउत्पत्तिविधिकहाजाता है । जैसे “सोमेनयजेत”यहवाक्यहै । तिसउत्पत्तिविधिवाक्यकरपूथम विधानकियेजोकर्महैं तिनकोफलकीआकांक्षा अवस्थामेंजैसेअधिकारविधिदूसरा प्रवृत्तहोताहै ॥ फलविशेषकेसंबंधका बोधकविधि अधिकारविधिकहियेहै । जैसे “ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामोयजेत”यह वाक्यहै । तैसेही “यज्ञेनविविदिपति” इत्यादिफलविधायकवाक्यकी

पृच्छतिहोतीहै तिसवाक्यकायहसार अर्थसिद्धहुआ ॥ “ब्रह्मज्ञानकीका मनावालापुरुषयागादिकर्मोंकाअनुष्ठानकरे” इसवाक्यसेकर्मोंकोसामान्यरूपतासेब्रह्मज्ञानकीसाधनताप्रतीतहोतीहै ॥ औरसाक्षात्कर्मसाध्यत्वज्ञानमेंबाधितहै । यातेअंगवतरणन्यायसेज्ञानकेसाधनश्रवणादिकोंमेंपृच्छिद्वारातिनकर्मोंको ब्रह्मज्ञानकीसाधनताप्रतीतहोतीहै ॥ तिसहेतुसेतैसेकर्मोंकाबोधकजोपूर्वकांडात्मकवेदहै तिसकोब्रह्मपरताकासंभवहै । कैसेतिसकी अप्रमाणतातुमकहतेहो ॥ अंगवतरणन्यायका यहअर्थहै । जोसाधनअंगीमेंबाधितहोकरअंगमें “अवतरण” अर्थात्प्राप्तहोतिसकोअंगवतरणन्यायकहतेहैं ॥ जैसे ‘पंचदशारत्निः वाजपेयस्य ।’ अ० ॥ वाजपेयसंज्ञकयागकाधूपपंद्रह अरत्निः होताहै। इसवाक्यसे वाजपेयरूपअंगीयागमें धूपआकांक्षाप्रतिहोनेकर (सप्तदशारत्निः वाजपेयस्य ।) अ० ॥ वाजपेयसंज्ञक वागकाधूपसतरह अरत्निः होताहै । इसवाक्यउक्तधूपकावाजपेयमें बाधहोताहै इसीसेतिसकेअंगरूपमित्रविन्दादियागोंमें तिसधूपकी प्राप्तिहै। यहांमुष्टिकोबांधकरकनिष्ठकाअंगुलीकेविस्तारयुक्तहस्तपरिमाणकानामअरत्निः है । तैसेप्रकरणमेंकर्मोंकाज्ञानमें बाधहोनेसेतिसके अंगरूपश्रवणादिकोंमेंतिनकीप्राप्तिहै ॥ इति ॥ शंका ॥ पूर्वउक्तपूकारसेब्रह्मविषयकपूर्वकांडरूपवेदका तात्पर्यहो । तथापितिसमेंप्रमाणताकासंभव कैसेहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् ॐ यत्परःशब्दःसशब्दार्थः ॐ अ० । जिसअर्थमेंशब्दकातात्पर्य हो वहीशब्दकाअर्थहोताहै। इमन्याय सेतात्पर्यकेविषयभूत अर्थमेंही शब्दकी प्रमाणताहोतीहै । यातेपूर्व कांडमेंप्रमाणता संभवतीहै ॥

जिसकारणसेजगत्को अज्ञानउपादानकमानेहुएएकदोपभीनहींप्राप्त होसकता तिसीकारणसेज्ञानज्ञेयरूप पदार्थोंको अविद्योपादानकत्व शोभनकथनकियाहै ।

***जगत् को आविद्यकत्वसाधनकाफल तथा दृष्टिसम कालीन दृष्टि सृष्टि पक्षकाउपसंहारनिरूपण ***

आविद्यकजगत्केसिद्धकरनेकाक्याफलहै । ऐसीजिज्ञासाके हुएकहतेहैं । हेवादिप्रतीतिकसत्ताकीसिद्धिहीतिसकाफलहै । अर्थात् अविद्याहीप्राणियोंकेकर्मोंकीवशतासेक्षोभकोभासहुईजगत्काररूपता सेतथातिसकीप्रतीति आकाररूपतासे एककालमेही परिणामकोभास होती है । क्योंकिक्रमसेपरिणामहोनेमेकोईनियामकनहीं ॥ औरतिस काकोईप्रयोजनभीनहीं । औरवृत्तिनिष्ठविषयजन्यता अंगीकारनहींहै औरतिसमेआकारकीसमर्पकताविषयकोअजनकमाननेसेभीवनंसकती है ॥ जैसेमुखदर्पणकाअजनकहुआभीतिसमे प्रतिबिम्बकोसमर्पणकर देताहै ॥ तैसेप्रकरणमेभीजानना ॥ इसरीतिसेविषयऔरज्ञानकाएक कालमेपरिणामहोनेसेप्रतीतिसमकालीनही विषयकीसत्ताउचितहै ॥ क्योंकिरज्जुसर्पऔरशुक्तिरजततथा गंधर्वनगर औरस्वप्नप्रपंच इनसर्वमे प्रतीतिसमकालीनताहै ॥ तैसेजाग्रतप्रपंचमेभीप्रतीतिसमकालीनताहै यहाँपर्यहअनुमानजानना ॥

*** विमतः प्रपंचः प्रतीतिसमकालीनः अविद्योपादानत्वात् रज्जु सर्पादिवत् ***

अ० ॥ विवादकाविषयजोप्रपंचहै ॥ सोप्रतीतिसमकालीनहै अविद्योपादानकहोनेसे ॥ जोजो अविद्योपादानकहै ॥ सोसोप्रतीति

समकालीन है जैसे रज्जुसर्पादिक हैं ॥ इति ॥ १६ ॥ पूर्व उक्तार्थके संग्रह का श्लोक ॥

* प्रतीतिमात्र कालीनं घटाद्यविद्यकं यतः ॥

रज्जुसर्पादिकं यद्वत्तथा चेदंततस्तथा ॥१॥

चौ० ॥ घटादित्राविद्यक हैं याते । प्रतीतिसमसत्ता है ताते ।

रज्जुसर्पादिक हैं जैसे । ताते यह जगजानो तैसे ॥१॥

* इति दृष्टिससकालीनसृष्टिरूपदृष्टिसृष्टिवाद *

* अथ दृष्टिमात्र सृष्टिरूपदृष्टिसृष्टिवादनिरूपणा

तथा ज्ञानज्ञेयके भेदका निराकरणा निरूपणा *

दो० ॥ वेदवतीपतिवाकपतिश्रीगुरुनानक आदि । तिनपद

पद्मनपद्मवरनमोदंडवत् आदि ॥ १ ॥ ममचितमेधिरहोसदाहनियेविघ्न

प्रमाद ॥ दुर्गमभीसुगमो भवतु मरेतनकप्रसाद ॥२॥

प्रतीतिमात्रकालीनं जगद्युक्तयानिरूपितं ॥

प्रतीतिव्यतिरेकेणा सत्त्वं चास्यानिवार्यते ॥१॥

सो० ॥ जगदृष्टीकालीनयुक्तीकरनिर्णयकियो ॥

दृष्टिमात्रअवचीनसत्ताजगकीगावते ॥१॥

शंका ॥ हे सिद्धांति प्रतीतिसमकालीनजगत्की सत्ताकहनी उचित है यह आपने पूर्व कहा तिसमे एकजगत्की सत्ता और दूसरी ज्ञानकी सत्ता है इस प्रकार दो सत्ता भान होती हैं ॥ जैसे घटमात्रकालीन जो पट है वह घटसे भिन्न सत्ता वाला नहीं है यह कथन तो संभवतानहीं । क्योंकि एक कालमे उत्पत्ति तथा विनाशको प्राप्त हुए जो घट पट हैं । तिनका भेद होने कर एक सत्ताकी अयोग्यता है ॥ तैसे ज्ञान तथा ज्ञेयको परस्पर भिन्न होनेसे तिनकी

सत्ताकाएकत्वभीयुक्तनहीं है ॥ ऐसीशंकाकेप्राप्तहुएयहवक्ष्यमाणप्रकार जोबुद्धिमेस्थितहै वहनिरूपणकरनेयोग्यहै ॥ कौनवहप्रकारनिरूपणीयहै ऐसीजिज्ञासाकेहुएकहतेहैं ॥

मू० ॥ प्रतीतिमात्रसत्त्वंचेत् सत्त्वं प्रातीतिकंमतम् ॥

अविरोधान्ममापीष्टंतद्देवदकाप्रमा॥१७॥

वासंतीछंद ॥ ज्ञातासत्ताजानजगतकीहीमेठानो । ज्ञानाते नोभिन्नतनकताकोजोमानो । मोकोभीहैइष्टविरुधतानाकोराई । ताके भेदेमाहिप्रमितिकोभापोभाई ॥१८॥

टी० ॥ हेवादिन् प्रातीतिकसत्ताजोहै वहयदि प्रतीतिमात्रही सत्ताहै । अर्थात्प्रतीतिकीसत्तासेभिन्नवहसत्तानहीं तोइसमेविरोधका अभावहोनेसेहमकोभी स्वीकारहै । औरपूर्वउक्तयुक्तिसेज्ञान तथाज्ञेय काभेदहोनेसेज्ञानकीसत्तासेज्ञेयकी सत्ताभिन्नहै । यदिऐसेकहो तो हे वादिन्तिनदोनोंकेभेदमेकौनप्रमाणहै यहतुमकथनकरो औरवक्ष्यमाण रीतिसैतुमकोईप्रमाणनहीं निरूपणकरसकते । तिसकारणसेज्ञानऔर ज्ञेयकेभेदमेकोईभीप्रमाणनहीं ॥ इति ॥ अविस्तारसेश्लोककीव्याख्याकरनेकेलियेभूमिकारचनाकरतेहैं ॥ हेवादिन्प्रतीतिसमकालीन जगतकीसत्ताहैइसकाक्याअर्थहै। क्या ? प्रतीतिमात्रहीसत्ताहै। अर्थात् ज्ञेयपदार्थप्रतीतिरूपहीहै। यातेतिनकाअभेदहोनेसे ज्ञेयकीसत्ताज्ञानकी सत्तासेभिन्ननहीं । अथवाप्रतीतिसेभिन्नकरकेजगतकी पृथक्सत्ताहै । अर्थात्ज्ञानतथाज्ञेयकाभेदहोनेसे तिनदोनोंकीसत्ताकाभीभेदहै। प्रथम पक्षतोसिद्धांतरूपताकर स्वीकारहोनेसे तिसकोत्यागकर अंत्यपक्षको दूषितकरतेहैं हेवादिन्तिसज्ञानतथाज्ञेयकेभेदमेकोईप्रमाणहैवानहीं ।

ज्ञानसेभिन्नकरकेप्रपञ्चकीपृथक्सत्तामेयदिकोईप्रमाणनहीं।।तोप्रमाण केअभावसेज्ञानऔज्ञेयकाभेदसिद्धनहींहोगा।।औरज्ञानतथाज्ञेयकेभेदका कियाहुआ तिनकीसत्ताकाभीभेदनहींसिद्धहोगा । इसरीतिसेअंतिम पक्षकोनिषेधकरकेअवग्राह्यपक्षकोविस्तारपूर्वकनिषेधकरनेकेअर्थअनुवादकरतेहैं । हेवादिअन्यदिप्रमाणहैयहप्रथमपक्षकहोतोवहकौनप्रमाण है।अर्थात्क्या?वहप्रत्यक्षप्रमाणहै। अथवाअनुमानहै। वाआगमहै। वा अर्थापत्तिहै।।यहांउपमानप्रमाणकोकेवलसादृश्यमात्रगोचरहोनेसेतिस काकथननहींकिया ।। और अनुपलब्धिको अभावमात्रगोचरहोनेसे तिसकाभीकथननहींकिया ।।

❀ अथ ज्ञानज्ञेय के भेदमेप्रत्यक्षप्रमाणका खंडन ❀

ज्ञानऔज्ञेयकेभेदमे प्रत्यक्षप्रमाणहै ।। इसप्रथमपक्षकोदूषित करनेकेलिये अनुवादपूर्वकतिसमें विचारकरतेहैं । प्रथमपक्षमें “अयंघटः” यहजोप्रत्यक्षज्ञानहै।।वहअपनेसेघटकेभेदकोअर्थात् “अयंघटः” इसप्रकार केआकारवाले स्वस्वरूपभूतज्ञानसे घटअनुयोगिक भेदको प्रकाशकरताहैअथवा “यहघटइसको” विषयकरनेवालेज्ञानसेभिन्नहै।। इसप्रकारकाजोअन्यप्रत्यक्षहैवहतिनदोनोंकेभेदकोविषयकरताहै।स्वप्रतियोगिकऔविषयअनुयोगिक भेदकोआपही “अयंघटः” यहप्रत्यक्ष ज्ञानग्रहणकरताहै।।यदिअहप्रथमपक्षकहोतोतिसमेंभीयहविचारकर्तव्य है।क्या?“अयंघटः”यहप्रत्यक्षस्वप्रकाशहैअर्थात्अन्यकिसीज्ञानकाविषय नहुआअपरोक्षव्यवहारकेयोग्यहै। अथवापरमकाशहै। अर्थात्अन्यज्ञान काविषयहुआ अपरोक्षव्यवहार केयोग्यहै । “अयंघटः” यहप्रत्यक्षस्वप्रकाशहुआस्वप्रतियोगिक औस्वविषयअनुयोगिक भेदकोआपहीग्रहण

करता है। इस प्रथम पक्षको अनुवादकरके दूषित करते हैं।

✽ स्वप्रकाशप्रत्यक्षको भेदकी ग्राहकता

कानिपेधनिरूपणा ✽

स्वप्रकाशपरस्वप्रकाश इन दोनोंमें प्रथम पक्षमें तो अपनेसे आप ही उत्पन्न हुआ यह भासता होता है। क्योंकि स्वविषयका विशेषणरूपकर भेदका भास हुआ और विशिष्टज्ञानको विशेषणज्ञानजन्यमाने हुआ अपनेकर ही भेदरूप विशेषणका ग्रहण हुआ अपनेसे अपनी उत्पत्ति भास हुई। इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं। “अयं घटः” यह मत्स्यक्षस्वभूतियोगिकभेदको घटअनुयोगिकरूपतासे ग्रहण करता हुआ “मत्तो भिन्नो घटः” अ० मेरेसे घटभेदवाला है इस प्रतीतिके अनुसार विशेष्यघटका विशेषणरूपताकर भेदको ग्रहण करता है। अथवा “मदघटयोर्भेदः” ॥ अ० ॥ मेरा और घटका भेद है। इस प्रतीतिके अनुसार स्वभेदको विशेष्यरूपताकर ग्रहण करता है। यदि स्वविषयका विशेषणरूपताकर स्वभूतियोगिकभेदको मत्स्यक्षग्रहण करता है यह आदि पक्षकहो तो तिसमें भी यह विचार कर्तव्य है। क्या? विशिष्टज्ञानविशेषणज्ञान और विशेष्यके साथ इन्द्रियसन्निकर्षसे जन्य होता है अथवा विशेषण तथा विशेष्यके साथ इन्द्रियसन्निकर्षसे जन्य होता है। विशेषणज्ञानजन्य विशिष्टज्ञान है। इस पक्षमें भी यह विचार करणीय है। विशेषणरूपभेदका ग्राहकज्ञान यही मत्स्यक्ष है जो भेदका ग्राहकरूपताकर स्वीकार किया है। अथवा इससे भिन्न है। यदि प्रथम पक्षकहो तो विशिष्टज्ञान जो स्वभूतियोगिक और स्वविषयअनुयोगिकभेदका ग्राहकरूपताकर स्वीकार है सोई ही विशिष्टभेदज्ञानका जनकरूपतासे अभिमतविशेषणभेदका ज्ञान होनेकर अपनेसे आप उत्पन्न होता है। यह पूर्व उक्त दोषके से नहीं भाग होगा। अपनेसे अपनी

उत्पत्तिमाननेमें कौन दोष होता है ऐसी जिज्ञासाके हुए कहते हैं. इतरकेव्य
वधानसेविना अपनी उत्पत्ति में कारण रूपताकर अपनी अपेक्षा
होनेसे आत्माश्रयदोष प्राप्त होता है ॥ इति । अब आत्माश्रयदोषके दूर
करनेकेलिये प्रत्यक्षस्वप्ति योगिकभेदको विशेष्यरूपतासे ग्रहण करता है।
इसद्वितीयपक्षकोवादी उठाता है ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् “अयं
घटः” यह प्रत्यक्षभेदको विशेष्यरूपतासे ग्रहण करता है ॥ इसपक्षमें
घटरूपधर्मात्था प्रत्यक्ष रूपभक्तियोगीकोभेदका विशेषणपना है ॥
तिने भक्तियोगीरूपभक्त्यत्ततो स्वप्काशरूपताकरमानं होता है ॥ और
घटरूपअनुयोगीस्वगोचर “अयंघटः” यह जो भक्त्यत्तज्ञान तिसकरमान
होता है । इस प्रकार विशिष्टभेदप्रत्यक्षको विशेषणविशेष्य दोनोंके साथ
इन्द्रियसंबंधसे जन्यमानेहुए भी अपनेसे अजन्य होनेकर आत्माश्रयदोष
की प्राप्ति नहीं हो सकती ॥ समाधान ॥ हेवादिन्द्रसरीतिसे भेदको
विशेष्यरूपताकरमानपक्षमें विशेष्यके साथ इन्द्रियसन्निकर्षजन्यत्व
कोलेकर विशेषणविशेष्यदोनोंके साथ इन्द्रियसन्निकर्षजन्यविशिष्टज्ञान
है ॥ इसपक्षमेही आत्माश्रय दोष देनेको भूमिका रचना करते हैं ॥ हे
वादिन्द्रज्ञानकी उत्पत्तिसे पूर्व भेदकी सत्ता कहने योग्य है ॥ अर्थात् भेदके
ग्राहकरूपप्रत्यक्षज्ञानको विशेषणविशेष्यदोनोंके साथ इन्द्रियके संबंध
जन्यमानेहुए अथै भेदको विशेषणरूपवा विशेष्यरूपकरमानहुए भेद के
साथ इन्द्रियका संबंध ज्ञानकी उत्पत्तिसे पूर्व अवश्यकहना चाहिये। क्योंकि
भेदके साथ जो इन्द्रियका संबंध वह भेदके ग्राहकविशिष्टप्रत्यक्षका जनक है ॥
तथा इन्द्रियसन्निकर्षका भेदको आश्रयपना होनेसे भी तिसके अर्थ भेदकी
सत्ता अवश्यकहने योग्य है ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् इसरीतिसे भेदकी

सत्ताहोपरन्तुतैसामानेहुएक्या?सिद्धहोताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 तैसेमाननेमेयहविचारकर्तव्यहै ॥ इंद्रियकेसंबंधकाआश्रयजोभेदहै ॥
 वहअपनेग्राहकप्रत्यक्षको ज्ञातहुआउत्पन्नकरताहै अथवाअपनीसत्ता
 मात्रसेउत्पन्नकरताहै ॥ यदिज्ञातहुआउत्पन्नकरताहै यहप्रथमपक्षकहो
 तोजिसकरभेदज्ञातहुआहै वहज्ञानयहीहै जोभेदकाग्राहकरूपताकर
 स्वीकारहैअथवा वहज्ञानइससेअन्यहै॥प्रथमपक्षतोनहींसंभवता क्यों
 कितिसीज्ञानकावहभेदकैसेविषयहोसकताहै अर्थात्स्वप्रतियोगिकऔर
 स्वविषयअनुयोगिकभेदकाग्राहकरूपताकर अंगीकारकियाजोविशिष्ट
 प्रत्यक्षतिसकाकारणरूपभेदविषयनहींबनसकता॥कारणयहकिअपनी
 उत्पत्तिसेपूर्वअपनाअभावहै । औरयदिज्ञानकासद्भावप्रथममानलें तो
 आत्माश्रयदोपपुनः प्राप्तहोगा ॥इति॥ इसप्रकारप्रथमपक्षकोनिषेध
 करकेअवभेदकाग्राहकरूपताकरस्वीकारजो विशिष्टज्ञानतिसकीउत्पत्ति
 सेपूर्वजोभेदकाज्ञानहै वहऔरहीज्ञानहै।यातेआत्माश्रयदोपकी प्राप्ति
 नहीं।इसद्वितीयपक्षकोउठाकरदूषितकरतेहैं ॥ यहांपरयहतात्पर्यजानने
 योग्यहै ॥ वहज्ञानांतर क्या?निर्विकल्पकहै।अथवा। सविकल्पकहै ॥
 प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिभेदकोएकसविकल्पकज्ञानहीविषय
 करसकताहै ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिज्ञानांतरका
 “ अयंचटः ” यहज्ञानस्वयंप्रकाशहोनेसे विषयनहींहै ॥ इसीकारणसे
 तत्प्रतियोगिकभेदकोवहअन्यज्ञानविषयनहींकरसकता ॥ शंका ॥
 आगेहोनेवालाजोप्रतियोगिरूपज्ञान तिसकोवर्तमानकालमेनहोनेसे
 स्वप्रकाशरूपताकाअभावहै तिसीसेउसकोविषयकरनेवालेभेदज्ञानकी
 अनुपपत्तिनहीं ॥ समाधान ॥ अर्वाचमानताकोज्ञानकीपरप्रकाशता

मेहेतुकहनेवालेवादीने वर्तमानकालीनज्ञानको अर्थसे स्वप्रकाशता प्रतिपादनकी । तिसज्ञानकी स्वप्रकाशतामे वर्तमानत्वहेतुहै । अथवा ज्ञानत्वतिसका मयोजक अर्थात्साधकहै ॥ मथमपक्षमेतो वर्तमानकाल उपाधिकस्वप्रकाशपनासिद्धहोगा ॥ तैसेमानेहुएज्ञानका स्वाभाविक स्वप्रकाशपना अंगीकारहै इसपक्षकीहानी होगी ॥ औरवर्तमानकाल मेज्ञानकास्वरूपहीस्वप्रकाशहै यदियहद्वितीयपक्षमानो तोयहभीनहीं संभवता क्योंकिज्ञानत्वहेतुको तुल्यहोनेसे अतीतऔरभविष्यतज्ञानोंमे भीस्वप्रकाशताकीप्राप्तिहोगी ॥ जैसेकालभेदसेकदाचित्तभीघटअघट रूपनहींहोता ॥ तैसेकालभेदसेज्ञानकवीभीस्वप्रकाशनहींहोसकता ॥ औरअतीततथाभविष्यतज्ञानमेज्ञानत्वहेतुहीनहीं।यदिवादीऐसेकहेतो प्रत्येकवस्तुकेस्वभावकात्यागभासहोगा ॥ औरविशिष्टज्ञानविशेषणान सेजन्यहै।इसमथमपक्षकेअवांतरभेदकाविशेषणरूपतासेमानहोताहै।इस पक्षमेविशेषणज्ञानविशिष्टज्ञानसेभिन्नहै ॥यहपक्षपूर्वकहाथासोपक्षभी इसभेदज्ञानकेनिराकरणसेनिरासहुआजानलेना।क्योंकिवहभेदकाज्ञान सविकल्पकहै । वानिर्विकल्पकहै इत्यादिविकल्पकी भाषिइसपक्षमेभी समानहीहै ॥ इसलियेइसकोजुदानिपेधकरनेका मयत्ननहींकिया ॥ औरइंद्रियसन्निकर्षकाआश्रयरूपभेदस्वसत्तामात्रसेस्वविषयकज्ञानका जनकहै यहद्वितीयपक्षभीकेवलकथनमात्रहै ॥ शंका ॥ मत्यक्षज्ञान मेसंबंधभीभासताहै।औरवहसंबंधभेद तथाइंद्रियकायथायोग्य विशेषण विशेष्यभावहै । ज्ञानमत्यासतिरूपसंबंध नहीं। तिसकारणसेस्वरूपसे विद्यमानभेदको स्वज्ञानकेगतिजनकपना मक्रियामात्रहै । यहआपकेसे कथनकरतेहो ॥ समाधान ॥ हेवादिभेदमेप्रमाणकेअभावसेतिसकी

सत्तानहीं सिद्ध हो सकती। वह असत् भेद स्वगोचर ज्ञान को कैसे उत्पन्न करेगा और जो विशेषण विशेष्य भाव प्रत्यासत्ति पूर्वक थन की है। वह अवश्य हो परन्तु वह सत्पदार्थ की होती है असत् की नहीं। और भेद की सत्ता प्रमाण के आधीन है। या तो भेद विषयक प्रत्यक्ष से प्रथम भेद की सत्ता का ग्रहण करने वाला प्रमाण अवश्य अन्वेषण करने योग्य है। और तिसका अभाव होने से भेद की सत्तानहीं। और असत् भेद ज्ञान को उत्पन्न कैसे करेगा। और भेद की सत्ता का अभाव होने से विशेषण विशेष्य रूप प्रत्यासत्तिका भी अभाव भली प्रकार सिद्ध हुआ ॥ शंका ॥ यद्यपि “अयं घटः” यह प्रत्यक्ष ही स्वप्रकाश हुआ अपने विषय के भेद को ग्रहण करता है ॥ यह पक्ष नहीं संभवता। यह पूर्वक थन किया ॥ तथापि वही प्रत्यक्ष परप्रकाश हुआ स्वसे स्वविषय के भेद को ग्रहण करता है इस पक्ष में पूर्वक थन किये हुए आत्मा श्रयादि दोष की प्राप्ति भी नहीं ॥ क्योंकि परप्रकाश प्रत्यक्ष पक्ष में “अयं घटः” इस ज्ञान प्रतियोगिक अथवा विषय अनुयोगिक भेद का ग्राहक और ज्ञान है। या तो ऐसे मानने में कोई अनुपपत्ति नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादि नू ऐसे मानने में यह ही प्रत्यक्ष भेद को विषय करता है यह तुम्हारी भतिज्ञा भंग होगी ॥ या तो यह पक्ष भी असंगत है ॥ और स्वप्रकाश ज्ञान पक्ष में प्रतियोगिक रूप प्रत्यक्ष को अवेद्य होने से स्वप्रकाश ज्ञान प्रतियोगिक भेद को और कोई ज्ञान विषय करने को समर्थ नहीं हो सकता ॥ इस पक्ष को त्याग कर पर प्रकाश ज्ञान पक्ष में प्रत्यक्षांतर कर ज्ञान से ज्ञेय का भेद ग्रहण होता है। इस पक्ष को वादी उठाता है ॥ शंका ॥ हे सिद्धांतिन् “अयं घटः” इस प्रत्यक्ष को स्वप्रकाश रूपता कर भेद का अग्राहक हुआ भी परप्रकाश ज्ञान पक्ष में प्रत्यक्षांतर कर ज्ञान से ज्ञेय का भेद ग्रहण हो जायेगा इसमें कोई दोष नहीं ॥ यहाँ प्रतियोगिक रूप प्रत्यक्ष से भिन्न प्रत्यक्ष का

नामप्रत्यक्षांतरहै । अबइसपक्षकोदूषित करनेकेलियेविकल्पकरतेहैं ॥

*** ज्ञानपरप्रकाश पक्षमेंप्रत्यक्षांतरकोज्ञानज्ञेयके
भेदकीग्राहकताकानिषेध ***

समाधान ॥ हेवादिन्वहदूसरा प्रत्यक्षभीव्यावृत्तार्थात्भिन्न प्रतियोगीआदिकोंके ज्ञानपूर्वकभेदकोग्रहणकरताहै । वानहीं । यह विचारकर्तव्यहै ॥ प्रतियोगीआदिकोंके ग्रहणपूर्वकभेदकाग्रहणप्रत्यक्षनहींकरता । यदियहअंत्यपक्षमानों । तोवहभेदकोकैसेविषयकरेगा ॥ शंका ॥ प्रतियोगीआदिकोंकोविषयनकरकेवहप्रत्यक्षभेदकोक्योंनहीं विषयकरसकता ॥ समाधान ॥ हेवादिन्धर्मासेविनातथाप्रतियोगी सेविनाकेवलभेदमात्रको कोईज्ञानविषयनहींकरसकता ॥ यहांपरयह तात्पर्यजाननेयोग्यहै ॥ भेदकाग्रहणकरनेवाला जोअन्यप्रत्यक्षहै । वहनिर्विकल्पकहै । वासविकल्पकहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिभेदको समवायादिकोंकीन्याई एकसविकल्पकज्ञानकरहीविद्यमानहै । औरद्वितीयपक्षमेंभी यहविचारकर्तव्यहै । वहसविकल्पकज्ञान प्रमेयरूपतासेभेदकोविषयकरताहै अथवाभेदरूपतासेभेदकोविषयकरता है ॥ प्रथमपक्षतोनिष्फलहोनेसेनहींसंभवता ॥ क्योंकिप्रमेयरूपतासेजल काज्ञानहुएभीपिपासावान् पुरुषकीपिपासाकीशांतिके निमित्तजलानयनमेंप्रवृत्तिनहींहोती तैसेप्रमेयरूपतासेभेदज्ञानभीनिष्फलहै ॥ औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकिधर्माथौप्रतियोगीकेज्ञानसेविना भेदरूपतासेभेदकाज्ञानदुर्निरूप्यहै ॥ जिसकारणसेभेदकोधर्मिप्रतियोगी सापेक्षएकरूपताहै । अर्थात्धर्माथौप्रतियोगीकेग्रहणपूर्वकहीतिसके

ग्रहणकानियमहै । इसीअभिप्रायसे यहअनुभवलोकमेंप्रसिद्धहै ॥

“अयंअस्माद्भिन्नः” अ०—यहपदार्थइसपदार्थसेभिन्नहै ॥ इति ॥

अब व्यावृत्तिविशिष्ट प्रतियोगीआदिकोंके ज्ञानपूर्वकभेदका ज्ञानहोताहै इसआद्यपक्षको अनुवादपूर्वकदूषितकरते हैं । हेवादिन् भिन्नप्रतियोगीआदिकोंके ग्रहणपूर्वकभेदकाज्ञानमानेहुए प्रतियोगि ज्ञानभेदज्ञानमेहेतु प्रतीतहोताहै यहांप्रतियोगिज्ञान किसप्रकारका विवक्षितहै । यदितिसज्ञानकोनिर्विकल्पककहोगे । तोकिंचित्आकार प्रतियोगीभेदज्ञानमेभासेगा ॥ क्योंकिज्ञानकोस्वसमानाकारविषय काप्रकाशकपनाहै ॥ यदिज्ञानकोस्वसमानाकारविषयकाप्रकाशनहीं मानें । तोघटज्ञानमेपटाकारताकास्फुरणरूपअतिप्रसंगप्राप्तहोगा ॥ और यदितिसज्ञानकोसविकल्पककहो । तोवहज्ञानक्या ? प्रतियोग्यादिकों कोभिन्नरूपतासे ग्रहणकरताहै अथवातिनको अभिन्नरूपतासेग्रहणकरताहै । द्वितीयपक्षतोनहींसंभवता क्योंकिधर्मातथाप्रतियोगीके अभेदग्रहणकरनेवालेकोप्रमाणरूपहोनेकर तिससेउत्तरभेदकाग्राहक रूपताकर अंगीकारकियाजोप्रत्यक्षतिसकोअप्रमाणाताकीप्राप्तिहोगी । कारणयहकितिन प्रतियोगीआदिकोंके ज्ञानकोआश्रयणकरके उत्तर भेदज्ञानकीप्रवृत्तिहोतीहै ॥ जबप्रतियोगीआदिकोंकाज्ञानतिनकेअभेदकोग्रहणकरताहै तोतिसको आश्रयण करके प्रवृत्तहुआजो उत्तरज्ञान वहतिन के भेदकोग्रहण करताहुआ कैसेअप्रमाणरूप नहींहोगा ॥ यातेभिन्नरूपतासे धर्मादिकोंकाग्रहणहीरोप रहताहै । अबइसप्रथमपक्षकोदूषितकरते हैं ॥ औरव्यावृत्ति विशिष्टप्रतियोगी आदिकोंके ग्रहणपूर्वकभेदका ज्ञानहोताहै । यदि

यहपूथमपंचमानो तोभिन्नरूपतासेप्रतियोगी आदिकोंकोग्रहणकरने वालाजोदूसराप्रत्यक्षवहभीभेदज्ञानहै ॥ तिसकोभीभेदरूपविशेषण करविशिष्टजोप्रतियोगीआदिक तिनकेज्ञानकरहीजन्यपनाहै । यदि तिनकाग्राहकऔरप्रत्यक्षस्वीकारकरो तो अनवस्थादोपकीप्राप्तिहोगी औरभेदकाग्राहकरूपताकर स्वीकार किया जोप्रत्यक्षतिसकोही व्यावृत्तिविशिष्टप्रतियोगीआदिकोंकाज्ञानमानेहुए अपनेसेअपनीउत्पत्ति होनेकर आत्माश्रयदोपप्राप्तहोगा ॥

॥ शंका ॥ प्रत्यक्षकोभेदका अग्राहकमानेहुएनिर्विषयपनाहोगा ॥ औरनिर्विषयज्ञानही अलीकहै ॥ समाधान ॥ हेवादिभूतिसपूर्वउक्त युक्तिसमुदायसेवस्तुमात्रको ग्रहणकरनेवालाजोप्रत्यक्षप्रमाणहैसोभेद कीवार्त्तामात्रकोभीनहींग्रहणकरसकता । यह अर्थसिद्धहुआ । इति ।

❀ अथअनुमानप्रमाणको ज्ञानज्ञेयकेभेदकी ग्राहकताका निराकरण ❀

इसप्रकारप्रत्यक्षकोभेदकी ग्राहकताकानिषेध करकेअवअनुमानभेदकाग्राहकहै इसद्वितीपक्षको शंकाद्वारा प्रकटकरतेहैं ॥ शंका हेसिद्धातिन्यदि प्रत्यक्षभेदका ग्राहकनहींहै ॥ तोअनुमानप्रमाणसे ज्ञानतथाज्ञेयकाभेद ग्रहणहोगा । तैसेहीदिखलातेहैं ॥

विमतोविषयः । स्वविषयज्ञानात् भिद्यते ॥ तत्विरोद्धधर्माश्रयत्वात् । योयद्विरोद्धधर्माश्रयः सतु तस्मात् भिद्यतेयथाघटात्पटःतथाचायंतस्मात्तथा ।

अ० ॥ विवादकाविषयजोज्ञेयहै ॥ वहस्वविषयकज्ञानसेभिन्न हैज्ञानसेविरोद्धजो जडताअर्थात्अप्रकाशतारूपधर्मतिसकाआश्रयहोने

से ॥ जोजो जिससे विरुद्ध धर्मका आश्रय होता है। सो सो तिससे भिन्न होता है। जैसे घटसे भिन्न पट है। और तैसे ही यह विषय विरुद्ध धर्मका आश्रय है तिसीसे स्वविषयक ज्ञानसे भिन्न है ॥ इति ॥ विषय रजत घट ज्ञानसे भिन्न है याते सिद्ध साधनता दोष अनुमानमे होगा ॥ इसलिये "स्वविषय" यह विशेषण साध्यमेक धन किया है ॥ समाधान ॥ हेवादि ज्ञान ज्ञेयके भेदमे यह अनुमान भी स्वरूपाऽसिद्ध दोषसे नहीं संभवता। क्योंकि धर्मनिष्ठ विरुद्धपना विरोधकी आधारतासे है यह वार्त्ता विवादरहित है। और ज्ञान तथा ज्ञेयका जो विरोध है सो तिन दोनोंका भेद जानेहु एही ज्ञात हो सकता है ज्ञान तथा ज्ञेयका भेद जानेविना उसको कोई नहीं जान सकता। और तिनका भेद त्रयी सिद्ध करने योग्य है तिसकी असिद्धि हु एतिसके आधीन जो विरोधरूप धर्मका विशेषण तिसकी असिद्धि होनेकर धर्मको तिसविरोधका आश्रयपना भी असिद्ध है। याते पक्षमे यह हेतु स्वरूपसे ही असिद्ध होनेकर स्वसाध्यका साधक नहीं किंवा ज्ञानप्रतियोगिकभेद सिद्ध करते हो। अथवा भेदमात्र सिद्ध करते हो। अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि तिसमे हमारा विवाद नहीं। और यदि प्रथम पक्षकहो तो साध्यकी अप्रसिद्धि है। और पक्षका विशेषणरूप साध्यकी अप्रसिद्धि होनेकर पक्षकी भी असिद्धि है। याते आश्रयासिद्धि भी अनुमानमे प्राप्त है। और यदि तुम ऐसा अनुमान करो ॥

ज्ञानतद्विषयौ परस्पर भिन्नौ विरुद्धधर्माश्रय
त्वात् ॥ घटपटवत् ॥

अ० ॥ ज्ञान और तिसका विषय परस्पर भिन्न हैं। विरुद्धधर्मोंका आश्रय होनेसे। जो जो विरुद्धधर्मका आश्रय होते हैं सो सो परस्पर भिन्न होते हैं ॥ जैसे घटपट हैं ॥ इति ॥ इसमे साध्यकी अप्रसिद्धि नहीं ॥

क्योंकिपरस्परभेदघटादिकोंमेंसिद्धहै यातेअप्रसिद्ध विशेषणरूपतासे
 आश्रयकीअसिद्धिनहींहै।सोयहकथनभीनहींसंभवता।क्योंकिव्याप्तिकी
 असिद्धिहै।सोदिखलातेहैं।साध्यऔरसाधनकाव्यभिचारसेरहितजो
 संबंधतिसकानामव्याप्तिहै।औरसंबंधकोदोनोंसंबंधियोंकेआधीनहोने
 सेतिनदोनोंसंबंधियोंकीसत्ताअवश्यहोनेयोग्यहै।तिनमेसाध्यतोदृष्टांत
 मेभीविद्यमाननहींहै।क्योंकिप्रमाणकाअभावहै।तिसीकारणसेसाध्य
 कीअप्रसिद्धिहोनेकरतिसरनिरूपितव्याप्तिभीअसिद्धहै।इसप्रकार
 व्याप्यत्वासिद्धहेतुहै।इसकथनसेआश्रयसिद्धिभीअर्थसेकथनकीक्यों
 किअप्रसिद्धविशेषणवालापक्षहै।औरघटतथापटकाभेदकिसीप्रमाण
 करसिद्धनहींजिसकरसाध्यकीप्रसिद्धिहोप्रत्यक्षतोघटऔरपटकेभेदमे
 प्रमाणनहींहै।क्योंकितिसकोआगेनिराकरणकरनाहै॥औरभ्रूत
 अनुमानसेभिन्नकिसीऔरअनुमानसेघटपटकाभेदग्रहणहोजायेगा
 यदिऐसेकहोतोतिसमेभीव्याप्तिकाग्रहणतिसीअनुमानसेमानोगेतो
 आत्माश्रयदोषभासहोगाऔरस्यदितिससेभिन्नअन्यअनुमानव्याप्तिका
 ग्राहकमानोतोअनवस्थादोषभासहोगा।इसप्रकारपूर्वउक्तदोषपूर्वकी
 न्याईहीभासहुएयातेअनुमानप्रमाणसेभीज्ञानतथाज्ञेयकाभेदनहींग्रहणहो
 सकता॥अवज्ञानज्ञेयके—

*** अथज्ञानज्ञेयकेभेदमेंआगमकोप्रमाणाता
 कानिराकरण ***

भेदमेआगमप्रमाणहै।इसतृतीयपक्षकोदूषितकरतेहैं।हेवादिन
 पूर्वकांडतथाउत्तरकांडरूपवेदहीआगमप्रमाणहै।तिनमेपूर्वकांडकातो
 साध्यसाधनकासंबंधकथनकरकेसंस्कारद्वाराअथवाश्रवणादिकोंमे

भवृत्तिद्वारा अद्वितीयब्रह्ममेतात्पर्यपूर्वनिरूपणकिया है ॥ और पटप्रकार के लिंगयुक्त उत्तरकांडका तो साक्षात् ही अद्वैतमेतात्पर्य है याते आगम प्रमाणको भेदके बोधकपने की शंका भी नहीं कर सकते ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् ॥ यतो वा इमानि भूतानि जायंते ॥

अ० ॥ जिससे यह सर्वभूत उत्पन्न होते हैं ॥ यह शास्त्रब्रह्मसे सृष्टिको प्रतिपादन करता हुआ “देवताऽधिकरणन्याय” से सर्वकार्य मात्रका तिस ब्रह्मसे भेद भी प्रतिपादन करता है ॥ देवताऽधिकरणन्यायका स्वरूप पूर्वकथन कर दीया है ॥ और यदि तुम ऐसे कहो कि पूर्व उक्त वाक्य अभिन्ननिमित्त उपादानरूप ब्रह्मसे सृष्टि मात्र को कथन करता है । तिससे कोई भेद नहीं प्रतीत होता । याते देवताऽधिकरणन्यायसे तिस वाक्यको कार्यकारणके भेदमे प्रमाणयता कैसे हो सकती है । सो यह कथन भी नहीं संभवता । क्योंकि ब्रह्म तथा जगत्का अभेद माने हुए तिस ब्रह्मसे जगत्की उत्पत्ति नहीं संभवेगी । जैसे घटसे घट नहीं उत्पन्न हो सकता । क्योंकि एक ही पदार्थमे पूर्व उत्तरवृत्तित्व नहीं है । और यदि तुम ऐसे कहो कि इस रीतिसे ब्रह्म और जगत्का भेद हुए भी ज्ञान और ज्ञेयके भेदमे क्या प्राप्त हुआ भावयह ज्ञानकार्यरूप नहीं है । क्योंकि कार्य जड है । और ज्ञान ब्रह्मस्वरूप भी नहीं । क्योंकि तिस ब्रह्मको असंगस्वभाव होनेकर घटादिकोंका अप्रकाशकपना है । इस प्रकार ब्रह्म और जगत्को ज्ञानरूपताका अभाव होनेसे ब्रह्म और जगत्का भेद हुए भी ज्ञान तथा ज्ञेय का भेद कैसे हो सकता है ॥ सो यह तुम्हारा कथन भी असंगत है ॥ जिस कारणसे प्रकाशकस्वभाव ज्ञान है ॥ और वृत्तिमे प्रतिविंचित हुआ चिद्रूप ब्रह्म ही जगत्का प्रकाशक है वृत्ति नहीं ॥ क्योंकि तिसको जड होनेकर अप्रकाशकपना है ॥ और —

❀ सविशेषगोहि ❀

अ० ॥ विशेषणसहितपदार्थमेजोवृद्धिहोतीहै ॥ वहविशेषण
 अंशमेवाधितहुईविशेषकोप्राप्तहोतीहै ॥ इसन्यायसे वृत्तिअवच्छिन्न
 ब्रह्ममेप्रकाशकपनेकी प्रतीतिद्वएतहांवृत्तिरूप विशेषणमेप्रकाशकपना
 बाधितहै ॥ यातेविशेषचेतनमात्रब्रह्ममेही काशकपनेकीप्राप्तिहोनेकर
 ज्ञानरूपताकासंभवहै ॥ इसीसेब्रह्मसेजोकार्यकाभेदहैवहज्ञानसेहीभेदहै
 यातेआगमप्रमाणसेज्ञानअज्ञेयकेभेदकीसिद्धिहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 यहांलुमकोयहकथनकरनेयोग्यहैपूर्वकथनकियाजोआगमहै क्या? वह
 कार्यकारणभावकाप्रतिपादकमात्रहोनेकरज्ञानज्ञेयकेभेदकासाधकहै ॥
 अथवाकार्यकारण भावविषयक मात्रज्ञानकाउत्पादक होनेकरभेदका
 साधकहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभयता ॥ क्योंकि "विषमंभुद्व" अ०
 विषकोतूंभक्षणकर ॥ इत्यादिवाक्यमे अतिप्रसंगहोगा ॥ भावयह
 केवलप्रतिपादकतामात्रकरयदिवाक्यकिसीअर्थमेप्रमाणहोतोयहवाक्य
 भीविषमक्षणेमेप्रमाणहूआचाहिये ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहीं संभवता
 क्योंकिवहश्रुतिवाक्यवादियोंकर कल्पितप्रधानादिककारणांतरोंकेनिरा
 करणमेतात्पर्यचालाहै ॥ इसलियेकार्यकारणभावकावहप्रमाणकनहीं।
 औरतात्पर्यकेविषयभूत अर्थमेहीशब्दकीप्रमाणताहोतीहै ॥ यहपूर्व
 कथनकरआएहैं ॥ अबइसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं। "यतोवाइमानिभूता
 निजायंते" इसश्रुतिमे "इमानि" यहप्रथमभूतोंकाविशेषणहै ॥ तिस
 विशेषणकरनामतथारूपसेस्पष्टऔरमनकरकेभी जिनकीरचनाचिंतन
 नहींकीजाती ऐसेभूतोंकेधर्मसमर्पणकियेजातेहैं ॥ तिनधर्मोंकरयुक्त
 प्रपंचकीरचनाअचेतनप्रधानादिकोंसेतथाअल्पशक्तिवालेहिरण्यगर्भा-

दिकोंसेनहींसंभवती । यातेपूर्वउक्त समग्रश्रुतिवाक्य सांख्यादिकोंने कल्पनाकीयेहुएजोप्रधानादिककारणांतरतिनकेनिपेधपरहैं ॥ शंका ॥ समग्रसृष्टिप्रतिपादकवाक्योंकोवादियोंनेकल्पनाकियेजो जगत्केकारण प्रधानादिकेनिपेधपरत्वनहींसंभवता ॥ क्योंकिसमन्वयअधिकरणका विरोधहै ॥ अर्थयह—

❀ तत्समन्वयात् ॥ शा० आ० १ पा० १ ॥ सू० ४ ॥ ❀

अ० ॥ तुशब्दपूर्वपक्षकोनिवारणकरताहै “ तत् ” वहजगत् कारणअद्वितीयब्रह्मवेदांतोंसेहीनिश्चयहोताहै ॥ क्योंकि(समन्वयात्) तिसमेहीसर्ववेदांतोंकेतात्पर्यकीचिपयताहै ॥ इसअधिकरणमेसमग्र वेदांतवाक्योंकाएकअद्वितीयब्रह्ममेतात्पर्यनिरूपणकियाहै ॥ औरयदि आपयहांपरसृष्टिवाक्योंकाप्रधानादिकारणांतरके निराकरणमेतात्पर्य कहोगे तोइसअधिकरणसेस्पष्टहीविरोधहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् तात्पर्यदोप्रकारकाहोताहै एकअवांतरतात्पर्य हैऔरदूसरापरमतात्पर्यहै यहांअवांतरतात्पर्यसृष्टिवाक्यनकाप्रधानादिककारणांतरकेनिराकरण मेहै ॥ औरपरमतात्पर्यतोअद्वितीयब्रह्मकीसंभावनामात्रमेहै ॥ अर्थात् सजातीयादिकभेदसेरहितजो ब्रह्मकास्वरूपपूर्वकथन कियावहऐसाही होनेयोग्यहै ॥ इसप्रकारकेआकारवालीअद्वितीयब्रह्मकीसंभावनामात्र मेतिनकातात्पर्यहै ॥ जिसकारणसेब्रह्मसेसकलकार्यप्रपंचकाभेदनिरूपणनहींहोसकता जैसेमृदादिकारणसेघटादिकार्य भिन्नकरकेनिरूपण नहींकियेजाते ॥ यदितिनकाभेदमानेतो हिमगिस्तियाविंध्यगिरिकी न्याईकार्यकारणभावकाहीअदर्शनहोगा ॥ और “मृदघटः” इससामानाधिकरणसेतिनकाअभेदमाननेमेहीकार्यकारणभावयुक्तहै अन्य

प्रकारसे नहीं ॥ यातेसमन्वय अधिकरणका विरोध नहीं आता ॥ शंका ॥ सृष्टिका थौघटका अभेद माने हुए पूर्वउत्तरभावका असंभव होनेसे पूर्वउत्तरभावकर व्याप्तजोकार्यकारणभावहै वहभेदसेविना अनुपपन्नहै यातेमृष्टिवाक्यभेदमेंही तात्पर्यवालाक्योंनहो। समाधान हेवादिन्यदिभेदको सृष्टिवाक्यकेतात्पर्यका विषयमाने ॥ तो "नेह नानास्ति किंचन" इत्यादि श्रुतिसेतिसभेदकाजो निषेधहैवहव्यर्थ होगा ॥ जिसकारणसे अखंडवस्तुकीसिद्धिके अर्थभेदकानिषेधहै। और श्रुतितात्पर्यका विषयभेदकोमाने हुए तिसभेदकानिषेधव्यर्थ है। औरभेदसेविनाएकही वस्तुमेंपूर्वउत्तरभावका असंभवहोनेकर कार्यकारणभावनहींसंभवेगा ॥ यहतुम्हाराकथनभी समीचीननहीं। क्योंकिकल्पितभेदकोआश्रयण करकेकार्यकारणभावको माने हुए विरोधकाअभावहै ॥ किंवा ॥ सृष्टिवाक्यभेदपरहे इसकाक्याअर्थहै। क्या ? यहवाक्यपदार्थ रूपतासेभेदकोसाक्षात्बोधनकरताहै अथवा वाक्यकाअर्थरूपताकर भेदकोबोधनकरताहै ॥ वा। भेदसेविनाकार्य कारणभावजोवाक्यका अर्थवहअनुपपन्नहै इसलियेतिसवाक्यार्थका उपपादकरूपताकर भेदकोअर्थसेसृष्टिवाक्यकल्पनाकरताहै। तिनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिसृष्टिवाक्यमेंकोईभी पदसाक्षात् भेदकोनहींप्रतिपादनकरता ॥ तिसमेंभेदकेवाचकपदकाअभावहै ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिभेदकोकिसीपदकाअर्थन होनेसेवाक्यार्थत्वकाभीअभावहै ॥ शंका ॥ जैसेशत्रुकेगृहसंभोजन कीनिवृत्तिकिसी पदकाअर्थनहींतोभी "विपमुंक्ष्व" इसवाक्यका तिसकोअर्थपनाहै ॥ तैसेब्रह्मथौजगत्काभेद किसीपदकाअर्थयद्यपि

नहीं है तथापि सृष्टिवाक्यका अर्थपना तिसमें संभव हो जायेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन्पदार्थोंको ही संसर्गीरूपताकर साक्षात्वाक्यका अर्थपना है ॥ और यदि अखंडवाक्यार्थत्वपक्षको आश्रयण करे तो पदार्थको ही धर्मीमात्र परता होनेकर साक्षात्वाक्यप्रतिपाद्यता है ॥ इस कारण से परगृहमें भोजनकी निवृत्तिको अपदार्थ होनेसे साक्षात् वाक्यार्थता नहीं है ॥ यत्तेको ईदोप नहीं। और तृतीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि प्रथम सृष्टिवाक्यतो कार्यकारणभावको कल्पना नहीं कर सकता जिससे वह अचेतन है ॥ और वाक्यार्थको देखकर पुरुषभेदकी कल्पना करता है। यह भी असमीचीन है। क्योंकि पुरुषकल्पनाका भेद निषेधक श्रुतिके साथ विरोध होनेसे तिसको अभासरूपता है। इसरीतिसे ज्ञानस्वरूपब्रह्म औजगत् रूपज्ञेयके भेदमें कार्यकारणभावकी अनुपपत्ति प्रमाण है ॥ यह अर्थापत्ति प्रमाण पूसंगसे निराकरण किया ॥

अथ ज्ञानज्ञेयके भेदमें अर्थापत्ति प्रमाणका निराकरण

अज्ञानकी अन्यथा अनुपपत्ति ज्ञान औज्ञेयके भेदमें प्रमाण है इस चतुर्थपक्षको निषेध करनेके लिये पूर्वपक्षीद्वारा इसपक्षको प्रकट करते हैं।

*** अथ पूर्वपक्ष ***

शंका ॥ ज्ञानही स्वभिन्नज्ञेय से विना अनुपपन्न हू आश्रयनेसे भिन्नज्ञेयको विषय करता है ॥ जैसे दाहके योग्यकाष्ठादिकोंसे विना अग्निस्वरूपको नहीं प्राप्त होता ॥ तैसे ज्ञेयसे विना ज्ञानभी स्वरूपको नहीं प्राप्त होता है ॥ तिसकारणसे ज्ञेयकी सत्ता ज्ञानसे भिन्न अवश्य होने योग्य है ॥ और वह ज्ञान आपही ज्ञेयस्वरूप नहीं हो सकता। क्योंकि एक वस्तुको उभयरूपमाननेमे कर्तृकर्मभावविरोध प्राप्त होता है ॥ तिसीसे

ज्ञानस्वभिन्नज्ञेयसेविना अनुपपन्नहूयाज्ञेयकी कल्पना करता है ॥ इसरीतिसे ज्ञान तथा ज्ञेयका भेद सिद्ध है ॥ शंका ॥ हेवादिन्दाहके योग्य काष्ठादिकोंसे उत्पन्न हूया अग्निकाष्ठादिसे विना अनुपपन्न है यह कथन तो युक्त है परंतु ज्ञान तो किसी विषयसे जन्य नहीं है ॥ तिससे विषयविना ज्ञान नहीं संभवता ॥ यह कथन कैसे बन सकता है ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् अर्थके प्रकाशकानाम ज्ञान है ॥ अर्थके अत्यंत असत् हूए किसका प्रकाश ज्ञानको कहेंगे । तिसकारणसे ज्ञानको अर्थके आधीन होनेकर विषयके अभाव हूए तिसका स्वरूप ही नहीं सिद्ध होगा ॥ शंका ॥ हेवादिन्नवनता हूया भी अर्थ यदि प्रमाण सिद्ध हो तो स्वीकारकी आजाता है ॥ जैसे सूर्यमें असंभावित भी छिद्र है परंतु उत्पातकालीन प्रमाण सिद्ध माना जाता है तैते अर्थसे विना भी ज्ञान बन जायेगा । समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् निर्विषय ज्ञान संभवता नहीं और कहीं देखनेमें भी नहीं आता । क्योंकि विषयके सहित ही ज्ञान भासमान होता है ॥ शंका ॥ जैसे कोई भूतलघटवाला हूया भी उससे भिन्न भूतलघटसे रहित भी देखा है । तैसे किसी ज्ञानको सविषय हूए भी उससे भिन्न ज्ञान निर्विषय ही क्यों न हो । किन्तु हूया चाहिये । समाधान ॥ ज्ञानको निर्विषय माने हूए प्रकार शून्य ही ज्ञान भासेगा ॥ यद्यपि “अयं घटः” इस ज्ञानमें घटविषय है और घटत्वधर्म इसमें प्रकार है । यह वार्त्ता हमदोनोंको संमत है । तिससे विषय और प्रकारका परस्पर भेद होनेसे विषयके अभाव हूए प्रकार शून्य ज्ञान भासेगा । यह लुमकैसे कथन करते हो । तथापि ज्ञानमें विषयसे भिन्न और कोई प्रकार नहीं है । क्योंकि ज्ञानमें भासमान जो संसर्ग तिसके निरूपकका नाम प्रकार है “जैसे अयं घटः”

इसज्ञानमेघटतथाघटत्वकासमवायभासताहै ॥ तिससंसर्गकीआधास्ता
 घटमेहैथौरतिसकीनिरूपकताघटत्वमेहै ॥ यातेघटत्वज्ञानमेप्रकार है ॥
 तैसेप्रकरणमेभीविशेष्यघटकीन्याईभासमानजोघटत्वरूपप्रकार वह भी
 तिसज्ञान का विषयहै ॥ तिसकेअभावहूएप्रकारशून्यहीज्ञानभासेगा ॥
 तिसकारणसेज्ञेयविनाज्ञानअनुपपन्नहूया अभेदमेकर्तृकर्मविरोधहोने
 करअपनेसेभिन्नज्ञेयकीकल्पनाकरताहै ॥ इतिपूर्वपक्ष अथसिद्धांत
 समाधान ॥ हेवादिन् ज्ञेयसेविनाज्ञानकी अनुपपत्तिकाअभाव है ॥
 तैसेहीदिखलातेहैं ॥ क्या? ज्ञेयसेविनाज्ञानकीउत्पत्तिकीअनुपपत्तितिन
 केभेदमेप्रमाणहै। अथवाज्ञानकीस्थितिकीअनुपपत्तितिनकेभेदमेप्रमाण
 है ॥ वाज्ञानज्ञप्तिकीअनुपपत्तितिनकेभेदमेप्रमाणहै ॥ यहांज्ञानके
 ज्ञानकानामज्ञसिहै ॥ प्रथमपक्षमेयहविचारकियाचाहिये ॥ क्या? यह
 हमारेएकदेशिकामतहै अथवानैयायिककामतहै ॥ प्रथमपक्षकहोतो
 ज्ञानकीस्वरूपतासेउत्पत्तिकाअभावहै। यद्यपिवृत्तिउपहितत्वाकाररूपता
 सेज्ञानकीउत्पत्तिकारणसंभवहै ॥ तथापिस्वरूपसेतिसकोनित्यभावहोनेकर
 उत्पत्तिकाअभावहै। यातेप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥ औरद्वितीयपक्षमेतोपू
 मारणऔरप्रमाणाभाससेहीतिसज्ञानकीउत्पत्तिसंभवहूएविषयकीतिस
 कोआपेक्षाहीनहींहै ॥ यातेज्ञानकीउत्पत्तिअन्यथाउपपन्नहोनेसेयहअर्था
 पत्तिज्ञानज्ञेयकेभेदमेप्रमाणनहींहोसकती ॥ शंका ॥ जैसेप्रमातथाअप्रमा
 ज्ञानयहदोनोंप्रमाणऔरप्रमाणाभासकोकारणरूपताकरअपेक्षाकरतेहैं ॥
 तैसेकारणत्वधर्मकीतुल्यतासेविषयकीभीवहदोनोंअपेक्षाकरेंगे । याते
 विषयसेविनातितनकीउत्पत्तिकैसेसंभवगी ॥ किंतुनहींसंभवती ॥ समाधान
 हेवादिन्ज्ञानकोसर्वत्रविषयजन्यताकानियमनहींहै ॥ क्योंकिअनुमिति

आदिकज्ञानोंमें विषयजन्यता का व्यभिचार है। याते आद्यप्रथमपक्ष असां-
 गत है। और ज्ञानकी स्थितिकी अनुपपत्तिज्ञानज्ञेयके भेदमे प्रमाण है।
 यह द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि विषयनिष्ठज्ञानकी अधिकरणता
 का अभाव है। यदि विषयको भी ज्ञानका आश्रयमान लें तो तिसमे प्रमा-
 तृत्वकी प्राप्ति होगी। और विषयपने का व्याघात होगा। यद्यपि “ज्ञातो
 घटः” इस प्रतीतिसे ज्ञानकी अधिकरणता घटमे प्रतीत होती है। याते विषय
 भी ज्ञानका आश्रय बन सकता है। तथापि “नष्टो घटः” अ० ॥ नाशका
 आश्रय घट है। जैसे इस प्रतीतिमें नाशकी अधिकरणता घटमे भासती है
 परन्तु वास्तव अधिकरणता नहीं तैसे उस प्रत्ययमे भी जानकर संतोष करने
 योग्य है। अब तृतीयपक्षको दूषित करनेके लिये वादी द्वारा तिसको पूरक
 करते हैं। (अथ पूर्वपक्ष) हे सिद्धांतिज्ञेयसे विना ज्ञानज्ञातिकी अनुपपत्ति
 ज्ञानज्ञेयके भेदमे प्रमाण है। शंका ॥ हेवादिज्ञानज्ञाति अर्थात् ज्ञानका जो
 ज्ञान है। तिसका विषय भूत जो प्रथम ज्ञान है। क्या? विषयसे विना तिसका
 स्वरूप नहीं सिद्ध हो सकता। समाधान ॥ हे सिद्धांतिज्ञानविषयक ज्ञान
 को विषयके ज्ञानकी अधीनता है। अर्थात् विषयसे व्यावृत्त ज्ञानकरजन्य
 पना है। तिसी कारणसे ज्ञानकी न्यायज्ञानके विषयको ज्ञानज्ञातिमे कारणता
 होनेसे तिस विषयके अभावहुए ज्ञानज्ञातिकी अनुपपत्ति है ॥ इति ॥ (अथ
 सिद्धांत) हेवादिज्ञानकी ज्ञातिका ही अभाव होनेसे ज्ञानज्ञातिका कारणरूप
 करज्ञेयकी सिद्धि नहीं हो सकती। अब इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं। ज्ञान क्या?
 अपने व्यवहारके अर्थ अपनेसे भिन्न ज्ञानकी अपेक्षा करता है। अथवा विषयके
 व्यवहार अर्थस्वभिन्न ज्ञानकी अपेक्षा करता है। अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता।
 क्योंकि विषय तो अन्वयार्थ भी सिद्ध नहीं हुआ। जिसके व्यवहार अर्थज्ञानांतर

की अपेक्षा हो । और प्रथम पक्ष भी नहीं संभवता । क्योंकि ज्ञानको स्वयं प्रकाशमान होनेकर अर्थात् अवेद्य हुआ अपरोक्ष व्यवहारके योग्य होनेकर तिसको अपने व्यवहारके अर्थस्वभिन्न ज्ञानकी किंचित् भी अपेक्षा नहीं है ॥ शंका ॥ ज्ञानस्वप्रकाश नहीं है । क्योंकि तिसको घटादिकों की न्याईवस्तुरूपता होनेसे वेद्यपना है ॥ समाधान ॥ ज्ञान क्या ज्ञात हुआ विषयका साधक है । वा अज्ञात हुआ भी विषयका साधक है । प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि प्रथम ज्ञानकी न्याई ज्ञानके प्रकाशक द्वितीय ज्ञानको भी ज्ञात हुआ ही स्वविषयका साधक मानना होगा । और द्वितीय ज्ञानके प्रकाश अर्थ तृतीय ज्ञानको अन्वेषण किये हुए तिस तृतीय ज्ञानको भी ज्ञात ही कहना होगा । तिसमें चतुर्थ ज्ञानकी अपेक्षा होनेसे अन्वस्थादोषकी प्राप्ति होगी ॥ शंका ॥ यह अन्वस्थादोषके लिये नहीं है क्योंकि मूलभूत प्रथम ज्ञानविनाशसे रहित है और मूलके क्षय करनेवाली अन्वस्था ही दोषरूप होती है । याते ज्ञानांतरकी अपेक्षा हुआ कोई दोष नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादि न ज्ञानोंकी धारामे जो ज्ञान ज्ञात नहीं होगा तिसको असत् होनेकर तिसका विषयभूत जो ज्ञान है वह भी प्रमाणके अभावसे असत् हो जायेगा ॥ इस प्रकार सकल ज्ञानधारको असत् होनेसे मूलभूत प्रथम ज्ञानकी भी अस्ति होगी । तिस प्रथम ज्ञानको असत् हुआ जडप्रपंचकी स्वतः सिद्धि का अभाव होनेसे तिसकी प्रतीति नहीं होगी ॥ इसरीतिसे ज्ञानका परप्रकाशक पनायुक्त नहीं ॥ और अज्ञात हुआ ज्ञानस्वविषयका साधक है ॥ यह द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि प्रमाणके अभाव होनेकर न श्रृंगकी न्याई अपनी स्वरूपसत्ता ही अस्ति है । तो और विषयकी साधकता तिसको कैसे हो सकती है ॥ शंका ॥ जिस किसी कालमें प्रमाणाकी

प्रवृत्तिहोनेकर ज्ञानकास्वरूप सिद्ध होजायेगा ॥ समाधान ॥
 हेवादिन् "तुष्यतोदुर्जन" न्यायसेज्ञानकोज्ञानांतरकीअपेक्षाहो ॥
 तथापिविषयभूतज्ञानकाविषयजोयत्नादिकहैं ॥ तिनकीअपेक्षाज्ञान
 विषयकज्ञानकोकैसेहोसकतीहै ॥ किंतुकिसीप्रकारनहीं ॥ यहांयह
 भेदजानलेना ॥ ' पूर्वप्रकरणमेज्ञानकाज्ञानसंभवहीनहींहोसकता ॥
 यहअसंभवदोषअर्थीपत्तिमेकथनकिया ॥ औरअवृत्तिसअर्थीपत्तिकी
 अन्यप्रकारसेहीउपपत्तिनिरूपणकरतेहैं ॥ ज्ञानकीज्ञप्तिस्वविषयभूत
 ज्ञानकीहीअपेक्षाकरती है ॥ स्वविषयरूपज्ञानकेविषयकीअपेक्षानहीं
 करती ॥ क्योंकिस्वविषयरूपज्ञानमात्रमेवहचस्तार्थहै ॥ शंका ॥
 हे सिद्धांतिन् ज्ञानज्ञप्तिमे क्या ? ज्ञान सामान्यविषय है ॥ अथवा
 ज्ञान विशेष विषयहै । प्रथमपक्ष नहीं संभवता ॥ क्योंकि घटका
 ज्ञानहै । ऐसातिसज्ञप्तिका आकारहै । ज्ञानसामान्यकोविषयमानेहुए
 विशेषज्ञानकेस्फुरणकी अयोग्यताहै ॥ यातेज्ञानमात्रविषयताकी
 अयोग्यताहोनेसे सामान्यज्ञानकी तिसज्ञप्तिकोअपेक्षानहीं ॥ और
 यदिद्वितीयपक्षमानों तोज्ञानमेंविशेषताविषयके आधीनहै ॥ याते
 विषयकीअपेक्षाअवश्यहोनेसे विषयकेअभावहुए ज्ञानकीज्ञप्तिकैसे
 बनेगी ॥ समाधान ॥ हेवादिन्यहलुम्हारा कथनसत्यहै । किज्ञान
 विशेषहीज्ञप्तिमेंभासताहै । परंतुवहज्ञानमेंजोविशेषहै सोव्यावृत्तिरूप
 अर्थात् भेदरूपहै ॥ वहविषयकृतनहीं ॥ यातेतिसको विषयकी
 अपेक्षानहींहै ॥ शंका ॥ ज्ञानमेंविशेषकोविषयके आधीननमाने
 हुए पटादिज्ञानोंसेघटज्ञानमें व्यावृत्तिरूपविशेषकी सिद्धिकैसेहोगी ॥
 समाधान ॥ हेवादिन्लुम्हारायह कथनभीतुच्छहै ॥ क्योंकिज्ञान

में स्वतः ही व्यावृत्तपना है ॥ जैसे नैयायिकादिकोंके मतमें जाति आदिक पदार्थ स्वभावसे ही व्यावृत्त हैं ॥ इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं । क्या ? एक ज्ञानमें ज्ञानांतरसे व्यावृत्तिक हेतु विषय है । अथवा ज्ञानमें व्यावृत्तिकी प्रतीति का हेतु विषय है ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि व्यावृत्तिको अन्यो अन्याभावरूप होनेकर अजन्यता है । और व्यावृत्तिको जन्यमाने हुए तिसकी उत्पत्तिसे प्रथम सर्वसे अभिन्न स्वभाव ही गण उत्पन्न हुआ मानना होगा । इससे वह ज्ञानविषयसे व्यावृत्तिके उत्पन्न हुए कैसे अपने स्वभावको नहीं त्यागेगा । किंतु अवश्य त्याग देगा ॥ और अतीत तथा भविष्यत्पदार्थविषयक ज्ञानको व्यावृत्तिसे रहित अथवा व्युत्पत्तपना प्राप्त होगा । क्योंकि विषयका तिसकालमें अभाव है ॥ और विषयको ही व्यावृत्तिकी हेतुता है ॥ और यदि विषय स्वज्ञानमें व्यावृत्तिकी प्रतीति का हेतु है यह द्वितीय पक्ष कहो । तो असत् व्यावृत्तिको वह विषयनिश्चय करता है ॥ अथवा सत् व्यावृत्तिको निश्चय करता है ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि असत्की प्रतीति नहीं हो सकती ॥ और द्वितीय पक्षमें ज्ञाननिष्ठ व्यावृत्तिकी जोसत्ता है । वह विषयके आधीन नहीं है ॥ क्योंकि अन्यज्ञानोंसे स्वतः ही ज्ञानव्यावृत्त स्वभाव है जैसे वैशेषिकादिवादियोंके मतमें पटत्वादिक जातियोंसे घटत्वादिजाति स्वतः ही व्यावृत्त स्वभाव है ॥ कोई व्यक्ति तिसका व्यावर्तक नहीं है ॥ अन्यथा अन्योऽन्याश्रयदोषकी प्राप्ति होगी । क्योंकि जातिसे व्यक्तिका भेद और व्यक्तिसे जातिनिष्ठ भेदकी सिद्धि होनेसे परस्पर अपेक्षारूप अन्योऽन्याश्रय दोष स्पष्ट ही है । और अन्त्यविशेष भी स्वतः ही व्यावृत्त हैं । व्यावर्तकोंके जो अन्तमें वल्ले अर्थात् जिनका अन्यकोई व्यावर्तक न हो इसीसे अन्त्यविशेषक हे हैं ॥

तैसे ज्ञानभी स्वतः ही व्यावृत्त है। इस प्रकार ज्ञान पर प्रकाश पक्ष में भी तिसकी प्रतीति विषयके आधीन नहीं। याते ज्ञानज्ञप्तिकी अनुपपत्ति ज्ञानज्ञेयके भेदमे प्रमाण नहीं यह अर्थ सिद्ध हुआ ॥ इति ॥ शंका ॥ यद्यपि विषयज्ञान की उत्पत्तिका हेतु नहीं ॥ और तिसकी स्थितिका हेतु भी नहीं ॥ तथा ज्ञानकी ज्ञप्तिकामी हेतु नहीं ॥ तथापि जैसे दाहके योग्यकाष्ठादिकों के व्याप्त हुआ जो अग्नि है वह दाहपदार्थोंको दग्ध करता है ॥ तैसे ज्ञेय के व्याप्त हुआ ज्ञानज्ञेयका प्रकाश करता है ॥ याते अपनेसे भिन्न ज्ञेयको वह ज्ञानबोधन करता है ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यहं ईष्टं तत्रैरदाष्टं तकी विषमता है। क्योंकि दृष्टं तमेतो जिस देशमे तथा जिस कालमे अग्नि है तिसी देशमे यौ तिसी कालमे दाहके योग्यकाष्ठादि हैं। तहां तो अग्नि दाहको दग्ध करता है यह कथन युक्त है। और दार्ष्टं तमेतो ज्ञेयकी व्याप्तिवाला ज्ञान है नहीं। क्योंकि तिनदोनोंको भिन्न देश तथा भिन्न कालमे होने के समानाधिकरणताका अभाव है। अर्थ यह। ज्ञानतो भीतर अंतस्करणादि देशमे है। और भेषघटादिकवाह्यभूतलादि देशमे है याते देश एक नहीं। और अतीत तथा भविष्यत् अर्थकामी ज्ञान देखनेसे एक कालत्वकी भी अति सिद्धि है। याते देश तथा कालसे समानाधिकरणताका अभाव होनेसे व्याप्तिकी अति सिद्धि है। इस प्रकार “तद्देवदका प्रमा” इसकारिकाके चतुर्थपादमे जो संग्रह किया हुआ अर्थ था। वह इतने ग्रंथकर विस्तार पूर्वक व्याख्यान किया ॥ १७ ॥ अत्र पूर्व उक्त अर्थको उपसंहार करते हुए एक श्लोकसे संग्रह करते हैं ॥

मू० ॥ प्रत्येतव्यप्रतीत्योश्च भेदः प्रमाणिकः कुतः ।

प्रतीतिमात्रमेवैतद्भाति विश्वंचराचरम् ॥ १८ ॥

चौ०—ज्ञानज्ञेयको भेद जुगानो। नहि प्रामाणिकसो हिय जानो ॥

जगतचराचरभासतजेतो । नमात्रयाते लखतेतो ॥ १८ ॥

टी० ॥ तिसीकारणसे ज्ञान और ज्ञेय का जो भेद तुम कहते हो वह किसी हेतु से प्रामाणिक नहीं हो सकता ॥ शंका ॥ ज्ञान तथा ज्ञेय का अर्थ भेद माने हुए क्या? ज्ञान ही शेष स्थित रहता है। अथवा ज्ञेय ही शेष रहता है इस प्रकार का संदेह हुए एक अर्थ का निश्चायक युक्तिके अभावसे विषयके अंतर्भाव ज्ञान ही क्यों न हो ॥ समाधान ॥ हेवादि नृजड प्रपंच को अपनी सिद्धि के अर्थ ज्ञान की अपेक्षा अवश्य कहने योग्य है और ज्ञान को विषय की अपेक्षा नहीं। यह वार्त्ता पूर्व उपपादन कर आए हैं। और “सापेक्षतया निपेक्ष दोषदार्थो मे निपेक्षत्ववान होता है”। इस न्यायसे ज्ञान मे ही विषय का अंतर्भाव युक्त है। याते जो यह संसार स्थावर और अजंगम रूपमान होता है। सो प्रतीति मात्र ही है। अथवा जो प्रतीति मात्र स्वप्रकाश महिमासे भासमान है यह ही विश्वरूप है तिस विज्ञान धातुसे किंचित मात्र वस्तु भिन्न नहीं ॥ शंका ॥ यदि प्रतीति मात्र ही यह जगत् है प्रतीतिसे अतिरिक्त किंचित मात्र भी नहीं। तो चराचररूपतासे तथानाना भेदोंसे यह ज्ञान कैसे भासता है ॥ समाधान ॥

मू०—ज्ञानज्ञेयप्रभेदेन यथास्वाप्नप्रतीयते ।

विज्ञानमात्रमेव तत्तथा जाग्रच्चराचरम् ॥ १६ ॥

चौ०—ज्ञानज्ञेयप्रभेद अनेका । स्वप्नजगतभासतजिमेका ॥

तेसे जगतचराचर जोई । ज्ञानमात्रजाग्रतमे सोई ॥ २० ॥

टी०—जैसे स्वप्नकाल का जगत्वास्तवसे विज्ञानमात्रस्वरूप ही है।

तो भी ज्ञानज्ञेयादि नानाभेद युक्त भान होता है। याते स्वप्नमे विज्ञान ही ज्ञेयरूपतासे तथानानारूपतासे भासता है ॥ तेसे जाग्रतकालीन जो जगत् है ॥ वह भी विज्ञानमात्रस्वरूप ही है ॥ याते सो विज्ञान ही चराचर

रूपतासे औरनानारूपतासे भानहोताहै । इसप्रकारजगत्काभान औरतिसकाअनेकभेदयुक्तभानसंभवताहै ॥ १९ ॥ शंका ॥ विज्ञान हीजगद्रूपतासे भानहोताहै । ऐसेआपक्योंकल्पनाकरतेहो ॥ विज्ञानसे भिन्नस्वतन्त्ररूपतासेहीजगत्काभानहोजायेगा ॥समाधान॥

मू०-तंतोभेदेपटोयद्वच्छून्यएवस्वरूपतः ।

आत्मनोपितथैवेदंभानमात्रंचराचरम् ॥ २० ॥

चौ०-तंतूभिन्नयथापटकेरो । शून्यरूपहोवतलुमहेरो ॥

आत्मभिन्नतथायहमानो । भानमात्रचर अचरपछानो ॥२१॥

टी०-जैसेपटतंतुवोंसे भिन्नकियाहुआवास्तवसे असत्होजाता है । क्योंकिकारणकीसत्तासेही कार्यसत्भासता है । स्वतन्त्रतासे कार्यसत् रूपनहीं । यदिस्वतन्त्रभीपटकीसत्तामानलें तोतंतुवोंकेअभावहुएभीपटहुआचाहिये ॥ शंका ॥ पटकेप्रतितंतुकोसमवायिकारणताहोनेसेआश्रयपनाहै । इसीसे तिसकेअभावहुए पटस्थितनहीं होता । कोईतंतुकीसत्ताहीपटकीसत्तानहीं । किंतुपटकीसत्तास्वतन्त्रहै । समाधान ॥ हेवादिन्नहिमाचल तथाविंध्याचलकीन्याईभेदमेकार्य कारणभावकाअदर्शनहै । यातेकार्यकारणकाअभेदमानेहुएतंतुऔर पटइनदोनोंमेएकहीशेपरहाचाहिये । औरपटकोतंतुसापेक्षहोनेसेतथा तंतुकोपटनिर्भेक्षहोनेसेतंतुहीशेपरहसकताहैपटनहीं । इसप्रकारतंतुसेभिन्नकियाहुआपटस्वरूपसेशून्यहीहोजाताहै । तैसेयहप्रतीतिसिद्ध जोचराचरजगत्है । सोयदिवास्तवसेआत्मासेभिन्नहो तोशून्यअर्थात् असत्हीहोजायेगा । कारणयहकिचेतनमात्रहैऔरबहचेतनरूपतावास्तवसेआत्मासेहीपर्यवसानकोप्राप्तहोतीहै । यातेआत्मासेभिन्नजगत्तुच्छ

हयहकथनयुक्त है ॥२०॥ शंका ॥ चेतनस्वरूप आत्मा को जगत् रूपता कर
भानमाने हुए विकारीपना प्राप्त होगा । क्योंकि अनेक विकार सहित जगत्
भासता है । समाधान । हेवादिन् विवर्त्तवादके आश्रयण करनेसे यह
दोष नहीं प्राप्त हो सकता । इसीको दृष्टांत सहित निरूपण करते हैं ।

मू०—रज्जुर्यथा भ्रांतदृष्ट्या सर्परूपा प्रकाशते ।

आत्मा तथा मूढबुद्ध्या जगद्रूपः प्रकाशते ॥२१॥

चौ०—भ्रांतदृष्टिकरण है जोई । सर्परूपजिम भासत सोई ॥ २० ॥

तिम यह आत्ममूढबुद्धिकर । जगद्रूपभासत निज रूढिधर ॥२१॥

टी०—जैसे रज्जु भ्रांत पुरुषकी दृष्टिसे सर्परूपता कर भान होती है ।

तैसे अज्ञपुरुषको भ्रांतिकर आत्मा भी जगत् रूपतासे भान होता है । और
मिथ्या सर्पकर जैसे रज्जुविषसहित नहीं होती ॥ तैसे मिथ्या जगत्कर
आत्मा भी विकारवान् नहीं होता ॥ २१ ॥

शंका ॥ अगत रज्जुको सर्पकी अधिष्ठानता होनेसे तिसकी तो सर्पादि
रूपता कर प्रतीति संभवती है ॥ परन्तु आत्मा अज्ञानके वशसे जगत् रूप
ता कर भान होता है ॥ यह कल्पना युक्त नहीं ॥ क्योंकि तिसको निमित्त
कारणता मात्र होनेसे जगत्की अधिष्ठानता नहीं संभवती ॥ समाधान ॥

मू० आत्मन्येव जगत् सर्वदृष्टि मात्रमत्त्वकम् ।

उद्भयस्थिति मादाय विनश्यति मुहुर्मुहुः ॥ २२ ॥

चौ० ॥ आत्मसे ही संव जगपयि ॥ दृष्टि मात्र वास्तनहि दियि ॥

क्षण उत्पत्ती क्षणस्थिती धार ॥ पुनः पुननाश होत संसारा ॥२२॥

टी०—यह सर्व जगत् प्रतीति मात्र तथा मिथ्या स्वरूप वास्वरा उत्पत्ति

तथास्थितिकोप्राप्तहोकर वारंवारविनाशकोप्राप्तहोताहै । यातेपूर्वचकी
उत्पत्तितथास्थितिऔंविनाशका कारणहोनेसे आत्माकोनिमित्तमात्र
तानहीं । किन्तुविवर्त्ताधिष्ठानतरूपउपादानकारणताहै । इसप्रकार
अज्ञातआत्माकोजगत्की अधिष्ठानतायुक्तहै (२२) ॥ शंका ॥
आत्माकोपरिच्छिन्नजगत् रूपताहोनेसेअनात्मताकी प्राप्तिहोगी ।
तथादुःखरूपजगत्रूपताहोनेसेआत्मामेनानात्वरूपअनिष्टप्राप्तहोगा।
औरअशुद्धिरूपताभीआत्मामेंप्राप्तहोगी।क्योंकिअशुद्धजगत्रूपताभी
तिसीकीहै । औरतैसेही पुरायऔपापकीअधिकरणताभी तिसीमें
प्राप्तहोगी । क्योंकिधर्मादिनिषेत्तआत्मा जगत् रचनाको नहींकर
सकता । अन्यथाविपमतादिदोषकीप्राप्तिहोगी । औरस्यदित्तुमपेसे
कहो।किजीवकेअदृष्टकोहीपरमात्माआश्रयणकरकेजगत् रचनाकरताहै।
स्वअदृष्टकोनहींआश्रयणकरता।यातेतिसकोपुरायपापकीअधिकरणता
नहींहै।सोयहकथनभीअसंगतहै॥क्योंकिजीवऔंब्रह्मकाअभेदतुमको
स्वीकारहै॥किंवा।जैसेदुग्धदध्याकारपरिणामकोप्राप्तहुआदधिहीशेपरहता
है।दुग्धशेपनहींरहता॥तैसेआत्माभीजगत् रूपताकोप्राप्तहुआजगत् ही
शेपरहेगा।आत्मानहीं।यातेपूर्वउक्तदोषअवश्यप्राप्तहोवेंगे॥समाधान॥

मू० ॥ पूरानंदाद्वयेगुह्येपापदोषादिवर्जिते ।

प्रतिविंमिवाभातिदृष्टिमात्रंजगत्त्रयम् ॥२३॥

चौ० ॥ पूरनथानंदअद्वयशुद्ध । पापदोषादिकवर्जितबुद्ध ।

अभाससमंतिसमेहुयिभान । दृष्टिमात्रजगत्त्रयंवखान ॥२४॥

टी० ॥ जैसेदर्पणमुखादिकविंचकीसमीपताकेप्राप्तहुएप्रतिविंच
रूपताकर भासमानहुआभीतिसप्रतिविंचाकारताकोमिथ्याहोनेसेस्वरूप

कोनहींत्यागता। तैसेपूर्णतथा आनंदस्वरूप और द्वैतसे रहित तथा अविद्या
दिमलसे रहित शुद्ध और आपदोपादिरहित आत्मा मे प्रतीति मात्र जाग्रतस्वप्न
सुषुप्तिरूप जगत्त्रय अथवा त्रय लोकात्मक जगताका स्तकोमिथ्या होनेसे
जगत्स्वरूपसे भासमान हुआ भी आत्मास्वरूपको नहीं त्यागता । इस प्रकार
अज्ञानके वशसे ही परिच्छिन्नादिरूप जगत्स्वरूपता आत्मानिष्ठ मान होती है
वास्तवसे नहीं । याते पूर्व उक्त एकदोप भी नहीं प्राप्त होता । यही अर्थ
भगवान् वसिष्ठ मुनिजीने भी कहा है । तहां श्लोक—

❀ तस्मिंश्चिद्दर्पणोस्फारे समस्ता वस्तुदृष्टयः ॥

इमास्ताः प्रतिविंबतिसरसीव तद्द्रुमाः ॥१॥

यस्य चित्तमयी लीला जगदे तच्चराचरम् ॥

तस्य विश्वात्मकत्वे पि खंडते नैकपिंडिता ॥२॥❀

टी० ॥ तिस विस्तृत चैतन्यरूप दर्पणमे सोयह समग्र पदार्थोंकी
प्रतीतियां प्रतिविंबभावको प्राप्त होती हैं। जैसे स्वच्छतालावमे किनारेके वृत्त
प्रतिविंबत होते हैं ॥ १ ॥ और जिस आत्माकी यह चराचर जगत् चित्तरूपी
लीला है । तिस आत्माको अज्ञानके वशसे नाना जगत्स्वरूपतासे भासमान
हुए भी एक अद्वितीयरूपताकी हानी नहीं होती । २॥ इति ॥ २३ ॥ अत्र
पूर्व उक्त समग्र अर्थसे एकदेशीके निपेक्षके मिषकरनिरूपण किया जो विषय
तिसको उपसंहार करते हैं । जिस कारणसे ज्ञान और ज्ञेयका भेद प्रमाण
सिद्ध नहीं तिसी कारणसे दृष्टि मात्र स्वरूप जगत् है । अर्थात् दृष्टि
और दृश्य इन दोनोंके मध्य एककी शेषताके प्राप्त हुए दृश्यको दृष्टि सापेक्ष
होनेसे तथा दृष्टिको दृश्यनिर्पेक्ष होनेसे दृष्टि ही शेष रहती है । दृश्य
नहीं । याते दृष्टि मात्र रूपता जगत्को संभवती है । सो दृष्टि मात्र स्वरूप

जगत् आत्माके आश्रित तथा तिसीको विषय करने वाले अज्ञान से कल्पित है ॥ शंका ॥ एक देशी के मत के निषेध द्वारा चिदात्मा को स्वाश्रय स्वविषय अज्ञान करके जगत् रूपता तथा जगत् रूपता से पूतीति निरूपण करने वाले वादी ने अज्ञान विषयत्व आत्मामे अंगीकार किया ॥ और तैसे अज्ञान का निवर्तक जो अपरोक्ष आत्मज्ञान है तिसका जनकरूपता कर उपनिषदोंको आत्मामे प्रमाणाता तुमने आपही उपपादन की ॥ याते अर्थसे सिद्धांती का मत ही सिद्ध हुआ ऐसे एक तटस्थ की आशंका हुए पूर्वपक्षी का समाधान ॥ तिस पूर्व उक्त युक्तिसे आत्मानिष्ठ अज्ञान की विषयता जो कल्पना की है सो साधु है। यहां पर यह का कू उक्ति जाननी ॥ अर्थ यह क्या ? वह अज्ञान विषयत्व की कल्पना साधु है किंतु साधु नहीं । जिस कारणसे केवल कल्पना मात्र है। कोई प्रमाण सिद्ध नहीं है ॥ क्योंकि स्वयं प्रकाश आत्मामे अज्ञान की विषयता का असंभव पूर्व कथन कर आए हैं । याते सिद्धांती के मत की सिद्धि नहीं हो सकती । इसीको स्पष्ट करते हैं। आत्मामे लौकिक तथा वैदिक प्रमाण के असंभव हुए शशशृंग की न्याई असत्पना है ॥ तिस असत्पने के प्राप्त हुए तिसके साक्षात्कारके अर्थशास्त्र की अपेक्षा कि सहेतु से हो सकती है ॥ किंतु नहीं हो सकती ॥ और तैसे ही युक्ति की अपेक्षा तो अत्यंत दूर है ॥ क्योंकि वैदिक अर्थमे युक्ति की अपेक्षा नहीं ॥ और यदि तिसमे भी युक्ति की अपेक्षा मानोगे ॥ तो वेदको निषेध प्रमाणाता की हानि होगी ॥ अथ पूर्वपक्षके संग्रह का श्लोक ॥

आत्माऽऽसन्नप्रमाणात्वात् तत्साक्षात्कृतये पुमान् ।
उपासीतश्रुतिकस्माद्युक्तिं चापेक्षते कथम् ॥ १ ॥

अद्वित् ॥ आत्मसत्तानाहिप्रमाणाभावात् ।

तांदर्शनहितनरनहि श्रुतिउपासते ॥

युक्तिअपेक्षातामहिकिसविधवनतहै ॥

द्वोवृथापरिश्रम विज्ञनयातेधरतहै ॥ १ ॥

❀ इतिमहापूर्वपक्ष ❀ अथसिद्धांतनिरूपण ❀

इसप्रकारपूर्वपक्षके प्राप्तहुएसिद्धांतकथनकरतेहैं ।

मू०—यत्तत्त्ववेदगुप्तंपरमसुखतमंनित्यमुक्तस्वभावमास
त्यंसूक्ष्मात्सुसूक्ष्ममहादिदममृतंमुक्तमात्रैकगम्यम् ॥ य
स्यांशैलेशमात्रंजगदिदमखिलंभ्रांतिमात्रैकदेहम् । प्रत्य-
गज्योतिस्वरूपं शिवमिदमधुनाकथ्यतेयुक्तितोऽत्र ॥ २४ ॥

क० । वेदगम्यतत्त्वजोऊपरमथानन्दरूप मुक्तस्वभावनित्य
सदाजोऊगायिए । सूक्ष्मतेसूक्ष्ममहतयहसत्यामृत मुक्तमात्रगम्य
पुन जाहिकोवतायिए ॥ जाहियंशविपेलेसामात्रयहजगसबभ्रांति
मात्ररूपकरिसदाठहरायिए । प्रत्यगस्वरूपशिवज्योतियहियातमा
जो ताकेमाहियुक्तिअत्र किंचितदिखायिए ॥ २५ ॥

टी० ॥ पूर्ववादीनेदोविकल्पकियेथे।किआत्मामेकोईप्रमाणहैवा
नहीं । तहांहमवादीसेयहप्रकृतहैं । यहांआत्मशब्दसेअविद्यादिवशिष्ट
जोअव्याकृततथाजीवादिशब्दनकावाच्यवहग्रहणकियाजाताहै।अथवा
शुद्धचिदानंदस्वरूपआत्मशब्दसेगृहीतहै । प्रथमपक्षमेतिसकोअस्व
प्रकाशताहोनेकरदृश्यत्वकाविरोधनहीं । तिसमेप्रमाणकीप्रवृत्तिमानने
मेकोईदोषनहींप्राप्तहोता । क्योंकिवहअविद्यादिवशिष्टयहांप्रतिपादन

करनेयोग्य नहीं । तिसमेप्रमाणकीप्रवृत्ति तथानिवृत्तिकाजोविचारहै सोनिष्फलहै।तिसवशिष्टआत्माकोयहांप्रतिपादनकीअयोग्यताहुएयहां कौनप्रतिपादनकरनेयोग्यहै । ऐसीआकांक्षाकेदुष्कृतहतेहैं । इसग्रंथके आरंभमेप्रथमकारिकामेजोचलुष्टयविशेषणवालाआत्माकथनकियाहै । वहहीयहांपरभीनिरूपणकरनेयोग्यहै।तिसीकोइसश्लोकसेनिरूपणकरते हैं । (यत्तत्त्वम्)जोअनारोपितस्वरूपअर्थात्पारमार्थिकस्वरूपआत्माहै। सोनिरूपणीयहै ॥ शंका ॥ यहआत्मानिरूपणकरनेयोग्यनहीं। क्यों कितिसमेप्रमाणकीप्रवृत्तिकाअभावहै ॥ समाधान ॥ हेवादिब्रह्म आत्मा (वेदगुप्तम्) केवलवेदप्रमाणगम्यहै । यातेप्रमाणकीप्रवृत्तिका अभावनहीं ॥ शंका ॥ यहपूर्वउक्तआत्मावेदगम्यनहींहै । क्योंकिवह अपुरुषार्थस्वरूपहै ॥ समाधान ॥ (परमसुखतमम्) ब्रह्मतत्त्वपरमानंद स्वरूपहै । यातेअपुरुषार्थरूपनहीं । औरअविद्यातत्कार्यसेरहितहोने करभीवहतत्त्वपुरुषार्थरूपहै। इसीकोकहतेहैं।(नित्यमुक्तस्वभावम्)सदा हीअविद्यातत्कार्यसेरहितस्वरूपहै ॥ शंका॥ प्रयोजनरूपताहोनेसेवेद गम्यताकेसंभवहुएभीतिसतत्त्वकोदृश्यताहोनेसेमिथ्यात्वकीप्राप्ति है । समाधान ॥ ब्रह्मतत्त्व (सत्यम्) तीनोंकालमेबाधशून्यहै यातेतिसमे मिथ्यात्वकीप्राप्तिनहीं ॥ शंका ॥ सत्यरूपमानेहुएतिसतत्त्वकोसिद्ध होनेकरतिसमेप्रमाणांतरकीसंमतितथाविरोधहोनेसेवेदको अप्रमाणाता होगी ॥ समाधान ॥ (सूक्ष्मात् सुसूक्ष्मम्) प्रधानादिसूक्ष्मपदार्थों सेभीअत्यंतसूक्ष्महै । इसीसेवहतत्त्वप्रमाणांतरकीविषयताकेअयोग्य है । यातेतिसमेवेदकोअप्रमाणाताकीप्राप्तिनहीं ॥ शंका ॥ तिसतत्त्व कोसूक्ष्ममानेहुएपरिच्छिन्नपनाप्राप्तहोगा । तिसीकारणसेघटकीन्याई

अनात्मताकी प्राप्तिभीहोगी ॥ समाधान ॥ (महत्) वहतत्त्वनिर्णय
 व्यापकहै यातेतिसमेघटवत् अनात्मतानहीं प्राप्तहोसकती ॥ शंका
 तिसतत्त्वकोमुक्तस्वभावमानेहुएमुक्तिऔमुक्तिवालेका भेदपूतीतहों
 सेवहसर्वसेअधिकव्यापकरूपनहींसंभवता ॥ समाधान॥ (इदममृतम्
 यहपूर्वकथनकियाजोतत्त्वहै सोमुक्तिस्वरूपहै । तिससेभिन्नऔरकोई
 मुक्तिनहींहै । यातेपरिच्छेदनहीं संभवता । इसीअर्थमे विद्वान्का
 पूत्यक्तअनुभव प्रमाणरूपतासे दिखलातेहैं । (मुक्तमात्रैक गम्यम्)
 एक मुक्त पुरुष करही वह जानने योग्यहै । अर्थात् विद्वान्पुरुषही
 तिस तत्त्वको अपना आत्मारूप कर अनुभव करता है । अन्य
 नहीं । इस प्रकार तत्पदका लक्ष्यार्थ निरूपण करकेअवतत्पदके
 वाच्यार्थकोनिरूपण करतेहैं । (शिवम्) वहीतत्त्वमायारूपउपाधि
 सेईश्वरहै ॥ तिसकेईश्वरत्वकोही कथनकरतेहैं ॥ (यस्यांशोलेशमात्रं
 जगदिदमखिलम्) अ० जिसकेमायिकप्रदेशरूपकिसीएकअंशमेंयह
 लेशमात्रसमग्रजगत् कार्यरूपतासेस्थितहै । शंका।तिसतत्त्वकोजगत्
 काउपादानमानेहुए विकारीपनाहोगा ॥ समाधान ॥ भ्रांतिमात्रैक
 देहम्) अज्ञानमात्रही तिसईश्वरत्वकास्वरूपहै । इसीहेतुसेसाभास
 अव्याकृतरूपअज्ञानही जगत्काउपादानकारणहै स्वरूपसेअक्षरब्रह्म
 कारणनहीं । यातेअज्ञानकी प्रधान्यताकरजगत्की उपादानताहोने
 सेविकारित्वकी प्राप्तिनहीं ॥ अथवा “ भ्रांतिमात्र ” यहजगत्का
 हीविशेषणहै ॥ तिससेयहअर्थसिद्धहुआ।भ्रांतिस्वरूपजगत्कावास्तव
 सेआत्माउपादानकारणनहीं ॥ यदिआत्माकोहीउपादानमानोगेतो
 जगत्मेंसत्यताकीप्राप्तिहोगी।क्योंकिसत्यउपादानकवस्तुसत्यहीहोता

है ॥ यद्यपि आत्माको उपादानताके अभावहुए श्रुतिमें तिसको कारणाता कथन कैसे संभवेगा। तथापि उपादानभूत अज्ञानका अधिष्ठान होने से तिसको कारणात्व कथन है। याते आत्मामे विकारित्व प्रसक्ति नहीं होती। तिस आत्माका तटस्थपनानिवारण करते हैं ॥ (प्रत्यग्) जडता तथा अनात्मतादि धर्मोंकरवाह्यरूपताको प्राप्तहुआ जो जगत है। तिसकी अपेक्षाकर विपरीतचेतनतादिरूपतासे और अंतरादिभावकर प्रकाश करतेहुएकी न्याई जो प्रतीत होता है वह प्रत्यक् कहा जाता है ॥ प्रत्यक्त्वमे हेतुकहते हैं ॥ (ज्योतिः स्वरूपं) जिसकारणासे स्वयं प्रकाशचेतनरूप है तिस तत्त्वके कथनका प्रकरण नहीं है। ऐसी आशंकाको निपेध करते हैं। (अधुना) अब शिष्यकी जिज्ञासाके उत्तरकालमे तिस तत्त्वका निरूपण प्राप्त है। याते अस्तुत अर्थात् प्रकरण असंबद्ध अर्थका कथन नहीं ॥ शंका ॥ तुम्हारे कथनसे क्या? सिद्ध होगा। क्योंकि वेद कर ही तिसका कथन बन जायेगा ॥ समाधान ॥ (युक्तिः) अज्ञान तथा संशयके निराकरण द्वारा वेद अर्थकी भगवताके लिये और तिसमें योग्यताकी भाँति अर्थयुक्तिसे अर्थात् श्रुति अनुसारी तर्कसे तिस आत्मतत्त्वको निरूपण करते हैं ॥ इति ॥ पूर्वपक्षके आरंभमें आत्मशब्दसे जीव तथा ईश्वरविवक्षित नहीं किंतु शुद्धचेतन आनंदघन प्रत्यक्ब्रह्मका अभेदरूप अर्थही आत्मशब्दसे विवक्षित है। और तिसमें पूर्ववादीकर कथन किये दूषणोंका अवकाश नहीं है। इस अर्थके कथन करनेके लिये सिद्धांती अब विकल्प करता है ॥

* अथ प्रमाणाभावसे आत्मामें असत्

पनेकी शंकाका समाधान *

हेवादिन्क्या ? निरूपणीययात्मामेंप्रमाणकेअभावसे यात्मा केस्वरूपकीअनुपपत्तिहै ॥ अर्थयहयात्माकोप्रमाणकीअपेक्षाक्या ? स्वरूपलाभकेअर्थ है । अथवाप्रमाणकेअभावसे प्रतीतिकीअनुपपत्ति है ॥ अर्थात्अपनीप्रतीतिके अर्थप्रमाणकीअपेक्षाहै ॥ प्रथमपक्ष तोनहींसंभवता ॥ क्योंकितिसमेयहविचारकरनेयोग्यहै । क्या ? यहपक्षयात्मनित्यत्ववादीकाहै । अथवायात्माकोकार्यकहनेवालेका पक्षहै ॥ इनमेंप्रथमपक्षअसंगतहै ॥ क्योंकियात्माकोअकार्यहोने करइतरकीअपेक्षाकाअभावहै ॥ भावपदार्थमेंनित्यत्वअकार्यहोनेसे हीसंभवहोसकताहै ॥ यातेस्वरूपलाभकेअर्थयात्माप्रमाणकीअपेक्षा नहींकरता ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिप्रमाण प्रमेयकाउत्पादकनहींकिंतुज्ञापकहै ॥ शंका ॥ प्रमाणकोप्रमेयकी अनुत्पादकताअसिद्धहै ॥ क्योंकिप्रवृत्तियादिकभीप्रमेयहैं । वहप्रमाणसेउत्पन्नहोतेहैं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्प्रवृत्तिविषयकज्ञानप्रवृत्ति कोनहींउत्पन्नकरता किंतुजिसअर्थविषयकपुरुषकीप्रवृत्तिहोतीहै ॥ तिसअर्थविषयकइष्टसाधनताकाज्ञानप्रवृत्तिकोउत्पन्नकरताहै ॥ याते स्वविषयकाउत्पादकप्रमाणनहीं ॥ इसीसेप्रवृत्तिज्ञानमेव्यभिचारनहीं । औरयात्मास्वप्रतीतिकेअर्थप्रमाणकीअपेक्षाकरताहै ॥ इसयाद्यद्वितीयपक्षमेभीयहविचारकर्तव्यहै । क्या ? प्रतीतिमात्रप्रमाणकेआधीन है । अथवाजडपदार्थकीप्रतीतिप्रमाणकेआधीनहै ॥ तहांप्रथमपक्षमे तोअतिप्रसंगहै ॥ क्योंकिप्रमाणविषयकभीअन्यप्रमाणकहनेयोग्यहै । शंका ॥ विषयकीसिद्धिअर्थप्रमाणकीअपेक्षाहै ॥ कोईप्रमाणकोअन्यप्रमाणकीअपेक्षानहीं । क्योंकितिसमेअन्यप्रमाणका कुद्दउपयोग

नहीं है ॥ समाधान ॥ प्रमाणमें प्रमाणांतरके अभावहुए नशृंगकी न्याई असत् होनेकर स्वप्नमेयके साधकपनेका असंभव है ॥ अर्थात् लब्धसत्ता वाला ही प्रमाण स्वविषयका साधक है ॥ और स्वस्तु मात्र की सत्ता प्रमाणके आधीन है यह तुम्हारा नियम है । याते प्रमाणांतरसे विना प्रथम प्रमाण की सत्ता नहीं सिद्ध हो सकती ॥ और स्वरूपसत्ताके अभावहुए प्रमाण स्वविषयका साधक कैसे होगा ॥ और यदि प्रमाणमें भी अन्य प्रमाणकी अपेक्षामानोगे तो अनवस्थादोषकी भाँति होगी ॥ शंका ॥ अनवस्थाके भयसे यदि और प्रमाण नहीं मानेगे तो प्रमाण कर ही वस्तु की सिद्धि होती है। यह वृद्धोंका उच्चस्वरसे कथनके संभवेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अनवस्थादोषकी भाँति होनेसे प्रमाण कर ही वस्तु सिद्ध होती है । यह तिनका “उद्घोष” अर्थात् उच्चस्वरसे कथन केवल अभिमानमात्र है अर्थात् आंतिमूलक है ॥ शंका ॥ जब वस्तु अपनी प्रतीतिके अर्थ प्रमाणकी अपेक्षा करो। परन्तु प्रमाण तो स्वयं प्रकाशमान होनेसे प्रमाणांतरकी अपेक्षा नहीं करता । जैसे प्रदीप स्वप्रकाशके निमित्त और प्रदीपकी अपेक्षा नहीं करता याते सर्व अर्थका साधक जो प्रमाण है । वह अपनी सिद्धिके अर्थ अन्य प्रमाणकी अपेक्षा करता है यह कथन ही अशुक्त है । और जो सिद्धांती ऐसे कहे कि प्रमाणको स्वविषयक प्रतीतिका जो जनक पना है । यह ही स्वसाधक पना है । सो यह कथन समीचीन नहीं । क्योंकि इसमें घृत्ति विरोध है । अर्थात् एक पदार्थमें एक कालमें कर्तृत्व तथा कर्मत्वका विरोध है । याते प्रमाणमे स्व प्रकाशतानहीं संभवती । सो यह सिद्धांतीका कथन भी असंगत है । क्योंकि स्वव्यवहारमें दूसरेकी अपेक्षासे जोरहित पना है । यह ही स्वसाधक शब्दका अर्थ है । इसीको प्रमाणनिष्ठ सिद्ध करते हैं प्रमाण स्वसिद्धिके अर्थ जिसकी

अपेक्षाकरता है । वह प्रथम प्रमेयरूप तो नहीं संभवता । क्योंकि विषयको अपेक्षाशक्यता है । और यदि तिसको प्रमाणरूप कहो तो यह भी नहीं संभवता । क्योंकि अनवस्था दोष प्राप्त होता है । याते सर्वका साधक जो प्रमाण है वह अपेक्षासिद्धिके अर्थ अन्यकी अपेक्षा करता है यह कथन अयुक्त है ॥ इस प्रकार प्रमाण स्वप्रकाश स्वभाव हुआ स्वपरकी सिद्धिके अर्थ किसी अन्य प्रमाणकी अपेक्षा नहीं करता । याते पूर्व उक्त अनवस्था दोषकी प्राप्ति नहीं इस प्रकार पूर्वपक्षके भास हुए सिद्धांती उत्तरनिरूपण करता है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्वडाहर्ष है स्वप्रकाश प्रमाणको अन्यकी अपेक्षा से रहित माने हुए आत्मा प्रमाणसे कैसे सिद्ध होगा ॥ शंका ॥ प्रमाणसे आत्माकी सिद्धि माननेमें क्या अनुपपत्ति है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् प्रमाणका स्वरूप और तिसका भान आत्माके आधीन है और आत्माकी सिद्धि प्रमाणके आधीन है इस प्रकार अन्यो ज्ञ्याश्रय दोष होनेसे आत्मा प्रमाण सिद्ध नहीं । प्रमाणकी सिद्धि आत्माके आधीन है । इस अर्थको कैसे सुत्यकन्यायसे सिद्ध करते हैं ॥ प्रमाण प्रमेयादिना नाभेद विशिष्ट सकल जगत्कामाधक आत्मा है ॥ क्यों कि अपने अज्ञानसे सर्वजगत्को उत्पन्न करके प्रकाश करता है ॥ याते जो आत्मा सर्वजगत्का साधक है ॥ तिसको जगत्के एक अंशरूप प्रमाणकी साधकतामें तो क्या ही कहना है ॥ इति ॥

❀ अन्य प्रकारसे उसी शंकाका समाधान ❀

किंवा । हेवादिन् प्रमाणसे आत्मा सिद्ध होता है । इसका क्या अर्थ है । क्या ? आत्मा प्रमाणसे उत्पन्न होता है । अथवा प्रमाण से जाना जाता है । प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि प्रमाणके भूति आत्माको कारणता होनेसे प्रमाणसे प्रथम ही तिसकी सिद्धि है ॥ शंका ॥ हे सिद्धांतिन्

प्रमाणके प्रति जो आत्माको कारणता कहते हो तिसमे यह आपको कहना चाहिये कि वह आत्मा क्या? प्रमातरूपसे कारण है । अथवा कारणरूपतासे कारण है वा विषयरूपतासे कारण है । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि—

❀ हीर्षोरित्येतत्सर्वमनएव ॥ वृ० उ० अ० ३ ब्रा० ५ कं ३ ❀

अ० ॥ लज्जा तथा ज्ञानादियह सर्वही अंतस्करणके धर्म हैं । इस श्रुतिसे अंतस्करणमे ही प्रमातापना है आत्मा मे नहीं । और द्वितीय तथा तृतीय यह दोनों पक्ष भी नहीं संभवते । क्योंकि आत्माको कारणरूपता तथा विषयरूपता अंगीकार नहीं है ॥ समाधान ॥ प्रमाणसे पूर्व आत्माकी असिद्धि माने हुए आश्रयरूप प्रमाताके असिद्ध हुए प्रमाणको स्वरूपलाभ ही नहीं होगा । भाव यह है तन्त्रके साथतादात्म्यभावकी शक्तिसे विना अंतस्करणको प्रमातापना नहीं संभवता । क्योंकि वह जड़ है । विशेषचेतनके तादात्म्यविना भी यदि अंतःकरणमे प्रमातृत्व मानोगे तो घटादिकोंमे भी प्रमातृत्व प्राप्त होगा । और आत्माके प्रमातापनेमें वृत्तिवाले अंतस्करणको उपाधिपना है । इसलिये अंतस्करण प्रमाता है । ऐसालोकमे व्यवहार होता है । इस प्रकार प्रमाता आत्मा प्रमाणोंका कारण है । तिसके अभाव हुए प्रमाणको स्वरूपलाभ ही नहीं होगा । क्योंकि कारणके अभाव हुए कार्य का भी अभाव होता है ॥ शंका ॥ हे सिद्धांतित् । प्रमाणसे आत्मा उत्पन्न होता है यह हम नहीं कहते किन्तु प्रमाणसे आत्मा ज्ञात होता है ॥ समाधान ॥ हे वादिन् इस द्वितीय पक्षमे भी यह विचार करने योग्य है । आत्माको प्रमाणसे ज्ञात माने हुए ज्ञाता क्या? वही आत्मा है । अथवा कोई अन्य है । प्रथमपक्ष नहीं संभवता । क्योंकि प्रमेय मात्रके प्रति एक आत्माको ही ज्ञाता होनेसे तिस

ज्ञेयपना अयुक्त है । भावयह है कि प्रमाण के प्रति आत्मा को ज्ञाता होने से ज्ञेयपना तिसको युक्त नहीं । याते सर्व के ज्ञाता आत्मा को प्रमाण कैसे विषय कर सकेगा किंतु नहीं कर सकता ॥ शंका ॥ प्रमाणादिक सर्व पदार्थों का जो ज्ञाता है वह प्रमाण का विषय क्यों नहीं होता ॥ समाधान ॥ हे वादिन् आत्मा को भी यदि ज्ञान रूप प्रमाण का विषय माने तो कर्तृकर्म विरोध की प्राप्ति होगी । क्योंकि ज्ञान भी एक क्रिया विशेष है । सो कर्ता और कर्म की अपेक्षा करके ही उत्पन्न होती है । तिनमे कर्ता को तो क्रिया का साधन होने से क्रिया के प्रति गौणता है । और कर्म तो स्वरूप से अथवा धर्म से क्रिया कर साध्य होने से क्रिया के प्रति प्रधान है । तिसी कारण से आत्मा को स्वज्ञान रूप क्रिया के प्रति एक काल में ही उभय रूपता की प्राप्ति है । ज्ञान का आश्रय रूपता कर साधन होने से गौणता है । और ज्ञान का विषय होने से प्रधानता है । इस प्रकार विरुद्ध द्विरूपता की प्राप्ति से आत्मा को प्रमाण विषय नहीं कर सकता । और द्वितीय पक्ष में भी यह विचार करने योग्य है । ज्ञेय रूप आत्मा से भिन्न जो प्रमाता है । वह जड़ है । अथवा चेतन है । प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि तिसको अनात्मा होने से प्रमातृत्व का असंभव है । और द्वितीय पक्ष भी असंगत है । क्योंकि प्रथम आत्मा को ज्ञेय होने कर घटवत् अनात्मता की प्राप्ति होने से तिस दूसरे चेतन रूप प्रमाता को ही आत्मपना होगा । अथवा सर्व का विज्ञाता जो आत्मा है सो किसी प्रमाण का विषय नहीं । इस अर्थ में मैं त्रेयी ब्राह्मण का शेष वाक्य उदाहरण करते हैं ॥

❀ विज्ञातारमरेकेन विजानीयात् ॥ (वृ०) उ० पै० ब्रा० क० १५ ❀

अ० ॥ अरे मैं त्रेयी सर्व के विज्ञाता आत्मा को किस करण करके कौन अन्य ज्ञाता जान सकता है । क्योंकि तिसमोक्षदशामे आत्मा से व्यति

रिक्तसर्वकायभाव है ॥ इसप्रकारप्रमाणसे विनाआत्माकीस्वतः सिद्धिहोनेसेप्रमाणके अभावसे आत्माकायसत्पनानहीं होसकता । यहअर्थसिद्धहुआ ॥ इति ॥

❀ प्रमाणाभावसेआत्मामेअसत्त्वापत्तिका

अन्यप्रकारसेपरिहार❀

किंवा ॥ आत्मामेयदिप्रमाणनहींतो असत्त्वापत्तिहोगी । ऐसे कथनकरनेवालेवादीनेआत्मामेप्रमाणकेअभावसे असत्पनाथापादनकिया है । यहहमकोप्रतीतहोता है । सोयहकथनअयुक्त है । इस अर्थकेनिरूपण करनेकेलिये विकल्पकरते हैं । हेवादिप्रमाणकेअभावसे आत्मामेथापाद्यमानअर्थात्प्राप्तहोनेयोग्यजोअसत्त्व है । वहज्ञात है वाअज्ञातहै । अर्थयहकिअसिद्धस्वभाव है । प्रथमपक्षमेभीयहविचारकियाचाहिये ॥ क्या ? वहआत्माकाअसत्त्वप्रमाणसेज्ञात है ॥ अथवाअमकरकेज्ञात है । वा स्वतःसिद्ध है । प्रथमपक्षमेपुनःयहविचारणीय है । क्या ? वहअसत्त्वकाग्राहकप्रमाणअसत्अर्थात्अभावमात्रकोग्रहणकरता है । अथवाआत्मप्रतियोगिकअसत्कोग्रहणकरता है । प्रथमपक्षनहींसंभवता । क्योंकिअसत्काअभावरूपजोअसत् है तिसकोप्रतियोगीकेआधीनहोनेकरप्रतियोगीकोनविषयकरकेवहप्रमाण केवलअसत्मात्रकोनहींग्रहणकरसकता । औरयदिप्रतियोगीकोविषयकरकेअसत्कोप्रमाणविषयकरता है । यहद्वितीयपक्षकहोतो आत्माभी प्रमाणसिद्धहुआ । क्योंकिअसत्कोग्रहणकरनेवालाप्रमाणप्रतियोगीकोनियमसे ग्रहणकरता है । यातेआत्माकोभी प्रमाणसिद्धहोनेकर प्रमाणाभावरूपथापादककेअभावसे आत्मामेथापाद्यमानअसत्त्वभी

नहींसंभवता ॥ जैसेअग्निवालेदेशमेअग्निके अभावरूपआपादकसे धूमाभावनहीं आपादनकरसकते ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्असत्त्वका प्रतियोगीसत्त्व है ॥ आत्मानहीं ॥ यातेआत्माकोप्रमाणकीविषयता आपकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन्वहसत्त्वप्रतियोगीहुआ क्या ? किसीपदार्थकास्वरूप है अथवाधर्म है ॥ प्रथमपक्षमेभीयह कहाचाहिये किआत्माकास्वरूपवहसत्त्व है अथवाअन्यपदार्थकास्वरूप है । प्रथमपक्षमेतो उत्तरपूर्वककथनकरआए हैं ॥ किआत्माको प्रमाणसिद्धहोनेसे असत्पनानहीं है । औरद्वितीयपक्षमेतुम्हारेइष्ट कीअसिद्धिधे । क्योंकिअन्यकिसीपदार्थकाहीअसत्त्वहोगा । आत्मा कानहीं ॥ अर्थयहप्रतियोगीको अपनेअभावकीसाधकताकानियम होनेपरपदार्थांतरकास्वरूपभूतजो प्रतियोगीरूपसत्त्व है वहपदार्थांतर के असत्त्वकाहीसाधक है ॥ अप्रतियोगीरूपआत्माके असत्त्वकासाधकनहीं ॥ औरयदिवहसत्त्वधर्म है यहआद्यद्वितीयपक्षकहोतो तिसमेयह विचारकियाचाहिये ॥ क्या ? वहसत्त्वआत्माकाधर्म है अथवाकिसी अन्यपदार्थकाधर्म है ॥ प्रथमपक्षमेआत्माकासत्त्वप्रतियोगी है तिस आत्मसत्त्वकोप्रमाणसिद्धहुए आत्मामे असत्त्वकाआपादनतुमकैसे करसकतेहो ॥ औरवहसत्त्वअन्यकिसीपदार्थकाधर्म है यदियहद्वितीयपक्षकहो तोभीपदार्थांतरकाअसत्त्वहोगा ॥ आत्माकानहीं ॥ याते आत्माकाअसत्त्वकैसेआपादनकरनेयोग्य है ॥ किंतुकिसीप्रकारभीनहीं । औरआत्माकाअसत्त्वभ्रमसेसिद्धहैयहआद्यजोद्वितीयपक्षथासोभीनहीं संभवता ॥ क्योंकिअसत्त्वकोभ्रमसिद्धमाने हुएभ्रमकेविषयकोबाधितहोने कर वास्तवसेआत्मामेंसत्त्वहीप्राप्तहोगा ॥ औरतृतीयपक्षमेंयहविचारकिया

चाहिये । असत्त्वमात्रस्वतः सिद्ध है ॥ अथवा आत्मविशिष्ट असत्त्वस्वतः सिद्ध है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि प्रतियोगी से विना केवल अभाव मात्र का निरूपण नहीं हो सकता ॥ और द्वितीयपक्ष में तो आत्मा को स्वतः सिद्धता प्राप्त होगी क्योंकि आत्मविशिष्ट जो आत्मा का असत्त्व तिसकी स्वतः सिद्धता हुआ विशेषणरूप आत्मामें स्वतः सिद्धता बलात्कार से सिद्ध होती है ॥ तिसकारण से दोनों में स्वतः सिद्धता प्राप्त हुआ आत्मा ही स्वतः सिद्ध है ॥ असत्त्वमें स्वतः सिद्धिका असंभव है । क्योंकि आत्मारूप प्रतियोगी निर्पेक्ष है ॥ और असत्त्वरूप अभाव प्रतियोगी सापेक्ष है ॥ और सापेक्ष निर्पेक्ष इन दोनों के मध्यमें निर्पेक्ष को ही स्वतः सिद्धत्व का संभव है ॥ और प्रतियोगी के आधीन असत्त्व का स्वतः सिद्धपन नहीं संभवता ॥ अन्यथा असत्त्वमें सापेक्षता की हानि होगी । यहां पर यह अर्थ ज्ञातव्य है । वह असत्त्व जड है ॥ वाचेतन है ॥ प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि जडता होने से ही घटकी न्याई स्वतः सिद्धिकी अयोग्यता है ॥ और यदि द्वितीयपक्ष हो तो आत्मा का ही दूसरा नाम असत्त्व है ॥ क्योंकि स्वतः सिद्धचेतन को ही आत्मरूपता है । तैसे माने हुए पूमाणा भाव से आत्मामें असत्त्व का आपादन हमको अनिष्ट नहीं किंतु इष्ट है ॥ इति ॥ यहां पर्यंत आत्मा का असत्त्व ज्ञात है ॥ इस प्रथमपक्ष का निरासक्तिंया । अथ अज्ञातरूप असिद्धस्वभाव वह असत्त्व है । इस द्वितीयपक्ष को निराकरण कर्त्ते हैं हेवादि न्यह द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि असिद्धका आपादन ही अनुपपन्न है ॥ शंका ॥ असिद्धका आपादन किस कारण से नहीं बनता ॥ समाधान ॥ हेवादि न्य प्रतिवादी के प्रतिशब्द से जो अनिष्टकी प्राप्ति तिसका नाम आपादन है ॥ और अर्थ के जाने विना शब्द रचनाकी अनु

पपत्तिहै।यातेबुद्धिमें अनाखुदअसत्त्वका आपादनकरनाअयोग्यहै। इसप्रकारप्रमाणके अभावसे आत्माकाअसत्त्व कोईनिरूपणनहीं करसकता ॥

* प्रमाणकेअभावसे आत्मामेंअसत्त्वापत्तिका
अन्यप्रकारसे परिहार ॥ *

प्रमाणकरआत्माकेअसत्त्वकीसिद्धिहोतीहैइसपक्षमेंअवसिंहावलोकनन्यायसे औररूपणकहतेहैं ॥ जैसेसिंह एकमृगकोहनन करकेआगेगमनकरताहुआ पुनःउसीस्थानकोदेखताहै यदिकोईऔर मृगवहांआयाहोतोतिसकोभीमेंहननकरूं यहसिंहावलोकनन्यायका अर्थहै ॥ तैसेहीप्रमाणसेआत्माका असत्त्वसिद्धहै इसपक्षकोनिरा करणकरकेपुनः वादीनेयदिकोईऔरस्युक्तिइसपक्षमें प्राप्तकरीहो।तो तिसकोभीहमनिराकरणकरें । इति ॥ किंवा । हेवादिनआत्माका असत्त्वक्या?आत्माहीजानताहै । अथवाअनात्माजानताहै ॥ मथम पक्षमेंबहुतवक्तव्यहोनेसे तिसकोत्यागकरमथमअंत्यपक्षकोदूषितकरते हैं।अंत्यपक्षनहींसंभवता।क्योंकि अनात्माकोज्ञेयऐक्यस्वभावहोनेसे ज्ञातृत्वकाअभावहै ॥ औरप्रथमपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिव्या घातादोपकीप्राप्तिहोतीहै । तैसेदिखलातेहैं । क्या?आत्माअपनीसत्ता कालमेंअपनी असत्ताकोजानताहै अथवाअपनीअसत्ताकालमेंस्व असत्ताकोजानताहै।प्रथमपक्ष तोनहींसंभवता । क्योंकि अपनीसत्ता कालमेंअपनीअसत्ताकैसेहोसकतीहै और—

❀ परस्परविरोधेनप्रकारांतरस्थितिः ❀

अ० ॥ परस्परविरोधहुयेकोई अन्यप्रकारनहींस्थितहोता । इस

न्यायसेसत्ता और असत्ताका परस्परविरोधहुए एककेविद्यमानहुएदूसरा नहींस्थितहोसकता ॥ शंका ॥ यद्यपिस्वसत्ताकालमेस्वअसत्तानहो परन्तुतिसकोआत्माजानतोसकताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्असत्ता केनहुएआत्माकिसकोजानेगा ॥ क्योंकिविषयकाहीअभावहै । और आत्मास्वअसत्ताकालमेस्वअसत्ताकोजानताहै । यहद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता । क्योंकिस्वअसत्ताकालमेजाताआत्माकाहीअभावहोनेसे किसप्रकारवहजानसकेगा ॥ शंका ॥ स्वसत्ताकालमेहीआत्माअपनी असत्ताकोजानताहैइसप्रकारमाननेसेव्याघातदोषकीभीप्राप्तिनहींहोती क्योंकिस्वसत्ताकालमेस्वअसत्ताकाअज्ञानहै औरयदिसिद्धांतीऐसेपूछे किस्वसत्ताकालमेस्वअसत्ताकेअज्ञातहुए किसकालमेहोनेवालीस्वअसत्ताकोआत्माजानेगा तिसकायहउत्तरहै कालांतरमेहोनेवालीस्वअसत्ताकोआत्माजानसकताहै ॥ समाधान । हेवादिन्ऐसेमानेहुएसत् रूपआत्मासिद्धहुया इससेकिसीअनिष्टकीप्राप्तिनहींहोसकती ॥ शंका ॥ आत्माकीसत्तरूपताआपकैसेकहतेहो । जिसकारणसेवहआत्माआगे होनेवालीस्वअसत्ताकाअनुभवकरताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्भ्रमाण केअभावसेक्या? अत्यंतअसत्तरूपताआत्मामेआपादनकरनेयोग्यहै । अथवाअनित्यताआपादनकरनेयोग्यहै । प्रथमपक्षतोनोंहीसंभवता । क्योंकिविनाशसेप्रथमआत्मासत्है औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै । क्यों किवहआत्माकीअनित्यताद्वितीयकारिकाके व्याख्यानमेकृतनाशतथा अकृताभ्यागमदोषकीभसिसेनिवारणकरथाएहैं । यातेभ्रमाणकेअभाव सेआत्माकाअसत्त्वनहींहै । यहसिद्धहुया । किंवा ॥

आत्मोकेअसत्पनेकीशंकाकाअन्यप्रकारसेपरिहार ॥

आत्माका अस्त्वकहनेवालावादी अपने आत्माका निषेध करता है
अथवा दूसरे आत्माका निषेध करता है । प्रथमपक्षमें निषेध करनेवालेका
अभाव होनेसे निराकरण करनेयोग्य ही आत्मावास्तवसे सत् रूप है यह सिद्ध
होता है । और द्वितीयपक्षमें निषेधकर्ता जिस कारणसे वास्तवसे स्थित है।
इसी कारणसे आत्माका अस्त्वकैसे हो सकता है ॥ शंका ॥ अन्य आत्मा
के निषेध करनेवालेका कोई अन्य तृतीय आत्मानिषेधकर्ता हो जायेगा ।
कैसे निषेध करनेवाला परमाथे रूपतासे स्थित हो सकता है ॥ समाधान ॥
हेवादि तृतीयनिषेधकर्ताका कोई अन्य निराकरणकर्ता है ॥ अथवा
नहीं ॥ प्रथमपक्षमें तो अन्वस्थादोष है और द्वितीयपक्षमें जिसमें वि-
श्रान्तिमानोगे । तिसीको वास्तवसे स्थित होनेकर किसहेतुसे आत्माका
अस्त्वकहते हो । यही अर्थ श्रुतिमें कथन किया है ॥

❀ असन्नेवस भवति असद्ब्रह्मेति वेद चेत् ।

अस्ति ब्रह्मेति चेद्देद संतमे नंततो विदुः ❀

तै० ब्र० ३० अनु० ६

अ० प्रथमज्ञातापनाचेतनका धर्म है । क्योंकि अचेतन घटादिकों
में ज्ञानत्वका अभाव है । और ब्रह्म भी चेतन है । जिस कारणसे श्रुतिमें विज्ञान
घनसुना जाता है । सो विज्ञातासे भिन्न नहीं है । क्योंकि श्रुतिमें अभेद
श्रवण होता है । ऐसा माने हुए यह ज्ञाता पुरुष यदि ब्रह्मात्माको असत् जानता
है तो वह आप ही असत् हो जाता है । क्योंकि अपने आत्मस्वरूप ब्रह्मका
निषेधकर्ता है । अर्थात् निषेधकर्ता यदि अपने आत्माका निराकरण करता
है तो वह असत् हो जाता है यह हेतु रूपतासे कथन किया हुआ निराकरणकर्-
ताका अस्त्वश्रुति संमत है । और यदि वादी दूसरे आत्माका निषेध करे तो इस

पक्षमेंनिराकरणकर्ताकासत्त्व श्रुतिसंमतहैसोईदिखलातेहैं। ब्रह्मात्मा है ऐसेयदियहज्ञाताजानताहै। तोसत्त्वरूप ब्रह्मात्माकेज्ञाताको सूक्ष्म अर्थकेद्रष्टापुरूपसत्त्वरूपहीजानतेहैं। अर्थात्वहपरमार्थसत्त्वरूपहीहोता है। यातेआत्माकीअसत्त्वरूपताकाकथनअयुक्तहै ॥ इति किंवा ॥

॥ प्रमाणाभावसे आत्मामेंअसत्पनेकीशंका का अन्यप्रकारसे परिहार ।

आत्मामेंप्रमाणकेअभावसे असत्यताकीप्राप्तिकहनेवालेवादीने प्रमाणकीसत्ताकेहुएही वस्तुकीसत्ताहोतीहै यहकहनेयोग्यहै। तहां प्रमाणकीसत्ताहुएहीवस्तुकीसत्ताहोतीहै। इसकाक्याअर्थहै। क्या? प्रमाणके विद्यमानहुए वस्तुकीसत्ता उत्पन्नहोतीहै। अथवावस्तुकी सत्ताजानीजातीहै। प्रथमपक्षमेंभीयहविचारकर्तव्यहै। क्या?प्रमाण सत्त्वस्तुमें प्रवृत्तहोताहै अथवाअसत्में प्रवृत्तहोताहै। यदिअसत्में प्रवृत्त होताहै अर्थात् असत्में प्रवृत्त हुआ प्रमाण सत्ताको उत्पन्न करताहै। यह अंत्यपक्ष कहो। तोशशंभृंग की भी वह प्रमाण सिद्धि करलेगा। क्योंकि असत्पनेकी तुल्यताहै। और प्रमाणको असत्त्वके उत्पन्न करनेकी सामर्थ्यभी है। सो ऐसा देखने में नहीं आता। यातेअंत्यपक्षनहींसंभवता। औरअसत्में प्रमाणप्रवृत्तहोता है अर्थात् सत्त्वस्तुकीसत्ताकोप्रमाणउत्पन्नकरताहै। यहप्रथमपक्षभीनहीं संभवता। क्योंकिइसपक्षमेंप्रमाणकेआधीनवस्तुकीसत्तानहींहै। शंका। प्रमाणसत्त्वस्तुमेंप्रवृत्तहो परंतुप्रमाणकेआधीनवस्तुकीसत्ताक्योंनहो।

॥ समाधान ॥ हेवादिन्जिसकीअपेक्षासेजोप्रथमहीविद्यमानहो। वह

तिसकाकार्यनहींहोसकता । क्योंकिनियमसेपश्चात् होनेवालेकोही कार्यपनाहोताहै । जैसेइसप्रकरणमें प्रमाणकीअपेक्षासे प्रथमहीवस्तु विद्यमानहै । यातेवहप्रमाणकाकार्यकैसेहोसकतीहै ॥ शंका ॥ सत्वस्तु मेंप्रमाणकीप्रवृत्ति नमानेहुएप्रमाणकीप्रवृत्तिसे पश्चात्हीवस्तुकीसत्ता उत्पन्नहोजायेगी ॥ समाधान ॥ हेवादिन्यदिऐसेमानोगेतोसत्वमेंही प्रमाणश्रवृत्तहोताहै । इसअपनी प्रतिज्ञाकीहानिहोगी । औरयदिसत्वस्तुकाभानप्रमाणकेआधीनहै । यहआद्यद्वितीयपक्षकहो । तोअभानस्वरूपअनात्माका भानप्रमाणकेआधीनहो । क्योंकिवहअचेतनहैऔर स्वयंप्रकाशमानआत्मामेंप्रमाणकेआधीनभानकैसेहोगाकिंतुनहींहोसकता । यहांयहभावहै । प्रमाणकेअभावसेवस्तुकीसत्ताकाअभावहै । यातेप्रमाणसत्तावस्तुसत्ताकाव्यापकहै यहकहनेयोग्यहै ॥ इसलियेव्यापकाभावकोहीव्याप्याभावकेप्रति साधकपनाहै । अर्थात्जहांवस्तुकीसत्ताहोतीहै तहांप्रमाणसत्ताहै । औरजहांप्रमाणकीसत्तानहींहै तहांवस्तुकीसत्ताभीनहींहै ॥ ऐसामानेहुएसत्वस्तुकाहीभान प्रमाणकरहोताहै ॥ यहां यहअर्थसिद्धहोताहै इसीअर्थकासाधकयहांयहअनुमानभीजानना ॥

❀ विमतः आत्मा प्रमाणगम्यः सत्त्वात् घटवत् ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजोआत्माहै ॥ वहप्रमाणगम्यहै ॥ सत्त्वरूप होनेसे ॥ जोजोसत्त्वरूपहोताहै । सोसोप्रमाणगम्यहोताहैजैसेघटहै ॥ इति ॥ सोयहद्वितीयपक्षभीअसंगतहै । क्योंकिप्रथमयहअनुमानतो जडत्वरूपउपाधिसहितहोनेसेदुष्टहै सोदिखलातेहैं । जहां प्रमाणगम्यत्वहै तहांजडत्वहै ॥ जैसेअभानस्वरूपअनात्माघटादिकों मेंप्रमाणकेआधीनतिनका भानहैयातेतिनमेंजडत्वभीहै । इसप्रकार

दृष्टांतमें जडत्व उपाधिको साध्यके साथ व्यापकता कहकर अथवा पक्षमें साधनके साथ अथवा व्यापकता कथन करते हैं । तैसे ही स्वभकाशस्वरूप आत्मामें प्रमाणाके आधीन कैसे मान हो सकता है । क्योंकि प्रमाणाके आधीन जो मान है सो अपने व्यवहारके अर्थ अन्वेषण किया जाता है ॥ और आत्मामें स्वरूपभूत प्रकाशसे ही स्वव्यवहार के सिद्ध हुए प्रमाणाधीन मानसे क्या फल है किंतु तिसका कोई फल नहीं । इस प्रकार पक्षरूप आत्मामें "सत्त्वात्" यह साधन तो है परंतु जडत्वरूप उपाधिका अभाव है ॥ याते उपाधिसाधनके साथ अथवा व्यापक है ॥ शंका ॥ मानस्वरूपता चेतनपनेका प्रयोजक है ॥ और आत्मा मानस्वरूप नहीं किंतु मानका आश्रय है । तैसे मानें हुए जडत्व उपाधिसाधनका अथवा व्यापक किस प्रकार होगा किंतु नहीं हो सकता । याते जडत्वको उपाधिरूपताका अभाव होनेसे पूर्व उक्त अनुमान दुष्ट नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आत्मा मानस्वरूप अर्थात् प्रकाशस्वरूप है ॥ इस अर्थमें श्रुति प्रमाण है ॥ तहां श्रुति ॥

*** तमेव भांतमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वं**

मिदं विभाति ॥ * (क० उ० ॥ व० ५ ॥ १५)

अ० ॥ तिसमें सिद्ध आत्माके भासमान हुए ही पश्चात् सर्व अनात्म प्रपंचका मान होता है ॥ शंका ॥ जैसे गमन करते हुए एक पुरुषके पीछे दूसरा गमन करता है । इस प्रयोगमें जैसे गमन दोनोंमें स्वगत है अर्थात् वह दोनों स्वतंत्र गमन करते हैं । तैसे आत्माके भासमान हुए सर्व अनात्म पश्चात् मान होता है ॥ इस प्रयोगमें भी दोनोंमें मान स्वतंत्र ही क्यों न हो समाधान ॥ तिस आत्माके स्वरूपभूत प्रकाशकरके यह सर्व अनात्म प्रपंच मान होता है ॥ याते अनात्म स्वगत प्रकाशसे मान नहीं होता ।

किंतु आत्माके प्रकाशसे ही प्रकाशित है । इसलिये आत्मास्वयंप्रकाश स्वरूप है । इस प्रकार पूर्व उक्त उपाधिसाधनका अन्वयापक ही है ॥ याते पूर्व उक्त अनुमान दुष्ट है ॥ इस प्रकार इतने ग्रंथ करके प्रमाणके अभाव हुए आत्मामें असत्त्वापत्तिकी शंकाका परिहार षट् प्रकारसे निरूपण किया। 'अवश्रुतिकी तिस आत्मामें प्रमाणाता निरूपण करनेके लिये कैसुतिक न्यायसे सर्वप्रमाणोंकी विषयता आत्मामे कथन करते हैं। किंवा ॥

❀ अथ आत्मामे सर्वप्रमाणोंकी विषयताकानिरूपण ❀

आत्मामे कौन प्रमाण हैं ऐसा अभिनिवेश करनेवालेवादीके प्रति सर्वही प्रमाण आत्माविषयक हैं । यही उत्तर कहने योग्य है ॥ क्योंकि अज्ञातपदार्थ ही प्रमाणोंका विषय होता है ॥ शंका ॥ प्रमाणकी विषयता मे अज्ञातत्व प्रयोजक नहीं अर्थात् जहां अज्ञातत्व होता है तहां प्रमाणकी विषयता होती है । ऐसानीयम नहीं । क्योंकि ज्ञातपदार्थ भी धारावाहिक प्रमाणका विषय देखने मे आता है ॥ समाधान ॥ हेवादि नज्ञातवस्तु मे प्रमाण क्या? तिसवस्तुके प्रकाश अर्थ है । अथवा तिसके व्यवहार अर्थात् ग्रहण त्यागके अर्थ है । दोनों प्रकार नहीं संभवते । क्योंकि प्रथम प्रमाणकरके ही वस्तुका प्रकाश और तिसके व्यवहारका निर्वाह हो सकता है पुनः द्वितीय प्रमाणकी कुछ अपेक्षा नहीं । यदि ऐसे न माने तो द्वितीय प्रमाणसे भी वह दोनों कार्य कैसे सिद्ध होंगे । और इस प्रकार धारावाहिक ज्ञान निष्ठ प्रमाणाता भी नहीं हो सकती । क्योंकि उत्तर उत्तर चरणविशिष्ट तिस विषयकी तिस तिस ज्ञानमे अधिकता भान होती है । यद्यपि कालको अतीन्द्रिय अर्थात् इन्द्रिय जन्य ज्ञानका अविषय होनेसे मत्स्यज्ञानकी विषयता नहीं संभवती । तथापि

वहकालसर्वभूत्योंमेंमानहोताहै । यदिऐसेनमानेतो “इदानींगंधः”
 अ० ॥ इसकालमेंगंधहै । इसभकारकीभूत्यक्षप्रतीतिकैसेहोगी । याते
 कालसर्वभूतयवेद्यहै ॥ शंका ॥ “अज्ञातोघटः” इसप्रतीतिसेघटमेंभी
 अज्ञातताहै । कैसेआपकेवलआत्माकोहीप्रमाणकाविषयकथनकरते
 हो॥ समाधान ॥ हेवादिन्आत्माहीअज्ञातहै । इसीअर्थकोउपपादन
 करतेहैं । प्रथमआत्मापरमप्रेमकाविषयहोनेसेसुखस्वरूपहै । वहसुख
 नित्यतथास्वभकाशहै । क्योंकि “सुखमहमस्वाप्सं” इसपरामर्शकेवलसे
 सुषुप्तिअवस्थामेंसर्वइन्द्रियतथा विषयकेउपरतद्गुणभीवहसुखभासमान
 होताहै । तिसीहेतुसेजाग्रत्अवस्थामेंभीतिसनित्यसुखकी “अस्ति
 भाति” इसभकारकीप्रतीतिकेभासद्गुणभीजोयहसुख “नास्तिनभाति”
 यहअन्यभकारकाव्यवहारहोताहै । सोअधिष्ठानकेअज्ञानसेउत्पन्नहुआ
 है । यहवार्त्ताशुक्तिकेअज्ञान जन्यरजतव्यवहारमें देखनेसेऐसेकल्पना
 कीजातीहै । औरइसमिथ्याव्यवहारकाअधिष्ठानआत्माहीहै ॥ याते
 विपरीतव्यवहारकीयोग्यतास्वरूपजोअज्ञानजन्य आवरणवहआत्मामें
 कल्पनाकियाजाताहै।इसभकारआत्माहीअज्ञानका विषयहोनेसेअज्ञात
 है । और जडमें अज्ञान की अविषयता स्वीकार करने योग्य है ॥
 ॥ शंका ॥ जडंपदार्थमेंअज्ञानकीअविषयताकैसेहै ॥समाधान॥ जो
 जिसमेंकिसीअतिशयताकोधारणकरताहै।वहतिसकाविषयहोताहै।और
 अज्ञानतोघटादिकअनात्मामेंअतिशयताकोनहींधारणकरता । क्योंकि
 तिसअनात्माकेविषयकरनेकाकोईफलनहीं॥शंका॥अज्ञानकृतआवरण
 निष्फलनहीं किंतुतिसआवरणका विज्ञेपप्रयोजन है ॥समाधान॥ हे
 वादिन्विज्ञेपकेअर्थआवरणको विद्यमानहोनेसे अज्ञानजन्यआवरण

कीकल्पनाव्यर्थहै ॥ शंका ॥ अज्ञानकृत आवरणजडमें अभावहुए
 किसप्रयुक्त आवरणजडमें है ॥ समाधान ॥ जडपदार्थ स्वभावसेही
 आवृतहै । क्योंकि अज्ञानसेवह आवृतस्वभावही उत्पन्नहुएहैं । याते
 तिसमें अनात्मत्वप्रयुक्त आवरणहै । अज्ञानकृत आवरणजडमें नहीं तिस
 कारणसेही जडको प्रमाणका अविषयहोनेसे आत्माही प्रमाणका विषय
 है । यह अर्थ सिद्धहुआ । यद्यपि घटादिजडपदार्थोंमें अज्ञानकृत आवरण
 न मानेहुए “अज्ञातो घटः” यह प्रतीति नहुई चाहिये । तथापि अज्ञान
 के सहित ही घटादिकोंका साक्षिचेतनमें अध्यासहोनेसे समानाधिकरणात्ता
 होनेकर यह प्रतीति बनसकतीहै ॥ शंका ॥

* अथ अनात्माके भानका प्रकारनिरूपणा *

जडपदार्थको आवृतस्वभावहोनेसे स्वः तो तिसका भान नहीं
 संभवता ॥ और प्रमाणसे भी तिसका भान नहीं संभवता ॥ क्योंकि तिस
 प्रमाणका वह जड पदार्थ विषय नहीं है ॥ इस प्रकार स्वतः तथा प्रमाण
 से जडका भान नहोनेसे तिस अनात्माका भान कैसे होगा ॥
 समाधान ॥ यद्यपि जड स्वतः नहीं भान होता । क्योंकि वह आवृत स्वभाव
 है । और अज्ञानका अविषय होनेसे प्रमाणसे भी नहीं भान होता । तथापि
 आत्मस्वरूपचैतन्यकर जडका भान होता है । यद्यपि आत्मचैतन्यको
 स्वप्रकाशहोनेसे तिसके साथ संबंधवाला जडपदार्थ सर्वदा कालही भान
 हुआ चाहिये । तथापि साक्षिरूप आत्माको अविद्याकारावृत होने
 से प्रपंचका अमान बनसकतीहै ॥ शंका ॥ साक्षीको अज्ञानकर आवृत
 मानेहुए किसी कालमें भी प्रपंचका भान नहीं होगा ॥ समाधान ॥ हे
 वादिन् घटावच्छिन्न जो चैतन्य वह घटके साथ इंद्रिय का संबंध होनेकर

उत्पन्नहुईजोघटाकारअंतस्करणकीवृत्तितिसकरअविद्याकीनिवृत्तिविशिष्टहोताहै,औरवहीचैतन्यघटाकारवृत्तिभेदतिविवतहुआघटकोप्रकाशकरताहै। इसप्रकारघटकी तीतिसंभवतीहै। औरघटादिकोंकीप्रतीतिमेभीयहीरीतिजानलेनी ॥ शंका ॥ ऐसेमानेहुएघटकोप्रमाणकीविषयताप्राप्तहुई ॥ समाधान ॥ हेवादिन् प्रमाणकरनिवृत्तिकेयोग्यजोअज्ञानहैतिसकेविषयकोहीप्रमाणकीविषयताहै। औरतैसेअज्ञानकीविषयताघटादिअवच्छिन्नचिदात्मानिष्ठहीहै ॥ इसलियेचेतनस्वरूपआत्माहीसर्वघटादिकोंमेप्रमाणकाविषयहै ॥ औरघटतोस्वअवच्छिन्नअनावृत्तचिदात्माके साथकल्पिततादात्म्यसंबंधकोपाकरमानहोताहै ॥ यातेतिसघटकोप्रमाणकीविषयता किसप्रकारहोसकतीहै किंतुकिसीप्रकारभीनहीं ॥ इसप्रकारआत्मामेप्रमाणकेअभावसेअसत्त्वापत्तिकाजोविकल्पवादीनेपूर्वकियाथासोपरिहारकिया ॥ अत्रचिदात्मामेसर्वप्रमाणकीविषयताकेनिरूपणकाफलकहतेहैं ॥ तिसपूर्वउक्तप्रकारसेसर्वप्रमाणोंकरसिद्धजोआत्माहै ॥ तिसमेप्रमाणाभावरूपआपादककेअसत्त्वसेआपादनकरनेयोग्यआत्माकेअसत्त्वकाअसंभवहै ॥ शंका ॥ आत्माकोसर्वप्रमाणकाविषयमानेहुए “औपनिषदत्व” यहजोआत्माकाविशेषणश्रुतिमेकथनकियाहै ॥ वहकैसेसंभवहोगा। क्योंकिसर्वप्रमाणकेविषयआत्माकोउपनिषद्मात्रगम्यत्वकाअभावहोगा। यद्यपि “प्रमेयोघटः” जैसेइसप्रयोगमेप्रमेयताघटकाविशेषणहै। तैसे “औपनिषदत्व” यहभीआत्माकाविशेषणनजायेगा। तथापि—

✽ सर्वविशेषणसावधारणं ✽

अ० ॥ सर्वहीविशेषणइतरकेव्यावर्तकहोतेहैं। इसन्यायसेइतर

का अव्यावर्तकमात्रविशेषणकल्पना करने में फल का अभाव है। और तिस से अध्ययन विधिका विरोध होगा। क्योंकि अध्ययन विधि निष्फल अर्थ का अध्ययन नहीं विधान करता। इसलिये आत्मा में इतर प्रमाणाँ का व्यावर्तकत्व ही औपनिषदत्व विशेषण को कहना योग्य है ॥ और सर्व प्रमाणाँ के विषय आत्मा में वह इतर प्रमाणाँ का व्यावर्तकपना तिस विशेषण को नहीं संभवता। याते औपनिषदत्व विशेषण आत्मा में किसी प्रकार भी नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यद्यपि प्रपंचावच्छेद करके आत्मा में सर्व प्रमाणाँ की विषयता है ॥ तथापि परिपूर्णासच्चिदानंदप्रत्यक् रूपता से तिस आत्मा में और प्रमाणाँ की अविषयता होने करतिस रूपता से श्रुति मात्र गम्यता है ॥ याते औपनिषदत्व विशेषण का विरोध नहीं है ॥ अवपरिपूर्णादिषदों का अर्थ निरूपण करते हैं ॥ “परिपूर्णा” कहिये सर्व और से व्यापक अर्थात् निरपेक्ष व्यापक है ॥ शंका ॥ परिपूर्णादिरूप आत्मा को उपनिषद् प्रमाण का विषय माने हुए घटादिवत् दृश्यता होने से मिथ्यापना होगा ॥ समाधान ॥ वह आत्मा सत कहिये त्रिकाल में अनाधितस्वरूप है। इसी से श्रुति भास्यता के अनंगीकार से वह मिथ्यानहीं है ॥ शंका ॥ श्रुति भास्यता के अनंगीकार से तिस का भान कैसे होगा ॥ समाधान ॥ स्वप्रकाशचिद्रूपता से ही तिस आत्मा का भान होता है। इसी से चेतन कथन किया है ॥ शंका ॥ परिपूर्णा रूप आत्मा को सर्व रूपता होने से दुःखरूपता भी कहने योग्य है। और दुःखरूपता माने हुए वह आत्मा उपनिषद् का विषय कैसे होगा ॥ क्योंकि अपरुपार्थ रूप है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् “परिपूर्णा” विशेषण से आत्मा का उद्देश्य करके सर्वत्व का विधान नहीं किया जाता ॥ जिससे दुःखरूपता आत्मा में हो ॥ किंतु सर्वत्व का उद्देश्य करके आत्मत्व का विधान है ॥ तिस से आत्मा

हीसर्वकावास्तवस्वरूपहै।आत्मासेविनाअन्यकोईवास्तवस्वरूपनहीं॥
 इसप्रकार दुःखत्वादिरूप को मिथ्याहोनेकर तिसकाबांध होनेसे
 आत्माआनंदस्वरूपहै॥ इसीहेतुसेश्रुतिमें ❀ आनंदोब्रह्म ❀
 अ० ॥ आनंदस्वरूपब्रह्महै॥ ऐसाकथनकियाहै॥ यहांआत्मातथा
 ब्रह्मपदकाएकहीअर्थजानना॥ इसप्रकारआत्माकोपुरुषार्थरूपताहोने
 से उपनिषद्पत्राणकी विषयतासंभवतीहै॥ शंका॥ यद्यपिपूर्वउक्त
 रीतिसेआत्माआनंदस्वरूपहै॥ तथापिपूर्णरूपतातिसकोनहींसंभवती।
 क्योंकिपरमात्माकाजीवसेभेदहोनेकरपरिच्छिन्नपनाहै॥ समाधान॥ वह
 परमात्माप्रत्यक्स्वरूपहै। क्योंकिजोप्रत्यक्सेभिन्नहोताहैवहअब्रह्महोताहै
 याते तिनकाभेदकल्पितहै। इसीसेपूर्णरूपताआत्मामेंसंभवतीहै। इस
 प्रकारप्रत्यगात्माऔं ब्रह्मकीएकताउपनिषद् मात्रगम्यहै॥

❀ अथस्वयंप्रकाशचिदात्मामेंअज्ञानकीविषयताका
 अन्यप्रकारसे निरूपणा ❀

शंका॥ उपनिषद्जन्यज्ञानकरके निवृत्तिकेयोग्यअज्ञानकी
 जोविषयताहै॥ यहीउपनिषद् पत्राणकी आत्मामेंविषयताहै॥ और
 वहअज्ञानकीविषयता स्वप्रकाशचिदात्मामेंनहीं संभवती॥ क्योंकि
 भासमानतातथा अभासमानताकापरस्पर एककालमेंएकअधिकरण
 मेंविरोधहै॥ समाधान॥ हेवादिन्स्वयंप्रकाशआत्मामेंअज्ञानकीविषयता
 नहींसंभवती॥ यहजोलुमनेकहासोसत्यहै॥ शंका॥ हेसिद्धांतित्तोअज्ञान
 की विषयताआपनेकेमेकथनकी॥ समाधान॥ हेवादिन्आनंदादि
 रूपतासेआत्माअज्ञानकाविषयहैऔरचिद्रूपतासेअज्ञानकाविषयनहीं।
 यदिऐसेनमानोगेतो अज्ञानकीभी असिद्धिभाप्तहोगी। इसप्रकारका

उत्तरयद्यपिपूर्वनिरूपणकियाभीहैतथापिपुनःप्रकारांतरसे इसकाउत्तर
 निरूपणकरतेहैं ॥ हेवादिनुएककालमें एकअधिकरणमें भासमानता
 औरअभासमानताकाविरोधहै । इसपूर्वउक्तदोपसे स्वयंप्रकाशआत्मा
 में अज्ञानवास्तवसेनहीं है। यहकहतेहोअथवाभूमसेभीनहींहैयहकहते
 हो॥अथमपन्नतोहमकोभीस्वीकारहै । क्योंकिवास्तवअज्ञानतोआत्मा
 मेंहमभीनहींमानते । औरद्वितीयपन्नकहोतो वहनहींसंभवता।क्योंकि
 जैसेमध्याह्नकालीनजोस्वयंप्रकाशमानआदित्यहै । यहाँपर आदित्य
 में अंधकारकाअत्यंतअसंभव दिखलानेके अर्थस्वयंप्रकाशयहतिसका
 विशेषणकथनकियाहै । तिसआदित्यमेंदिनको अंधतारूपदोपवाले
 जोपेचकादि वहऐसी कल्पनाकरतेहैं । कि “तमसावृत्तोऽयंसविता”
 अ० ॥ अंधकारसेयहसूर्य्याच्छादितहै ॥ जैसेदोपकेवशसेअविद्य
 मानभीरजतशुक्तिमें कल्पनाकरतेहैं । तैसेयहकल्पनाभीहै । तैसेही
 अत्यंत अज्ञानकरके आच्छादितहैबुद्धि जिनकी वह मूढजन
 अज्ञानसे यह आत्मा आच्छादितहै ऐसी कल्पना करते हैं ॥
 औरयहजोवादीने पूर्वकहाथाकिदिवांधत्वदोपसे उल्लूकादिकोंको
 सूर्यकाअदर्शनहैकोईतमकीकल्पना वहसूर्यमेंनहींकरते ॥ सोयह
 कथनभीअसंगतहै । क्योंकि “यहसूर्यतमोमयहै” इसप्रकारकीजो
 तिनकीप्रतितिहै तिसकाविरोधहै॥ तैसेहीअभियुक्तपुरुषोंकाकथनहै ।

घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्क यथामन्यतेनि
 ष्प्रमंचातिमूढः । तथावद्धवद्भातियोमूढदृष्टेःसनित्यो
 पलाब्धिस्वरूपोहमात्मात्मा ॥ १ ॥

अ० ॥ जैसेमेंघोकरकेआच्छादितहुईहै नेत्रोंकीदृष्टि जिसकी

वह अत्यंत मूढ़ जन स्वयंप्रकाशमान सूर्यमें यह सूर्य मेघोंकर
 आच्छादित हुआ प्रकाशशून्य है ऐसे कल्पना करता है । तैसे अज्ञान
 कर आच्छादित हुई है बुद्धि जिसकी तिस अज्ञानको जो आत्मावृद्धकी
 न्याई भासता है वह नित्यज्ञानस्वरूप आत्मामें ॥ १ ॥ इति ॥ और
 यदि पूर्वपक्षी ऐसे कहे ॥ आत्माको अज्ञान कर आवृत्तत्वकी कल्पनामें
 अज्ञानको ही दोष माने हुए आत्माश्रय दोषकी प्राप्ति होगी ॥ सो यह
 कथन भी समीचीन नहीं है ॥ क्योंकि आवरणको अज्ञानका कार्य होने
 कर अज्ञान जन्य माने हुए भी आत्माश्रय दोषका अभाव है ॥ और यदि
 आवरणको अज्ञानस्वरूप भी मान लें ॥ तो भी आत्माश्रय दोषकी प्राप्ति
 नहीं होती । क्योंकि जैसे नैयायिकोंके मतमें ॥ “रूपसमवायिघटः”
 अ० ॥ रूपके समवायवाला घट है ॥ इस प्रतीतिमें जैसे रूपका समवाय
 संबंधघटमें भासता है ॥ तैसे समवायका संबंध भी संबंधियोंसे भासता है ।
 तहांसंयोगादिसंबंधका तो असंभव है । क्योंकि संयोगद्रव्योंका ही होता
 है ॥ और समवायद्रव्य नहीं है । और समवायका अन्य समवायसंबंध
 माने हुए अनवस्था दोषकी प्राप्ति होगी । इसलिये यहां समवायसंबंध
 आप ही स्वसंबंधकी प्रतीतिका निर्वाहिके है ॥ और जैसे भाट्ट मतमें
 “भेदः पटोन” अ० ॥ पटप्रतियोगिकभेदवाला भेद है । इस प्रतीतिमें
 जैसे घटपटका भेदकभेद है । तैसे अपना और पटका भेदक भी वही भेद है ।
 यहां भी भेदांतर माने हुए अनवस्था दोषकी प्राप्ति होती है । इसलिये
 अपना भेदक आपको ही माननेमें आत्माश्रय दोषकी प्राप्ति नहीं होती ।
 तैसे अज्ञानकी कल्पनामें अज्ञानको ही दोषरूप माननेमें आत्माश्रय दोष
 की प्राप्ति नहीं होती । क्योंकि सर्वमतसाधारण जो दोष है वह दोष नहीं

होसकता ॥ शंका ॥ आत्मामेंवेदांतोंकीप्रवृत्तिआत्माके प्रकाशअर्थ है । अथवाअज्ञानकीनिवृत्ति अर्थहै । प्रथमपक्षतोनहीं संभवता । क्योंकिदृश्यपनाहोनेसे घटादिकोंकीन्याई आत्मामेंभीमिथ्यात्वप्राप्त होगा ॥ औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकितिसअज्ञान को आत्माकीन्याई अनादिहोनेकरनिवृत्तिकी अयोग्यता है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्धावरणस्वरूपजोआत्माकाअज्ञानहै तिसको कल्पितहोनेकरनिवृत्तिकीयोग्यताहै 'क्योंकिप्रथमहीआत्माके स्वरूप प्रकाशकेमहात्मसेवास्तवसेनिवृत्तहोनेकरवहअसत्है।तिसअसत्कीनिवृत्तिकेअर्थहीसर्ववेदांतोंकीप्रवृत्तिहै । जैसेशुक्तिकास्वरूपविचारनेसेतिस मेरजनवास्तव नहीं । तैसेआत्माकेस्वरूपकाविचारकरनेसेअज्ञानभी तिसमेअत्यंतअसत्है।औरअनादित्वमात्रहेतुनिवृत्तिकीअयोग्यताकासाधकनहीं । क्योंकिप्राग्भावमेव्यभिचारहै । तिसमेअनादित्वकेहुएभी निवृत्तिकीयोग्यताहै ॥ औरयदिऐसेकहोकि "भावरूपहुआजोअनादित्वहै सोनित्यत्वकासाधकहै" । यहकथनभीसमीचीननहीं । क्यों किअज्ञानमेभावरूपताभीअंगीकारनहींहै । जैसेवहअसत्से विलक्षण है । तैसेसत्सेभीविलक्षणतातिसमेस्वीकारहै । इसीसेअज्ञानकल्पित है । यहकथनकियाहै ॥ शंका ॥ अज्ञानकीनिवृत्तिमात्रप्रमाणसे होतीहै । यहआपक्योंकल्पनाकरतेहो । विषयकाप्रकाशहीप्रमाणका फलक्योंनहो ॥ समाधान ॥ प्रकाशस्वरूपआत्माकोप्रमाणसेबिना भीस्वप्रकाशताकेप्रभावसेहीसिद्धहोनेकरतिसकेनिमित्तप्रमाणकाग्रहण व्यर्थहै । यातेअज्ञानकीनिवृत्तिअर्थहीप्रमाणकाग्रहणनसकताहै । अन्यअर्थनहीं। शंका ॥आत्मानिष्ठअज्ञानकीनिवृत्तिकरनेवालेवेदांतों

को आत्मविषयता नहीं संभवती ॥ अन्यथा मृद्भिन्नजो घटादि हैं ॥ तिनके निवर्त्तक पापाणादिकों को भी मृत्तिकाविषयता प्राप्त होगी । क्योंकि दोनों में न्यायकी तुल्यता है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्घटादिकोंके निवर्त्तक जो पापाणादि हैं । वह कोई मृत्तिकाकारवृत्तिको नहीं उत्पन्न कर सकते । इसीसे तिनको मृद्विषयता नहीं संभवती । और दार्ष्टान्तमे तो आत्माकारवृत्तिके उत्पादक होनेके खेदांतोंको आत्मविषयता संभवती है ॥ शंका ॥ स्वयं प्रकाश आत्मा में अज्ञानकी निवृत्तिसे विना और कोई फल नहीं ॥ यह पूर्व कथन क्रियासो अयुक्त है ॥ क्योंकि आत्माकी स्वयंप्रकाशतामें प्रमाणका अभाव होनेसे विवाद है ॥ समाधान ॥

❀ अथ आत्माकी स्वयंप्रकाशतामें अनुमानप्रमाण का निरूपण ❀

हेवादिन् आत्माकी स्वयंप्रकाशतामें प्रमाणको विद्यमान होनेसे कोई विवाद नहीं । तैसे ही दिखलाते हैं ॥

❀ आत्मा इतरानपेक्षप्रकाशः ॥ स्वसत्तायां प्रकाशाव्यभिचारित्वात् ॥ संवत्स्वत् आलोकवद्वा ❀

। अ० ॥ आत्मा इतरकी अपेक्षासे रहित प्रकाशस्वरूप है । स्वसत्ता कालमें प्रकाश करव्याप्त होनेसे । जो जो स्वसत्ता कालमें प्रकाशसे अव्यभिचारी है सो सो इतरानपेक्षप्रकाशस्वरूप है । जैसे ज्ञान है । अथवा आलोक है ॥ इति ॥ यहां ज्ञानस्वप्रकाशवादीके प्रति संवत्स्वरूपदृष्टान्त जानना और नैयायिकादिकनके प्रति आलोक रूपदृष्टान्त जानना ॥ अथ पूर्वपक्ष ॥

❀ आत्माकी स्वप्रकाशताके साधक अनुमानका खंडन ❀

हेसिद्धांतिवृद्धस्यनुमानमेकौनयात्मापन्नहै । क्या?क्षुधापि
 पासादिधर्मोसेरहितयात्मापन्नहै । अथवाकर्त्ताभोक्तायात्मपन्नहै ॥
 प्रथमपन्नतोर्नहींसंभवता । क्योंकिनैयायिककेप्रतिआश्रयासिद्धिहै ।
 जिसकारणसेवहनेयायिकक्षुधापिपासादिधर्मरहितयात्माकोर्नहींमानता
 औरद्वितीयपन्नहींसंभवता । क्योंकिवेदांतीकेप्रतिआश्रयकीअसिद्धि
 है । जिसकारणसेवेदांतीयात्माकोकर्त्ताभोक्तानहींमानता ॥किंवा
 पन्नरूपयात्माक्या?प्रमाणसिद्धहैअथवाभ्रमसिद्धहैवास्वप्रकाशरूपता
 सेसिद्धहै । अथवाअसिद्धस्वभावहै । अंत्यपन्नतोर्नहींसंभवता । क्यों
 किअसिद्धपदार्थकोकहींभीपन्नपनादेखनेमेंनहींआता । औरप्रथमपन्न
 भीअसंगतहै, क्योंकिप्रमाणसिद्धकीस्वप्रकाशतासिद्धकरनेसेअनुमान
 मेबाधप्राप्तहोताहै ॥ अर्थात्प्रमाणकाविषयपदार्थस्वप्रकाशनहींहोता
 औरद्वितीयपन्नभीनहींसंभवता । क्योंकिभ्रमसिद्धयात्माकोआभास
 रूपताहोनेकरतिसंश्रयवालेअनुमानरूपअंगीकोभीआभासरूपताप्राप्त
 होगी । औरतृतीयपन्नभीनहींसंभवता । क्योंकियात्माकीस्वप्रकाशता
 तोअसिद्धकरनेलगेहैं ॥ इसअनुमानसेप्रथमभीयदस्वप्रकाशताकी
 सिद्धिमानेतोसिद्धसाधनदोषकीप्राप्तिहोगी ॥ किंवा । यह "इतरानपेक्ष
 प्रकाशत्व" रूपसाध्यक्याहै । अर्थात्इतरकीअपेक्षासेरहितजोप्रकाश
 है तत्स्वरूपत्वसाध्यहै । अथवातैसेप्रकाशकीअधिकरणतासाध्यहै ।
 दोनोंपक्षोंमेंप्रकाशको इतरानपेक्षत्व"क्या?उत्पत्तिमेंहै अर्थात्बहुप्रका
 शअपनीउत्पत्तिमेंदूसरे कीअपेक्षानहींकरता । अथवाअपनेप्रकाशमें
 इतरकीअपेक्षानहींकरता।प्रथमपन्नमेंस्वउत्पत्तिमेंइतरानपेक्षप्रकाशात्मक
 साध्यमानेहुएयात्माकोस्वप्रकाशताकीनिश्चिन्हींहोसकती । क्योंकि

उत्पत्तिमेइतरकीअपेक्षाअवश्यहोतीहै । यातेप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥
 औरअपनेप्रकाशमेइतरानपेक्षप्रकाशरूपसाध्यहै । इस द्वितीयपक्षसे
 आलोकरूपदृष्टांतमेसाध्यकीविकलताहै । क्योंकित्राह्यालोकमेंअपने
 प्रकाशमेइतरानपेक्षप्रकाशभास्वरूपहै । औरदृष्टांतरूपआलोकमेभास्वर
 रूपात्मकतानहीं है ॥ जिसकारणसे रूपऔरूपीकी एकताअयोग्य
 है । यातेद्वितीयपक्षभीनहींसंभवना ॥ औरआद्यद्वितीयपक्षमे “इतरान
 पेक्षप्रकाशवत्ता” रूपसाध्यमानेहुए यात्माको स्वप्रकाशताकीसिद्धिनहीं
 होगी । किंतुस्वप्रकाशप्रकाशकीअधिकरणताहीहोगी ॥ तैसेमाने
 हुएसंवित्तरूपदृष्टांतमेसाध्यकीविकलताभीहोगी ॥ क्योंकिस्वप्रकाशरूप
 ज्ञान स्वप्रकाशज्ञानकाअधिकरणनहीं है ॥ यातेद्वितीयपक्षभीअसंगतहै ।
 और “प्रकाशाऽव्यभिचारित्व” हेतुभी आत्माकेकैसेवर्तताहै । यहभीकथन
 करनेयोग्यहै । तहांप्रकाशकरजोव्याप्तपनाहैयहीप्रकाशाऽव्यभिचारित्व
 कहनाहोगा । औरव्याप्तिकाभीऐसाआकारकहनाहोगा । किजिसदेशमे
 आत्माहै । तहांप्रकाशहै । अथवाजिसकालमे आत्माहै तिसकालमेप्रकाशहै ।
 सोदोनोंप्रकारकीव्याप्तिनहींसंभवती ॥ क्योंकिआत्माकोव्यापकहोने
 सेकिसीदेशमेवृत्तितानहीं है ॥ औरनित्यहोनेसेकिसीकालमेभीवृत्तितान
 नहीं है । और “स्वसत्तायां” यहजोहेतुकाविशेषणकथनकियाहै ॥ वह
 भीव्यर्थ है ॥ क्योंकिपरप्रकाशघटादिकोंमेप्रकाशाऽव्यभिचारीपन्नानहीं
 किंतुप्रकाशसेव्यभिचारित्वहै ॥ यातेप्रकाशाऽव्यभिचारित्वमात्रहेतु
 कहनेसेभीतिनमेअतिव्याप्तिनहींहोती । औरयदिऐसेकहो । प्रकाशसे
 रहितजोअध्वस्तदीपकहै तिसमेसाधनकीविकलतादूरकरनेकेलिये “स्व
 सत्तायां” यहहेतुकाविशेषणकथनकियाहै । सोयहकथनभीसमीचीन

नहीं । क्योंकि तिसमे हेतुकी अशुभवृत्तिहुए भी विरोधका अभाव होनेसे साधनको दृष्टांतके किसी एक देशमे वृत्तिहुए भी सतहेतुपना देखा है । जैसे “पर्वतो वह्निमान् धूमात्” इस अनुमानमे महानसमात्रके अनाश्रित धूमको महानसविशेषमे वृत्ति होनेसे सतहेतुता स्वीकार है । तैसे इस अनुमानमे भी प्रकाशाव्यभिचारित्वहेतुको अशुभदीपमे अशुभवृत्तिहुए भी तिससे भिन्न आलोकमे विद्यमान होनेसे साधनकी विकलतारूपदोष नहीं प्राप्त होना । याते “स्वसत्तायां” यह हेतुका विशेषणव्यर्थ है । और सुखादिकोंमे यह हेतु व्यभिचारी भी है । क्योंकि सुखादिकोंको स्वसत्ताकालमे प्रकाशसे अशुभव्यभिचारीपनाहुए भी इतरानपेक्षप्रकाशरूपसाध्यका अभाव है । और इस अनुमानमे “तमो विरुद्धत्व” उपाधि भी है ॥ क्योंकि जहां जहां “इतरानपेक्षप्रकाशत्व” है तहां तहां “तमो विरुद्धत्व” अर्थात् तमका विरोधीपना है ॥ जैसे प्रदीपादिकोंमे है ॥ और जहां जहां “स्वसत्ताकालमें प्रकाशसे अशुभव्यभिचारीपना” है ॥ तहां तहां “तमो विरुद्धत्व नहीं” है । जैसे आत्मामे है । यद्यपि आत्मामे साधनके साथ उपाधि व्यापक है ॥ तथापि आत्माको तमका साधक होनेकर तमका विरोधीपना नहीं है ॥ याते पूर्वउक्तहेतुसोपाधिकहे ॥ और संवितरूप तथा आलोक रूपदोषोंदृष्टांतभी साधनसे रहित हैं ॥ क्योंकि देशसे अथवा कालसे प्रकाशकी समानाधिकरणात्ता संवित् और आलोकमे नहीं संभवती ॥ अर्थः यह ॥ संवित्को स्वप्रकाशताकेहुए संवित्से अतिरिक्तप्रकाशका अभाव होनेकर संवित्की प्रकाशके साथ समानाधिकरणात्ता अयोग्य है ॥ और आलोककी भी भास्वरूपसंज्ञकप्रकाशके साथ समानाधिकरणात्ताका अभाव है । क्योंकि भास्वरूपतिस आलोकका धर्म है ॥ शंका ॥ यद्यपि आलोक

श्रीभास्वरूपकागुणगुणीभावहोनेसे देशकृतसमानाधिकरणतानहीं
संभवती । तथापिजिसकालमेंआलोकहैतिसकालमेंप्रकाशहैयहकाल
कृतसमानाधिकरणता आलोकश्री प्रकाशकीवनसकतीहै ॥ समा
धान।हेसिद्धांतिकालकृतसमानाधिकरणताभीनहींसंभवती। क्योंकि

❀ क्षणमगुणद्रव्यंतिष्ठति ❀

अ०—एकक्षणमात्रगुणसेरहितद्रव्यस्थितहोताहै॥इसन्यायकाविरोधहै॥
यातेयहस्वप्रकाशताकासाधकअनुमानअसमीचीनहै ॥ इतिपूर्वपक्ष

❀ अथ सिद्धांत रीतिसेतिसअनुमानकामंडन ❀
समाधान॥हेवादिनयहलुम्हाराकथनहीअसमीचीनहै ॥तैसेहीस्पष्टकरके
दिखलातेहैं।जोवादीनेयहकथनकियाकिकौनआत्मापक्षहै।सोअसंगतहै।
क्योंकिआत्मशब्दकेजोयोग्यहैतिसीकोपक्षपनाहै ॥ औरप्रमाणसिद्ध
आत्माहैइत्यादिजोविकल्पपूर्वकहेथेवहभीअसमीचीन हैं।क्योंकिसिद्ध
पदार्थकोहीपक्षपनायुक्तहै ॥तिसमेप्रमाणादिविशेषणोंकोअसमर्थहोने
सेतिनकाकथननिष्फलहै ॥ औरजोसाध्यकीविकलतापूर्वउक्त विक-
ल्पसेकथनकीथीसोभीनहींसंभवती॥क्योंकि“प्रकाशमेइतरकी अपेक्षा
सेरहितजोप्रकाश है तत्तरूपता”मानेदूएको हीसाध्यपना है ॥ और
ऐसासाध्यदृष्टांतरूपआलोकमेसाध्यकीजोविकलतापूर्ववादीनेकहीथी
वहभीनहींसंभवती । क्योंकि तहांभी आलोकसे अतिरिक्त प्रकाश
अंगीकारनहींहै । किन्तु आलोकरूपहीप्रकाश है । जैसे

❀ प्रकृष्टप्रकाशश्चंद्रः ❀

अ०—उत्कृष्टप्रकाशस्वरूपचंद्रहै । इसकथनमेचंद्रव्यक्तिजोप्राति
पदिकअर्थहैतिससेअर्थांतरप्रकाशपदार्थनहीं है।अर्थात्बालुतथाप्रत्य-

योंदिकोंसेभिन्नार्थवालाजोचंद्रशब्दतिसकोप्रातिपदिककहतेहैंतिसका
 प्रकाशहीअर्थहै।कोईप्रकाशचंद्रव्यक्तिसेभिन्न नहीं। भिन्नार्थमाने
 हुएप्रश्नऔरउत्तरकीसमानाधिकरणतानहींहोगी॥ क्योंकिप्रश्ननेतो
 चंद्रकेस्वरूपमात्रविषयकप्रश्नकियाहै॥ वक्ताभीयदिचंद्रकेस्वरूपविष
 यकहीउत्तरनिरूपणकरेतोसमानाधिकरणतासंभवतीहै॥ अन्यथा
 प्रश्नतथाउत्तरकीव्यधिकरणताहोगी। औरभास्वरूपहीप्रकाशहै।
 आलोकप्रकाशस्वरूपनहींयहवादीकाकथनभीअसंगतहै॥ क्योंकि
 तहांपरभीरूपतथारूपवालेकातादात्म्यस्वीकारहोनेकरआलोकरूपदृष्टांत
 मेसाध्यकीविकलताकाअभावहै॥ औररूपतथारूपवान्कासमवाय
 संबंधकथनकरनाअशक्यहै॥ तिसीसेनैयायिकोंनेभीरूपरूपीकाता
 दात्म्यहीस्वीकारकरनायोग्यहै॥ औरजोपूर्ववादीनेहेतुगतदूषणकहेथे
 वहभीनहींसंभवते॥ क्योंकियावत्प्रकाशकालहेतावत्कालविद्यमानता
 कोहीहेतुकाअर्थपनाहै। औरजोआत्मामेंकालकृतपरिच्छेदकाअभाव
 कहाथा॥वहभीनहींसंभवता। क्योंकिअज्ञानकेवशसेकल्पितकालकृत
 परिच्छेदबनसकताहै। औरसुखादिकोंमेंयहहेतुव्यभिचारीभीनहीं। क्योंकि
 जितनाकालप्रकाशहैउतनाकालसुखादिकोंकीविद्यमानतानहीं॥
 मुक्तिकालमेंआत्मरूपप्रकाशकेविद्यमानहुएभीदुःखनहींहैयद्यपिसुख
 तिसकालमेंभीहै॥ तथापिसुखकोआत्मरूपताहोनेसेपक्षपनाहै॥
 तिसमेहेतुकोवृत्तिहुएभीव्यभिचारनहींहोसकता। औरयहआगे
 कथनकरनाजोहेतुहै॥ उसीसेज्ञातसत्तावालेघटादिकोंमेंहेतुकीअनैका
 तिकताअर्थात्व्यभिचाररितापरिहारकी। क्योंकिसाक्षिभास्यघटा
 दिकोंकीयावत्कालसाक्षीहैतावत्कालस्थितिकाअनंगीकारहै॥

और "तमोविरुद्धत्व" जो उपाधिपूर्ववादीने कहा था वह भी नहीं संभवता। क्योंकि साधनके साथ उपाधिव्यापक है। यद्यपि आत्मात्मका साधक है विरोधी नहीं। याते उपाधिसाधनके साथ अव्यापक है। तथापि स्वरूपसे आत्मात्मका विरोधी हुआ भी कल्पना करके तिसका साधक है। और वास्तवतया कल्पनिकदोरूप एकपदार्थके नहीं संभवते यह वादीका कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि तैसे माने हुए भ्रममात्र कालोप होगा ॥ और "इदं रजतम्" इत्यादि भ्रममें एकपदार्थके दोनोरूपमान होनेसे भी वह कथन अयुक्त है ॥ और दृष्टान्त भी साधनसे विकल नहीं ॥ क्योंकि यावत् प्रकाशकाल है ॥ तावत् विद्यमानत्वरूपहेतुका संवित् औ आलोक इन दोनोंमें सद्भाव है ॥ संवित् अणुप्रतीत होती है और पुनः नहीं है यह नहीं संभवता ॥ और आलोक भासता है और पुनः नहीं है ॥ यह कथन भी अयुक्त है। और पूर्व यह जो कथन किया था कि आलोकमें जो भास्वरूप है वह प्रकाश है ॥ और तिस प्रकाशकी यावत् कालस्थिति होती है। तावत् काल आलोककी स्थिति नहीं है ॥ क्योंकि निराश्रय हुआ गुण एक क्षणस्थित होता है ॥ यह स्वीकार है। जिस कारणसे गुणके नाशको गुणनाशके प्रतिकारणता है। तिस कारणसे आश्रयसे विना एक क्षण गुणकी स्थिति बन सकती है ॥ सो यह कथन भी समीचीन नहीं ॥ क्योंकि उपादानके नाशको ही कार्यके नाश प्रतिकारणता है ॥ और यहां पर आलोकमें भास्वरूपकी उपादानकारणता नहीं क्योंकि वह दोनों एककालमें उत्पन्न हुए हैं ॥ इसी कारणसे एककालमें उत्पन्न हुए तिन दोनों कागौके वाम तथा दक्षिण शृंखकी न्याई उपादान औ उपादेयभाव अंगीकार नहीं है ॥ शंका ॥ भास्वरूपके प्रति आलोकको उपादानकारण

नमानेंतो कौनतिसका उपादानकारणहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 आलोककेअवयवही तिसरूपकाभीउपादानकारणहैं ॥ यद्यपिऐसे
 मानेहुए “आलोकरूपवानहैं” यहप्रतीतिकैसेहोगी। तथापिउपादानके
 रूपकरकेहीकार्यमेरूपवत्ताकी प्रतीतिसंभवतीहै ॥ क्योंकिउपादानऔं
 कार्यकातादात्म्यहै ॥ इसप्रकारस्वप्रकाशताकासाधकअनुमाननिर्दोष
 है ॥ इति ॥ शंका ॥ इसअनुमानकीविषयताआत्मामे है। वानहीं।
 यदिअंत्यपक्षकहो तोकैसेआत्माकीस्वप्रकाशतासिद्धहोगी ॥ क्योंकि
 तिसमेप्रमाणकाअभावहै ॥ औरयदिप्रथमपक्षकहोतोभीस्वप्रकाशता
 सिद्धनहींहोसकती। क्योंकिअनुमितिज्ञानकीविषयता होनेसेघटादिकों
 केतुल्यदृश्यपनाहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यदिइसअनुमिति ज्ञानकर
 भास्यताआत्मामेंमानेतो स्वप्रकाशताकीहानिहो। परन्तुहमअनुमिति
 ज्ञानकरभास्यताआत्मामेंनहींमानते। किंतुइसअनुमितिकरनिवृत्तिकेयोग्य
 अज्ञानविषयताही इसअनुमितिकी विषयताआत्मामेंमानते हैं। याते
 पूर्वउक्तदोषनहींप्राप्तहोता। इसप्रकारनिर्दोषअनुमानसे सिद्धहुईजो
 आत्माकीस्वप्रकाशता अतिसकोउपसंहारकरतेहैं। तिसपूर्वउक्तप्रकार
 सेआत्मास्वरूपप्रकाशहै। यहअर्थसिद्धहुआ। इसीउक्तअर्थमें “अदृष्टद्वयम्”
 इत्यादिप्रथमकारिकाके पूर्वार्द्धमेंस्थित “ज्योतिः” विशेषणकापूर्वेशकरते
 हैं। इसीपूर्वउक्तसमग्रअभिप्रायकोलेकर मूलप्रथमकारिकामें “ज्योतिः”
 यहआत्माकाविशेषण कथनकियाहै ॥ शंका ॥ यहांज्योतिपदसे परे
 “मनुष्य” मत्स्यकालोपहोनेसेअथवा “शुक्लःपटः” इसभयोगकीन्याई
 उपचारकअभेदहोनेसे “ज्योतिरात्मानम्” इससमानाधिकरणाताकाभयोग
 है। कोईवास्तवअभेदसे यहभयोगनहीं। समाधान। जैसेलवणपिंडलवण

एकरसहोताहै। तैसेविज्ञानएकरसस्वभावहोनेकरयहआत्मास्वयंज्योतिस्वरूपहै। अर्थयहप्रथमप्रकाशस्वरूपहोनेसेऔरतमकाविरोधीहोनेसेविज्ञानहीज्योतिपदकावाच्यहैऔरविज्ञानस्वरूपहीआत्माहै। क्योंकिश्रुतिमेंविज्ञानघनहीआत्माकास्वरूपश्रवणहोताहै। इसलियेपूर्वोक्तमनुष्कल्पनांशौश्रौपचारिकअभेदव्यवहारयहदोनोनोंहीसंभवतेक्योंकि। यहदोनोभेदनिश्चयपूर्वकहोतेहैंऔरप्रकरणमेंभेदनिश्चयकाअभावहै। और

॥ घटज्ञानयोसंबंधः आत्मनिष्ठः ज्ञान
निष्ठत्वात् सत्तावत् ॥

अ० । घटऔरज्ञानकाजोसंबंधहै वहआत्मनिष्ठहै। ज्ञाननिष्ठहोनेसे। जोज्ञाननिष्ठहै वहआत्मनिष्ठहै। जैसेसत्ताजातिहै ॥ इति ॥ यहमहाविद्याअनुमानहै। दृष्टांतमेंनिर्णीतव्याप्तिकेवलसेपक्षमेंवादीकोअनभिमतसाध्यकेसिद्धकरनेवालाअनुमानमहाविद्याअनुमानकहाजाताहै ॥ इति ॥

इसअनुमानसेभीविज्ञानस्वरूपहीआत्माहै। तैसेमानेहुएविज्ञानैकरसस्वभावहोनेकरस्वयंज्योतिस्वरूपहीआत्माहै। तिसआत्माकास्वरूपश्रुतिसेनिश्चयकरकेअवतिसमेंयुक्तिनिरूपणकरतेहैंयहपूर्वश्लोकसेअन्वयजानलेना ॥ शंका ॥ यदिस्वयंज्योतिस्वरूपआत्माहै। तोतिसस्वप्रकाशआत्मामेंअनुमानकाकथनअनुचितहै। क्योंकिवहआत्माउपनिषद्मात्रकाविषयहै। अन्यप्रमाणकाविषयनहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिअनुमानसेब्रह्मात्माकीसंभावनामात्रकेहुएआगेकथनकीहुईश्रुतिहीतिसमेंप्रमाणहै ॥ सोश्रुतिहै ॥

॥ अत्रायंपुरूपः स्वयंज्योतिर्भवति ॥

(बृ० उ० अ० ६ ब्रा० ३॥६)

अ०—इसस्वप्नअवस्थामें आत्माभानहोता है यहसर्वकोस्वीकार है । वहभानअर्थात्प्रकाश प्रथमबाह्यइन्द्रियों करके नहींसंभवता । क्योंकिबाह्यइन्द्रियोंकीतिसआत्माविषयक प्रवृत्तिनहींहोती । तथास्वप्न कालमेंनेत्रादिकइन्द्रिय स्वस्वव्यापारसे उपराम है । औरमनसेभीतिस आत्माकाप्रकाशनहींहोता । क्योंकितिसकारथादिरूपविषयाकारपरिणाम हुआहै । औरबाह्यसूर्यादि ज्योतियोंकाभीस्वप्नकालमें अभावहै । याते परिशेषसे स्वयंज्योतिस्वरूपतासेही आत्माकाभानहोता है । यहअर्थ सिद्धहुआ ॥ इति ॥

अथपुनः शंकासमाधानपूर्वकआत्माकीस्वयंज्योति
रूपताकाप्रकारांतरसेनिरूपण । अथपूर्वपक्ष ।

हेसिद्धांतिनपूर्वउक्तश्रुति तथाअनुमानदोनोंही आत्माकीस्वप्रकाशतासिद्धकरनेकोसमर्थनहीं हैं । क्योंकिपूर्वउक्तअनुमानकोसत्प्रति प्रकृतताहै । तथाअनुमानका विरोधहोनेसेश्रुतिका पूर्वोक्तअर्थयोग्यनहीं है । तैसेहीदिखलाते हैं ।

आत्मानस्वप्रकाशः ज्ञातत्वात्अनात्मवत् ॥१॥

तथाआत्मानस्वप्रकाशः अज्ञातत्वात् घटवत् ॥२॥

अ० । आत्मास्वप्रकाशरूपनहींहै । ज्ञानकाविषयहोनेसे जोजो ज्ञानकाविषयहोताहै सोसोस्वप्रकाशनहींहोता । जैसेअनात्माहै । (१) औरआत्मास्व प्रकाशस्वरूपनहीं है अज्ञानकाविषयहोनेसेजोअज्ञान काविषयहोताहै । सोसोस्वप्रकाशनहींहोता । जैसेघटहै ॥ २ ॥ इन

दोनों अनुमानोंसे पूर्वउक्त अनुमानदुष्ट है । तथाइनके साथ विरोध होने कर श्रुति अयोग्य अर्थको कैसे कथन करेगी याते वह स्वार्थमें प्रमाण नहीं ।

॥ शंका ॥ हेवादिन्दोनो प्रतिपक्षाऽनुमानों में पक्षरूप जो आत्मा है वह क्या? विशिष्ट है अथवा शुद्ध है ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि स्थापना अनुमानमें शुद्ध आत्माको हमने पक्ष किया है ॥ विशिष्टको नहीं ॥ तिस विशिष्टकी स्वप्रकाशता हम भी नहीं मानते ॥ और द्वितीय पक्ष कहो तो दोनों हेतुस्वरूपसे ही तिस आत्मामें नहीं वर्तते ॥ क्योंकि तिस आत्माको ज्ञात तथा ज्ञातपदार्थोंसे विलक्षणता श्रुतिने कही है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् यह दोनों हेतु अनुभव प्रमाण करके आत्मामे सिद्ध हैं सो दिखलाते हैं ॥ कवीतो (आत्मानमहं जानामि) अ० ॥ आत्माको मैं जानता हूँ ॥ ऐसा अनुभव होता है और कवी (आत्मानमहं न जानामि) अ० ॥ आत्माको मैं नहीं जानता हूँ ॥ ऐसा अनुभव होता है ॥ इस प्रकार इन दोनों अनुभवों करके सिद्ध जो आत्मामे ज्ञातता तथा ज्ञाततारूप हेतु हैं तिन करके आत्मामे स्वयं ज्योतिपनानहीं संभवता ॥ शंका ॥ हेवादिन् “आत्मानमहं जानामि” इस अनुभव करके आत्मामे ज्ञातता सिद्ध भी है परंतु वह स्वप्रकाशताके निवारण करनेमें समर्थ नहीं ॥ क्योंकि ज्ञान करके निवृत्ति के योग्य जो अज्ञानकी विषयता रूप ज्ञातता है तिसका स्वप्रकाशताके साथ विरोध नहीं ॥ समाधान ॥ तिस ज्ञातताको जैसे विरोध है सो दिखलाते हैं । यदि “आत्मानमहं जानामि” इस पूर्वउक्त अनुभवकेवलसे ज्ञातत्व आत्मामें स्वीकार है तो ज्ञानकी विषयता अर्थात् ज्ञानका कर्म आत्मा है । यह स्वीकार किया चाहिये । तो अनात्मा घटादिकों की न्याई आत्मामें

स्वप्रकाशताकाअसंभवहै। यहाँयहतात्पर्यहै। “आत्मानमहंजानामि”
 और “घटमहंजानामि” इसप्रकारकेअनुभवसे दोनोंमेंज्ञाततातुल्यही
 सर्वकोपूतीतहोतीहै। औरवेदांतीकेमतमेंघटविषयकज्ञान करकेनिवृत्तिके
 योग्यअज्ञानकीविषयतारूप ज्ञाततानहींसंभवती। क्योंकिजडघटादि
 पदार्थोंमेंअज्ञानकी विषयतातुमको स्वीकारनहीं। और तिसकोज्ञान
 भास्यत्वमाननेमें विरोधकाभीअभाव है। औरघटादिकोंमेंज्ञानकी
 विषयताअन्यपूकारकीहै। औरआत्मामेंज्ञानकीविषयताअन्यपूकारकी
 है। यहकथनभीअयुक्तहै। क्योंकिज्ञातशब्दकोअनेक अर्थत्वप्राप्तहोगा
 औरअनेकअर्थत्वन्यायनहीं किंतुअन्यायहै। तिसीसेज्ञानभास्यत्वरूप
 ज्ञातताहीदोनोंमें युक्तहै ॥शंका॥ ज्ञानभास्यत्वरूपज्ञातताआत्मामेंहो
 तिससे स्वप्रकाशताकी क्या?हानीहै ॥समाधान॥ हेसिद्धांतित्तैसे
 मानेहुएपूर्वकथनकिया जोस्वप्रकाशत्वकी निवृत्तिकासाधकअनुमान
 वहभलीपूकारसेस्थितहुआ ॥ तिससेस्वप्रकाशत्वकीहानीहुई ॥
 शंका ॥ ज्ञानभास्यत्वरूपज्ञानकीकर्मताभीआत्मामेंहोऔरस्वप्रकाशता
 भीहो ऐसामाननेमेक्यादोषहै ॥ समाधान ॥ स्वप्रकाशताऔरज्ञान
 भास्यताएकअधिकरणमेनहींदेखेजाते ॥ इसीसेस्वप्रकाशताकेहुए
 ज्ञानकर्मताकाअसंभवहै ॥ क्योंकिउसीकोस्वप्रकाशकहतेहैं ॥ जो
 किसीरूपकरकेकिसीभीज्ञानकीकिसीकालमेकर्मताकोनहीं ासहोता॥
 यदिऐसानमानें किंतुज्ञानके विषयकोहीस्वयंप्रकाशमाने ॥ तोसां
 केतिकहीस्वप्रकाशतासिद्धहोगी ॥ कोईयुक्तिसिद्धनहीं ॥ याते
 आत्मास्वप्रकाशनहीं यहअर्थसिद्धहुआ ॥ शंका ॥ हेवादिन् “अप्र
 मेयं” अ० ॥ यहआत्माज्ञानकाविषयनहीं ॥ इसश्रुतिसेतिसकोज्ञान

विषयत्वका अभाव है ॥ तुम ज्ञान का कर्म तिसको कैसे कहते हो ॥ समाधान ॥ यद्यपि श्रुतिका विरोध होने से “आत्मानमहं जानामि” इस अनुभव को तो अनात्मविषयकत्वरूपता से भी संभव होने के अन्तर्गत इसको नहीं है ॥ तथापि ॥

❀ अनीशया शोचति मुह्यमानः ❀ अ० ॥ (४) पं० ७ ॥ श्वे० उ०

इस श्रुति से और “मामहं न जानामि” इस अनुभव से यदि अज्ञातता ही आत्मा में स्वीकार हो ॥ तो भी स्वयं ज्योतिपने की हानी है ॥ शंका ॥ अज्ञातता भी आत्मा में स्वीकार हो ॥ परन्तु वह स्वयं ज्योतिपने का विरोध नहीं ॥ क्योंकि अस्वप्रकाश घटादिकों में जड़ता होने से स्वतः ही आवृत्त स्वभावता है ॥ इसलिये अज्ञान की विषयतारूप अज्ञातता का तिनमें अभाव है ॥ और आत्मा को स्वप्रकाश होने से अज्ञानविषयतारूप अज्ञातता तिसमें बन सकती है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतित् जैसे “मामहं न जानामि” यह अनुभव है तैसे ही “घटमहं न जानामि” यह अनुभव है ॥ अनुभव की तुल्यता से घटादिकों में अज्ञातता अवश्य स्वीकार करने योग्य है ॥ और घटादिकों में अस्वप्रकाशता हम दोनों को स्वीकार है ॥ तैसे माने हुए जहां अज्ञातता है तहां अस्वप्रकाशता है ॥ इस प्रकार अज्ञातता अस्वप्रकाशता के व्याप्त है ॥ वह आत्मा में देखी हुई तिसमें स्वप्रकाशता की हानी को सिद्ध करती है ॥ शंका ॥ हे वादि नूतन की अपेक्षा से रहित जो अपनी भासमानता है इसी कानामस्वप्रकाशता है ॥ और अभासमानता कानाम अज्ञातता है ॥ सो अभासमानता भासमानता का विरोधी नहीं ॥ क्योंकि घटादिकों में किसी काल में भासमानता भी देखी जाती

है ॥ समाधान ॥ यद्यपि घटादिकों में अभासमानता औ भासमानता दोनों हैं । तथापि वह एक काल में नहीं हैं । क्योंकि भासमानता को कार्य होनेकर कदाचित् कल्पना है । और आत्मा में तो दोनों एक काल में प्राप्त हैं । क्योंकि स्वप्रकाशता आत्मा का तुम स्वरूप मानते हो ॥ तिसको अनादि भाव होनेकर नित्यता है । और अज्ञान को भी अनादि होनेकर कार्यता का अभाव है ॥ इस प्रकार दोनों को अनादिरूपता से नित्य होनेकर एक काल में दोनों विरुद्ध धर्म आत्मा में नहीं संभवते । और अज्ञातता तो हम दोनों को स्वीकार है । तिसी कारण से आत्मा में अज्ञान काल में "भाति" अ० ॥ भान होता है इस प्रकार के स्वरूप वाली भासमानता का विरोध होने से कोई भी तिसके अनुभव करने को समर्थ नहीं हो सकता । तिस विरोध को ही स्पष्ट करते हैं । जिस काल में आत्मा भान होता है । तिसी काल में (न भाति) अ० । नहीं भान होता । यह अनुभव नहीं हो सकता । और जिस काल में आत्मा भान नहीं होता । तिसी काल में (भाति) यह अनुभव भी नहीं हो सकता । इस प्रकार पूर्व उक्त ज्ञातता तथा अज्ञातता रूप हेतु को आत्मा में वृत्ति होने कर किस प्रकार तिसका स्वयं ज्योति पना सिद्ध हो सकता है । किंतु किसी प्रकार भी नहीं । इति पूर्व पक्ष । अथा सिद्धांत समाधान । हेवादि न पूर्व कथन किये हुए अनुमान के साथ विरोध होने से स्वप्रकाशता के साधक अनुमान में सत्प्रतिपक्षपना और श्रुतिके अर्थ में अयोग्यता की प्राप्ति रूप दोष जो तुमने पूर्व कहा सो नहीं संभवता । क्योंकि अनुमान अभासरूप है । यही स्पष्ट करते हैं । शत तथा अज्ञातपदार्थ से विलक्षण को ही आत्मता है ॥ इसलिये पक्षभूत आत्मा में शतत्व तथा अज्ञातत्व यह दोनों हेतु नहीं वर्तते ॥ यद्यपि ॥

* परस्परविरोधेनप्रकारांतरस्थितिः *

इसन्यायसेज्ञातयौ अज्ञातपदार्थोंसे आत्माकी विलक्षणता कैसे हो सकती है।
तथापितैसा आत्माका स्वरूपश्रुतिमें कथन किया है ॥

* अन्यदेवतद्विदिता दथोविदितादधि ॥ * उ० के० खं. १) ३

अ० ॥ वह आत्मा (विदितात्) ज्ञातपदार्थोंसे और (अविदितात्) अज्ञातपदार्थोंसे (अधि) विलक्षण है। इस श्रुतिके साथ विरोध होनेकर पूर्वउक्तन्यायको आभासपना है ॥ शंका ॥ प्रमाणसे विना किया हुआ जो न्याय है वह आभासरूपताको प्राप्त होपरन्तु यह न्याय तो "मामहं जानामि" इत्यादि प्रमाणकी सहकारितावाला है। याते यह न्याय किस प्रकार आभासरूप हो सकता है ॥ अन्यथा इस पूर्वउक्त अनुभवकी क्या गति होगी ॥ समाधान ॥ हेवादिन् इस अनुभवको विशिष्टविषयक होनेसे अनात्मगोचरता ही है कोई निरूपण करने योग्य आत्माकी ज्ञातताको यह अनुभवन ही सिद्ध कर सकता ॥ शंका ॥ यह अनुभव किस विशिष्ट आत्माको विषय करता है। क्या? अज्ञानविशिष्टको विषय करता है। अथवा अहंकारविशिष्टको विषय करता है। प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि "आत्मानमहं जानामि" इस अनुभवमें अज्ञानका स्फुरण नहीं होता ॥ और द्वितीयपक्ष भी असंगत है ॥ क्योंकि "आत्मानमहं जानामि" इस अनुभवमें अहंशब्दका अर्थ जो अहंकार है वह कर्त्तारूपकर पृथक् ही भान होता है। याते "आत्मानमहं जानामि" यह अनुभव विशिष्टविषयक नहीं किंतु निरूपणीय आत्माविषयक ही है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् इस अनुभवमें जातिगुणक्रियासे रहित तथा अज्ञान यौदुःखसे भिन्न वस्तुका स्वरूपमात्र भान होता है। ऐसा अनुभव तो होतानहीं जिसकर आत्माको ज्ञानकार्क

पनाहो ॥ किन्तु उपाधिविशिष्टकोही ज्ञानकार्कर्मपनाहै। औरतिसको ज्ञानकार्कर्ममानेहुएभी कोईविरोधनहीं ॥ यहांयहअर्थजाननेयोग्यहै “आत्मानमहंजानामि” यहअनुभवनिर्विकल्पकतोहैनहीं ॥ क्योंकि “किंचिद् इदं” ऐसाहीनिर्विकल्पककाआकारशब्दसेकथनकियाजाता है ॥ औरयहांकिंचिदाकारसे कथनतोहैनहींकिंतु “आत्मानं” इस प्रकारआत्मशब्दसेज्ञानकेआकारकाकथनहै ॥ यातेयहज्ञानसविकल्पक है ॥ औरयहज्ञाननैयायिकोंनेमानसहीस्वीकारकियाहै ॥ औरमनभी इंद्रियहै ॥ तिसकीद्रव्यमेंप्रवृत्तिगुणकेसंबंधसेहीकहनेयोग्यहै ॥ और गुणभीआत्मासेदुःखादिकही कहनेयोग्यहैं। औरदुःखादिकोंकासंबंध आत्मासेनैयायिकजैसेस्वतःमानतेहैं ॥ तैसेहमारेमतमेंनहीं है ॥ किंतु दुःखादिकोंकेउपादानकारण अंतस्करणकेसाथतादात्म्यसंबंधसेहै ॥ औरतिसअंतःकरणकातादात्म्यअज्ञानसेविनानहींसंभवता ॥ तैसेमानेहुए “आत्मानमहंजानामि” इसअनुभवकेबलसेहीअज्ञानतथादुःखादिविशिष्टआत्मकाहीमानहोताहै। शुद्धस्वरूपकाभाननहीं। अन्यथायहज्ञाननिर्विकल्पकहोगा ॥ तिसकारणसेयहअर्थसिद्धहुआ ॥ किंविशिष्ट आत्माही ज्ञानकार्कर्महैशुद्धआत्मानहीं ॥ शंका ॥ यद्यपितैसेअनुभवकाविषयविशिष्ट हैतथापितिसविशिष्टस्वरूपकोभीज्ञानकार्कर्मपनानहींसंभवता ॥ क्योंकि वहभीआत्माहै ॥ जैसेकुंडलवालादेवदत्तदेवदत्तनहींहै ॥ ऐसानहींहो सकता ॥ किंतुकुंडलविशिष्टहुआभीदेवदत्तदेवदत्तहीरहताहै ॥ तैसेविशिष्ट आत्माभीआत्माही है अन्यनहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिभूतिसविशिष्टको स्वप्रकाशमानेहुएअज्ञानादिविशेषणकोभीस्वप्रकाशताकी प्राप्तिहोगी ॥ क्योंकिविशिष्टवृत्तिधर्मकोविशेषणमेंवर्तनेकानियमहै ॥ तिसकारणसे

विशिष्टज्ञानकाकर्म है। इस अर्थमें विरोधका अभाव होनेसे वह स्वप्रकाश नहीं ॥ शंका ॥ अज्ञानादिविशेषण को भी देहादिकों की अपेक्षासे अंतरता है तिसीसे तिसको आत्मपना होनेसे स्वप्रकाशता का भी संभव है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अंतरता आत्मतामें प्रयोजक नहीं। किंतु जडतासे विरुद्धचेतनता आत्मतामें प्रयोजक है । और अज्ञानादिविशेषणको चेतनरूपता है नहीं क्योंकि वह चेतनसे विरुद्धजडरूप है । इसलिये अज्ञानादिविशेषणको आत्मरूपता नहीं संभवती । और अनात्मता होनेसे तिसको स्वप्रकाशता भी नहीं है। याते शुद्ध आत्माको ही स्वप्रकाशता का अंगीकार है । अज्ञानादिविशिष्टको नहीं ॥ शंका ॥ ज्ञानका विषय होनेसे विशिष्टको अस्वप्रकाशता माने हुए विशेष्यभागको भी ज्ञानका कर्म पना होगा ॥ तिससे आत्मअंशमें भी प्रकाशताकी प्राप्ति होगी ॥ समाधान ॥ (सविशेषणोहि) अ० ॥ विशेषणसहितमें जो बुद्धि होती है वह विशेषणअंशमें संभवती हुई विशेष्यभागमें पर्यवसानको प्राप्त होती है । इसन्यायसे विशेषणीभूत अज्ञानादिका तिरस्कार करके शुद्धजो विशेष्यमात्र है तिसको आत्मा होनेसे स्वप्रकाशता है । विशिष्टको नहीं। क्योंकि तिसको कल्पित होनेकर अनात्मता है ॥ शंका ॥ यद्यपि ज्ञातताका जो अनुभव है ॥ वह विशिष्टको विषय करता है। शुद्धको ज्ञानकी कर्मताका वह संपादक नहीं ॥ याते पूर्वअनुमानमें स्वरूपाऽसिद्धिरूप दोषस्थित है ॥ तथापि अज्ञातताका जो अनुभव है वह विशिष्टविषयक नहीं संभवता ॥ क्योंकि विशेषणरूप अज्ञानको अज्ञानविशिष्टका प्रयोजक होनेकर अज्ञानविशिष्टको अज्ञानविषयत्वका अभाव है ॥ यदि अज्ञानविशिष्टको भी अज्ञातमानंतो आत्मा अथ दोषकी प्राप्ति होगी ॥

क्योंकि अज्ञानके विषयकोही यज्ञात कहते हैं ॥ स्वविशिष्टको विषय करताहु आ अज्ञानस्वको भी विषय ग्रवश्यकरेगा ॥ और अपनी विषयतामें आपकोही कारण माननेमें यात्मा श्रयदोषकी प्राप्ति स्पष्टही है ॥ इस युक्तिसे शुद्धात्मा मेही अज्ञातता है ॥ और-

अनीशया शोचति मुह्यमानः । नीहारेण प्रवृत्तः ॥

अ०—ग्रविद्याकर मोहितहु आ यर्थात् आच्छादितहु आ शोक करता है ॥ और (नीहारेण) अज्ञानकरके (प्रवृत्तः) आच्छादित है ॥ इत्यादि श्रुतिसे भी शुद्धात्मा ही अज्ञानका विषय है । तिस कारणसे सो पूर्व कथन किया अज्ञातत्वहेतु कैमेस्वरूपाऽसिद्ध होसकता है । किंतु नहीं होसकता ॥ समाधान ॥ हेवादिन् “मामहंन जानामि” यह अनुभव भी आत्माकी स्वप्रकाशताका ही साधक है । कोई स्वप्रकाशताका विरोधी नहीं । यद्यपि यह अनुभव अज्ञातताको शुद्धात्तामें स्थापन करता है । तथापि स्वप्रकाशतासे विना यात्तामें अज्ञातताको धन करनेको समर्थ नहीं । इसलिए अज्ञातता स्वप्रकाशताका विरोधी नहीं ॥ किंतु तिसका साधक है । याते अज्ञातत्वहेतु आत्तामें अस्वप्रकाशताका साधक नहीं ॥ शंका ॥ स्वप्रकाशताका अभाव जो अभासमानता है तिसको अज्ञातता कहते हैं ॥ तिसका ग्राहक जो “आत्मानमहंन जानामि” यह अनुभव है वह स्वप्रकाशताका साधक कैसे है । क्योंकि जो जिसका ग्राहक होता है । वह तिसका ही साधक होता है । यदि ऐसे न मानें तो “अयं घटः” यह अज्ञान जो घटका ग्राहक है तिसको पटकी माधकता प्राप्त होनेसे अति प्रमंग प्राप्त होगा ॥ समाधान ॥ जिस प्रकार यह अनुभव स्वप्रकाशताका साधक है सो दिखलाते हैं । यह अनुभव यात्ता विषयक अज्ञानको विषय करता है ।

और यह विशिष्टज्ञान है ॥ तिसमें विशेष्य अज्ञातत्व है ॥ सो विषयके
 आधीन निरूपण करने योग्य है ॥ और विषय आत्मा ही है । सो अज्ञातत्व
 का व्यावर्तक होनेकर विशेषण है ॥ इस कारण से आत्मा भी
 विशिष्ट ज्ञानमें भान होता है । क्योंकि विशिष्ट ज्ञान को विशेषण
 विषयत्वकानियम है ॥ अर्थात् विशिष्टज्ञानविशेषणको अवश्यविषय
 करता है ॥ याते इस अनुभवमें अज्ञानकी न्याई आत्माका भान अवश्य
 कहने योग्य है ॥ शंका ॥ यह अनुभव आत्माविषयक अज्ञातताको
 बोधन करता हुआ भी आत्माको विषय नहीं करता ॥ क्योंकि आत्मा
 तिस अनुभवमें उपलक्षण है विशेषण नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 जैसे “काकवाला देवदत्तका गृह है ॥ इस कथनमें किंचित्मात्र अति
 शयता जो तृणोंका ऊर्द्धमुखत्वरूप होना सो देवदत्तके ग्रहका निश्चायक है
 तिसको द्वासरके ही काकदेवदत्तके ग्रहका व्यावर्तक हुआ तहां उपलक्षण
 अंगीकार किया है । और यहां अज्ञानविषयक आत्मासे उत्पन्न हुआ
 कोई अतिशयतारूप घटादि विषयसे व्यावर्तक धर्म नहीं है । क्योंकि
 प्रतीत नहीं होता । इस प्रकार और किसी धर्मको द्वासरनेका असंभव होने
 से आत्मा ही अज्ञानका व्यावर्तक हुआ अज्ञानमें विशेषण कहने योग्य
 है ॥ यदि आत्माको विशेषण नहीं मानोगे । तो अज्ञानको आत्मविषयत्व
 नहीं सिद्ध होगा । अन्यथा “न जानामि” इतना ही तिस अनुभवका आकार
 होगा ॥ शंका ॥ आत्मरूपविशेषणयुक्त अज्ञातताको प्रमाण प्रका
 शकरो । तथापि उससे आत्माकी स्वप्रकाशता नहीं सिद्ध हो सकती ॥
 क्योंकि विशेषण तथा विशेष्यके साथ इन्द्रियके सन्निकर्षको ही विशिष्टज्ञान
 की कारणता है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् विशेषणके साथ इन्द्रियके

संबंधकोविशिष्टज्ञानकेप्रति कारणात्तानहीं हे क्योंकिभूततथाभावी विशेषणोंमें इंद्रियकेसंबंधकाअभावहे । तिसीकारणसेविशेषणकाज्ञान हीनियमसेविशिष्टज्ञानमें कारणाहे ॥ इन्द्रियसंबंधनहीं । इसीसे “आत्मानमहंनजानामि” यहअनुभव स्वप्रकाशरूपतासे भासमानआत्माकोविषयकरकेतिसमें अज्ञानस्वरूपआवरणकोविषयकरताहै । तात्पर्य यहहै ॥ विशेषणरूपआत्माकीइसप्रत्ययमेंजो भासमानताहै । वह प्रमाणसेहै । अथवाभ्रमसेहै । अथवास्वप्रकाशरूपतासेहै । यहविचारणीयहै । तिनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिप्रमाणकी भ्रुत्तिद्वएतिसमें अज्ञातताकाअसंभवहोनेसे विरोधहै । औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै । क्योंकिआत्माकोकल्पितपनाहोगा ॥ भ्रमसिद्धपदार्थकोकल्पितपना नियमसेहोताहै ॥ यातेपरिशेषसेस्वप्रकाशरूपतासेही आत्माकीभासमानता कहने योग्यहै ॥ शंका भासमानता का अभाव अज्ञातता है । सो भासमानता के हुए कैसे आत्मा में संभवैगी । किंतु नहीं संभवती ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अज्ञानका आवरक स्वभाव श्रुतिमेंप्रसिद्ध है । क्योंकि (नीहारेणप्रावृत्तः) इसश्रुतिमेंअज्ञानकोआवरकपनाकहा है ॥ औरआवरकस्वभावभावरूपवस्त्रादिकोंकाहीदेखा है ॥ अभावकोआवरकपनाकहींदिवानहीं ॥ तिससेभासमानआत्मा मेंभीअज्ञाततावनसकती है ॥ क्योंकिभावथौअभावकाहीएकअधिकरणमेंविरोधहोताहै ॥ औरभावपदार्थोंकातो रूपसकीन्याईएकअधिकरणमेंस्थितिहुएभीविरोधनहींहोता ॥ शंका ॥ इसप्रकारमानेहुएघटादिकोंमेंभीअज्ञातताथौभासमानतादोनोंहुएचाहिये ॥ तिनमेंभीआत्माकीन्याईविरोधनहींहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन्अनात्माघटादि

कौमें भासमानता प्रमाणसे कहने योग्य है क्योंकि तिनको स्वप्रकाश स्वरूपता का अभाव है ॥ और प्रमाणकी प्रवृत्ति हुए तिसका विरोधिनी अज्ञातता तहां नहीं रह सकती ॥ तिससे भासमानता और अभासमानता यह दोनों परप्रकाश घटादिकोंमें ही विरोधको प्राप्त होते हैं ॥ स्वप्रकाश या त्माविषयक एककालमें भासमानता या अभासमानता विरोधको नहीं प्राप्त होते ॥ इस प्रकार “आत्मानमहंनजानामि” यह जो आत्मामें अज्ञातताका साधक प्रमाण है ॥ तिसकेवलसे ही आत्माकी स्वप्रकाशता सिद्ध हुई ॥ शंका ॥ अज्ञातत्वका साधक जो प्रमाण है ॥ वह अज्ञानके विषयमें स्वप्रकाशताका साधक नहीं ॥ क्योंकि “घटमहंनजानामि” इस प्रकारका अनुभव अनात्मा घटादिकोंमें भी अज्ञातत्वका साधक है ॥ तिनमें भी स्वप्रकाशताकी प्राप्ति हुई चाहिये ॥ और तिनमें स्वप्रकाशता देखनेमें नहीं आती ॥ याते पूर्व उक्त अनुभव आत्माकी स्वप्रकाशताका साधक नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् “घटमहंनजानामि” यह अनुभव प्रथम आत्माकी न्याई घटादिकोंमें समान ही तुमने माना है ॥ याते घटादि अज्ञानमें विशेषण हैं यह भी कहा चाहिये ॥ और विशेषण ज्ञानसाध्य ही विशिष्ट प्रतीतिकहनी होगी ॥ सो विशेषण रूप घटका ज्ञान प्रमाणसे तो संभवता नहीं ॥ क्योंकि प्रमाणके विद्यमान हुए अज्ञातताका अभाव है ॥ प्रमाण, केहुए भी यदि अज्ञातता घटमें मानेंगे तो कभी भी तिसका नाश नहीं होगा और स्वतः भी तिस विशेषणका भान नहीं संभवता ॥ क्योंकि घट जड़ है ॥ और अज्ञानसे तिस विशेषणकी सिद्धि मानों तो तिसको कल्पित पनाहोनेसे अज्ञातता नहीं संभवैगी ॥ अतः इसी अर्थके कथन करनेके लिये आत्मामें भिन्न घटके स्वरूपको निराकरण करते हैं ॥

* अथआत्मासेभिन्नघटकेस्वरूपकाखंडन *

हेवादिन्नयहघटकिसकोकहते हैं । जिसकीस्वप्रकाशतातुमआपादनकरतेहो ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्जिसमेंघटत्वादिधर्मप्रतीतहोते हैं यहीघटहै ॥ अथवाव्यक्तिपदार्थपक्षमेंकंबुग्रीवाकारवालीव्यक्तिविशेषहीघटहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्इसघटकास्वरूपतुमकथनकरो। क्योंकिसर्वादिजोसर्वनामशब्द हैं वहतोप्रसिद्धमात्रकेवाचक हैं। किसी एकविशेषपदार्थकीउपस्थितितिनसेहोती है इसमेंकोईनियामकनहीं। यातेतुमहीघटकाविशेषस्वरूपकहो ॥ औरशब्दसे तिसकाप्रतिपादनशुककीन्याईनहोकिंतुअर्थबुद्धिपूर्वककहनायोग्यहै ॥ औरवहअर्थकाअनुभवभीभ्रमरूपनहो। क्योंकिभ्रमकेविषयकोकल्पितपनाहोताहै। इसलियेयथार्थअनुभवकरकेकहनेयोग्यहै ॥ औरवहयथार्थअनुभवभीप्रमेयत्वादिरूपतासे घटकाबोधकनहो किंतुइतरपदार्थोंसेभिन्नअसाधारणरूपकरबोधनकरनेवालाहो ॥ अर्थात्तिसघटकोसम्यक्अनुभवकरकेइतरपदार्थोंसेभिन्नरूपताकरतुमदिखलाथो ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्“कपालादिकोंकरकेआरब्धजोअवयविविशेष” तिसीकोघटकहते हैं ॥ अर्थयह ॥ कपालोंनेअपनेविषयकसमवेतरूपताकरजोउत्पन्नकियासोकपालारब्धकहियेहै ॥ यदिइतनाहीघटकालक्षणकरेतोकपालादिकोंमेंसमवायसंबंधसेरहनेवाले रूपादिकभीघटहोनेचाहिये। तिनकीव्यावृत्तिकेअर्थ“अवयवि”यहपदलक्षणमेकहाहै। और“कपालादिआरब्धअवयवि” जोइतनाही घटकालक्षणकहते” तोशरावादिकोंमें अतिव्याप्तिहोती। तिसकेनिवारणअर्थ“विशेष” यहपदलक्षणमेंकहाहै यातेकपालादिकोंने अपनेविषयकसमवेतरूपताकर जोउत्पन्नकिया

अवयवविशेष तिसीको घटकहते हैं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 क्या? यहवाक्यकपालऔ घटकेअवयवअवयवित्वसंबंधादिधर्मप्रतिपाद
 नपरहै । अथवाघटके स्वरूपकोबोधनकरताहै ॥ प्रथमपक्षकहोगेतो
 प्रश्नकाअनुत्तरहै ॥ क्योंकिघटकेस्वरूपविषयकहमाराप्रश्नहै । कोई
 तिसकेसंबंधिमौविषयकप्रश्नहीं । औरअवयवऔ अवयवित्वादितो
 घटकेसाथसंबंधवालेघटसे भिन्नहैं ॥ यातेप्रथमपक्षअसंगतहै ॥ और
 द्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिअवयवतथाअवयवित्वकोईघटका
 स्वरूपनहीं हैं । अवयवित्वरूपतासेजोप्रतीतिहैतिसको अवयवसापेक्ष
 होनेकरस्वस्वरूपअर्थात् तिसकोघटकास्वरूपहोनेकीयोग्यतानहीं ।
 औरअवयवोंको यदिअवयविस्वरूपहीमानलें तोअवयवीकोअवयवों
 कीअपेक्षाहीनहींहोगी ॥ शंका ॥ स्वरूपनिर्णयकरनेसेआपका क्या
 प्रयोजनहै जैसातैसाघटकास्वरूपप्रसिद्धहीहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
 अवयवित्वादिसेभिन्नघटकास्वरूपकहनेयोग्यहै यदिघटकास्वरूपहीतुम
 निर्णयनहींकरोगे । तोअतिप्रसंगदेनेको तुमकैसेसमर्थहोगे। अर्थात्
 किसकीस्वप्रकाशता आपादनकरोगे ॥ शंका ॥ घटकास्वरूपतो
 कहनेयोग्यहीहै ॥ परंतुमैंइससेभिन्नघटकास्वरूप विशेषकरकेकहने
 कोसमर्थनहींहूँ ॥ समाधान ॥ हेवादिन् तुमकोकहनेकीअसामर्थ्य
 कैसेहुई है ॥ क्या? घटकास्वरूपअनुभवनहींहोता ॥ इससेतुमको
 अशक्तिहै । अथवाघटनिर्विशेषहै इससेअशक्तिहै ॥ प्रथमपक्षमेंतोसर्व
 लोकोंकाधिरोधप्राप्तहोगा ॥ क्योंकिघटकास्वरूपसर्वजनोंके अनुभव
 सिद्धहै ॥ औरघटकोनिर्विशेषस्वरूपहोनेसेतिसकेकथनकीहमको
 अशक्तिहै ॥ क्योंकिशब्दकीप्रवृत्तिकिसीशेषधर्मको सन्मुखकरकेही

होती है ॥ यदि यह द्वितीयपक्षकहो तो तिसमें भी यह कथन करने योग्य है जो निर्विशेषघटका स्वरूप तुमने स्वीकार किया है। वह सर्वजनों के अनुभव सिद्ध है ॥ ऐसे सिद्ध हुए वह अनुभूयमान घटका स्वरूप क्या ? स्वतः ही अनुभव होता है। अर्थात् स्वप्रकाश स्वरूपता से भान होता है। अथवा अपने से भिन्न और किसी प्रमाण से भान होता है ॥ अंत्यपक्षकहो तो निर्विशेषता की हानी होगी ॥ क्योंकि निर्विशेषवस्तु प्रमाणांतरका विषय नहीं हो सकता और नेत्रादिक सर्वलौकिक प्रमाणांतो विशेषवस्तुको ही विषय करते हैं ॥ यहां पर यह अर्थ ज्ञातव्य है ॥ नेत्रादिक इंद्रियों की तो रूपादि गुणवाले पदार्थ में ही प्रवृत्ति होती है ॥ क्योंकि रूपादिकोंको सन्मुखकरके ही तिनकी प्रवृत्तिकानियम है ॥ और अनुमान भी जाति आदिक धर्मनको सन्मुखकरके ही प्रवृत्त होता है ॥ क्योंकि अनुमितिको व्यापकता अचछेदकप्रकारकत्वकानियम है ॥ अर्थ यह "पर्वतो वहनिमान्" इस अनुमितिमे वह निष्ठव्यापकताका अचछेदक जो वह निवर्धमवह प्रकाररूपतासे भान होता है ॥ और शब्दप्रमाण भी गुणतया जाति आदिकवाले पदार्थमें ही प्रवृत्त होता है ॥ क्योंकि आनंत्य तथा व्यवभिचारदोषके दूर करनेके लिये सामान्यादि विशेषधर्मकी अपेक्षा है ॥ तात्पर्य यह कि यदि घटपदकी एक घटव्यक्ति मात्रमें शक्तिमानें तो एक ही घट व्यक्तिकी तिससे उपस्थिति होगी ॥ दूसरी व्यक्तिके बोधन अर्थ और शक्तिकी कल्पना होगी ॥ याते घटपदमें आनंत्य शक्तियोंकी कल्पना प्राप्त होगी ॥ और यदि शक्तिसे विना ही दूसरी व्यक्ति उपस्थित हो। तो व्यवभिचारदोषकी प्राप्ति होती है ॥ याते घटत्वादि धर्मवाले घटमें ही घटपदकी शक्ति होनेसे विशेषपदार्थमें ही शब्द प्रवृत्त होता है ॥

और उपमान प्रमाण भी सादृश्यादि धर्म विशेष की अपेक्षा करके ही प्रवृत्त होता है ॥ इस प्रकार सर्व प्रमाण सविशेष पदार्थ को ही नियम से विषय करते हैं। निर्विशेष को नहीं ॥ शंका ॥ प्रमाण मात्र को सविशेष पदार्थ विषय कत्व माने हुए आत्मा को उपनिषद् मात्र गम्यत्व का अभाव होगा । क्योंकि निर्विशेष आत्मामें शब्द प्रमाण रूप वेदांतों की प्रवृत्तिकी अयोग्यता है ॥ समाधान ॥ हेवादि न्लौकिक प्रमाणों में वह पूर्व उक्त नियम है । और अलौकिक प्रमाण रूप वेदांत तो लक्षणों से निर्विशेषाकार वृत्तिके उपस्थापक हैं। याते तिनको आत्मामे प्रमाणता संभवती है ॥ जिस कारण से सर्व लौकिक प्रमाण सविशेष वस्तु को ही नियम से विषय करते हैं ॥ और निर्विशेष रूप घट सर्वको अनुभव भी होता है ॥ तिसी कारण से निर्विशेष तथा सकल इन्द्रियों का अविषय स्वप्रकाश स्वरूप घट परिशेष से सिद्ध हुआ ॥ यह पूर्व कथन किया प्रथम पक्ष ही अंगीकार करने योग्य है ॥ शंका ॥ तैसे मानने से भी स्वप्रकाश तथा निर्विशेष वस्तु घट का स्वरूप होने के योग्य नहीं । अनात्मा होने से जो अनात्मा होता है वह स्वप्रकाश निर्विशेष स्वरूप नहीं होता ॥ जैसे पटादि है । याते घट स्वप्रकाश स्वरूप नहीं ॥ समाधान ॥ यह तुम्हारा हेतु स्वरूप से ही पक्ष में नहीं वर्तता । क्योंकि घट का स्वरूप आत्मा से भिन्न कोई निरूपण नहीं हो सकता ॥ इसी अर्थ को स्पष्ट करते हैं ॥ हेवादि न वह निर्विशेष स्वरूप घट आत्मा से भिन्न है । वानहीं । यह विचार करने योग्य है ॥ इनमे प्रथम पक्ष नहीं संभवता । क्योंकि भेदक धर्म का अभाव है ॥ शंका ॥ घटत्वादि धर्म ही घटको आत्मा से भिन्न करने वाले हैं । तिनका अभाव आपकै से कहते हो ॥ समाधान ॥ हेवादि न घटत्वादि धर्म घटमें भेदक हैं इसका क्या ? अर्थ है भाव यह क्या ? यह

धर्मव्यक्तिमात्रमें वर्तमान हैं अथवा घटव्यक्तियों में ही वर्तते हैं ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि सर्वव्यक्तियों को घटरूपता की प्राप्ति होगी । और घटव्यक्तियों में ही घटत्वादि धर्म वर्तते हैं यह द्वितीय पक्ष कहो तो तिसमें यह विचार करने योग्य है । वह घटव्यक्तियों कौन हैं । यदि ऐसे कहो कि घटत्वादि धर्म वालियां ही घटव्यक्तियां हैं ॥ यह कथन नहीं संभवता । क्योंकि इसमें आत्मा श्रयदोष की प्राप्ति है । घटत्वादि धर्मन को घटव्यक्तियों में अपनी स्थिति अर्थ अपनी अपेक्षा है । या तो आत्मा श्रयदोष है ॥ और यदि आत्मा श्रयदोष के भय से वह घटव्यक्तियां धर्मांतरवाल्यां हैं ऐसे कथन करो तो यह कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि तिसमें भी पूर्वकी न्याय प्रश्न करने से आत्मा श्रयादि दोष दूर नहीं हो सकते ॥ अर्थात् वह धर्मांतर घटव्यक्तियों में अपनी स्थिति के अर्थ यदि अपनी ही अपेक्षा करेंगे तो आत्मा श्रयदोष प्राप्त होगा या तो घटत्वादि धर्मों को भेद कपने का अभाव होने से निर्विशेष रूप ही घट है । कोई आत्मा से भिन्न करने वाला धर्म तिसमें नहीं है ॥ और निर्विशेष रूपता से जो भासमान है तिसकी स्वप्रकाशता भी अत्राधित है ॥ इसी अभिप्राय से और द्रूपण कथन करते हैं ॥ हेवादि न भेद का बोधक जो प्रमाण है । वह भेद मात्र के बोधन करने को समर्थ नहीं ॥ क्योंकि तिस प्रमाण को धर्मा और प्रतियोगी के ग्रहण पूर्वक भेद का ग्राहक पना है । और भेद मात्र विषयक तिस प्रमाण को माने हुए आत्मप्रतियोगिक और घट अनुयोगिक भेद प्रमाण सिद्ध नहीं होगा ॥ इस प्रकार आत्मा से भिन्न घट प्रमाण कर सिद्ध नहीं होता । और यदि भेद का ग्राहक प्रमाण प्रतियोगिरूप आत्मा को और धर्म रूप घट को भी प्रकाशक रता है । ऐसे कहो तो यह कथन भी कैसे संभवेगा । क्योंकि धर्मा और प्रतियोगी दोनों ही स्वप्रकाश स्वरूप हैं । तिनका भेद प्रमाण करके ग्रहण करने को कोई भी

समर्थनहीं । अन्यथास्वप्रकाशताकीहोनिहोगी ॥ शंका ॥ इसप्रकार
घटतथाआत्माकाअभेदमानेहुए दोनोमेंएकशेषरहाचाहिये ॥ नियाम
ककेअभावसेघटहीशेष क्योंहो ॥ समाधान ॥ हेवादिन्

❀ इदं सर्वयदयमात्मा ❀ ६० ३० अ० (६) ब्रा० (५) (७)

अ० ॥ यहसर्वदृश्यमानजगत्आत्मास्वरूपहीहै । इसश्रुति

मेंपूत्यक्षादिप्रमाणसिद्धसर्वजगत्जोप्रथमउद्देशकियागियाहै। तिसका
अनुवादकरके आत्मस्वरूपताकाविधान प्रतीतहोताहै । यातेआत्मा
हीशेषरहाहै । घटशेषनहींरहता ॥ तिराकारणसेहीस्वप्रकाशआत्म
स्वरूपहीघटहै । तिससेभिन्नकिंचित्मात्रभी घटकास्वरूपनहींयहअर्थ
सिद्धहुआइति॥औरयहजोवादीनेपूर्वकहाथा किआत्सामेंअज्ञातत्वका
अनुभवयदिआत्तामेंस्वप्रकाशताकासाधकहै । तोघटमेंभीस्वप्रकाश
ताहुईचाहिये।क्योंकिआत्माकीन्याईघटविषयकभीअज्ञातताकाअनुभव
समानहीहै । सोयहकथनभीसमीचीननहीं । जिसकारणसेपूर्वउक्त
युक्तिंकरआत्तासेभिन्नघटकानिरूपणनहींहोसकता । इसीरीतिको
अन्यअनात्मपदार्थों मेंभीनिरूपणकरतेहैं ।

❀ अथ आत्मासेभिन्नकरकेसर्वअनात्माकाखंडन ❀

इसप्रकारघटसेभिन्नऔरपदार्थभीआत्मस्वरूपहीहैं । यातेअनात्म
पदार्थआत्तासेभिन्नकिंचित्मात्रभीनहींहै।तोतुमकिसकीस्वप्रकाशता
आपादनकरतेहो । अर्थात्जिसअनात्तामेंस्वप्रकाशतातुमकहतेहो ।
वहआत्तासेभिन्नहीनहींहै । औरआत्तामेंस्वप्रकाशताकाकथनहमको
भीइष्टहै ॥ शंका ॥ स्तंभादिपदार्थअनात्मरूपताकरसर्वशास्त्रोंमें
प्रसिद्धहैं । तिनकोआत्मरूपताआपकैसेकथनकरतेहो ॥ समाधान ॥

हेवादिन्जोन्यायघटकेस्वरूपनिरूपणमेंकथनकिया वहन्यायस्तंभादि
कोंमेंभीतुल्यही है । अर्थयहसतंभत्वादिधर्मनकाथाश्रयस्तंभादिहैं ।
अथवास्तंभादिकोंकेअवयवोंकरआरब्धजो अवयविविशेषवहस्तंभादि
हैं । इसन्यायकीप्राप्तिसर्व अनात्मपदार्थोंमें तुल्यहोनेसेकोईअनात्म
पदार्थआत्मासेभिन्नसिद्धनहींहोसकता ॥ शंका ॥ यदिघटादिसर्वजगत्
आत्मास्वरूपहीहै । तिससेभिन्नकिंचितमात्रभीनहीं । तोआत्मारूप
करकेहीसर्वकाभानहुआचाहिये । अन्यआकारतासे अर्थात्घटादि
आकारतासेभाननहुआचाहिये । क्योंकिआकारांतरका आपत्रभाव
कथन करतेहो ॥

शंकाकेनिराकरणपूर्वकज्योतिपदकीव्याख्याका उपसंहार ॥

समाधान । हेवादिन्अनादितथाअनिर्वचनीयअविद्याकेसंबंध
सेस्वप्रकाशस्वरूपआत्माअन्याकारसेभानहोताहै ॥ शंका ॥ एकशुक्ति
मेंएकहीशुक्तिका आकाररजतअज्ञानकेवशसेप्रतीतहोताहै । अनेक
आकारनहींप्रतीतहोते । तैसेअविद्यासेआत्मामेंभीएकहीमिथ्याआकार
प्रतीतहुआचाहिये । अनेकरूपतासेतिसआत्माकाभानकैसेहोताहै ।
समाधान ॥ हेवादिन्जैसेएकहीरज्जुअज्ञानकेवशसेसर्पदंडमालादि
अनेकमिथ्याआकाररूपतासेभानहोती है ॥ तैसेएकहीआत्माअज्ञान
केवशसेनानाअपंचरूपतासेभानहोताहै । इसप्रकारपूर्वउक्तयुक्तिसेस्व
यंज्योतिस्वरूपआत्माहै ॥ औरवहीपरमपुरुषार्थस्वरूपहै ॥ इसीसे
आनंदएकरसस्वभावहै क्योंकि —

आनंदोत्रहोतिव्यजानात् ॥ तै० उ० ३० ३० ३० अतु० ६॥

अ० ॥ आनंदस्वरूपब्रह्म है ऐसे जानना भया ॥ इस श्रुति में
आनंदस्वरूप आत्मा कहा है ॥ शंका ॥ जैसे “चंदनं स्वर्गः” अ० ॥
चंदन सुखरूप है इस प्रतीति से सुख का साधन होने से चंदन को सुखरूप कहा
है ॥ तैसे किसी विषय रूप उपाधिके संबंध से आत्मा को आनंदरूपता श्रुति
ने कही है ॥ कोई स्वरूप से आत्मा आनंदरूप नहीं ॥ समाधान ॥
हे वादिन् ॥ असंगो ह्ययं पुरुषः ॥ ४० ॥ ३० ॥ ६ ॥ ३॥ १५ ॥

अ० ॥ यह आत्मा असंग स्वभाव है ॥ इस श्रुति में आत्मा को असंग
स्वभाव कहा है ॥ याते तिसका उपाधिके साथ संसर्ग नहीं है ॥ इसी से
आनंद एक मूर्ति है ॥ शंका ॥ आत्मा कर्ता है ॥ याते तिसको दुःख की
संभावना भी की जाती है ॥ तिसको सुखस्वरूप आपके से कथन करते हो ॥
समाधान ॥ हे वादिन् अवि कारि स्वभाव होने से आत्मामें कर्तृत्व नहीं
संभवता ॥ किंतु वह उदासीन स्वभाव है ॥ और अज्ञान से कर्त्तापना तथा
नाना प्रपंचरूपता से तिसका भान है ॥ और वास्तव से वह द्वैतरूप नहीं ॥
शंका ॥ “परस्परविरोधहु ए प्रकारांतर नहीं स्थित होता” ॥ इस न्याय से
यदि द्वैतरूप आत्मानहीं है ॥ तो अद्वैत ही आत्मा का वास्तव स्वरूप कहने
योग्य है ॥ और वह भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि द्वैतके अभावकानाम अद्वैत है
तिससे आत्मा को अभावरूपता की प्राप्ति होगी ॥ और तिस अभावरूप अद्वैत
कानिरूपणप्रतियोगिरूपद्वैतके आधीन है ॥ याते तिस अद्वैतको आत्म
स्वरूपता नहीं संभवती ॥ अन्यकी अपेक्षा करके निरूपण करने योग्यको
स्वभावपनेका अभाव है ॥ समाधान ॥ हे वादिन् अद्वैत भी आत्माका
वास्तव स्वरूप नहीं ॥ किंतु द्वैताऽद्वैतसे रहित विज्ञान एक स्वभाव आत्मा है
यह अर्थ सिद्ध हुआ ॥ और घटादिकों में अज्ञातताका अनुभवतो अन्य

प्रकारसेहीसंभवहोसकताहै । सोदिखलातेहैं । एकहीआत्मामेंघटादि जगत्तथाअज्ञानकल्पितहै । एकअधिकरणरूपसंबंधसेअज्ञातरूपता सेघटकाअनुभवहोताहै । वास्तवसेघटादिकोंमेंअज्ञानकीविषयतानहीं संभवती । यातेघटादिकोंमेंस्वप्रकाशतानहीं । किंतुआत्माहीस्वयं प्रकाशचेतनस्वरूपहै ॥ २४ ॥

इतिज्योनिपदव्याख्या ॥

इति श्री १०८ मन्निर्मलसृताज्वतन्स ब्रह्म विदुत्तमहरिहरि
 पूज्यपाद शिष्येण गुरुदत्तसिंह साधुना विरचतायां
 वेदान्त सिद्धान्त मुक्तावलीभाषायांपूर्वाद्धिम्
 ॥ ३०३ ॥



❀ जं ❀

अथ

श्रीवेदांतसिद्धांत मुक्तावली

भाषाउत्तरार्द्ध प्रारंभः ।

दोहा—यजरयमर विभुसुप्रभो ज्योतीजोविदरूप ।

सोहंलखद्विनमैनसत जगसवभ्रमतमकूप ॥ १ ॥

त्रिभंगीछंदः॥ भवदोपनभर्जनसूखनयर्जन यन्तकतर्जनजिहिनामं ।

अमरारिन्हस्रं जनसुखकरं शरणभरणं जिहकामं॥

मदनामदहारी सुंदरप्यारी सूतधारी निहकामं ॥

शिखेदनगम्यं योगीरम्यं पदमननम्यं तिहरामं ॥ २ ॥

क० ॥ निर्दुखनिरीहनिराकारपरब्रह्मजोऊ सोऊभएनानक
निवारेंकलिपापको । अंगदयमरदास रामदास यरजुनश्रीहस्यविंदभए

अरिदिलतापको ॥ गुरुहरियायहरिकृपणकृपणवपु तेगकेवहादरजुहि

दुधर्मथापको ॥ गुरुयुविंदसिंहलौपदाविन्दसवनके बंदोंकरजोरहते

दुःखमूलपापको ॥ ३ ॥

दो०॥ श्रीगुरुहरिहरिकेसदा चरणकमलरिदधार ।

शेषग्रंथभाषाकरोंजोजनकोहितकार ॥ ४ ॥

वीणाकरधरकरसदा भक्तनवांछितदेत ।

वाणीममवाणीवसो पुरवोयहसंकेत ॥ ५ ॥

वेदशिरनसिद्धांतजो तांकीश्रेणीमाहि ।

उत्तरार्द्धभाषाकरों यथामतीममआहि ॥ ६ ॥

अथआनंदपदव्याख्या।अथमूलटीकाकारकृतमंगल

यस्यभासाजगतसर्वं भातिस्थावरजंगमम् ।

तदहंब्रह्मपूर्णस्यां पुरुषार्थसुखात्मकम् ॥१॥

दो० ॥ जाप्रकाशभासतजगत स्थावरजंगमरूप ।

सोमैर्पूर्णब्रह्महंपुरुषार्थ सुखरूप ॥ १ ॥

अथपूर्वपक्ष । आत्माकीपुरुषार्थरूपताकाखंडन ॥

आत्मामेंप्रमाणके विद्यमानहुए दृश्यरूपतासे अनात्मपनेकी प्राप्तिनहींहोती। तथाप्रमाणकेअभावहुए नरशृंगकीन्याईअसत्पनाभी नहींहोता ॥ क्योंकिवहआत्मास्वप्रकाशस्वरूपहै ॥ इतनाअर्थज्योति पदसेस्थापनकिया । अथआनंदइसविशेषणसे आत्मामें सूचनकी हुईजोपुरुषार्थरूपताहै ॥ तिसकेनिरूपणकरनेकेलिये सिद्धांतीकेमत सेसिद्धजोआत्माकास्वरूपहै ॥ तिसकाअनुवादकरकेपूर्वपक्षीतिमकी पुरुषार्थरूपताका निषेधकरताहै ॥

मू०। आत्माऽयंसर्वसंबद्धो भानुभासकउच्यते ।

नित्योऽयमविनाशित्वा दुपादेयःकथंभवेत्२५॥

कुंडलियाच्छंद ॥ सबजगमेंसंबद्धयहनजआत्मपहचान ।

भानूवतभासकसदायांश्रुतिकीनबखान ।

यांश्रुतिकीनबखाननित्यपुन ताकोगाययो ॥

अविनाशिताहेतु ताहिमेंनीक बताययो ॥

ग्रहनकरनवे.योग्यनहींआत्महैसोकव ।

सुखदुःखहानहभिन्नजानचाहेनहजनसव ॥२६॥

टी० ॥ साधनचतुष्टयसंपन्नअधिकारीकोयहआत्मा “उपादेय”

कहिये पुरुषार्थरूपकैसे हो सकता है । किंतु किसी प्रकार भी नहीं । क्यों कि उपादेयता में साध्यत्व प्रयोजक होता है । अर्थात् जो प्रयत्न साध्य पदार्थ है । वह उपादेय रूप होता है । और यह आत्मा तो साध्य है नहीं । क्योंकि सत्यरूप ही अनित्य स्वरूप है । नित्यत्व की अस्ति द्वि है ऐसी आशंका के हुए कहते हैं । “अविनाशित्वात्” कहिये विनाश रहित होने से यह आत्मा नित्य है । याते नित्यता अस्ति न ही किंतु सिद्ध है । इस अर्थ को आगे उपादान करेंगे । आत्मा अनित्य होने के योग्य है परिच्छिन्न होने से । घट की न्याई । इस आशंका के हुए इसको स्वरूपासिद्धि से दूषित करते हैं । (आप्लव्याप्तौ) अ० “आप्ल” धातु व्याप्ति अर्थ में होता है । इस पाणि मुनिके स्मरण से इस धातु से आत्मशब्द को सिद्ध होने कर सर्वको पूर्ण करने वाला आत्मा है । अर्थात् व्यापक है । यह अर्थ लाभ होता है ॥ याते परिच्छिन्नत्व हेतु स्वरूप से ही तिस आत्मा में वृत्ति नहीं ॥ इसी से आत्मानित्य है । शंका ॥ इतने कथन से भी अनित्यत्व का परिहार कैसे हो सकता है ॥ क्यों कि आपके मत में व्यापक आकाश में भी अनित्यत्व देखा है ॥ समाधान ॥ आत्मा सर्वपदार्थों में सर्वरूपता से संबन्धवाला है ॥ अर्थात् सर्वजगत् का अधिष्ठान है ॥ यद्यपि अन्य सर्वपदार्थों का अधिष्ठान आकाश है । तथापि स्वयं प्रति अधिष्ठानता का अभाव होने से सर्वजगत् की अधिष्ठानता आकाश में ही संभवती ॥ तिसी से सर्वका उपादान होने से आत्मा अनित्य नहीं और न किसी का कार्य है ॥ शंका ॥ आत्मा को घट की न्याई जडता होने से सर्वजगत् की उपादानता नहीं संभवती ॥ समाधान ॥ सूर्य की न्याई वह आत्मा प्रकाशक है ॥ तैसे माने हुए जो आत्मा अन्य सर्व अनात्म पदार्थों को भी प्रकाश करता है ॥ तिसको अपने प्रकाश में इतर की अपेक्षा

नहींसंभवती ॥ जैसेसर्वजगत्केप्रकाशकआदित्यभगवान्कोअपने
 प्रकाशमेंइतरकीअपेक्षानहीं । किंतुवहस्वयंप्रकाशहै । तैसेआत्माभी
 स्वयंप्रकाशमानहै । तिसमेंजडताकाअभावहै । यहीअर्थश्रुतिमेंभी
 कथनकियाहै ॥ इति ॥अवअपेक्षितअर्थकीपूर्णताद्वाराविस्तारपूर्वक
 श्लोककीव्याख्याकरतेहुएआत्माकीपुरुषार्थरूपताका निषेधकरतेहैं ॥
 इसलोकतथापरलोककेसर्वविषयानंदतथातिनकीसाधनसामग्रीसेविरक्त
 जोपुरुषहै ॥ तथाअनादिसंसारमेंसंपादनकियेहुएपुरायकर्मनकेसमू
 हसेजिसकेपापकर्मनाशहुएहैं ॥ तथासकलविषयोंमेंदोषदृष्टिसेवैराग्य
 जिसकोउत्पन्नहुआहै ॥ औरपरमपुरुषार्थकीकामनावालाजोमुमुक्षुहै
 तिसकोयहआत्माकिसप्रकारउपादेयहै ॥ क्योंकिआगेकथनकीहुई
 युक्तिसे आत्मामें पुरुषार्थरूपता नहींसंभवती ॥ शंका ॥ अनित्य
 जो सांसारिक सुखहै ॥ वह विनाशी होनेसे त्याग करने योग्य हो
 परंतुआत्मातोनित्यहै । यातेवीणतादिदोषभरहितहै। वहकैसेमुमुक्षुको
 उपादेयनहीं हैकिन्तुउपादेयहै ॥ समाधान ॥ यद्यपिआत्मानित्यहै ।
 तथापितिसकोउपादेयतानहींसंभवती ॥ इसीकोस्पष्टकरतेहैं ॥

❀ आत्मनित्यःअविनाशित्वात् ॥ आकाशवत् ❀

अ०॥आत्मनित्यहै। अविनाशीहोनेसे। जोजोअविनाशीहोता
 हैसोसोनित्यहोताहै ॥ जैसेआकाशहै । इसअनुमानमेंअविनाशित्व
 हेतुस्वरूपासिद्धनहीं ॥ क्योंकिआत्माकेविनाशकी सामग्रीकाअभाव
 होनेसेतिसकाविनाश दुर्निरूप्यहै “तथाहि” समवायिकारणका
 नाशअथवा असमवायिकारणकानाशद्रव्यकेनाशकी सामग्रीनेयापि
 कौनेमानीहै ॥ औरअकार्यआत्माके वहदोनोंकारणनहींसंभवते ।

और अनादि अदृष्टोंके प्रवाहका आधार होनेसे आत्माको अकार्यपना सिद्ध है यह अर्थ पूर्वही कथन कर आए हैं ॥ शंका ॥ कार्यकायदि दर्शन होतो सामग्रीकी भी कल्पना हो सकती है ॥ अर्थात् जव आत्माका नाश देखा जाय तो नाशकी सामग्रीभी कोई अवश्य कल्पना करने योग्य है ॥ समाधान ॥ आत्माका विनाश ग्रहण करनेको कोई भी समर्थ नहीं है ॥ इसी अर्थको उपपादन करते हैं ॥ क्या? अपने विनाशको आपही आत्मा ग्रहण करता है अथवा अन्य आत्मा ग्रहण करता है ॥ इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि आत्माकी विद्यमानता कालमें ग्रहण करने योग्य जो आत्माका अभाव तिसका अभाव है ॥ और आत्माके विनाश कालमें ग्रहण करनेवाले आत्माका ही अभाव है ॥ और अन्य आत्मा प्रथम आत्माके अभावको ग्रहण कर लेगा यह पक्ष भी समीचीन नहीं ॥ क्योंकि प्रति योगीके ग्रहण पूर्वक ही अभावका ग्रहण होता है ॥ प्रतियोगी ग्रहाह्व है यदि तिसको भी ग्राह्य माने तो आत्मपनेका ही अभाव होगा ॥ याते आत्मीय अभाव ग्रहण करनेके अयोग्य है ॥ किंवा ॥ आत्माके विनाशका ग्रहण प्रत्यक्षसे है ॥ अथवा अनुमानसे है ॥ प्रथम पक्ष नहीं संभवता ॥ क्योंकि एक आत्माको दूसरे आत्माके प्रति अतीन्द्रिय होनेकर आत्म प्रति योगिक संसर्गाभाव प्रत्यक्षसे ग्रहण नहीं हो सकता ॥ अर्थात् संसर्गाभावके प्रत्यक्षमें प्रतियोगि प्रत्यक्षको कारणता है ॥ और यहां आत्मरूप प्रतियोगी प्रत्यक्षसे ग्रहण नहीं हो सकता ॥ याते तिसका अभाव भी प्रत्यक्षसे ग्रहण कैसे हो ॥ और परिच्छिन्नत्व हेतुसे अनित्यत्व अर्थात् विनाश अनुमेय है यह द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि वह परिच्छिन्नत्व हेतु पक्षमें अवृत्ति होनेसे स्वरूपाऽसिद्ध है ॥ कारण यह कि देश काल वस्तुके

परिच्छेदसेरहितको आत्माकहतेहैं ॥ इसीउक्तार्थकोश्रीवेदव्यासजी कीउक्तिद्वारादृढकरतेहैं ।

यच्चाप्नोतियदादत्तेयच्चात्तिविषयान्निह ।

यच्चास्यसंततोभावस्तस्मादात्मेतिकथ्यते ॥१॥

अ० ॥ यहां “आप्तुं” औआइपूर्व “डुदाजं” औ “अदं” तथा “अत्तं” इनचारधातुओंसेआत्मशब्दकोसिद्धकरतेहैं॥(यत्)जिस कारणसेसकलअनात्मपदार्थोंको सकलरूपतासे (आप्नोति) व्याप्त करताहै ॥ (तस्मात्) तिसीसेआत्माकहतेहैं ॥ और (यत्) जिस कारणसेसुषुप्तिआदिकअवस्थाओंमें अज्ञानकेकार्यअनात्माकोअज्ञान केवशसेस्वस्वरूपमें (आदत्ते) उपसंहारकरलेताहै ॥ तिसीसेआत्मा कहते हैं ॥ और (यत्) जिसकारणसे विषयाकारवृत्तियों को (अत्ति) प्रकाशकरताहै॥ तिसीसे आत्माकहतेहैं ॥ और (यत्) जिस कारणसे निरूपणीयरूपतासे प्रकरणप्राप्त जोआत्माहै तिसकी (संततः) अंतरायसेरहितरूपताकर (भावः) स्थिति है ॥ वहस्थितिभी अपनेआपमेंही हैकिसीअन्यपदार्थमेंनहीं॥ क्योंकिअन्यअनात्मपदार्थ काअभावहै ॥ तिसीसे (सातत्येन) नैरन्तर्यरूपतासे (अतति) जो गमनकरताहै ॥ तिसकोआत्माकहतेहैं ॥ अर्थात्गमनकाफलतिस तिसदेशमेंजाकरस्थितहोनाहै औरआत्मासर्वत्रहीअवस्थितहै । क्योंकि आत्मासेभिन्नवस्तुकाहीअभावहै।यातेस्वस्वरूपआत्मामेंहीजोपूर्णरूपता सेस्थिति है ॥ इसीकोसंततभावकहतेहैं ॥ तैसेमानेदुएपरिच्छिन्नत्व हेतुस्वरूपासिद्धहै । तिसीसेयहांपरयहअनुमानजानना ॥

❀ आत्मानित्यः अपरिच्छिन्नत्वात्
व्यतिरेकग्राह्यादिवत् ❀

अ० ॥ आत्मानित्यहोनेकेयोग्यहै । अपरिच्छिन्नहोनेसेजो जो नित्यनहीं है ॥ सोसो अपरिच्छिन्नमीनहीं है । जैसेघटादिहैं ॥ इति ॥ शंका ॥ इसअनुमानमेंअपरिच्छिन्नत्वहेतुव्यभिचारीहै । क्योंकिव्यापकआकाशादिकोंमेंभीअनित्यत्वदेखाहै ॥ समाधान ॥ नित्यत्वकेअभाववालेआकाशादिकोंमेंअपरिच्छिन्नत्वहेतुकाअभावहोनेसेव्यभिचारदोषकीप्राप्तिअनुमानमेंनहीं है । क्योंकितुमकोव्यापकताकाज्ञानहीनहीं । जिसकारणसे “सर्वसंबद्धत्व” अर्थात्सर्वकेसाथसंबंधवाला व्यापककहाजाताहै ॥ शंका ॥ सर्वकेसाथजोसंयोगिपनाहैइसीकोसर्वसंबद्धत्वकहतेहैं । वहगगनादिकोंमेंविद्यमानहै । यातेहेतुव्यभिचारीहै समाधान ॥ “सर्वसंयोगित्व” सर्वसंबद्धत्वशब्दकाअर्थनहीं । किंतुसर्वमेंसर्वरूपतासेजोसंबंधवालाहोतिसकोव्यापककहतेहैं । आकाशादिकोंमेंइसलक्षणकाअभावहै ॥ यातेव्यभिचारकीशंकांनहींसंभवती ॥ शंका ॥ आकाशादिकभीसर्वमेंसर्वरूपतासेसंबंधवालेहीहैं । क्योंकितिनकोनिरवयवहोनेकरएकदेशसेसंबद्धत्वकाअभावहै ॥ समाधान ॥ परस्परव्यभिचारीपदार्थोंकाअधिष्ठानअर्थात्सत्तास्त्वृत्तिदेनेवालाहीसर्वमेंसर्वरूपताकरसंबंधवालाहोसकताहै ॥ शंका ॥ व्यभिचारिपदार्थहीअन्यव्यभिचारिकाअधिष्ठानक्योंनहो ॥ समाधान ॥ एकव्यभिचारिपदार्थअन्यव्यभिचारिपदार्थकाअधिष्ठाननहींसंभवता ॥ जिसकारणसेअन्यजोयत्रादिकहैं ॥ वहअपनेसेभिन्नपटादिकोंकरसकलरूपतासेव्याप्त नहींकियेजाते । अर्थात्सत्तास्त्वृत्तिप्रयुक्तनहींकियेजाते । यदिसकल

रूपसे तिनकी व्याप्तिमानलें तो व्याप्यघटादिकोंके स्वरूपका ही अभाव होगा क्योंकि एक अधिकरणमें दो सत्ताकी अयोग्यता है। भाव यह कि व्यापकका स्वरूप सत् रूप है। तिससे भिन्न व्यभिचारी जो व्याप्यघटादिक हैं तिनके स्वरूपका ही अभाव है। तैसे माने हुए जिसकी सत्तासे व्याप्यघटादिक सत् हैं। वह व्यापक सत् है व्याप्य सत् रूप नहीं ॥ शंका ॥ व्याप्यमें व्यापक प्रयुक्त सत्ता माने हुए भी स्वरूप भूत सत्ताका विरोध नहीं। क्योंकि व्याप्यके एक देशमें व्यापककी सत्ता है। और दूसरे देशमें अपनी सत्ता है। ऐसी व्यवस्था से दोनों सत्तावन सकती हैं ॥ समाधान ॥ व्याप्यके जिस देशमें व्याप्यकी स्वरूप सत्ता है तिस देशमें व्यापककी व्याप्ति है वानहीं। प्रथम पक्षमें व्याप्यकी सत्ता माननेका कोई भी फल नहीं। क्योंकि व्यापककी सत्ता करके ही सत् व्यवहार खन जायेगा। और यदि द्वितीय पक्ष कहो। तो सर्वरूपतासे व्यापककी व्याप्ति नहीं सिद्ध होगी। इस कारणसे एक व्यभिचारिपदार्थ दूसरे व्यभिचारिपदार्थका अधिष्ठान नहीं संभवता। याते आत्मा ही सर्वजगत्का अधिष्ठान है। आकाशादिक नहीं। इतने ग्रंथसे (आत्मायं सर्वसंबद्धः) इस प्रथम पादका व्याख्यान किया। अब दूसरे पादका व्याख्यान करते हैं ॥ शंका ॥ आत्माका सर्वके साथ संबंध माने हुए भी तिसको सर्वका अधिष्ठान पना नहीं संभवता। क्योंकि तिसको जड होनेकर अज्ञानविषयता रूप अज्ञातताकी अयोग्यता है। और सर्वज्ञानोंका विषय होनेसे तिसको जड पना है ॥ समाधान ॥ देशकालादि परिच्छेदसे रहित आत्मामें प्रमाणांतरकी अपेक्षा नहीं है। जिससे वह सूर्यकी न्यार्ड स्वयं प्रकाशमान है। और तमेव भान्तमनुभाति सर्वं। तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।

अ० ॥ तिस आत्माके प्रकाश हुए ही सर्वजगत्पश्चात् भान होता है

तिसके प्रकाशकरके यह सर्वजगत्मान होता है । इस श्रुतिमें सर्वजगत्का प्रकाशकरूपतासे आत्मा प्रसिद्ध है । सर्वही जगत् आत्माकरके प्रकाशके योग्य है । तिस जगत्से आत्माका प्रकाशन ही संभवता । जैसे घटदीपक को प्रकाशन ही कर सकता । तिस कारणसे स्वयं प्रकाशमान ही आत्मा है जड़ नहीं । तिसको सर्वकी अधिष्ठानता संभवती है । यद्यपि आत्मानित्य है । तिसको क्षीणतादि दोषसे रहित होनेकर उपादेयता संभवती है । तथापि सुख तथा दुःखाभावसे इतर होनेकर तिसको उपादेयता नहीं संभवती । यहां पर यह अनुमान जानना ॥

आत्मा अनुपादेयः । सुखदुःखाभावेतरत्वात् घटादिवत्
 थ० । आत्मा उपादेय नहीं है । सुख तथा दुःखाभावसे भिन्न होनेसे ॥ जो सुख तथा दुःखाभावसे भिन्न है वह उपादेय नहीं है । जैसे घटादिक हैं ॥ इति ॥
 * अथ सिद्धांती द्वारा अनुपादेयत्वसाध्यका खंडन *

अब इस पूर्वपक्षीके अनुमानमें अनुपादेयत्वरूपसाध्यको सिद्धांतीनिषेध करता है ॥ हेवादि न्यहजो आत्मानिष्ठुमने अनुपादेयत्व कथन किया है वह क्या है । क्या ? आदानक्रिया अर्थात् हस्तादिकोंसे ग्रहण क्रियाकी अविषयताका नाम अनुपादेयता है ॥ अथवा इच्छाकी विषयताके अभावका अधिकरणत्वरूप अनुपादेयत्व है ? ॥ अथवा अपने प्रयत्नकर साध्यत्वके अभावका अधिकरणत्वरूप अनुपादेयत्व है ? । अथवा स्वप्रयत्नकर साध्यत्वके अभावविशिष्ट सुखदुःखाभाव से जो इतरपना है यही अनुपादेयत्व है ? ॥ अथवा सुख तथा दुःखाभावसे जो इतरपना है यही अनुपादेयत्व है ? । अथवा अन्यही कोई अनुपादेयत्व है ? इनमें प्रथम पक्ष तो असंगत है । क्योंकि आदानक्रियाकी अविषयता आत्मामें वादी

प्रतिवादीसर्वहीस्वीकारकरतेहैं। जिसकारणसेस्पर्शवालेतथाक्रियावाले पदार्थकाहीहस्तादिकोंसेग्रहणहोताहै। क्रियातथास्पर्शसेरहितआत्माका ग्रहणनहींहोसकता। यातेप्रथमपक्षमेंहमकोभीइष्टापत्तिहै। औरइसमेंइष्ट पत्तिमानेहुएअनुमानमेंसिद्धसाधनदोपभीप्राप्तहोगा। भावयहआदान क्रियाकीअविषयतारूपअनुपादेयताआत्मामेंप्रथमहीसिद्धहै। तिसको पुनःसिद्धकरनेसेसिद्धसाधनदोपप्राप्तहोताहै ॥ अर्थात्थाश्रयाऽ सिद्धिहेतुगतदोपहोताहै ॥ क्योंकिसंदिग्धसाध्यवानुपपन्नहोताहै ॥ साध्यकातिसमेंनिश्चय होनेसेपक्षत्वकाअभावहै ॥ किंवायहअनु पादेयत्वकालक्षण अलक्ष्यसुखादिकोंमेंवृत्तिहोनेसेअतिव्याप्तिदोष वालाहै ॥ क्योंकिसुखतथादुःखाऽभावभीआदानक्रियाकेविषयनहीं होते ॥ इसप्रकारप्रथमपक्षकोनिरासकरकेअवद्वितीयपक्षकोद्वेषित करतेहैं ॥ औरइच्छाकीविषयताकाअभावजिसमेंहोवहअनुपादेयहै। यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि“परस्परविरोधहुएतिनदोनों सेअन्यकोईप्रकारनहींस्थितहोसकता”। इसन्यायसेइच्छाकीविषयता काजोअनधिकरणहै तिसकोअनुपादेयमानेहुएइच्छाकीविषयताके अधिकरणनिष्ठउपादेयताप्राप्तहोतीहै ॥ तिसमेंभीयहविचारकर्तव्यहै। इच्छाऔरइच्छाकीविषयताकरविशिष्टजोविषयहै ॥ वहउपादेयहै ॥ अथवा तिनदोनोंकरउपलक्षितविषयकास्वरूपमात्रउपादेयहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवताक्योंकि“विशिष्टवृत्तिधर्मकोविशेषण मेंवर्तनेकानियमहै” ॥ इसन्यायसेइच्छाऔरतिसकीविषयताको भीउपादेयताप्राप्तहोगी ॥ सोतुमकोइष्टनहीं ॥ औरइच्छा औं तिसकीविषयताकरउपलक्षितजोविषयकास्वरूपमात्रवह

उपादेय है । यदि यह द्वितीयपक्षकहो । तो तिसमें भी यह विचारकर्तव्य है । जितना इच्छाका विषय है । वह सर्वही उपादेय है अथवा इच्छा के विषयका एक देश उपादेय है ॥ अथवा इच्छा के विषय में विशेष्यमात्र उपादेय है । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि दुःखको भी उपादेयता हुई चाहिये । यद्यपि दुःखको कोई भी नहीं चाहता । तथापि जो ज्ञानका विषय होता है वही इच्छाका भी विषय होता है । अर्थ यह दुःखाभावको पुरुषार्थरूपता सर्वही वादी कहते हैं । तिस दुःखाभावके ज्ञानका जितना अर्थ विषय होता है । उतने ही अर्थको इच्छा भी विषय करती है । क्योंकि ज्ञान इच्छा और प्रयत्न इन तीनोंको समान विषयत्वकानियम है । अर्थात् इन तीनोंका एक ही विषय होता है ॥ शंका ॥ दुःखाभावके ज्ञान में प्रतियोगिरूप दुःख विशेषणरूपतासे नहीं भान होता । क्योंकि तिस ज्ञानको निर्विकल्पकरूप होनेकर विशेषण दुःख और विशेष्य दुःखाभावके संबंध का ग्राहकपना नहीं है ॥ समाधान ॥ “किंचित् इदं” यह निर्विकल्पज्ञान इच्छाके उत्पन्न करनेको समर्थ नहीं । क्योंकि विषयकी सौंदर्यता का यह ज्ञान प्रकाशक नहीं है । और विषयकी सौंदर्यताके ज्ञानसे ही इच्छा उत्पन्न होती है । यह न्यायके जाननेवालोंकी मर्यादा है । और विषयकी सौंदर्यता का ग्राहक जो ज्ञान है । वह निर्विकल्पक है । यह कथन भी समीचीन नहीं जिसका रणसे वह ज्ञान विशेषण तथा विशेष्यके संबंध का ग्राहक है । याते इच्छाका जनक जो ज्ञान है । तिसको सविकल्पकपना ही युक्त है ॥ शंका ॥ दुःखाभावका ज्ञान सविकल्पकहो तथापि तिसको दुःख विषयता कैसे है ॥ समाधान ॥ दुःखाभावमें प्रतियोगी रूप दुःख विशेषण है । और अभाव ज्ञानको विशिष्ट विषयक होनेकर दुःख रूप विशेषण

विषयता भी संभवती है ॥ तिस कारण से जितना इच्छा का विषय है वह सर्वही उपादेय है । ऐसे यदि माने तो दुःखको उपादेयता कैसे न होगी । किंतु अवश्य होगी । याते प्रथम पक्ष असंगत है । और इच्छा के विषय का एक देश उपादेय है । यह द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता । क्योंकि यह लक्षण अव्याप्ति दोषवाला होने से दुष्ट है । तिसीको स्पष्ट करते हैं । सुखविषयणी इच्छा का सुख एक देश नहीं है ॥ क्योंकि सुखसे भिन्न और कोई विषय नहीं ॥ शंका ॥ सुख मात्र पुरुषार्थ नहीं है किंतु आत्मसंबंधी सुख उपादेय है ॥ तिस कारण से इच्छा भी आत्मीय सुखविषयणी है । इसलिये सुखमें इच्छा के विषय का एक देश त्वरूप उपादेयत्व संभवता है ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यदि आत्मीय सुखको उपादेय माने तो आत्म उपाधिक ही सुखमें पुरुषार्थरूपता होगी । स्वभावसे सुख उपादेय नहीं होगा । याते द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ और इच्छा का विषय जो विशेष्य मात्र वह उपादेय है ॥ इस तृतीय पक्षके माने हुए दुःखमें उपादेयत्वकी प्राप्ति नहीं होती । क्योंकि दुःखको इच्छा का विषय हुए भी विशेष्यरूपता का अभाव है ॥ सो यह आद्य द्वितीय पक्षमें तृतीय पक्ष है यह भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि (अहंस्वर्गी स्याम्) “मंसुखी हो जाऊं” यह इच्छा सुख विशेषण विशिष्ट आत्म विषयणी है ॥ तिस इच्छा का विषय जो विशेष्य मात्र आत्मा है ॥ तिसमें पूर्वपक्षीको अनिष्ट जो उपादेयता सो प्राप्त होगी ॥ और अनुमानमें बाधकी प्राप्ति भी होगी । क्योंकि अनुपादेयत्व साध्य का अभाव निश्चय हुआ है । इस प्रकार द्वितीय पक्षको निषेध करके अत्र स्वकृतिसाध्यत्व का अभाव है जिसमें वह अनुपादेय है इस तृतीय पक्षको निराकरण करते हैं ॥ और यह तृतीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि स्वप्रयत्न करके साध्य जो

दुःखत्रौतिसकेसाधनहैं तिनमेंभीअनुपादेयताहै। औरपूर्वउक्तलक्षण तिनमेंअनुगतहैनहीं।यातेतृतीयलक्षणअव्याप्तिदोपयुक्तहोनेसेदुष्टहै। औरस्वकृतिसाध्यत्वके अभावविशिष्टसुखदुःखाभावसेजोइतरत्वहैयही अनुपादेयत्वहै।यहचतुर्थपक्षहै ॥ इसमें “सुखदुःखाभावेतरत्व” इतना विशेष्यमात्रहीअनुपादेयत्वकालक्षणकहें । तोसुखकेसाधनयागादि कोमेंअतिव्याप्तिहोती।तिसकीनिवृत्तिअर्थविशेषणभागलक्षणमेंकहाहै वहयागादिकोंमेंनहीं यातेतिनमें अतिव्याप्तिभीनहीं ॥ सोयहचतुर्थ पक्षभीअसंगतहै।क्योंकिविशेषणभागकीव्यर्थताहै।औरसुखकेसाधन यागादिकोंमेंस्वप्रधान्यतासे उपादेयतानहीं।किंतुसुखकेसाधनहोनेकर सुखउपाधिकी उपादेयताहै । यातेविशेष्यमात्रलक्षणमानेहुएभी तिनमेंअतिव्याप्तिनहींहोती ॥ क्योंकिपरमपुरुषार्थत्वका अभावसुख केसाधनोंमेंभीस्वीकारहै । यातेविशेषणका ग्रहणव्यर्थहै । औरसुख दुःखाभावसेइतरत्वहीअनुपादेयत्वहै यहपंचमपक्षभीनहीं संभवता । क्योंकिसाध्यतथाहेलुकाएकत्वप्राप्तहोताहै ॥ तैसे मानलेंतोसंदिग्धा ऽसिद्धहेलुअनुमानमेदोपहोगा ॥ अर्थयहजोसंदिग्धरूपताकरअसिद्ध होवहहेलुसंदिग्धाऽसिद्धकहाजाताहै । सोसंदिग्धाऽसिद्धहेलुवाला अनुमानदुष्टहोताहै ॥ औरइनसेभिन्नऔरकोईअनुपादेयत्वकालक्षण कथनकरनेकेयोग्यनहीं ॥ शंका ॥ कथनकरनेकीअसामर्थ्यआप क्योंकहतेहो । जिसकारणसेदुःखादि स्वरूपहीअनुपादेयत्वशब्दका अर्थहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्आत्मामेंदुःखत्रौतिसकेसाधनोंका तादात्म्यस्वीकारनहींहै ॥ यातेआत्मामेंअनुपादेयत्वरूपताकाअसं भवहै ॥ शंका ॥ यदिआपआत्माकोदुःखादिरूपतानहींमानोगे ॥

तोसर्वात्मताकाव्याघातहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन्त्र्यात्माकी सर्वात्मताकाव्याघातनहीं है। क्योंकिसर्वकीअधिष्ठानताही सर्वात्मता शब्दकाअर्थहै। औरत्र्यात्मामेंसर्वाऽअधिष्ठानता सर्वअध्यस्तपदार्थों कोसत्तास्फूर्तिप्रदत्वरूपहै॥ कोईमिथ्याकार्यरूपता तिसको नहीं है ॥ क्योंकिसत् पदार्थकामिथ्याकेसाथतादात्म्यनहींसंभवता। यदिमिथ्या दुःखादिकातादात्म्यमानोगे तोसत्यत्वकीहानीहोगी। अब सिद्धांती अपनेपूर्वपक्षकोसमाप्तकरताहै ॥ इसप्रकारपूर्वउक्तअनुमानमें अनुपा देयत्वसाध्यकेकथनकीही अशक्यताहोनेसे किसप्रकारतुमयहअनुपा देयत्वरूपअनिष्टआत्मामेंसिद्धकरतेहो। (इतिसिद्धांतीकापूर्वपक्ष)

❀ अथपूर्वपक्षीकासमाधान ।

अथउपादेयत्वकानिरूपणा ❀

हेसिद्धांतिनपूर्वउक्तआपकीआशंकानहींसंभवती ॥ क्योंकि अनुपादेयत्वजोहै ॥ वहस्वप्रतियोगिरूपउपादेयत्वकरनिरूपणाकिया जाताहै ॥ तिसउपादेयत्वरूपप्रतियोगीसेविनातिसकानिरूपणनहीं करसकते ॥ यातेअनुपादेयत्वकेजाननेअर्थप्रथमउपादेयत्वकानिरूपणाकियाचाहिये। सोउपादेयत्वअन्यानुपसर्जनत्वरूपहीजाननेयोग्य है ॥ अर्थयहजोअन्यसर्वपदार्थोंमेंप्रधानहोवहउपादेयहै ॥ औरयदि सिद्धांतीऐसेकहेकिअन्यसर्वसेप्रधानताआत्मामेहीवर्तमानहै।यातेआत्माकोहीउपादेयताहै।सोयहकथनभीनहींसंभवता॥क्योंकिवहअन्यानुपसर्जनत्वरूपउपादेयत्वसुखतथादुःखाऽभावमेंही है॥अन्यसर्वआत्मादिपदार्थोंकोतिनदोनोंकाउपसर्जनपनाअर्थात्गेषपनहै॥ तिनमेंआत्मा तोसुखतथादुःखाभावकाअधिकरणरूपतामेंजेषहै ॥ औरसुखादिकोंके

जोसाधनवहकरणरूपतासेशेषहैं ॥ ऐसेऔरभीजानलेने॥ शंका ॥हे
वादिन्सुखतथादुःखाभावरूपभीआत्माहीहै ॥ तोकैसेतिसकोलुमउप
सर्जनअर्थात्शेषकहतेहो ॥ समाधान ॥ आत्माप्रथमसुखतथादुःखा
भावसेभिन्नहै । प्रथमतिसमें

❀ अथआत्मामेंदुःखाभावरूपताकानिषेध ❀

दुःखाभावरूपताकानिषेधकरतेहैं । आत्माकोभावरूपहोनेकर
दुःखाभावरूपताकाअसंभवहै । औरयदिऐसेकहोकिआत्माकोदुःखा
भावरूपतामाननेवालेवादीकेप्रतिभावरूपत्वहेतुस्वरूपाऽसिद्धहै । सोयह
कथनभीनहींसंभवता । क्योंकि “अहमस्मि” इसप्रकारकीप्रतीतिमें
किसीकाविवादनहीं । औरयहप्रतीतिदुःखरूपप्रतियोगीकरनिरूपण
करनेकेयोग्यभीनहीं । क्योंकिदुःखकेनप्रतीतिहुएभी(अहमस्मि)अह
प्रतीतिसर्वकोउत्पन्नहोतीहै । तिसीसेदुःखरूपप्रतियोगीकरनिरूपण
करनेयोग्यहोनेसेभावस्वरूपहीआत्माहै । दुःखाभावरूपनहीं ॥

❀ अथशून्यवादीकोअभिमतआत्मा
केखंडनकाप्रकार❀

शंका ॥ अव्यभिचारिस्वभावहीआत्माहोताहै । औरशून्यभी
अव्यभिचारिस्वभावहै । इसकारणसेसर्वपदार्थोंकाजावास्तवस्वरूप
शून्यवहीआत्माहै । भावरूपआत्मानहीं । औरशून्यरूपताआत्माको
होनेसेदुःखाभावरूपताकाभीसंभवहै ॥ समाधान ॥ वहदुम्हाराशून्य
क्याज्ञेयरूपहैअथवाज्ञातारूपहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिज्ञेय
पदार्थकोआत्मपनेकाअसंभवहै । विज्ञाताकोहीआत्मपनाहोताहै ।
यदिऐसेनमानें । तोघटादिकोंमेंभीआत्मताहुईचाहिये । औरद्वितीय

पक्षमीनहींसंभवता । क्योंकिज्ञानकंथाश्रयकोज्ञाताकहतेहैं । शून्यको ज्ञानकाअनाश्रयहोनेसेज्ञातृत्वकाअमंभवहै । औरशून्यकोज्ञानकाअनाश्रयपनाअशुक्तनहीं है । क्योंकिशून्यसर्वाऽभावकानामहै । औरअभावकोभावस्वरूपज्ञानकीअधिकरणताकाअसंभवहै । ऐसेकहींदेखानहीं जोअभावभीभावपदार्थकाआश्रयहो ॥ शंका ॥ यद्यपिअभावभावका आश्रयप्रमाणसेनहींसंभवता । तथापिभ्रमसेतिनकार्थमिभावसंभवताहै क्योंकिभ्रमकोकोईकार्यअशक्यनहीं ॥ समाधान ॥ हेशून्य वादिन्धर्मधर्मिभावकोआरोपितमानेहुए जिसकेसाथअन्वितरूपताकर आरोपितप्रतीतहोताहै । वहआरोपकाविषयअधिष्ठानप्रकृतआरोपमें अर्थात्ज्ञानतथाशून्यकेधर्मधर्मिभावमेंहै वानहीं । अंतिमपक्षकहोतो वहनहींसंभवता । क्योंकिअधिष्ठानसेविनाकहींभीभ्रमनहींहोसकता । जिसकारणसेसर्वभ्रमोंमेंअधिष्ठानतथाअध्यस्तकाआकारमानहोताहै । औरअधिष्ठानहै । इसप्रथमपक्षमेंयहविचारकर्तव्यहै । क्या? शून्यसे भिन्नकोईअधिष्ठानहै । अथवाशून्यहीअधिष्ठानहै । प्रथमपक्षतोनहीं संभवता । क्योंकिअधिष्ठानसेभिन्नकोकल्पितहोनेकर शून्यमेंकल्पित त्वप्रसंगहोगा । औरशून्यहीअधिष्ठानहैयदियहद्वितीयपक्षकहो । तोशून्य करअन्वितहीसर्वघटादिपदार्थसर्वकोप्रतीतहुएचाहिये । जिसकारणसे जोअध्यस्तपदार्थहोताहै । तिसमेंअधिष्ठानकोअनुगतहोनेकरवह अध्यस्ततिसकेसाथतादात्म्यरूपताकरप्रतीतहोताहै । औरआरोपितमेंशून्य कीअनुगतिहैनहीं । क्योंकिआरोपितसत्त्वसेहीप्रतीतहोताहै । अन्यथाशून्यंघटः “शून्यंघटः” ऐसीप्रतीतिहोनीचाहिये । किंवावहशून्य सर्वभ्रमोंकाअधिष्ठानहै । अथवाकिसीएकभ्रमकाअधिष्ठानहै । प्रथम

पक्षमेंतिसशून्यकीप्रतीतिकहनेयोग्यहै । क्योंकिसामान्यरूपतासेज्ञात कोहीअधिष्ठानपनायुक्तहै । औरवहअधिष्ठानकाज्ञानस्वतःहीहोताहै। अथवापरसेहोताहै । यहविचारकर्तव्यहै । इनमेंअंत्यपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकिअधिष्ठानसेभिन्नअन्यसर्वपदार्थोंकीकल्पनासेप्रथमअसिद्धिहै । कल्पनासेप्रथमतिनकोसिद्धमानेहुएकल्पितपनेकीहानिहोगी औरयदिप्रथमपक्षकहो।तोशून्यताकीहानिहोगी। क्योंकिशून्यकोज्ञानस्वरूपताकाअभावहोनेसेस्वतःसिद्धिकाअभावहै ॥ शंका ॥ शून्यकी स्वप्रकाशताकेअर्थतिसकोहमज्ञानस्वरूपहीमानलेंगे । जिसकारणसे अन्यथाऽनुपपत्तिसर्वसेबलवालीहोतीहै । अर्थयहशून्यकोज्ञानस्वरूपतासेविनास्वप्रकाशताकीअनुपपत्तिहै । यातेशून्यज्ञानस्वरूपहै ॥ समाधान ॥ यदिशून्यकोलुमज्ञानस्वरूपमानोगे । तोस्वप्रकाशज्ञान जोसर्वजगत्काअधिष्ठानहै तिसकाशून्यहनामएकसंकेतमात्रहै । वहज्ञान वास्तवसे कोईशून्यरूपनहींहोगा क्योंकिवहभावस्वरूप है । औरकिसीविशेषभ्रमकाशून्यअधिष्ठानहै । यहपूर्वजोद्वितीयपक्षकहा था । वहभीनहींसंभवता । क्योंकिसर्वभ्रमकीअधिष्ठानताका अभाव होनेसेतिसशून्यकोव्यभिचारिपनाहै ॥ इसीसेवहआत्मानहीं । किंतु भावस्वरूपहीआत्माहै । इसप्रकार आत्माकोभावरूपहोनेसे दुःखाभाव रूपतानहींयहअर्थसिद्धहुआ।इति ॥

❀ अथआत्माकी सुखरूपताकानिषेध ❀

इसप्रकारआत्मामें दुःखाभावरूपताकानिषेधकरके अतिसमें सुखरूपताकाअभावनिरूपणकरतेहैं। यहांपरयहअनुमानजानना।

आत्मानसुखरूपः अकार्यत्वात् । अकाशवत् ॥

दोनोंकोसमानहीहै॥समाधान॥ हेसिद्धांतिन्त्र्यात्माथौरसुखकेभेदका
 ग्राहक“अहंसुखी”यहजोप्रत्यक्षहै॥ तिसकाविरोधहोनेकरश्रुतित्र्यर्थकी
 अयोग्यताहोनेसेतिसकोत्रौपचारिकअभेदपरताहै।अन्यथा‘अहंसुखम्’
 इसप्रकारकिसीकोप्रतीतहुआचाहिये।त्रौऐसीप्रतीतिकिसीकोनहींहोती
 इसलियेआत्माथौरसुखकाभेदहै॥इति॥ अबआत्माकीअनुपादेयताके
 साधकअनुमानकोसमाप्तकरतेहैं ॥ जिसकारणसेपूर्वउक्तयुक्तियोंकर
 आत्माकोसुखतथादुःखाभावसेभिन्नपनाहैतिसीकारणसेउपसर्जनरूप
 अनुपादेयहीआत्माहै । यातेयहअनुमाननिर्दोषसिद्धहुआ ॥(आत्मा
 अनुपादेयःसुखदुःखाभावेतरत्वात्घटादिवत्।वाव्यतिरेकणसुखादिवत्)
 यहदृष्टीतजानना ॥ इति ॥ शंका ॥ आत्मामें“सुखदुःखाभावेतरत्व”
 रूपहेतुकेहोतेभीअनुपादेयत्व रूपसाध्यतिसमेंनहो ॥ इसप्रकारविप
 पक्षमानेहुएअर्थात्आत्मकोउपादेयमानेहुएकौनवाधकहै ॥ समा
 धान ॥ हेतुजिसपक्षमेंविद्यमानहोतिसमें साध्यकेसनहींहोगा किंतु
 अवश्यहोगा । यातेहेतुसाध्यकीसमव्याप्तिजहांहोतहांहेतुकेअभावहुए
 हीसाध्यकाअभावहोसकताहै।इसकारणसेहेतुकाअभावहीविपक्षमेवाध
 कहे । इसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं ॥ सुखतथादुःखाभावसेभिन्नथौरकोई
 पदार्थपुरुषार्थरूपनहींजिसकारणसेआत्माभीसुमुचुपुरुषोंकोउपादेयहो
 तात्पर्ययह । किसुखतथादुःखाभावसेभिन्नकोईपदार्थ पुरुषार्थरूपहोता
 तोतिसमेंहेतुकाव्यभिचारहोनेकरउक्तहेतुसाध्यकानिश्चयकनहोता ।
 तिसीकारणसे पूर्वउक्तहेतुवालेआत्मामें पूर्वकथनकियाहुआअनुपा
 देयत्वरूपसाध्यभीसिद्धनहींहोगा । यातेआत्मासुमुचुपुरुषोंकोउपादेय
 होजायेगा सोयहप्रकारनहींसंभवता । क्योंकिसुखदुःखाभावसेअन्य

पदार्थको पुरुषार्थरूपताका अभावहोनेसे "सुखदुःखाभावेतरत्व" हेतु व्यभिचारीनहीं किंतु स्वसाध्यकानिश्चायक है ॥ याते साध्यके अभावहुए हेतुका अभावही विपक्षमाननेमें बाधक है अर्थात् आत्मामें "सुखदुःखाभावेतरत्व" हेतुको मानकर जो वादी तिसमें अनुपादेयत्वसाध्यनहीं मानता तिसको हेतुका भी अभाव अथवा अभाव मानना होगा ॥ इति ॥ शंका ॥ इस प्रकार विपक्षमें बाधकतर्कके विद्यमानहुए भी पुनः पूर्व उक्त अनुमानमें "आत्मेतरत्व" उपाधितो है। और वह उपाधि अनुपादेयत्वरूपसाध्यके साथ अव्यापक नहीं। क्योंकि उपाधिका अभावजो "आत्मत्व" है। तिसको साध्याभावरूप उपादेयत्वके साथ व्यापन है। याते जहां अनुपादेयत्व है। तहां आत्मेतरत्व है। जैसे घटमें है। और जहां सुखदुःखाभावेतरत्व है। तहां आत्मेतरत्व नहीं। जैसे आत्मामें है। इस प्रकार सो उपाधिक होनेसे तुम्हारा हेतु दुष्ट है संत हेतु नहीं ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांति च आत्मत्वही परमपुरुषार्थत्वका बोधक नहीं है। क्योंकि लोकमें आत्मा पुरुषार्थरूपतासे उपादेय है ऐसे व्यवहारका अभाव है। और पक्षेतरत्वको उपाधिपना भी नहीं संभवता ॥ यदि तिसको भी उपाधिरूपमान लें तो अनुमान मात्र का ही संसारसे उच्छेद हो जायेगा ॥ क्योंकि पक्षेतरत्व उपाधितो सत् अनुमानमें भी वर्त्तमान है ॥ याते वह उपाधि नहीं ॥ शंका ॥ पक्षेतरत्वको उपाधिरूपतान माने हुए ।

❀ तेजोऽनुष्णाः द्रव्यत्वात् रज्जुवत् ॥ ❀

इस अनुमानमें तेजोभिन्नत्वको उपाधिरूपता कैसे होगी ॥ क्योंकि यह भी पक्षेतरत्वरूप उपाधि है ॥ समाधान ॥ इस अनुमानमें तेजकी अनुष्णता प्रत्यक्ष प्रमाणकराधित है ॥ याते "तेजोभिन्नत्व" उपाधि

बाधोन्नीतहै अर्थयह बाधकर (उद्भावित) कहिये प्रगटहुआहै । औरप्रकरणमेंतो “आत्मेतरत्व” उपाधिबाधकरउद्भावितहेनहीं।क्योंकि लोकमेंयदि आत्मापुरुषार्थरूपतासे उपादेयहोतातो “पक्षेतरत्व” उपाधिबाधकरउन्नीतहोता। सोलोकमेंतिस प्रकारके व्यवहारकाअभाव है ॥ याते “आत्मेतरत्व” कोउपाधिरूपतानहींसंभवती ॥

शंका ॥ हेवादिअन्यरीतिकेअभावसेलोकमेंआत्माहीउपादेयकहने योग्यहै । क्योंकिआत्मासेभिन्नसर्वपदार्थअपुरुषार्थरूपहैं । और सुखादिकभीपुरुषार्थरूपनहीं। यदितिनकोभीपुरुषार्थरूपमानोगे । तो शत्रुकेसुखादिकोंमेंभीपुरुषार्थरूपताहुईचाहिये । औरयदिऐसेकहोकि आत्मसंबंधिसुखादिकहीउपादेयहैं अन्यउपादेयनहीं सोयहकथनभी समीचीननहीं । क्योंकिआत्मीयत्व अर्थात्आत्मसंबंधित्वविशेषण विशिष्टसुखादिकोंकोपुरुषार्थरूपमानेहुए आत्माहीपुरुषार्थरूपताकरव्यवहारकरनेयोग्यहै सुखादिकनहीं ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् “सुखं मेस्यात् दुःखंमाभूत्”इसप्रतीतिसे आत्मसंबंधिसुखतथादुःखाभावकोही कामनाकाविषयहोनेसेयहदोनोंहीपुरुषार्थरूपहैं । आत्मापुरुषार्थरूप नहीं । तात्पर्ययहहै। निरुपाधिकइच्छाकाविषयही पुरुषार्थरूपतासेउपादेयहोताहै। औरवहीपुरुषार्थरूपकहनेयोग्यहै। औरसुखतथादुःखाभावही कामनाकाविषयहोनेसेपुरुषार्थव्यवहारकेयोग्यहैं। औरयदियहकहोकि आत्मसंबंधिसुखतथादुःखाभावहीपुरुषार्थरूपहैं केवलवहदोनोंपुरुषार्थरूपनहीं । सोयहकथनभीअसंगतहै । क्योंकिआत्माकोसुखतथादुःखाभावकाअधिकरणहोनेसेकारकपनाहै । औरकारककोगौणहोनेकरवास्तवसेअनुपादेयताहै । यातेआत्मापुरुषार्थरूपनहीं ॥ शंका ॥

“सुखमेस्यात्” इसप्रतीतिसे आत्मीयसुखविषयणीकामनाप्रतीतहोती है । तर्हासुखकीन्याईआत्माभीतिसकामनाकाविषयहै । यातेतिस आत्मामेंसुखउपाधिकीइच्छातुमकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ “आत्मा मेस्यात्” इसप्रकारकीकामनाकिसीकोनहींहोती ॥ औरकामनाका अविषयपुरुषार्थरूपनहींहोता ॥ इसलियेसुखअनुपहितकेवलआत्मा मेंकामनाकाअदर्शनहै ॥ औरसुखउपहितआत्मामेंकामनाकादर्शनहै यातेसुखादिकहीकामनाकेविषयहैं। आत्माकामनाकाविषयनहीं। तिसीसे आत्मापुरुषार्थरूपताकरउपादेयनहीं ॥ शंका ॥

✽ आत्मलाभान्नपरंविद्यते ✽

अ० ॥ आत्माकेलाभसेउत्कृष्टऔरकोईलाभनहींहै ॥ और आत्मकामः ६० व० अ० ६३० ४॥६ ॥ अ० ॥ आत्माकीकामनावाला पुरुषआसकामादिहोताहै ॥ इत्यादिश्रुतिकेवलसे आत्माकोकाम्यमानत। निश्चयहोनेसेपुरुषार्थरूपताहै ॥ समाधान ॥ यद्यपिपूर्वउक्तश्रुतिहमकोभी स्वीकारहै ॥ तथापिवहश्रुतिस्वनिष्ठअविरोधकीसिद्धिकेअर्थक्या? लोक व्यवहारकीअपेक्षाकरतीहैवानहीं ॥ यदिप्रथमपक्षकहोतोलोकमेंआत्म विषयणीकामनाकाअभावहै ॥ किसप्रकारवहश्रुतिआत्माकोकाम्य मानतासे पुरुषार्थरूपताको बोधन करेगी ॥ क्योंकियहआत्माकोई अलौकिक पुरुषार्थरूप तोहैनहीं ॥ यातेश्रुतिभी लौकिकव्यवहार को न उल्लंघन करके ही पुरुषार्थ रूपता को प्रतिपादन करेगी ॥ तैसेमानेहुए । “मंचाःकोशंति” अ० । मंचपुकारतेहैं । जैसेयह वाक्यलोकविरोधसेलक्षणावृत्तिकर अन्वयार्थकाप्रतिपादकहै । तैसे

लोकव्यवहारकेविरोधहुए पूर्वउक्तश्रुतिवाक्यभी औपचारिकहै । अर्थात्सुखउपहितआत्मामेंही कामनाकीविषयताकाप्रतिपादकहै ॥ केवलआत्मामेंनहीं ॥ शंका ॥ अपनेअर्थकेबोधनकरनेमेंश्रुतिलोक व्यवहारकीक्यों अपेक्षाकरतीहै । यदिकहोकि विरोधपरिहारकेअर्थ अपेक्षाकरतीहै । तोयहकथननहींसंभवता । क्योंकिलोकव्यवहारका बाधकरकेभी विरोधकापरिहारसंभवहोसकताहै । औरश्रुतिलोकव्यवहारकरबाधकेयोग्यनहीं । क्योंकिवहस्वार्थमेंतात्पर्यवालीहै । याते श्रुतिकोलोकव्यवहारकीकिंचित्मात्रभीअपेक्षानहीं ॥ समाधान ॥ यदि लोकव्यवहारकीश्रुतिअपेक्षानहींकरती यहद्वितीयपक्षस्वीकारकरोतो अलौकिकहोनेसे स्वर्गकोभी मुखरूपतानहीं सिद्धहोगी । क्योंकि लोकव्यवहारकीअपेक्षानकरेहुए (ज्योतिष्योमेनस्वर्गकामोयजेत) इसवाक्यमेंकामनाका विषयभूतस्वर्गप्रथम पुरुषार्थरूपप्रतीतहोताहै । यहवास्तवमर्यादाहै । तहांकेवलवेदकरप्रतिपादितहोनेकरस्वर्गकोपुरुषार्थरूपमानेहुए तिसको मुखरूपतानहींसिद्धहोगी । क्योंकिसुखमें स्वर्गपदकावेदने संकेतनहींकिया । औरयदिलौकिकपुरुषार्थव्यवहार कोवेदअनुसर्गाकरताहै ॥ तोलोकमेंसुखतथादुःखाभावकोहीपुरुषार्थ पनाहै । तिनमेंभीस्वर्गकोदुःखाभावरूपतामाननेमेंगौरवहै । क्योंकि प्रतियोगिआदिकोंकी कल्पनाकरनीलगतीहै । इसलियेभावरूपसुख रूपताहीस्वर्गमेंयुक्तहै ॥ औरस्वार्थमेंतात्पर्यवालीहोनेसे श्रुतिलोक व्यवहारकाबाधकहै ॥ यहकथनभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिसमुच्चयकरलोकव्यवहार तथाश्रुतिकोप्रमाणताके सिद्धहुएदोनोंमें

एककेवाधकीकल्पनाअयुक्तहै ॥ शंका ॥ (ज्योतिष्टोमेनस्वर्गकामो यजेत)इसस्वर्गकामश्रुतिमेंश्रवणकियेहुएस्वर्गकोलोकव्यवहारकीअनुसारतासेसुखरूपताहै ॥ यहलुम्हाराकथनअयुक्तहै ॥ क्योंकि ॥

यन्नदुःखेनसंभिन्नं नचग्रस्तमनंतरम् ।

अभिलाषोपनीतंच तत्सुखंस्वःपदास्पदम् ॥ १ ॥

अ० ॥ जोदुःखकरमिश्रतनहींहै । औरअभावरूपनहींतथाअंत रायसेरहितजोहै । औरअभिलाषाकाजोविषयहैसोसुख स्वर्गशब्दका अर्थहै ॥ इत्यादिअर्थवाद स्वर्गकीसुखरूपताकाग्राहक विद्यमानहै । तिसीकारणसेआत्मकामादिक श्रुतिकेवलसेकामनाका विषयजोआत्माहै वहपुरुषार्थरूपताकर उपादेयहीहै ॥ समाधान ॥ यहआत्मा कीपुरुषार्थरूपतालोकसे विलक्षणभूतक्याहै । जिससेइसलोकके सुखतथातिनकेसाधन वनितादिक औरपरलोकमें होनेवालेस्वर्गादि सुखतथातिनकेसाधनयागादिक इनसर्वकोत्यागकर जन्मसेलेकरब्रह्मचर्यादिरूपसकलदुःखोंके समूहसेअपनेआपको यहपुरुषक्लेशयुक्त करताहै । यद्यपिपरमपुरुषार्थकीकामनासेइनसर्वकेशोंकासहनसंभवताहै तथापियहअलौकिकपुरुषार्थरूपआत्माहै इसप्रकारकेकथनमात्रसेही यहपुरुषअपनेआपकोकृतार्थमानताहै । कोईलोकसेअथवास्वअनुभवसेआत्माकोपुरुषार्थरूपताकीसिद्धिनहीं । किंतुकेवलवेदमात्रसेही सिद्धिहै । तैसेमानेहुएअसिद्धविषयसुखकोत्यागकर अग्रसिद्धपुरुषार्थ काउद्देश्यकरकेब्रह्मचर्यादिकेशकासहनकरनावुद्धिमानोंको युक्तनहीं यहभावहै ॥ इसीसेरागीपुरुषोंने यहकहाहै ॥

❀ वरं वृंदावने शून्ये शृंगाल त्वंस इच्छति ।

न तु निर्विषयं मोक्षं तु मर्हति गौतम ॥ १ ॥ ❀

अ० ॥ हे गौतम वहरागी पुरुष पयह इच्छा करता है ॥ किशून्य वृंदावनमें शृंगाल अर्थात् गीदड़ होना श्रेष्ठ है ॥ परन्तु वनिता दिविषयों से हीन मोक्षमानने योग्य नहीं ॥ १ ॥ किंवा ॥ यदि यह आत्मा ही पुरुषार्थरूप हो तो

❀ अक्केचेन्मधुविंदेत् किमर्थं पर्वतं व्रजेत् ।

इष्टस्यार्थस्य संप्रप्तौ कोविद्वान्यत्नमाचरेत् १ ॥ ❀

अ० ॥ यदि अपने गृहके कोनेमें ही मधु प्राप्त हो तो यह पुरुष पर्वत पर किसलिये गमन करे किंतु नहीं करता ॥ तैसे यत्न से विना ही वांछित अर्थके प्राप्त हुए कौन विद्वान्यत्न करे किंतु नहीं करता ॥ १ ॥ इस न्यायसे प्रयत्न विना ही प्राप्त जो अपना आत्मा है तिसको त्याग कर विषयजन्य सुखके लोभसे मनुष्य किसलिये प्रयागादि तीर्थों में प्राणों का त्याग करते हैं याते प्रयागादि तीर्थोंमें मरनेके अर्थ जो तिनकी प्रवृत्ति है ॥ वह आत्माकी अपुरुषार्थरूपताको बोधन करती है ॥ इस कारणसे आत्मा उपादेय नहीं ॥ शंका ॥ तिनकी मरणमें प्रवृत्ति मात्र प्रमाणरूप नहीं हो सकती ॥ क्योंकि प्रमाणमूलक प्रवृत्तिको ही प्रमाणरूपता है अन्यथा अतिप्रसंग होगा ॥ अर्थात् प्रवृत्ति मात्रको प्रमाणता माने हुए जलार्थी पुरुषकी मरुस्थलमें जो भ्रमसे प्रवृत्ति होती है तिसको भी प्रमाणता हुई चाहिये और प्रयागादि तीर्थोंमें जाकर प्राणत्यागनेमें कोई प्रमाण भी नहीं है । क्यों कि आत्महननका निषेध करनेवाले शास्त्रका विरोध है ॥ समाधान ॥ प्रयागादिकोंमें प्राणत्याग करनेवाले पुरुष भ्रान्त नहीं हैं । क्योंकि शास्त्र ने ही प्रयागादिकोंमें मरणका अनुमोदन किया है ॥

नलोकवचनात् तातनवेद वचनादपि ।

मतिरुत्क्रमणीयाते प्रयागमरणांप्रति ॥ १ ॥

अ० ॥ हेप्यारेलोकोंकेकथनसेतथावेदकेवचनसेभीतुमकोप्रयाग मेंमरणकीबुद्धित्यागकरनेयोग्यनहीं । किंतुअवश्यप्रयागमेंप्राणोंका त्यागकरना ॥ इति ॥ केवलशास्त्रहीप्रयागमेंमरणकाअनुमोदननहीं करता किंतुलोकभीइसकाअनुमोदनकरतेहैं । औरआत्माकेहननका निषेधकरनेवालेशास्त्रकाभीविरोधनहीं। क्योंकिसिसआत्महननकेनिषे धकशास्त्रकोउत्सर्गताअर्थात्गौणताहै । औरप्रयागादिकोंमेंमरणको कथनकरनेवालाशास्त्रअपवादरूपहै । औरविशेषशास्त्रसेसामान्य शास्त्रकाबाधहोजाताहै । यातेकिंचित्भीविरोधनहीं। तिसीसेआत्मा पुरुषार्थरूपनहीं । किंतुविषयजन्यसुखहीपुरुषार्थरूपहै । यहसिद्ध हुआ ॥ इति ॥

✽ अथदुःखाभावकीपुरुषार्थ रूपताकानिरूपणा ॥ ✽

औरदुःखाभावभीलोकप्रवृत्तिसेआत्माकीअपेक्षाकरपुरुषार्थरूप है । अत्रइसीकोस्पष्टकरतेहैं । कुष्टादिरोगयुक्तमनुष्यदुःखाभावका उद्देश्यकरकेप्राणत्यागकरतेहैं । यहवार्त्तासर्वलोकमेंप्रसिद्धहै । याते दुःखाभावभीसुखकीन्याईपुरुषार्थरूपहै । आत्मापुरुषार्थरूपनहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन्आत्माकीअपुरुषार्थरूपहोनेसेतोक्या? अनात्माही पुरुषार्थरूपहै ॥ समाधान ॥ अनात्माहीपुरुषार्थरूपहोइसमेंक्यासंशय है ॥ शंका ॥ यदिअनात्माकोहीपुरुषार्थरूपमानोगे। तोअनात्मपने कीतुल्यतासेदुःखादिकभीपुरुषार्थरूपहुएचाहिये ॥ समाधान ॥ हेः सिद्धांतिन् । सुखतथादुःखाभावऔरइनकेसाधनपुत्रस्त्रीगृहक्षेत्रपशु

सुखर्णादिकजोहैं । तिनकोउपादेयत्वअनिन्दितहै । औरदुःखादिक निन्दितहोनेसेउपादेयनहींहैं ॥ शंका ॥ इसलोकतथापरलोककेसर्व सुखऔतिनकेसाधनोंकीउपादेयताकोजोअनिन्दितपनाहै । वहअनिन्दितपनाक्या?पामरोंकीदृष्टिसेहै। अथवापरीक्षकोंकीदृष्टिसेहै । प्रथम पक्षतो नहींसंभवता । क्योंकिपामरोंकीदृष्टिसेअनिन्दितपनाकिसीअर्थ कासाधकनहीं । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिइसलोक तथापरलोककेसुखऔतिनकेसाधनोंकोत्यागकरपरीक्षकपुरुषआत्ममात्र काउद्देश्यकरकेश्रवणादिकोंमेंप्रवृत्तहोतेहैं । इसकारणसेतिनकीदृष्टि करअनिन्दितपनेकीअयोग्यताहै ॥ समाधान ॥श्रवणादिकोंमेंप्रवृत्ति वालेपुरुषपरीक्षककनहींकिंतुवहभ्रांतहैं। औरयदितुमएसेकहो।कितिन कीप्रवृत्तिभीश्रुतिमूलकहै भ्रममूलकनहीं । यातेवहपरीक्षकहैं। तिन कोभ्रांतियुक्ततुमकैसेकहतेहो तोहमभीयहकथनकरसकतेहैं । किपर लोककेसुखअर्थप्रवृत्तिभीश्रुतिमूलकहीहै । भ्रममूलकनहींयातेनिन्दित नहीं । यद्यपिऐसेमानेहुएआत्मातथासुखादिइनदोनोंकोहीपुरुषार्थ रूपताकहनेयोग्यहै । तथापि ॥

✽ बहुनामनुग्रहोन्यायः ॥ ✽

अ० ॥ बहुतोंकाअनुग्रहयुक्तहोताहै । इसन्यायसेपारलौकिक सुखादिकोंकेअर्थसाधनअनुष्ठानकरनेवालेबहुतहैं । तिनसेविरोधहुए दोवातीनपुरुषजो श्रवणादिसाधनोंकेअनुष्ठानहैं। तिनकोभ्रांतपना युक्तहै। औरतिनकीप्रवृत्तिकामूलभूतजोश्रुतिहैतिसकोअन्यअर्थकीबोध कताहै । अर्थात्दुःखाभावका उद्देश्यकरकेश्रवणादिकों मेंप्रवृत्तिको

वह श्रुतिबोधन करती है । याते तिसका स्वार्थमें तात्पर्य नहीं । इस प्रकार ।
आत्मा अनुपादेयः सुखदुःखाभावेतरत्वात् दुःखादिवत् ।

इस अनुमानमें “पक्षेतरत्व” को उपाधिपनेका अभाव और तिसको बाधकर उद्भावितत्वका अभाव इनने ग्रंथसमुदायसे स्थापन किया ॥ शंका ।

आत्मा पुरुषार्थः सुखरूपत्वात् । विषयानंदवत् ॥

अ० ॥ आत्मा पुरुषार्थरूप है ॥ सुखस्वरूप होने से जो जो सुखरूप है सो सो पुरुषार्थरूप है । जैसे विषयानंद है । इस प्रतिपक्षाज्जुमान के विद्यमान हुए पूर्वपक्षीका अनुमान सत्यति पक्ष होनेसे दुष्ट है । और आत्माकी सुखरूपता श्रुतिमें भी प्रसिद्ध है । क्योंकि (विज्ञानमानंदब्रह्म) इस श्रुतिमें ब्रह्मस्वरूप आत्माको आनंदस्वरूप कहा है । याते आत्मा ही पुरुषार्थरूप है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् आत्माकी आनंदरूपताको श्रुतिकथन करो । परन्तु कथनमात्र से आत्माकी पुरुषार्थरूपता सिद्ध नहीं हो सकती क्योंकि पूर्वउक्तयुक्तिसे सुखरूपता नहीं संभवती ॥ शंका ॥ सुखरूपताके हुए फिर आत्माको पुरुषार्थरूपता क्यों नहीं संभवती ॥ समाधान ॥ आत्माको सुखरूप माने हुए क्या वह आत्मा ही स्वतंत्र पुरुषार्थरूप है । अथवा सुखरूप आत्मामें समवायसंबंधसे रहनेवाला कोई अन्य सुख वह पुरुषार्थरूप है । इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि सुखमात्र ही पुरुषार्थ नहीं किंतु स्वसंबंधि रूपतासे तिस सुखको पुरुषार्थपना है । अन्यथा शत्रुके सुखको भी पुरुषार्थरूपता प्राप्त हुई चाहिये । और अभेदमें स्वसंबंधिपना भी नहीं संभवता । तिस कारणसे सुखरूप आत्मा स्वतंत्र पुरुषार्थरूप नहीं । याते प्रतिपक्षाज्जुमान साधु नहीं । और द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता । जिस कारणसे सुख

हीसुखका पुरुषार्थनहीं होसकता । क्योंकि सुखरूपआत्माकोस्वरूपसुखकरहीतृप्ति है । तिसकोऔरसुखविषयककामनाकी अयोग्यता है । यातेसुखरूपआत्माकाऔरकोईसुखपुरुषार्थनहींसंभवता ॥शंका॥
 आत्माअनुपादेयहै यहअर्थतुमनेबहुतयुक्तियोंसेसिद्धकिया । औरविषयानंदभीबहुतदुःखोंकरमिश्रतहोनेसेअनुपादेयही है । तैसेमानेहुए सुखकाउद्देश्यकरके यागादिसाधनोंमेंकोईभी पुरुषप्रवृत्तनहींहोगा ॥ समाधान ॥ यहआपकाकथनसत्यहै जोसांसारिकसुखदुःखसेमिला हुआहै । तथापिपूर्वउक्तयुक्तिसेआत्मातोप्रथमअनुपादेयहीहै । यातेअन्यगतिकेअभावसेसुखमेंजिसप्रकारदुःखकासंबंधनहोतिसप्रकारपुरुषोंकोयत्नकरनायोग्यहै । औरदुःखकेसंबंधकाभयहोनेकरसुखकात्यागकरनायोग्यनहीं । जैसेकोईकहेकि “भिन्नुकोकेभयसेहमस्थालीनहींअधिश्रयणकरते”अर्थात्अन्नहीनहींपकाते।सोयहकथनयुक्तनहीं।क्योंकिअन्नरूपाकनहोनेसेमरणप्रसंगहोगा । तैसेहीजवदुःखआजायतोवहपरिहार करनेयोग्यहै तिसकेभयसेसुखकात्यागकरनाउचितनहीं । किंतुसुख उपादेयहीहै ॥ शंका ॥

❀ आत्मावाऽरेद्रष्टव्यःश्रोतव्योऽमंतव्यःनिदि

ध्यासतव्यः । व० उ० अ० (६)ब्रा० ५ कं०॥६ ❀

इसवाक्यमेंप्रथमग्रहणकियाजोआत्मदर्शनहै । तिसकाअनुवाद करकेश्रवणादिसाधनविधानकियेहैं । तिसवाक्यमेंआत्मज्ञानकोस्वतः फल रूपता तो प्रतीत नहीं होती ॥ क्योंकि वह पुरुषार्थरूप नहीं औरसुमुत्तुकोतिसमेंअधिकारीहोनेसेमोक्षहीतिसकाफलहै।यहकथनभी नहींसंभवता॥क्योंकिआत्माकेस्वरूपसेभिन्नमोक्षकाअभावहै।औरआ

त्मासेभिन्नमोक्षकोजन्यमानेहुए अनित्यपनेकीभीप्राप्तिहोगी। इसप्रकार श्रवणविधिकीअन्यथाऽनुपपत्तिसे आत्माहीपुरुषार्थरूपहै दुःखाभावादिकपुरुषार्थरूपनहीं॥ समाधान॥ आत्मासेभिन्नहीपुरुषार्थश्रवणादिसाधनोंकेअनुष्ठानकाफलहै। आत्मातिनसाधनोंकाफलनहीं। क्योंकितिसकोअजन्यहोनेसेअनित्यपनानहींहै। औरतिसकीअभावरूपताभीस्वीकारनहींहै। यातेआत्मासेभिन्न आत्यंतिकदुःखकीनिवृत्तिहीमोक्षहै। तिसकेअर्थहीश्रवणादिविधिहै। इससेश्रवणादिविधिआत्माकोपुरुषार्थरूपमाननेसेविनाअन्यथाही उपपन्नहै। इसप्रकारविषयानंदऔरदुःखाभावयहदोनोहीपरमपुरुषार्थरूपतासेउपादेयहैं ॥ आत्माउपादेयनहीं। वहअर्थसिद्धहुआ ॥ इति ॥ २५ ॥ पूर्वपक्षकेसंग्रहकाश्लोक ❀

दुःखाभावोनायमात्मा सुखंनापिसिद्ध्यते ।

मुमुक्षुभिरयंतस्मादुपादेयः कथंभवेत् ॥ १ ॥

दो० ॥ दुखाभावनहिआतमासुखपुन यहनहिहोय ।

तातेमुमुक्षुजननकरिउपादेय किमहोय ॥ १ ॥

* इतिपूर्वपक्ष ॥ ❀ अथसिद्धांत ❀

* पूर्वपक्षकेअनुवादपूर्वक आत्माकीपुरुषार्थ

रूपताका मंडन ❀

यहजोपूर्वपक्षीनेकहाथा । किआत्माअनुपादेयहै ॥ सुखतथा दुःखाभावसेअन्यहोनेसे । दुःखादिकोंकीन्याई । तिसमेंअन्यपदार्थोंमें जोअनुपसर्जनअर्थात्प्रधानहै । सोउपादेयहै । औरतिससेभिन्नको अनुपादेयताहै । औरआत्माभीसुखादिकोंका शेषहोनेसेउपसर्जनहै। यातेअनुपादेयहै । इसकथनको दृष्टिकरनेकेलियेसिद्धांतीइसमें

अनेकहेतुओंको संग्रहकरताहै ॥

मू०। यत्रात्मासर्ववस्तूनांयदर्थसकलंजगत् ।

आनंदाविधः स्वतंत्रोसावनादेयःकथंवद ॥२६॥

दो० ॥ सकलवस्तुकोआत्मा जाहिलियेजगहोय ।

आनदसिन्धुसुतंत्रसो ताहि त्यागकतहोय ॥ २७ ॥

टी०॥ हेवादिन्वहआत्माअनुपादेयहै यहलुमनेकैसेकथनकिया सोलुमकहो ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्इसअर्थमें कौनसीअनुपपत्तिहै जिसकारणसेपूर्वउक्तअनुमानसे यहअर्थसिद्धहैअर्थात् आत्माअनुपादेयहै ॥समाधान॥ हेवादिन्आत्माकोअनुपादेयत्वनहींसंभवता । क्योंकियहआत्मा “स्वतंत्रहै” अर्थात् अन्यसर्वपदार्थोंमेंप्रधानहै ॥ तैसेमानेहुएपूर्वउक्तअनुमानमेंबाधप्राप्तहुया । यहभावहै ॥ शंका ॥ आत्माकोसर्वसेप्रधानथापकैसेकहतेहो ॥ जिसकारणसेसर्वआत्मादिपदार्थसुखतथा दुःखाभावकेशेपहैं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्जिसकेअर्थसकलजगतहै सोआत्माहीप्रधानहै ॥ तात्पर्ययह । किजवसर्वहीजगत्आत्माकेअर्थहुया आत्माकाशेपहैतो जगतकाएकअंशरूपजो सुखतथादुःखाभावहैं । तिनकोआत्माका शेषहोनेमेंक्याहीकथन करनाहै । यहअर्थअभियुक्तपुरुषोंनेभीकहाहै ॥

(सुखंचपुरुषार्थत्वात्) अ०। सुखतथादुःखाभावआत्माकेअर्थ होनेसेआत्माकाशेपहैं ॥ इति ॥ औरआत्मासेभिन्नसकलपदार्थोंको ‘परार्थत्व’ अर्थात्आत्माकाशेपनाहै । इसप्रकारवैशेषकादिकभी कहतेहैं ॥ तिसकारणसेसर्वजगत्आत्माकेअर्थहै ॥ किंवा “सुखदुःखाभावेतरत्व” हेतुभीस्वरूपासिद्धहै ॥ क्योंकियहआत्मा (आनंदाविधः)

निरतिशयसुखकासमुद्रहै ॥ अर्थात्निरतश्चसुखस्वरूपहै ॥ अत्रतिस
 आत्माकीदुःखाभावरूपताकोकथनकरतेहैं ॥ औरजो घटादिकसर्व
 पदार्थोंका (आत्मा) स्वरूपहै ॥ तिससेभिन्नकरकेघटादिकोंकोकोईभी
 निरूपणनहींकरसकता ॥ इसीसेवहअसत्है ॥ तिससेभिन्नअसत्का
 जोअभाववहसत्स्वरूपहीहै ॥ जैसेकल्पितसर्पकाअभावसत्स्वरूपहै ॥
 औरअभावकेअभावको भावरूपताहीस्वीकारहै ॥ औरभावरूपसत्
 पदार्थहीआत्माहै । इसप्रकारकल्पितदुःखकाअभावआत्मारूपहोनेसे
 आत्माहीदुःखाभावरूपहै ॥ यातेकिसप्रकारतुम्हाराअनुमानस्वरूपा
 सिद्धनहीं किंतुस्वरूपासिद्धहै ॥ २६ ॥ अथकारिकाकेप्रथमपादका
 अर्थउपपादनकरतेहैं ॥

मू-यदन्यत्वस्तुतत्सर्वयद्भेदेनरशृंगवत् ।

सत्तासर्वपदार्थानामनादेयःकथंवद ॥२७॥

स्वैयाञ्छंद-तंतु भिन्न कीये जिम पटको रूपनकिंचित होवत भान ।
 मृदजन मृदसे होत किनारे तुच्छ रूपहोवत हियजान ।
 तिम यहविश्व आत्मते न्यारो वंध्यासूनतुल्य पहचान ।
 सकलपदारथकी जो सत्ताअनादेयसोकहविधगान ॥२८॥

टी० ॥जिसआत्मासेभिन्नरूपताकरवादीयोंनेजोघटादियदार्थस्वी
 कारकियेहैं।वहसर्वहीजिसआत्मासेभिन्नकियेहुएनशृंगकेसमानअसत्
 होजातेहैं ॥ इसीसेसर्वघटादिपदार्थोंकाआत्माहीवास्तवस्वरूपहै ।
 औरआत्माकोहीसर्वपदार्थोंकास्वस्वरूपमानेहुए अपनेस्वरूपविषयक
 सर्वकोही प्रेमहोताहै॥यातेवहआत्माहीपुरुषार्थरूपतासेउपादेयहै। वह
 अनुपादेयतुमकिसप्रकारकहतेहो ॥२७॥ अथकारिकामेंकथनकीयेहुए

“स्वतंत्र” पदकाव्याख्यानकरतेहैं ॥

मृ०—यद्वशेप्राणिनःसर्वेब्रह्मादयःकृमयश्चये ।

ईशानःसर्वभूतानामनादेयःकथंभवेत् ॥२८॥

यच्चक्षुःसर्वभूतानांमनसोयन्मनोविदुः ।

यज्ज्योतिर्ज्योतिर्पादेवनोपादेयःकथंविभुः॥२९

स्वै—ब्रह्मातेकृमिलौ जग जेतो जाके वशमें वरतेनीत ।

सर्वविश्वकोईशयहैजोताकोत्यागनकौनेरीत ॥

सर्वभूतकोचक्षुजोहैमनकोमनश्रुतिभापेगीत ॥

ज्योतिनकाज्योतीहैजोऊअनादेयसोकिसविधकीत ॥२९॥

टी० ॥ शंका ॥ जोसत्तास्फूर्ति देनेवालाहो वह अधिष्ठान होता है ॥ अन्यनहीं । और ईश्वरही सर्वकोसत्तास्फूर्ति देताहै ।

याते वही अधिष्ठानहै आत्मा अधिष्ठान नहीं । इस से आत्मा घटादिपदार्थोंकोकैसेसत्तास्फूर्ति देनेवालाहोगा ॥ समाधान ॥

हेवादिन्आत्माहीअज्ञानके वशसेईश्वररूपताकोप्राप्तहोताहै । इसी अभिप्रायसेयहकहाहै । ब्रह्मासेलेकरकृमिपर्यन्तसर्वप्राणीजिसके

आधीनवर्ततेहैं । औरसर्वभूतोंकाजोनिर्गन्ताहै वहआत्माकैसेअनुपादे यहोसकताहै किंतुनहींहोसकता ॥ २८ ॥ अबसत्तास्फूर्तिप्रदत्वरूप

अधिष्ठानताकेस्फुटकरनेकेलिये तिसआत्माकी प्रकाशकरूपताको कहतेहैं । औरजोआत्मासकलभूतोंका नेत्रअर्थात्प्रकाशकहै । और

मनकाभीजोमनअर्थात्सान्निरूपहै ऐसेजिसकोब्रह्मवेत्ताजानतेहैं । औरसूर्यादिकज्योतियोंकाभी ज्योतिअर्थात्प्रकाशकहै । वहस्वप्रका

शव्यापकआत्माकैसे उपादेयनहींकिंतुवही उपादेयहै (२९) अब

कारिकोमेंजोआनंदाब्धिपदहै तिसकीव्याख्याकरतेहैं ।

मू०॥ मोदप्रमोदपक्षाभ्या मानंदात्मातमोगतः।

जीवयत्याखिलाँल्लोकान्नोपादेयःस्वयंकुतः३०

यस्यानंदसमुद्रस्य लेशमात्रंजगतगतम् ।

प्रसृतं ब्रह्मलोकादौ सुखाब्धिकःपरित्यजेत्॥३१।

स्वै०॥ तमउपाधियुतहोकर आत्मप्रिपुनमोदप्रमोदहहोय ।

अखिललोकजीवावनकर्ता ताकोत्यागकहोकिमहोय ॥

जासुखसागरकीइकविंदू पसरीतीनलोकमेंजोय ।

ब्रह्मलोकादिमेंपुनपसरी अससुखसागरतजेनकोय ॥३०॥

टी० ॥ आनंदस्वरूपआत्माही अज्ञानउपहितहुआप्रियऔरमोदतथाप्रमोदादि रूपशिरतथा पर्क्षादिकल्पनाकोप्राप्तहोताहै । यहांइष्टवस्तुकेदर्शनसेजोआनंद होताहैतिसकोप्रियकहतेहैं । औरइष्टवस्तुकेलाभसेजोआनंदहोताहै । तिसकोमोदकहतेहैं । औरइष्टवस्तुकेभोगसेजोआनंदहोताहै । तिसकोप्रमोदकहतेहैं । सामान्यसुखकोआनंदकहतेहैं । औरजोआत्मासर्वप्राणिमात्रको स्वस्वरूपसुखकीमात्राको देकरजीवावताहै ॥ अर्थात्सुखयुक्तकरताहै वहआपअनुपादेयकैसेहोसकताहै ॥ ३० ॥ इसकारिकाकेउत्तरार्द्धका अर्थहीउत्तरकारिका मेंस्पष्टकरतेहैं । जिसआत्मानंदरूपसमुद्रका लेशमात्रआनन्दसकल जगत्मेंअनुस्यूतहै । औरब्रह्मलोकादिकोंमेंजो आनंदलेशव्याप्त होरहाहै । ऐसेआनंदकेसमुद्रआत्माकोकौन बुद्धिमानत्यागकरसकता हैकिंतुनहींकरसकता॥३१॥अथआत्माकीसुखरूपतामेंथौरहेलुकहतेहैं।

मू०॥ हैरग्यगर्भमैश्वर्ययास्मिन् दृष्टे तृणायते ।

सीमासर्वपुमर्थानामपुमर्थःकथंभवेत् ॥ ३२ ॥

यत्कामाब्रह्मचर्य्यत इंद्रादयःप्राप्तसंपदः ।

स्वस्वभोगंत्यजंत्येवमपुमर्थःकथंनृणाम् ॥ ३३ ॥

स्वै-जिसकेदेखेब्रह्मलोकगतजोऐश्वर्य्यसुतृणावत्होय ।

सवपुरुषार्थकीजोअवधी कहोदुःखतामेंकिमुहोय ।

धारपुरंदरजांकीवाच्छास्वर्गभोगदीनेसवसोय ।

ब्रह्मचर्य्यतनधारनकीनो कहोदुःखमेंकैसे होय ॥३१॥

टी० ॥ जिसआनंदस्वरूपआत्माकेसाक्षात्कारहुएहिरण्यगर्भ

कीविभूतिशुष्कतृणकेसमानभासतीहै । औरजोसर्वपुरुषार्थोंकीअवधि

है ॥ वहआत्माअपुरुषार्थरूपकैसेहोसकताहै किंतुनहींहोसकता ३२॥

शंका ॥ आत्मासकलपदार्थोंकीअवधिहै ॥ यहआपनेकैसेकहा ॥

क्योंकि (इदिपरमैश्वर्य्ये) अ० इदिधातुपरमैश्वर्य्यार्थमेंहै ॥ इसपाण

निमुनिकीस्मृतिसेइन्द्रादिकोंकीसंपदाहीपरमपुरुषार्थरूपहै आत्मापरम

पुरुषार्थरूपनहीं ॥ तात्पर्य्ययह इदिधातुसेइन्द्रशब्दसिद्धहोताहै।इसलिये

परमऐश्वर्य्यवान्इन्द्रशब्दकाअर्थहै। यातेतिनकीसंपदाको परमपुरुषार्थ

रूपताकाकथनसंभवताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिनजिसआत्माकी

कामनाकरकेइन्द्रादिकमहान्संपदाकीप्राप्तिवालेहुएभीब्रह्मचर्य्यकोधारण

करतेहुएअपनेअपनेभोगोंको त्यागतेभये यहवार्त्ता

मघवान्प्रजापतौब्रह्मचर्य्यमुवासा। छां०अ०(८)खं०(१०)कं०(३)

अ०॥इन्द्रब्रह्माजीकेसमीपब्रह्मचर्य्यव्रतकोधारणकरनिवासकरता

भया । इसश्रुतिमेंप्रसिद्धहै । जबइन्द्रादिकभीतिसआत्माकोपरमपुरु

षार्थरूपमानतेहैं।तोमनुष्योंकोयहआत्माअपुरुषार्थरूपकैसेहोसकताहै

किंतु नहीं हो सकता ॥३३॥ शंका ॥ यदि आत्मा ही परम पुरुषार्थरूप है । तो स्वतः प्राप्तिस आत्माको त्याग कर स्वर्गादिसुखके अर्थसाधनों का विधान वेदने क्यों किया है । इससे प्रतीत होता है कि आत्मा पुरुषार्थरूप नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यहशंका भी नहीं संभवती क्यों कि—

सू० । यद्विदृक्षाफलाः सर्वा वैदिक्यो विविधा क्रियाः ।

यागाद्याविहितास्तस्मिन्नुपेक्षावदते कथम् ॥३४॥

यद्वदृष्टिमात्रतः सर्वाः कामाद्याः दुःखसूमयः ।

विनश्यन्ति क्षणेनासावुपादेयः कथं नते ॥३५॥

स्वै० ॥ वेदविहित शुभकर्मनको फल जां हि दशकीप्यासाचीन ।

ताके विपेत्यागकी इच्छा कहो कौन करसके प्रवीन ॥

कामादिकसब दुखके कारन जांके दर्शन होवत छीन ।

सो आनंदस्वरूपी आत्म उपादेयतुम कथं नकीन ॥ ३२ ॥

टी० ॥ जिस आत्माके दर्शनकी इच्छाही नाना प्रकारकी वेदोक्त सर्वयागादिविहित क्रियाओंका फल है । तो तिस आत्मामें तुमको उपेक्षा बुद्धिकैसे हुई है । यह तुम कहो । तात्पर्य यह कि—

* तमेतं वेदानुवचनेन ❀ (बृ० उ० अ० ६ ब्रा० ४ क० २२)

इत्यादि श्रुतिकेवलसे विहित यागादिक्रियाका अंतस्करणाकी शुद्धिद्वारा आत्मजिज्ञासाही फल है । स्वर्गादितिसक्रियाका फल नहीं ॥ और स्वर्गादिकोंका जो फलरूपतासे श्रवण है वह अज्ञानी पुरुषोंको प्रोचन करनेके लिये है । अर्थात् तिनसे निपिद्धकर्मोंका त्याग कराकर शुभकर्मोंमें प्रवृत्तिके अर्थ वेदतिनको स्वर्गादिकोंका लोभ दिखलाता है ॥ यदि ऐसे न माने ॥ तो सर्वप्रकारसे सत्यवादी और सकल अर्थका प्रकाशक

जो वेदवह चीणता तथा अनित्यत्वादिदोषयुक्त होने से अपुरुषार्थरूप जो स्वर्गादिति नका उद्देश्य करके यागादिकोंको कैसे विधान करेगा ॥ किंतु नहीं करेगा ॥ तिसकारणसे अज्ञानोंके प्ररोचन अर्थही स्वर्गादिकोंका श्रवण है फलके अर्थ नहीं। याते कोई विरोध नहीं ॥३४॥ शंका ॥ स्वर्गादिकोंका श्रवण अज्ञानोंकी कर्माँमें रुचिकरानेके लिये है यह कथन अयुक्त है। क्योंकि आत्मजिज्ञासाको तो फलपना अंगीकार नहीं। और आत्मा भी यागादिक्रियाका फल नहीं। क्योंकि वह अजन्य है। और आत्माका अनुभव भी फलरूप नहीं। क्योंकि तिसको मोक्षका साधन होनेसे स्वतः फलपनेका अभाव है। और आत्मजिज्ञासाका भी ज्ञानमात्र ही फल है वह स्वतः आपफलरूप नहीं। इस प्रकार आत्मादिसर्व पदार्थोंको फलपनेका अभाव होनेसे परिशेषसे स्वर्गादिकही यागादिक्रियाका फल हैं। अन्य नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् ॥

❀ यतो ज्ञानमज्ञानस्यैव निवर्तकम् ❀

अ० ॥ जिसकारणसे ज्ञान अज्ञानमात्रका ही निवर्तक है। इस वचनसे ब्रह्मज्ञानसे अज्ञानके निवृत्त हुए अज्ञानमूलक जो कामादिक दुःखके कारण वह भी सकल निवृत्त हो जाते हैं। तिनकी निवृत्तिको आत्मरूप होनेसे आत्मा ही परमपुरुषार्थरूप है वह तुझको कैसे उपादेय नहीं ॥ याते स्वर्गादिकोंका श्रवण अज्ञानोंके प्ररोचन अर्थही है। फलार्थ नहीं ॥३५ पूर्व (मोदप्रमोदपक्षाभ्यां) इसकारिकामें आत्माकी सुखरूपतामें-

❀ तस्य प्रियमेव शिरः तै० उ० व० ब्र० अनु० ५ ❀

अ० ॥ तिस आनंदमयपक्षिरूप आत्माका प्रियवृत्तिरूप ही शिर है इत्यादि श्रुतिवाक्यप्रमाणरूपतासे कथन किये हैं। अब सुषुप्तिसे उठे हुए

पुरुषका (सुखमहमस्वाप्सम्) इसपरामर्शकरसिद्ध जोसुपुप्तिका लीन
अनुभववहभीआत्माकीसुखरूपतामेंप्रमाणहै यहकहतेहैं ॥

मू० ॥ अदलादरूपतायस्यसुपुप्तेसर्वसाक्षिकी ।

तत्रोपेक्षाभवेद्यस्यतदन्यःस्यात्पशुःकथम् ॥३६॥

स्वै० ॥ सुखसरूपताजांकीसबको सुपपतिमाहिहोतहैभान ।

तांकोत्यागकरनजोचाहत तांतेअधिकपशुकोथान ।

याते परमानंद रूपमें परंप्रेम को नीके ठान ।

हवैसाक्षात रिदेमोतवही नाशहोतसंसृतदुखखान ॥३३॥

टी० ॥ हेवादिन् जिसआत्माकीआनंदरूपतासुपुप्तिमेंसर्वप्राणि
योंकेअनुभवसिद्धहै । तिसआनंदसमुद्रमेंजिसकोउपेक्षाबुद्धिहुईहै ॥

तिससे अधिक और कौनपशुहै ॥ अब आत्माकी पुरुषार्थरूपताको
विस्तारसेनिरूपणकरतेहैं ॥

* अथआत्माकोसर्वशेषित्वनिरूपणा *

पूर्वपक्षमेंआत्माविषयक अनुपादेयताकी सिद्धिकेलिये तिसका
प्रतियोगिरूपताकरजोवादीनेइतरानुपसर्जनत्वरूपउपादेयत्व निरूपण
कियाथा । वहहमकोभीस्वीकारहै । यद्यपिएसामानेहुएपूर्वउक्तअनु
मानमेंअनुपादेयत्वसिद्धहुआ । तथापिवहइतरानुपसर्जनत्वरूपउपा
देत्व आत्मामें ही विश्रांतिको प्राप्त होताहै ॥ अन्यमेंनहीं इसीअर्थ
कोस्पष्टकरतेहैं । स्रग्वनितादिक विषयजो सुखके साधनहैं ॥
प्रथमवहविषयसुखकेशेपहैं । औरसर्पकंटकादिकोंकाजोपरिहारहै वह
दुःखाभावकासाधनहोनेसेदुःखाभावकारोपहै ॥ औरसुखतथादुःखा
भावआत्माकेअर्थहोनेसेआत्माकेशेपहैं । यातेपरिशेषसेआत्माहीसर्वमें

प्रधानहैसुखादिकनहीं ॥ शंका ॥ यदिआत्माहीपुरुषार्थरूपहै । तो सुखादिकोंमेंपुरुषार्थत्वकाकथनक्योंहोताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आत्माकाशेषहोनेसेहीसुखादिकोंमेंपुरुषार्थत्वकाकथनहै । स्वतःतिनमेंपुरुषार्थत्वरूपताकाकथननहीं । तिसकारणसेआत्माहीपरमपुरुषार्थरूपहै यहसिद्धहुया । औरआत्माकोपुरुषार्थत्वकेकथनसेअनुपादेयत्वकासाधक अनुमान वाधितहै यहभाव सूचनकिया ॥ शंका ॥ आत्माकोसुखादिकोंका अधिकरणहोनेसे सुखतथादुःखाभावके प्रति तिसकोकारकपनाहै।इसमेंसुखादिकोंकाशेषत्वहीआत्मामेंयुक्तहै।विपरीत पनायुक्तनहींअर्थात्आत्माशेषिनहींहोसकता ॥ समाधान ॥

✽अथआत्मामेंसुखतथादुःखाभावरूपताकानिरूपण✽

हेवादिन्भेदमेंहीअधारऔआधेयभावहोताहै।औरसुखादिकोंका आत्मासे भेदनहींहै। क्योंकिसुख तथादुःखाभावस्वरूपहीआत्माहै । आत्मातथासुखादिकोंकेभेदकाअभावहोनेसे आत्मातिनकाशेषकैसेहो सकताहै। और“सुखतथादुःखाभावेतरत्व” रूपहेतुभी आत्मारूपपक्षमें नहींवर्तता । यातेपूर्वउक्तअनुमानस्वरूपाऽसिद्धहै ॥ शंका ॥ आत्मा सर्वपदार्थोंकोसत्ताफ्रित्तिदेनेवालाहै । वहआपअसत्स्वरूपअर्थात्दुःखा भावरूपकैसेहोसकताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्भावरूपआत्माको दुःखाभावस्वरूपताकीअनुपपत्तिनहीं । क्योंकिदुःखआत्मामेंकल्पित है । इसीसेतिसकाअभावआत्मासेअतिरिक्तनहीं । यहपूर्वउक्तदोषत्व होसकताहै।यदिदुःखआत्मामेंपारमार्थिकहो।सोऐसेतोहैनहीं।किंतुदुःख आत्मामेंआरोपितहै ॥शंका॥ दुःखएकयुगहै । औरवहअवाधितहोने सेकल्पितनहीं ।किंवा।आरोपमेंआरोप्यतथाअधिष्ठानकासादृश्यकारण

देखा है । और आत्मा में तिस दुःख का सादृश्य नहीं । क्योंकि वह दोनों ही निरख्यवहै । किंवा । भ्रमकाल में अधिष्ठान विशेषरूपसे अज्ञात कहने योग्य है । और यहाँ प्रकरण में दुःख की प्रतीतिकाल में आत्मा विशेषरूपसे अज्ञात नहीं ॥ किंतु “अहमस्मि” इस प्रकार की तिस की विशेषरूपसे प्रतीति होती है । याते दुःख का आत्मा में आरोप कैसे हो सकता है किंतु नहीं हो सकता समाधान ॥ हेवादि न्यह पुरुष अपने आत्मा में दुःखों के समूह का केवल आरोप ही करता है ॥ यद्यपि आरोप का हेतु आत्मा तथा दुःख का सादृश्य यहाँ नहीं । तथापि आरोप से व्यभिचारी जो सादृश्य तिस से क्या प्रयोजन है ॥ शंका ॥ यदि सादृश्य आरोप में कारण नहीं । तो आरोप का कौन कारण है । और यदि अज्ञान मात्र को दुःख के आरोप में असाधारण कारण कहोगे । तो सुषुप्ति में भी दुःख का आरोप हुआ चाहिये । क्योंकि अज्ञान तहाँ भी विद्यमान है ॥ समाधान ॥ हेवादि नशरीरादि द्वारा ही अज्ञान को दुःख की कारणता है सो दिखलाते हैं ॥ अज्ञान रूपी एक सर्प है । और रज गुण तथा तम गुण की प्रधानता ही तिस का फल अर्थात् मुख है । तिस में देहादि अभिमान लक्षण विषय दाढ़ें हैं ॥ और तिनके अग्रवर्ति राग द्वेष रूपी हलाहल विष की ज्वाला है । तिस विषके प्रवेश से जिसकी स्वरूप दृष्टि प्रतिबद्ध होगई है ॥ वह पुरुष स्वस्वरूप आत्मा में रौंखादि अनेक भेदों का भिन्न जो नरकों का समूह तिससे उत्पन्न हुए दुःखों के समुदाय को केवल आरोप ही करता है जैसे तमरहित आदित्य भगवान् में प्रतिबद्ध दृष्टि वाले उल्लूकादिक तम का केवल आरोप करते हैं ॥ शंका ॥ जो वस्तु जिसमें वास्तवसे न हो वह तिसमें आरोप करने योग्य है और दुःख को तो गुणरूपता होने से एक आत्मा में ही समवेत पना है । याते तिस आत्मा में ही

तिसदुःखका आरोपकैसेहो सकताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
गुणरूपहुआभी दुःखआत्मामें समवेत नहीं । क्योंकि “ मेरेपाद
मेंदुःखहै” ॥ इसप्रतीतिसेपादआश्रित दुःखप्रतीतहोताहै ॥ अथवा
दुःखकोअंतस्करणाका परिणामहोनेसे वहअंतस्करणमेंसमवेतहै ॥
यातेआत्मामेंदुःखका अत्यंतभावहै । औरआत्मामेंदुःखकासमवाय
मानेहुए (केवलोर्निर्गुणश्च) इसश्रुतिकविरोधभीप्राप्तहोगा। तिसी
कारणसे दुःखाऽत्यंतभावके अधिकरण आत्मामें अज्ञानके वशसे
हीदुःखकाआरोपहोताहै यहकथनसमीचीनहै ॥ शंका ॥ यद्यपिपूर्व
उक्तप्रकारसेदुःखआरोपितहो ॥ तथापिआत्मातिसदुःखकाअभावरूप
किसकारणसेहै । क्योंकिवहभावरूपहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्कल्पित
वस्तुप्रतियोगिकजोअभावहोताहै वहअधिष्ठानसे भिन्ननहींहोता ॥
क्योंकि अधिष्ठानसे अभिन्नरूपताकरही आरोपित प्रतीतहोताहै ॥
औरअधिष्ठानरूपताकल्पितनहीं है । तिसकोसत्यहोनेसेअकल्पितपना
है ॥ शंका ॥ यदिदुःखादिजगत् अधिष्ठानरूपतासेकल्पितनहीं तो
किसरूपतासेवहकल्पितहै ॥ समाधान ॥ आत्मासेभिन्नअनात्माजो
दुःखादिहैतत्वरूपतासेहीजगत्कल्पितहै ॥ शंका ॥ सत्वरूपआत्मासेभिन्न
होनेकरदुःखादिआरोपितहों। परन्तुतिससेक्यासिद्धहुआ ॥ समाधान ॥
हेवादिन्सत्वरूपआत्मासेभिन्नकीयेहुए दुःखादिकोंको असत्वरूपता
सिद्धहोतीहै ॥ शंका ॥ दुःखादिअसत्वरूपहों तिससेआपकोक्या
लाभहुआ ॥ समाधान ॥ हेवादिन्अभावकाअभावभावरूपहोताहै ।
इससेअसत्दुःखकाअभावसत्आत्मरूपहोताहै । यहअर्थहमकोलाभ
हुआ ॥ शंका ॥ दुःखाभावरूपताकरआत्माकोपरमपुरुषार्थरूपता

सिद्धकियेहुएआपकोअपसिद्धांतप्राप्तहोगा ॥ अर्थात्आपकेसिद्धांत
कीहानिहोगी । क्योंकिसुखरूपतासेहीतिसआत्माकोपुरुषार्थरूपता
आपमानतेहो ॥ समाधान ॥ (तुष्यतुदुर्जनः)इसन्यायसेसिद्धांत
केसाथविरोधनहींआता । क्योंकिजोवादीदुःखाभावकोहीपरमपुरुषार्थ
रूपमानतेहैं। तिनकोभीआत्माहीपरमपुरुषार्थरूपमाननाचाहिये।जिस
कारणसेवहआत्माहीदुःखाभावरूपहै ॥ शंका ॥ सकलसंसारकी
निवृत्तिकानामपरमपुरुषार्थहै । केवलदुःखमात्रकीनिवृत्तिकानामपरम
पुरुषार्थनहींकहसकते । क्योंकिवहसंसारकाएकदेशहै ॥ समाधान ॥
हेवादिन्तिसदुःखकीनिवृत्तिकोही सकलसंसारकी निवृत्तिरूपताहै ।
क्योंकिएकविंशतिप्रकारकेदुःखनकीनिवृत्तिपरमपुरुषार्थरूपमानीहै ॥
औरसंसारभीएकविंशतिदुःखनसे भिन्ननहीं । किंतुएतत्परूपहीसंसार
है । यातेकोईविरोधनहीं ॥ शंका ॥ यदिआत्माहीदुःखाभावरूपहै ।
तोतिसकोअकार्यताहोनेसेअसाध्यताहै । यातेतिसकोपुरुषार्थरूपता
कासंभवकैसेहै । क्योंकिपुरुषतिसीअर्थकीवाञ्छाकरताहैजोअसिद्धहो
सिद्धपदार्थकीकोईभीवाञ्छानहींकरता ॥ समाधान ॥ हेवादिन्साध्य
त्वपुरुषार्थताकाप्रयोजकनहीं।क्योंकिसाध्यपदार्थकोतीर्णतादिदोपयुक्त
होनेसेहेयताहै । औरभाष्यकारश्रीशंकराचार्योंनेसाध्यरूपतासेपुरुषार्थ
पनेकानिषेधभीकियाहै।यातेआत्माहीपुरुषार्थरूपहै॥शंका ॥ आत्मस्व
रूपदुःखाभावकोअनादिहोनेसेस्वतःसिद्धताहै । तिसकीसिद्धिकेलिये
मुमुक्षुपुरुषोंकीसाधनोंमेंप्रवृत्तिनहींहोगी । क्योंकिसिद्धपदार्थकेसाधन
कीअयोग्यताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्मोक्षकाउद्देशकरकेमुमुक्षु
पुरुषसाधनोंमेंप्रवृत्तहोताहैयहतुमकहतेहो।अथवाब्रह्मात्माकेसाक्षात्कार

का उद्देश करके प्रवृत्त होता है । प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि श्रवणा दिसाक्षात् मोक्षके साधन हैं । इस अर्थमें कोई प्रमाण नहीं । और द्वितीय पक्षमें भी यह विचार कर्तव्य है । क्या वह साक्षात्कार सिद्ध है वा नहीं । प्रथम पक्ष कहो तो हमको भी स्वीकार है । क्योंकि ब्रह्मसाक्षात्कारसे अनंतर साधनोंमें प्रवृत्ति नहीं संभवती । जिस कारणसे साधनोंका फल ब्रह्मसाक्षात्कार तिसको प्राप्त है । और यदि द्वितीय पक्ष कहो तो साधनोंमें प्रवृत्ति सफल है । क्योंकि प्रथम ब्रह्मसाक्षात्कार असिद्ध है । जव पुरुष साधनोंमें प्रवृत्त होता है । तब सकल दुःखोंका अभाव रूप जो ब्रह्मात्मा तिसका साक्षात्कार सिद्ध होता है । तिस कारणसे साधनोंमें प्रवृत्ति फलवाली है ॥ शंका ॥ आत्मसाक्षात्कार के होने से मुमुक्षु की प्रवृत्ति फलवाली है ॥ यह जो सिद्धांतीने कहा सो असंगत है । क्योंकि वह साक्षात्कार वृत्ति रूप है । अथवा चैतन्य रूप है । यह कहने योग्य है । यदि प्रथम पक्ष कहो तो तिसको फलपनेकी अनुपपत्ति है । क्योंकि वृत्तिको आरोपित होने कर मिथ्यापना है । और तिसको सत्यमाने हुए द्वैतापत्ति भी होगी । और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता । क्योंकि स्वरूप चैतन्यको अजन्य होनेकर फलपनेका असंभव है । इस प्रकार आत्माकी न्याईज्ञान भी साध्य नहीं । याते साधनोंमें मुमुक्षुकी प्रवृत्ति नहीं संभवती ॥ समाधान ॥ हेवादिन् वृत्तिमिथ्या है इस प्रकारका ज्ञान क्या वाधके उत्तरकालमें होता है । अथवा वाधसे पूर्वकालमें होता है । अंत्यपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि यह परामर्शज्ञानसे उत्तरकालमें होता है । अप्रमात्वको परतो ग्राह्यता होनेसे वाधसे विना तिसका मिथ्यात्व ग्रहण करनेको कोई भी समर्थन नहीं हो सकता । और प्रथम पक्षमें तो हमारे इष्टकी सिद्धि है ॥ क्योंकि वाधसे उत्तर

“वृत्तिज्ञानमिथ्याहै” ऐसा परामर्श हम भी मानते हैं। और वृत्तिज्ञान को स्वतः फलपान नहीं किंतु अज्ञान का निवर्तक होने से तिसको फलपना है। सो अज्ञान का निवर्तक पना मिथ्यात्व ग्रहण से प्रथम ही तिसमें सिद्ध है। पश्चात् तिसमें मिथ्यात्व का ग्रहण अनुपयोगी है ॥ शंका ॥ दुःखाभाव भी केवल पुरुषार्थरूपन ही है। क्योंकि दुःखाभाव के नहुए अर्थात् दुःख के नहुए भी पाका दिक्रियामें भोजनजन्य सुखके लोभ से पुरुषकी प्रवृत्ति देखी जाती है। और दुःखाभावत्व पुरुषार्थत्व का प्रयोजक अर्थात् अथच्छेदक भी नहीं। क्योंकि सुखमें व्यभिचार है ॥ अर्थात् सुखमें दुःखाभावत्व के अभावहुए भी पुरुषार्थ पना विद्यमान है। और जो न्यून अधिक देशमें वृत्तिन हो तिसीको प्रयोजक कहते हैं। समाधान ॥ हेवादिन् दुःखाभावक्या? पुरुषार्थही नहीं है यह तुम कहते हो। अथवा दुःखाभावसे भिन्न सुख भी पुरुषार्थ है यह तुम कहते हो। प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि दुःखाभाव का उद्देश करके शिष्ट पुरुषों की प्रवृत्ति देखी जाती है। इस कारण से दुःखाभाव भी पुरुषार्थरूप है। और दुःखाभावसे भिन्न सुख भी पुरुषार्थ है। यदि यह द्वितीय पक्ष कहो। तो सुखस्वरूपता आत्मामें सुखेन ही संपादन हो सकती है। ॥ क्योंकि आत्मा को ही परमप्रेम का विषय होने कर सुखरूपता भी तिसमें विद्यमान है। याते सर्व प्रकारसे आत्मा ही परमपुरुषार्थरूप है। ॥ शंका ॥ सुख एक गुण है। इस प्रकार वैशेषिकादिक मानते हैं। वह गुणद्रव्यरूप आत्मा का स्वरूप कैसे हो सकता है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आत्मा की सुखस्वरूपतामें विवाद नहीं। ॥ क्योंकि परमप्रेम की विषय तारूप हेतु से तिस आत्मामें सुखरूपता की सिद्धि है। और जो सुखस्वरूप नहीं तिसमें परमप्रेम की विषयता भी देखनेमें नहीं आती ॥ शंका ॥

* आत्मानसुखरूपः अजन्यत्वात् यन्नैवंतन्नैवं यथाविषयसुखम् *

इस अनुमानसे यात्मा सुखस्वरूपनहीं । और सुखको जन्य होनेसे अजन्य यात्माके साथ तिसका अभेद भी नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादि नृइस तुम्हारे अनुमानमें व्यतिरेक व्याप्ति नहीं संभवती । क्योंकि यहां साध्याभावके विद्यमान हुए भी हेतुका अभावनहीं है । यर्थ यह कि विषयसुखमें असुखत्वाभाव तो वर्तता है परन्तु अजन्यत्वाभावनहीं वर्तता याते अजन्यत्व हेतुव्याप्यत्वाऽसिद्ध होनेसे दुष्ट है । इस प्रकार सुखको अजन्य होनेसे अजन्य यात्माके साथ तिसका अभेद संभवता है । और पूर्व पक्षमें सुखविषयक जन्यपनेकी सिद्धिके लिये वादीने जो “सुखं मे जातम्” यह प्रतीतिकथन की थी । वह भी अन्य प्रकारसे ही संभव हो सकती है । तिसीको दिखलाते हैं । पुरायकमोके वशसे यात्मस्वरूपसुखका अभिव्यंजक जो अंतस्करणाकी वृत्ति है । तिसकी उत्पत्तिको वह प्रतीतिविषय करती है । कोई यात्मस्वरूपसुखकी उत्पत्तिको वह प्रतीतिविषय नहीं करती । याते प्रतीतिको अन्य प्रकारसे उपपन्न होनेकर सुखकी उत्पत्ति तिससे नहीं सिद्ध हो सकती । और यह जो वादीने पूर्व कहा था कि यात्मा और सुखका अभेद माने हुए “अहं सुखम्” ऐसी प्रतीति हुई चाहिये । सो ऐसी प्रतीति तो होती नहीं । किंतु तिमकी विरोधिनी “अहं सुखी” इस प्रकारकी भेद प्रतीति होती है । सो यह कथन भी असंगत है । क्योंकि सुख तथा आत्माका अभेद हुए प्रतीति भी अभेदको विषय करनेवाली होगी । यह जो आपादन है । सो क्या ? विद्वान्के प्रति है । यथवा अज्ञानीके प्रति है । प्रथम पक्षमें तो हम को भी इष्टापत्ति है । क्योंकि विद्वान्को “अहं सुखम्” यह प्रतीति हम भी

स्वीकार करते हैं ॥ और द्वितीयपक्षमें तो अज्ञान अवस्थामें आत्मस्वरूप को अविद्याकरा वृत्त होनेकर अस्फुरण होनेसे कल्पित देहादिकोंमें आत्म अभिमान है इस कारणसे देहादिकोंको सुखकी अधिकरणता होनेकर भिन्न रूपतासे प्रतीति होनेसे तिनका अभेद प्रतिपादन अयोग्य है । तहां आत्मा सुखका शेषरूपकर ही स्फुरण होता है । अज्ञानीजनोंकी भ्रान्त प्रतीतिके कथनसे सुख तथा आत्माकी भेद प्रतीतिका विरोध भी निरास कर दिया । किंवा । जोवादी सुखको गुण कहते हैं । और आत्माको गुणी कहते हैं । वह भी अज्ञानके वश हुए ही कहते हैं । तिनका कथन भी यथार्थ नहीं है । क्योंकि आत्माको निर्गुण कहनेवाली श्रुतिका विरोध तिनको प्राप्त होता है । इसी से ज्ञानसुखादि गुणवाला आत्मा है इस प्रकार तार्किक पुरुष भ्रान्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ शंका ॥ पूर्व उक्त युक्तिसे सुखमें जो जन्यपनेकी प्रतीति है वह अन्यथा उपपन्न है । अर्थात् सुखका अभिव्यंजक जो वृत्तितिसकी उत्पत्तिको विषय करती है याते आत्मा सुखस्वरूप है ऐसा माननेसे दुःखरूपता भी आत्मामें सिद्ध होगी । क्योंकि दुःखमें जो जन्यताकी प्रतीति है । तिसकी भी अन्यप्रकारसे सिद्धि है सो दिखलाते हैं । पापकर्मोंके अनुसार आत्मस्वरूप दुःखका अभिव्यंजक जो वृत्ति है । तिसकी उत्पत्तिको विषय करनेसे “दुःखमे जातं” यह प्रतीति अन्यथा सिद्ध है । इत्यादियुक्तिको तुल्य होनेसे दुःखरूपता भी आत्माको हुई चाहिये ॥ समाधान ॥ हेवादिन्सुषुप्ति आदिक अवस्थाओंमें दुःखका व्यभिचार होनेसे अव्यभिचारि आत्मस्वरूपता दुःखमें नहीं संभवती ॥ किंवा ॥ केवल युक्तिवस्तुका साधक नहीं किंतु प्रमाणमूलक युक्तिवस्तुका साधक है । और आत्माकी दुःखरूपतामें कोई प्रमाण नहीं है । याते युक्ति या भासरूप है ॥ और केवल मूलप्रमाणके अभावसे ही युक्तिको अभास

पनानहीं ॥ किंतु प्रियोवित्तात् अ०॥ आत्माधनादिसर्वपदार्थों से प्रिय है । इत्यादि श्रुति जो आत्मा की सुखरूपता को कथन करती है तिसका विरोध भी प्राप्त होता है । याते आत्मा दुःखरूप नहीं किंतु सुखस्वरूप है । शंका सुखत्वधर्म भी पुरुषार्थत्वका प्रयोजक नहीं । क्योंकि दुःखाभावमें तिसका व्यभिचार अर्थात् अभाव है ॥ और तैसे ही दुःखाभावत्वधर्म भी पुरुषार्थत्वका प्रयोजक नहीं । क्योंकि सुखमें तिसका व्यभिचार है और दोनों धर्म भी पुरुषार्थत्वके प्रयोजक नहीं संभवते ॥ क्योंकि दोनों को प्रयोजक माननेमें गौरव दोष होता है ॥ और दोनों को प्रयोजक माननेसे पुरुषार्थशब्दको अनेक अर्थत्व प्रसंग भी होगा । तिससे दोनों को पुरुषार्थत्वका अर्थ संभव है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आत्मत्व ही पुरुषार्थत्वका प्रयोजक है । और वह सुख तथा दुःखाभाव इन दोनोंमें अनुगत है । इस प्रकार आत्मा को सुख तथा दुःखाभावरूप माने हुए आत्मत्व ही परम पुरुषार्थत्वका प्रयोजक है ॥ ऐसामाने हुए आत्मा की अनुपादेयताके साधक अनुमानमें "पक्षेतरत्व" उपाधि जो हमने पूर्व कहा था वह "वाधोन्नीत" अर्थात् वाधकर उद्भावित है यह सूचना किया हुआ अर्थ भी जान लेना ॥ और इस प्रकार आत्मा को पुरुषार्थरूप माने हुए सांसारिक सुखको त्याग करकेवल आत्मलाभका उद्देश करके प्रवृत्त हुए जो सुमुक्त हैं तिनको "लोकोत्तरत्व" अर्थात् लोकोंसे विलक्षण पनेका उपालंभ भी निषेध कर दिया । क्योंकि लौकिक ही जो महानुभाव व्यास वसिष्ठादि ब्रह्म ऋषि हुए हैं । और ऋषिमादि जो राज ऋषि हुए हैं ॥ तिनहोंने इस लोक तथा परलोकके सुख और तिनके साधनोंका त्याग आत्मप्राप्तिकी कामना से ही किया है । क्या वह सर्व ही महानुभाव भ्रांत हो सकते हैं यह कवी नहीं । किंतु उनको उपालंभ करनेवाला पुरुष ही भ्रांत है । और यह जो पूर्ववादीने

कहा था। कि श्रवणादिसाधनोंके अनुष्ठान करनेवाले मुमुक्षुजनोंको अल्प होनेसे तिनको भ्रान्तपना है ॥ और ज्योतिष्टोमादिश्रुतिमूलक पारलौकिक सुखके साधनयागादिकोंके अनुष्ठान बहुत हैं । इससे तिनका अनुग्रह युक्त है ॥ तिनके विरोधसे श्रवणादिसाधनोंके विधान करनेवाले श्रुतिवचनस्वार्थमें तात्पर्यवाले नहीं । किंतु अन्यर्थके बोधक हैं । सो यह कथन भी समीचीन नहीं। क्योंकि तिनपुरुषोंको ज्योतिष्टोमादिश्रुतिके तात्पर्यका अनभिज्ञ होनेकर यथार्थ ज्ञानका अभाव है । इसीसे वह भ्रान्त हैं । और श्रवणादिविधायकवाक्योंके तात्पर्यको जाननेवाले मुमुक्षुयद्यपि अल्प भी हैं । तथापि प्रामाणिक होनेसे वह भ्रान्त नहीं हैं । और यदि बहुतोंके अनुग्रहको ही न्यायमाने। तो देहको आत्मा माननेवाले बहुत जन हैं। तिनके विरोधसे ज्योतिष्टोमादिश्रुतिमूलक साधनोंके अनुष्ठानात् पुरुष भी तुम्हारी रीतिसे भ्रान्त हुए चाहिये। और स्वहनुमने भ्रान्त माने नहीं याते “बहु अनुग्रह न्याय” यहां पर नहीं प्राप्त हो सकता ॥ और जो वादीने पूर्व यह कहा था । कि आत्माको सुखस्वरूपमाने हुए भी स्वसंबंधिसुखका अभाव होनेसे तिसको पुरुषार्थपनानहीं संभवता । यद्यपि स्वसंबंधिसुखही उपादेय है यह वार्ता सत्य है। तथापि स्वतंत्र सुखमात्रको उपादेयता कैसे होगी । सो यह कथन भी असंगत है । क्योंकि आत्मामें सुखके संबंधका उद्देश करनेवाला पुरुष सुखके दातात्म्यकी ही कामना करता है। इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं। सुखही अत्यंत उपादेय पदार्थ है वह किसी प्रकार अत्यंत प्रियमेरे स्वरूपमें अभेदरूपतासे प्रवेश करे । ऐसी कामना यह पुरुष करता है। यहां और संबंधोंकी अपेक्षासे तादात्म्यसंबंधको अंतरंगता जान लेनी शंका। तादात्म्यसंबंधको अंतरंग माने हुए यह पुरुष संबंधमात्रसे कैसे तोष

करलेताहै। क्योंकि अन्यपदार्थकी कामना करता हुआ किसी अन्यपदार्थकी प्राप्तिसे तोपको कोई भी प्राप्त नहीं होता। अन्यथा अतिप्रसंग होगा। अर्थात् जल की कामनावाला पुरुष पापाण की प्राप्तिसे भी प्रसन्न हुआ चाहिये। समाधान। हेवादिन् अज्ञानके प्रभावसे सुख तथा आत्माका भेद भ्रम इस पुरुषको होता है तिस भेद भ्रमकी प्रावल्यतासे अभेद करनेको असमर्थ हुआ संबंध मात्रसे तोपको प्राप्त होता है । क्योंकि कहीं मुख्यपदार्थके अलाभ हुए गौणकी प्राप्तिको भी पुरुषार्थपना देखा है । जैसे कोई पुरुष चक्रवर्ती राजकी प्राप्तिमें असमर्थ हुआ किसी एक देशके राजप्राप्त होनेकर ही अपनेको कृतार्थ मानता है ॥ शंका ॥ इतनी गुरुकल्पना करनेसे क्या प्रयोजन है। सुखका संबंध ही साक्षात् प्रयोजन क्यों न हो ॥ समाधान ॥ हेवादिन् संबंधको स्वतः पुरुषार्थरूपतानहीं संभवती । क्योंकि वह सुख तथा दुःखाभावसे भिन्न है । याते सुख तथा दुःखाभावस्वरूप आत्मा ही परम पुरुषार्थरूप मानने योग्य है। अन्य कोई पदार्थ पुरुषार्थरूप नहीं। और जो पूर्ववादीने यह कहा था कि यदि आत्मा ही एक सुखस्वरूप है तो विषय सुखको पुरुषार्थपनानहीं होगा। क्योंकि सुखका सुख ही पुरुषार्थ नहीं हो सकता। जिससे सुखको सुखविषयी कामना का अभाव है। और कामना का विषय ही पुरुषार्थरूप होता है । यद्यपि सांसारिक सुखको तो हम भी पुरुषार्थरूप नहीं मानते। तथापि आत्मसुखको भी पुरुषार्थरूपता सिद्ध नहीं होगी क्योंकि सुखपना दोनों में तुल्य है । सो यह कथन भी नहीं संभवता । क्योंकि जो वादी यह कहता है । कि सुखका सुख पुरुषार्थ नहीं। तिस वादीके मतमें सांसारिक सुखमें अभिव्यंजकवृत्तिक संबंध होनेसे वृत्तिविशिष्टमें अनुपादेयता है । तिसमें सुखत्व पुरुषार्थत्व का प्रयोजक नहीं । जिससे आत्मसुख भी अ पुरुषार्थरूप हो। किंतु विशिष्ट

रूपतासे भ्रम होनेकर अनात्मत्वही तिसमें अपुरुषार्थत्वका प्रयोजक है। और
 आत्मत्वही परमपुरुषार्थत्वका प्रयोजक पूर्वस्थापनकर आए हैं। अथवा
 विषयसुखमें तिस अपुरुषार्थत्वकी सिद्धि अनात्मत्वके आरोपके आधीन है
 और पुरुषार्थत्वमें आत्मत्वही प्रयोजक है। यह पूर्वकथन किया है। और
 यह जो वादीने पूर्व कहा था। कियदि आत्मत्वको पुरुषार्थताका प्रयोजक
 मानोगेतो कुष्ठादिरोगयुक्त पुरुषोंकी दुःखाभावका उद्देशकरके जो आत्मा
 के त्यागमें प्रवृत्ति होती है। सो न हुई चाहिये। और तिनकी प्रवृत्ति देखने
 में आती है। तिस कारणसे आत्मत्वपुरुषार्थत्वका प्रयोजक नहीं। सो यह
 कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि कुष्ठादिरोगयुक्त पुरुषपयद्यपि मरणमें प्रवृत्त
 होते हैं। तथापि वह आत्माके त्यागमें प्रवृत्त नहीं होते। जिस कारणसे स्थूल
 शरीरके त्यागकानामरण है। कोई आत्माके त्यागकानामरण नहीं।
 और सुखस्वरूप आत्मामें कुष्ठादिरोगयुक्त स्थूलशरीर दुःखका हेतु है इसी
 से तिसके त्यागमें प्रवृत्ति होनी उचित ही है। “केवल सुखरूप ही परलोकमें
 में हो जाऊं” ऐसा उद्देशकरके देहत्याग करनेमें वह पुरुष प्रवृत्त होते हैं। कोई
 आत्मत्यागका उद्देशकरके प्रवृत्त नहीं होते। यदि ऐसे मानों तो आत्मा
 का त्यागकरके दुःखाभाव भी किसको होगा। तिस हेतुसे जाना जाता है।
 कि वहां पर आत्मा का त्याग नहीं। किंतु रोगग्रस्त देहका ही त्याग है। याते
 मरणमें जो तिनकी प्रवृत्ति है। तिससे भी आत्माकी सुखरूपता ही सिद्ध
 होती है। इस प्रकार कुष्ठादिरोगयुक्त पुरुषोंको दुःखके संसर्गसे रहित सुख
 स्वरूप आत्माकी कामनासे देहके त्यागरूपमरणमें प्रवृत्तिकथन करनेसे
 प्रयागादि तीर्थोंमें मरणके निमित्त प्रवृत्तिका उत्तर भी कथन किया गया।
 क्योंकि तहां पर भी दुःखसंसर्गसे रहित सुखस्वरूप आत्माकी कामनासे ही

देहत्यागरूपमरणमें प्रवृत्ति होती है आत्माके त्यागमें प्रवृत्ति नहीं । तिनकी प्रवृत्तिसे भी आत्माको ही परमपुरुषार्थरूपता सिद्ध होती है । याते आत्मा ही परमपुरुषार्थरूप है यह सिद्ध हुआ ॥ इति ॥ शंका ॥

✽ अथ ज्ञानी तथा अज्ञानीकी विलक्षणताका निरूपण ✽

पूर्वउक्तरीतिसे भी आत्मापुरुषार्थरूपनहीं सिद्ध हो सकता । क्योंकि मुक्त तथा संसारीमें आत्माको तुल्य होनेसे समानहीं तिसकी दोनोंको प्राप्ति है । इस लिये ब्रह्मचर्यादिसकल जो मुक्तिके साधन हैं तिनमें सुसुक्ष्मपुरुषोंकी प्रवृत्ति नहीं होगी भाव यह कि जब साधन हीन और साधनयुक्त पुरुषको समानहीं मुक्तिरूपफल होता है तो फिर साधनोंके अनुष्ठानका क्या फल है । समाधान हेवादि न्यद्यपि आत्मा मुक्त तथा संसारीमें समान ही है । तथापि स्वरूपसे विद्यमान हुआ वह पुरुषार्थरूपनहीं । किंतु स्वस्वरूपकरसाक्षात्कार किया हुआ पुरुषार्थरूप है । जैसे लोकमें भी ज्ञातनिधियादिकोंको ही पुरुषार्थपना देखा है । अज्ञातको नहीं । तैसे संसारी आत्मस्वरूपको नहीं जानता । और्विद्वान् आत्माको जानता है । याते विद्वान् प्रतिही तिसको पुरुषार्थरूपता है । अज्ञानी प्रति नहीं । इसकारणसे मुक्त तथा संसारीको समान प्राप्ति नहीं ॥ शंका ॥ आत्माको सर्वही जन जानते हैं । याते ज्ञान तथा अज्ञानकृत विलक्षणता यापकैसे कहते हो ॥ समाधान ॥ हेवादि नृजिसकारणसे अज्ञानमेकर्त्ता भोक्ता जरा मरणधर्मवाला हूं ॥ इसप्रकार आत्माको जानता है । तिसी हेतुसे मुक्तसे वह विलक्षण है ॥ यद्यपि स्वस्वरूप आत्मा स्वप्रकाश है वह संसारीको कैसे स्फुरण नहीं होता । तथापि अज्ञानके प्रभावसे सुखादि ग्रंथ आवृत्त है । याते तिसका स्फुरण नहीं होता । और अज्ञानके आश्रय तथा विषयका एकत्व पूर्वजप

पादनकर आए हैं। इसहेतुसे अज्ञानीही अज्ञानका विषय है। शंका ॥ अज्ञान कर सुखादि शंकाको आवृतमाने हुए सुखरूपताही आत्माकी न प्रतीत हो तिससे विपरीत कर्तृत्वादि रूपतासे तिसका भान किसहेतुसे होता है। समाधान ॥ अज्ञानके वशसे भ्रांति युक्त हुआ अकर्तृत्वादि स्वरूप आत्मा को भी कर्तृत्वादि रूपतासे देखता है। अज्ञानको कौन अर्थ कठिन है। किंतु कुछ भी कठिनता अज्ञानको नहीं। इसलिये अज्ञान अवस्था में यथार्थ रूपतासे आत्माको न स्फुरण होनेसे तिस अवस्था में सुक्तपन नहीं हो सकता। इस प्रकार अज्ञानकृत विलक्षणता निरूपण करके अज्ञानकृत विलक्षणता को निरूपण करते हैं। और विद्वान् पुरुष अज्ञानीमें विलक्षण पुरुषार्थ स्वरूप है। तिस पुरुषार्थका स्वरूप ही कहते हैं। देशकालवस्तुपरिच्छेदसे रहित परिपूर्ण आनन्द स्वरूपतासे स्थित होता है। जिस कारणसे तिस विद्वान्को अपुरुषार्थत्वका प्रयोजक जो अभान तिसका हेतु जो अज्ञान तिसका बाध हुआ है ॥ यद्यपि अज्ञान स्वरूपसे विद्यमान हुआ अनर्थका हेतु नहीं होता। क्योंकि सुषुप्तिमें तैसे देखा है। तथापि सकल दुःखोंका बीज जो अज्ञान है वही कार्यकार परिणामको प्राप्त होकर अनर्थका हेतु है। याते कार्यसहित तिसका बाध करके अर्थात् अज्ञानतत्कार्यतीनों कालमें भी मुझ ब्रह्मात्मा में नहीं है ऐसानीश्चय करके विद्वान् पुरुषार्थ स्वरूप होता है ॥ शंका ॥ सुखस्वरूपका भान कैसे होगा ॥ क्योंकि प्रकाशका अभाव है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्स्वप्रकाश स्वरूपतासे ही सुखका भान होता है। अन्य प्रकाशकी तिसको अपेक्षा नहीं। और सकल दुःखोंका बीज होनेसे कार्यसहित अज्ञानकी निवृत्ति विद्वान् करता है। अबस कार्य अज्ञानकी निवृत्तिका साधन कहते हैं। आत्मसाक्षात्कारसे ही वह अज्ञान

निवृत्तहोताहै । औरतिसमाप्तात्कारकाहेतु महावाक्यरूप आगम प्रमाणहै । इतनेकथनसेश्रवणादिसाधनोंमें सुसुक्ष्मकीप्रवृत्तिकीव्यर्थतापरिहारकी। क्योंकिश्रवणादिसाधनोंके अनुष्ठानसेयप्रतिबद्धहुया महावाक्यरूपशब्दप्रमाण आत्मसाक्षात्कारको उत्पन्नकरताहै । याते तिनमेप्रवृत्तिसफलहै । औरतिसमहावाक्यको आपहीग्रहणनकरे कितुयासक्तजोश्रोत्रिय तथाब्रह्मनिष्ठयाचार्यहै उनकेमुखद्वाराही महावाक्यकोग्रहणकरे। और विद्वानका अनुभवभीऐसाहीहै । यातेमहा वाक्यसेउत्पन्नहुया “अहंब्रह्मास्मि” याप्रकारकाप्रमाज्ञानसकार्य अज्ञानकोबाधकरताहै । परन्तुवहवाक्यार्थज्ञानपदार्थज्ञानपूर्वकहोता है । इसलिये “तत्त्वमसि” इसमहावाक्यगत “तत्” औ “त्वं” यह दोपदहै । तिनमेंप्रथमतत्पदका वाच्यार्थनिरूपणकरतेहै । अज्ञान केवशसेसर्वजगत्की अधिष्ठानताको प्राप्तहुया यात्मा तत्पदका वाच्यार्थहै । औरकर्तृत्वादिसांसारिकधर्मोंका आश्रयहुया त्वंपदका वाच्यार्थहै। अथवास्तवजोयात्माकालक्ष्यस्वरूपहै । तिसकोनिरूपण करतेहै । पूर्वकथनकियाजो अज्ञानकेवशसे कर्तृत्वादिमिथ्यास्वरूप उससेविरुद्धयकर्तायात्माहै ॥ इसकथनसे नैयायिकमतकानिषेध जानलेना । औरवहयात्माग्रभोक्ताहै ॥ इसकथनसेसांख्यमतका निषेधकिया । औरवहयात्माजरामरणजन्मादि सर्वविकारोंसेरहितहै। इसकथनसेदेहात्मवादकानिषेधकिया ॥ औरवहयात्मास्वप्रकाशस्वरूपहै इसकथनसे मीमांसकमतकानिषेधकिया। औरवहयात्मासतरूप है। इसकथनसेशून्यवादीमाध्यमिककामतनिषेधकिया ॥ इसप्रकारइन विशेषणोंसेइतरमतोंके निरासकियेहुए अथवास्वमतसंमत यात्माकास्वरूप

कहते हैं। आत्माचिद्रूपकरसंपरिपूर्णास्वभाव है। और स्वहयपुरुषार्थस्वरूप नहीं ॥ किंतु आनंदस्वरूप है। पूर्वसर्वमतोंके निरासमें हेतुसूचन करने के लिये पुनः और विशेषण आत्माके कहते हैं। बुधापिपासादिधर्मोंसे रहित होनेसे आत्मा अकर्ता और अभोक्ता तथा असंसारी है ॥ और स्थूलतासे हीन होनेकर तथा अणुतासे हीन होनेकर तथा सर्वदृश्यधर्मों से अतीत होनेकर आत्मा देहरूप नहीं। और सत्यस्वरूप होनेसे आत्मा शून्यरूप नहीं और ज्ञानस्वरूप होनेसे स्वप्रकाशस्वरूप है ॥ और नित्यस्वरूप तथा विज्ञानस्वरूप तथा आनंदस्वरूप तथा ब्रह्मस्वरूप होनेसे यह आत्मा सुखस्वरूप तथा परिपूर्णास्वरूप है। इस प्रकार तिस आत्मसे अधिक और कोई कामना का विषय नहीं है ॥ क्योंकि सर्वकामोंकी अवधि आत्माकी प्राप्ति है ॥ इसीसे श्रुतिमें कहा है ॥

(आत्मलाभान्नपरं विद्यते। आत्मकामत्राप्तकामः)
इत्यादि श्रुतिसे आत्मप्राप्तिको ही सर्वकामप्राप्तिकी सीमा होनेसे आत्मा ही परमपुरुषार्थस्वरूप है यह अर्थ सिद्ध हुआ ॥ इति ॥३६॥

❀ अथ आत्मसाक्षात्कारके करणका विचार ❀

“यागमप्रमाणसे साक्षात्कार होता है” यह सिद्धांतीका कथन सुन कर तिसको न सहन करता हुआ पूर्वपक्षी शंका करता है। हे सिद्धांतिन् आत्मसाक्षात्कारशब्दजन्य नहीं यहाँ यह अनुमान जानना ॥

❀ आत्मसाक्षात्कारः न शब्दजन्यः साक्षात्कारत्वात्।

घटादिसाक्षात्कारवत् ❀

अ० ॥ आत्मसाक्षात्कारशब्दजन्य नहीं है। साक्षात्काररूप होने से। जो जो साक्षात्कार होता है। वह शब्दजन्य नहीं होता। जैसे घटादि

साक्षात्कार है ॥ इति ॥ और आत्मसाक्षात्कारको शब्दजन्यमाने हुए इन्द्रियको साक्षात्कारकी कारणात्का अभावप्रसंग होगा । क्योंकि इन्द्रियजन्यज्ञानको ही साक्षात्कारत्वकानियम है ॥ शंका ॥ हेवादिन् जन्यसाक्षात्कारमें इन्द्रियकारणात्त्व प्रयोजकनहीं अर्थात् जहां जहां जन्यसाक्षात्कार होता है । तहां तहां इन्द्रियको कारणात्ता है ऐसानियम नहीं । क्योंकि “दशमस्त्वमसि” इसवाक्यसे उत्पन्न हुआ ज्ञानभी प्रत्यक्ष ही देखा है ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् “दशमस्त्वमसि” इसवाक्यमें भी यह शब्द दशमके साक्षात्कारको नहीं उत्पन्न करता ॥ किंतु दशमपुरुषके शरीरसे इन्द्रियका संबंध होनेसे ही साक्षात्कार होता है याते इन्द्रियजन्यत्व ही साक्षात्कारमें प्रयोजक है । अर्थात् इन्द्रियजन्यज्ञान ही साक्षात्कार होता है ॥ शंका ॥ हेवादिन् अन्वयव्यतिरेक इन्द्रियजन्यत्वमें और शब्दजन्यत्वमें तुल्य है । अर्थात् “दशमस्त्वमसि” इस शब्दके हुए दशमसाक्षात्कार होता है । इस शब्दके अभावहुए नहीं होता । और तेसे ही इन्द्रियका संबंधहुए दशमका साक्षात्कार होता है । और इन्द्रियका संबंधनहुए नहीं होता । इस प्रकार अन्वयव्यतिरेक दोनों में तुल्य होनेसे इन्द्रिय ही दशमसाक्षात्कारका हेतु है शब्द नहीं यह नियम तुमके से करते हो ॥ समाधान ॥ शब्दका परोक्षज्ञानके उत्पन्न करने का ही स्वभाव है । अपरोक्षज्ञानके उत्पन्न करनेका स्वभाव शब्दका कहीं भी देखा नहीं ॥ और इन्द्रियका तो अपरोक्षज्ञानके उत्पन्न करनेका स्वभावप्रसिद्ध है । याते शब्दके स्वभावसे ही अपरोक्षज्ञानमें शब्दको कारणात्ता नहीं किंतु इन्द्रियको ही कारणात्ता है ॥ शंका ॥ अपरोक्ष आत्माविषयक शब्दको अपरोक्षज्ञानका ही जनकपना युक्त है ॥ क्योंकि वेदवाक्य तब ही प्रमाण हो सकता है ॥ जबजैसा आत्माका स्वरूपहोतीसीके आकाशज्ञानको उत्पन्न करे ॥ अन्यथा

ज्ञानको भ्रमरूपता होगी ॥ और आत्मानित्य अपरोक्ष स्वभाव है ॥
 तिससे अपरोक्ष आत्मा का साक्षात्कार श्रुतिजन्य ही है ॥ समाधान ॥ करण
 का स्वभाव अन्यथा करने को कोई भी समर्थ नहीं ॥ क्योंकि प्रमेय के स्वभाव
 की अपेक्षा से अपना स्वभाव अभ्यर्हित है अर्थात् उत्कृष्ट है ॥ याते पूर्व कथन
 अयुक्त है ॥ किंवा ॥ ब्रह्म की अपरोक्षता मात्र से तिस विषयक ज्ञान को
 अपरोक्षता युक्त नहीं है ॥ क्योंकि अपरोक्षता के योग्य बन्धियादिकों में
 शब्द से परोक्ष ज्ञान ही उत्पन्न होता है ॥ यह वार्त्ता हम तुम दोनों को स्वीकार है
 तिसी कारण से आत्मसाक्षात्कार श्रुतिरूप शब्द से जन्य नहीं ॥ शंका ॥
 आत्मसाक्षात्कार से ही प्रयोजन है ॥ सो जिस किमी कारण से उत्पन्न हो और
 अभ्यास किया हुआ परोक्ष ज्ञान ही अपरोक्ष रूपता को प्राप्त हो जायेगा ॥
 याते परोक्ष ज्ञान का अभ्यास ही अपरोक्ष ज्ञान का हेतु है ॥ समाधान ॥
 यह किसी कामत भी समीचीन नहीं ॥ क्योंकि अनुमिति आदिक परोक्ष
 ज्ञानों में तैसा देखने में नहीं आता ॥ अर्थ यह “पर्वतो बन्धिमान्” इस
 परोक्ष ज्ञान का वांस्वार अभ्यास किये हुए भी यह ज्ञान अपरोक्ष रूपता को नहीं
 प्राप्त होता ॥ किंवा ॥ जैसे प्रथम ज्ञान अपरोक्ष रूपता को नहीं धारण
 करता ॥ तैसे उत्तम ज्ञान का प्रवाह भी अपरोक्ष रूपता को नहीं धारण करेगा ॥
 क्योंकि शब्द जन्यता दोनों में तुल्य है ॥ और शब्द ज्ञान नियम से परोक्ष ही
 होता है ॥ शंका ॥ साक्षात्कार के करण का विचार करने से क्या सिद्ध होता
 है ॥ क्योंकि साक्षात्कार को निष्फल होने कर हमारे करव हत्यागने योग्य है
 भाव यह कि आस पुरुष ने उच्चारण किया जो “नार्यं सर्पः” यह वाक्य तिस
 से उत्पन्न हुआ जो परोक्ष ज्ञान तिस करके ही भयकंपादिक निवृत्त हो जाते हैं ॥
 फिर अपरोक्ष ज्ञान के साथ क्या प्रयोजन है ॥ याते तिसके करण का विचार

निष्फल है ॥ समाधान ॥ जैसे जिस पुरुषको पूर्वदिशामें पश्चिमदिशाका भ्रम होजाता है ॥ तिसको परोक्षज्ञानदिशाका हुएभी तिससे दिशाका अपरोक्ष भ्रम निवृत्त नहीं होता ॥ क्योंकि अपरोक्ष भ्रमका अपरोक्ष प्रमाज्ञान ही निवृत्तर्क होता है ॥ तैसे “अहंकर्ता” अहंभोक्ता । इत्यादि जो समूल अपरोक्ष भ्रम है तिसकी निवृत्तिभी आत्मसाक्षात्कारसे विना नहीं होगी ॥ याते लुम्हारे मतमें आत्मासाक्षात्कार त्याग करने योग्य नहीं ॥ और “नायं सर्पः” इस वाक्यसे लुम्हारे मतकी रीतिसे अपरोक्ष ही ज्ञान उत्पन्न होता है ॥ याते यह दृष्टांतभी समीचीन नहीं ॥ और पूर्व उक्त प्रकारसे कोई भी करण निरूपण नहीं होसकता ॥ याते

✽ सामग्र्यभावेन फलाभावः ✽

अ० ॥ सामग्रीके अभावसे फलका भी अभाव होता है ॥ इसन्यायसे आत्मसाक्षात्कारका अभाव अर्थसे सिद्ध होता है ॥ याते आत्माका अपरोक्षज्ञान किसीको भी नहीं होता ॥ इति पूर्वपक्ष ॥

✽ अथ एकदेशीके मतकी रीतिसे पूर्वपक्षका खंडन ।

और मनको आत्मसाक्षात्कारकी करणताका निरूपण ✽

हे वादिन् पूर्वजो करणके अभावसे आत्मसाक्षात्कारका लुम्हारे

अभावकहा सो नहीं संभवता ॥ क्योंकि अंतस्करणही आत्मसाक्षात्कारका करण है ॥ शंका ॥ हे एकदेशिन् आत्मसाक्षात्कारकी करणता

अंतस्करणमें नहीं संभवती ॥ क्योंकि सर्व अविबेकी जनोंका अंतस्करण तो विद्यमान है ॥ परन्तु आत्मसाक्षात्कारतिनमें नहीं देखा जाता ॥

समाधान ॥ हे वादिन् जेसेकेवल चक्षुको प्रत्यभिज्ञाज्ञानकी करणता नहीं भी है । परन्तु वस्तुके पूर्व अनुभवजन्य संस्कारसहकृत हु आचक्षुतिस

वस्तुविषयक ऐक्यप्रतिभिज्ञाकाहेतुहोताहै । तैसेकेवलमनशुद्धात्मा केसाक्षात्कारका अजनकहुआभी सजातीयप्रत्ययोंके प्रवाहसहित हुआतिसकाजनकहोजायेगा ॥ शंका ॥ जैसेकिसीपुरुषको भावना करनेसेमृतपुत्रका अग्रमारूपसाक्षात्कार उत्पन्नहोताहै । तैसेमूल प्रमाणसेहीनकेवलभावनासे उत्पन्नहुआ आत्मसाक्षात्कारभीअग्रमा रूपहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन्श्रवणादिकोंके अभ्याससेजन्य जोशाब्दपरोक्षज्ञानहै । वहीभावनाकामूलहै । यातेभावनाकेप्रवाह सहकृतअंस्करणरूपकरणसे उत्पन्नहुआआत्म साक्षात्कारअग्रमारूप नहीं किंतुअग्रमारूपहीहै ॥शंका॥

यतोवाचोनिवर्ततेअप्राप्यमनसासह । (तै)उ ब्र०व०अनु ६)

अ० ॥ जिसब्रह्मसेमनसहितवाणियेंतिसकोनप्राप्तहोकरनिवृत्त होजातीहैं॥इति॥मनकोकरणमानेहुएइसश्रुतिकेसाथविरोधहोगाक्योंकि यहश्रुतिआत्मामेंमनकीविषयताका अभावकहतीहै॥समाधान॥हेवादिन् यहविकल्पकिसीवेदांतीकाहै।अथवानैयायिककाहै ॥ प्रथमपक्षतोनेहीं संभवता॥क्योंकिआगमप्रमाणकीआत्मामें विषयतामाननेवालेकोश्रुति काविरोधतुल्यहीहैजिसकारणसेश्रुतिनेमनकीविषयताकेअभाववत्वाणी कीविषयताकाभीअभावकथनकियाहै॥औरद्वितीयपक्षमीनेहींसंभवता। क्योंकिवहश्रुतिवचनलौकिकशब्दतथावैदिकसंस्काररहित मनकीविषयताकोनिषेधकरताहै ॥ कोईवैदिकशब्दतथाशुद्धमनकीविषयताका निषेधनहींकरता । इसप्रकारशुद्धमनकोआत्मसाक्षात्कारमेंकरणाताहै । तिसकेविद्यमानहुएकरणकाअभावकहनाअयुक्तहै(इति एकदेशिमत्तम्) (अथसिद्धांत)

❀ शब्दकोसाक्षात्कारकीकरणाताकाप्रतिपादन ❀

इसप्रकारएकदेशीद्वारामहापूर्वपक्षको निरासकरके अथपरम सिद्धांती एकदेशीकेमतको निरासकरताहै ॥ समाधान॥ पूर्वजोएक देशीने मनकोकरणाताकथनकी सोनहींसंभवती।क्योंकिआगमकोही आत्माविषयकअपरोक्षज्ञानकाजनकपनाहै ॥ शंका ॥

❀ दृश्यतेत्वग्रथयाबुद्ध्या। मनसैवेदमाप्तव्यम् ❀

अ०—एकाप्रबुद्धिसेआत्मादेखाजाताहै ॥ औरमनकरकेहीयह आत्माप्राप्तहोनेयोग्यहै । अर्थात्दर्शनकरनेयोग्यहै। इत्यादिकश्रुति सेऔरपूर्वकथनकीहईश्रुक्तिसे मनकोही तिसआत्मसाक्षात्कारमें करणाता संभवतीहै। तिसकाआपनिषेधकैसेकरतेहो ॥ समाधान ॥ हे वादिन्मनकोजोआत्मसाक्षात्कारमें तुमकरणाताकल्पनाकरतेहो ॥ सो क्या?शुद्धात्मासेजुदाकहींअन्यवस्तुकेअपरोक्षज्ञानमें तिसकोकरणाता निर्णीतहै इसलियेशुद्धआत्माके साक्षात्कारमेंभीलाघवसेमनहीकरणा हो यहकहतेहो।अथवाकेवलश्रुतिप्रमाणकेवलसेतिसकोकरताकहतेहो प्रथमपक्षतोनोंसंभवता । क्योंकिनिरूपणहीनहींहोसकता। तथाहि प्रथमवाह्यअर्थकेप्रक्षमेंमनकोकरणातानहींसंभवती ॥ क्योंकिवाह्य अर्थकोमनस्वतंत्रनहींग्रहणकरसकता ॥ यदिस्वतंत्रग्रहणमानेतोअंध तथावधिरपुरुषोंकोभी रूपतथाशब्दकाप्रत्यक्षहोनाचाहिये ॥औरअंतर दुःखादिपदार्थोंकेसाक्षात्कारमेंभी तिसकोकरणातानहींसंभवती । क्यों किदुःखादिकेवलसाक्षीकेविषयहैं । औरशुद्धआत्माकेसाक्षात्कारमें भी तिसकोकरणातानहीं। क्योंकितिसकाविचारतोअत्रप्राप्तहीहै । और यदिसोपाधिकआत्माके साक्षात्कारमें मनकोकरणाकहोतोयहकथनभी

नहींसंभवता । क्योंकितहांउपाधिअज्ञानहै अथवाअंतस्करणाहैयह विचारकर्तव्यहै ॥ प्रथमपक्षकहो तोसुपुसिमैअज्ञानउपाधिकआत्मा कासाक्षात्कारनहींहुआचाहिये । क्योंकिमनकातिसुपुसिअवस्थामें विलयहै । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकितिसमेंआत्मा श्रयदोषप्राप्तहोताहै । अर्थात्आत्मामें साक्षात्कारकेअर्थमनकी प्रवृत्तिहोनेमेंमनकोही उपाधिरूपताहोनेकर अपनेकोअपनीअपेक्षा रूपआत्माश्रयदोषस्पष्टहीहै ॥ औरयदिऐसेकहो किअंतस्करणाकार्य जोवृत्तिहैवहीउपाधिहै।यातेआत्माश्रयदोषकीप्राप्तिनहींहोतीसो कथन भीनहींसंभवता ॥ क्योंकितहांभीकार्यकारणका अभेदहोनेसेअंश रूपताकरआत्माश्रयदोषकीप्राप्ति अवश्यहोतीहै । औरयदिआत्मामें मनकीप्रवृत्तिकेअर्थ अंतस्करणाकोउपलक्षणमानकर तिसमेंअंतस्करणा उपलक्षितत्वधर्मकोस्वीकारकरें तोवहधर्मभीविशेषणरूपताकरतथाउप लक्षणरूपताकर निरूपण नहीं कियाजाता ॥ क्योंकिऐसेमाननेसेभी पूर्वउक्तदोषदूरनहीं होसकते । अर्थात्अंतस्करणाउपलक्षितत्वधर्मको विशेषणमानेतोआत्माश्रयदोषप्राप्तहोताहै। औरयदितिसकोउपलक्षण मानें तोअनवस्थादोषप्राप्तहोताहै ॥ तथाहि । अन्तःकरणउप लक्षित आत्मामेंअन्तःकरणकीविषयतामानेहुएतिसआत्माकाविशेषण उपलक्षितत्वऔरतिस उपलक्षितत्वकाविशेषण अन्तःकरण इनदोनों मेंभी तिसकीविषयताअवश्यहोगी । तिससेआत्माश्रयदोषस्पष्टहीहै क्योंकिविशिष्टवृत्तिधर्मको विशेषणमेंवर्तनेकानियमहै ॥ किंवाजैसे उपलक्षणरूपकाककेधमोंका देवदत्तकेगृहमें अध्यासनहींसंभवता । तैसेअन्तःकरणको उपलक्षणमानेहुए तिसके कर्तृत्वादिधर्मोंकाभी

आत्मामें अध्यासनहींसंभवेगा । यातेभीयहपञ्चअसंगतहै । औरश्रुति मात्रकेवलसेभीतिसमनकोकरणाता नहींसिद्धहोसकती । क्योंकि “मनसा” यहतृतीयाविभक्तिरूपाश्रुति तोसहिकारतामात्रकोबोधनकरतीहै। तिसकेकरणपनेकोनहींबोधनकरती । यातेमनकोकिसीरीतिसेभी आत्मसाक्षात्कारकेप्रति करणातानहीं। किंतुआगमही तिसकाकरणहै । औरश्रुतिरूपशब्दको आत्मसाक्षात्कारकीकरणतामें श्रुतिउक्तलिंगभीप्रतीतहोताहै । क्योंकि ॥

❀ तंतवौपनिपदंपुरुषंपृच्छामि बृ० उ० १३० (५) ब्रा० ६।२६)

अ० ॥ हेशाकल्यतिसउपनिपद्गम्य पुरुषकास्वरूपमें तुझकोपूछताहूं । इसश्रुतिनेआत्माकाही “औपनिपदत्व” विशेषणकथनकियाहै । सोविशेषणतवहीसमीचीनहोसकताहै । जबइतरप्रमाणोंकेअविषयभूतआत्मामात्रकोहीविषयकरे । यदिऐसेनमानें । तोप्रमाणांतरकाअव्यावर्तकहोनेसे तिसविशेषणकीव्यर्थताहोगी ॥ शंका ॥ मनकीन्याईशब्दभीकहीं साक्षात्कारकाकरणरूपताकरनिर्णयितनहीं तो वह आत्मसाक्षात्कारकाकरण कैसे होसकताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् । लौकिकशब्दजो “दशमस्त्वमसि” इत्यादिवाक्यहै। तिसकोभीदशमरूपअपनेआत्माविषयकसाक्षात्कारकाजनकपनादेखाहै ॥ औरस्तहांइंद्रियकोकरणतानहींसंभवती । क्योंकिइंद्रियकेविद्यमानहुएभीदशमकाज्ञाननहींहोता । औरअत्यंतअन्धकारमेंइंद्रियकीशक्तिकेनिरुद्धहुएभीवाक्यसे “दशमोज्ज्वलस्मि” इसप्रकारकासाक्षात्कारदेखाहै । औरइसज्ञानकोपरोक्षनहींकहसकते । क्योंकि “अस्मि” इत्याकारकप्रतीतिअपरोक्षरूपहीहोतीहै । इसप्रकारव्यभिचारहोनेसे

इंद्रियकोतिससाक्षात्कारमेंकरणपनानहींहै ॥ शंका ॥ पूर्वउक्तप्रकार
 शेषशब्दको अपरोक्षज्ञानकी जनकतामानेहुए तिसकेस्वभावकीहानि
 होगी । क्योंकिशब्दकापरोक्षज्ञानकेहीउत्पन्नकरनेकास्वभावहै ॥
 समाधान ॥ हेवादिप्रमाणकोप्रमेयकेआश्रितहोनेकरप्रमेयकेअनु-
 सारीहीतिसकास्वभावहोताहै । स्वतंत्रतिसकाकोईस्वभावनहींहोता ।
 यातेपरोक्षज्ञानकेउत्पन्नकरनेकास्वभावयसिद्धहै ॥ शंका ॥ जिस
 प्रमेयकेअनुसारीप्रमाणकास्वभावआपनेकहातिसप्रमेयकाक्यास्वभाव
 है ॥ समाधान ॥ हेवादिप्रमाण । यहामहावाक्यरूपशब्दप्रमाणकाप्रमेय
 आत्मवस्तुहै । सोअपरोक्षस्वभावहै । यद्यपिअपरोक्षताकिसीकाल
 मेंघटादिकोंमेंभीहोतीहै । तथापितिनमेंनित्यअपरोक्षतानहीं । और
 आत्मातोअपरोक्षएकरसहै । यातेघटादिकोंसेविलक्षणहै ॥ शंका ॥
 प्रमेयपरोक्षएकस्वभावभीनहीं। तथाअपरोक्षएकस्वभावभीनहीं । क्यों-
 कि एककालमेंहीवन्हिआदिकविषयमें पुरुषोंकेभेदकीअपेक्षाकरसाक्षा-
 त्कारतथाअनुमितिकीविषयताहोनेसेअपरोक्षतातथापरोक्षतायहदोनों
 रूपप्रतीतहोतेहैं। औरविरुद्धदोरूपएककालमेंएकपदार्थमेंनहींसंभवते।
 यातेवहदोनोंरूप प्रमेयकेस्वाभाविकधर्मनहींहैं । किंतुज्ञानविशेषरूप
 उपाधिकृतहोनेसे वहअपरोक्षपाधिकधर्महैं ॥ समाधान ॥ हेवादिप्रमाणगत
 अपरोक्षत्वनहींकिंतु

❀ यत्साक्षादपरोक्षात्ब्रह्म यत्रात्मासर्वांतरः ❀

(६०) ३० अ० (५) ब्रा० (४) १ ❀

अ०॥ जोब्रह्म“साक्षात्”कहियेअव्यवहितस्वरूपहै। यद्यपिगौरव
 अव्यवहितत्वश्रोत्रब्रह्मादिकोंमेंभीहै । तथापिब्रह्ममें “अपरोक्षात्”,

कहिये मुख्यअव्यवहितत्वहै । औरजोआत्मासर्वकेअंतरहै । यद्यपि अंतरत्वइंद्रियतथाप्राणादिकोंमेंभीहै। तथापिवहसर्वसेअंतरनहीं । किंतु आत्माहीसर्वकेअंतरहै । इत्यादिश्रुतिमें आत्माकाहीअपरोक्षपनासुना जाताहै । यातेब्रह्मात्माकीअपरोक्षताश्रुतिसिद्धहै औपाधिकनहीं। औरजोवादीनेयहशंकाकीथी किप्रमेयमेंस्वाभाविकअपरोक्षतामानेहुए वह्निआदिकोंमें दोनोंविरुद्धधर्मएककालमेंप्राप्तहोंगे । इसशंकाकेदूर करनेकेलिये अबअपरोक्षताकास्वरूपजिज्ञासापूर्वकनिरूपणकरतेहैं ॥

✽ अथ अपरोक्षत्वका स्वरूप निरूपण ✽

वहअपरोक्षताक्याहै अर्थात्तिसअपरोक्षताकास्वरूपआपनिरूपणकरो ऐसीजिज्ञासाकेहुएकहतेहैं । वास्तवसेजोप्रमातासेअव्यवहितत्वहै यहीअपरोक्षत्वहै । अपरोक्षज्ञानकीविषयताकानामअपरोक्षत्व नहीं । सोअव्यवहितत्वप्रमातामेंही विश्रांतिकोप्राप्तहोताहै । क्योंकि जितनाजितनाकोईपदार्थप्रमातासेदूरहोताहै। उतनाउतनाहीवहअधिकपरोक्षताकोप्राप्तहुआदेखाहै । तेसेमानेहुए वह्निआदिकोंमेंपरोक्षताहीमुख्यहै । औरअपरोक्षता तिनमेंगौणहै ॥ क्योंकिअपरोक्षतातिनमेंप्रमाताकीसमीपतासेप्राप्तहुईहै स्वतःनहीं । यातेएककालमेंदोनोंकाविरोधनहीं । क्योंकिस्वाभाविकतथाऔपाधिकदोनोंरूपएककालमेंएकपदार्थमें रहसकतेहैं॥ शंका ॥ जैसेघटादिकथनात्माहोनेसेपरोक्ष एकरसहैं तिनमेंगौणअपरोक्षतावर्ततीहै । तिसगौणअपरोक्षताको लेकर इंद्रियकोप्रमाणताहै । तेसेप्रमातामेंभी गौणपरोक्षताको लेकर शब्दतिसमेंप्रवृत्तहोजायेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् गौणपरोक्षता भीआत्मामेंनहीं संभवती । क्योंकिआत्मासे आत्माकाव्यवधानकोईभी

कल्पना करने को समर्थ नहीं हो सकता । याते प्रमाणरूपहु आवेद अपरोक्ष स्वरूप आत्मा में परोक्षज्ञान को कैसे उत्पन्न करेगा । और यदि परोक्षज्ञान को वेद उत्पन्न करेगा ॥ तो भ्रमज्ञान को उत्पन्न करता हु आवेद प्रमाणरूप कैसे होगा क्योंकि अन्य प्रकार से स्थित पदार्थ को अन्य प्रकार से बोधन करने कर प्रमाणरूप तानहीं संभवेगी । याते अपरोक्ष आत्मा विषय कवेद अपरोक्षज्ञान को ही उत्पन्न करता है । और वही कारण है । इस प्रकार सिद्धांतीने अपने मत को सिद्ध करके पूर्व उक्तीति से एकदेशी कामत निरास किया । अब तिसी के निषेध में और हेतु कहते हैं । हे एकदेशीन् प्रमाकर व्याप्त प्रमाण होता है ॥ अर्थात् जहां जहां "प्रमाणात्" तहां तहां प्रमाकरणात् है । ऐसे नैयायिक कहते हैं । और मन प्रमाकर व्याप्त है नहीं । क्योंकि तिसको भ्रम तथा प्रमासाधारण उपलब्धि मात्र की कारणता है । याते मोक्षके साधन आत्मसाक्षात्कार को मनोजन्य माने हुए व्यभिचारिकरण से जन्य होने कर आत्मज्ञान में अप्रमात्व प्राप्त होगा । इस लिये मन आत्मसाक्षात्कार का कारण नहीं । यदि करण मानोगे तो आत्मसाक्षात्कार भी भ्रमरूप होगा । और तिसको भ्रमरूप तानहीं संभवती । क्योंकि वह सकार्य अज्ञान का निवर्तक है । और भ्रमज्ञान अज्ञान को नहीं निवृत्त कर सकता । अन्यथा अतिप्रसंग होगा अर्थात् रजत भ्रम से शुक्तिके अज्ञान की भी निवृत्ति हुई चाहिये ॥ शंका ॥ हे सिद्धांतिन्यदि केवल मन आत्मसाक्षात्कार को उत्पन्न करे तो तिसमें भ्रमत्व की आशंका हो सकती है । परन्तु केवल मन को तो हम करण नहीं मानते । किंतु तत्वमस्यादि वाक्य जन्यज्ञानके प्रवाह सहित मन ही तिस आत्मसाक्षात्कार का कारण है । तैसे माने हुए मूल प्रमाण शब्दके साथ समति होने से अप्रामाण्य शंका की प्राप्ति नहीं हो सकती ॥ समाधान ॥ हे वादिन् शब्द

प्रमाणको मूल होनेकर मनको प्रमाणातानहीं संभवती । क्योंकि अपरोक्ष रूपतासे वेदति सको बोधन नहीं करता । ऐसा तु ममानते हो । और परस्पर संमतिके अर्थ जैसा ज्ञानमन उत्पन्न करता है तैसा ही यदि शब्दने भी उत्पन्न किया । तो दोनों में एकको अप्रमाणाता अवश्य होगी । क्योंकि अनधिगत अर्थत्वका अभाव है । और इस अप्रमाणाता दोषके दूर करनेके लिये यदि शब्दको परोक्षज्ञानका जनक मानोगे । तो तिसके साथ विरोध होनेसे पुनः मनको अप्रमाणाता होगी ॥ शंका ॥ तत्त्वमस्यादि वाक्य परोक्षज्ञानके जननस्वभाववाला हुआ भी आत्मा विषयक अपरोक्षाकारज्ञानको ही उत्पन्न करेगा । क्योंकि ब्रह्मात्मा में अपरोक्षरूपता विद्यमान है । और तिस शब्दके साथ संवाद होनेसे मनको अप्रमाणाता भी नहीं हो सकती । क्यों कि धारावाहिकज्ञानोंकी न्याई तिसमें प्रमाणाता हो जायेगी ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यहकथन भी तुम्हारा नहीं संभवता । क्योंकि वेदशब्दस्वरूप है । वह अपरोक्षज्ञानके उत्पन्न करनेको समर्थ नहीं । तिसको परोक्षज्ञानके उत्पन्न करनेका ही स्वभाव है । यदि ऐसे मानेतो [पर्वतो वह्निमान्] इसप्रतिज्ञावाक्यसे परोक्षवह्निविषयक “अयं वह्निः” यह अपरोक्षाकार प्राप्त होगा । तिसकारणसे परोक्षाकारज्ञानके उत्पन्न करनेका ही शब्दका स्वभाव है । यह वार्त्ता सुरेश्वराचार्योंने भी कही है ॥

❁ स्वभावतो ऽखिलं वाक्यं संसर्गात्मकमेव हि ।

परोक्षवृत्त्या च तथा वस्तुबोधयति स्वतः ॥१॥ ❁

अ० ॥ सर्ववाक्यस्वभावसे संसर्गरूपताको ही बोधन करता है ।

और तेसे ही परोक्षरूपताकर पदार्थको स्वभावसे शब्दबोधन करता है ॥१॥

इति ॥ और आत्मसाक्षात्कारके प्रतिमनको करणमाने हुए आत्माको

मनवाणीकी अविषयताकहनेवालीश्रुतिका विरोधभी निवारणकरना कठिनहोगा । यद्यपियहश्रुतिअशुद्धमनकीविषयताकोनिषेधकरतीहै। यहपूर्वकथनकियाहै । तथापिऐसीव्यवस्थामाननेमेंलक्षणाकीप्राप्ति होगी । औरवहलक्षणासुख्यार्थमेंकिसीबाधककेविद्यमानहुएहीयुक्त होतीहै । अन्यथानहीं । यातेश्रुतिकाविरोधदुर्वारहै । यद्यपिआत्मा मेंश्रुतिरूपशब्दकीविषयतामाननेमेंभीश्रुतिका विरोधतुल्यही प्राप्तहोता है ॥ तथापि

❀ वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः । उ० सु० ३ ख० २ म० ६ ❀

अ० ॥ वेदांतजन्यज्ञानकरब्रह्मात्मारूपअर्थजिनअधिकारिपुरुषों कोभलीप्रकारनिश्चितहै । इत्यादिकश्रुतिप्रमाणसेब्रह्मसाक्षात्कारकी करणतावेदांतवाक्योंकोप्रतीतहोतीहै। और (यतोवाचोनिवर्तते) इत्यादि वाक्यसेशब्दको आत्मसाक्षात्कारकीकरणताका निषेधप्रतीत होताहै । इसप्रकारदोनोंवचनोंकापरस्परविरोधहुएक्या ? दोनोंमेंएक वचनकोअप्रमाणाहोगी । अथवादोनोंवचनोंकासमुच्चयस्वीकारहै। अथवायहांकोईव्यवस्थाहै । औरब्रह्मसाक्षात्कारमें वेदांतविकल्पसे करणहैं इसपक्षकायहांउपन्यासनहींकिया। क्योंकिविकल्पकायागादि क्रियामेंहीसंभवहै । वस्तुमेंविकल्पनहींहोता । तहांप्रथमपक्षतोनहीं संभवता । क्योंकिदोनोंमेंवेदवाक्यतातुल्यहै । यातेएककोअप्रमाण नहींकहसकते । औरसमुच्चयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिविरुद्धों कामसुच्चयतेजतिमखतअयोग्यहै । इसप्रकारदोनोंपक्षोंकेअसंभव हुएतृतीयपक्षहीशेपरहताहै। यातेव्यवस्थासेहीविरोधकापरिहारकर्तव्य है । सोईदिसखलातेहैं । तहांनिषेधश्रुतितोशब्दकीशक्तिवृत्तिसेजो

आत्मामें प्रवृत्ति है । तिसका निषेध करती है । और वेदांतोंको करणता कहनेवाली श्रुति लक्षणावृत्तिसे तिस आत्मामें शब्दकी प्रवृत्तिको बोधन करती है । याते किंचित मात्र भी श्रुतिका विरोध हमारे पक्षमें नहीं । यह अर्थ सिद्ध हुआ ॥

✽ अथ पुनः पूर्वपक्ष महावाक्योंमें लक्षणाकानिषेध ✽

ब्रह्मात्माके अन्वये साक्षात्कारमें तत्त्वमस्यादि आगमको लक्षणावृत्तिसे करणता है यह पूर्वसिद्धांतीने कथन किया । तिसमें लक्षणावृत्तिसे आत्मामें शब्दकी प्रवृत्तिको वादीनिषेध करता है । हे सिद्धांतिन् तत्त्वमस्यादि महावाक्योंमें जो तुमने लक्षणाकथनकी सो अयुक्त है । क्योंकि भागत्यागलक्षणासे वाच्यार्थके एकदेशका ग्रहण करे हुए श्रुतार्थका परित्याग प्राप्त होगा । तात्पर्य यह है कि प्रथम महावाक्योंमें जहत् लक्षणा तो नहीं संभवती । क्योंकि वाच्यार्थके एकदेशरूप आत्माका ग्रहण है । और जहत् लक्षणमें समग्र वाच्यार्थका त्याग होता है । और अजहत् लक्षणाभी नहीं संभवती । क्योंकि परोक्षत्वादि वाच्यार्थके एकदेशका परित्याग है ॥ अंगतिमें वाच्यार्थसे अधिकार्थका ग्रहण होता है । और जहत् अजहत् लक्षणाका भी संभवनहीं । क्योंकि वाच्यार्थके एकदेशमें लक्षणामें शब्दकी प्रवृत्ति होनेकर वाच्यके एकदेशरूप शुद्धमन्त्रिदानन्दस्वरूप आत्माका ग्रहण स्वीकार करें तो "तत्" तथा "त्वं" इन दोनों पदोंके सामानाधिकरण्याके बलमें ध्वण्यकिया जो परोक्ष तथा अपरोक्ष अर्थोंमें मार्ग तथा अर्थोंमें मार्गीका अन्वय रूप अर्थ निम्नका परित्याग होगा । याते भागत्यागलक्षणाभी महावाक्योंमें नहीं संभवती ॥ शंका ॥ एक विभक्ति अर्थकथनकिये जो पद है । तथा प्रवृत्तिकानिमित्तजिनमें भिन्न

है। तिनपदोंकीजोएकअर्थमेंनिष्ठाहै। इसीकोसामानाधिकरायकहते हैं। पर्यायपदजो एकविभक्तिअंतहैं तिनमेंसामानाधिकरायकीप्राप्ति केनिवारणअर्थ“प्रवृत्तिकानिमित्तजिनमेंभिन्नहै” यहपदलक्षणमेंकहा है। यहसामानाधिकराय “तत्त्वैतत्त्वं” इनदोनोंपदोंमेंभीहै। क्योंकि एकविभक्तिअंतभीहैं। औरतिनकी प्रवृत्तिकानिमित्तभीभिन्नभिन्नहै। औरएकअर्थमेंनिष्ठाभीहै ॥ यातेदोनोंपदोंकेसामानाधिकरायकेपरमर्शसेअनंतरपदार्थोंका अमेदरूपवाक्यार्थप्रतीतहोताहै। औरवहअभेद संसारीऔरअसंसारीरूपतासेविरुद्धस्वभाववालेजीवतथापरमात्माकानहीं संभवता। इसप्रकारमुख्यार्थकेअसंभवसे (अर्द्धत्यजतिपंडितः) अ०॥ विरोधकेप्राप्तहुएपंडितजनआधाभागत्यागदेताहै। इसन्यायसे विरुद्धअंशकोत्यागकरअविरुद्धअंशके अभेदको महावाक्यलक्षणसे बोधनकरताहै। ऐसामाननेमेंकोईदोषनहीं॥ समाधान॥ हेसिद्धांतिन्यह आपकाकथनभीसमीचीननहीं। क्योंकिश्रुतिसिद्धअर्थमें अनुपपत्ति काअभावहै॥ अर्थयह किवेदनेजोअर्थकथनकियाहै वहग्रहणकरनेको हमसमर्थहैं। तिसअर्थमेंकिसीप्रकारकी प्रेरणाअर्थात्तयहवेदऐसेक्यों कहताहै ऐसेनहींकरसकते। औरवहवेदसंसारीतथाअसंसारीकेअभेद कोग्रहणकरताहै। यातेवहअभेदअनुपपन्ननहीं। औरअनुपपत्तिके अभावसे लक्षणाकाभीअभावहै ॥ शंका ॥ हेवादिन्जैसेलौकिक वाक्य प्रत्यक्षादिप्रमाणांतरकेसाथ विरोधकाअभावकरकेही स्वार्थको प्रतिपादनकरताहै। तैसेवेदवाक्यभीप्रतिपादनकरताहै। इसकानामलोक वेदअधिकरणन्यायहै ॥ इसन्यायसेवेदभीलौकिक वाक्यकीरीतिसेही स्वार्थकोग्रहणकरताहै ॥ औरलौकिकवाक्य प्रमाणांतरके विरोधका

अभावहुए स्वार्थकावोधकहोताहै। औरप्रकरणमें प्रत्यक्षादिकोंकाविरोध प्राप्तहै। क्योंकि सर्वज्ञतादि धर्मविशिष्ट ईश्वरका तथा अल्पज्ञतादि धर्मविशिष्टजीवका परस्परभेद “नाहमीश्वरः” इत्यादिप्रमाणांसे सिद्धहै। तिनके साथविरोध दूरकरनेकेलिये तिनकेभेदको त्याग कर शुद्धचिन्मात्रका अभेद लक्षणसे वेदवोधनकरेगाइसमें कोईदोष नहीं ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् यहकथनभी आपकासमीचीननहीं क्योंकिश्रुतिकेविरोधसे भेदग्राहिप्रमाणकोहीअप्रमाणाताहोजायेगी। यहांयहतात्पर्य है। लौकिकवाक्य अपनेअर्थकेवोधनकरनेमें प्रमाणां तरके अविरोधकीअपेक्षाकरताहै। यहकथनतोसंभवताहै। क्योंकि लौकिकवाक्य तथाअन्यप्रमाण इनदोनोंमें लौकिकपनातुल्यहै। और वेदतोअपौरुषेयहोनेसे प्रबलहै। अपनेअर्थकाविरोधीजोप्रमाणांतरतिस कोवाधकरदेगा। तिसकारणसे स्वार्थकीअनुपपत्तिनहीं। यातेमहा वाक्योंमें भागत्यागलक्षणाभी नहींसंभवती ॥ शंका ॥ हेवादिन् जिसकिसीप्रकारसे प्रमाणांतरकोवाध नकरके यदिअपनी प्रमाणाता अर्थात्स्वार्थकीवोधकता वेदमें संभवहोजाय तोप्रयोजनसे विनाइतर प्रमाणकावाध किसलियेकरनाहै। किंतुतिसकावाधकरनायोग्यनहीं ॥ समाधान॥ हेसिद्धांतिन्यदिइतरप्रमाणका वाधनहींमानोगे तोअखंड तथासंसर्गसेरहिततथासजातीय आदिकभेदसेरहित जोअद्वयब्रह्मवही सर्वकाअंतरात्माहै। इसप्रकारजोलक्षणासेवोधनकरनाहै। वहभी नहींसंभवेगा। क्योंकिसजातीयआदिसर्वभेदकेवोधकजोप्रत्यक्षादिक प्रमाणां हैं। तिनकेसाथविरोधविद्यमानहै। तिससेप्रमाणांतरकावाध श्रुतिकान्यवश्यहोनाचाहिये। यातेप्रथमहीश्रुतिसुख्यार्थकेविरोधि

प्रमाणांतरकोबाधकरेगी । लक्षणासेतिसको अन्यार्थपरत्वयुक्त नहीं । किंवा ॥

❀ मानांतरविरोधेतुमुख्यार्थस्यपरिग्रहे ।

मुख्यार्थेनाविनाभूतेप्रवृत्तिलक्षणेऽप्यते ❀

अ० ॥ मुख्यार्थकेपरिग्रहणकरनेमें जहांप्रमाणांतरकाविरोधहो तहांमुख्यार्थकेसाथसंबंधवालाजोअर्थहै तिसमेंशब्दकीवृत्तिकोलक्षणा कहतेहैं । यहलक्षणाकास्वरूपजाननेवालेवृद्धपुरुषोंकीमर्यादाहै । इसलियेशक्यसंबंधिअर्थमेंहीलक्षणाहोतीहै । औरयहांतत्त्वमस्यादि वाक्योंमें वाच्यार्थकेसाथ संबंधवालाकोईपदार्थहैनहीं । क्योंकिशुद्धात्मातोसंसर्गसेरहितहै । औरतिसशुद्धात्माकोही तुमलक्ष्यअर्थ मानतेहो । तिसमेंलक्षणानहींसंभवती ॥ शंका ॥ यद्यपिलक्ष्यार्थ असंसर्गीहै तथापि वाच्यार्थ जोविशिष्टहै वहतोसंसर्गीहै । वही लक्ष्यार्थकेसाथबलात्कारसे संबंधवालाहोजायेगा ॥ समाधान ॥ संबंधदोनोंपदार्थोंकेआश्रितरहताहै । एकपदार्थकोअसंसर्गीहुएइतर पदार्थकरनिरूपणकरनेयोग्यसंबंधकीअयोग्यताहै । औरअसंसर्गिपदार्थ लक्ष्यनहींहोसकता । क्योंकितैसाकहींदृष्टनहीं जोअसंसर्गिपदार्थ भीलक्ष्यहो । किंतुवाच्यार्थकेसंबंधीमेंहीलक्षणालोकमेंदेखीजातीहै ॥ किंवा ॥ लक्ष्यजोचेतनमात्रतुममानतेहो वहकिसीपदकावाच्यहै वानहीं । प्रथमपक्षकहो तोजैसेवहशब्दशक्तिवृत्तिसेशुद्धचिदात्मा मेंप्रवृत्तहोगया । तैसे “तत्त्वं” पदभीशक्तिवृत्तिसेप्रवृत्तहोजायेंगे फिर लक्षणामाननेकाक्याप्रयोजनहै । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिसर्वप्रकारसे जोअवाच्यअर्थहै वहलक्षणासेबोधनकियाजाता

है यहकहींभीनहीं देखा । यातेलक्ष्यपदार्थमेंमूकताप्रसंगहोगा । क्योंकिकोईपदतिसकावाचकनहीं ॥ शंका ॥ हेवादिन् लक्ष्यार्थमें मूकताकीप्राप्तितुमक्योंकहतेहो जिसकारणसेलाक्षणिकपदसेही तिस काकथनहोजायेगा ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्लक्ष्यकाबोधकजो पदहै । वहलक्षणावृत्तिसेप्रवृत्तहोताहै। ऐसामानेहुए तिसकेलक्ष्यका बोधक कोईअन्यपदकहनेयोग्यहै । औरवहपदभी लक्षणासेहीप्रवृत्त होगा । इसप्रकारतिसतिसलक्ष्यकेबोधक औरऔरपदमाननेमें अनवस्थादोपकीप्राप्तिहोगी ॥ किंवा ॥ “तत्” औ “त्वं” इनदोनोंपदों कालक्ष्यक्या? एकहै।अथवाभिन्नहै। प्रथमपक्षकहो तोदूसरापदव्यर्थ होगा । क्योंकिएकपदसेही लक्षणावृत्तिकरकेप्रत्यक्तथावहकेअभेद रूपलक्ष्यार्थकाजोसाक्षात्कारतिसकीसिद्धिहै ॥ शंका ॥ हेवादिन् दूसरेपदकीव्यर्थताकिसलिये तुमकहतेहोकिंतुनहींकहमकते। क्योंकि साक्षात्कारको प्रमापनातवसिद्धहोगा।जबकोईवाक्यरूपप्रमाणहोऔर वहवाक्यदोनोंपदोंसेहीसंभवताहै । इसप्रकारप्रमाणाकीसिद्धिअर्थ अपेक्षितवाक्यत्वका निर्वाहकहोनेकर द्वितीयपदभीसफलहै निष्फल नहीं॥ समाधान ॥दोनोंपदोंकाएकअर्थमानेहुए पदार्थांतरकाअभाव होनेकर संसर्गरूपवाक्यार्थ पदार्थसेभिन्नसिद्धनहींहोगा। क्योंकिपदों कोसमानार्थकहोनेकर पर्यायताकीप्राप्तिहै । यातेद्वितीयपदकाप्रयोग होनेसेभी वाक्यत्वकानिर्वाहनहींहोसकता॥ शंका ॥ यद्यपिसामान्य रूपतासेलक्ष्यएकहीहै। तथापितिसलक्ष्यमें किसी विशेषअंशकोलेकर दूसरापदप्रवृत्तहोजायेगा । इसप्रकारअपर्यायताहोनेसे वाक्यत्वकैसे नहींहोसकता ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् लक्ष्यकोसामान्यविशेष

भावकासंसर्गीमानेहुए अखंडवाक्यार्थत्वकीहानिहोगी । औरअखंड
वाक्यार्थत्वकीहानिसेही द्वितीयपक्षभीअसंगतहै । औरलक्षणाकी
व्यर्थता द्वितीयपक्षमें औरअधिकदोषप्राप्तहोताहै ॥ शंका ॥ लक्षणा
काअभावतुमक्योंकथनकरतेहो। क्योंकिभिन्नपदार्थोंकेअभेदकोभीवेद
लक्षणासेबोधनकरदेगा ॥ समाधान ॥ विरुद्धधर्मवालेपदार्थोंका
अभेदनहींसंभवता । इसकारणसे लक्षणाकरकेभी भिन्नोंकेअभेदको
तात्पर्यवृत्तिसे वेदनहींबोधनकरसकता।क्योंकिप्रमाणवस्तुकाउत्पादक
नहींहोता । किंतुविद्यमानवस्तुकाज्ञापकहोताहै । औरभिन्नपदार्थों
काअभेदवास्तवसेहोतानहीं । लक्षणासेभीवेदकिसकोबोधनकरेगा ।
अथमहावाक्योंमेंलक्षणाकाअभाव औरहेतुसेपूर्वपक्षीउपपादनकरताहै
॥ किंवा ॥ जैसेमीमांसकमतमेंभव्यपदार्थजोअदृष्ट तिसकेअर्थभूत
पदार्थब्रीहिआदिकोंका उपदेशकियाजाताहै । तैसेवेदांतमतमेंनहीं॥
किंतु भूत पदार्थ जो आत्मा तिसकी प्राप्तिके अर्थ भव्यपदार्थ जो
श्रवणादि तिनकाउपदेश कियाजाताहै। यहांसिद्धपदार्थकानामभूत
है।औरसाध्यपदार्थकानामभव्यहै ॥ तिसकारणसेवेदांतशास्त्रमें“तत्त्व
मस्यादिमहावाक्य सच्चिदानंदस्वरूप सर्वकाशेपीजोचिदात्मा तिसके
प्रतिपादकहोनेकर प्रधानवाक्यकहेजाते हैं ॥ तिनसेभिन्नजोश्रव
णादिकोंकेबोधकवाक्यहैं वहमहावाक्योंको अपेक्षितअर्थका समर्पक
होनेकर उपकरणहोनेसे तिनकाअंशभूतगौणवाक्यहैं ॥ शंका ॥
महावाक्योंकोप्रधानताहो परंतुतिससेअध्यासिद्धहोताहै ॥ समाधान ॥
इसप्रकारमहावाक्योंको प्रधानवाक्यताकेहुए तिनमें लक्षणाकासंभव
किसरीतिसेहोसकताहै। किंतुकिसीरीतिसेभीनहीं॥यहसिद्धहोताहै ।

शंका ॥ हेवादिन्इसमेंक्या विलक्षणताहै ॥ जिसवाक्यमेंअनुपपत्ति हो तिसीमेंलक्षणा संभवहोसकतीहै ॥ समाधान ॥ प्रधानवाक्यों में जिनगौणवाक्योंकाअर्थ असमवेतहै । तिनको प्रधानवाक्योंके अनुसाररूपताकर व्याख्यानकरनेकेलिये गौणवाक्योंमेंहीलक्षणाका संभवहै ॥ प्रधानवाक्योंमेंनहीं । यद्यपिदोनोंवाक्योंमें वेदपनातुल्य है । यातेप्रधानवाक्योंमेंभीलक्षणासंभवतीहै । तथापिन्यायकाविरोध होनेसेतिनमेंलक्षणाकाअसंभवहै।सोन्यायपूर्वमीमांसाकेनवमअध्याय में महर्षिजैमुनीजीनेकहाहै ॥

❀ विप्रतिपत्तौविकल्पः स्यात् समत्वात् ।

गुणोत्वन्याय कल्पनेकदेशत्वात् । पू०मी०(६)(३)१५

अ० ॥ अग्निपोमीयएकपाशवालेपशुसंबंधियागके प्रकरण में (पाशान्) और (पाशं) यहदोमंत्रश्रवणकियेहैं । तहांवहु वचनांतमंत्रक्या?प्रकरणसे उत्कर्षणकरनेयोग्यहै वानहीं ॥ इसप्रकार संशयकेप्राप्तहुए तहांयहपूर्वपक्षप्राप्तहुया ॥ (पाशं) औ (पाशान्) इनदोनोंमंत्रोकायहांपरविकल्पहै । क्योंकिपाशजोप्रातिपदिकहै ॥ वहदोनोंमंत्रोंमेंसमानहै ॥ यातेमंत्रकाप्रकरणसेउत्कर्ष है । (सिद्धांत) यहांअग्नीपोमीयमेंसमवेत अर्थहोनेकर पाशवाचिप्रातिपदिकप्रधानहै । तिसकेअनुसारीहोनेसे बहुवचनवाचिप्रत्ययगौणहै । यातेतिसगौण प्रत्ययमेंलक्षणाकरके वहपाशकेअवयवोंकोकहताहै । इसलियेगौण शब्दमेंहीलक्षणाकीकल्पनाहोतीहै । तिसकेवलसेमंत्रकाप्रकरणसे उत्कर्षनहींहोसकता । क्योंकिप्रत्ययकोपदकाएकदेशहोनेसेप्रातिपदिककेआधीनहोनेकर उत्कर्षताकीअयोग्यताहै । इसन्यायसेगौणवाक्य

मेंहीलक्षणायुक्तहै ॥ प्रधानमेंनहीं ॥ इति ॥ अत्रपूर्वपक्षीसिद्धांत मुद्राकोयाश्रयणकरकेएकदेशीकामत निराकरणकरनेके लियेतिसको दिखलाता है ।

*** अथएकदेशीकी रीतिसेमहावाक्योंमें लक्षणाका निषेध ॥ ***

यहांकोईएकदेशीवेदांतीयहकहतेहैंकि तत्त्वमस्यादिमहावाक्योंमें हमलक्षणाहीनहींमानते।यातेलक्षणाकानिषेधहमारमतमेंअनिष्टनहीं। औरयहजोसिद्धांतीकहताहै।किलक्षणाकाअभावमानेहुएमहावाक्योंमें सामानाधिकराय कैसेसंभवेगा । क्योंकि जिनपदोंकी प्रवृत्तिका निमित्तभिन्नभिन्नहै।तिनकीएकअर्थमेंवृत्तिकाअभावहै। औरलक्षणासे विनाजीवतथा परमात्माकासामानाधिकरायकोईभीसंभावनकरनेको समर्थनहीं । यहांसामानाधिकरायएकताकानामहै अथवाजीवतथा परमात्माइनदोनोंशब्दोंकरकेतिनकेवाचकपदोंकाग्रहणकरना लक्षणा केअनंगीकारसेतिनकासामानाधिकरायनहींसंभवेगा॥यातेमहावाक्यो मेंलक्षणाअवश्यमानीचाहिये। सोयहकथनभीसमीचीननहीं। क्योंकि रज्जुसर्पकीन्याईएककावाधकरकेभीवहसामानाधिकरायवनसकताहै। अत्रइसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं। “सर्पोरज्जुः” प्रथमइसवाक्यमेंदोपदहैं । सोदोनोंएकविभक्तिअंतहुएएकहीअर्थकोकथनकरतेहैं । क्योंकिसर्प का अनुवादकरकेरज्जुकाविधानहै । सोरज्जुकाविधानसर्पकास्वरूप विद्यमानहुएनहींकरसकते । किंतुसर्पकास्वरूपसर्पपदसेअनुवादके वहानेसेवाधकरकेरज्जुकास्वरूपमात्रशेषरहताहै । इसप्रकारएकहीअर्थ मेंदोनोंपदोंकीवृत्तिनेसे जैसेसामानाधिकरायसंभवताहै । तैसेही

“त्वं” इसपदसे जीवको वाध कर “तत्” पदसे शेष रहे ब्रह्म मात्र का प्रतिपादन है । इससे दोनों पदों को एक अर्थ में वृत्ति होने कर सामानाधिकरण्य संभवता है ॥ शंका ॥ हे एकदेशिन् इस प्रकार वाध सामानाधिकरण्य माने हुए भी दोनों पदों की एक अर्थ में वृत्ति नहीं संभवती । क्योंकि तिनमें यद्यपि परमात्मपद त्रिदात्मा का उपस्थापक है तथापि त्वं पद जीवाभाव का बोधक है । तैसे माने हुए भिन्न अर्थ वाले पदों की एक अर्थ में वृत्तिके से कहते हो ॥ समाधान ॥ कल्पितपदार्थ का अभाव अधिष्ठानसे भिन्न नहीं होता याते जीवाभाव अधिष्ठान ब्रह्मस्वरूप है । इस कारणसे दोनों पदों की एक अर्थ में वृत्ति संभवती है ॥ शंका ॥ यद्यपि दोनों पदों में लक्षणानहीं भी है तथापि ब्रह्मपद में यह लक्षण परिहार करनी कठिन है । क्योंकि विशिष्ट पदार्थ में शक्तिवाला जो पद तिमको शुद्धपदार्थ की उपस्थिति में लक्षण की अवश्य अपेक्षा है ॥ समाधान ॥ जैसे सत्यादिपद शक्तिवृत्ति में शुद्धके उपस्थापक माने हैं । तैसे तत्पदसे भी शुद्ध की उपस्थिति बन जायेगी । लक्षण का अंगीकार निष्फल है ॥ शंका ॥ पूर्व उक्तरीतिसे तत्पदसे शुद्ध की उपस्थिति माने हुए “तत्त्वमसि” महावाक्यमें जीवके स्वरूप का वाध करना अशुक्त है । क्योंकि इस वाक्यमें तत्पदार्थ का प्रथमनिर्देश होने कर तिमको अनुवादके योग्य होनेसे तत्पद का वाध करके जीवत्व का विधान है । यद्यपि प्रथम कथन किये पदार्थको अनुवादके योग्य माने हुए “अथमात्मा ब्रह्म” इत्यमहावाक्यमें क्या गति होगी । क्योंकि तिसमें जीव का ही वाध प्रतीत होता है ॥ तथापि एक अर्थके निश्चायक वृत्तिमें कोई हेतु नहीं प्रतीत होता । इसलिये यदि जीवपद प्रतीत करने ही वाध की अशंका करने तो अत्र पुनः का वाध की न्याय अशुक्त

पार्थस्वरूपजीवमें तात्पर्यवालाहुआशास्त्रभी अप्रमाणरूपहोगा । समाधान ॥ यहतुम्हारीआशंकानहींसंभवती । क्योंकिब्रह्मपदार्थके स्वरूपमेंप्रमाणरूपसत्यादिवाक्यकाविरोधहोनेसेविनिगमनाविहदोष नहींप्राप्तहोसकता ॥ औरजीवभीशेष नहींरहता । तात्पर्ययह (सत्यंज्ञानमनंतं ब्रह्म ।) इसमंत्रसब्रह्मकी सत्यरूपताके निश्चयहुएपरिशेषसेसंसारीजीवकाहीबाधहोताहै ब्रह्मकानहीं । याते शास्त्रकोअप्रमाणातानहीं होती ।

❀ अथएकदेशीकेमतसेजीवके स्वरूपकाविचार ❀

शंका॥हेएकदेशिनृजिसजीवकाआपबाधकहनेहो । वहक्या? चिदात्माहीजीवहै । अथवावहजडपदार्थ है । प्रथमपक्षमें तोब्रह्मका हीनामजीवहै । यातेबाधकाअसंभवहै । और द्वितीय पक्षमें जडघटादिकोंके तुल्य तिसजीवमें भोक्तापनेका अभावहोगा । क्योंकिभोक्तापनाचेतनमेंही होताहै ॥ समाधान ॥ यहपूर्वउक्त दोषहमारेपक्षमेंनहींप्राप्त होसकते ॥ क्योंकितिसजीवकोचेतनका आभासहोनेकर प्रसिद्धजडचेतनसे विलक्षणअनिर्वचनीयपनाहै । अस्वप्रकाशहोनेसेचेतन्यसेभीविलक्षणाताहै । औरभोक्ताहोनेसेतथा चेतन्यकीन्याईभाममानहोनेसे इसकोचेतन्याभासकहतेहैं यातेजडसे भीविलक्षणहै । यहांपरयहअनुमानभीजानना ।

जीवोन्नतब्रह्मअस्वप्रकाशत्वात् घटवत् ॥ १ ॥

जीवोन्नतजडःभोक्तृत्वात् । व्यतिरेकेणघटवत् ॥ २ ॥

अ०॥जीवब्रह्मनहीं है अस्वप्रकाशहोनेसे जोजोस्वप्रकाशनहीं है।सोसो ब्रह्मअर्थात्चेतनभीनहींहै ॥ जैसेघटहै ॥१॥ औरजीवजडनहीं है

भोक्ताहोनेसे जो जड़ है । सो भोक्तानहीं है । जैसे घट है ॥२॥ इति ॥
 शंका ॥ चैतन्यको रूपरहित होनेसे तिसका आभास जीव है यह कथन
 हीनहीं संभवता । क्योंकि रूपरहित वायुका आभास कहीं भी देखनेमें
 नहीं आता ॥ समाधान ॥ रूपरहित चैतन्यका भी प्रतिबिंब संभवता है ।
 क्योंकि रूपरहित आकाशका स्वच्छ जलमें आभास देखनेमें आता है ।
 और दृष्ट्यर्थमें कोई भी अनुपपत्ति नहीं हो सकती ॥ शंका ॥ जलमें आ
 काशका प्रतिबिंब नहीं संभवता । क्योंकि वह नीरूप है । और जलमें जो
 तिसके आभासकी प्रतीति है । वह तो आकाशवर्ती जो सूर्यकी किरणोंतिन
 के आरोपसे होती है । ऐसे तुम निश्चय करो । याते जीव चैतन्यका आभास
 नहीं ॥ समाधान ॥ स्वल्प जलमें और अगाध जलमें महाकाशकी
 प्रतीति होती है । इसहे तुमसे कामनासे विना भी पुरुषने ऊर्ध्वदेशवर्ती आका
 शका प्रतिबिंब स्वीकार किया चाहिये ॥ ऊर्ध्वदेशवर्ती महाकाशके आभास
 से विना थल्पगंभीरतावाले स्वच्छ जलमें महत्परिमाणगंभीरताका भ्रमनहीं
 संभवेगा तिसकारणसे जलमें आकाशका आभामविद्यमान ही है । याते
 चेतनका आभासरूप जीवसे नही संभवता । किंतु संभवता है ॥ पूर्व
 उक्त युक्तिसे सिद्धचिदाभामरूप जीवको श्रुतिप्रमाणसे भी सिद्ध करते हैं ।
 (रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव ।) थ० ॥ हर एक ज्यादियमें चिदा
 त्मा प्रतिबिंबभावको प्राप्त हुआ । इम श्रुतिसे भी चिदाभासरूप जीवकी
 सिद्धि है ॥ शंका ॥ हे एकदेशिन्मंसारि जीवको बाधकिये हुए भी आत्मा
 की मुक्ति नहीं सिद्ध हो सकती । क्योंकि मूलमहित अनर्थरूप जो बाध
 संसार है तिसका तो उच्छेद हुआ नहीं । समाधान ॥ (इदं सर्वयद
 यमात्मा ।) थ० ॥ जो यह सर्वदृश्य है मोयह आत्मारूप ही है । इस

वाक्यकरत्रज्ञानतत्कार्यरूप सकलत्रनर्थरूप संसारकेबाधहुएकेवल
 आनंदस्वरूपपरमात्माही मुक्तिकालमेंशेषरहताहै । यातेचैतन्याभास
 पक्षहीश्रेष्ठहै ॥ इति एकदेशिमत्तम् ॥

❀ अथमहापूर्वपक्षीकीरीतिसे सिद्धांतमुद्राको

आश्रयणाकर एकदेशीके मतकाखंडन । ❀

अविद्योत्थंचिदाभासं जडाजडविलक्षणम् ।

जीव्येवाध्यमित्याहुस्तानाचार्यां निषेधति ॥ १ ॥

चौ०—जडचिदभिन्नजीवहै जोई । अविद्यक चिदाभासहै सोई ॥

ताकोबाधजोउ नसरहैं । तिनेनिषेध आचार्य करहैं ॥ १ ॥

समाधान ॥ यह एकदेशीकामत्त समीचीननहीं । क्योंकि

बंधतथामोक्षको व्यधिकरणाताकी प्राप्तिहोतीहै ॥ तथाहि प्रथम

भोक्तातोजीवहीहै । क्योंकि “मैं सुखीहूँ” यहप्रतीतिजीवमेंहोतीहै ॥

औरअपनेमेंसमवेतसुखके साक्षात्कारवालेकोही भोक्तापना होताहै ।

औरवहभोक्तृत्वकर्तृत्वसेविनानहींसंभवता । क्योंकिकर्त्ताहीभोक्ता

होताहै । औरवहकर्तृत्वप्रमातृत्वसेविनानहींसंभवता । क्योंकिप्रथम

यहपुरुषकिसीवस्तुकोजानताहै । पुनःतिसकीइच्छाकरताहै । तिससे

अनंतरतिसकीप्राप्तिकेनिमित्तकोईक्रियाकरताहै । यहवार्त्तासर्वलोकों

मेंप्रसिद्धहै । तिसकारणसे भोक्ताभोगभोग्य औकर्त्ताक्रियाकर्मतथा

प्रमाताप्रमाणप्रमेय यहनवप्रकारकाबंधजीवनिष्ठहीहै । तिसजीवथौ

अज्ञानकाबाधहोनेकरमोक्षदशामें निरावरणसुखस्वरूपतासेअवस्थिति

रूपमुक्तिपरमात्माकीहोगी । इसप्रकारबंधतथामोक्षकीव्यधिकरणाता

है । सोनहींसंभवती । क्योंकिवद्धहीमुक्तहोताहै । वद्धअन्यहोऔर

मुक्तअन्यहो यहनहींहोसकता । किंवायदिजीवकावाधमानोंगे । तो श्रवणादिसाधनोंमेंकौनप्रवृत्तहोगा ॥ औरयदिऐसेकहो । किमोजकीइच्छावालासुमुच्छु तिनसाधनोंमेंप्रवृत्तहोगा । तोहमयह पूछतेहैं । वहकिसकामोजचाहताहै । क्या ? किसीअन्यपुरुषका मोजचाहताहै । अथवाअपनामोजचाहताहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता क्योंकिदूसरेकीमुक्तिकेअर्थकोईअन्ययत्नकरताहै । यहकहींदृष्टनहीं । औरयदिद्वितीयपक्षकहो तोतिसमेंयहविचारकर्तव्यहै । क्या ? अपना नाशपुरुषार्थहै । अथवास्वदुःखकीनिवृत्तिपुरुषार्थहै । इनमेंभीप्रथम पक्षमेंयहविचारणीयहै । अपनानाशक्या ? स्वतः पुरुषार्थरूपहै । अथवा पुरुषार्थकामाधनहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिस्वनाशसुख तथादुःखाभावसेभिन्नहै । यातेतिसकोपुरुषार्थरूपतानहींसंभवती । औरयदियहद्वितीयपक्षकहो । किदुःखकाउपादानकारणजीवहै । और उपादानकानाशकार्यकेनाशमेंहेतुहोताहै । यातेजीवकेनाशसेदुःख निवृत्तहोताहै । इसप्रकारदुःखाभावपुरुषार्थरूपहै तिसकासाधनहोने सेस्वनाशभीपुरुषार्थरूपहै । सोयहपक्षभीसमीचीननहीं । क्योंकि केवलदुःखाभावकोहीतुमपुरुषार्थरूपकहतेहो । अथवाआत्मीयदुःखा भावकोकहतेहो । इनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिशत्रुके दुःखाभावकोभी पुरुषार्थरूपताहुईचाहिये ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहीं संभवता ॥ क्योंकियात्माकानाशहोनेसे यहदुःखाभावरूपपुरुषार्थ किसकोप्राप्तहोगा ॥ औरअपनेयात्माकेनाशकार्यत्नकोईभीकरतानहीं औरआत्मीयदुःखाभावपुरुषार्थहै ॥ इसपक्षकेनिराकरणसेस्वदुःखकी निवृत्तिपुरुषार्थहै ॥ यहप्रथमकथनकियाद्वितीयपक्षभी निरासहुया

जानलेना ॥ यातेजीवकाबाधनहींसंभवता ॥ पूर्वआत्माकाबाधमान कर अभासपक्षमेबंधमोक्षादिव्यवस्थाकी अनुपपत्तिप्रतिपादनकी।अब जीवात्माकेअसत्यत्वकाअभावहोनेसेतिसकाबाधहीनहींसंभवता ॥ इस अर्थकोप्रतिपादनकरतेहैं ॥ औरजीवात्माकल्पितभीनहीं ॥ योंकि जोवादीजीवात्माकोकल्पितमानताहै ॥ तिसकोहमयहपूछतेहैं ॥ किजीवकेसत्यत्वकाग्राहककोईप्रमाणनहीं।इसकारणसेतुमजीवकोअसत्यकहतेहो ॥ अथवायुक्तिसेतिसकाबाधहोजाताहै । यातेअसत्य कहतेहो । अथवाअसत्यत्वकाबोधकप्रमाणविद्यमानहै यातेअसतहै ॥ इनमेंप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥ क्योंकि (अनेनजविनात्मना) यहश्रुतिजीवकीसत्तरूपतामेंप्रमाणहै । यद्यपिजीवतथापरमात्माका अभेदमात्रइसश्रुतिमेंप्रतीतहोताहै । कोईजीवकासत्यत्वनहींप्रतीत होता ॥ यातेजीवकल्पितकैसेनहीं किंतुकल्पितहै ॥ तथापिसत्यज्ञानादिपदार्थोंके निर्वचनसे सिद्धजो सत्तरूपपरमात्मा तिसकेसाथअभेद श्रवणहोनेसे जीवकाअसत्यत्वबाधितहै ॥ शंका ॥ “नाहमीश्वरः” इसभेदग्राहिप्रत्यक्षकेविद्यमानहुए अभेदश्रुतिउपचारिकहै ॥ अर्थात् अन्यार्थकोबोधनकरतीहै ॥ समाधान ॥(नान्योतोऽस्तिद्रष्टा) अ० ॥ इसआत्मासेभिन्नऔरकोईद्रष्टानहीं ॥ इसश्रुतिमेंभेदकानिषेध श्रवणहोताहै ॥ यदिभेदकोपारमार्थिकमानोगे तोयहनिषेधव्यर्थहोगा यातेजीवकाबाधनहींहोता ॥ औररवतःअसंसारिस्वभावजोपरमात्मा है तिसकोसंसारिस्वभावजीवरूपतानहींसंभवती ॥ यातेजीवकोसत्य मानेहुएयुक्तिकाविरोधप्राप्तहोगा । यदियहद्वितीयपक्षकहो तोयहभी नहींसंभवता । क्योंकिजैसेआकाशमें अविद्याकेवलसेकल्पितनीलता

प्रतीतहोतीहै । तैसेस्वतःअसंसारिस्वभावआत्मामेंअविद्यादिउपाधि
केसंबंधसे कल्पितसंसारिजीवरूपतासंभवतीहै ॥ और॥

रूपंरूपंप्रतिरूपोवभूव

इसश्रुतिप्रमाणसेजीवकीअसतरूपतासिद्धहै । यहतृतीयपक्षभी
असंगतहै । क्योंकितिसवाक्यमें मनुष्यत्वादिधर्मयुक्त मनुष्यपशु
पक्ष्यादिशरीरदोवारकथनकियेहुए रूपशब्दकाअर्थहैं । औरतिन
शरीरोंको सादृश्य प्रतिरूपशब्दकाअर्थहै जैसे (मुद्राप्रतिमुद्रा)
इसवाक्यमेंमुद्राकेसादृश्यकोही प्रतिमुद्राशब्दबोधनकरताहै । किसी
औरअर्थकोनहीं । तैसेयहांभी प्रतिरूपशब्दसे रूपसादृश्यहीकथन
कियाहै । आभासरूपतानहींकथनकी ! तैसेहीअन्यवाक्यमेंभीकहाहै

देहंदेहंप्रविष्टःसंस्तद्देहाकारतामगात्

अ०॥ देहदेहमेंप्रविष्टहुआआत्मा तिसतिसदेहकीसमानाकारता
कोप्राप्तहुआ। इसप्रकारजीवकोआभासरूपताकाअभावहोनेसेसतरूपता
संभवतीहै॥ शंका ॥ प्रतिरूपशब्दको दर्पणस्थमुखादिकोंमें रूढहोने
सेतिसकासादृश्यअर्थ आपकैसे कथनकरतेहो । औरयदितिसकाअर्थ
प्रतिविंवमानोगेतोजैसेदर्पणस्थमुखमिथ्याहीहोताहै। तिसकीन्याईजीव
कैसेसतरूपहोसकताहै किंतुवहभीमिथ्याहीमाननेयोग्यहै ॥ समाधान
॥ यद्यपिपूर्वउक्तरीतिसेजीवप्रतिविंवरूपहो तथापिवहअसतनहींहै ।
क्योंकिजैसे “श्रीवामेंस्थितजोमुखहै सोईदर्पणमेंस्थितहै” इसप्रत्य
भिज्ञासेविंवरूपप्रतिविंवरूपकाअभेदप्रतीतहोताहै । यातेप्रतिविंवरूपमिथ्यानहीं
किंतुसतविंवरूपहीहै तैसेजीवभीविंवरूपस्वरूपहोनेसे मिथ्यानहीं
किंतुसतरूपहीहै । औरआभासतोउपाधिगतत्वरूपएकधर्महै। सोजीव

रूपनहीं किंतुजीवकाधर्महै । औरजीवतोआभाससेभिन्नचेतनरूपही है । तिसीसेअसत्यनहीं । यहउक्तअर्थसर्वज्ञात्ममहामुनियोंनेभी कथनकियाहै ॥

उपाधिरंतःकरणत्वमर्थे जीवत्वमाभासनमत्रतद्वत् ।
तदन्विताचित्प्रतिविंबमेवमनन्वितांतामिहविंबमाहुः १

(सं० शा० अ० २ श्लो० २७८)

अ० ॥ इससेपूर्वकारिकामें कथन कियाजैसेतत्पदकेवाच्यमें प्रविष्टआभासरूपईश्वरत्वमिध्याहै तैसेत्वंपदार्थमेंअंतःकरणउपाधिहै। औरस्यहांजीवत्वहीआभासरूपहै ॥ अर्थात्मिध्याहै ॥ औरसाभास अंतःकरणरूपउपाधिके संबंधवालाचेतनप्रतिविंबकहाजाताहै । और साभासअंतःकरणके संबंधसेरहितचेतनकोयहां विंबकहतेहैं ॥ १ ॥ इति ॥ यातेजीवकास्वरूपमिध्यानहीं किंतुसत्यहै ॥ शंका ॥ प्रति विंबरूपजीव यदिविंबस्वरूपहीहै ॥ तोविंबऔंप्रतिविंबतथास्वरूपयह भेदकाकथनरूपव्यवहार कैसेहोताहै ॥ समाधान ॥ एकवस्तुमेंभी भेदव्यवहारउपाधिके आधीनसंभवताहै । क्योंकिजेसेसर्वकल्पनासे रहितएकहीस्वरूप मुखतथा चंद्रादिकों में विंबऔंप्रतिविंबतथास्वरूप यहतीनप्रकारकाव्यवहारउपाधिमेंतिनकेप्रवेशकेआरोपसेअनंतर देखने मेंआताहै।तैसेसर्वकल्पनासेरहितएकस्वरूपआत्मामेंभीत्रिविधभेदव्यवहारसंभवताहै।यद्यपिआत्माकोअनेकप्रपंचरूपताहोनेसेएकरूपताका कथनयुक्तनहीं।।तथापिअज्ञानकेवशसेतिसकोअनेकरूपताहै। परन्तु वास्तवसेस्वरूपसर्वकल्पनासे रहितएकरूपहीहै ॥शंका॥ यद्यपिपूर्व उक्तीतिसेजीवसत्यस्वरूपहो । तथापि तिमकावाधमानकरसामाना

धिकररायक्योंनहो ॥ समाधान ॥ हेएकदेशिन्वाधक्यविरोधीही सत्यत्वहै ॥ यातेतिसकावाधकेसेहोसकताहै ॥ किंतुनहींहोसकता । इसप्रकारजीवको आभासरूपताकाअभावहोनेसे तत्त्वमस्यादिकमहा वाक्योंमेंवाधसामानाधिकररायकी कल्पनावेदवाह्यहै।यद्यपिइसकल्पना कोवेदवाह्यकहनानहींसंभवता । क्योंकिवेदिकएकदेशीनेहीस्वीकार कीहै । तथापियुक्तियोंप्रमाणका विरोधहोनेसेअयुक्तहै ॥ सोयुक्ति तथाप्रमाणपूर्वकथनकरआएहैं । इसप्रकारसिद्धांतमुद्राकोआश्रयण करकेमहापूर्वपत्नीनेएकदेशीका मतनिरासकिया ॥ अलक्षणांनि रासप्रकरणकोपूर्वपत्नी समाप्तकरताहै । पूर्वकथनकियेहुएलक्षणाकी अनुपपत्तिरूपहेतुसेलक्षणाकरके परिपूर्णसच्चिदानंदप्रत्यगात्माका बोधननहींसंभवता ॥ इतिपूर्वपत्त ।

❀ अथसिद्धांत) महावाक्योंमें लक्षणाके संभवकाप्रकार निरूपण । ❀

अखंडार्थपरत्वं हिपदयोर्लक्षणांविना ।

निर्णीयेत्यंतमाचार्यः पूर्वपक्षंनिपेधति ॥ १ ॥

चौ० ॥ अखंडार्थपरताहै जोई । लक्षण विनापदोंको सोई ॥

याविधतां निर्णयकर गुरुवर । पूर्वपक्षनिपेधहिवलधर ॥१

समाधान ॥ यहांपरपूर्वपत्नीसेहमयहपूछतेहैं । महावाक्यनिष्ठ पदोंमेंलक्षणाकाअभावजोतुमकहतेहो।वहक्या?मुख्यार्थकीअनुपपत्ति के अभावसेकहतेहो । अथवामहावाक्योंका अखंडार्थमे तात्पर्य नहींइसलियेकहतेहोप्रथमपक्षतोनहींसंभवता क्योंकि—

मू० ॥ विरुद्धयोरभेदोहिनवेदेनपूमीयते ।

अनन्यगतिकत्वेनमानांतरस्यवाधनम् ॥३७॥

नीलछंद ॥ वैरिनकेरथभेद नवेदहुवोधसके ।

लोकविषेयहरीति कर्द्धजनसोजथके ।

थौरगतीनहिकोय कर्द्धविधिजाहिवनै ।

वाधतहांहुइमान नरचकदोपगनै ॥ ३४ ॥

टी० ॥ प्रत्यक्षादिकप्रमाणोंका विरोधहोनेसेजीवग्रहकेअभेद कीअयोग्यताहै ॥ यातेविरुद्धधर्मवालोंकाअभेद वेदवोधनकरनेको समर्थनहीं। इसप्रकारमुख्यार्थकेअसंभवसे तत्तमूलकलजगामहावाक्यों मेंसंमतीहै । औरद्वितीयपक्षमीनहींसंभवता । क्योंकिअखंडएकरस चिदात्तामें तात्पर्यकेग्राहकपदविधिलिंगकी विद्यमानताहै । यातेतिस तात्पर्यकोअतिप्रसिद्धहोनेसे तात्पर्यकेअभावसे लक्षणाकाअभावभी नहींकहसकते ॥ शंका ॥

❀ पौर्वापर्यं पूर्वदौर्वलयंपूकृतिवत् ॥ पू० शी० अ० ६० पा० ५॥ मू० ५४॥

अ० ॥ ज्योतिष्टोमसंज्ञकयागमेंसामगायनकरनेवालेउद्गाताथी प्रतिहर्त्तादोक्तत्वक्रमसिद्धहैं । तिसयागमेंअथर्वव्यादिअत्रत्वक्परस्पर पृष्ठभागमेंशाटकाकोहस्तसेग्रहणकरकेपवमानस्तोत्रकेअर्थयज्ञशालासे बाह्यनिकसतेहैं । तिनमेंयदिदेवगतिसे उद्गातावाप्रतिहर्त्ताका क्रमसे वियोगहोजाय तोवहांवियोगनिमित्तक विरुद्धप्रायश्चित्तसुनाजाताहै । एकतोप्रतिहर्तृविच्छेदनिमित्तक सर्वस्वदक्षणादेकरप्रारंभकर्मकासमाप्त करना। औरइससाउद्गातृविच्छेदनिमित्तक दक्षणासेविनाप्रारंभकियेहुए कर्मकासमाप्तकरना । यहांपरयहसंशयहै। क्या?प्रतिहर्तृवियोगनिमित्त

कसर्वस्वदक्षणादेकरप्रारंभकर्मकासमाप्तकरनायोग्यहै । अथवाउद्गातृ
 वियोगनिमित्तकदक्षणासेविनायागकासमाप्तकरनायोग्यहै।तहांयहपूर्व
 पक्षप्राप्तहुआ।कोईविरोधीनउत्पन्नहोनेसेपूर्वनिमित्तबलवानहै। यातेपूर्व
 विच्छेदनिमित्तकप्रायश्चित्तही अनुष्ठानकरनेयोग्यहै।अथसिद्धांत।निमि
 त्तोंकेपूर्वअपरभावकेहुएपूर्वनैमित्तिककोदुर्बलताहै। औरपूर्वनिर्पेक्षउत्तर
 नैमित्तिकको तिसकावाधकरूपताकरउदयहोनेसेपरबलताहै। औरपूर्व
 नैमित्तिककेउदयकालमेंउत्तरकी अप्राप्तिहोनेकर पूर्वनैमित्तिककरउत्तर
 निमित्तकावाधनहींहोसकता। औरउत्तरनैमित्तिकतोपूर्वनैमित्तिकको
 वाधकरकेहीउत्पन्नहोताहै।जैसेदर्शपूर्णमासरूपप्रकृतियागमेंनिर्णीतउप
 कारवालीकुशमयजोवर्हिहैंवहश्वेनरूपविकृतियागजोउपकारकीथाकां
 क्षावालातिसमेंप्रथम अतिदेशसेप्राप्तहोतीहैं।वहवर्हि उपदिष्टजोशमय
 वर्हिनिर्पेक्षपश्चात्भावी अर्थात्अवी जिनकाउपकारकल्पनानहींकिया
 तिनकरप्रथमवाधकीजातीहैं॥ इति ॥इसन्यायसेपूर्वहोनेवालेजोभेदके
 ग्राहकप्रत्यक्षादिप्रमाणतिनकापश्चात्भावीश्रुतिप्रमाणसेवाधहोजायेगा
 औरब्रह्मात्माकेएकत्वकीसिद्धिअर्थ सर्वभेदग्राहिप्रत्यक्षादिप्रमाणोंका
 वाधअवश्यकरनेयोग्यहै । इसकारणसेमंमारीतथाअसंमारीकेभेदको
 ग्रहणकरनेवालाजो प्रमाणहै तिसकावाधकरकेहीवेदतिनके अभेदको
 बोधनकरेगा।तिससेमुख्यार्थकीअनुपपत्तिआपकैसेकहतेहो॥समाधान
 हेवादिन्परिपूर्णतथा ब्रह्मात्मएकरसजो अखंडअर्थहै। तिसकीसिद्धि
 केअर्थजोसकलप्रमाणांतरका वाधकरनाहै । वहअन्यगतिकेअभाव
 सेहोताहै । जहांकिसीप्रकारसेभी प्रमाणांतरकेवाधविनाही स्वार्थकी
 सिद्धिहो तहांतिसका वाधकरनायुक्तनहीं।।तैसेमानेहुए प्रमाणांतरको

बाधनकरकेतिसकी अनुसारतासेतोमुख्यार्थकी अनुपपत्तिसंभवतीहै। तिसकोदेखकर लक्षणावृत्तिसे वेदब्रह्मात्माकीएकताको बोधनकरता है। इसप्रकारमहावाक्योंमें लक्षणाकीसिद्धिहोतीहै ॥ अबइसीअर्थ कोदिखलातेहुएपूर्वपक्षके अनुवादपूर्वक तिसको दूषितकरनेलियेवि स्तारपूर्वकश्लोककी व्याख्याकरतेहैं। यहजोपूर्वपक्षीनेकहाथाकि महावाक्योंमें मुख्यार्थकीअनुपपत्तिके अभावसे लक्षणाकाअभावहै। सोकथननहींसंभवता। क्योंकिजीवतथापरमात्माकाअभेद प्रत्यक्षा दिप्रमाणकरबाधितहै। यद्यपिविरुद्धोंकाभीअभेद शुक्तिरजतादिकोंमें देखाहै। तथापिविरुद्धोंकाअभेद प्रमाणसेकहींनहींदेखा। औरशुक्ति रजतादिकोंकाअभेदतोभ्रमसिद्धहै। यातेतिसकोदृष्टांतरूपतानहीं संभवती। औरप्रमाणांतरकोवेदकर बाधितहोनेसे मुख्यार्थकीअनुप पत्तिनहीं। यहकथनभीअसंगतहै ॥ क्योंकियहवाधकेयोग्यहै इतने कथनसेही बाधकीसिद्धिनहींहोसकती॥ किंतुस्वविषयसिद्धिकीअन्य थाअनुपपत्तिसे बाधकीसिद्धिहोतीहै। अर्थयह जहांश्रुतिकेविषयकी सिद्धिप्रमाणकेबाधसेविनानसिद्धहोतहांप्रमाणांतरका बाधसिद्धहोता है। अन्यगतिकेहुएनहींसिद्धहोता॥ औरयहांतत्त्वमस्यादिमहावाक्योंमें तोलक्षणावृत्तिसेभीतिनको ब्रह्मात्माकेअभेकीप्रतिपादकता संभवती है ॥ यातेतत्त्वमस्यादिमहावाक्योंसे प्रमाणांतरकाबाधनहींहोता ॥ औरजबप्रमाणांतरकाबाधनहुआ। तबमुख्यार्थकीअनुपपत्तिसिद्ध हुई। तिससेलक्षणाकीसिद्धि महावाक्योंमेंहुई ॥ यहभावहै। और प्रमाणांतरकेविरोधकर मुख्यार्थकी अनुपपत्तिनमाने तोसर्वत्रहीलक्ष णाकाअभावहोजायेगा ॥ क्योंकिलोकमेंभीनिश्चितप्रामाण्यवाले

वाक्यमेंही लक्षणा मानी है। तैसे वाक्यका विरोध होनेसे विरोधि प्रमाणां तरका वाध हो जायेगा। तिससे मुख्यार्थकी अनुपपत्तिका अभाव होनेसे लक्षणाकी प्राप्ति भी नहीं होगी। याते अन्यगतिके हुए प्रमाणां तरका वाध करना युक्त नहीं। और यह जो वादीने पूर्व कहा था कि सर्वसंसर्गसे रहित शुद्ध ब्रह्मात्माका अभेद रूप जो अर्थ तिसमें लक्ष्यताके प्रयोजक रूप वाच्यार्थके साथ संबंधका अभाव होनेसे तिसमें लक्षणाका अर्थ संभव है ॥ ऐसे कथन करनेवाले वादीसे हम यह पूछते हैं। वाक्यमें लक्षणाकी कल्पना अधिकारी मुमुक्षु करता है। मो कल्पना तिसको क्या? तत्त्वसाक्षात्कारसे उत्तरकालमें होती है। अथवा पूर्वकालमें होती है। इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि तत्त्वज्ञानमें उत्तर लक्षणाकी कल्पना प्रयोजन शून्य होनेसे व्यर्थ है और अन्योऽन्याश्रय दोषकी भी प्राप्ति है। क्योंकि साक्षात्कारसे उत्तर लक्षणाकी कल्पना होगी। और लक्षणाकी कल्पनासे अनंतर साक्षात्कार होगा। और वाक्यमें योग्यताका संपादक होनेकर लक्षणाको वाक्यार्थ ज्ञानमें कारणाता है। याते तत्त्वज्ञानसे पूर्व लक्षणाकी कल्पना संभवती है। यह द्वितीय पक्ष यदि मानो तो वाच्यार्थके साथ संबंध सुखे नहीं बन सकता है क्योंकि शुद्ध लक्ष्यार्थ यद्यपि स्वभावसे असंग भी है। तथापि अविद्या और अंतःकरण रूप उपाधिका जो अविद्याकर कल्पित संबंध हैं वह संभव हो सकता है। जैसे दिवांधत्व रूप दोष युक्त जां उल्लूकादि तिनकी कल्पनाकर सिद्धतमका आदित्यमें कल्पित संसर्ग होता है। तैसे अविद्याकेवलसे वाच्यार्थके साथ शुद्ध लक्ष्यार्थका कल्पित संबंध संभवता है। तात्पर्य यह है। अविद्योपाधिक तत्रे तन्य तत्पदका वाच्यार्थ है। और अंतःकरण उपहित तत्रे तन्य तत्पदका वाच्यार्थ है। तिन दोनोंके साथ लक्ष्यार्थ रूप ब्रह्मात्माके अभेदका

अविद्याकरकल्पितसंबंधभीविद्यमानहै । क्योंकितत्त्वज्ञानसेपूर्वकालमें ब्रह्मात्माकाअविद्याकेसाथविरोधनहोनेसे अविद्याविद्यमानहै।यातेतिस अविद्योपाधिकमेंलक्षणाकैसेनहींसंभवती। किंतुसंभवतीहै।शंका।कल्पित संबंधमूलकलक्षणाकोभी कल्पितहोनेसेलक्षणापारमार्थिकीनहींहोगी औरतिसलक्षणामूलक वाक्यार्थकासाक्षात्कारभी कल्पितहोगा ॥ उपहासपूर्वकासमाधान।हेवादिनलक्षणाकोकल्पितकथन हमकोअनिष्ट नहीं।यातेयहवार्ताउच्चस्वरसे तुमनेनकहनीचाहिये।क्योंकिकोईसुनन ले।अर्थयह अद्वैतकाविरोधहोनेसेहीसकलद्वैतकोअसतमानेहुएभी हम अद्वैतवादीयोंकेसिद्धांतका अविरोधअतिस्पष्टहै । तोतिसद्वैतकाएक अंशरूपलक्षणाऔरतत्तमूलकवृत्तिरूपसाक्षात्कारकोकल्पितहोनेसेहमारे सिद्धांतकीक्याहानिहोसकतीहै।औरयहजोपूर्वकहाथा।किकिसीपदसे लक्ष्यकीउपस्थितिहोतीहै वानहीं । यदिनहींहोती तोलक्ष्यार्थ मेंमूकताप्रसंगहोगा अर्थात् लक्ष्यार्थका बोधनहींहोगा । सोयह कथनभी समीचीन नहीं । क्योंकि पदार्थके प्रतिपादन करने वालेजोसत्यज्ञानादिपदहैं । तिनसेहीतत्पदकेलक्ष्यार्थकी उपस्थिति होनेसे तत्पदकेलक्ष्यार्थमें मूकताकीप्राप्तिनहींहोती । और सत्यादि पदशक्तिवृत्तिसे ब्रह्ममें प्रवृत्तहोतेहैं । बालक्षणासे प्रवृत्तहोते हैं । इनदोनोंपक्षोंमेंवादीनेदोषकहाथा । सोतिनमेंलक्षणासेतोसत्यादि शब्दकीप्रवृत्ति ब्रह्ममेंहममानतेनहीं।यातेअनवस्थादोषकेपरिहारकीहम कोकिंचित्भीअपेचानहीं।क्योंकिलक्षणाकेअभावसेअनवस्थादोषप्राप्त हीनहींहोता॥ शंका ॥सत्यादिपदशक्तिवृत्तिसे ब्रह्मकोबोधनकरतेहैंयह पक्षभीनहींसंभवता। क्योंकितत्त्वमस्यादिमहावाक्यगतपदोंमेंभीतैसेही

माननाहोगा। अर्थात् वह भी लक्षणसे विना शक्तिवृत्तिसे ही ब्रह्मको बोधन करेंगे॥ समाधान॥ हेवादि न कर्तृत्व भोक्तृत्व अपरोक्षत्वादि धर्मविशिष्टचेतन में त्वंपदकी शक्तिग्रहण होनेसे त्वंपदके श्रवणसे कर्तृत्वादि धर्मविशिष्टकी ही उपस्थिति होगी ॥ और सर्वज्ञत्व अर्थात् भोक्तृत्व अपरोक्षत्वादि धर्मविशिष्टचेतनमें तत्पदकी शक्तिग्रहण होनेसे तत्पदके श्रवणहुए सर्वज्ञत्वादि धर्मविशिष्टचेतनकी ही उपस्थिति होगी ॥ शुद्धकी उपस्थिति नहीं होगी। यातेतिनमें विरोधके परिहारार्थ लक्षणास्वीकारकी है॥ शंका ॥ इस प्रकार मानेहुए सत्यत्व ज्ञानत्वादि धर्मविशिष्टचेतनमें सत्यादिशब्दकी प्रवृत्ति होनेसे तिसशब्दकर शुद्धलक्ष्यार्थब्रह्मात्माका जो अभेद वह नहीं प्रतीत होगा। क्योंकि तिससे भी विशिष्टकी ही उपस्थिति होगी। समाधान ॥ हेवादि नाना उपाधियोंके साथ संबन्धवाली जो एकव्यक्ति है उससे भिन्न सामान्यका अंगीकार है। यहां पर यह अर्थ ज्ञातव्य है। ज्ञानपदकी शक्तिका ज्ञानव्यक्तिमें ग्रहण नहीं ॥ क्योंकि व्यक्ति मात्रमें शक्तिमानेहुए अनंत तथा व्यभिचारदोषकी प्राप्ति है ॥ और यदि ऐसे कहो कि ज्ञानत्व सामान्य वालियां जो अंतःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञानव्यक्ति या हैं। तिनमें ज्ञानपदकी शक्ति है। सो यह कथन क्या? त्रितयपदार्थमें शक्तिवादीने यायिकका है ॥ अथवा जाति मात्रपदार्थमें शक्तिवादीमीमांसाकका है ॥ दोनों मतोंकी रीतिसे ब्रह्मनिष्ठवाच्यताकी हानि नहीं होती। तैसे ही दिखलाते हैं। नानाव्यक्तियोंमें अनुगतधर्म जो सामान्यवह तिनमें अनुगतव्यवहारका हेतुरूपताकर स्वीकार किया जाता है। और वह ज्ञानत्व सामान्य ब्रह्मसे भिन्न नहीं है ॥ नानाभिन्नभिन्न जो अंतःकरणकी वृत्तियें वह ज्ञानत्वका व्यक्तिरूपताकर स्वीकारकी हैं। तिनमें कल्पितसं

बंधवाली जो अनुगतव्यक्ति है अर्थात् ॥

• ❀ व्यज्यते अनया इति व्यक्तिः स्वरूपचैतन्यम् ❀

अ० ॥ प्रकटहोइसकरकेवहव्यक्तिकहियेहै। यातेस्वरूपचैतन्यही व्यक्तिशब्दका अर्थहै। उससेही सर्ववृत्तियोंकी प्रकटताहै। तिस अनुगतचैतन्यव्यक्तिसेभिन्न सामान्यका अनंगीकारहै। औरतिसकेमानने काकोईप्रयोजनभीनहीं। क्योंकिअनुगतव्यवहारकीसिद्धि अनुगत व्यक्तिसेहीहोजायेगी। इसप्रकारदोनोंमें ज्ञानत्वसामान्यकेस्थानापन्नशुद्धब्रह्महीवाच्यसिद्धहोताहै। इसप्रकारसत्यादिपदोंमेंभीसत्यत्वादि सामान्यस्थानापन्नशुद्धब्रह्मही तिनकावाच्यजानलेना। अबअनेक उपाधियोंमेंसंबंधवालीएकअनुगतव्यक्तिसेही अनुगव्यवहारकीसिद्धि मेंदृष्टान्तकहतेहैं। जैसेजलकरपूरितजोदशपात्रहैं तिनमेंदशहीचंद्रके प्रतिबिंबप्रतीतहोतेहैं। तिनमें “यहचंद्रहै” यहचंद्रहै। ऐसाअनुगत व्यवहारहोताहै। वहव्यवहारचंद्रत्वजातिकृतनहीं। क्योंकितहांनानाव्यक्ति रूपजातिकेव्यंजकका अभावहोनेसे औरचंद्रकीएकव्यक्तिकोजाति काबाधकहोनेसे चंद्रत्वधर्ममें जातिरूपता अनंगीकारहै। और जल पात्ररूपउपाधियोंकोभीअनुगतहोनेसेतिनकोभीअनुगतव्यवहारकी हेतुतानहींसंभवती। यातेतहांसर्वउपाधियोंमें अनुगतजोचंद्रव्यक्ति है तिससेहीअनुगतव्यवहारकी सिद्धिहोतीहै। तैसे अंतःकरणकी वृत्तियोंमेंअभिव्यक्तहुईजो चैतन्यरूप ब्रह्मव्यक्तिहै। तिसकरही “यहज्ञानहै” यहज्ञानहै। ऐसा अनुगतव्यवहार संपादन कियाजाताहै। यातेज्ञानत्वजातिकास्वीकारव्यर्थहै। इसप्रकारज्ञानत्व कोजातिरूपताकानियेधकरनेसे सत्यत्वादिधर्मोंकोभी जातिरूपताका

निषेधजानलेना ॥ शंका ॥ सत्यादिपदोंसेतत्पदकेलक्ष्यार्थकीउपस्थितिहुएभी त्वंपदकेलक्ष्यार्थकीउपस्थितिकिसपदसेहोगी औरयदि सत्यादिपदोंसेही तिसकीउपस्थितिकहो तोवहनहींसंभवती। क्योंकि सत्यादिपदोंकीब्रह्मपदकेसाथ समानाधिकरणाताहै। त्वंपदकेसाथतिनकीसमानाधिकरणातानहीं । यातेत्वंपदार्थमेंमूकताप्रसंगउसीप्रकार अवस्थितहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यद्यपिसत्यादिपदोंसेत्वंपदके लक्ष्यार्थकी उपस्थिति नहींहोती । तथापिपूर्वउक्तरीतिसे साक्षीऔं प्रत्यगादिपदोंसे तिसकीउपस्थितिभीकथनकरनेयोग्यहै । इसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं । अनेकअज्ञानजो चेतनकेप्रतिषिधसहितहैं । वह चैतन्यकी प्रधानतासेसाक्षिपदकेवाच्यहैं औरव्यक्तिस्थानापन्नतिनसाभासअज्ञानोंमेंकल्पितसंबंधवाली जोअनुगतचैतन्यरूपएकव्यक्तिहै वहतिनअज्ञानोंकाअवच्छेदकहोनेकरघटत्वादिजातिकीन्याईसाक्षिपदकावाच्यहै । इसप्रकारसाक्षिपदसे चैतन्यकीउपस्थितिकासंभवहोनेसे त्वंपदकेलक्ष्यार्थमेंभीमूकताकीप्राप्तिनहींहोती ॥ शंका ॥ इसप्रकार सत्यज्ञानतथासाक्षिआदिकपदोंसे अनेकव्यक्तिस्थानापन्नजोसाभासअज्ञानतथा वृत्तिरूपउपाधियेंतिनकरयुक्तसामान्यस्थानापन्नब्रह्मचैतन्यकीउपस्थितिमानेहुएतत्त्वंपदकेलक्ष्योंकोअखंडत्वकीसिद्धिकैसेहोगी॥ क्योंकिअखंडअर्थत्वउपाधियुक्तनहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यह विकल्पनैयायिककातो नहींसंभवता ॥ क्योंकि— (पशुनायजेत) अ०॥ पशुकरणाकयागकाअनुष्ठानकरे ॥ इसवाक्यमेंपशुपदसेजातिऔंव्यक्तितथाआकृति इनतीनपदार्थोंकी समानउपस्थिति हुएभी योग्यताकेवलसे यागकीसाधनताजैसेपशुव्यक्तिमेंहीमानीहै जात्यादि

में नहीं । तैसे प्रकरणमें भी सत्यादिपदोंसे उपाधि उपहितकी उपस्थिति
 हुए भी योग्यतासे केवल शुद्धकाही ग्रहण होता है । और मीमांसकका तो
 यह विकल्प संभवता ही नहीं । क्योंकि वह जाति मात्रको ही पदार्थ मानता है
 तिसकी रीतिसे व्यक्तिस्थानापन्न जो साभास उपाधि तिसके साथ संबंध
 वाला जो सामान्यस्थानापन्न ब्रह्मचैतन्य है । तिसकी ही सत्यादिपदोंसे
 उपस्थिति होनेकर तत्त्वमस्यादि महावाक्य शुद्धचैतन्यको ग्रहण करके
 कैसे अखंड अर्थमें तात्पर्यवाले नहीं किंतु तात्पर्यवाले हैं ॥ शंका ॥ तत्त्व
 मस्यादिवाक्योंका पूर्व उक्तरीतिसे अखंड अर्थमें पर्यवसान माने हुए भी
 सत्यादि तथा साक्षादि पदोंकी "तत्त्वम्" आदिपदोंके लक्ष्य शुद्ध
 चैतनमें शक्तिवृत्तिसे प्रवृत्तियुक्त नहीं । क्योंकि (यतो वाचो निव
 र्तते) इत्यादि श्रुतिवचनोंका विरोध है । और संप्रदायवेत्ता पुरुषोंका
 विरोध भी प्राप्त होता है ॥ क्योंकि उन्होंने यह कहा है ॥

तत्त्वं पदार्थविषयोनय एव योज्यः । सत्यादि
 स्तुनिनतत्र विशेषकल्प्यः ॥ सत्यादिशब्दविषयाः
 शवलास्तदर्थं भागेषु लाक्षणिकीवृत्तिरपीह तुल्या ॥ १ ॥

(सं० शा० अ० (१) श्लो० १७७)

अ० ॥ तत्त्वं" पदार्थविषयकजोलक्षणारूप न्यायमाना है
 वही न्यायसत्यादिपदार्थोंमें भी स्वीकार करने योग्य है । तिनमें और कोई
 विशेषरीतिकल्पना करने योग्य नहीं । क्योंकि सत्यादिशब्दोंका विषय
 भी उपाधियुक्त पदार्थ है । याते सत्यादिवाक्यमें जो वाच्य अर्थके भाग हैं
 तिनमें लक्षणावृत्ति भी समान ही है ॥ १ ॥ इति ॥ समाधान ॥ हे वा

दिन्यहत्तुम्हाराकथनभी अयुक्त है । क्योंकि प्रथम जो श्रुतिका विरोध कहा था सो नहीं संभवता । तथाहि । वह श्रुति अविद्यातत्कार्यके संबंध से रहित शुद्धचेतनमें शक्तिवृत्तिकानिषेध करती है । अथवा अविद्यातत्कार्यके साथ संबंधवाले चेतनमें तिसकानिषेध करती है । यह प्रष्टव्य है । इनमें यदि प्रथम पक्ष कहो तो अनिष्टकी प्राप्ति नहीं होती । क्योंकि मोक्षकालमें शुद्धब्रह्मविषयक किसीपदकी वृत्तिका स्वीकार नहीं । और द्वितीयपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि तिसमें दोषका अभाव है । यद्यपि उपाधियुक्तकी सत्यादिपदोंसे उपस्थिति हुए शुद्धचिन्मात्रलक्ष्यस्वरूपकी उपस्थिति कैसे होगी । तथापि उपाधिको तटस्थरूपतासे वाच्यकोटिमें अप्रवेश होनेकर शुद्धसच्चिदानंद एकरस "तत्त्वं" इन दोनोंपदोंकालक्ष्य है ॥ तिसकी सत्यादिपदोंसे उपस्थिति संभवती है । जैसे धेनुपदगोत्वउपहितव्यक्तिमें शक्तिवाला हुआ भी तिससे गोव्यक्तिविशेषकी ही उपस्थिति होती है । गोत्वजातिकी नहीं । क्योंकि गोत्वको तटस्थरूपता होनेसे वाच्यकोटिमें तिसका प्रवेश नहीं ॥ तैसे ही सत्यादिपदसे शुद्धब्रह्मकी ही उपस्थिति होती है । अज्ञानादिक उपाधिको तटस्थरूपता होनेसे वाच्यकोटिमें तिनका प्रवेश नहीं है । याते तिनकी उपस्थिति नहीं होती । इस प्रकार श्रुतिके विरोधका अभाव है ॥ और जो पूर्वसंप्रदायका विरोध कहा था सो सत्य है । परन्तु उन संप्रदायवेत्ताओंने भी श्रुतिका विरोध परिहार करनेके लिये ही वेदांतपदोंमें लक्षणामानी है । वह विरोध यदि हमारी कथनकी हुई रीतिसे परिहार हो सकता है । तो पुनः सत्यादिपदोंमें लक्षणामानने का क्या फल है । क्योंकि मुख्यार्थके संभव हुए लक्षणामाननी अयुक्त है । और इस प्रकार तिनको अज्ञपनेकी प्राप्ति भी नहीं हो सकती । क्योंकि एक

उपाय दूसरे उपायका दूपकनहीं होता । तिनवृद्धोंका प्रयोजन भी विरोधके परिहार करनेका है । उस विरोधका परिहार जिस जिस प्रकारसे संभवे तिस तिस प्रकारसे ही युक्ति कल्पना करने योग्य है । यह ही उनका अभिप्राय है ॥ याते पूर्व उक्त सर्व ही अर्थ निर्दोष है ॥ और यदि अज्ञान एक है । और तब उपहित चैतन्यका नाम साक्षी है ॥ तो अज्ञानरूप उपाधिको त्याग करके शुद्ध चैतन्य ही त्वंपदकालक्ष्यार्थ साक्षिपदसे पूर्व उक्तरीतिसे उपस्थित होता है ॥ यह जानने योग्य है । इस समग्र अभिप्रायके प्रकट करनेके लिये मूलग्रंथकर्ता आचार्योंने

* नाना उपाधिसंबद्धव्यक्ति अतिरिक्त सामान्या नभ्युपगमात् *

इस मूलग्रंथमें सामान्यको व्यक्तिकी अपेक्षा होनेसे उपाधिपदके स्थानमें व्यक्तिपददेना योग्य था तो भी जिस कारणसे व्यक्तिपदको त्यागकर उपाधिपदका प्रयोग किया है । तिस कारणसे हम निश्चय करते हैं । कि जैसे अन्य स्थलमें उपाधिका वाच्यकोटिमें प्रवेश नहीं होता तैसे सत्यादि वाच्यमें शुद्ध चेतन ही सत्यादिपदके वाच्यकोटिमें प्रवेश होता है । अज्ञानादि उपाधिका वाच्यमें प्रवेश नहीं । इसलिये ग्रंथकर्ता आचार्य उपाधिभक्तके योग्य नहीं हैं ॥ इति ॥

* अथ साक्षीकी सिद्धिका प्रकारनिरूपणा *

शंका ॥ पूर्वप्रकरणमें जो साक्षी यापने कहा वह कौन है । यह विचारणीय है । तहां पर ब्रह्मका नाम साक्षी है । अथवा जीवका नाम साक्षी है । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि तिस पर ब्रह्मको असंग होनेकर साक्षिपनेका असंभव है । जिस कारणसे साक्ष्यके संबंधविना लोकमें कोई भी

प्राप्तिहोगी । क्योंकिविषयनिष्ठप्रमाणकीकीहुई अतिशयताका
 अभावहै । अर्थयह ॥ अज्ञानकीनिवृत्तिहीप्रमाणकृतअतिशयताहै ॥
 वहजबप्रमाणसेसिद्धनहुई तोतिसप्रमाणसेश्याप्रयोजनहै । औरयदि
 विषयकाप्रकाशहीप्रमाणकाफलकहो। तोयहभीनहींसंभवता । क्योंकि
 अज्ञानरूपआवरणकेविद्यमानहुए विषयकेप्रकाशकीभीअयोग्यताहै।
 इसप्रकारअज्ञातता प्रमाणकाविषयनहीं। औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै
 क्योंकिभ्रमसिद्धपदार्थको प्रमाणकीविषयताकाविरोधहै । अर्थयह
 अज्ञाततारूपविषयकेबाधसेहीअज्ञातताकीसिद्धिकोभ्रमपनाकहनेयोग्य
 है । इसप्रकारस्वाधिनअर्थमेंप्रमाणकैसेप्रवृत्तहोगा । क्योंकिविषयको
 हीअसत्पनाहै । औरअज्ञातताकीस्वतःसिद्धिहै यहतृतीयपक्षभीनहीं
 संभवता । क्योंकिअज्ञातताको अनात्मताहोनेसेजडताहै । औरजड
 कामानस्वतःनहींहोता । औरवहअज्ञातताकिसीअन्यसेसिद्धहोतीहै ।
 यहचतुर्थपक्षकहो तोवहअन्यपदार्थहीपरिशेषसेसाक्षीहै। तैसेमानेहुए
 प्रमाणकीप्रवृत्तिसेप्रथमहीअज्ञातरूपतासेसाक्षीकरबोधनकियाहुआजो
 विषयहै तिसकोहीप्रमाणविषयकरताहै । यहकथनयुक्तहै । इतने
 कथनसे साक्षीकामाननानिष्फलहै इसकापरिहारकिया । क्योंकि
 अज्ञातताकीसिद्धिसाक्षीकेआधीनहै । यातेसाक्षीकास्वीकारसफलहै।
 औरपूर्वउक्तरीतिसेसाक्षीसेविनाप्रमाणकीअनुपपत्तिहोनेकर साक्षीकी
 सिद्धिहै।इसीकारणसेसाक्षीमें विवादकरनायुक्तनहीं । इसीअर्थमेंआप्त
 पुरुषोंकावाक्यभीप्रमाणहै । तैसेहीसुरेश्वराचार्योंनेकहाहै ॥

❀ प्रमाणप्रमाणवाप्रमाभासस्तथैवच ।

कुर्वत्येवप्रमांयत्रतदसंभावनाकुतः।१॥❀

(श्लो० ८७४ । वृ० वा० अ० १)

अ०॥जैसेप्रमाणकीसिद्धिसाक्षीकेआधीनहै। तैसेमिथ्याज्ञानऔंसंशय ज्ञानइनदोनोंका साधकभीसाक्षीहै । क्योंकिमिथ्याज्ञानऔंसंशयज्ञान कीप्रमाणसेतोसिद्धि कहनहींसकते । प्रमाणकेसाथतिनकाविरोधहै । औरमिथ्याज्ञानऔंसंशयज्ञानरूपवृत्तिको जडताहोनेसेस्वतःभीतिनका भाननहींसंभवता । औरभ्रमसेभीतिनका भाननहींहोता । क्योंकि भ्रमवृत्तिकेभानकाविचार तोप्रकरणमेंयत्रप्राप्तहीहै । तिसकारणसेतिन दोनोंज्ञानोंकीसिद्धिभी माक्षीकरहीहोतीहै । यातेप्रमाणऔरभ्रमज्ञान तथासंशयज्ञान यहतीनों जिससाक्षिविषयकप्रमाको उत्पन्नकरतेहैं । अर्थात्साक्षीसेविनाइनकी सिद्धिनहींहोती । तोतिससाक्षीकीअसं भावनाकैसेहोसकतीहै ॥ १ ॥ इमप्रकारसर्वप्रमाणादिकोंकासाधक त्वंपदकालञ्चयार्थमाक्षीमिद्धहृया ॥ इति ॥

❀ अथउभयपदमेलक्षणाकाप्रकारनिरूपणा ❀

और “तत्त्वं” इनदोनोंपदोंकाएकअर्थहै।अथवाअनेकअर्थहैं । यहविकल्पजोवादीने पूर्वकियाथा । सोभीअमंगतहै । क्योंकियद्यपि दोनोंपदोंकाएकहीअर्थहै । तथापिदोनोंपद स्वीकारकरने योग्यहैं ॥ गंका ॥ भेदकाजनरुजोअज्ञानहै । तिमकीनिवृत्तिकेअर्थअभेदज्ञान हीअपेक्षितहै । वहअभेदज्ञान यदिएकपदमेहीउत्पन्नहोजाय तोदुमरे पदसेक्याप्रयोजनहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् प्रमाणजन्यज्ञानहीभेद भ्रमकानिवर्तक होताहै । मिथ्याज्ञानभेदभ्रमका निवर्तकनहींहोता ।

और वह प्रमाण जन्य ज्ञान एक पद से नहीं उत्पन्न हो सकता ॥ क्योंकि पदमात्रको प्रमाज्ञानकी हेतुताका अभाव है । तिसकारणसे भेद भ्रमके निवर्तक ज्ञानकी उत्पत्तिके अर्थ वाक्यरूपप्रमाणकी अपेक्षा है । और एकपदमें वाक्यरूपतानहीं संभवती ॥ याते वाक्यताकी सिद्धिके अर्थ दूसरा पद अत्यन्त अपेक्षणीय है । और पदोंकी एक अर्थता माने हुए पर्यायशब्दोंकी न्याईं वाक्यपनेकी अनुपपत्तिरूपदोषपूर्ववादीने कहा था वह भी नहीं संभवता । क्योंकि पदोंकी प्रवृत्तिके निमित्तका भेद है । जिसकारणसे भोक्तृत्वादिक धर्मत्वं पदकी प्रवृत्तिके निमित्त हैं और सर्व ज्ञत्वादिक धर्म तत्पदकी प्रवृत्तिके निमित्त हैं । इस प्रकार पर्यायताप्राप्ति का अभाव होनेसे वाक्यत्वकी हानि नहीं ॥ शंका ॥ दोनों पदोंका प्रयोग वाच्यार्थकी उपस्थितिके लिये नहीं है । क्योंकि तिस वाच्यार्थकी उपस्थिति का कोई प्रयोजन नहीं ॥ किंतु लक्ष्यार्थकी उपस्थितिके लिये दोनों पदोंका प्रयोग है ॥ वह लक्ष्यकी उपस्थिति यदि एकपदसे सिद्ध हो तो दूसरे पदका प्रयोग करना निष्फल है ॥ और पदको भी अनुभवका जनक होनेसे और तिसके विषयका अबाध होनेसे प्रमाणाता संभवती है । याते द्वितीयपद निष्फल है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्जैसे घोपनिवासका वाचक जो “घोप” पद तिसके प्रयोगसे विना गंगापदतीरको लक्षणावृत्तिसे घोधन नहीं कर सकता । क्योंकि मुख्य अर्थमें किसी प्रकारकी अनुपपत्ति नहीं । तैसे तत्पदका अथवा त्वंपदका प्रयोग करे हुए विशिष्टचेतन्यही तिसपदसे उपस्थित होगा । अखंड एकरस शुद्ध चिदात्माकी उपस्थिति नहीं होगी । तिससे जिज्ञासुको वाञ्छित अर्थका घोधन होनेसे तिस “त्वंपद” पदका प्रयोग व्यर्थ ही होगा ॥ और वैदिकपदोंका प्रयोग निष्फल नहीं हो

सकता। तिसकारणसे लक्षणावृत्तिकर अखंड अर्थके लाभनिमित्त द्वितीय पदका प्रयोग है । तिसद्वितीयपदसे विना विरोधका अस्फुरण होनेसे मुख्यार्थका ही संभव हो जायेगा ॥ पुनः लक्षणासे अखंड अर्थका प्रतिपादन नहीं संभवेगा। याते अखंड अर्थकी सिद्धिकेलिये दूसरा पद सफल है । और पदमात्रको जोवादीने अनुभावक कहाथा वह भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि—

* पदमप्यधिकाभावात् स्मारकान्नविशिष्यते * ❀

अ० ॥ पदको स्मारक होनेसे अधिक अर्थ जो वाक्यार्थ तिसकी बोधकता पदमें नहीं। इसीसे तिसको विशेषतानहीं अर्थात् प्रमाणातानहीं। इसन्यायसे पदमात्रको अप्रमाणाता होनेसे तिसको अनुभावकतानहीं संभवती । और प्रधानवाक्योंमें लक्षणाकी अनुपपत्ति है यह जोवादीने पूर्व कहाथा सो कथन भी अयुक्त है । क्योंकि इतर पदार्थोंमें जो “अनुपसर्जन” अर्थात् प्रधानपदार्थ है । तिसका प्रतिपादक होनेसे ही वाक्यको प्रधानपना है। सो प्रधानकी प्रतिपादकता लक्षणासे हो। अथवा शक्तिवृत्ति से हो। इसमें कोई आग्रह नहीं। याते लक्षणाके माने हुए भी वाक्यमें प्रधानता की हानि नहीं ॥ और (गुणोत्वन्यायकल्पना) अ० गौणवाक्यमें लक्षणाकी कल्पना होती है। इसन्यायका विरोध जो पूर्ववादीने कहाथा वह भी नहीं संभवता। क्योंकि जहां प्रतिपादन करने योग्य अर्थमें शब्दकी शक्तिवृत्तिकी विषयता है । तहां ही यह न्याय प्राप्त होता है और यहां तो प्रतिपादन करने योग्य अर्थमें तत्त्व आदिक पदोंकी शक्तिवृत्तिकी विषयताका अभाव है । याते न्यायका विरोध नहीं । तिसी हेतुसे तत्त्वमस्यादि महावाक्य लक्षणासे प्रत्यक् ब्रह्मका जो अभेद अखंड एकरस शुद्ध चिदात्मा तिस

कोबोधनकरतेहैं । इसकारणसे (यतोवाचोनिवर्तते) इसश्रुति सेविरोधनहीं ॥ इति ॥

❀ अथब्रह्मात्माकेअभेदरूपप्रमेयमेंप्रत्यक्षादिप्रमाणों केविरोधकापरिहारशंकासमाधानपूर्वकनिरूपणा ❀

इसप्रकारअखंडएकरस जोब्रह्मात्माका अभेद तिसमेंवेदान्तोंका समन्वयजोशारीरकमीमांसाकेप्रथमअध्यायकाअर्थतिसकोसंक्षेपसेनिरूपणाकरके अत्रतिसअभेदरूपअखंडार्थमें प्रत्यक्षादिप्रमाणोंके विरोधका परिहार जोद्वितीयअध्यायकाअर्थतिसकोसंक्षेपसेनिरूपणाकरनेकेलिये पूर्वपक्षकोनिरूपणाकरतेहैं। (अथपूर्वपक्ष) शंकाकोस्पष्टरूपतासेप्रकट करनेकेलियेपूर्वपक्षी प्रथमतत्त्वमस्यादिमहावाक्योंमें हेयतथाउपादेय अंशकोनिरूपणाकरताहै । कर्तृत्वादिधर्मविशिष्टतथासुषुप्तिआदिक अवस्थावालाचैतन्यत्वंपदकावाच्यार्थहै । औरजगत्कर्तृत्वादिधर्म विशिष्टतथाआकाशादिकोंका उपादानचैतन्य तत्पदकावाच्यार्थहै । तिनदोनोंकाअभेदगुरुमुखद्वाराश्रवणकियेहुएमहावाक्यसेप्रतीतहोताहै परंतुसंसारीतथाअसंसारीकाअभेदरूपजोमुख्यार्थहै तिसकीप्रत्यक्षादि प्रमाणकेविरोधसेअनुपपत्तिहै । तिसकारणसेत्वंपदार्थमेंविरुद्धधर्मजो कर्तृत्वभोक्तृत्वसुखित्वदुःखित्वादि तिनकोत्यागकरतिनसेपृथक्किया हुआ अवस्थात्रयमें अनुस्यूतशुद्धचेतनअंश जोप्रत्यगात्मातिसकातत्पदार्थमेंविरुद्धजगत्कर्तृत्वादिधर्मोंकोत्यागकरतिनसेपृथक्कियाहुआ आकाशादिकोंमें अनुस्यूत तथा शुद्धपरिपूर्णसच्चिदानंदस्वरूप जो परमात्मातिसकेसाथअभेदलक्षणावृत्तिसेमहावाक्यबोधनकरताहै। यह अर्थसिद्धांतीनेपूर्वनिरूपणाकिया॥ शंका ॥हेवादिन्यद्यपिइसप्रकारका

अर्थहमने पूर्वप्रतिपादनकियाहै । तथापिइसमेंविरोधकी आशंकाकैसे प्राप्तहोतीहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धजोसर्व भेद तिसकानिराकरण आपनेपूर्वनहींकिया।यातेअभेदका प्रतिपादन नहींसंभवता । यद्यपिपूर्वकथनकीहुईयुक्तिसे जीवब्रह्मकेभेदकानिराकरणकियाहै यातेकैसेतुमयहकहतेहो जोभेदकानिराकरणनहींकिया। तथापियहांभेदपद अनात्मभेदपरहै । यातेअनात्मभेदतो तिसीप्रकार अवस्थितहै । यद्यपिअवस्थात्रयमेंअनुगततथाआकाशादिकों मेंअनुस्यूतयहजोब्रह्मात्माकाविशेषणपूर्वकहाहैतिसकेप्रभावसेविजातीयभेदका निराकरणभीकियागया। क्योंकिजैसेअधिष्ठानरज्जुमेंपरस्परव्यभिचारी जोमृत्रधारादंडमालादिसोकल्पितहैं।तैसेअधिष्ठानब्रह्मात्मामेंसर्वजगत कल्पितहै ॥ और (मृत्तिकेत्येवसत्यं) इसश्रुतिनेकारणसेभिन्न कार्यकीसत्ताकाअभावकथनकियाहै । यातेआकाशादिकार्यकोमिथ्या होनेसे तत्प्रतियोगिकभेदकोभी मिथ्यापनाहै । इसकारणसे पूर्व उक्तशंकानहींसंभवती । तथापिइसविशेषणकेतात्पर्यकोनजानकर वादीकीशंकासंभवतीहै ॥शंका॥ हेवादिन्जैसेआत्मातथापरमात्माके भेदकोग्रहणकरनेवालाप्रमाणअप्रमाणरूपहै तैसेअनात्माके भेदकाग्राहकजो प्रत्यक्षादितिसकोभीअप्रमाणाताहै॥यहांयहअनुमानजानना ।

❀ विमतंअनात्मभेदग्राहकं अप्रमाणां भेदग्राहकत्वात् । आत्मपरमात्म भेदग्राहकवत्॥❀ अ० विवाद काविषयजोअनात्मभेदग्राहक प्रत्यक्षादिसोअप्रमाणांरूपहै । भेदका ग्राहकहोनेसे जोजोभेदका ग्राहकहोताहै। सोसोअप्रमाणांरूपहोताहै। जैसेआत्मातथापरमात्मका भेदग्राहिप्रत्यक्षादिहैं ॥इति॥ समाधान ।

हेसिद्धांतिन्द्रष्टांतकी असिद्धिहोनेसेयहतुम्हारा हेतुअसाधारणअनैकांतिकहै। इसीकोस्पष्टकरतेहैं। अनुमानमेंजोअप्रमाणरूपसाध्यहैतिसकाक्याअर्थहै। अर्थात्प्रमाणत्वकाजो अत्यंताऽभावतिसकाजोअधिकरणहो वहअप्रमाणहै। अथवाप्रमाणसेभिन्नकोअप्रमाणकहतेहो। यहदोनोंप्रकारकाअप्रमाणशब्दकाअर्थमानेहुएभीनिश्चितसाध्यवालेहोनेसेघटादिकसपक्षहीकहेजातेहैं। क्योंकिप्रमाणत्वके अत्यंताभावकाअधिकरणभीघटादिकहैं। औरप्रमाणसेभिन्नभीहैं। औरअभेदकेग्राहकप्रमाणजोतत्त्वमस्यादिमहावाक्यहैं वहविपक्षहैं। क्योंकिअप्रमाणात्तरूपसाध्यकेअभाववालेहैं। तिनदोनोंसपक्षविपक्षोंसेव्यावृत्तहोनेसेहेतुमेंअसाधारणअनैकांतिकता संभवतीहै ॥ और दृष्टांताभासोंकीहेत्वाभासोंमेंहीअंतरभावताहै। यातेपूर्वउक्तअनुमानदुष्टहै॥ शंका ॥ दृष्टांतकाअभावतुमकैसे कहतेहो। क्योंकिजीवतथा परमात्माकेभेदकाग्राहक(नाहमीश्वरः) “मैंईश्वरनहींहूँ” यहप्रत्यक्षहीदृष्टांत रूपतासेविद्यमानहै ॥ समाधान ॥ आत्मातथापरमात्माकेभेदकाग्राहककोईप्रमाणनहींहै। इसीकोस्पष्टकरतेहैं ॥ क्या?यहपूर्वकथनकियाप्रत्यक्षभेदमात्रकोविषयकरताहै ॥ अथवा ॥ आत्मप्रतियोगिकभेदकोविषयकरताहै। प्रथमपक्षतोनोंसंभवता। क्योंकिआत्माकेभेदकाग्राहकपनातिसकोअसिद्धहै। यातेदृष्टांतकाअभाव उसीप्रकार अवस्थितहै। औरयदिद्वितीयपक्षकहो तोतिसमेंभी यहविचारकर्तव्यहै। कितिसपक्षमेंआत्मशब्दसे स्वप्रकाशचेतनसुखस्वरूपका ग्रहणहै। अथवाकर्तृत्वादिधर्मविशिष्टचेतनकाग्रहणहै। प्रथमपक्षतोनोंसंभवता। क्योंकिआत्मा तथा परमात्मा इनदोनोंको स्वयंप्रकाशमान होनेसे किसी

प्रमाणकी विषयतातिनमें नहीं हो सकती ॥ औरद्वितीय पक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकि (सविशेषगोहि) अ० ॥ विशेषण सहितवस्तुमें जो प्रमाणप्रवृत्त होताहै ॥ यदिवह विशेष्यभागमें वाधितहोजाय तोवहविशेषणकोहीप्राप्तहोताहै । इसन्यायसेकर्तृत्वादि धर्मविशिष्टआत्माकेभेदकोविषयकरनेवालाजोप्रमाणहै तिसकोविशेष्य चेतनमात्रकेभेदकीविषयताकेवाधितहुए विशेषणजोकर्तृत्वादितिनके भेदकीगोचरताहोनेसे तिसकीअन्यप्रकारसेसिद्धिहै । यातेवहप्रमाण आत्मातथापरमात्माके भेदकासाधकनहीं । इसप्रकारपूर्वउक्तदृष्टांत असिद्धहै यहभावहै । किंवा ॥ विशेष्यभागजोचेतनमात्र तिसकेअभेद काग्राहकजोतत्त्वसस्यादिवाक्यरूपप्रमाण तिसकरपूर्वउक्तअनुमानको वाधितहोनेसेभीतिसअनुमानकोआत्मातथापरमात्माकेभेदकीसाधकत नहींसंभवती । इसप्रकारपूर्वउक्तसिद्धांतीके अनुमानकोदुष्टहोनेसे अनात्मभेदकेग्राहक जोप्रत्यक्षादि वहप्रमाणरूपहैं । औरयहांयहअनुमानभीजानलेना ॥

❀ अहंनविश्वंइत्यनात्मप्रतियोगिकभेदग्राहकंप्रत्यक्षं ।
तच्चनाप्रमाणं । विपरीतार्थगोचरप्रमाणाभावात् ।
महावाक्यप्रमाणावत् ॥ ❀

अ० ॥ मैंपंचरूपनहींहूँ यहअनात्मप्रतियोगिकभेदकाग्राहक जोप्रत्यक्षहै । सोअप्रमाणनहींहै । विपरीतार्थकोविषयकरनेवाले प्रमाणकाअभावहोनेसे । जहांजहांविपरीतार्थविषयकप्रमाणांतानहीं है तहांतहांअप्रमाणाताभीनहींहै । जैसेमहांवाक्यरूपशब्दप्रमाणहै ॥ इति ॥ इसरीतिसेअनात्मप्रतियोगिकभेदकेग्राहक जोप्रत्यक्षादिहैं तिन

काकोईसाधकनहीं। यातेपूर्वउक्तप्रमाणत्वकासाधकअनुमानवाधित है। यहांपूर्वग्रंथमें (प्रत्यक्षादि) इसआदिपदसे

❁ आत्मानात्मानौ । मिथोभिन्नौ विरुद्धधर्माक्रांत
त्वात् । द्रवकठिनवत् ❁

इत्यादिअनुमानकाग्रहणकरना॥ अ० ॥ आत्मातथाअनात्मा परस्परभेदवालेहैं। विरुद्धधर्मयुक्तहोनेसे। जोजोविरुद्धधर्मवालेहोते हैं सोसोपरस्परभेदवालेभीहोतेहैं। जैसेद्रवताऔरकठिनताहैं॥इति॥

❁ अथधर्मभेदकेनिराकरणाकाप्रकारनिरूपणा ॥

सिद्धांतीकीआशंका ॥❁

हेवादिप्रत्यक्षादिप्रमाणोंको अनात्माकेस्वरूपविषयकत्वमाने हुएभीभेदगोचरता तिनकोनहींसंभवती।क्योंकिधर्मातथाप्रतियोगीऔर भेद इनतीनोंकेग्रहणमेंक्रमतथायौगपद्यादिविकल्पोंकीप्राप्तिहुएअन्योन्याश्रयआत्माश्रयचक्रिकाअनवस्थाप्राग्लोप विनिगमनाविरहादि अनेकदोषोंकीप्राप्तिहोगी॥इसीकोस्पष्टकरकेनिरूपणाकरतेहैं॥क्या? प्रत्यक्षप्रमाण भेदमात्रकोग्रहणकरताहै॥अथवाधर्मातथाप्रतियोगीऔर भेद इनतीनोंकोग्रहणकरताहै॥प्रथमपक्षतोनहींसंभवता॥क्योंकि धर्मातथाप्रतियोगीकेज्ञानसेविना भेदकाज्ञाननहींहोसकता॥धर्मिप्रति योगिज्ञानपूर्वकही भेदकाज्ञानहोताहैयहनियमहै॥औरद्वितीयपक्षमें भी यहविचारकरनेयोग्यहै। धर्मिआदिकोंकाग्रहणक्या?क्रमसेहोताहै अथवाएककालमें तिनकाग्रहणहोताहै।यदिक्रमसेकहोतोतिसमेंभी यहविचारणीयहै।क्या?प्रत्यक्षभेदकोप्रथमग्रहणकरके पश्चात्धर्मातथा प्रतियोगीकोग्रहणकरहाहै॥अथवाधर्माप्रतियोगीकोग्रहणकरकेपश्चात्

भेदकोग्रहणकरताहै। औरयुगपदग्रहणपक्षमेंभीयहवक्तव्यहै। क्या? जैसे “दंडीदेवदत्तः” यहप्रतीतिदंडतथादेवदत्तकोविशेषणविशेष्यभावसेग्रहण करतीहै। तैसेयहांधर्मीऔंप्रतियोगीतथाभेदइनतीनोंकोविशेषणविशेष्य रूपतासेप्रत्यक्षग्रहणकरताहै। अथवाअंगुलित्रयकीन्याईपरस्परतीनोंको संबंधसेरहितरूपताकरग्रहणकरताहै। तहांसर्वसेप्रथमविकल्पमें धर्मीऔंप्रतियोगीतथाभेदइनतीनोंकोप्रत्यक्षग्रहणकरताहै। यहद्वितीयपक्षनहीं संभवता ॥ तथाहि ॥ तिसद्वितीयपक्षके अंतर्गत जोक्रमसेग्रहणयह प्रथमपक्षथा तिसमेंभेदके ग्रहणपूर्वकधर्मीऔंप्रतियोगीकाग्रहणहोता है यहक्रमतोनोंसंभवता। क्योंकिभेदज्ञानकेप्रतिधर्मीऔंप्रतियोगीके इनकोकारणहोनेसे पूर्वकथनकियाहुआक्रमअयुक्तहै। औरधर्मिआदिकोंको प्रथमग्रहण करके पश्चात् भेदकाग्रहण होताहै यहद्वितीय क्रमपक्षहै। तिसमेंभीयहविचारकर्तव्यहै। क्या?स्वरूपसेधर्मिआदिकों काग्रहणभेदकानिरूपकहै। अथवा घटत्वादि रूपतासे तिनकाग्रहण भेदकानिरूपकहै ॥ अथवाधर्मित्व रूपतासेधर्मीकाग्रहणऔंप्रति योगित्वरूपतासे प्रतियोगीकाग्रहण भेदकानिरूपकहै। इनमें प्रथमपक्ष तोनोंसंभवता। क्योंकिजलतथादुग्धका तादात्म्यहोनेसे स्वरूपसे वहदोनोंभासमानभीहैं। परन्तुतिनकाभेदग्रहणनहींहोता। यातेस्वरूप सेधर्मिआदिकोंकाग्रहण भेदकानिरूपकनहीं ॥ औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता। क्योंकिघटत्वादिरूपतासेजो प्रतियोगिआदिकोंका ग्रहणहै तिसकोभेदकी अपेक्षाहोनेसे अन्योऽन्याश्रयदोषकीप्राप्तिस्पष्ट हीहै। इसअन्योऽन्याश्रय दोषकीप्राप्तिहोनेसेही तृतीयपक्षभीनहीं संभवता। क्योंकिभेदज्ञानके आधीनप्रतियोगिआदिकोंकाज्ञानहै। जिस

कारणसेधर्मीसेभिन्न भेदके निरूपककोप्रतियोगीकहतेहैं । औरइसी प्रकारधर्मीकाज्ञानभीभेदज्ञानपूर्वकही कल्पनाकरनेयोग्यहै । क्योंकि प्रतियोगीसेभिन्नभेदके आश्रयकोधर्मीकहतेहैं । औरधर्मीतथाप्रति योगीकेज्ञानपूर्वकभेदज्ञान प्रसिद्धहीहै । यातेइसपक्षमेंकैसेअन्योऽन्याश्रयदोषकीप्राप्तिनहोगी किंतुअवश्यहोगी ॥ किंवा ॥ भेदभिन्न धर्मीमेंवर्तताहै । अथवाअभिन्नधर्मीमेंवर्तताहै । अन्त्यपक्षतोनहीं संभवता । क्योंकितिसअभिन्नधर्मिविषयकभेदके ग्राहकप्रत्यक्षकोभ्रम पनाहोगा । भावयह भेदकेअनधिकरणकानाम अभिन्नहै । तिसमें यदिप्रत्यक्षभेदकोग्रहणकरेगा । तोवहकैसेभ्रमरूपनहींहोगा । और यदिप्रथमपक्षकहो तोतिसमें यहविचारणीयहै । क्या?अपनेकरभिन्न कियेहुएधर्मीमेंआपभेदवर्तताहै । अथवाकिसीदूसरेभेदकरभिन्नकिये हुएधर्मी मेंभेदवर्तताहै । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिअपनेकर भिन्नकियेहुएधर्मी मेंअपनीवृत्तिहोनेसेआत्माश्रयदोषकीप्राप्तिहै । और यदिद्वितीयपक्षकहो तोतिसमेंभी यहविचारकर्त्तव्यहै । वहद्वितीय भेद भीक्या?अभिन्नधर्मी में वर्तताहै।अथवाभिन्नधर्मीमें वर्तताहै । प्रथम पक्षमें तोभेदग्राहकप्रत्यक्षकोभ्रमपनाहोगा।यहपूर्वकथनकियाहै।और द्वितीयपक्षमेंभीयदिअपनेकरभिन्नकियेहुएधर्मीमेंवहदूसराभेदआपवर्तताहै तोआत्माश्रयदोषकीप्राप्तिहै।क्योंकिअपनीस्थितिकेअर्थइतरकेव्यवधान रहितअपनीहीअपेक्षाहै । औरप्रथमभेदकरभिन्नकियेहुएधर्मीमेंद्वितीय भेदरहताहै ऐसेयदिमानो तोअन्योन्याश्रयदोषस्पष्टहीप्राप्तहोताहै । औरइनपूर्वउक्तदोषोंकेपरिहारकरनेकेलिये द्वितीयभेदको भिन्नधर्मी में स्थितिकेअर्थयदितृतीयभेदरवीकारकरो तोचक्रकादोषकीप्राप्तिहोगी ।

क्योंकिदोकेव्यवधानसेजहांपुनः अपनीअपेक्षाहोतहांचक्रकादोपप्राप्त होताहै । औरतिसचक्रकादोपकेदूरकरनेकेलियेयदिचतुर्थभेदस्वीकार करोतोअनवस्थादोषकीप्राप्तिहोगी । औरयदिऐसेकहोकिअन्यगतिके अभावसेअनवस्थादोषकोहमस्वीकारकरलेंगे।तोतिसमेंभीयहतुमनेकहा चाहियेक्या?वहअनंतभेदक्रमसे धर्मांमेंवर्त्ततेहैं।अथवाक्रमसेविनाएक कालमेंवर्त्ततेहैं।यदिक्रमसेकहोतोधर्मांकोअनादिपनाप्राप्तहोगा।क्योंकि अनंतधर्मांकाआश्रय सादिनहींहोसकता । औरउत्तरउत्तरभेदसेहीपूर्व पूर्वभेदकाकार्यजोधर्मांमेंभिन्नव्यवहार तिसकीअन्यप्रकारसेसिद्धिहोने से पूर्वपूर्वभेदकोव्यर्थहोनेकर प्राग्लोपदोषकीप्राप्तिहोगी। पूर्वपूर्वभेदों कालोपअर्थात्निष्फलताहोनी इसीकोप्राग्लोपकहतेहैं । औरयदिबह अनंतभेद धर्मांमेंएककालमेंरहतेहैं।यहद्वितीयपक्षकहो तोभिन्नधर्मांमें भेदवर्त्तताहै।इसपक्षकी हानिहोगी। औरयदिइसदोषके दूरकरनेकेलिये एकभेदविशिष्टधर्मांमें अपरभेदोंकीस्थितिमानोगे । तोविनिगमना विरहदोषकीप्राप्तिहोगी। क्योंकिप्रथमभेदविशिष्टधर्मांमें द्वितीयभेदकी स्थितिहै । इसअर्थकानिश्चायककोईशुक्तिनहीं । इसीकानामविनि गमनाविरहहै ॥ किंवा ॥ विनिगमनाविरहदोषकेविद्यमानहुएभी अनंतभेदोंकोस्वीकारकरलें यदिभेदोंकीपरंपराकोग्रहणकरनेवालाकोई ज्ञानप्रकटहो।औरऐसाज्ञानकोईउदयनहींहोता । यातेप्रमाणकेअभाव सेअनंतभेदोंकास्वीकारनहींसंभवता । औरयदिइनसर्वदोषोंकोपरिहार करनेकेलियेधर्मांतथाप्रतियोगीऔरभेदइनतीनोंकोएककालमेंहीप्रत्यक्ष ग्रहणकरताहै।यहपक्षकहो तोपरस्परअसंबंधिरूपतासे भेदकाग्रहणनहीं संभवेगा क्योंकिभेदप्रतीतिकोविशेषण तथाविशेष्यकेसंबंधकीग्राहकता

कानियमहै ॥ शंका ॥ भेदप्रतीतिकोविशिष्टग्राहकताकानियममाने, हुए विशेषणविशेष्यरूपताकरही प्रत्यक्षभेदकोग्रहणकरेगा ॥ समाधान हेवादिन्ऐसेमानेहुएक्या? भेदकोविषयकरनेवालीही प्रतीतिविशेषण कीप्रतीतिहै । अथवाइससेवहप्रतीतिभिन्नहै। प्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकिकार्यतथाकारणबुद्धिकी एकताकाअसंभवहै। अर्थयहविशेषण ज्ञानकारणहै। औरभेदज्ञानकार्यहै। तिनकीएकरूपताविरुद्धहै। और द्वितीयपक्षभीअसंगतहै। क्योंकिविशेषणरूपतासेजोज्ञानहै। वह भेदज्ञानकेआधीनहै। ऐसामाननेसे अन्योऽन्याश्रयदोष प्राप्तहोताहै। औरस्वरूपमात्रसेभासमानधर्मी तथाप्रतियोगीको भेदज्ञानकाअजनक पनाहै। यहअर्थपूर्वकथनकरआएहैं। यातेप्रत्यक्षवस्तुकेस्वरूपमात्र कोविषयकरताहै भेदकोविषयनहींकरता ॥ इति॥

❀ अथस्वरूपभेदकानिरूपण। पूर्वपक्षीकासमाधान ❀

हेसिद्धांतिन्यद्यपिपूर्वउक्तयुक्तिबाधसे धर्मभेदमेंप्रत्यक्षकीअविषयताहुएभी, स्वरूपभेदनिष्ठतिसकी विषयताका लोपनहींहोसकता। अर्थ यह स्वरूपभेदकोप्रत्यक्षविषयकरताहै ॥ शंका ॥ हेवादिन्वस्तुका स्वरूपहीभेदहै यहकथनयुक्तिकरबाधितहै। क्योंकिभेदकेअधिकरण कोभिन्नकहतेहैं। औरएकहीवस्तुमेंआधाराधेयभाव अंगीकारनहीं और “स्वरूपभिन्न” ग्रहप्रतीतिसर्वमेंप्रसिद्धहै। तिसकेनवननेसेस्वरूप हीभेदहैयहलुमकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन “स्वरूपं भेन्न” इसप्रतीतिकीअनुपपत्तिनहींहै। क्योंकिजैसे (राहोःशिरः) अ० ॥ राहुकाशिरहे ॥ और (आत्मनश्चैतन्यं) अ० ॥ आत्माका चैतन्यहै। यहांएक पदार्थमेंभी भेदप्रतीति होतीहै-

भावयह । राहुतथाशिस्काभेदनहीं तोभी भेदप्रतीतिहोतीहै । औरआत्मातथाचैतन्यकाभेदनहीं । क्योंकिचैतन्यस्वरूपहीआत्माहैतोभीभेदप्रतीतिहोतीहै । तैसेस्वरूपकोऔरभेदको एकहुएभी भेदप्रतीतिसंभवतीहै ॥ शंका ॥ हेवादिन्स्वरूपतथाभेदशब्दकी प्रवृत्तिकानिमित्तभिन्नहै।वानहीं । यदिप्रवृत्तिकानिमित्तभिन्ननहीं यहअंतिमपक्षकहोतो "स्वरूपंभेदः" ऐसेदोनोंशब्दोंकाएकठा प्रयोगनहींहोगा । क्योंकिपर्यायशब्दोंकाएकठाप्रयोग देखनेमेंनहींआता ॥ औरयदिप्रवृत्तिकानिमित्तभिन्नहै तोवहकौननिमित्तहै । समाधान ॥ स्वरूपशब्दप्रयुक्तजोव्यवहारहै तथाभेदशब्दप्रयुक्तजोव्यवहारहै तिसमेंइतरनिर्पेक्षता तथाइतरसापेक्षतारूप निमित्तसेदोनोंशब्दोंकीप्रवृत्तिहै।अर्थयहइतरनिर्पेक्षत्वरूपनिमित्तकोलेकरस्वरूपशब्दकीस्वरूपमेंप्रवृत्तिहै । औरप्रतियोग्यादिसापेक्षत्वरूपनिमित्तकोलेकर भेदशब्दकीस्वरूपमेंप्रवृत्तिहै । यातेपर्यायताकीप्राप्तिनहीं ॥ शंका ॥ अभेदमेंसापेक्षत्वतथानिर्पेक्षत्वप्रयुक्तविलक्षणताकी अनुपपत्तिहै । अर्थात्स्वरूपशब्दतथाभेदशब्द कीप्रवृत्तिकेनिमित्तका भेदनहींसंभवतता । क्योंकिस्वरूपतथोभदएकहीपदार्थहै । तिसएकपदार्थके वाचकपदोंकीप्रवृत्तिकेनिमित्तकाभेदअयुक्तहै ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् एकपदार्थकेवाचक शब्दोंकीप्रवृत्तिके निमित्तकाभेदभीसंभवताहै । तथाहि । जैसेएकहीदेवदत्तशरीरमें पितातथापुत्रशब्द प्रयुक्तव्यवहारकेअर्थ तिसमेंप्रवृत्तहुएजो पितापुत्रादिशब्दहैं। तिनकोपुत्रादिसापेक्षत्वरूपजोप्रवृत्तिकानिमित्त तिसकीअपेक्षादेखनेमेंआतीहै। अर्थात्पुत्रकीअपेक्षासेतिसमें पिताशब्दकीप्रवृत्तिहोतीहै ॥ औरपिताकी

अपेक्षासेतिसमेंपुत्रशब्दकीप्रवृत्तिहोतीहै। तैसेएकहीस्वरूपमेंप्रवृत्तिका
निमित्तजुदाहोनेसे स्वरूपशब्दतथाभेदशब्दकीप्रवृत्तिहोजायेगी। और
वहनिमित्तपूर्वकथनकरदियाहै॥शंका॥हेवादिन्स्वरूपशब्दकोइतरनिर्पे
क्षहुएभीभेदशब्दकोस्वरूपमेंप्रवृत्तिकेअर्थप्रतियोग्यादिकोंकीअपेक्षाअ
वश्यकहनेयोग्यहै। तैसेमानेहुए इतरसापेक्षताकेप्राप्तहोनेसेभेदशब्दकी
स्वरूपमेंप्रवृत्तिऔरइतरसापेक्षताकेनप्राप्तहुएभेदशब्दकीस्वरूपमेंअप्रवृत्ति
होतीहै। इसप्रकारकेप्राप्ताप्राप्तविवेकसेसापेक्षपदार्थहीभेदशब्दकावाच्य
सिद्धहोताहै। स्वरूपवाच्यनहींसिद्धहोता। क्योंकिवहस्वरूपइतर
निर्पेक्षहै॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् तिससापेक्षपदार्थकाभीस्वरूपसे
भेदनहीं। किंतुजैसेकोईवस्त्रादिद्रव्यस्वरूपसे निर्पेक्षहुआभीहस्त तथा
वितस्ति आदिशब्दसेव्यवहारकाविषयहुआइतरसापेक्षवहीद्रव्यहोताहै।
कोईहस्तादिशब्दकावाच्य तिसद्रव्यसेभिन्नपदार्थनहींहोता। तैसेप्रकरण
मेंभीइतरप्रतियोग्यादिसापेक्षहुआस्वरूपहीभेदशब्दकावाच्यहै। भेदशब्द
सेव्यवहारकाविषयहुआकोईस्वरूपसेभिन्नपदार्थनहींहोजाता। यातेस्व
रूपहीभेदशब्दकावाच्यहै॥ शंका ॥ हेवादिन्स्वरूपसेभिन्नकोईपदार्थ
है अथवानहीं। प्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकिस्वरूपसेजिसका
भेदहोगा तिसकोनिःस्वरूपताकीप्राप्तिसे अवस्तुपनाहोगा। औरयदि
स्वरूपसेभिन्न कोईपदार्थनहीं। यहद्वितीयपक्षकहो तोस्वरूपहीअखंड
सिद्धहुआभेदकोईपदार्थनहीं॥ औरहेवादिन्यदितुमएसेकहोकियद्यपि
स्वरूपप्रतियोगिकभेदनहीं। तथापिस्वरूपहीइतरसे भिन्नक्योंनहो तैसे
मानेहुए स्वरूपहीएकरसहै यहकैसेकहतेहो॥ सोयहकथनभीतुम्हारा
समीचीननहीं। क्योंकिस्वरूपभेदके प्रतियोगीको निःस्वरूपताहोनेसे

तत्प्रतियोगिक भेदकोभी निःस्वरूपताकीप्राप्तिहोगी । औरस्वरूपभेद काप्रतियोगीयदिस्वरूपकोहीमानो तोअपनेसेअपनाभेदप्राप्तहोगा ॥ सोअप्रसिद्धहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतित् स्वरूपसेभिन्नभीपंदाथहै । तिसकोनिःस्वरूपताकीप्राप्तिनहींहोती । क्योंकिजैसेएकघटसेभिन्न दूसरेघटको अघटपनादेखनेमेंनहींआता । तैसेस्वरूपसेभिन्नकोभीनिःस्वरूपतानहींहोती ॥ शंका ॥ एकघटसेदूसरेघटकाभेदमानेहुएभी तिसके अघटपनेके अदर्शनमें कौनकारणहै । क्या? घटसेभिन्नजो भेदांतरहै वहअघटपनेकेअदर्शनमेंप्रयोजकहै । अथवाघटस्वरूपभेदमेंभी प्रतियोगिताअवच्छेदककाभेदप्रयोजकहै । यहकहाचाहिये ॥ समाधान ॥ यद्यपिएकघटसेभिन्नदूसरेघटमेंकिंचित्वैधर्मरूपभेदांतरविद्यमानभीहै परंतुपूर्वधर्मभेदकेनिराकरणमेंकथनकियेहुएदोषोंकीप्राप्तिसेतिसकोभेद पनास्वीकारनहीं । यातेप्रथमपक्षअसंगतहै ॥ औरवैधर्म्यकेहुएही स्वरूपभेदहोताहै । यदियहद्वितीयपक्षकहो तोइसमेंहमकोभी इष्टापति है । क्योंकिसर्वअनात्मस्वरूप वैधर्म्यअर्थात्तत्त्वव्यक्तित्वरूपअसाधारण धर्मकरव्याप्तहैं ॥ यातेअनात्मास्वरूपभेदमें तत्त्व्यक्तित्वरूपवैधर्म्यही प्रतियोगिताकाअवच्छेदकहै ॥ तिसकेभेदसेही एकघटसेभिन्नद्वितीय घटस्वरूपको निःस्वरूपताकीप्राप्तिनहीं । तात्पर्ययहहै । किघटस्वरूप भेदमेंघटनिष्ठवैधर्म्यही प्रतियोगिताकाअवच्छेदकहै ॥ इसकारणसेघटस्वरूपजोभेदतिसकोनिःस्वरूपताकीप्राप्तिनहीं । क्योंकियदिस्वरूपत्वप्रतियोगिताकाअवच्छेदकहोतातोस्वरूपसेभिन्नकोनिःस्वरूपताकीप्राप्तिहोती परंतुस्वरूपत्वप्रतियोगिताकाअवच्छेदकनहीं । यातेपूर्वउक्तप्रकारसेअन्य घटकाघटसेभेदहुएभीअघटत्वकेअदर्शनमेंप्रतियोगिताअवच्छेदकभेदको

प्रयोजकत्वसंभवहोनेसे द्वितीयपक्षमेंदृष्टापत्तिहै ॥ इति ॥

❀ अथ किसी वादी की रीति से भेद त्रय का निरूपण ❀

शंका ॥ क्यां? स्वरूप ही भेद है अथवा इतर भी भेद है ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि इतर को भी भेद पाने में दोष का अभाव है ॥ तथाहि ॥ 'भिन्न धर्म विषयक भेद वर्तता है ॥ यह पूर्व स्वीकार किया है ॥ इस पक्ष में अन्योऽन्या श्रयादि दोषों की प्राप्ति नहीं होती ॥ क्योंकि स्वरूप भेद के भिन्न धर्मों में अन्य भेद की स्थिति संभवती है । और स्वरूप भेद को इतर की अपेक्षा नहीं । या तो केवल स्वरूप ही भेद है यह कथन अयुक्त है ॥ और यदि द्वितीय पक्ष कहो तो सर्व ही अन्योऽन्या भाव तथा वैधर्म्यादिरूप भेद यथायोग्य स्वीकार करने योग्य हैं । तिस यथायोग्यता को ही स्पष्ट करते हैं । अर्थात् घटादिकों में भेद त्रय को विवेक कर दिखलाते हैं ॥ घटादि द्रव्य तथा गुण और कर्म इन तीन पदार्थों में तो स्वरूप तथा अन्योऽन्या भाव और वैधर्म्य यह तीनों भेद वर्तमान हैं । क्योंकि द्रव्य गुण तथा कर्म स्वरूप से भिन्न भी हैं और तिनका परस्पर अन्योऽन्या भावरूप भेद भी तिनमें वर्तमान है । और द्रव्यत्व गुणत्व और कर्मत्व यह असाधारण धर्म रूप वैधर्म्य भेद भी तिनमें है । और सामान्य तथा समवाय इन दो पदार्थों में स्वरूप भेद तथा अन्योऽन्या भावरूप भेद यह दो भेद रहते हैं । और सामान्यादिकों में वैधर्म्य का अभाव होने से तृतीय भेद तिनमें नहीं है । क्योंकि प्रथम कार्य द्रव्य तथा गुण और कर्म यह तीन तो सामान्य तथा समवाय में वृत्ति नहीं । किंतु केवल द्रव्य मात्र वृत्ति है ॥ और सामान्य भी सामान्य में तथा समवाय में वृत्ति नहीं । क्यों कि वह दोनों निःसामान्य हैं ॥ और समवाय यद्यपि सामान्य में वृत्ति भी है तथापि तिसको उभय वृत्ति होने से वैधर्म्यता का अभाव है । इस कारण से

सामान्यादिकों में दोही भेद हैं । तीसरा भेद तिनमें नहीं रहता । और
 अभावको भावकी आश्रयतानहीं । याते तिसमें वैधर्म्यताका अभाव है । और
 तिसमें अन्योऽन्याभावरूप भेदभी नहीं वर्तता । क्योंकि अभावमें अभावस्वी
 कारनहीं है । तिसकारणसे अभावमें केवलस्वरूपही भेद है । इतरदो भेद
 तिसमें नहीं । इस प्रकार सथा योग्यतीनों भेद स्वीकारने योग्य हैं ॥ इति ॥

अथ दोनों भेदोंके निराकरणपूर्वकस्वरूपभेदका स्थापन ।

समाधान ॥ पूर्वतीन भेदोंका जो निरूपण किया सो नहीं संभवता ।
 क्योंकि सर्वपदार्थोंमें अनुगत होनेसे स्वरूपभेद तो अवश्य ही स्वीकार करने
 योग्य है ॥ यद्यपि भेदव्यवहारकी साधकता वैधर्म्यादिकोंमें तुल्य ही है ।
 तिससे केवलस्वरूपभेदकी आवश्यकता कहनी नहीं संभवती ॥ तथापि
 अन्योऽन्याभाव और वैधर्म्यको व्यभिचारी होनेसे भेदव्यवहारकी अप्रयो
 जक रूपता होनेकर तिनका अंगीकार व्यर्थ है ॥ शंका ॥ वह दोनों
 व्यभिचारी हुए भी भेद व्यवहार के साधक क्यों नहीं होते ॥
 समाधान ॥ एकाकार जो व्यवहार होता है । तिसको एकरूपविषयकर
 साध्यत्वकानियम है । जैसे "अयं घटः" "अयं घटः" इस एकाकार व्यवहारमें
 सर्वघटोंमें अनुगत घटत्वजाति ही प्रयोजक है । घटव्यक्ति इस व्यवहारका
 प्रयोजक नहीं । क्योंकि व्यक्ति अननुगत है । और यदि अननुगत व्यक्ति को ही
 एकाकार व्यवहारमें प्रयोजक माने तो जातिकी असिद्धि प्राप्त होगी ।
 याते अनुगत व्यवहारमें अनुगतविषय ही प्रयोजक है यह नियम है । इस
 प्रकार प्रकरणमें भी भेदव्यवहारका विषय जो अनुगतस्वरूपभेद है । तिस
 को अनुगतभेदव्यवहारमें प्रयोजकताके संभव हुए व्यभिचारी जो वैधर्म्या
 दितिनको भेदव्यवहारका प्रयोजक पान नहीं संभवता ॥ शंका ॥

स्वरूपभेदकोभीभेदव्यवहारकी हेतुतानहींसंभवती । क्योंकिभेदस्वरूपअपनेस्वरूपमें भेदव्यवहार देखनेमेंनहींआता । यदिस्वरूपमेंभी भेदमानोगे तोअपनेसे अपनाभेदभीहुआचाहिये ॥ समाधान ॥ स्वरूपहीइतरसापेक्षहुआ भेदव्यवहारकाहेतुहै । यहपूर्ववहुतवारकह आएहैं । क्योंकिस्वरूपकाप्रतियोगिकोटिमें प्रवेशमानेहुए अन्यधर्मी काअभावहै । औरधर्मिकोटिमेंप्रवेशमानेहुए अन्यप्रतियोगीकाअभाव है । औरभेदकोधर्मात्प्रतियोगीकरही घटितपनेकानियमहै ॥ यातेअपनेसेअपनाभेदप्रसंगभीनहींप्राप्तहोता॥शंका ॥हेवादिस्वरूपें तथाभेदकाअभेदमानेहुएतिनकापरस्परअंतरभावहोनेकरएकशेषरहना चाहिये । सोक्या?स्वरूप भेदमेंप्रवेशकरताहै।अथवास्वरूपमेंभेदप्रवेश करताहै । इनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिभेदहै । इतनाही व्यवहारहुआचाहिये स्वरूपव्यवहारनहोनाचाहिये । औरद्वितीयपक्ष भीअसंगतहै । क्योंकिस्वरूपमात्रकेशेषरहेहुए भेदाकारव्यवहारकालो पहोगा ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्दोनोंकाअभेदमानेहुएएकशेष रहेगा ॥ यहआपकाकथनसत्यहै । परंतुभेदकोस्वरूपसेअभिन्नहोने सेस्वरूपहीशेषरहाहै । औरस्वरूपकोशेषमानेहुए भेदव्यवहारनहीं होगा । यहकथनभीनहींसंभवता । क्योंकिधर्मिआदिकसापेक्षस्वरूपहीभेदव्यवहारकाहेतुहै । यहअर्थपूर्वअनेकवारकथनकियाहै ॥ इसीअर्थकोप्रकटकरनेकेलिये प्रतिवादीकेविकल्पको अनुवादपूर्वक निराकरणकरतेहैं । औरस्वरूपभेदक्या?भिन्नधर्मीमेंभेदव्यवहारकाहेतु है ।अथवाअभिन्नधर्मी में भेदव्यवहारकाहेतुहै॥ इसविकल्पकाभीया स्थानमेंअवकाशनहीं । क्योंकिइन्द्रियोंसेउपस्थितहुए वस्तुमात्रमें

जबधर्मात्थाप्रतियोगिज्ञानकी अपेक्षाहोतीहै । तबभेदव्यवहारउत्पन्नहोताहै ॥ औरजबतिनकेज्ञानकी अपेक्षानहींहोती तबअभेदव्यवहारउत्पन्नहोताहै । यातेपूर्वकथनकियाअर्थनिर्दोषहै ॥ इति ॥ शंका ॥ हेवादिन् ॥

*** जन्यत्वमेवजन्यस्य मायिकत्वसमर्पकम् ***

इसकारिकामेंप्रपंचको मायाकाकार्यहोनेसे पूर्वमिथ्यापनानिरूपणकिया । तिसत्राविद्यकप्रपंचमेंप्रत्यक्षादिप्रमाणप्रवृत्तनहींहोसकते। क्योंकिमिथ्यापदार्थसाक्षिमात्रकरसिद्धहोताहै। तिसमेंप्रत्यक्षादिकोंकी अपेक्षानहीं। औरकल्पितवस्तुप्रतियोगिकभेदकोकल्पितहोनेकरतिसको भीप्रत्यक्षादिकविषयनहींकरसकते ॥ तिसकारणसेप्रत्यक्षादिकोंकेवल करब्रह्मात्माकेअभेदमेंभेदकीशंकातुमकैसेकरतेहो ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्यदिअज्ञानकार्यत्वप्रपंचमेंहोता तोरजतकीन्याईतिसकोमिथ्यापनेकीसिद्धिहोती। परंतुअज्ञानकार्यत्वही प्रपंचनिष्ठनहींसिद्धहोसकता ॥ क्योंकिबहुतश्रुतियोंमेंतिसको ब्रह्मकार्यत्वहीश्रवणकियाहै ॥ शंका ॥ हेवादिन्प्रपंचमेंब्रह्मकार्यत्वको कथन करतीहुईश्रुतियों का भी कार्य कारणभावकेप्रतिपादनमेंतात्पर्यनहीं ॥ क्योंकिब्रह्मकोकारणमानेहुए ॥

✽ नतस्यकार्यकरणांचविद्यते । तदेतद्ब्रह्मापूर्वमनपरं ✽

अ० ॥ तिसब्रह्मकाकोईकार्यनहींहै तथाकोईकरणनहींहै ॥ सो यहब्रह्मकारणसेरहितहै। तथाकार्यसेरहितहै। इत्यादिश्रुतियोंकाविरोध प्राप्तहोताहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्प्रपंचकोब्रह्मकाकार्यपना कहनेवालीश्रुतियोंकास्वार्थमेंतात्पर्यहै ॥ क्योंकि ॥

✽ गतिसामान्यात् ॥ शा० अ० १ पा० १ ॥ म० १० ✽

अ०॥ जैसेसर्वनेत्रोंकी एकरूपविषयकसामान्यगतिहै। अर्थात् सर्वकेनेत्ररूपविषयक एकज्ञानकोहीउत्पन्नकरतेहैं। तैसेसकलवेदांत वाक्यब्रह्मविषयकएकप्रकारके ज्ञानकोहीउत्पन्नकरतेहैं। इसन्यायसे और अभ्यासकोतात्पर्यकाग्राहकलिंगहोनेसेस्वार्थमेंतिनश्रुतियोंकातात्पर्य संभवताहै। औरवह अभ्यास यहांप्रकरणमेंविद्यमानहै। औरपूर्वकथन कियेजोश्रुतिरूप विरोधिवाक्यहैं। वहतोईश्वरकेस्थूलतथासूक्ष्मइनदो शरीरोंकेअभावकोप्रतिपादनकरतेहैं। कार्यकारणकेअभावकोनहींकहते यातेतिनकाविरोधनहीं। अबअभ्यासरूपलिंगकोहीस्पष्टकरतेहैं ॥

❀ सदेवसोम्येदमग्रआसीत् । यतोवाइमानिभूतानि जायंते । तस्माद्वाएतस्मादात्मनःआकाशःसंभूतः। यथाग्नेः धुद्राविस्फुलिंगाः एवमेतस्मादात्मनःसर्वे देवाः सर्वेलोकाः सर्वेएतेआत्मानोव्युच्चरंति ❀

अ०॥ हेप्रियदर्शनश्वेतकेतोयहदृश्यमानजगत् अपनीउत्पत्तिसेपूर्वस्थूल रूपकोत्यागकरसत्ब्रह्मरूपहीथा। औरजिससेयहसर्वभूतउत्पन्नहोतेहैंसो ब्रह्महै। औरतिसमंत्रतथानाह्वयप्रतिपादितमायोपाधिकब्रह्मसेआकाश उत्पन्नहुआ। औरजैसेएकअग्निसेछोटेछोटेअग्निकेअवयवरूपविस्फु लिंगानानाप्रकारकेप्रकटहोतेहैं। तैसेइसविज्ञानमयआत्माकाजाग्रततथा स्वप्नअवस्थासेपूर्व जोअज्ञानउपाधिकस्वरूपहै। तिससेप्राणादिकोंके अधिष्ठाताअग्निआदिकसर्वदेवता औरकर्मोंकेफलउत्पन्नहुए। तथा अंतःकरणादिउपाधियुक्तचिदाभासउत्पन्नहुए। इत्यादिकश्रुतिवचनों से ब्रह्मका कार्यपना प्रपंचमें प्रतीत होताहै ॥ और ब्रह्मको प्रपंच कीकारणात्ताकेवलश्रुति प्रमाणकरही सिद्धनहीं किंतु युक्तिसेभी

सिद्ध है ॥ तथाहि ॥

(जन्माद्यस्य यतः । शा० अ० १। पा० १। २ ॥)

अ० ॥ प्रत्यक्षादिकोंकर उपस्थितइसजगत्का उत्पत्तिस्थिति भंगजिससर्वज्ञसर्वशक्तिवालेकारणसेहोताहैसोब्रह्महैइसन्यायसेभीब्रह्म कोजगत्कीकारणतासिद्धहै। यह अधिकरणसूत्रहै। जिससूत्रमेंविषयतथा संशयऔंपूर्वपक्षतथासिद्धांतऔरप्रयोजनयहपांचअवयवहोंतिसकोअधिकरणकहतेहैं। यहांयहअधिकरणकीरचनाहै। 'यतोवाइमानि'इत्यादिश्रुति इसकाविषयवाक्यहै। सोक्या?ब्रह्मकेलक्षणको बोधननहींकरता अथवा करताहै। एकपदार्थकोउपादानतथा निमित्तरूपउभयविधकारणताके असंभवतथासंभवसेसंशयहोताहै। इसप्रकारकामंशयहुएपूर्वपक्षप्राप्तहुआ श्रुतिकोअनुमानके अनुसारहीहोनेसे वहस्वतंत्रउभय विधकारणताको बोधननहींकरसकती ॥ औरएकपदार्थकोदोनोंप्रकारकी कारणतामें दृष्टांतकाअभावहोनेसे अनुमानभीउभयविधकारणताके बोधनमें असमर्थहै ॥ औरउपादानत्ववानिमित्तरूप एकप्रकारकीहेतुताको ब्रह्मकालक्षणमानेहुए वस्तुपरिच्छेदहोनेसे लक्ष्यपदार्थमें अब्रह्मत्व प्राप्तहोगा । यातेयहवाक्यब्रह्मके लक्षणको नहीं बोधनकरता । इसप्रकारपूर्वपक्षकेप्राप्तहुए अबसिद्धांतनिरूपणकरतेहैं । अनुमानको पुरुषकीबुद्धिसेउत्पन्नहोनेकर तिसमेंदोपकीसंभावना होसकतीहै। याते तिसकोअपौरुषेयरूपतासे सर्वदोषोंसेरहितआगमप्रमाणकाअनुग्राहक तर्करूपतासंभवतीहै । इन्द्रियोंकेअविषयभूतअर्थमें स्वतःतिसको प्रमाणतानहीं । आगमसिद्धजोउभयविधकीकारणता तिसमेंसुखादि दृष्टांतकोलेकरअनुमानसंभावनामात्रकाहेतुहै। अर्थयहजैसेसुखादिक

अभिन्ननिमित्तउपादानकहैं तैसेजगतभीअभिन्ननिमित्तउपादानक
संभवहोसकताहै । यातेवस्तुपरिच्छेदका अभावहोनेसे लक्ष्यपदार्थमें
ब्रह्मत्वकीसिद्धिहै । इसप्रकारसृष्टिवाक्य जगतका अभिन्ननिमित्त
उपादानसञ्चिदानंदस्वभावब्रह्महै । ऐसेलक्षणाकोबोधनकरताहै ।
यहसिद्धांतहै । जिसअधिकरणमें लक्षणाकानिरूपणहो तिसकाप्रयो
जनभिन्ननहींहोता। किंतुपूर्वअधिकरणकाप्रयोजनहीतिसकाप्रयोजन
जानना ॥इति॥ इसप्रकारश्रुतिश्रौच्युक्तिसेब्रह्मकार्यत्वप्रपंचमेंसिद्धहै ।
औरब्रह्मकोसत्यस्वरूपहोनेकर तिसकेकार्य प्रपंचमेंभीसत्यत्वअवधित
है तैसेमानेहुएसत्यप्रतियोगिकभेदकोसत्यपनाहोनेसे प्रत्यक्षादिकोंकी
विषयतातिसमेंसंभवतीहै । यातेप्रपंचकाभेदआत्मामें अवश्यप्राप्त
होताहै ॥ इति ॥ शंका ॥ हेवादिन् जैसेप्रपंचकोब्रह्मकार्यत्वकथन
करनेवालेश्रुतिवचनहैं। तैसेअज्ञानकाकार्यप्रपंचहै।ऐसेकथनकरनेवाले
श्रुति वचनभीबहुतहैं ॥ तथाहि ॥

* मृत्युनैवेदमावृत्तमासीत् * ६० ३० अ० (३) ब्रा० (१)

तद्देदंतर्ह्यव्याकृतमासीत् * ६० अ० (३) ब्रा० (७)

इंद्रोमायाभिः पुरुरूपईयते ॥ *

* मायांतुंप्रकृतिंविद्यात् । नासदासीन्नोसदासी

त्तमआसीत् *

अ० ॥ यहदृश्यमानजगतउत्पत्तिसेपूर्वसाभासअज्ञानकर
आच्छादितथा ॥ अर्थात्अज्ञानमेंविलीनथा ॥ और "तत्" इस
शब्दसेबीजावस्थापन्नजगत्कहाजाताहै ॥ औरपेटिह्यप्रयोगमें "ह"
क होताहै ॥ और "इदं" यहशब्दव्याकृतअर्थात्स्पष्टनामरूपवाले

प्रपंचकावाचक है। इनदोनोंपदोंकीसमानाधिकरणतासेपरोक्षत्रपरोक्ष इनदोनोंअवस्थावालेजगत्काअभेदप्रतीतहोताहै ॥ इससेयहअर्थ सिद्धहुआ।सोयंहजगतउत्पत्तिसेपूर्व“अव्याकृतमासीत्”कहियेसाभास अज्ञानरूपहीथा। औरपरमेश्वरमिथ्याअभिमानोंसेवहुंतरूपप्रतीतहोता है।परमार्थसेवहवहुतरूपनहीं।शंका।मृत्युअव्याकृतादिशब्दअज्ञानमात्र केवाचकनहीं किंतुअज्ञानउपाधिकआत्माकेवाचकहैं। धातेअज्ञान कार्कार्यप्रपंचहै यहअर्थनहींसिद्धहोता॥ ऐसीआशंकाकेहुएअवमाया दिपदोंकरयुक्तश्रुतिवाक्योंकोकथनकरतेहैं। मायारूपअज्ञानकोजगत् काउपादानकारणजाने। क्योंकिकार्यतथाकारणकीसमानताहोतीहै। औरजंगत्कीउत्पत्तिसेपूर्वस्थूलतथासूक्ष्मयह दोनोंप्रकारकेपदार्थनहीं थे किंतुतमहीथा ॥यहांतमशब्दआवर्णशक्तिप्रधानअज्ञानकावाचक है॥इत्यादिकश्रुतिवाक्यजगत्कोअज्ञानकार्यत्वकथनकरतेहैं ॥ और इसपूर्वकथनकियेहुएअर्थमें श्रुतिअनुसारीयुक्तिभीहै ॥ तथाहि ॥

❀ मायामात्रंतुकात्स्न्येनानभिव्यक्तस्वरूपत्वात् ❀

अ० ॥ उत्तरमीमांसाके तृतीयअध्याय गतद्वितीयपादकायह तृतीय सूत्रहै ॥ इसमें—

❀ सयत्रप्रस्वप्ति ॥ ४० उ० अ० ६ ब्रा० ३ । ६ ॥ ❀

अ० ॥ सोआत्माजिसकालमेंशयनकरताहै। इसवाक्यसेलेकर

❀ नतत्ररथानरथयोगाः ॥ ४० उ० अ० ६ ब्रा० ३ १० ॥ ❀

अ० ॥ तिसस्वप्नकालमेंजाग्रत्केरथनहींहैं। तथातिनकेयोग्य अश्वनेहींहैं। इत्यादिविषयवाक्यहै ॥ तिसमेंयहसंशयहै॥क्याजाग्रत् अवस्थाकीन्याईस्वप्नावस्थामेंभीव्यावहारिकअर्थक्रियामेंसामर्थ्यवाली

सृष्टि है अथवा प्रातिभासिक सृष्टि है ॥ इस प्रकार संशय के हुए पूर्वपक्ष प्राप्त हुआ
स्वप्न में जाग्रत की न्याई व्यावहारिक सत्ता वाली सृष्टि है ॥ क्योंकि—

अथ रथान् रथयोगान् पथः सृजते ॥ ६० ३० अ० द्वा० ३। १० ।

अ० ॥ स्वप्नकाल में रथों को तथा तिनके योग्य अश्वों को और मार्गों
को यह आत्मा उत्पन्न करता है । इस श्रुतिप्रमाण से रथादिकों की उत्पत्ति
स्वप्नकाल में प्रतीत होती है ॥ यातेति श्रुतिप्रमाण से स्वप्नकाल में व्यावहा-
रिक सत्ता युक्त ही सृष्टि है ॥ इस प्रकार पूर्वपक्ष के प्राप्त हुए सिद्धांत निरूपण
करते हैं ॥ सूत्र में जो “तु” शब्द है वह पूर्वपक्ष को निषेध करता है ॥ अर्थात्
स्वप्नकाल में व्यावहारिक सृष्टि है । यह कथन पूर्वपक्षी कानहीं संभवता ॥
यदि स्वप्न में व्यावहारिक सत्ता वाली सृष्टि नहीं तो स्वप्न में कैसी सृष्टि है।
ऐसी आकांक्षा के हुए कहते हैं । (मायामात्रं) माया कहिये मिथ्या
रूप ही स्वप्न में सृष्टि है व्यावहारिक सत्ता युक्त सृष्टि का वह गंधभी नहीं है।
इसमें हेतुकहते हैं ।

✽ कात्स्न्येना नभिव्यक्त स्वरूपत्वात् ✽

अ० ॥ व्यावहारिक वस्तु के धर्म कर स्वप्न को अप्रकट स्वरूप होने से
अर्थात् व्यावहारिक पदार्थों के उचित देशकालादि सामग्री पूर्वक स्वाप्न
पदार्थों की अभिव्यक्ति नहीं होती । इसी कारण से स्वप्न में सृष्टिकथन
करने वाली श्रुति व्यावहारिक सृष्टिको नहीं कथन करती । और
(नतत्र रथान् रथयोगाः) इत्यादि श्रुति ने सृष्टिप्रतिपादक श्रुति
के विषय भूत रथादिकों का निषेध किया है । इसलिये स्वाप्न सृष्टि व्यावहारिक
सत्ता वाली नहीं किंतु अविद्योपादान के होने से प्रातिभासिक सत्ता
वाली है । इस न्याय से भी अज्ञान कार्यत्व प्रपञ्च में सिद्ध होता है । इस प्रकार

पूर्वपक्षीतथासिद्धांतीकरके ब्रह्मकोकारणतातथात्रज्ञानकोकारणताके निरूपणहुएएकतटस्थवादी आशंकाकरताहै ।

❀ अथतटस्थकी शंकाकेसमाधानपूर्वक
पूर्वपक्षका उपसंहार ❀

शंका ॥ इसपूर्वउक्तप्रकारसेश्रुतियोंकापरस्परविरोधहोनेकरजब दोनोंहीकारणनहीं हैं तोजगत्का अन्य कोईकारणकहाचाहिये ॥ क्योंकिकारणसेविनाकार्यकीअनुपपत्तिहै ॥ समाधान ॥ कारणांतर केविद्यमानहोनेसेजगत् रूपकार्यकारणसेशून्यनहींक्योंकिअपनेअपने सिद्धांतमेंजैसाकारणहोनेकेयोग्यहै। तैसापरमाणुआदिकारणविद्यमान ही है॥ तिनकारणों मेंप्रथमपरमाणुकीसिद्धिकरते हैं।

त्रिसरेणुस्तावदारब्धः महत्त्वे सतिद्रव्योपादान
त्वात् “कपालादिवत्” ।

अ०—प्रथमत्रिसरेणुआरब्धअर्थात्कार्यहै । महत्परिमाणवाला हुआद्रव्योपादानकहोनेसे । जोजो महत् परिमाणवालाहूआद्रव्योपादानकहोताहै ॥ सोसोकिसीकरआरब्धहोता है ॥ जैसेकपालादि कार्य है ॥ इति ॥ इमअनुमानसेत्रिसरेणुकोकार्यतासिद्ध है ॥ इस प्रकारत्रिसरेणुकेअवयवरूपद्रव्यणुकोंमेंभीकार्यताअनुमानसंसिद्धकरनी सो अनुमान यह है ॥

❀ विवादाध्यासितंकार्यद्रव्यं त्रिसरेणववयवारुख्यं
स्वपरिमाणादणुतरपरिमाणारब्धं कार्यद्रव्य
त्वात् । संमतवत् ॥ ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजोकार्यद्रव्यत्रिसरेणुका अवयवरूपद्रव्य

गुणसंज्ञकहैवहअपने परिमाणसेअणुतरंपरिमाणवाले द्रव्यकरआरब्ध है ॥ कार्यद्रव्यहोनेसे।जोजोकार्यद्रव्यहोताहै । सोसोअपनेपरिमाणसे अल्पपरिमाणवाले द्रव्यकरहीआरब्धहोताहै ॥ जैसेत्रिसरेणुकार्यद्रव्य होनेसेअपनेपरिमाणसे न्यूनपरिमाणवालेद्रव्यगुणोंसेआरब्धहै।इति। इसप्रकार जोद्रव्यगुण परिमाणकी अपेक्षासे न्यूनपरिमाणवाला द्रव्यद्रव्यगुणका आरम्भकहै वहीपरिमाणुजगत्का मूलकारणहै ॥ इसप्रकारवैशेषिकादिकमानतेहैं ॥ औरऐसेहीसांख्यादिमतवालेप्रधानादिकोंकोजगत्कामूलकारणकहतेहैं ॥ इसप्रकारजगत्कोपरमाणु आदिजन्यमानेहुए प्रकरणमेंतिसकथनकाउपयोगकहतेहैं ॥ जिस कारणसेसत्यउपादानकार्यकोसत्यताकानियमहै ॥ जैसेपृथिवीउपादानकपदार्थकोपृथिवीरूपताहै ॥ औरपरमाणुआदिकभीसत्यहैं।तिस कारणसे तत्तुपादानकजगत्भीसत्यरूपहै ॥ तिसीकारणसेप्रत्यक्षादि प्रमाणसिद्धअनात्मप्रतियोगिकभेदकेविद्यमानहुए सर्वहीअद्वैतहै ॥ यहअर्थकिसप्रकारसिद्धहोसकताहै किंतुनहींसिद्धहोसकता ॥ इस पूर्वपक्षकेसंग्रहकाश्लोक ॥

❀ आत्माऽभेदप्रमित्यापिनाद्वैतंतेप्रसिद्धयति ।

अनात्मभेदसंसिद्धेःप्रत्यक्षादेः प्रमाणात्॥१॥❀

दो०—अभेदात्मविज्ञानते नहितवच्यद्वयसिद्ध ।

यतोअक्षादिमानते नात्मभेद प्रसिद्ध ॥ १ ॥

❀ अथसिद्धांत।तत्त्वंपदार्थकेशोधनपूर्वक

वाक्यार्थनिरूपणा ❀

हेवादिन्जोलुमने पूर्वकथनकियासो नहींसंभवता ॥ क्योंकि

श्रुतिकेतात्पर्यका तुमको ज्ञान नहीं है ॥ शंका ॥ हेमिद्धांतिन श्रुतिके
तात्पर्यका ज्ञान मुझे कैसे नहीं ॥ क्योंकि संसारधर्मों से निष्कृष्टका अर्थात्
भिन्न किये हुए साक्षिचेतनका संसारकर्तृत्वादि धर्मों से निष्कृष्टके साथ
अर्थात् भिन्न किये हुए परमात्माके साथ अभेद है ॥ इस पूर्वकथनमें श्रुति
का तात्पर्य जाननेवाले तुमने ही संसारधर्मादिकोंकी भिन्नस्थितिकथन
की है ॥ समाधान ॥ हेवादि नूतत्वमस्यादि श्रुतिने अनात्माको पृथक्
स्थापन करके शोधित तत्त्वंपदार्थोंका अभेदबोधन किया है यह तिसका
अभिप्राय नहीं ॥ यदि अनात्माका पृथक् स्थापन नहीं तो तिनका अभेद
कैसे श्रुतिबोधन करती है ॥ ऐसी जिज्ञासाके हुए प्रथम जिज्ञासाके विषय
भूतस्वरूपको कथन करते हैं ॥ प्रत्यगात्माका ब्रह्मके साथ अभेद है। इस
अर्थकी सिद्धिकेलिये अधिकारी ऐसा निश्चय करता है ॥ सोई दिख
लाते हैं ॥ तहां प्रथमवाक्य में योग्यताकी प्राप्तिके अर्थ
“काकार्यज्ञानपदार्थज्ञानपूर्वकहोता है” इसन्यायको या श्रयण करता
हुआ सिद्धांती त्वंपदार्थकी शुद्धिका प्रकार प्रथमनिरूपण करता है। प्रत्यक्
तथाकूटस्थचेतनरूप अधिष्ठानमें जाग्रतादि तीनों अवस्थाओं और कर्तृत्वादि
अनर्थसमुदाय जो सर्वव्यभिचारी प्रतीत होता है। वह सर्वही तिस अनुगत
साक्षिरूप अधिष्ठानचेतनमेकलित है ॥ जिस कारणसे वह सर्व अध्यस्त
है इस कारणसे तिस अधिष्ठानचेतनसे भिन्न स्वतंत्ररूपता करतिस अध्यस्त
पदार्थका स्वरूप नहीं ॥ यह वार्त्ता अन्वयव्यतिरेकसे जानकर अधिकारी
पुरूपनिर्णय करता है ॥ यहां “प्रत्यक्” इस विशेषणसे साक्षी तथा साक्ष्य
का अन्वयव्यतिरेक सूचन किया ॥ सर्वव्यवस्थामें साक्षीको अनुगत
होनेसे तिसका अन्वय है और देहादिरूप साक्ष्यको परस्परव्यभिचारी होने

से तिसकाव्यतिरेक है ॥ औरअवस्थादिकोंको अध्येस्तपनासूचन करनेकेलिये अधिकरणका “कूटस्थ” यहविशेषणकथनकिया है । तिस विशेषणसेवास्तवविकारका अभावहोनेसे अज्ञानकेवशसेही अधिष्ठान मेंअन्याकारताकी प्रतीति है । यहलाभ है । औरइसीविशेषणसे कार्यकारणका अन्वयव्यतिरेक भी सूचनकिया । सोइसप्रकारजानना । देहादिविवर्त्तरूपकार्योंका परस्परव्यभिचारहोनेसे तिनकाव्यतिरेक है । औरविवर्त्ताधिष्ठानरूपकारणको सर्वत्रअनुगतहोनेसे तिसका अन्वय है । और “अनर्थसमुदाय” यहजो पूर्वदेहादिअनात्मवर्गका विशेषणकहा है। सोदुःखित्वतथापरमप्रेमाऽस्पदत्वके अन्वयव्यतिरेकको सूचनकरता है । सोऐसेहै। दुःखकोव्यभिचारीहोनेसे तिसकाव्यतिरेक है। औरपरम प्रेमाऽस्पदत्वको सर्वत्रअनुगतहोनेसे तिसका अन्वय है। औरव्यभिचारी तथाअनुगतका अन्वयव्यतिरेकसूचनकरनेकेलिये अनात्मपदार्थोंका “व्यभिचारी” यहविशेषणपूर्वकहा है । औरतिसकूटस्थमें अधिष्ठात्वकी योग्यताकेलिये “अनुगत” विशेषण है । औरस्वसत्ताप्रदमेंस्फूर्तिप्रदत्व कथनकरनेकेलिये “साक्षि” विशेषण है औरअनुगततथासाक्षीयहदोनों अधिष्ठानकेविशेषण अन्वयव्यतिरेककेकथनमें भी उपयोगी हैं औरपरमप्रेमाऽस्पदत्वके भी यहउपलक्षण है ॥ इसप्रकारचारप्रकारके अन्वयव्यतिरेकसे अधिष्ठानसेभिन्न अध्येस्तकीसत्तानहीं यहवार्त्ता अधिकारीनिश्चय करता है । तिसनिर्णयकाफलकहते हैं । इसरीतिसेनिर्णयकरकेशोधन कियेहुएशुद्धप्रत्यगात्माकेसाथ ब्रह्मका अभेदसिद्धकरनेकेलियेतत्पदार्थ कोभी अधिकारीशोधनकरता है ॥ तथाहि ॥ तत्पदार्थमें भीजगत्कर्तृत्वऔरपरोक्षत्वादिधर्म तथाआकाशादिरूपसर्वजगत्जोव्यभिचारी

प्रतीत होता है। वह सर्वतिस अनुगतसत्त्वित्त्वात् आनन्दस्वरूपब्रह्ममें अध्यस्त है। और तिस ब्रह्मसे भिन्न किया हुआ असत् है। और किसी प्रमाणकर सिद्ध नहीं किंतु केवल भ्रांतिरूप ही सिद्ध है। याते वास्तवसे असत् है। यह अर्थ चार प्रकारके अन्वयव्यतिरेकसे अधिकारी सुमुचुनिश्चय करता है यहांपर "व्यभिचारी" यह जो जगत्का विशेषण पूर्वकहा है और "अनुगत" यह जो अधिष्ठानका विशेषण कहा है। सो पूर्वउक्त चार प्रकारके अन्वयव्यतिरेकका सूत्रक जानना। और शून्य ही अधिष्ठान है। इसबोध मतके निषेध करनेके लिये अधिष्ठानका "सत्" यह विशेषण कहा है और सर्वत्रस्फूर्ति स्वरूपता अधिष्ठानकी दिखलानेके अर्थ "चित्" यह विशेषण कहा है ॥ शंका ॥ अन्वयव्यतिरेकको तर्करूपता होनेकर संभावनामात्रकी हेतुताहु एभी प्रमाणतानहीं इसीसे तिनको अवधारणकी हेतुतानहीं संभवती ॥ क्योंकि निश्चयका हेतु प्रमाण ही होता है। तर्क नहीं ॥ समाधान ॥ (नेतिनेति) इस निषेधक श्रुतिरूप प्रमाणसे कर्तृत्वादि रूपप्रपंचका अभाव अधिष्ठानमें यह अधिकारी निश्चय करता है ॥ याते अधिकारीका निश्चय प्रमाणजन्य है केवल तर्कजन्य नहीं। यद्यपि निषेधप्राप्ति पूर्वक होता है। प्राप्तिके अभावहु एव निषेधके से होगा। तथापि सृष्टिवाक्यसे तिस प्रपंचकी अधिष्ठानमें प्राप्तिसे अनंतर निषेधवाक्य प्रवृत्त होता है याते निषेधप्राप्ति पूर्वक ही है। और यदि ऐसे कहो कि प्रपंचको सृष्टिवाक्यरूप श्रुतिप्रमाणसे सिद्ध होनेकर तिसका निषेध नहीं संभवेगा। सो यह कथन भी असमीचीन है क्योंकि अविद्यासे उपस्थितहु ए जगत्का श्रुतिअनुवाद करती है ॥ शंका श्रुतिको अनुवाद कमानेहु एकसलिये वह अनुवाद करती है ॥ समाधान हेवादिबोधका हेतु जो अथारोपअपवाद न्यायतिसको आश्रयणकरके बोध

कथं श्रुति अनुवादकरता है । याते श्रुति प्रमाण करयह जगत प्राप्त नहीं
 किंतु भ्रांतिसे प्राप्त है । तिसका निषेधसंभवता है । इस प्रकार जाग्रतादिक

आधिकारसमुच्चय गुरुकी शरणको प्राप्त होता है ॥ शंका ॥ गुरुकी शरण
 को प्राप्त होना निश्चयकथ्य है । यदि वह निश्चय पूर्व उक्त श्रुतिसे अधिकारी

दाथेकभेदमहाप्रमाण
 आपिप्रत्यक्षादिकाका
 वहसमर्थनहीहै ॥

॥ शंका ॥ पूर्व उक्त अन्वयव्यतिरेकरूपयुक्तिसे ही भेद करनेवाले अनात्मा
 के संबंधको कल्पित निश्चय होनेकर आत्मामें तिसका अभाव है । याते
 ब्रह्मात्माका अभेद अधिकारीको निश्चित होजायेगा ॥ समाधान ॥ हे
 वादिन् युक्तिको तर्करूपता होनेकर स्वतंत्रकिसी अर्थमें तिसको प्रमाण
 तानहीं है । इसी कारणसे अभेदका निश्चयकयुक्ति नहीं ॥ शंका ॥
 अधिकारीको अभेदमें प्रमाण का अभाव कहना नहीं संभवता ।
 क्योंकि अधीतवदही अधिकारी होता है । याते श्रुति प्रमाणसे
 तिसको अभेद निश्चय उत्पन्न होजायेगा ॥ समाधान ॥ यद्यपि

जिसने पदपदार्थकी संगतिग्रहणकी है। तिसको सुनाहुआशब्द अर्थ का बोधक हो जाता है । तथापि असंभावनाकर विषयको प्रस्त होनेसे तिसमें शब्दजन्यज्ञान प्रतिष्ठाको नहीं प्राप्त होता । इस कारणसे ही असंभावनाग्रस्त विषयमें वह शब्दप्रमाणरूपतासे व्यवहार नहीं किया जाता । याते अधिकारी अभेदमें संशय युक्त होता है “संशय युक्त” इस विशेषणसे “नित्यानित्यवस्तुका विवेक” यह जो अधिकारीका विशेषण सो अर्थसे निरूपण किया। अब अधिकारीका और विशेषण जो वैराग्य है तिसको निरूपण करते हैं । संसाररूप एकरोगराज है तिसके अनुचर गर्भ वासादि अनेक रोग हैं । तिनसे उत्पन्न हुआ जो दुःखोंका समूह तिसके अनुभवसे जिस पुरुषको वैराग्य उत्पन्न हुआ है। तिसीसे ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुए सुखको भी विषकी न्याई मानता है ॥ शंका ॥ अधिकारीमें वैराग्यादि साधन संपत्तिके हुए भी गुरुके समीप गमन नहीं संभवता ॥ क्योंकि गुरुके समीप गमन कोई संसारकी निवृत्तिका कारण नहीं। और यदि ऐसा कहो (आचार्याद्वैवविद्या ।) अ० ॥ श्रोत्रिय तथा ब्रह्मनिष्ठ गुरु से ही आत्मज्ञान प्राप्त होता है । इत्यादि श्रुतिसे संसार दुःखके निवर्त्तक आत्मज्ञानकी हेतुता गुरुके समीप गमनको प्रतीत होती है। याते आत्मज्ञानके अर्थ गुरुके समीप गमन संभवता है। सो यह कथन भी समीचीन नहीं। क्योंकि यदि आत्मज्ञान संसारका निवर्त्तक हो तो गुरुके समीप गमन संभवे परन्तु आत्मज्ञानको संसारके निवर्त्तक पनेमें कोई प्रमाण नहीं । याते तिसके अर्थ गुरुके समीप गमन नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आत्मज्ञानको सकल संसारकी निवर्त्तकता (तरतिशोकमात्मवित्) अ० ॥ आत्माके जाननेवाला शोक उपलक्षित समूल संसारको नाश करता

है । इस श्रुतिप्रमाणकरसिद्ध है । याते संसाररूपदावानलसे प्रकट हुआ जो संताप तिसके शांत करने का साधन अमृत का समुद्र आत्मविद्या है । ऐसे जानता हुआ यह अधिकारी तिस विद्या की प्राप्तिके अर्थ उसके समीप गमन करता है ॥ शंका ॥ स्वर्ग का साधन याग है ऐसे जानते हुए ए सर्व ही वैदिक जन याग में प्रवृत्त होते ही हैं यह कहीं नहीं संभवता । समाधान ॥ जिसको फल की इच्छा होती है वही तिसके साधनानुष्ठान में प्रवृत्त होता है अन्य नहीं प्रवृत्त होता । याते परिपूर्ण ब्रह्मात्माके अभेद विषयक अतरो ज्ञान की इच्छा वाला पुरुष श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ तथा परम कृपालु सद्गुरु की शरणा को शास्त्र उक्त विधिसे अर्थात् समिदादि किंचित् उपहारको हस्त में ग्रहण करके प्राप्त होता है तब परम कृपालु श्रीगुरुने शरणागत अधिकारीको नित्य तथा निर्दोष तत्त्वमस्यादिरूपशब्दप्रमाणसे शोधन किये हुए तत्त्वपदार्थों का अभेद बोधन किया । तिससे अनंतर अधिकारी अपनी निर्मल बुद्धि की सहायतासे अद्वैतवस्तुके साक्षात्कारको प्राप्त होकर आनंद अंशके आवरक अज्ञानतत्कार्यको बाध करके स्वरूपानंदसे तृप्त हुआ आत्माराम अर्थात् स्वस्वरूपमें ही रमण करने वाला होता है । यद्यपि आपके मतमें वेदको भी कल्पित होनेसे तिसको नित्य कहना नहीं संभवता । तथापि वेद रचनाको बुद्धिपूर्वक न होनेसे तथा प्रयत्नसे अजन्य होनेसे नित्यत्व का तिसमें उपचार है । इस प्रकार तत्त्वज्ञानसे सकल भेद का विनाश होनेकर सर्व अद्वैत ही है यह तत्त्वमस्यादि महावाक्यसे जानने योग्य है । यह अभिप्राय सिद्ध हुआ । इसी हेतुसे श्रुतिके तात्पर्यको न जानकर ही वादीने पूर्व यह कहा है जो अनात्मभेदसे अद्वैतकी हानि होती है ॥ इति ॥

* अर्थस्वरूपभेदकारखंडन *

और जो पूर्ववादीने यह कहा था । कि स्वरूपभेदप्रत्यक्षादिप्रमाण
 का विषय है तिसको विरोध हुं अर्थसे वेदांत ग्रंथमें प्रमाण नहीं । सो
 कथन भी अत्यंत अयुक्त है ॥ क्योंकि ॥ (परां चिखानि) इस श्रुति
 से प्रत्यक्षादि अनात्माको विषय करते हैं । याते तिनको स्वरूपविषयकत्व
 कहना नहीं संभवता । भाव यह स्वरूपको सत् रूप होनेकर अतिमता है । इसी
 से आत्मस्वरूपभेदमें प्रत्यक्षादिकोंकी प्रवृत्ति युक्त नहीं ॥ शंका ॥ सर्व
 प्रत्ययोंका विषय स्वरूप है यह आपका मत है । तिसकारणसे प्रत्यक्षादिकों
 को अविषय स्वरूपको आप कैसे कहते हो ॥ समाधान ॥ हेवादि स्वरूप
 को भेदपनेकी अनुपपत्ति है । जिसहेतुसे स्वरूपमें भेदपना नहीं संभवता सो
 तुम श्रवण करो । क्यों उपाधिके संबंधसे रहित शुद्धात्मा सर्वधर्मोंसे रहित
 वह स्वरूपभेद है । अथवा उपाधिके संबंधवाला विशिष्टात्मा वह स्वरूप
 भेद है । तहां शुद्धही स्वरूपभेद है इस प्रथमपक्षमेति स्वरूपभेदको किसी
 व्यवहारकी हेतुता भी नहीं होगी । यह कथन करने योग्य है । अर्थ यह ॥
 प्रथमब्रह्ममें स्वाभाविक धर्म तो है नहीं क्योंकि वह अकारि स्वभाव है ॥
 और औरौपाधिक धर्म भी उपाधिके संबंधसे रहित ब्रह्ममें नहीं संभता । याते
 शुद्धपदके महात्मसे तिसको निर्धर्मक कहना ही उचित है । यह प्रमाण ही
 और तैसे ही व्यवहारकी विषयता भी तिसमें नहीं है । यह कहना उचित है ॥
 तथाहि ॥ यहां कथनकानामव्यवहार है । अथवा ज्ञानकानामव्यवहार है
 यह विचारणीय है ॥ इनमें प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि किसी
 धर्मको ग्रहण करके ही शब्दकी प्रवृत्ति होती है ॥ तिसधर्मके अभावहुं
 शब्दकी प्रवृत्ति कैसे होगी । और ब्रह्मको रवप्रकाश होनेसे तिसमें ज्ञानकी

विषयताभीनहींसंभवती । यातेद्वितीयपक्षभीअसंगतहै ॥ शंका ॥
निर्धर्मकतथास्वप्रकाशहोनेसेब्रह्ममेंसर्वव्यवहारकीअविषयताहोतिससे
क्यासिद्धहुआ ॥ समाधान ॥ तैसेमानेहुए सर्वव्यवहारकाअविषय
औरसर्वधर्मोंसेरहित “अस्थूलमनणु” इत्यादिश्रुतिकरसिद्धसत्त्वरूप
ब्रह्महीनामांतरसे प्रत्यक्षादिकोंकाविषय तुम्हारेकथनसेसिद्धहोताहै ॥
शंका ॥ “अस्थूल” इसश्रुतिमें “तत्र”कोनिषेधार्थकहोनेसेस्थूलता
काअभावब्रह्महै ग्रहार्थसिद्धहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादित्रकल्पितजो
स्थूलतादिकहै तिनकोअधिष्ठानसेभिन्नकियेहुएअसत्पनाहोताहै और
असत्काअभावभावरूपहीहोताहै।यातेसत्त्वरूपहीब्रह्महैअभावरूपनहीं।
इसप्रकारभेदप्रत्यक्षादिप्रमाणकाविषयहैऐसेकथनकरनेवालेवादीनेभेद
कोपूर्वउक्तब्रह्मसेअभिन्नहोनेकर ब्रह्महीभेदहैइसनामांतरसे ब्रह्मकोही
प्रत्यक्षादिकोंकीविषयताकथनकीहै। तैसेमानेहुएहमारेमतमेंअनिष्टकी
प्राप्तिनहींहोती ॥ शंका ॥ ब्रह्मस्वरूपमानकरभी यदिप्रपंचभेदप्रमाणासिद्ध
होजाय तोभीहमारे इष्टकीसिद्धिहोजायेगी ॥ समाधान ॥ हेवादित्र
प्रथमअतिरिक्तभेदअर्थात् धर्मोंसेभिन्नभेदतोलुमनेही स्वीकारनहीं
किया । औरस्वरूपभेदको ब्रह्मस्वरूपताकेहुए स्वप्रकाशहोनेसेऔर
प्रत्यक्षादिप्रमाणकी विषयताकानिषेधहोनेसे भेदकोब्रह्मरूपहोनेकरभी
प्रमाणगम्यतानहींसंभवती । औरभेदकोब्रह्मस्वरूपमानकर प्रत्यक्षादि
कोंकीविषयतामानेतो ।

❀ नचक्षुषागृह्यतेनैववाचानान्यैर्देवैस्तपसा

कर्मणावा । (सु) ३० श। (बृ० १।५) ❀

अ० ॥ सोब्रह्मनेत्रइन्द्रियकरग्रहणनहींहोता ॥ औरस्वाकइन्द्रिय

करकहानहींजाता । औरअन्यइन्द्रियोंकरभी ग्रहणनहींहोता । और कृच्छ्रादितपसे तथायागादिरूपकर्मसेभीनहीं जानाजाता । इत्यादि श्रुतिकाविरोधप्राप्तहोगा।यातेब्रह्मस्वरूपमानकरभी भेदकोप्रामाणिकता नहींहोसकती ॥ औरसर्वप्रत्ययवेद्यत्व उपहितस्वरूपमेंहै शुद्धमेंनहीं । शंका ॥ यदिपूर्वउक्तदोपसेशुद्धस्वरूपको भेदपनानहींसंभवता । तो विशिष्टस्वरूपहीभेदहो । तिसविशिष्टस्वरूपभेदमें पूर्वकथनकिये दोषोंकीप्राप्तिनहींहोती ॥ समाधान ॥ हेवादिन्विशिष्टस्वरूपभेदहै इसपक्षमेंभीयहविचार करनेयोग्यहै। विशेषणतथाविशेष्यकाभेदमाने हुए विशेषणादिभेदसेभिन्नही कोईविशिष्टस्वरूपभेदहै। यहकथनकरनेयोग्यहैअथवाविशेषणादिकोंके भेदकाअभावहीविशिष्टस्वरूपभेदहै यहकथनकरनेयोग्यहै। विशेषणतथाविशेष्यकाभेदमानकरविशिष्टस्वरूप भेदतिससेभिन्नहै।यदियहप्रथमपक्षमानो तोदुःखपूर्वकहै परिहारजिस का ऐसेअनवस्थादोषकीप्राप्तिहोगी। सोदिखलातेहैं॥ विशिष्टस्वरूप भेदकाउपपादकजोविशेषणविशेष्यकाभेदहै।वहक्याविशिष्टस्वरूपभेद हीहै।अथवाकोईअन्यभेदहै।प्रथमपक्षमानेहुएआपकोहीअपनाउपपा दकहोनेसेआत्माश्रयदोषकीप्राप्तिहोगी। औरद्वितीयपक्षमानेहुएअन्योन्या ऽश्रयदोषहोगा।क्योंकिविशिष्टस्वरूपभेदको अपनेउपपादकभेदांतरकी अपेक्षाहै।औरभेदांतरकोअपनीमिद्धिकेअर्थविशिष्टस्वरूपभेदकीअपेक्षा है।औरयदिअन्योऽन्याश्रयदोषकेपरिहारकरनेकेलियेविशेषणविशेष्यके भेदकाउपपादकतृतीयविशिष्टस्वरूपभेदमाने तोचक्रकादोषकीप्राप्ति होगी॥औरचक्रकादोषकेपरिहारकरनेकेलिये यदिचतुर्थस्वरूपभेदमाने तोअनवस्थादोषप्राप्तहोगा।औरविशेषणतथाविशेष्यकेभेदकाअभावही

विशिष्टस्वरूप भेद है। इस द्वितीयपक्षमें विशिष्टस्वरूपकी असिद्धि है। क्यों कि विशेषण तथा विशेष्यका अभेद माने हुए दोनों में एकशेष रहेगा। याते विशिष्टस्वरूपकी ही असिद्धि होगी। क्योंकि एक विशेषण वा विशेष्यमें विशिष्टव्यवहार नहीं होता। और विशिष्टस्वरूपता भेदको माने हुए प्रमाणाकी विषयता भी नहीं हो सकती। क्योंकि विशिष्टको भी शुद्धवस्तुके स्वरूप ही न्याई निर्धर्मकता है। जिस कारणसे रूपादि विशिष्टपदार्थमें अन्यरूपादिक नहीं स्थित हो सकते। याते विशिष्टस्वरूपभेदको निर्धर्मक होनेसे तिसमें प्रत्यक्षादि प्रमाणाकी विषयता नहीं संभवती ॥ किंवा ॥ विशिष्टस्वरूपको निश्चय करतुम भेद कहते हो, तहां सो विशिष्टस्वरूप क्या? विशेषण तथा विशेष्य और संबंध इन तीनोंसे भिन्न है। अथवा अभिन्न है। प्रथमपक्षतो नहीं संभवता। क्योंकि विशिष्टनामवाला स्वतंत्रकोई पदार्थ नहीं। विशेषण और विशेष्य तथा तिनके संबंधसे भिन्न तिस विशिष्टपदार्थका अस्तु भवन नहीं होता। और द्वितीयपक्षमें भी यह विचार करने योग्य है। विशेषण तथा विशेष्य और तिनके संबंधसे विशिष्टको अभिन्न माने हुए क्या? एक एकमें विशिष्टव्यवहार होता है। अथवा तीनोंके समुदायमें विशिष्टव्यवहार होता है। इनमें प्रथमपक्षतो नहीं संभवता। क्योंकि प्रत्येकमें विशिष्टव्यवहार माने हुए केवल दंडमें भी "दंडी पुरुषः" ऐसा विशिष्टव्यवहार हुआ चाहिये। और ऐसा व्यवहार होता नहीं। क्योंकि केवल दंडको तिस विशिष्टव्यवहारकी जनकता नहीं है ॥ ऐसे ही केवल विशेष्य और केवल संबंधमें भी विशिष्टव्यवहार नहीं होता। और समुदायमें विशिष्टव्यवहार होता है। इस द्वितीयपक्षमें भी यह विचार कर्तव्य है। क्या? वह समुदाय इन विशेषणादि तीनोंसे भिन्न है। अथवा अभिन्न है। प्रथमपक्षमें तो दूषण पूर्वक थन कर ही दिया है। अर्थात् विशेषणादिकोंसे

भिन्नसमुदायपदार्थका अनुभवनहीं होता। औरद्वितीयपक्षमें भी विशेषणादि प्रत्येकमें समुदायव्यवहारहु आचाहिये। औरवह देखनेमें नहीं आता। याते द्वितीयपक्षभी असंगतहै । औरयदि पूर्वउक्तदोषोंके दूरकरनेकेलिये विशेषणतथाविशेष्यकेसंबंधकानामही विशिष्टपदार्थहै। ऐसेवादीकहेतो, यहभी नहीं संभवता । क्योंकि विशेषणादिकोंसे भिन्नहु आसंबंधविशिष्ट स्वरूपहै। अथवा विशेषणादिकोंकर उपलक्षितहु आसंबंधविशिष्ट स्वरूपहै इनमें प्रथमपक्ष नहीं संभवता। क्योंकि “विशेषणतथाविशेष्यऔरतिनका संबंधहै” इससमूहालं चनज्ञानमें संबंधमें भी विशेषणादिकोंकी न्याई विशिष्ट व्यवहारदेखनेमें नहीं आता। औरद्वितीयपक्षभी असंगतहै। क्योंकि देवदत्त के गृहप्रयुक्तजो व्यवहारहै । सो गृहके उपलक्षणरूपका कमें नहीं देखा तैसे संबंधके उपलक्षणभूत विशेषणतथाविशेष्यमें विशिष्टप्रयुक्त व्यवहार का अभावप्रसंगहोगा। याते विशिष्टस्वरूपताभी भेदको नहीं संभवती ॥ किंवा ॥ वस्तुका स्वरूपही भेदहै ॥ ऐसे कथन करनेवाले वादीसे यह प्रष्टव्यहै क्या? निःस्वरूपप्रतियोगिकवह भेदहै। अथवा स्वरूपप्रतियोगिकभेदहै । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि निःस्वरूपको तुच्छहोनेकर तत्प्रतियोगिकभेदको भी तुच्छताकी प्राप्तिहोगी ॥ और स्वरूपप्रतियोगिकभेदहै इसद्वितीयपक्षमें भी यह विचार करने योग्यहै ॥ क्या? स्वरूपप्रतियोगिकभेद प्रतियोगीका स्वरूपहै । अथवा धर्माका स्वरूपहै ॥ इनमें प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि नाश और तिसके प्रतियोगीका अर्थभेद नहीं संभवता ॥ और (भिदिरविदारणो) अ० ॥ भिदि र्धातुविदारण अर्थात् नाश अर्थमें है। इसपाणिनिमुनिके वचनसे विदारणरूपतिस भेदको वस्तुके स्वरूपकी नाशरूपता सिद्धहोती है । इसी अर्थको दृष्टांत

द्वारास्पष्टकरतेहैं ॥ जैसेपटकाविदारणार्थात्तनाशवहपटकास्वरूप नहींहोता तैसेवस्तुके स्वरूपकाविदारणरूपभेदभी प्रतियोगीस्वरूप नहींहोता । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिस्वरूपत्वको प्रतियोगिताका अचच्छेदक मानेहुए स्वरूपत्वकाजो अनधिकरणहै तिसकोधर्मिपनाकहनाहोगा ॥ औरतिसकोनिःस्वरूपहोनेकरभेदकी आधारताहीनहींसंभवेगी । औरयदिऐसेकहोकिस्वरूपभेदमेंस्वरूपत्व प्रतियोगिताकाअचच्छेदकनहीं किंतुकोईएकवैधर्म्य प्रतियोगिताका अचच्छेदकहै । औरस्वरूपभेदसर्वत्रही वैधर्म्यकरव्याप्तहै ॥ यातेपूर्व उक्तदोषकाअवकाशनहीं । सोयहकथनभीअसंगतहै । क्योंकिएक पदार्थमेंवृत्तिहुआ तिससे इतरमेंजोनवृत्तिहो तिसको वैधर्म्यकहतेहैं ॥ जैसेघटत्वघटमात्रमेंवृत्तिहुआ घटसेइतरपटादिकोंमेंवृत्तिनहीं।यातेघटत्व वैधर्म्यहै।सोवैधर्म्यइतरशब्दकाअर्थजोभेदतिसकेज्ञानकेआधीनज्ञानका विषयहै। औरप्रतियोगिताअचच्छेदक वैधर्म्यज्ञानकेआधीनभेदकाज्ञान है । तैसेमानेहुए अन्योजन्याश्रय दोषकीप्राप्तिस्पष्टहीहै । औरयदि इसदोषकेदूरकरनेकेलिये वैधर्म्यकाउपपादक कोईकर्मभेदस्वरूप भेदसेअन्यही स्वीकारकरो तोतिसमेंभी यहकथनकरनेयोग्यहै । वह धर्मभेदक्या?भिन्नआश्रयमें वर्तताहै।अथवाअभिन्नआश्रयमेंवर्तताहै। प्रथमपक्षतो नहीसंभवता।क्योंकिस्वरूपभेदसेअन्य यदिधर्मभेदमानेतो वहनिःस्वरूपहोगा । औरभिन्नकहिये द्विविभागकोप्राप्तहुएपदार्थको आश्रयपनाभीनहींसंभवता।यातेनिराश्रयहुआसोभेद निरूपणपथके योग्यनहीं।औरयदिभेदनहुएपदार्थकोभी आश्रयमानें।तोअवस्तहुआ घटभीजलकाआधारहुआचाहिये ॥ औरवहधर्मभेदअभिन्नआश्रयमें

वर्तता है। यह द्वितीयपक्षभी नहीं संभवता ॥ क्योंकि अभिन्नयाश्रयमें विरोध होनेसे ही भेदउसमें नहीं वर्तता । किंवा ॥ पटप्रतियोगिकभेदघटस्वरूप है। अथवा घटका धर्म है। प्रथमपक्षमें तो पटरूप प्रतियोगीके सहितभेदको घटरूपमाने हुए घटको अद्वैतप्रसंग होगा ॥ और घटका धर्म वह भेद है इस द्वितीयपक्षमें पटभी घटका धर्म हुआ चाहिये। क्योंकि पटस्वरूप ही भेदतुमने माना है ॥ किंवा ॥ वस्तुका स्वरूप ही भेद है। ऐसे माने हुए संशय तथा भ्रमज्ञानका भी संसारसे उच्छेद प्राप्त होगा ॥ क्योंकि स्थानु तथा शुक्त्यादिक वस्तुके ग्रहणसे भेदका ग्रहण भी अवश्य हो जायेगा ॥ पुनः पुरुष तथा रजतादिकोंका संशय और भ्रम कैसे पुरुषको संभवेगा। किंतु नहीं संभवेगा इस प्रकार भेदमें अनेक दूषण हैं। याते इस बहुत अनात्मविचारसे क्या प्रयोजन है इस विचारका समाप्त करना ही उचित है ॥ सर्वप्रकारसे अर्थात् स्वरूपभेद पक्षमें अथवा धर्म भेद पक्षमें प्रत्यक्षादिक प्रमाण आत्मा तथा अनात्माके भेदको विषय नहीं करते यह अर्थ सिद्ध हुआ। इस प्रकार साक्षिमात्रकर सिद्ध जो आविद्यकप्रपंच है तिसको प्रमाणकी विषयताके अयोग्य होनेसे तत्प्रतियोगिकभेदको कल्पित होनेकर पारमार्थिक अद्वैतकी किंचित् भी क्षति नहीं। इति ॥३७॥

✽ अथ अज्ञानकारणात्वादनी तथा ब्रह्मकारणात्वादनी श्रुतियोंके विरोधका परिहारानिरूपण ✽

और मिथ्याप्रपंच ब्रह्मउपादानक नहीं। किंतु अविद्योपादानक है यदि अविद्याको उपादानतानहीं माने। तो अविद्याको उपादानता कहने वाले श्रुतिवचनोंका विरोध प्राप्त होगा। यद्यपि ब्रह्मको कारणाता कथन करने वाले श्रुति वचनोंका विरोध होनेसे अज्ञान तथा ब्रह्म इन दोनों

कोही कारणतानहीं संभवैगी । यहपूर्वकथनकियाहै तथापिसोनहीं
संभवता । क्योंकि ॥

❀ मू० ब्रह्माज्ञानाज्जगज्जन्मब्रह्मणोऽकारणत्वतः ॥

अधिष्ठानत्वमात्रेणकारणवृहणीयते ॥३८॥❀

शिखरणी० ॥ जनीताभापोजीपरमतमसातेजगतकी ।

यतोभापीनाहीजनकपनतातामहतकी ।

श्रुतीगावेजोईजनकपनतातापरमको ।

अधिष्ठातामात्रेणलपमनमेंतापरमको ॥३५॥

- टी० ॥ ब्रह्मकेअज्ञानसेहीजगतकीउत्पत्तिहोतीहै । यातेअज्ञान
हीजगत्काकारणहै ॥ शंका ॥ ब्रह्मतथाअज्ञानइनदोनोंकोकारणता
केप्रतिपादकवाश्योंकोविद्यमानहोनेकर अज्ञानहीजगत्काकारणहै यह
नियमथापकैसेकरतेहो ॥ समाधान ॥ ब्रह्मकोअसंगतथाविकारशून्य
होनेकरजगत्कीकारणतानहींसंभवती । और-

❀ सदेवसोम्येदमग्रआसीत् ❀

इत्यादिब्रह्मकी कारणताकेप्रतिपादक श्रुतिवाक्यतोजगतकेउपा
दानअज्ञानकीअधिष्ठानतामात्रसे तिसकोकारणताकाप्रतिपादनकरतेहैं
यातेश्रुतियोंकापरस्परविरोधनहीं । अबइसीअर्थकोविस्तारसेनिरूपण
करतेहैं ॥ जगत्काअविद्याहीकारणहै ॥ यद्यपिअविद्यानामविद्याके
अभावकाहै।सो अभावजगत्काकारण नहींसंभवता ॥ क्योंकि तिस
कार्यरूपजगत्कोभावरूपताहै । तथापिवहअविद्यासत्तथाअसत्से
विलक्षणअनिर्वचनीयभावरूपतथा अनादिहै।यातेजगत्कीउपादानता
तिसमेंसंभवेहै॥शंका॥अविद्याकोअनादिमानेहुएभीयहजगत्सत्वरूपता

सेप्रतीतहोताहै। यातेसत्सेविलक्षणअविद्याकोकैसेतिसजगत्कीउपादानताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्दृश्यत्वादियनुमानसेजगत्कीअनिर्वचनीयतासिद्धहै तहांअनुमान ॥

❀विमतंसतविविक्तंदृश्यत्वात्परिच्छिन्नत्वात्
शुक्तिरजतवत्❀

अ० ॥ विवादकाविषययहजगत्सत्सेविलक्षणहै । दृश्यतथापरिच्छिन्नहोनेसेजोजोदृश्यतथापरिच्छिन्नहोताहै।सोसोसत्सेविलक्षणहोताहै । जैसेशुक्तिरजतहै ॥ इति ॥ औरअपरोक्षप्रतीतहोनेसे यहजगत्असत्भीनहीं। तिसीकारणसे यहजगत् सत्असत्से विलक्षणअनिर्वचनीयहै । तैसेमानेदुएअनिर्वचनीयजगत्काअनिर्वचनीयअविद्याही उपादानकारण कथनकरनेयोग्यहै ॥ क्योंकिकार्यतथाकारणकासमानहीरूपहोताहै। विलक्षणनहीं ॥ औरब्रह्मतिसजगतकाकारणनहींसंभवता॥ क्योंकिविकारसेरहितसोब्रह्मकार्यतथाकारणभावसेविलक्षणहै॥ शंका ॥यदिश्रुतिहीतिसकोकारणताबोधनकरतीहै तोआपतिसकोकारणतासेविलक्षणकैसेकथनकरतेहो ॥ समाधान हेवादिन् श्रुतिहीतिसब्रह्मकोकार्य तथाकारणभावसे विलक्षणबोधनकरतीहै । तहांश्रुति ॥

❀तदेतद्ब्रह्मापूर्वमनपरमनंतरमवाह्यमयमात्माब्रह्म
सर्वानुभूरिति । ६० उ० ब्रा० ५ अ० ४ कं १.६ ❀

अ० ॥ “तदेतद्” कहियेअज्ञानादिविषयरूपजगत्ब्रह्मरूपहीहै । इसजगत्काऔरकोईरूपनहीं।क्योंकिअध्यस्तपदार्थ अधिष्ठानस्वरूपहीहोताहै । सोब्रह्म (अपूर्व) अकार्यहै ॥ तथा (अनपरं) अका

रणहै। और (अनन्तरं) सामान्यसेरहितहै। और (अवाह्यं) व्यक्ति सेरहितहै। अर्थात्जातितथाव्यक्तिसेविलक्षणहै। औरवहपरोक्षनहीं किंतु (अयमात्मा) नित्यअपरोक्षआत्मस्वरूपहै ॥ औरवहीब्रह्महै ॥ और (सर्वानुभूः)चिदात्माहोनेसेवहीसर्वकाप्रकाशकहै। (इति) तिस पूर्वउक्तब्रह्मात्माकाज्ञान मुमुक्षुकोसंपादनकरनेयोग्यहै। यहवेदकी आज्ञाहै ॥ तिसआज्ञाकेउल्लंघनकरनेसेसंसाररूपमहान् अनर्थकी प्राप्तिहोतीहै॥ औरतिसआज्ञाके पालनकरनेसेअपनीकृतार्थताहोतीहै ॥ इति ॥ इसश्रुतिवचनसेब्रह्मनिष्ठकारणताकानिषेधहोनेसे तथाब्रह्म कोनिर्विकारहोनेसे कारणताकातिसमेंसंभवनहीं। यद्यपिब्रह्मकोजगत् कीकारणताश्रुतिमेंप्रसिद्धहै ॥ तिसकाविरोधप्राप्तहोगा। तथापि जगत्केउपादानभूतअज्ञानका ब्रह्मको अधिष्ठानहोनेकर औपचारिक कारणताकेकथनसेभीश्रुतिकीसफलताहोसकतीहै। तिसश्रुतिकाविरोध नहींप्राप्तहोता॥ यातेब्रह्मकारणनहीं किन्तुअज्ञानहीकारणहै ॥शंका औपचारिककारणताकोश्रुतिक्योंनिरूपणकरतीहैक्योंकितिसकेकथन काकोई फलनहीं॥और निष्फलअर्थकेकथनसे श्रुतिकोअप्रमाणता होगी ॥ समाधान ॥ हेवादिन् ब्रह्मकोकारणताकहनेवालीश्रुति स्वार्थमें तात्पर्यवालीनहीं ॥ किंतु अन्यार्थपरहै तथाहि ॥ “एक मेवाद्वितीयम्” इसश्रुतिसे प्रथमब्रह्मका अद्वितीयपनासिद्धहै। वहकिसप्रकारसंभावनाकरनेयोग्यहो। ऐसीआकांक्षाकेहुएकहतेहैं। प्रथमकार्यतथाकारणकाअभेद लोकमेंप्रसिद्धहै। क्योंकिमृत्तिकातंतु आदिककारणोंसे घटपटादिकार्यभिन्ननहीं प्रतीतहोते ॥ यातेमृदा दिकारणहीअद्वितीयहै। तैसेब्रह्मभीजगत्काकारणहै तिससेभिन्न

जगत्स्वरूपकार्यनहीं । यातेब्रह्महीअद्वितीयहै । तिसमेंअसंभावनाकैसे हो ॥ इसप्रकारकारणताकहनेवालीश्रुतिअद्वैतमें संभावना बुद्धिमात्र कीउत्पादकतासे सफलहोनेकर अप्रमाणनहीं ॥ शंका ॥सर्ववेदांतों काब्रह्ममेंतात्पर्यहै । यहउत्तरमीमांसाके समन्वयअध्यायकाअर्थहै ॥ तिनमेंवेदांतकाएकदेशरूप कितनेश्रुतिवचनोंका अज्ञानकीकारणतामें तात्पर्यमानेहुएकैसेअपसिद्धांतनहींहोगाकिंतुसिद्धान्तकीहानिअवश्य होगी॥समाधान॥ हेवादिअज्ञानमेंभीजगत्कीकारणताश्रुतिविवक्षा नहींकरती । किंतुअखंडतथाआनन्दस्वरूपचिदात्माकानानाप्रकारसे दुःखित्वतथादृश्यत्वादिरूपतासेजोप्रतिभासअर्थात्प्रतीतिहैइसीकोभ्रम कहतेहैं । तिसभ्रमकानिमित्तमात्रहोनेकरअज्ञानकोकारणताश्रुतिकथन करतीहै । तिसमेंतात्पर्यकाअभावहोनेसेसिद्धांतकीहानिनहीं । अज्ञान कोभ्रमकीनिमित्तमात्रताश्रीसर्वज्ञात्म महामुनिजीनेभीकथनकीहै ।

❀ विषयकरणादोषान्नभ्रमः संविदिस्यादपतु
भवतिमोहात् केवलादेवमेव । भगवतिपर
मात्मन्यद्वितीये विचित्राद्वयमति रियमस्ति
भ्रांतिरज्ञानहेतुः ॥ सं० शा०अ०१। श्लो० ३०॥ ❀

अ०—जैसेस्वप्रकाशस्वरूपज्ञानमें वेद्यत्वकाभ्रमवादियोंकोविषय तथाकरणदोषसेनहींहोता ॥ किंतुकेवलअज्ञानरूपनिमित्तसेहीहोता है ॥ तैसेहीअद्वितीयस्वरूपभगवान्परमात्मदेवमें यहविचित्रनाना प्रकारकाद्वैतबुद्धिरूपभ्रमकेवलअज्ञाननिमित्तकहै ॥ इति ॥ शंका ॥ श्रुतिकोमुख्यउपादानताकेकथनसे उठाकरकिसलियेअज्ञानकीनिमित्तमात्रपरता कल्पनाकरतेहो॥ समाधान ॥ हेवादिअज्ञानकोतथाअस

दको कार्यपनानहींसंभवता ॥ यह अर्थ पूर्व निरूपण कर आए हैं ॥ याते कार्यके असंभवसे कार्यतानिरूपितकारणताभी नहींसंभवती ॥ किंवा ॥ व्यापारवालाही कारण होता है । तिसमें यह विचारणीय है । वह व्यापार क्या? अकार्य है । अथवा कार्य है । प्रथम पक्ष माने तो सदाही कार्य हुआ चाहिये । क्योंकि कारणमें सदा व्यापारके हुए कार्यसे वह कभीभी उपरत नहीं होगा । और द्वितीय पक्षमें अनवस्थादोष प्राप्त होता है । क्योंकि तिस व्यापारके उत्पन्न करनेके अर्थ अन्य व्यापार मानना होगा । ऐसे अन्य अन्य व्यापारके माननेसे अनवस्थादोष स्पष्ट ही है । इस प्रकार व्यापारको निरूपण न होनेकर भी कारण नहीं संभवता ॥ और कार्यकारणभावको कल्पित होनेकर प्रमाणकी अयोग्यता है । अर्थात् वह प्रमाण सिद्ध नहीं । और यदि कार्यकारणभावको प्रमाण सिद्ध मानोगे तो द्वैतापत्ति होगी । इस कारणसे कार्यकारणवाद वेदांतवादसे बहिर्भूत है । अथवा कार्यकारणभाव कथनसे आरंभवाद तथा परिणामवादकी प्राप्ति होती है । सो अनिष्ट है ॥ क्योंकि ब्रह्मको एक होनेसे आरंभवाद भी नहीं संभवता । और ब्रह्मको निरवयव होनेसे परिणामवाद भी नहीं संभवता । याते यह दोनों वाद वेदांतसे बहिर्भूत हैं । अर्थात् वेदांत सिद्धांतमें स्वीकार नहीं ॥ शंका ॥ यदि दोनों प्रकारका वाद वेदांत सिद्धांतमें स्वीकार नहीं तो वेदांत मतमें कौन वाद है ॥ समाधान ॥ हे वादिन् वेदांत मतमें विवर्तवाद ही स्वीकार है । तहां एक ही सत्त्वस्तुकी अपने वास्तवस्वरूपको न त्यागकर पूर्वरूपसे विपरीत असत् तथा अनेकरूपतासे जो प्रतीति है । तिसको विवर्त कहते हैं । याते इस विवर्तकानिमित्त मात्र अज्ञान है ॥ शंका ॥ अज्ञानको प्रपंचरूप कार्यका निमित्त मात्र कल्पना करनेसे (मायांतु प्रकृति विद्यात्) इस श्रुति

मेंकथनकियेहुए प्रकृतिशब्दकाविरोधहोगा। क्योंकिइसशब्दसेअज्ञान कोउपादानताप्रतीतहोतीहै। समाधान॥ हेवादिन्यहांमायारूपअज्ञान कोउपादानकहनेवालेश्रुतिवाक्यका अन्यहीअभिप्रायहै। तथाहि ॥ किसीनेप्रश्नकिया जगतकाकौनकारणहै। तबश्रुतिद्वाराआचार्यने उत्तरदिया किअज्ञानहीजगतकाकारणहै। यदिप्रश्नकेहुएउत्तरस्फुरण हो तिसकोअप्रतिभारूपनिग्रहस्थान नैयायिकोंनेकहाहै। तिसअप्रति भाकीनिवृत्तिमात्रही श्रुतिमेंकारणकथनका प्रयोजनहै अन्यप्रयोजन नहीं ॥ इति ॥ ३८ ॥

✽अथअज्ञानकीअसिद्धिकानिरूपण। पूर्वपक्ष।✽

हेसिद्धांतिन् यदिअज्ञाननिरूपणहोसके तोउसको उपादान कारणाताअथवा निमित्तकारणातासिद्धहो। परंतुवक्ष्यमाणयुक्तिसे तिस अज्ञानकानिरूपणहीनहींसंभवता। तथाहि ॥ यहअज्ञानकार्यहै। अथवा अकार्यहै। प्रथमपक्षकहो तोइसकाकौनकारणहै। अर्थयहक्या? अज्ञान कारणहै अथवाब्रह्मकारणहै। यहविचारणीयहै। प्रथमपक्षमेंतो आत्माश्रयदोषकीप्राप्तिहोगी। क्योंकिअज्ञानकोअपनीउत्पत्तिमेंइतर केव्यवधानरहितअपनीअपेक्षाहै। औरयदिअत्माश्रयदोषकेदूरकरने केअर्थ कार्यरूपअज्ञानसेभिन्न द्वितीयअज्ञानको कारणमानोंगे तोवह अज्ञानभीकार्यहीकहनाहोगा ॥ तिसको यदिअपनीउत्पत्तिकेअर्थ प्रथमअज्ञानकीअपेक्षामाने तोअन्योऽन्याश्रयदोषप्राप्तहोगा। और तिसदोषकेपरिहारकरनेकेलियेतृतीयअज्ञानऔरमानेंतोतिसकोभीकार्य हीकहनाहोगा। औरकारणरूपतासेप्रथमअज्ञानकीपुनःतिसकोअपेक्षा मानेहुए चक्रकादोषहोगा। औरतिसतृतीयकोचतुर्थकीअपेक्षामाने

हुए अनवस्थादोषप्राप्तहोगा॥ किंवा अनंत यज्ञानोंकीधारामानभीलें
यदिकोईज्ञान तिसअनंतअज्ञानधाराको विषयकरनेवालाउदयहो। सो
ऐसाज्ञानतोउदयहोतानहीं । क्योंकिप्रमाणकाअभावहै । याते
अज्ञानकाकारणअज्ञानहै । यहप्रथमपक्षअसंगतहै । औरब्रह्मअज्ञान
काकारणहै । यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिअन्योपाधि
उपहितहुआब्रह्म अज्ञानकाकारणहै।अथवाउपाधिरहितशुद्धहीकारण
है ॥ यहविचारकर्तव्यहै । इनमेंप्रथमपक्षतोनोंसंभवता । क्योंकि
अज्ञानसेप्रथमअज्ञानअथवा उसकाकार्यरूपउपाधिकातोअभावहै ।
औरअन्यकोईसत्यउपाधिभी निरूपणनहींहोसकता। क्योंकितिससत्य
उपाधिकेमाननेसे द्वैतापत्तिहोगी । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ।
क्योंकिशुद्धब्रह्मकोनिर्विकारहोनेसे कारणाताकाअभावहै । औरयदि
शुद्धब्रह्मकोकारणमानलें तोमुक्तपुरुषकोभी पुनःसंसारकीप्राप्तिहोगी।
क्योंकिसंसारकेहेतुभूतअज्ञानकीकारणसामग्रीरूपशुद्धब्रह्मकोविद्यमान
होनेकर तिसअज्ञानकी अवश्यउत्पत्तिहोगी ॥ यातेअज्ञानकोकार्य
रूपताकासंभवनहीं ॥ औरवहअज्ञानअनादिहै ॥ यदियहद्वितीय
पक्षमानोतोजैसेअनादिभावरूपब्रह्मकीनिवृत्तिनहींहोती। तैसेअनादि
भावरूपअज्ञानकीभीनिवृत्तिनहींहोगी॥ यहाँयहअनुमानभीजानना॥

❀ विमतमज्ञानं ननिवर्त्तते अनादित्वे सतिभाव
त्वात् ॥ ब्रह्मवत् ॥ ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजो अज्ञानहै वहनिवृत्तनहींहोता ॥
अनादिहुआभावरूपहोनेसे।जोअनादिभावहोताहै । सोसोनिवृत्त
नहींहोता ॥ जैसेब्रह्महै ॥ इति ॥ यहाँघटादिकोंमेंहेतुकाव्यभिचार

दूरकरनेकेलिये “अनादि” यहहेतुकाविशेषणकहाहै । औरप्रागभाव मेंव्यभिचारदूरकरनेकेलिये “भावत्व” यहविशेष्यदलकहाहै ॥शंका॥ हेवादिन् कल्पिततथाअकल्पितरूपताकर ब्रह्मऔरअज्ञानकीविलक्षणताहै ॥ यातेइसपूर्वउक्तअनुमानमें “अमिथ्यात्व” उपाधिहै । सो इसप्रकारहै ॥ जहांजहांअनिवृत्तित्वहै ॥ तहांतहांअमिथ्यात्वहै । जैसे ब्रह्ममेंहै ॥ यातेउपाधिसाध्यकेसाथव्यापकहै । औरजहांजहांअनादिभावत्वहै । तहांतहां अमिथ्यात्वनहीं जैसे अज्ञानमें है । यातेउपाधिसाधनकेसाथअव्यापकहै । इसप्रकार सोपाधिक हेत्वाभासहोनेसे पूर्वउक्तअनुमानदुष्टहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्अज्ञानकोकल्पितपनानहींसंभवता । क्योंकिकल्पितपनेकी सामग्रीकाअभावहै । तथाहि ॥ सादृश्यऔरपूर्वसंस्कारतथादोषयहतीनोंकल्पनाकीसामग्री है । सोअज्ञानकीकल्पनामेंतीनोंका अभावहै । क्योंकिअज्ञानकोयदि कल्पितकहेंगेतोआत्मामेंही कल्पितकहनाहोगा । यातेआत्मातिसका अधिष्ठानहै । औरआत्मातथाअज्ञानकासादृश्यभीसंभवतानहीं।क्योंकि आत्मानिरवयवहै॥ औरपूर्वसंस्कारऔरदोष यहदोनोंभीनहींसंभवते । क्योंकितिनदोनोंको अज्ञानपूर्वकहोनेकरअज्ञानसेपूर्वतिनकीअसिद्धि है।इसप्रकारअज्ञानकोकल्पितपनेके असंभवसेअमिथ्यात्वकोसाधनके साथव्यापकहोनेकर उपाधिरूपताकाअसंभवहै॥शंका॥हेवादिन्सादि अध्यासप्रथमनहोकरपुनःहोताहै । इसहेतुसेवहकार्यहै।तिसमेंसामग्री कीअपेक्षाअवश्यहोतीहै।परन्तुअज्ञानाध्यासतोआनादिहैतिसमेंसामग्रीकीकिंचित्भीअपेक्षानहीं॥ समाधान ॥हेसिद्धांतिन्अज्ञानाध्यास अनादिहै।यहकथननहींसंभवता।क्योंकिएकवाधकरहीअध्यस्तपनाऊहा

करनेयोग्यहै। और अज्ञानका बाधक कोई प्रतीत होता नहीं याते अज्ञानमें
 अध्यस्तपनेकी अस्तिद्धि है ॥ शंका ॥ हेवादिन् विद्यातिस अज्ञानका
 बाधक है । याते अध्यस्तपना तिसमे सिद्ध है ॥ समाधान ॥ हेमिद्धां
 तिन् क्या? विद्यासे निवृत्तिके योग्यको बाध्यत्व है। यथवा कल्पितहु अज्ञो
 विद्याकर निवृत्तिके योग्यहो तिसको बाध्यपना है। प्रथमपक्षकहो तो उत्तर
 ज्ञानसे निवृत्तिके योग्य जो पूर्वज्ञान है तिसमें भी बाध्यव्यवहारहु आचाहिये
 और उसमें बाध्यव्यवहार नहीं होता ॥ याते प्रथमपक्ष असंगत है ॥ और
 द्वितीयपक्षमें अन्योऽन्याश्रयदोषकी प्राप्ति है । क्योंकि अज्ञानमें प्रथम
 कल्पतत्वकी सिद्धि हो तो ज्ञान बाध्यत्व तिसमें सिद्ध हो ॥ यौज्ञान बाध्य
 त्वप्रथम अज्ञानमें सिद्ध हो तो कल्पितत्वकी तिसमें सिद्धि हो इस प्रकार अपनी
 सिद्धिमें परस्पर अपेक्षा होनेसे अन्योऽन्याश्रयदोष है ॥ शंका ॥ हेवादिन् यह
 पूर्वउक्तदोष क्या? अज्ञानके स्वरूपकालोप करते हैं। यथवा अज्ञानमें वस्तुत्व
 कालोप करते हैं । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि “अज्ञोहम्” इस
 प्रतीतिसे सिद्ध जो अज्ञानका स्वरूप तिसका “अपलाप” अर्थात् लोप
 युक्त नहीं ॥ और द्वितीयपक्षमें तो हमारे ही इष्टकी सिद्धि है ॥ क्योंकि यह
 दोष वस्तुके वास्तवपनेको दूर करते हैं। और अज्ञानमें तो स्वभावसे ही वस्तु
 पना नहीं । याते कल्पितको दोष और क्या करेंगे। इसी कारणसे यह कह्यन
 है ॥ क्रियुक्ति तथा प्रमाणसे जो अज्ञानकी दुर्घटता है यह हमको भ्रूपणरूप
 है ॥ क्योंकि क्रियुक्ति तथा प्रमाणसे जिसकानिरूपण सुघट हो तिसमें कल्पित
 पना ही दुर्घट है । याते पूर्वउक्तदोष भी तिस अज्ञानमें कल्पितपनेको ही
 संपादन करते हैं ॥ वह हमको इष्ट है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन्
 अज्ञानमें कल्पितपना असिद्ध है । याते तिसमें इष्टापति कैसे कहते हो ॥

यद्यपि पूर्व उक्त दोष ही अविद्यामें कल्पितपनासिद्ध कर देंगे ॥ तथापि प्रथम अज्ञानरूपधर्मी सिद्ध हो तो दोष तिसमें कल्पितत्वधर्मको सिद्ध करें परन्तु वह अज्ञानरूपधर्मी तो अवपर्य्यत भी सिद्ध नहीं हुआ ॥ और यदि “अज्ञो हम्” इस प्रतीतिसे अज्ञानकी सिद्धि मानो तो यह भी नहीं संभवती। क्योंकि यह प्रतीति ज्ञानाऽभावको विषय करती है । यत्ने अज्ञानरूपधर्मी को सिद्ध होनेकर तिसमें कल्पितत्वको दोष कैसे संपादन करेंगे किंतु नहीं कर सकते ॥ शंका ॥ हेवादिन् अज्ञानकी जो अ सिद्धि तुमने कथनकी तिस अ सिद्धि शब्दके अर्थका ज्ञान अपने प्रतियोगिरूप सिद्धिके ज्ञानके अधीन है। क्योंकि अभावज्ञान प्रतियोगिज्ञान पूर्वक ही होता है ॥ इस कारणसे सिद्धि शब्दका अर्थ विचारणीय है ॥ तथाहि क्या? उत्पत्तिकानाम सिद्धि है प्रथम अथवा ज्ञप्ति अर्थात् ज्ञानकानाम सिद्धि है। इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि अनादिकी उत्पत्तिका अभाव अंगीकार है ॥ और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि साक्षीकर अज्ञानकी सिद्धि होनेसे तिसकी अ सिद्धिका ही अभाव है ॥ यहां पर यह अर्थ ज्ञातव्य है। “अहमज्ञः” यह प्रतीतिवादी तथा प्रतिवादीको स्वीकार है। वह प्रतीति क्या? अज्ञानकी स्वप्रकाशतासे है। अथवा अनुमानादिकोंसे है वा प्रत्यक्षसे है। प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि अज्ञानको जड स्वभाव होनेसे स्वप्रकाशताका अभाव है । और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि लिंगादिकोंके स्मरणसे विना ही इस प्रतीति को उत्पन्न होनेकर अनुमानादिकोंका अभाव है ॥ और तृतीय पक्षमें यह विचार कर्तव्य है । क्या? वाह्यनेत्रादिक इन्द्रिय तिस प्रतीतिके उत्पादक हैं । अथवा मन तिसका उत्पादक है । इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि वाह्य इन्द्रियोंकी अन्तरप्रवृत्ति नहीं हो सकती । और द्वितीय

पक्षभी असंगत है ॥ क्योंकिकेवल अज्ञानमात्रही तिसप्रतीतिमें स्फुरण नहीं होता किंतु अहमाच्छिन्न अज्ञानका स्फुरण होता है। तहां "अहं" यह जो अज्ञानका विशेषण है। सो क्या? शुद्धात्मा है। अथवा अहंकारविशिष्ट आत्मा है। अथवा अहंकार उपहित आत्मा है। इनमें प्रथम पक्ष नहीं संभवता। क्योंकि तिस शुद्धात्माको स्वप्रकाश होनेकर मनकी विषयताका अभाव है। और द्वितीय पक्ष भी असंगत है। क्योंकि "विशिष्टवृत्तिधर्मको विशेषणमें वर्तनेकानियम है" इसन्यायसे अहंकाररूपमनविविष्ट आत्मा में मनकी विषयता माने हुए आत्मा श्रयदोष प्राप्त होगा। क्योंकि स्वविषयतामें स्वकी अपेक्षा है। और मनको मनका विषय माने हुए अतीन्द्रियत्वकी भी तिसमें क्षति होगी। और तृतीय पक्षमें अहंकारका स्फुरण तिस प्रतीतिमें नहीं संभवेगा। क्योंकि उपाधिको तटस्थ होनेकर विषयकोटिमें तिसका प्रवेश नहीं। और विषयकोटिमें अप्रविष्ट हुएको भी यदि ज्ञानकी विषयता माने तो विज्ञानवादीके मतकी प्राप्ति होगी। क्योंकि वह निर्विषय ज्ञान मानता है। और सुषुप्ति अवस्थामें मनके विलय हुए भी अज्ञानकी प्रतीति होती है। इस कारणसे भी अज्ञानकी प्रतीतिमें मनको करणता नहीं संभवती। तिस कारणसे परिशेषसे साक्षिभास्य ही अज्ञान है। इस प्रकार अज्ञानरूपधर्मीकी सिद्धि होनेसे तिसकी असिद्धि ही असिद्ध है। समाधान ॥ हे सिद्धांत अज्ञानकी सिद्धि साक्षीसे नहीं संभवती ॥ तथाहि ॥ साक्षी स्वसंबद्धको प्रकाश करता है। अथवा स्वसंबद्धको भी प्रकाश करता है ॥ यह विचार कर्तव्य है। तहां प्रथम पक्षमें तो सिद्धांतकी हानि होगी। क्योंकि अज्ञानकी सिद्धि साक्षीके आधीन माननेसे साक्षीके साथ तिसका संबंध कटना होगा। तिससे असंगतताकी हानि होनेसे

अपसिद्धांतप्राप्तहोगा ॥ और—

❀ असंगोनाहिसज्जते । (वृ० उ० अ० (६ ब्रा०(२) कं ४)

अ० ॥ जिसकारणसे आत्माअसंगहे । इसीसेकिसीपदार्थके साथसंबंधवालानहींहोता । इसश्रुतिकाविरोधभी प्राप्तहोगा । और द्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकिसंबंधसेविना प्रकाशकता काअसंभव है । औरप्रदीपादि स्वसंबंधकेही प्रकाशकदेखे हैं ॥ इससेभी असंगकोप्रकाशकतानहींसंभवती ॥शंका॥ हेवादिन्अज्ञान केसाथजोसाक्षीकासंबंध अन्वेषणकियाजाताहै।सोक्या?वास्तवसंबंध है। अथवाकल्पितसंबंधहै॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकिवास्तव यहजोसंबंधकाविशेषण सोअसमर्थहै अर्थात्व्यर्थहै ॥ जैसेकल्पित सर्पकोदीपकनहींप्रकाशकरता औरदीपकका तिससर्पकेसाथ वास्तव संबंधभीनहींसंभवता। तैसेदार्ष्टान्तमेंभीजानना ॥ औरयदिसंबंधमात्र हीअपेक्षितहो।तोवास्तवसंबंधकेअभावहुएभीकल्पितसंबंधसाक्षी और अज्ञानकाविद्यमानहीहै ॥ यातेद्वितीयपक्षमें हमकोभीइष्टापत्तिहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् साक्षीऔरअज्ञानका कल्पितसंबंधभीनहीं संभवता ॥ क्योंकिसंबंधकल्पनासादिहै। अथवाअनादिहै। यहविचार कर्तव्यहै।प्रथमपक्षमेंसंबंधकाकल्पककौनहै। यहविचारपुनःकर्तव्यहै । क्या?संबंधऔरसंबंधियोंसेभिन्नकोईकल्पकहै। अथवासंबंधादि कहीकल्पक हैंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता॥क्योंकिसंयोगसंबंधमेंसंबंधियोंसेभिन्नपदार्थ मेंसंबंधकीउपादानतादेखनेमेंनहींआती॥ औरद्वितीयपक्षमेंयहविचार गीयहै।क्या?संबंधआपहीअपनाकल्पकहै। अथवादोनोंसंबंधी तिसके कल्पकहैं।प्रथमपक्षमेंतोआत्माअयदोपस्पष्टहीहैऔरद्वितीयपक्षमेंदोनों

संबंधियोंकेमध्यक्या? अज्ञानकल्पकहै। अथवासाक्षीकल्पकहै॥ प्रथमपक्ष तोनहींसंभवताक्योंकिअन्योऽन्याश्रयदोपप्राप्तहोताहै॥ तथाहि॥ अज्ञान स्वरूपलाभकोप्राप्तहोकरही संबंधकोउत्पन्नकरेगा॥ औरसंबंधकेउत्पन्न हुएअज्ञानलब्धसत्ताकअर्थात्स्वरूपकेलाभवालाहोगा॥ इसप्रकारदोनों कोपरस्परअपेक्षाहोनेसे अन्योऽन्याश्रयदोपहै ॥ औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकि ॥

उपयन्नपयन्धर्मोविकरोतिहिधर्मिणाम्

अ०—उत्पत्तितथाविनाशकोप्राप्तहोताहुआधर्मअपनेधर्मोकोविकारी करदेताहै॥ इसन्यायसेउत्पत्तितथाविनाशकोप्राप्तहोताहुआसोसंबंधस्व धर्मोसाक्षीकेकूटस्थपनेकीहानिकरेगा ॥ यातेसाक्षीसंबंधकाकल्पक नहीं॥ औरयदिइसदोपकेदूरकरनेकेलियेउपाधियुक्तहुआसाक्षीअज्ञान केसंबंधकाकल्पकहै तोअसंगताकीहानिहोगी॥ क्योंकिअज्ञानसाक्षी केसाथसंबंधसेबिनास्वरूपकोनहींप्राप्तहोता औरस्वरूपलाभसेबिनावह अज्ञानउपाधिको कैसेउत्पन्नकरेगा । किंतुनहींउत्पन्नकरसकता-॥ इसकारणसेजिसउपाधिउपहितहुआसाक्षीअज्ञानकेसंबंधकाकल्पकहै वहउपाधिपारमार्थिकहीकहनाहोगा॥ तिसकेसाथसाक्षीकासंबंधहुए असंगताकीहानिअवश्यहोगी औरअनिर्मोक्षप्रसंग अर्थात्किसीको भीमोक्षनहींप्राप्तहोगा॥ क्योंकितत्त्वसाक्षात्कारसे अज्ञानतत्कार्यका ही विरोधहोनेसे नाश होताहै। अन्य पदार्थका नाशनहींहोता॥ तैसेमानेहुए जिसउपाधिकरउपहितसाक्षीहै वहसत्यहै। तिसउपाधिको पूर्वउत्तरीतिसेपारमार्थिकहोनेकर तिसकी निवृत्तिनहींहोगी। यातेज्ञान कालमेंभीतादृश अज्ञानकेसंबंधकाहेतु उपाधिकेसद्भावसे संसारका

उच्छेदकभी नहींहोगा ॥ इसप्रकार अनिर्मोक्षप्रसंगहोनेसे मोक्ष शास्त्रभीनिष्फलहोगा ॥ औरयदिआत्माश्रयादिदोष दूरकरनेकेलिये अज्ञानकेसंबंधका अध्यासअनादिहै यहआद्यद्वितीयपक्ष स्वीकारकरो तोआत्माकीन्याई अनादिभावरूप होनेकर तिससंबंधकी निवृत्तिनहीं होगी । यहांयहअनुमानजानना ॥

❀ विमतोऽज्ञान संबन्धो न निवर्तते ।

अनादिभावत्वात् । आत्मवत् ॥ ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजो अज्ञानकासंबंधहै । वहनिवृत्तनहीं होता । अनादिभावरूपहोनेसे ॥ जोजोअनादिभावहोताहै । सोसो निवृत्तनहींहोता । जैसेआत्माहै । इति ॥ शंका ॥ हेवादिन्निवृत्त्या भावमेंअनादिभावत्व प्रयोजकनहीं । किंतुअविद्याकीतंत्रताकाजो अनधिकरणत्व सोनिवृत्त्याभावमें प्रयोजकहै ॥ औरसंबंधकोतो अविद्याकेआधीनहोनेसे अविद्याकी निवृत्तिहुए तिसकी निवृत्तिहो जाएगी । यातेपूर्वउक्तअनुमानमें “अविद्यातंत्रत्वाऽनधिकरणत्व” उपाधिहै । सोइसप्रकारहै ॥ जहांजहांनिवृत्त्याभावहै । तहांतहां “अविद्यातंत्रत्वानधिकरणत्व” है । जैसेआत्मामें है । औरजहांजहां अनादिभावत्वहै । तहांतहां अविद्यातंत्रत्वानधिकरणत्वकाअभावहै ॥ जैसेसंबंधमें है । यातेसोपाधिकहेतुहोनेसे अनुमानदुष्टहै । इसप्रकार संबन्धाऽध्यासको अविद्याऽध्यासकीन्याई अनादिभावत्वके मानहुए भीअविद्याकेआधीनहोनेकर अविद्याकीनिवृत्तिसे तिसकीनिवृत्ति संभवतीहै ॥ समाधान ॥ उपाधिकोसाधनकेसाथ व्यापकहोनेसे पूर्वउक्तअनुमानदुष्टनहीं ॥ तर्थाहं यह “अविद्यातंत्रत्व” अर्थात्

अविद्याऽधीनत्वक्याहै । अर्थयह । क्या? अज्ञानजन्यत्वकानाम
 “अज्ञान तंत्रत्व” है । अथवा अज्ञानभास्यत्वरूप तंत्रतासंबंधमें है
 अथवा - अज्ञानके आधीनस्थितिवत्तारूप तंत्रता है । इनमें
 प्रथमपक्षनहींसंभवता। क्योंकिसंबंधकोअनादिहोनेसे स्वउत्पत्तिअर्थ
 अज्ञानकीअपेक्षानहीं ॥ औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकि
 सम्बन्धकाज्ञानसाक्षीकेआधीनहै । औरअज्ञानकोजड़होनेसे संबंधकी
 प्रकाशकताकाअसम्भवहै । यदियहकहो कि संबंधीके ज्ञानकेआधीन
 संबंधकाज्ञान लोकमेंदेखाहै । यातेसम्बन्धकाविशेषणरूप जोसंबंधी
 तिसकोभीसंबंधज्ञानकी हेतुताहोनेसे संबंधमेंअज्ञानतंत्रताकासंभवहै।
 सोयहकथनभीसमीचीननहीं । क्योंकिप्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धलौकिक
 संबंधका संबंधीकेआधीनज्ञानहुएभी अज्ञानतथासाक्षीके संबंधमें
 उससे विलक्षणताहै । जिसकारणसे साक्षीके संबंधके आधीन
 अज्ञानरूपसंबंधीकीस्फूर्ति है ॥ यातेपूर्वउक्ततंत्रतानहींसंभवती ॥
 औरसंबंध अपनीस्थितिकेअर्थ संबंधीकी अपेक्षा करता है ॥
 यहतृतीयपक्षभीनहीं संभवता ॥ तथाहि ॥ क्या? वहसंबंधस्वरूपलाभसे
 विनाहीस्थितिमात्रकेअर्थसंबंधीकीअपेक्षाकरताहै। अथवास्वरूपलाभ
 युक्तहुआसंबंधीकीअपेक्षाकरताहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकि
 लब्धसत्ताकपदार्थही स्थितिकीअपेक्षावालाहोताहै । निःस्वरूपको
 स्थितिकीअपेक्षाहीनहीं ॥ औरद्वितीयपक्षमेंभीयहविचारकर्तव्यहै
 संबंधकोस्वरूपकालाभकिसीकारणसेहै। अथवाकारण विनाहीस्वरूप
 कालाभहै? ॥ प्रथमपक्षमानो तोअनादित्वकीहानिहोगी । औरयदि
 द्वितीयपक्षकहो। तोकारणकीअपेक्षाकाअभावहुएस्थितिकेअर्थभीतिस

कोइतरपदार्थकीअपेक्षानहींहोगी ॥ जैसेस्वतःलब्धसत्ताकयात्माको
 स्वस्थितिकेअर्थ इतरकीअपेक्षानहींहोती ॥ इसप्रकारसंबंधकोअज्ञान
 कीआधीनतानहोनेसे पूर्वउक्तउपाधिसाधनकेसाथ अव्यापकनहीं ॥
 किंतुव्यापकहै । यातेपूर्वकथनकियाअनुमाननिर्दोषहै ॥ शंका ॥
 हेवादिन् अज्ञाननामज्ञानकेप्रागभावकाहै।औरवहज्ञानकीअनुपलब्धि
 सेग्रहणहोताहै।तिसकीअसिद्धितुमकैसेकहतेहो ॥ समाधान ॥ यह
 तुम्हाराकथनभीअसमीचीनहै।क्योंकिग्रहणशब्दसेवृत्तिज्ञानका ग्रहण
 है।अथवास्वरूपचेतनकाग्रहणहै। प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकि
 वृत्तिकोजडहोनेकर मुख्यज्ञानरूपताकीअनुपपत्तिहै ॥ औरद्वितीयपक्ष
 भीनहींसंभवता ॥ क्योंकिनित्यउपलंभ अर्थात्ज्ञानस्वरूपआत्माकी
 अनुपलब्धिनहींसंभवती ॥ औरभावरूपजगतका उपादानजोअज्ञान
 तुममानतेहो तिसकोअभावरूपताकीभी अनुपपत्तिहै ॥ यातेपूर्वउक्त
 प्रकारसेअज्ञानहीनहींहै तोतिसकोजगतकीकारणता तुमकैसेकथन
 करतेहो ॥ इतिपूर्वपक्ष ॥



❀अथसिद्धांताअज्ञानकीसिद्धिकाप्रकारनिरूपणा❀

मृ० प्रश्नस्यज्ञानपूर्वत्वादाक्षेपेप्रतियोगिधीः।

अवश्यंभाविनीपूर्वाविरोधःस्यादितोन्यथा।३६।

चौबोलाखंड ॥ ज्ञानपूर्वकंप्रश्नपठ्यानोयाक्षेपेप्रतियोगिधी ॥

अवश्यंहोतीइससेअन्यथाहोतविरोधलखोसोजी।३६॥

टी०॥हेवादिन् जोप्रश्नहोताहैवहज्ञानपूर्वकहीहोताहै। औरनिपे
 धमेंभीप्रतियोगीकाज्ञानअवश्यपूर्वहोताहै।यातेअज्ञानकेस्वरूपविषयक

प्रश्नतथातिसकेनिपेधसे “अन्यथा” कहियेस्वरूपविषयकप्रमाण काप्रश्नकियेदुएविरोधप्राप्तहोगा। अर्थयहअज्ञानकोप्रमाणकरनिवृत्तिके योग्यहोनेसेतिसमें प्रमाणकाप्रश्नविरुद्धहै ॥ अबइसीअर्थकोविस्तार पूर्वकनिरूपणकरतेहैं। अज्ञानअंगीकारकरनेवालोंकेप्रति जोपूर्वपक्षी नेयहकथनकियाहै। किअज्ञानकीसिद्धिकैसेहोसकतीहै । ऐसेकथन करनेवालेवादीसे हमयहपूछतेहैं। या?यहतुम्हाराप्रश्नअज्ञानकेस्वरूप विषयकहै । अथवातिसकेस्वरूपकानिपेधहै ॥ अथवातिसकेस्वरूप बोधकप्रमाणविषयक प्रश्नहै ॥ प्रथमपक्षकहो तोनहींसंभवता ॥ क्योंकिअज्ञातस्वरूपविषयक प्रश्नकीअनुपपत्तिहै॥ अर्थयहप्रश्नवाणी काएकविशेषव्यवहारहै। औरवहव्यवहारव्यवहर्तव्यवस्तुकेज्ञानकेआधीन है औरयहांप्रकरणमें कथनात्मकव्यवहारकेयोग्य अज्ञानकास्वरूपहै॥ तिसकाज्ञानप्रश्नकर्ताकोप्रथम अवश्यहोनाचाहियेइसलियेअज्ञानका स्वरूपतुम्हको प्रथमहीसिद्धहै ॥ यातेअज्ञानकेस्वरूपकी सिद्धिअर्थ प्रश्नकरनाव्यर्थहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् यदियहप्रश्नअज्ञानके सामान्यस्वरूपकीजिज्ञासासेहोता। तोयहउपालंभआपकाहोता। परन्तु ऐसेतोनों। किंतुअज्ञानकेविशेषस्वरूपकीजिज्ञासासे प्रश्नसंभवताहै॥ समाधान॥ हेवादिन् इसकथनसेभी पूर्वउक्तदोषहीप्राप्तहोताहै। अर्थयह किप्रश्नव्यर्थ है। क्योंकिअज्ञानकेस्वरूपकीसिद्धिही अन्वेषणकीजाती है वहयदिसामान्यरूपतासेसिद्धहै। तोपुनःविशेषज्ञानकाक्याप्रयोजन है। किंतुकोईप्रयोजननहीं। अथवासामान्यप्रतीतिविशेषप्रतीतिसेविना पर्यवसानताकोनप्राप्तहुईविशेषकोभी वहबोधनकरदेतीहै ॥ याते विशेषस्वरूपकीजिज्ञासासेभी प्रश्नकरनानिष्फलहै॥ औरद्वितीयपक्ष

भीनहींसंभवता ॥ क्योंकिअज्ञानकाअभाव बोधनकरनेका नामही
 आक्षेपहै।औरवहअभावशब्दसेही बोधनकरनेयोग्यहै। औरशब्दका
 उच्चारणभी ज्ञानपूर्वकहीहोताहै।औरअभावकाज्ञानभीप्रतियोगिज्ञान
 केआधीनहीहोताहै ॥ इसप्रकारअज्ञानकास्वरूपनिषेधकरनेवालेवादी
 केप्रति प्रतियोगिरूपअज्ञानकीसिद्धिप्राप्तहुई तिसकालोपकरनावारी
 कोउचितनहीं ॥ शंका ॥ जोवस्तुप्रमाणसिद्धहो तिसकानिषेधकरना
 योग्यनहीं परन्तुअज्ञान तोभ्रमसिद्धहै। यातेवहकैसेनिषेधकरनेयोग्य
 नहीं किंतुनिषेधकेयोग्यहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् जोभ्रमज्ञानहोता
 है वहकरणतथाविषयकेआधीनहोताहै। यातेअज्ञानकेभ्रममेंवहदोनों
 तुमनेकहेचाहिये ॥ अबसिद्धांतीआपहीवादीकोसंमतिदेताहै ॥
 जिसकारणसेजवकोईऐसेपूछेकिससाधनकरभ्रमहुआऔरकिसविषयक
 भ्रमहुआ तबयहीउत्तरकहनेयोग्यहै। परोक्तशब्दाभासकरभ्रमहुआ
 औरअज्ञानविषयकहुआ।यातेशब्दाभासही भ्रममेंकरणहै। औरअज्ञान
 तिसभ्रमकाविषयहै। यहांशब्दमें आभासत्वद्योतनकरनेकेलियेपरोक्त
 यहशब्दकाविशेषणकहाहै ॥ इसप्रकारसिद्धांती आपहीवादीकेप्रति
 ऐसीसंमतिदेकर अथतिसकोदूषितकरताहै ॥ हेवादिन् जबऐसेमाना
 तोभ्रमकोस्वसमानविषयकअज्ञानका उपपादकहोनेसे अज्ञानविषयक
 और अज्ञानस्वीकारकरनेकर अनवस्थादोषका परिहारकरना कठिन
 होगा।।अर्थयहहै।किअज्ञानकेभ्रममेंकोईउपादानकहाचाहिये सोक्या?
 अज्ञानउपादानहै ॥ अथवा कोईअन्य पदार्थहै ॥ अन्त्य पक्ष तो
 नहींसंभवता ॥ क्योंकि अज्ञानकोही उपादानता स्वीकार है ॥
 औरप्रथमपक्षमें वहअज्ञानकौनहै।क्या?निरूपणीयरूपताकर प्रकरण

में जो प्राप्त है वही अज्ञान है। अथवा उससे भिन्न है ॥ प्रथम मपक्ष में तो आत्मा श्रयदोष स्पष्ट ही है। क्योंकि अज्ञानको अपने भ्रम में अपनी अपेक्षा है। और द्वितीय पक्ष में अन्योन्याश्रयचक्रका अनवस्थादि दोषोंका समूह प्राप्त होता है। और यदि अनेक अज्ञानोंकी धारा स्वीकार करो तो यह अत्यंत आश्चर्य है जो तुम एक अज्ञानको न सहन कर तिसके निषेधका प्रयोग करते थे अब अनेक अज्ञान धाराको स्वीकार करनेसे मदसे उन्मत्त हुए तुम्हको स्वपक्षकी हानि और गौरवदोष तथा व्यर्थतादि अनेक दोष प्रतीत नहीं होते। याते स्वपक्षका निर्वाह भी दूर हुआ। अर्थ यह जव अज्ञान तुमने मान लिया तो स्वमतकी हानि हुई क्योंकि तुम अज्ञानका निषेध करते हो। और एक अज्ञानसे ही स्वाकार तथा अन्याकार भ्रमके सिद्ध हुए अनेक अज्ञान माननेमें गौरव है। किंवा अज्ञानको जडस्वरूप होनेकर स्वभावसे ही वह आवृत्तस्वरूप है। तिसमें आवरणके प्रयोजनका भाव होनेसे अज्ञान विषयक और अज्ञान स्वीकार करना व्यर्थ है। और ऐसे भी अज्ञान धारा मान लें यदि अज्ञान परंपराको ग्रहण करनेवाला कोई ज्ञान उदय हो सो ऐसा ज्ञान तो कोई उदय नहीं होता याते प्रमाणाभावसे अज्ञान परम्पराकी सिद्धि भी नहीं हो सकती ॥ शंका ॥ किसी विषयमें आपको भी प्रश्न तथा आक्षेपके विद्यमान होनेसे पूर्व उक्त प्रश्न आपके प्रति भी तुल्य ही है। क्योंकि—

यत्रोभयोः समो दोषः परिहारोपितत्समः ।

नैकस्तत्रनियोक्तव्यं स्तादृगर्थविचारणो ॥ १ ॥

अ० ॥ जहां दोनोंपक्षोंमें समान दोष हो तहां तिसका परिहार भी दोनोंपक्षोंमें समान ही होता है। तैसे अर्थके विचार करनेमें एक ही वादी वा

प्रतिवादीतहांपर्यनुयोगकाविषयनहींहोता।किंतुदोनोसमानहीतिसका
 विषयहोतेहैं(१)इसन्यायसे किसीविषयमेंआपभीइसीप्रश्नकाविषयहो॥
 समाधान॥ हेवादिन्हमारेपक्षमेंपरिहारकीतुल्यतानहीं॥क्योंकिअज्ञात
 रूपताकरसाक्षिसिद्धअज्ञानकीनिवृत्ति अर्थप्रमाणकाप्रश्नसुखेनहीसंभ
 वताहै।औरअज्ञानमेंप्रमाणकेनदेखनेसेस्वरूपकातिस्काररूपनिषेधभी
 करनेकोसुखेनहीहै ॥ अत्रपरिहारकी समानताग्रहणकरकेवादीतृतीय
 पक्षकोउठाताहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् तोसाक्षिसिद्धअज्ञानके
 वरूपविषयकमेराभी प्रमाणकाप्रश्नसमीचीनहै ॥ समाधान ॥
 हेवादिन् पूर्वउत्तरीतिसे अज्ञानकोसाक्षिसिद्धमानेहुए अज्ञानतथा
 साक्षीकासंबंधभीकहनायोग्यहै।क्योंकिसंबंधसेविनासाक्षीकोअज्ञान
 कीसाधकतानहींसंभवेगी।तैसेअज्ञानतथासाक्षीके संबंधकोअनादि
 त्वभीकहनाचाहिये।नहींतोपूर्वमुक्तहुएपुरुषोंको पुनःसंसारकीप्रती
 तिहोगी।तात्पर्ययहहै ॥ साक्षीतथा अज्ञानके संबंधकोसादि
 मानेहुए तिसकाआदिकारण क्या?आत्माहै।अथवाअज्ञानहै।प्रथम
 पक्षतोनहींसंभवता।क्योंकिमुक्तपुरुषोंकोपुनः संसारप्राप्तहोगा ॥
 जिसकारणसे मुक्तिकालमेंभी संबंधकाकारणआत्माविद्यमानहै ॥
 सामग्रीकेहुए कार्यअवश्यहोताहै॥औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥
 क्योंकिवहसंबंधकाकारणरूपअज्ञानक्या?संबंधिरूपहै।अथवाअसंबंधि
 रूपहै यहविचारकर्तव्यहै ॥ इनमेंअंत्यपक्षतोनहींसंभवता ॥क्योंकि
 स्वतंत्रअज्ञानस्वीकारनहींहै ॥औरसाक्षीकेसाथसंबंधवालाअज्ञान
 कारणहै यहप्रथमपक्षभीनहींसंभवता ॥क्योंकिसंबंधतोअवपर्यंतभी
 सिद्धनहींहुआ ॥औरस्यदितुपेसेकहो किप्रथमअज्ञानसेयहअज्ञान

भिन्न है ॥ तो इसमें भी यह विचार करने योग्य है ॥ क्या? वह अज्ञानांतरभी साक्षीके साथ संबंधवाला है वानहीं। अन्त्यपक्षमें तो अज्ञानको स्वतंत्रता प्राप्त होगी। सोस्वीकार नहीं। और प्रथमपक्षमें अनवस्थादोषकी प्राप्ति होगी तथाहि ॥ द्वितीय अज्ञानका साक्षीके साथ जो संबंध है। तिसका उसी अज्ञानको यदि कारण माने तो आत्माश्रयदोष होता है। और प्रथम अज्ञानको द्वितीय अज्ञानके संबंधका कारण माननेमें अन्योऽन्याश्रयदोष है ॥ और तृतीय अज्ञानको द्वितीय अज्ञानके संबंधका कारण माननेसे चक्रका दोष होता है ॥ और चतुर्थ अज्ञानको संबंधका कारण माननेसे अनवस्थादोषकी प्राप्ति स्पष्ट ही है ॥ शंका ॥ यह अनवस्थादोषके अर्थ नहीं ॥ क्योंकि अज्ञानपरम्परा अनादि है ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अज्ञानोंकी परम्परालुप्तकिसलिये मानते हो। यदि आवरणके अर्थ कहो तो वह एक अज्ञानसे ही संभव हो सकता है ॥ अन्त अज्ञानोंकी धारा माननी निष्फल है। और यदि आत्माके साथ अज्ञानका संबंध सिद्ध करनेके अर्थ अज्ञानोंकी धारा मानो तो अपने कर ही अपना संबंध सिद्ध हो जायेगा ॥ जैसे “रूपीघटः” इसप्रतीतिमें गुणगुणीका समवाय भासता है ॥ और समवायका भी अपने संबंधियोंमें संबंध भासता है ॥ वहां अपने संबंधियोंके साथ स्वसंबंधका उपपादक आप ही वह समवाय है ॥ अपनेसे भिन्न स्वतथा घटके संबंधका उपपादक कोई अन्य समवाय नहीं माना ॥ क्योंकि अनेक समवाय माननेमें गौरव है। तैसे अज्ञान तथा साक्षीके संबंधका उपपादक लाघवतासे एक ही अज्ञानस्वीकार करना युक्त है। अनेक अज्ञानोंकी परम्परा माननेमें गौरव दोष है। याते जिस धर्मसे विना जो नही संभवता तिस सर्वका आप ही अज्ञानकल्पक है। तथाहि ॥ साक्षीके साथ स्वसंबंधका तथा

अनादित्वकाकल्पकहै । औरअज्ञानकोसत्मानेहुए द्वैतकीप्राप्ति होगी । औरअसत्मानेहुए “अज्ञोहम्” यहतिसकीअपरोक्षप्रतीति नहींहोगी । यातेसत्असत्सेविलक्षणअनिर्वचनीयत्वकाभीअपने विषयककल्पकहै । औरअज्ञानकोअभावरूपमानेहुए प्रपंचकीउपादानतानहींसंभवेगी। क्योंकियदिअभावकोभी उपादानतामानें तोकार्य मेंसत्बुद्धिनहींहोगी ॥ और“सन्घटःसन्पटः” ऐसेकार्यमेंभावरूपता प्रतीतहोतीहै।यातेउपादानताकीसिद्धिअर्थअपनेमेंभावरूपकाभीकल्पक है॥औरएकपदार्थमें विचित्रकार्यकेउत्पन्नकरनेकीसामर्थ्यकेअसंभवसे अपनेमें विचित्रशक्तिरूपकाभीकल्पकहै ॥ “औरधर्मीकेभेदकल्पनासे धर्मकल्पनाश्रेष्ठहै । इसन्यायसेस्वविषयक एकत्वकाभी कल्पकहै ॥ औरअनादिहोनेपरमीतिसकीनिवृत्तिअर्थ ज्ञानकर निवृत्तियोग्यत्वका भीस्वमेंकल्पकहै । इसप्रकारपूर्वपक्षीद्वारा अज्ञानऔरतिसकास्वरूप कथनकरके अबसिद्धांती अज्ञानकेसाधकप्रमाणविषयक जोवादीका प्रश्नपक्षथा तिसकोनिरासकरताहै । हेवादिन् यदिपूर्वउक्तअज्ञानका स्वरूपसाक्षीकरसिद्धहुया तोपुनःप्रमाणतिसमेंक्याकरेगा । क्योंकि सिद्धपदार्थमेंसाधनकी व्यर्थताहोतीहै । यातेअज्ञानकेस्वरूपविषयक प्रमाणप्रश्नव्यर्थहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् अज्ञानकास्वरूपसिद्ध करनेकेलियेहमप्रमाणकाप्रश्नहींकरते।किंतुअज्ञानविषयकअज्ञानकी निवृत्तिअर्थप्रमाणकाप्रश्नहै ॥ औरअज्ञानविषयक अज्ञानकीनिवृत्ति साक्षीसेकहो तोनहींसंभवती ॥ क्योंकिसाक्षीको तिसअज्ञानका साधकमानाहै । यातेप्रमाणप्रश्नसंभवताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यदिअज्ञानविषयकअज्ञानहो तोतिसकीनिवृत्तिकेलिये प्रमाणकाप्रश्न

भीसंभवे परंतु अज्ञानविषयक अथवा अज्ञानका अभाव है। अज्ञानको जड़ होनेसे स्वभावसे ही आवृत्त एक रूप है ॥ तिसमें द्वितीय अज्ञानका स्वीकार स्वयं है ॥ शंका ॥ जैसे लोकदृष्टिसे जड़घटमें भी प्रमाणा की प्रवृत्ति होती है ॥ तैसे अज्ञानमें भी प्रमाणा प्रवृत्त हो जायेगा ॥ समाधान ॥ हेवादि न्यटकी प्रमाणासे निवृत्ति नहीं होती ॥ इसकारणसे प्रमाणाकर तिसका ज्ञान लोकदृष्टिसे हो। क्योंकि तिनका विरोध नहीं ॥ और अज्ञान का तो प्रमाणाके साथ निवृत्त्यनिवर्त्तक लक्षण विरोध है। इसलिये प्रमाणा की विषयता अज्ञानमें युक्त नहीं ॥ पूर्व उक्त प्रमाणा तथा अज्ञानके विरोधको तमोहीपन्यायसे स्पष्ट करते हैं ।

❀ अज्ञानं ज्ञातुमिच्छेद्यो मानेनात्यंतमूढधीः ।

सतुनूनं तमः पश्येद्दीपेनोत्तमतेजसा ॥ १ ॥ ❀

अ० ॥ जो अति मूढ बुद्धिपुरुष प्रमाणासे अज्ञानको जाननेकी इच्छा करता है। वह मूढ़ानिश्चय कर दीपकसे अन्धकारको देखनेकी इच्छा करता है। यद्यपि दीपक तथा तमका भी निवृत्त्यनिवर्त्तक भावविरोध नहीं संभवता। क्योंकि मंद प्रकाशवाले दीपक युक्त मंदरमें प्रकाश तथा तम इन दोनोंकी एक ही प्रतीति होती है। तथापि उत्तम प्रकाशवाले दीपक युक्त मंदरमें अन्धकार नहीं स्थित हो सकता ॥ इसीको तमोहीपन्याय कहते हैं। याते अज्ञानके स्वरूपविषयक प्रमाणाप्रश्न व्यर्थ है ॥ और अज्ञानके प्रश्न की अन्यायाऽनुपपत्तिसे सिद्ध जो अज्ञान तिसमें “कथंता” अर्थ यह वह अज्ञान कैसे सिद्ध है यह कथन नहीं संभवता ॥ क्योंकि स्वअनुभवसिद्ध पदार्थमें कथंता नहीं संभवती ॥ शंका ॥ हे सिद्धांतित् वही पदार्थ स्वीकार करने योग्य होता है जो अपने प्रयोजनका विरोधी न हो। और

अज्ञानकोतोकर्तृत्वादि सर्वअनर्थकाहेतुहोनेसे मुक्तिरूपप्रयोजनका विरोधिपनाहै । यातेवहकैसेस्वीकारकरनेयोग्यहै ॥ औरयदिऐसे कहो किवेदांतवाक्यजन्यज्ञानसे तिसकीनिवृत्तिहोजायेगी । सोयह कथनभीनहींसंभवता। क्योंकिजिनपुरुषोंने वेदांतवाक्यश्रवणकियेहैं तिनकोभीपूर्वकीन्याईही संसारकीप्रतीतिदेखनेमेंआतीहै । यातेस्व प्रयोजनकाविरोधीअज्ञान स्वीकारकरनेयोग्यनहीं ॥ समाधान ।' हे वादिन् कर्तृत्वादिसमूहअनर्थकी उत्पत्तिकाहेतु जोआत्माकाअज्ञानहै तिसकोस्वअनुभवसेसिद्धहोनेकरतिसकास्वीकारतोअवश्यकरनेयोग्य है।परन्तुतिसकेस्वीकारकरनेसे मुक्तिकीअनुपपत्तिनहींहोती। क्योंकि तत्त्वमस्यादिवाक्यजन्यअपरोक्षब्रह्मात्माकेसाक्षात्कारसेअज्ञानकेबाध हुएमुक्तिकीउपपत्तिहै । यहतुमनिश्चयकरो ॥इति॥३६॥

❀ अथपूर्वपक्षजिज्ञासापूर्वकबाधशब्दकाअर्थानिरूपण करनेकेलियेअन्यमतोंकीरीतिसेबाधकास्वरूप तथातिसकेनिराकरणकाप्रकार❀

बाधकाक्या?स्वरूपहै।ऐसीजिज्ञासाकेहुएनैयायिकमतकेअनुसार बाधकास्वरूप प्रथमपूर्वपक्षीकथनकरके तिसकोदूषितकरताहै । तहां पूर्वप्रत्ययमेंव्यधिकरणप्रकारकत्वकाजोनिश्चयहैतिसकोनैयायिकबाध कहतेहैं।यहां“इदंरजतम्”यहपूर्वप्रत्ययपुरोवर्तिशुक्तिविषयकहै । तथा रजतत्वप्रकारकहै।तिसप्रत्ययकेप्रकारकाइदंताकेसाथव्यधिकरणहै।अर्थ यहकिइदंताकेअधिकरणसेभिन्नअधिकरणवालाप्रकारइसप्रत्ययनिष्ठहै। तिसविषयकजोनिश्चयकियहइसीप्रकारहैतिसको बाधकहतेहैं।तात्पर्य यह“इदंरजतम्”इसप्रथमज्ञाननिष्ठअमत्वनिश्चयकोबाधकहतेहैं। ऐसा

बाधकास्वरूपयदिसिद्धांतीमाने । तोअपसिद्धांतहोगा, क्योकिभ्रमस्थ लमेंसिद्धांती नेअन्यथाख्यातिनहींमानी। जिसकारणसेअन्यथाख्याति वादीकेमतमेंपुरोवर्तिशुक्तिमेंरजतहैनहीं। किंतुसादृश्यादिदोषसेउद्बुद्ध संस्कारसेउपस्थितहुएरजतरूपकरपुरोवर्तिशुक्तिकाहीभानहोताहै। याते “इंद्रजतम्” यहजोपूर्वज्ञानहै। तिसकोभ्रमपनायुक्तहै। क्योकिविषयरूप रजतकाशुक्तिदेशमेंअभावहै। तिसकारणसेतिसज्ञानविषयक भ्रमत्वका जोनिश्चयसोबाधहै। परन्तुयहबाधकास्वरूप नैयायिककोंके मतमेंही संभवताहै । वेदांतमतमेंनहीं । क्योकिआपकेमतमें तोपुरोवर्तिशुक्ति मेंमिथ्यारजतकीउत्पत्तिहोनेकर इदंताकेसाथ प्रकारकीव्यधिकरणता नहींहै। अर्थात्इदंताकाअधिकरणही रजतत्वकाअधिकरणहै । याते पूर्वउक्तबाधकास्वरूपमानेहुएअपसिद्धांतहोगा ॥ किंवा ॥ पूर्वज्ञानमें भ्रमत्वकाजोनिश्चयहै। वहअधिष्ठानकेअज्ञानकोबाधकरताहै। वानहीं । प्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योकिदोनोंकाविषय भिन्नभिन्नहै। अर्थात् अज्ञानतोशुक्तिविषयकहै। औरबाधपूर्वज्ञाननिष्ठ भ्रमपनेकोविषयकरता है। औरभिन्नभिन्नविषयविषयक ज्ञानतथाअज्ञानकानिवृत्त्यनिवर्तकभाव नहींसंभवता ॥ अन्यथाअतिप्रसंगहोगा । अर्थात्घटके ज्ञानसेपट काअज्ञानभीनिवृत्त हुआचाहिये ॥ औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योकिसंसारकेमूलभूतअज्ञानका बाधनहोनेसेतिसकीव्यर्थताहै। अत्र विवरणकारकीरीतिसेबाधकास्वरूपआगेकहकरतिसकोवादीदूषितकरता है। औरकोईएकवेदांती कार्यसहितअज्ञानकीनिवृत्तिकानामबाधकहतेहैं सोभीसमीचीननहीं । क्योकिकार्यकीनिवृत्तिका नामबाधहै। अथवा कारणरूपअज्ञानकी निवृत्तिकानामबाधहै ॥ अथवादोनोंकीनिवृत्ति

कानामबाधहै । यहविचारकर्तव्यहै । इनमेंप्रथमऔरद्वितीयहदोनों पक्षतोअव्याप्तिदोषकी प्राप्तिहोनेसे नहींसंभवते । क्योंकिकार्यनिवृत्ति मेंसविलासअज्ञानकीनिवृत्तिरूप बाधकालक्षणनहींप्राप्तहोता । तैसे अज्ञानकीनिवृत्तिमात्रमेंभी पूर्वउक्तबाधकेलक्षणकीप्राप्तिनहीं । और अव्याप्तिदोषकीप्राप्तिसेही तृतीयपक्षभीअसंगतहै ॥ क्योंकिएकएक कीनिवृत्तिमें उभयनिवृत्तिरूपताका अभावहै ॥ प्रतियोगीकेभेदसेही अभावकाभेदहोताहै । यातैउभयनिवृत्तिकोभी बाधरूपतानहीं संभवती ॥ शंका ॥ कार्याकारपरिणामकोप्राप्तहुए अज्ञानकी निवृत्तिकानामहीबाधहै।ऐसेमानेहुए अव्याप्तिदोषनहीं प्राप्तहोता । क्योंकियहलक्षणसर्वत्र अनुगतहै ॥ समाधान ॥ तैसेमानेहुएभी यहविचारकरनेयोग्यहै। निवृत्तिमेंप्रतियोगिरूप कार्याकारपरिणामको प्राप्तहुआजोअज्ञानहै सोनिवृत्तिकाविशेषणहै। अथवाउपलक्षणहै । प्रथमपक्षतोनोंसंभवता ॥ क्योंकिविशिष्टवृत्तिधर्मकोविशेषणमें वर्तनेकानियमहै। इमन्यासेविशेषणरूप अज्ञानमेंभी बाधपनेकीप्राप्ति होगी।औरयदिद्वितीयपक्षकहो तोअभावमेंउपलक्षणरूप अज्ञानका कियाहुआकोईनिश्चयाकधर्म नहींप्रतीतहोता । यातेनिवृत्तिमात्र कानामबाधहोगा । तिसमेंभीयहविचारणीयहै । क्या?यहनिवृत्तिरूप बाधध्वंसप्राप्तकानामहै।अथवाज्ञानसाध्यध्वंसकानामबाधहै । अथवा पदार्थांतरकानामहै । अर्थयह वहनिवृत्तिरूपबाधसत्त्वरूपनहीं तथा असत्त्वरूपभीनहीं।औरसत् असत्उभयरूपभीनहीं । औरअनिर्वचनीय रूपभीनहीं । किंतुपंचमप्रकाररूप पदार्थांतरहै । अथवाअत्मस्वरूप हीनिवृत्तिहै । इनमेंप्रथमपक्षनहींसंभवता ॥ क्योंकिमुद्रादिकोंके

परिहारसे उत्पन्नहुया जोघटादिध्वंस तिसमेंबाधव्यवहार नहींहोता॥
 औरद्वितीयपक्षभी असंगतहै। क्योंकिउत्तरज्ञानसे सिद्धहोनेयोग्यजो
 पूर्वज्ञानकाध्वंसहै तिसमेंभीबाधव्यवहार हुयाचाहिये। जिसकारणसे
 वहध्वंसज्ञानसाध्यहै ॥शंका ॥ पूर्वज्ञानकेध्वंसप्रति उत्तरज्ञानकोज्ञान
 त्वरूपतासे कारणातानहीं। किंतुक्षणिकविशेषगुणत्वरूपतासे कारण
 ताहै।यातेतिसमेंबाधकेलक्षणकी अतिव्याप्तिनहींहोती ॥ समाधान॥
 यद्यपिपूर्वउत्तरीतिसेउत्तरज्ञानसाध्य पूर्वज्ञानकेध्वंसमेंबाधकेलक्षणकी
 अतिव्याप्तिनहींहै।तथापिज्ञानमात्रकेध्वंसमेंतोअतिव्याप्तिनिवारणकरनी
 कठिनहै।क्योंकिज्ञानकाध्वंसज्ञानमात्रकरसाध्यहै।औरतृतीयपक्षभीनहीं
 संभवता।क्योंकिवहपदार्थांतरनिवृत्तहोताहै।वानहीं। यहविचारणीयहै
 प्रथमपक्षतोनोंसंभवता।क्योंकिवहपदार्थांतरध्वंसकरव्याप्तनहीं। और
 द्वितीयपक्षभीअसंगतहै। क्योंकिपदार्थांतरके अनिवृत्तहुएअद्वैतकी
 हानिहोगी ॥ शंका ॥ अद्वैतकीहानितबहो जबपदार्थांतरसतहो
 यातेद्वितीयसत्काअभावहोनेसेअद्वैतकीहानिनहींहोती ॥समाधान॥
 तिसपदार्थांतरकोअनिर्वचनीयसे विलक्षणहोनेकरतथाअसत्से विल
 क्षणहोनेकरआत्माकीन्याईसत्वरूपताकासंभवहै। तिससेपदार्थांतर
 केस्थितहुए कैसेअद्वैतकीहानिनहींहोगी किंतुअवश्यहोगी। याते
 तृतीयपक्षभीअसंगतहै। औरचतुर्थपक्षभी नहींसंभवता। क्योंकि
 तिसआत्मस्वरूपनिवृत्तिकोनित्यसिद्धहोनेकर ज्ञानकोव्यर्थताकीप्राप्ति
 होगी ॥ शंका ॥ आत्माकास्वरूपमात्रही निवृत्तिनहीं किंतुवृत्तिउप
 लक्षितआत्मानिवृत्तिरूपहै। यातेज्ञानकोव्यर्थतानहीं ॥समाधान ॥
 जैसेगृहमेंकाकरूपउपलक्षणजन्यउत्पत्त्यादिरूपधर्मगृहकानिश्चायक

है। तैसे वृत्तिरूप उपलक्षणजन्य आत्माके निश्चायक धर्मका आत्मा में अभाव है इसीसे वृत्तिको उपलक्षणपनानहीं संभवता ॥ पूर्वकथनका प्रकरणमें उप योगकथन करता हुआ वादी बाधके निराकरणको समाप्त करता है । पूर्व उक्त प्रकारसे बाधका स्वरूपकथन करनेको अयोग्य है ॥ याते अज्ञान तत्कार्यके बाधसे मोक्ष सिद्ध होता है । यह कथन नहीं संभवता ॥ इति ॥

✽ अथ सिद्धांतरीतिसे बाधका स्वरूपनिरूपण ॥ ✽

भ्रमसे प्रसिद्ध पदार्थके अधिष्ठानमें अर्ध्यस्तपदार्थतीनकाल में नहीं इस प्रकारका बोधजो अधिष्ठानके साक्षात्कारसे अनन्तर होता है । तिसको बाधकहते हैं ॥ इस प्रकारका उत्तर सिद्धांती निरूपण करता है ॥ समाधान ॥

✽ मू० ॥ साक्षात्कृते त्वधिष्ठाने समनन्तर निश्चितिः ।
अर्ध्यस्य मानं नास्तीति बाध इत्युच्यते बुधैः ॥ ४० ॥ ✽
मोटनका छंद—साक्षात् आधार भए जवही । पाछेहुई जो निश्चोसवही ॥
मिथ्यानहि तीनहुकाल अहं । धीमानसवीतहि बाध कहे ॥ ३५ ॥

टी० ॥ अधिष्ठानके साक्षात्कारहुए तदनंतरजो यह निश्चय उत्पन्न होता है कि अर्ध्यस्तपदार्थ तीनोंकालमें अधिष्ठानमें नहीं । इसत्रैकालिक अत्यंताभावके निश्चयकोही बुद्धिमानोंने बाधकहा है । अब इसी अर्थको विस्तारपूर्वक निरूपण करते हैं ॥ जैसे शुद्धशक्तितथा रज्जुरूप अधिष्ठानमें रजततथा सर्परूप विपरीत अर्थको कल्पना करके प्रवृत्तहुए पुरुषको तथानिवृत्तहुए पुरुषको जो अधिष्ठानको विषय करने वाला ज्ञान बाधका जनक परोक्षरूप अथवा अपरोक्षरूप उत्पन्न होता है । यहां यह अर्थ जानलेना । जहां परोक्ष भ्रम होत हां परोक्ष अधिष्ठानका ज्ञान

उत्पन्नहोताहै। औरजहांअपरोक्षभ्रमहोतहांअपरोक्षअधिष्ठानकाज्ञान
उत्पन्नहोताहै।तिसअधिष्ठानकेसाक्षात्कारसेअनन्तरसहअध्यस्तरजतादि
इसशुक्त्यादिरूप अधिष्ठानमें कालत्रयमेंभी नहींहैं इसप्रकारका जो
निश्चय वहीबाधकहाजाताहै। यहसर्वलोकोंमें प्रसिद्धहै। तैसे
अधिकारिपुरुषको "मैत्रेयहूँ"इसप्रकारकाअधिष्ठानकासाक्षात्कारहोने
सेअनन्तर अज्ञानतत्कार्यरूप अध्यस्तपदार्थ मुक्तरह्यात्मामेंतीनकाल
मेंभीनहीं हैं। इसीनिश्चयको बुद्धिमानवाधकहतेहैं। यहविद्वानोंके
अनुभवसिद्धहै। यातेअज्ञानतत्कार्यका बाधसंभवताहै ॥ शंका ॥
हेसिद्धांतिन् वाधकाविषयजोवाध्य वहअनिर्वचनीयहै यहआपका
मतहै ॥ सोयहबाधकीविषयतापूर्वउक्त अन्यथाख्यातिवादीके
मतमेंकांताकरादिगत सत्यरजतमेंभीप्राप्तहै। जिसकारणसेवहरजत
भीकालत्रयमें पुरोवर्त्तिशुक्तिके खंडमेंनहीं। इसप्रकारके निश्चयका
विषयहै ॥ यातेपूर्वउक्तबाधकालक्षणदुष्टहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्
अन्यथाख्यातिवादीकेमतमें भ्रमकाविषयजोरजतादिहैं वहकांता
करादिस्थलमेंसत्यहैं। औरहमारेमतमें तोजिसअधिष्ठानमें वहरजता
दिअध्यस्तहैंतहांही वहअधिष्ठानरूपताकरसत्हैं स्वतंत्ररूपताकर
कहींभीसत्नहीं यातेअधिष्ठानसेभिन्नरूपताकर त्रैकालिक तिनका
अभावहै। यहविलक्षणताउनकेमतसे हमारेमतमेंहै। यातेपूर्वउक्त
बाधकालक्षणनिर्दोषहै ॥ औरअध्यस्तपदार्थका त्रैकालिकअभावहै
इसनिश्चयकोवाधरूपता मानेहुए ॥

❀ प्रतिपन्नोपाधौ त्रैकालिक निषेधप्रतियोगित्वं
अनिर्वचनीयत्वम् ।❀

अ०॥ भ्रमसिद्धपदार्थके अधिष्ठानमें अध्यस्तको त्रैकालिकनिषेध की जो प्रतियोगिता है । यही अनिर्वचनीयता है ॥ ऐसा अनिर्वचनीय कालक्षण जो संप्रदायके जाननेवालोंके कहा है ॥ वह भी समीचीनता को प्राप्त होता है ॥ शंका ॥ अध्यस्तपदार्थको अधिष्ठानके साक्षात्कार से अनंतर निषेधका प्रतियोगीद्वेष भी वर्तमानकालमें औभूतकालमें विद्यमान होनेसे त्रैकालिकनिषेधप्रतियोगित्वको अनिर्वचनीयत्व है यह अनिर्वचनीयकालक्षण असंभवदोषवाला है क्योंकि लक्ष्यमात्रमें वृत्ति नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अध्यस्तपदार्थ जैसे बाधसे उत्तर कालमें असत् है । तैसे बाधसे पूर्वभी वह असत् है ॥ याते लक्षण असंभवदोषवाला नहीं इसवास्ते तुमको अनिर्वचनीय का ज्ञान नहीं है । क्योंकि कदाचित्क होनेवाले पदार्थको अनिर्वचनीय नहीं कहते जिसकारणसे यह लक्षण अतिव्याप्तिदोषवाला है । यद्यपि वेदांतसिद्धांतमें घटादिपदार्थभी अनिर्वचनीय ही हैं । यातेतिनमें अतिव्याप्ति नहीं । तथापि अन्यवादियोंका इस अर्थमें विवाद होनेकर प्रतिवादियोंको अभिमतमतघटादिकोंमें पूर्वउक्तलक्षणकी अतिव्याप्ति है ॥ औस्यदिघटादिकोंकी व्यावृत्ति अर्थ ऐसा लक्षण करो कि

आविद्यकत्वे सति कादाचित्कत्वं अनिर्वचनीयत्वं ।

अ० ॥ आविद्यक हुआ जो कादाचित्क सत्तावाला हो वह अनिर्वचनीय है । सो यह लक्षण भी नहीं संभवता ॥ तथाहि ॥ शुक्तिरजतमें आविद्यकत्व क्या है ? यह विचारकर्तव्य है । तहां कारण मात्रसे जो उत्पन्न हो तिसको आविद्यक कहते हो । अथवा ज्ञानकरबाधके योग्यको आविद्यक कहते हो । प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता । क्योंकि अविद्याशब्द

सैकारणकाग्रहणकियाहै। तैसेमानेहुएजोकारणसेजन्यहुआकादाचित्क हो वहअनिर्वचनीयहै। यहलक्षणकाअर्थसिद्धहोगा। तिसकारणसे पुनःघटादिकोंमें। अतिव्याप्तिपूर्वकीन्याईहीस्थितहै। क्योंकिघटादिभी कारणजन्यहुए कादाचित्कहैं। परन्तुवहअनिर्वचनीयनहीं। और द्वितीयपक्षभीनहींसंभवता। क्योंकिसत्पदार्थमेंनास्तित्वकाज्ञान असंभवहै। तात्पर्ययहज्ञानकरनिवृत्तिकेयोग्यकोहीज्ञानकरवाध्यताहै। सोसत्पदार्थमेंनहींसंभवती। अन्यथासत्आत्माकीभी ज्ञानकरनिवृत्तिहुईचाहिये। तिसीकारणसे ज्ञानवाध्यत्वकीअन्यथाऽनुपपत्तिसे वर्तमानतथा अतीतकालमेंभी अद्यस्तपदार्थस्वरूपसेहीअसत्है। इसप्रकारअधिष्ठानमेंत्रैकालिकनिषेधकाजोप्रतियोगिपनाहै यहीअनिर्वचनीयपनाहै यहलक्षणनिर्दीपहै ॥ इति ॥ शंका ॥ बाधरूपनिश्चयक्या? आत्मस्वरूपहै अथवाआत्मासेभिन्नहै। प्रथमपक्षमानो तोकिसीकोभीसंसारकादर्शननहींहोगा। क्योंकिआत्मस्वरूपबाधकोस्वतःसिद्धहोनेकरप्रमसिद्धपदार्थकाकिसीकोभी भाननहींसंभवेगा। औरद्वितीयपक्षमेंभी यहविचारकर्तव्यहै। क्या? वहबाध आत्मासेभिन्न बाधकेयोग्यहै अथवा आत्माकीन्याईसत्वरूपहै ॥ यदि प्रथमपक्षकहो तोतिसमेंभी यह विचारकर्तव्य है अपनाबाधआपही है अथवाधांतरहै। प्रथमपक्षमें तोआत्माश्रयदोपस्पष्टहै। औरद्वितीयपक्षमेंअन्योऽन्याश्रयादि दोषोंकीप्राप्तिहोगी। यातेआत्मासेभिन्नवहबाध बाधकेयोग्यहै। यह प्रथमपक्षनहींसंभवता। औरआत्मासेभिन्न वहबाधसत्है। यदियह द्वितीयपक्षकहो तोअद्वैतसिद्धांतकी हानिहोगी। इसलिये-“सकल कार्यकारणरूपजगत्ब्रह्मात्मामेंनहींहै” इत्याकारकबाधरूपनिश्चयका

कोई अन्यवाध अथवा अन्यवेपण करने योग्य है। तैसे माने हुए अनवस्था दि दोष प्राप्त होंगे। याते पूर्व उक्त वाधका स्वरूप नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादि ब्रह्मसे भिन्न सकल अनात्माका जो वाधरूप निश्चय है। तिसको अपने अन्तर्भावरूपता कर ही वाधपना है अर्थ यह ब्रह्ममें कल्पित सर्व अज्ञान तत्कार्य तीनों कालमें नहीं है इस निश्चयके दोरूप हैं ॥ एक वाधरूप है और दूसरा कल्पितरूप है ॥ इस प्रकार अव्यस्तरूपतासे तिसको स्वविषयत्व है। और वाधरूपतासे तिसको विषयिपना है ॥ याते आत्मा श्रयदोषकी प्राप्ति नहीं होती ॥ और तैसे माने हुए अद्वैतकी भी हानि नहीं होती ॥ क्योंकि आत्मासे भिन्न कोई वस्तु नहीं ॥ याते पूर्व उक्त वाधका स्वरूप संभवता है ॥ इति ॥ शंका ॥ वाधके योग्य जो प्रपञ्च है वह ब्रह्मसे भिन्न सत् है। अथवा असत् है ॥ प्रथम पक्ष कहो तो आत्माकी न्याई तिसकी निवृत्ति नहीं होगी क्योंकि सत्पदार्थका अभाव सकल प्रमाणसे विरुद्ध है ॥ और द्वितीय पक्ष कहो तो तिस असत् जगत्के अभावका उद्देशकरके ज्ञानादिक साधनोंमें कोई भी पुरुष प्रवृत्त नहीं होगा ॥ क्योंकि असत्का अभाव स्वतः सिद्ध है और

❀ परस्परविरोधेन प्रकारांतरस्थितिः ❀

इस न्यायसे सत् असत्से विलक्षण कोई अन्य प्रकार भी नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादि नूतन विकल्पोंका यहाँ अवकाश नहीं ॥ क्योंकि (सतोपिजनिर्नच) इत्यादिकारिकाके व्याख्यानमें इन विकल्पोंका परिहार अनेकवार कर आए हैं। भाव यह कियहट् श्यमान जगत्प्रथम सत् रूपतो है नहीं ॥ क्योंकि "नेतिनेति" इत्यादि श्रुतियोंने तिसका वाध कहा है। और यह जगत् असत् भी नहीं ॥ क्योंकि अतरोक्षमान होता है ॥ तिसी कारणसे प्रतीति और वाधकी अन्य प्रकारसे अनुपपत्ति होनेकर ब्रह्मसे भिन्न

सकल अनात्मप्रपंचसत्प्रसत्सेविलक्षण अनिर्वचनीयस्वरूपहै ॥ और श्रुतिकाविरोधहोनेकरपूर्वउक्तन्यायकोआभासरूपताहै ॥ यातेपूर्वउक्त तुम्हारेविकल्पयहांनहींप्राप्तहोसकते ॥ इति ॥

❀ अथपूर्वपक्ष ॥ संक्षेपसेअन्यख्यातियोंकेस्वरूपप्रदर्शनपूर्वकअनिर्वचनीयख्यातिकाखंडन ❀

हेसिद्धांतिन्यभेदव्यवहारकासंपादकतथास्मृतिज्ञानसेजिसका भेदग्रहणनहींहुआ ऐसाजो “इंदरजतम्” यहसामान्यप्रत्यक्षज्ञानहै। वहीभ्रमरूपतासे कथनकियाजाताहै ॥ तिसभ्रमकाविषयरजतअनिर्वचनीयनहीं। क्योंकिसामान्यप्रत्यक्षज्ञानकाविषय पुरोवर्तिशुक्तिका जो इदमंशहै वहसत्है। तथास्मृतिज्ञानकाविषय जोदेशांतरमेंस्थितरजत वहभीसत्है ॥ औरतैसेही “नेदंरजतम्” यहचाधज्ञानभी अभेदव्यवहार मात्रकाही बाधकरताहै ॥ कोईभ्रमकेविषयका त्रैकालिकअभावनहीं बोधनकरता ॥ इसप्रकारअख्यातिवादीमानतेहैं ॥ यातेअनिर्वचनीय काबाधहोताहै यहयापकैसेकथनकरतेहो ॥ औरआत्मख्यातिवादी भीरजतकोअनिर्वचनीयनहींकहते। किंतुइंद्रियकेसंबंधसेविनारजतका प्रत्यक्षहोताहै। यातेबुद्धिरूपताकरअंतरस्थितजोरजतहै तिसकीबाह्य रूपतासे जोप्रतीतिहै इसीकोभ्रमकहतेहैं। और “नेदंरजतम्” यह बाधज्ञानभीरजतके असत्त्वकोनहींबोधनकरता ॥ किंतुतिसबुद्धिरूप रजतमेंइदंताकाद्रूसरानाम जोबाह्यपनाहै तिसकानिषेधकरताहै। क्योंकिरजतरूपधर्माके निषेधकीअपेक्षासेबाह्यतारूपधर्ममात्रकेनिषेध मेंलाघवहै। इसप्रकारआत्मख्यातिवादीबोधकहतेहैं ॥ औरअनादि वासनासेभ्रमकालमेंअसत्हीरजतभासताहै। ऐसेकथनकरनेवालेअसत्

ख्यातिवादी भी अनिर्वचनीय रजत नहीं मानते। किंतु निःस्वरूप असत् ही रजत असत् प्रकाशकी सामर्थ्यवाले ज्ञानसे भासता है। और इसी कारण से “नेदं रजतम्” यह वाध भी रजतके असत्त्वको ही बोधन करता है। इस प्रकार पूर्व उक्तरीतिसे ब्रह्मसे भिन्न सर्वजगत् अनिर्वचनीय है। यह सिद्धांती का कथन ही अनिर्वचनीय है अर्थात् नहीं संभवता ॥ इति ॥

✽ अख्यातिवादादिकोंके खंडन पूर्वक अनिर्वचनीय

ख्यातिका स्थापन तथा वाधका उपसंहार । ✽

समाधान ॥ हेवादिन् अख्यातिवादादिक तीन मतोंमें भ्रम तथा वाधकी व्यवस्था नहीं संभवती यह अन्यथा ख्यातिवादीने पूर्वनिरूपण किया है। इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं ॥ अख्यातिवादमें प्रथम सामान्यप्रत्यक्ष ज्ञान ही स्मृतिसे अग्रहीत भेदवाला हुआ वाधके योग्य अभेदव्यवहारका संपादक होनेकर भ्रम कहा जाता है ॥ सो नहीं संभवता क्योंकि सामान्यप्रत्यक्षज्ञान तथा स्मृतिज्ञान यह दोनों भान होते हैं वानहीं। यदि अन्त्यपक्षक हो तो दोनों नहीं होंगे। क्योंकि तुम्हारे मतमें ज्ञानको स्वप्रकाश होनेकर अभानकालमें स्वरूपाभावका नियम है। अर्थात् जब वह भान नहीं होते तो वह स्वरूपसे भी नहीं होंगे ॥ और यदि प्रथमपक्षक हो तो तिनके भेदका अग्रहण कैसे होगा। क्योंकि भेद तो तिनका स्वरूप ही है। स्वरूपभानकालमें तिनका भेद अवश्य ही ग्रहण हो जायेगा। इसी कारणसे तिस ज्ञानको अभेदव्यवहारका अपादकपना नहीं संभवता तिसीसे तिस ज्ञानमें भ्रमरूपताका स्थापन भी नहीं संभवता और तैसे ही जो पूर्व वाधकी व्यवस्थाकी थी वह भी नहीं संभवती। क्योंकि जहां वीतराग पुरुषको व्यवहार ही नहीं उदय होता तहां “नेदं रजतम्”

इसज्ञानकोबाधकपनाही नहींहोगा । यातेअख्यातिवादमें भ्रमतथा
 बाधकीव्यवस्थाकाअसंभवहै । औरआत्मख्यातिवादमेंभी यहविचार
 कर्तव्यहै।क्या?ज्ञानाकारताबाह्यपदार्थमेंअध्यस्तहै।अथवाज्ञानस्वरूप
 रजतमें बाह्यताअध्यस्तहै ॥ प्रथमपक्षतोनहींसंभवता क्योंकिक्षणिक
 विज्ञानवादी बाधकेमतमें बाह्यपदार्थअस्तीकहै । तिसकोअसत्
 होनेकर अधिष्ठानताकाअसंभवहै । औरयदिअसत्कोहीअधिष्ठान
 मानलेंतो “इदंरजतमसत्” यहभ्रमकाआकारहुआचाहिये क्योंकि
 अध्यस्तपदार्थअधिष्ठानसे अन्वितहीप्रतीतहोताहै ॥ शंका ॥ सत्
 रजतहै ऐसीप्रतीतिका अभावहोनेसे असत्हीरजत क्योंनहो ॥
 समाधान॥ हेवादिन्जवलुमरजतको असत्मानोगे तोरजतार्थीपुरुष
 कीप्रवृत्तिनहींहोगी । क्योंकिवहरजतनिःस्वरूपहै ॥ औरयदिरजत
 में बाह्यताकाआरोपहै । यहद्वितीयपक्षकहो तोयहभीनहींसंभवता ॥
 क्योंकितिसबाह्यताकोभी असत्होनेकर तिसकोविषय करनेवालेज्ञान
 निष्ठअपरोक्षता नहींहोगी ॥ औरअसत्ख्यातिवादभी तुम्हारेमत
 मेंप्राप्तहोगा । औररजतअन्तरविज्ञानस्वरूपहै इसमें प्रमाणकाभी
 अभावहै । औरयदिऐसेकहोकि “नेदंरजतम्” यहबाधरूपप्रत्ययही
 लाघवसहकृतहुआ रजतकीबाह्यताका निषेधकरके अर्थसेतिसकी
 अन्तररूपताअर्थात् विज्ञानरूपताकोबोधनकरताहै ॥ यातेरजतकी
 बुद्धिरूपतामें यहबाधप्रत्ययही प्रमाणहै । सोयहकथन भीसमी
 चीननहीं । क्योंकि “इदंता” नामसमीपताकाहै ॥ वहजवरजत
 मेंनिषेधकीगई तोरजतमें असमीपताही प्राप्तहोगी । तिस
 असन्निहित रजतको अतिसन्निहित विज्ञानरूपतातो क्वहो

सकती है ॥ और इन्द्रिय संबंधसे विना ही तिस रजतको प्रत्यक्ष होनेकर तिसको विज्ञानरूपता है । यह कथन भी नहीं संभवता । क्योंकि दोपके वशसे देशांतरवर्ति रजतका ही इंद्रियके साथ संबंध संभवता है । याते “इंद्रिय संबंधसे विना” यह प्रत्यक्षका विशेषण असिद्ध है । और यह जो आत्म ख्यातिवादीने कहा था कि “नेदं रजतम्” यह बाधप्रत्ययरजतमें बाह्य तारूप इदंताको निषेध करता है रजतको निषेध नहीं करता ॥ सो यह तिसका कथन भी समीचीन नहीं । क्योंकि बाधप्रत्यय इदंतातथारजतइनदोनोंको नहीं निषेध करता किंतु इदंता और रजतके तादात्म्यको निषेध करता है तिस तादात्म्यके निषेधकिये हुए इदंताको तो पुरोवर्तिमें वह बाधप्रत्यय स्थापन करता है । और रजतको अथवारजतत्वको देशांतरमें अथवारजतमें स्थापन करता है याते आत्मख्यातिवादीके मतमें अमत्तथावाधकी व्यवस्थानहीं संभवती । और असत्ख्यातिवादमें जो यह कहा था कि असत्के प्रकाशनमें समर्थज्ञान असत् रजतको ही प्रकाश करता है सो यह कथन भी नहीं संभवता । क्योंकि असत्की अपरोक्षप्रतीति नहीं संभवती । और ज्ञान किस अर्थके प्रकाशनमें समर्थ है ऐसा प्रश्न करनेसे सामर्थ्यको विषयकी अपेक्षा है ॥ और वह असत्विषयकार्य है अथवा ज्ञाप्य है ऐसे विकल्पोंको नहीं सहन करता । तात्पर्य यह असत्विषयको यदि ज्ञानका कार्यमाने तो असत्बंध्यापुत्रकी भी ज्ञानसे उत्पत्ति हुई चाहिये क्योंकि ज्ञानमें असत्वस्तुके उत्पादनका सामर्थ्य है । और यदि असत्विषयको ज्ञाप्यमाने तो असत्बंध्यापुत्रका भी ज्ञानसे प्रकाश हुआ चाहिये । इत्यादिविकल्पोंके न सहन करनेसे असत्ख्यातिवाद भी असंगत है । यद्यपि “नेदं रजतम्” यह बाधप्रत्ययरजतके असत्पनेको ही बोधन करता है तथापि पूर्व आत्म

ख्यातिवादकेनिराकरणमें अन्यथाख्यातिवादीकेमतानुसारतिसबाधप्रत्ययका परिहारकरआएहैं। अर्थात्बाधज्ञान इदंतातथारजतकेतादात्म्यकोनिषेधकरताहै रजतकेयसत्वको वहनहींबोधनकरता। तिसकारणसेभ्रमस्थलमें औरकोईख्यातिनहींसंभवती। यातेब्रह्मसेभिन्नसकलजगत् अनिर्वचनीयहै॥ यहअर्थसिद्धहुया ॥ शंका ॥ यदिअन्यथाख्यातिवादीने अन्यख्यातियोंका निराकरणकिया तिसमेंआपको क्यालाभ होगा उल्टाअन्यथाख्यातिवादलुमनेस्वीकारकरलिया ॥समाधान ॥ हेवादिन् अन्यथाख्यातिवादीकीरीतिसे इतरख्यातियोंका निराकरण सिद्धहोनेकर पुनःतिनका निराकरणकरना युक्तनहीं। औरसाक्षात् आत्मविचारकाभी तिनकेनिराकरणमें अभावहोनेकर तिनकेनिषेधमें यत्ननहींकिया। औरअन्यथाख्यातिवादकाभी स्वीकारनहींकिया। क्योंकिपूर्व तिसकाभी निषेधकरआएहैं। इसप्रकारअधिष्ठानके साक्षात्कारसेअनंतर अनिर्वचनीयपदार्थका त्रैकालिकअत्यंताभाव निश्चयबाधहै। यहअर्थसर्वदोपरहित सिद्धहुया ॥ इसीअर्थको सुरेश्वराचार्योंकेवचनसे दृढकरतेहैं ॥

❀ तत्त्वमस्यादि वाक्योत्थसम्यग्धीजन्ममात्रतः।

अविद्यासहकार्येण नासीदस्तिभविष्यति ॥१॥❀

अ० ॥ तत्त्वमस्यादिमहावाक्यसे उत्पन्नहुयाजोदृढ अपरोचबोधहै तिसकीउत्पत्तिमात्रसेही कार्यकेसहितअविद्या नपूर्वयी औरनअवहे औरनआगेहोगी। इसश्लोकमें “नासीत्” इसकथनसे अधिष्ठानकेसाक्षात्कारसे अनंतर जगत्कत्रैकालिक अत्यंताभावहीप्रतीत होताहै। यातेत्रैकालिक अत्यंताभावकी प्रतीतिहीबाधहै। अविद्या

कीनिवृत्तिवाधनहीं ॥ इति ॥ (४०) अबइसीअर्थको दृढकरनेकेलिये पूर्वपक्षनिरूपण करतेहैं ॥

✽ अथपूर्वपक्ष ✽ विद्याऔअविद्याके विरोध
का असंभवनिरूपण ॥ ✽

हेसिद्धांतिन् अधिष्ठानके साक्षात्कारकोअविद्याकावाधकपना आपकैसेकहतेहो। औरयदि तिनकाविरोधहोनेसे विद्याकोअविद्याकी वाधकताआपकहोतोवहकौनविरोधहैतिसकोआपनिरूपणकरो । इसी अर्थकोपूर्वपक्षीविकल्पांद्वारा स्पष्टकरताहै । क्याविद्यातथाअविद्या काजोएककालमें अनवस्थितपनाहै यहही तिनका परस्परविरोधहै । अथवाएकदेशमें अनवस्थितपनारूपविरोधहै । अथवाव्यघातक भावविरोधहै अथवाभावाभावरूपविरोधहै । इनमेंप्रथमपक्षतोनोंहीं संभवता । क्योंकिपूर्वकालमें होनेवालीअविद्याकेसाथ विद्याकी एक कालमें अवस्थिति है ॥ शंका ॥ “ पूर्वभावित्व ” यह विशेषण पदार्थोंके एककालमें अवस्थानका साधकनहीं । क्योंकि घटसेपूर्वकालमें होनेवालाजोघटप्रागभावहै तिसकेसाथएककालमें घटकीअवस्थितिनहींहै ॥ समाधान ॥ घटकोप्रागभावकीनिवृत्ति रूपताहोनेसेतिनकीएककालमेंस्थितिनहींसंभवती। क्योंकिप्रतियोगीऔ तिसका प्रागभाव एककालमेंनहीं रहसकते॥ औरअविद्याकीनिवृत्ति तोविद्याजन्यहै यातेअविद्याकीनिवृत्तिकोविद्यासे उत्तरकालमेंहोनेकर विद्यातथाअविद्याकी एककालमें अवस्थिति परिहारकरनेयोग्यही नहीं ॥ शंका ॥ विद्या अविद्याकोक्योंनिवृत्तकरेगी क्योकितिसको प्रमेयकाप्रकाशकहोनेकर अविद्याकीनिवृत्तिसे विनाहीतिसकीसफल

ताहै॥ समाधान ॥ विद्यासे यदिअविद्याकीनिवृत्तिनहीं मानेगे तो विद्याकोव्यर्थापत्तिहोगी।क्योंकिप्रमेयकोस्वप्रकाशहोनेकरतिसकाप्रकाश विद्यासेनहींसंभवता । यातेविद्यातथाअविद्याकाएक कालमेंसहअन वस्थानरूपविरोधनहींसंभवता।औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै।क्योंकिभिन्न भिन्नअधिकरणमें स्थितविद्यातथाअविद्याके विरोधकाअभावहै ॥ तिनकाविरोधसिद्धकरनेकेलिये तिनकीएकअधिकरणाता अवश्य कहनेयोग्यहै । यातेएकदेशमें अनवस्थितपनारूप विरोधभीनहीं संभवता ॥ औरतृतीयपक्षमें यहविचारकरनेयोग्यहै । किंवहवध्य रूपअविद्याकाघातक्याहै । जिसकाकर्ताहोनेसे विद्याकोघातकपना कहतेहो।यदिऐसेकहोख्वंसकानामघातहै तिसकेकर्ताकोघातककहतेहैं तोइसमेंभीयहविचारणीयहै।क्यावहख्वंसवध्यरूपअविद्यासेभिन्नकोईस्व तंत्रपदार्थहै।इसीपक्षकोस्पष्टकरतेहैं।प्रथमयहख्वंसवध्यरूपअविद्यासेजन्य तोहैनहीं।क्योंकिवहतिससेभिन्नहैऔरभिन्नपदार्थोंकाकार्यकारणभावनहीं संभवतायद्यपिऐसेघटसेभिन्ननिमित्तकारणदंडादिकघटकेजनकहैं।तैसे भिन्नख्वंसकोभीप्रतियोगिरूपतासेवध्यउत्पन्नकरदेगा।तथापि कल्पित प्रतियोगिकख्वंसकोभी कल्पितहोनेकर मुक्तिकोभीकल्पितपनाहोगा। क्योंकि अविद्याकेख्वंसकानामहीमुक्तिहै । औरयदितिसख्वंसकोअक ल्पितमाने तोद्वैतापत्तिहोगी॥ औरअविद्याकेज्ञानाऽधीन तिसख्वंसका ज्ञानहोताहै यहभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिअविद्याकीनिवृत्तिकालमें प्रमातृत्वादिकोंकाअभावहोनेसे तिसविषयकजन्यज्ञानही असिद्धहै॥ तिसकारणसेसर्व प्रकारअविष्यसे संबंधकाअभावहोनेकर ख्वंसस्वतंत्र हीकोईपदार्थहै ॥ अथवाभिन्नहुआभी स्वतंत्रनहीं किंतुतिसवध्यका

धर्महै ॥ अथवातिसव्यध्याकास्वरूपहै ॥ प्रथमस्वतंत्रपक्षमाने तोव्यथ्य
 रूपअविद्याकाध्वंसनहींहोगा ॥ क्योंकिहिमगिरि तथाविध्यगिरिकी
 न्याईपरस्पर तिनकाअसंबंधहै । यातेवहध्वंसअविद्याकानहींहोगा ।
 औरद्वितीयपक्षकहो तोधर्मस्वस्थितिकेअर्थ अपनेधर्माकीदीर्घआयु
 कीवांछाकरताहै । अन्यथा निराश्रयहुआधर्म कहां स्थितहोगा ।
 यातेद्वितीयपक्षभीअसंगतहै । औरतृतीयपक्षमेंतो विद्याअविद्याका
 उत्पादकहीहोजायेगी विरोधतिनकाकिमहेतुसेहोगा । यातेतृतीय
 पक्षभीनहींसंभवता । और चतुर्थपक्षभीअयुक्तहै । क्योंकिविद्या
 तथाअविद्यायहदोनों भावरूपहैं । औरअविद्याकीप्रागभावरूपतापूर्व
 निषेधकरआएहैं । अन्यथातिनकीएककालमें सहस्थितिनहींहोगी।
 इसप्रकारविद्यातथाअविद्याका विरोधकथनकरनेकेअयोग्यहै । इसी
 सेविद्याअविद्याकाबाधकहै यहकथननहींसंभवता ॥किंवा विद्या तथा
 अवि केविरोधकीतुल्यताहोनेसेविपरीतहीक्योंनहोअर्थात्विद्याहीबाध
 केयोग्यहो क्योंकिविद्याबाधकहीहैइमनियममेंप्रमाणकाअभावहै। इति

* अथसिद्धांत॥ विद्यातथाअविद्याका उपमर्द्य

उपमर्दकभावलक्षणा विरोधनिरूपणा ❀

विद्यातथाअविद्याका कौनविरोधहै । इसप्रकारकाप्रश्नहुएविरोध
 कोनिरूपणाकरनेके लियेप्रथमसिद्धांतीविरोधकेकार्यको कथनकरताहै।

❀ मू०॥उपमर्द्यस्वभावत्वमविद्यायाविरोधिता ।

तत्कर्तृत्वंतुविद्यायायाः प्रकाशतमसोरिव॥४१॥❀

रोलाब्द ॥ उपमर्द्यस्वभाव कह्योताकोसुनभाई ।

अविद्यामाहि विरोधिपनो यहहैअनुमाई ॥

तत्कर्तृत्वविरोधि पनोविधामे थाई ।

तमप्रकाशविरोध यथासवजनजगगाई ॥ ३६ ॥

टी० ॥ यद्यपिविधातथाअविद्याकाकोई अन्यप्रकारकाविरोध यहाँनिरूपणनहींहोसकता। तथापिउपमर्धउपमर्दकभावलक्षणविरोध तिनदोनोंकानिरूपणहोसकताहै। अर्थयहउपमर्धउपमर्दकभावविरोधका कार्यहैतिसकरकारणरूपविरोधकाअनुमानकियाजाताहैक्योंकिकार्यसे कारणकाअनुमानहोताहै॥ औरअविद्याउपमर्दनकरनेके योग्यहीहै ॥ क्योंकिअविद्याकाउपमर्दकत्वरूप जोविद्याकास्वभावहैवहअन्वयव्यतिरेकसेलोकमेंप्रसिद्धहै ॥ अर्थात्विद्याकेहुएअविद्यानहींरहती॥ जैसे “यहशुक्तिहै” इसप्रकारकीशुक्तिविद्याकेहुए अविद्याकाबाधहोताहै ॥ अर्थात्इसशुक्तिमेंअविद्या औरतिसकाकार्यरजततीनकालमेंनहींथे ॥ औरशुक्तिविद्याकेअभावहुए शुक्तिविषयकआवरण तथाअन्यप्रकारसे अर्थात्रजतरूपताकरप्रतीतिप्रसिद्धहै ॥ इसप्रकारकेअन्वयव्यतिरेकसे अविद्याहीउपमर्धस्वभाववालीहै॥ यहलोकप्रसिद्धिसेकल्पनाकीजाती है ॥ यहांयहअनुमानभीजानना ॥

❀ विमताविद्योपमर्द्याअविद्यात्वात्शुक्त्याविद्यावत् ❀

अ० ॥ विवादकाविषयजोअविद्याहै सोउपमर्धस्वभाववाली है ॥ अविद्यारूपहोनेसे जोजोअविद्याहोतीहै॥ सोसोउपमर्धस्वभाव वालीहोतीहै जैसेशुक्तिविषयकअविद्याहै ॥ इति ॥ इसअनुमानमें अविद्याउपमर्धस्वभाववालीहै यहसाध्यहै । तिसकाअभावरूपविपक्ष अर्थात्अविद्याउपमर्धस्वभाववालीनहीं ऐसाविपक्षमाननेमेंबाधकके कथनद्वाराअन्वयव्यतिरेकसिद्धतिनदोनोंकेउपमर्धउपमर्दकस्वभावको

दृढकरनेकेलियेविपरीतपनेकीप्राप्तिरूपपूर्वपक्षको अनुवादकरकेसिद्धां
तीनिराकरणकरताहै ॥ औरपूर्वपक्षीनेजोपूर्वयहकहाथा॥ किंविरोधि
पनातुल्यहोनेसे अविद्याहीविद्याका उपमर्दकक्योंनहो सोयहकथनभी
नहींसंभवता ॥ क्योंकिअविद्याकोविद्याकाउपमर्दकमानेहुएविद्याकी
उत्पत्तिहीनहींहोगी ॥ क्योंकिउपमर्दकरूपअविद्याप्रथमहीस्थितहै ॥
यातेविद्याकीउत्पत्तिनहोनी यहीविपक्षमाननेमेंबाधकहै ॥ विद्याही
अविद्याकाउपमर्दकहै इसीअर्थमें औरहेतुकहतेहैं ॥ प्रतिनियतस्व
भाववालेपदार्थोंमें (पर्यनुयोग) यहविपरीतहीक्योंनहो ऐसाकथन
नहींकरसकते ॥ जैसेप्रकाशतथातमकाजोप्रतिनियतस्वभावहै उसमें
विपरीतस्वभावकी आशंकासंभवतीहीनहीं क्योंकिदृष्टविरोधप्राप्तहोता
है । यातेविद्याहीअविद्याकाउपमर्दकहै यहअर्थसिद्धहुआ ॥ इति ॥
शंका ॥ उपमर्दअविद्यासेभिन्नस्वतंत्रपदार्थहै अथवातिसकाधर्म है ।
इत्यादिविकल्पोंकीप्राप्तिअव्यघातकपक्षकीन्याई इसपक्षमेंभीतुल्यहीहो
गी॥ समाधान ॥ हेवादिन्व्यघातकपक्षमेंकथनकीए हुएदोषोंकी
प्राप्ति इसपक्षमेंनहींहोसकती॥ क्योंकि ॥

❀ ब्रह्मात्मनिसाविलासाऽविद्याकालत्रयेऽपि नास्ति ❀

अ० ॥ ब्रह्मात्मामेकार्यसहितअविद्याकालत्रयमेंभीनहींहै ।
इसनिश्चयकानामबाधका अपरपर्यायउपमर्दहै । तिसकोस्वविषयके
अबाधितपनेकरप्रमारूपताहै ॥ शंका ॥ यदिअविद्यानहींनिवृत्त
होतीतोब्रह्मात्माकासाक्षात्कारनिष्फलहोगा।क्योंकिअविद्याकीनिवृत्ति
सेविनाअन्यतिसकाफलकोईप्रतीतनहींहोता॥ समाधान ॥ हेवादिन्
ब्रह्मसाक्षात्कारकाबाधरूप उपमर्दहीफलहै। अविद्याकीनिवृत्तितिसका

फलनहीं॥ क्योंकि अधिष्ठानसे भिन्न करके अधिष्ठातृकार्यको असत् होने करतिसकी निवृत्तिकरनेके अयोग्य है। याते विद्यासे उत्तरकालमें उत्पन्न होनेसे बाधहीतिसका फल है ॥ इस कारणसे विद्याकी निष्फलता नहीं॥ शंका ॥ हे सिद्धान्तिन् उपमर्दको ज्ञानरूपमाने हुए तिस ज्ञानरूप बाध का कौन विषय है। क्योंकि विषयसे विना कोई ज्ञान नहीं होता। और यदि अधिष्ठादिकोंका त्रैकालिक अत्यन्तभावहीतिस बाधका विषय आपक हो तो तिसमें यह विचार कर्तव्य है क्या वह अत्यन्तभाव असत् है। अथवा सत् है प्रथम पक्षक हो तो तिस अत्यन्तभावके प्रतियोगिरूप अज्ञानादिकोंको सत्पनेकी प्राप्ति होगी। और द्वितीयपक्षमें भी यह विचारणीय है क्या वह सत् रूप अत्यन्तभाव आत्मासे भिन्न है। अथवा अभिन्न है। प्रथम पक्षमें तो द्वैतकी प्राप्ति होनेसे अद्वैतश्रुतिका विरोध प्राप्त होगा। और द्वितीयपक्षमें वह बाध अधिष्ठानका साक्षात्कार ही है। उससे भिन्न नहीं याते बाध अधिष्ठाका जन्यजनकभाव नहीं संभवेगा। इस प्रकार बाधका विषय कोई नहीं संभवता ॥ समाधान ॥ हेवादिन् वृत्तिरूप साक्षात्कार उपाधि उपहित आत्माका स्वरूप ही त्रैकालिक अत्यन्तभाव रूप है और तिस साक्षात्कार रूप शुद्ध उपाधिसे कार्यसहित अधिष्ठा ब्रह्मात्मा में कालत्रयमें भी नहीं ॥ इस प्रकारका ज्ञान आत्माविषयक उत्पन्न होता है। याते पूर्व उक्त बाधका विषय संभवता है। इसमें कोई दोष नहीं। और यदि ऐसे कहो कि यह पक्ष प्रदायके जानने वालोंमें से किसीने भी स्वीकार नहीं किया सो यह कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि वास्तविक कारणोंकी समति पूर्व कथन कर आए हैं। और विवर्णाचार्योंने भी यही पक्ष दिखलाया है। तथाहि उन्होंने यह कहा है। “प्रसिद्ध अधिष्ठानशुक्त्यादिकोंमें रजतादिकों

के अभावको वाधवोधन करता है। इस प्रकार प्रसिद्ध अधिष्ठानमें अभावप्रति योगित्वही मिथ्यात्व है। इस कथनसे यही पक्षस्वीकार करने से ही स्वीकार किया है। यदि विवर्णाचार्योंको यह पक्षस्वीकार न होता। तो रजतके अभावको वाधवोधन करता है। यह कैसे कथन करते। और तत्त्वदीपनाचार्य तिस अभावपदको त्रैकालिक अभावपरताकर कैसे व्याख्यान करते। तिस कारणसे संप्रदायके जाननेवालोंने यह पक्ष अवश्य स्वीकार किया है। याते यह पक्ष असांप्रदायिक नहीं। यह सिद्ध हुआ इति ॥ ४१ ॥

* अथ पूर्वपक्ष ॥ जीवन्मुक्तिके अभावप्रतिपादन द्वारा संप्रदायकालोपनिरूपण । ❀

शंका ॥ हे सिद्धांतिन् विद्याको अविद्याका उपमर्दकपनायुक्त नहीं। क्योंकि जीवन्मुक्तिका अभाव प्राप्त होता है। तथाहि ॥ यदि विद्याको अविद्याका उपमर्दकमाने तो विद्वान्को विद्याकी उत्पत्ति से अनंतर कार्यसहित अविद्यासमूल विनाशको प्राप्त होगी। तिससे तिसीकालमें विदेह केवल्यकी प्राप्ति हुए तात्कालिक ही विद्वान्के देहका पात होगा ॥ याते जीवन्मुक्तिका अभाव प्राप्त होगा ॥ शंका ॥ समूल अविद्याकी निवृत्ति होती है। यह कथन ही नहीं संभवता ॥ क्योंकि अविद्याको अनादि होनेसे तिसके मूलकी अनुपपत्ति है। और अधिष्ठान ही अविद्याका मूल है। यह कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि तिसको एक सत्यरूप होनेकर कल्पितपनेका असंभव है। और यदि अधिष्ठानको भी कल्पित मानलें तो शून्यताकी प्राप्ति होगी ॥ समाधान यहां इस शंकाकी प्राप्ति नहीं होती। क्योंकि “अहम्” इत्याकारक जो अध्यास है तिसको अविद्या कहते हैं। भाष्यकार श्रीशंकराचार्योंने तैसे ही कहा है ॥

❀ तमेतमेवलक्षणमध्यासंपंडिताअविद्येतिमन्यन्ते ❀

अ०॥ पूर्वजिसमें आत्तेपकिया गया पुनः जिसमें समाधान किया गया। इस प्रकारके लक्षणवाला जो अध्यास है। तिसको वेदांतशास्त्रके वेता पंडित “अविद्या” मानते हैं ॥ इति ॥ तिस अध्यासरूप अविद्याका कार्यकर्तृत्वादि है। और तिस अध्यासका मूलमूला अविद्या है। याते समूल अविद्याकी विद्यासे निवृत्ति होती है यह कथन संभवता है ॥ शंका ॥ सकार्य तथा समूल अविद्याके नाश होनेसे विदेह मुक्तिसिद्ध हो जायेगी ॥ फिर जीवन्मुक्तिसे क्या प्रयोजन है। समाधान ॥ तैसे माने हुए संप्रदाय का उच्छेद होगा ॥ क्योंकि “श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्” इस विशेषणसे जिस पुरुषको साक्षात्कार उत्पन्न हुआ है तिसको ही आचार्य्यपना है। और तिसको तात्कालिक अर्थात् ज्ञानसमकाल ही विदेहकैवल्यकी प्राप्ति होनेसे ब्रह्मविद्याका उपदेश कौन करेगा ॥ और उपदेशके अभाव हुए ब्रह्मविद्याकी संप्रदायके से प्रवृत्त होगी ॥ याते संप्रदायका अभाव होनेकर वेदान्तोंको अशोधकता लक्षण अप्रमाणाताकी प्राप्ति होगी ॥ शंका ॥ तत्त्वज्ञानसे उत्तरकालमें ही विद्वान्के देहका पात होता है यह कथन अयुक्त है ॥ क्यों कि देहका कारण जीवप्रारब्धकर्मका शेष है सो विद्यमान है। और प्रारब्धकर्म भी तत्त्वज्ञानसे निवृत्त हो जाता है यह कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि प्रारब्धकर्मसे ज्ञानका विरोध नहीं ॥ और प्रारब्धकर्मके आश्रित ज्ञानकी उत्पत्ति होनेकर भी तिसकी निवृत्तित्वज्ञान नहीं करता ॥ याते प्रारब्धकर्मकेवलसे विद्वान्के शरीरका पात नहीं होता। तिससे उपदेशादिसर्वव्यवहार संभवता है। समाधान ॥ यद्यपि तत्त्वज्ञानका प्रारब्धकर्मसे विरोध नहीं तथापि वह प्रारब्धकर्म उपादान कारणसे विना तो स्थित नहीं ॥

के अभावको बाधबोधन करता है। इस प्रकार प्रसिद्ध अधिष्ठानमें अभावप्रति योगित्वही मिथ्यात्व है। इस कथनसे यही पक्ष तिनहोने स्वीकार किया है। यदि विवर्णाचार्योंको यह पक्ष स्वीकार न होता। तो राजतके अभावको बाधबोधन करता है। यह कैसे कथन करते। और तत्त्वदीपनाचार्य तिस अभावपदको त्रैकालिक अभावपदाकरकेसे व्याख्यान करते। तिस कारणसे संप्रदायके जाननेवालोंने यह पक्ष अवश्य स्वीकार किया है। याते यह पक्ष असांप्रदायिक नहीं। यह सिद्ध हुआ इति ॥ ४१ ॥

* अथ पूर्वपक्ष ॥ जीवन्मुक्तिके अभावप्रतिपादन
द्वारा संप्रदायकालोपनि रूपणा । ❀

शंका ॥ हे सिद्धांतिन् विद्याको अविद्याका उपमर्दकपनायुक्त नहीं। क्योंकि जीवन्मुक्तिका अभाव प्राप्त होता है। तथाहि ॥ यदि विद्याको अविद्याका उपमर्दकमाने तो विद्वान्को विद्याकी उत्पत्ति से अनंतर कार्यसहित अविद्यासमूल विनाशको प्राप्त होगी। तिससे तिसीकालमें विदेह केवल्यकी प्राप्ति हुए तात्कालिकही विद्वान्के देह का पात होगा ॥ याते जीवन्मुक्तिका अभाव प्राप्त होगा ॥ शंका ॥ समूल अविद्याकी निवृत्ति होती है। यह कथन ही नहीं संभवता ॥ क्योंकि अविद्याको अनादि होनेसे तिसके मूलकी अनुपपत्ति है। और अधिष्ठानही अविद्याकामूल है। यह कथन भी नहीं संभवता। क्योंकि तिसको एक सत्यरूप होनेकर कल्पितपनेका असंभव है। और यदि अधिष्ठानको भी कल्पित मानलें तो शून्यताकी प्राप्ति होगी ॥ समाधान यहाँ इस शंकाकी प्राप्ति नहीं होती। क्योंकि “अहम्” इत्याकारक जो अर्था स है तिसको अविद्या कहते हैं। भाष्यकार श्रीशंकराचार्योंने तैसे ही कहा है ॥

ॐ तमेतमेवंलक्षणमध्यासंपंडिताअविद्येतिमन्यन्ते ॐ

अ०॥ पूर्वजिसमें आक्षेपकिया गया पुनः जिसमें समाधान किया गया। इस प्रकारके लक्षणवाला जो अध्यास है। तिसको वेदांतशास्त्रके वेता पंडित “अविद्या” मानते हैं ॥ इति ॥ तिस अध्यासरूप अविद्याका कार्यकर्तृत्वादि हैं। और तिस अध्यासका मूलमूला अविद्या है। यातेस मूल अविद्याकी विद्यासे निवृत्ति होती है यह कथन संभवता है ॥ शंका ॥ सकार्यतयासमूल अविद्याके नाश होनेसे विदेह मुक्तिसिद्ध होजायेगी ॥ फिर जीवन्मुक्तिसे क्या प्रयोजन है ॥ समाधान ॥ तैसे माने हुए संप्रदाय का उच्छेद होगा ॥ क्योंकि “श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्” इस विशेषणसे जिस पुरुषको साक्षात्कार उत्पन्न हुआ है तिसको ही आचार्य्यपना है। और तिसको तात्कालिक अर्थात् ज्ञानसमकाल ही विदेहके बल्यकी प्राप्ति होनेसे ब्रह्मविद्याका उपदेश कौन करेगा ॥ और उपदेशके अभावहुए ब्रह्मविद्या की संप्रदायकैसे प्रवृत्त होगी ॥ यातेसंप्रदायका अभाव होनेकर वेदान्तोंको अवोधकता लक्षण अप्रमाणाताकी प्राप्ति होगी ॥ शंका ॥ तत्त्वज्ञानसे उत्तरकालमें ही विद्वान्के देहका पात होता है यह कथन अयुक्त है ॥ क्यों कि देहका कारण जो प्रारब्धकर्मका शेष है सो विद्यमान है। और प्रारब्धकर्म भी तत्त्वज्ञानसे निवृत्त होजाता है यह कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि प्रारब्धकर्मसे ज्ञानका विरोध नहीं ॥ और प्रारब्धकर्मके आश्रितज्ञानकी उत्पत्ति होनेकर भी तिसकी निवृत्ति तत्त्वज्ञान नहीं करता ॥ याते प्रारब्धकर्मकेवलसे विद्वान्के शरीरका पात नहीं होता। तिससे उपदेशादिसर्वव्यवहार संभवता है ॥ समाधान ॥ यद्यपि तत्त्वज्ञानका प्रारब्धकर्मसे विरोध नहीं तथापि वह प्रारब्धकर्म उपादान कारणसे विना तो स्थित नहीं है

सकता। क्योंकि भावकार्यनिरूपादानकहीं देखानहीं। और यदि वह उपादानके सहित है तो क्या आत्मा तिसका उपादान है। अथवा अविद्या तिसका उपादान है? इनमें प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि आत्माको अकारण होने करति गकी उपादानताका अर्थ संभव है। और यदि द्वितीय पक्ष कहो तो तिसमें यह विचार कर्तव्य है। क्या वह अविद्या निवृत्त हो गई है। अथवा स्थित है? प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि प्रारब्धको भी अविद्याका कार्य होने करति अविद्याके अभाव हुआ वह कैसे स्थित हो सकता है। किंतु नहीं स्थित हो सकता। जैसे तन्तुके अभाव हुआ पटकी स्थिति किसी प्रकार भी नहीं हो सकती। और प्रारब्धकर्मके फलभोगकानिर्वाहकरूपताकर तत्त्वज्ञानसे उत्तरकुलकाल तक अविद्या स्थित रहती है। यदि यह द्वितीय पक्ष मानो तो यह भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि विद्यानिष्ठ जो अविद्याके उपमर्दकपनेका स्वभाव है तिसकी हानि होगी। और यदि यह कहो कि प्रारब्धकर्मके निवृत्त होनेसे अनन्तर ही विद्यामें यह स्वभाव होता है। प्रथम नहीं। सो यह कथन भी असंगत है। क्योंकि एकपदार्थमें दो स्वभाव अंगीकार नहीं हैं। अन्यथा अग्निमें भी दाहकत्व तथा अदाहकत्व इन दो स्वभावोंकी प्राप्ति होगी। और यदि ऐसे कहो ॥ कि प्रथम ज्ञानसे आवरणशक्ति प्रधान अज्ञान निवृत्त होता है। और प्रारब्धकर्मके निर्वाह करनेके लिये विज्ञापशक्ति प्रधान अज्ञान निवृत्त नहीं होता ॥ सो यह कथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि दो अज्ञानोंका अभाव है ॥ एक ही अज्ञान सिद्धांतमें स्वीकार है ॥ यद्यपि एक ही अज्ञान उभयशक्तिविशिष्ट है तथापि एक ही कालमें एकपदार्थकी स्थिति तथा निवृत्तिका विरोध है ॥ और यदि ऐसे कहो कि अज्ञानकी शक्ति मात्र ही ज्ञानसे निवृत्त होती है ॥ सो यह कथन भी समीचीन नहीं ॥ क्योंकि

शक्तिऔंशक्तिकालेकाअभेदहै। अथवाभेदहै? यहविचारकर्तव्यहै ॥
 यदिप्रथमपक्षकहो तोअज्ञानकीनिवृत्तिभीअवश्यमाननीहोगी।केवल
 शक्तिकीनिवृत्तिहीविवक्षितहै यहकथननहींसंभवेगा ॥ औरद्वितीय
 पक्षमेंतोअज्ञानरूपधर्मीकी निवृत्तिहीनहींहोगी।क्योंकिशेषप्रारब्धकर्म
 केभोगसेपूर्वथावरणशक्तिमात्रकोज्ञाननिवृत्तकरताहैऔरतिसकर्मभोग
 सेउत्तरकालमेंविद्वेषशक्तिको निवृत्तकरताहै ॥ औरशक्तिकाअज्ञानसे
 भेदहै।यातेअज्ञानरूपधर्मीके निवर्तककाअभावहोनेसेतिसकीनिवृत्ति
 नहींहोगी । औरप्रारब्धकर्मकीनिवृत्तिसे अज्ञानआपहीनिवृत्तहोजाये
 गा । यहकथनभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिप्रारब्धकीनिवृत्तिप्रमाणरूप
 नहीं ॥ शंका॥ अज्ञानकेनिवर्तकका अभावअसिद्धहै । क्योंकिज्ञान
 हीअज्ञानकानिवर्तकहै सोविद्यमानहै।यद्यपिसेमानेहुए जीवन्मुक्ति
 कीसिद्धिनहींहोगी। तथापिशेषप्रारब्धकर्मकर वहज्ञानप्रतिबद्धहोताहै
 औरअप्रतिबद्धकारणहीकार्यकाजनकहोताहै ॥ यातेशेषकर्मकीनिवृत्ति
 हुएप्रतिबंधककाअभावहोनेकरअप्रतिबद्धहुआतत्त्वज्ञानअज्ञानकोबाध
 करेगा ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिनप्रारब्धकर्मकेनाशहुए ज्ञानकाही
 अभावहै ॥ औरयदिसेकहो किप्रारब्धकेनाशसेअनन्तर शरीरका
 नाशहोजाताहै। क्योंकिप्रारब्धकर्मकानाशशरीरनाशमें हेतुहै । तिस
 कारणसेप्रारब्धकर्मकेनाशकीउत्पत्तिकालमेंप्रतिबंधककाअभावहै।और
 देहादिकारणसमुदायभीविनाशअवस्थाके सम्मुखहुआविद्यमानहै ॥
 यातेज्ञानतिसकालमेंउत्पन्नहोकर अज्ञानकाबाधकरेगा । सोयहकथन
 भीसमीचीननहीं । क्योंकिप्रारब्धकर्मकाशेषदेहरूपहीहै तिससेभिन्न
 तिसकाकारणरूप औरकोईशेषशब्दकाअर्थनहींहै। क्योंकिदेहादिफल

रूपताकरपरिणामको प्राप्तहुएकर्मका औरकोईरूपांतरनहीं ॥ तैसेमाने
हुए शेषकाजोनाशहै तिसीकोदेहपातकहतेहैं ॥ तिसकर्मशेषरूपदेह
केपातसेअनन्तरकारणकेअभावसेज्ञानकाहीअभावहैतोअज्ञानकोकौन
निवृत्तकरेगा ॥ औरदेहपातसेपूर्व प्रारब्धकर्मकरज्ञानप्रतिबद्धहै। याते
अज्ञानके निवर्तककाअभावसिद्धहै ॥शंका ॥ हेवादिन्यद्यपिमूलाऽ
विद्यातोज्ञानकरनिवृत्तहोगई है। तथापितिसका संस्कारजोलेशाऽविद्या
नामसेकहाजाताहै तिसकीअनुवृत्तितोसंभवती है। औरज्ञानतथाक्रिया
काहीसंस्कारहोताहैयहनियमनहीं। किंतुवस्तुकाभीसंस्कारहोताहै। क्योंकि
संस्कारकोनाशमात्रकर प्रयुक्तताहै तिसकारणसेअपरोक्षआत्मानिष्ठ
संस्काररूपदोषकेवशसे देहादियनात्माकारप्रतीतिकासंभवहोजायेगा
यातेजीवन्मुक्तिकी सिद्धिहोजायेगी । औरयदिज्ञानतथाक्रियाका
हीसंस्कारहोताहै यहनियममाने तोसंस्कारशब्दका अन्यहीअर्थहै
लेशाऽविद्याजोअविद्याकी अवस्थाविशेषहै तिसीकोसंस्कारकहतेहैं
तिससेविद्वान् के शरीरादिकोंकी प्रतीतिका संभवहोजायेगा ॥
समाधान ॥ तिससंस्कारकोभी अविद्याकाकार्यपनाहै। अर्थयहकि
प्रथमसंस्कारको अनादिपनातो नहींसंभवता । अन्यथासंस्कारपनेका
हीअभावप्रसंगहोगा। औरयदितिसकोसादिमाने तो तिसका उपादान
क्याआत्माहै अथवाअविद्याहै ? । प्रथमपक्षतो नहीं संभवता क्योंकि
आत्माकोनिर्विकार होनेसेकारणताका अभावहै । औरयदिद्वितीय
पक्षकहोतोअविद्याके नाशहुएवह संस्कारकैसेस्थितहोगा । क्योंकि
उपादानकाहीअभावहै । और भावकार्यउपादानसहितहीहोताहै
यहनियमहै ॥ शंका ॥ अविद्याकीअवस्थाविशेषही लेशशब्दका

वाच्यहुईसंस्कार नामसेकहीजातीहै ॥ समाधान ॥ तिसत्रवस्था विशेषकात्रविद्यासे भेदतथात्रभेद निरूपणनहींहोसकता । क्योंकि यदित्रवस्थाविशेषका अविद्यासेभेदमाने तोतिसकीवहअवस्थानहीं होगी। औरयदिअभेदमाने तोतिसमेंसंस्कारशब्दका प्रयोगकरना निष्फलहै । औरशक्तिपक्षमें कथनकियेहुएदोषोंकी प्राप्तिहोनेसे भी यहपक्षअयुक्तहै ॥ शंका ॥ (तस्यतावदेवचिरम्)
 अ० ॥ तिसविद्वान्को तबतकहीविदेहकैवल्यमें विलंबहै ॥ और (सचक्षुरचक्षुरिव) अ० ॥ वहविद्वान्वास्तवसे नेत्रादिइन्द्रिय रहितहै।परन्तुवाधिताऽनुवृत्तिसेनेत्रादिइन्द्रिय सहितकीन्याईहै। और
 * प्रजहातियदाकामान् सर्वान्पार्थमनोगतान् ।

(म० गी० अ० २ । ५५)

अ० ॥ हेअर्जुनजिसकालमें यहविद्वान्मनमें प्राप्तसर्वकाम नाथोंकोत्यागदेताहै । इत्यादिकश्रुतितथास्मृतिकी प्रमाणात्तासे विद्वान्को विदेहकैवल्यकीप्राप्तिमें विलंबप्रतीतहोताहै । तिसकारण सेतिसकेशरीरकी स्थितिकल्पनाकीजातीहै । औरस्वहशरीरकीस्थिति प्रारब्धकर्मसेविना अनुपपन्नहुईतिसकर्मकीभी कल्पनाकरतीहै ॥ यातेजीवन्मुक्तिकी सिद्धिहै ॥ समाधान ॥ (उभेइहैवैषएते तरति) अ० ॥ यहविद्वान्ज्ञानसमकालही पुरायतथापापरूप दोनोंकर्मोंकोनाशकरताहै ॥ और (क्षीयन्तेचास्यकर्माणि) अ० ॥ इसविद्वान्के कर्मनाशहोजातेहैं । और (ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि) अ० ॥ ज्ञानरूपअग्निसर्वकर्मोंको भस्मकरदेता

रूपताकरपरिणामको प्राप्त हुए कर्मका और कोई रूपांतर नहीं ॥ तैसेमाने हुए शेषका जो नाश है तिसीको देहपात कहते हैं ॥ तिसकर्मशेषरूपदेहके पातसे अनन्तर कारणके अभावसे ज्ञानका ही अभाव है तो अज्ञानको कौन निवृत्त करेगा ॥ और देहपातसे पूर्व प्रारब्धकर्मकज्ञानप्रतिबद्ध है। याते अज्ञानके निवृत्तकका अभाव सिद्ध है ॥ शंका ॥ हेवादि न्यद्यपि मूलाऽविद्यातो ज्ञानकरनिवृत्तहोगई है। तथापि तिसका संस्कारजो लेशाऽविद्या नामसे कहा जाता है तिसकी अनुवृत्तितो संभवती है ॥ और ज्ञान तथा क्रिया का ही संस्कार होता है यह नियम नहीं। किंलु वस्तुका भी संस्कार होता है। क्योंकि संस्कारको नाश मात्रकर प्रयुक्तता है तिसकारणसे अपरोक्ष आत्मानिष्ठ संस्काररूपदोषके वशसे देहादि अनात्माकारप्रतीतिका संभव होजायेगा याते जीवन्मुक्तिकी मिद्धि होजायेगी। और यदि ज्ञान तथा क्रियाका ही संस्कार होता है यह नियम माने तो संस्कारशब्दका अन्यही अर्थ है लेशाऽविद्याजो अविद्याकी अवस्थाविशेष है तिसीको संस्कार कहते हैं तिससे विद्वान् के शरीरादिकोंकी प्रतीतिका संभव होजायेगा ॥ समाधान ॥ तिमसंस्कारको भी अविद्याका कार्यपना है। अर्थ यह कि प्रथमसंस्कारको अनादिपना तो नहीं संभवता। अन्यथा संस्कारपनेका ही अभाव प्रसंग होगा। और यदि तिमको सादिमाने तो तिसका उपादान क्या आत्मा है अथवा अविद्या है ?। प्रथमपक्ष तो नहीं संभवता क्योंकि आत्माको निर्विकार होनेसे कारणताका अभाव है। और यदि द्वितीय पक्ष कहो तो अविद्याके नाश हुए वह संस्कारके से स्थित होगा। क्योंकि उपादानका ही अभाव है। और भावकार्य उपादानसहित ही होता है यह नियम है ॥ शंका ॥ अविद्याकी अवस्था विशेष ही लेशशब्दका

वाच्यहुईसंस्कार नामसेकहीजातीहै ॥ समाधान ॥ तिसत्रवस्था विशेषकाअविद्यासे भेदतथाअभेद निरूपणनहींहोसकता । क्योंकि यदिअवस्थाविशेषका अविद्यासेभेदमाने तोतिसकीवहअवस्थानहीं होगी। औरयदिअभेदमाने तोतिसमेंसंस्कारशब्दका प्रयोगकरना निष्फलहै । औरशक्तिपक्षमें कथनकियेहुएदोषोंकी प्राप्तिहोनेसे भी यहपक्षअयुक्तहै ॥ शंका ॥ (तस्यतावदेवचिरम्) अ० ॥ तिसविद्वान्को तत्रतकहीविदेहकैवल्यमें विलंबहै ॥ और (सचक्षुरचक्षुरिव) अ० ॥ वहविद्वान्वास्तवसे नेत्रादिइन्द्रिय रहितहै।परन्तुवाधिताज्जुवृत्तिसेनेत्रादिइन्द्रिय सहितकीन्याईहै। और

❀ प्रजहातियदाकामान् सर्वानपार्थमनोगतान् ।

(य० गी० अ० २ । (५५)

अ० ॥ हेअर्जुनजिसकालमें यहविद्वान्मनमें प्राप्तसर्वकाम नाथोंकोत्यागदेताहै । इत्यादिकश्रुतितथास्मृतिकी प्रमाणतासे विद्वान्को विदेहकैवल्यकीप्राप्तिमें विलंबप्रतीतहोताहै । तिसकारण सेतिसकेशरीरकी स्थितिकल्पनाकीजातीहै। औरस्वहशरीरकीस्थिति प्रारब्धकर्मसेविना अनुपपन्नहुईतिसकर्मकीभी कल्पनाकरतीहै ॥ यातेजीवन्मुक्तिकी सिद्धिहै ॥ समाधान ॥ (उभेइहैवैपएते तरति) अ० ॥ यहविद्वान्ज्ञानसमकालही पुराणतथापापरूप दोनोंकर्मोंकोनाशकरताहै ॥ और (क्षीयन्तेचास्यकर्माणि) अ० ॥ इसविद्वान्के कर्मनाशहोजातेहैं । और (ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि) अ० ॥ ज्ञानरूपअग्निस्वकर्मोंको भस्मकरदेता

है। इत्यादिकश्रुतितथास्मृतिका विरोधहोनेसे कल्पनाकीअनुपपत्ति है। यद्यपिजीवन्मुक्तिकाअभाव मानेहुए जीवन्मुक्तिकेप्रतिपादक वचनोंकाविरोधहोगा। तथापिअध्ययनविधिका विरोधहोनेकर जीवन्मुक्तिके प्रतिपादकवचनोंका स्वार्थमेंतात्पर्यनहीं।यातेतिनका विरोधनहीं ॥ शंका ॥ यद्यपिजीवन्मुक्तिकप्रतिपादन साक्षात्तिन वचनोंकाप्रयोजननहीं। तथापिसुखस्वरूपआत्माके साक्षात्कारकेहेतु जोश्रवणादिसाधनहैं। तिनमेंप्रवृत्तिकेजनकहोनेकर परंपरासेजीवन्मुक्तिकाप्रतिपादनतिनकाप्रयोजनहै।यातेस्वार्थमेंतिनकातात्पर्यसंभवता है ॥ समाधान॥ जीवन्मुक्तिके प्रतिपादनकरनेवालेशास्त्रकोश्रवणादिकोंमेंप्रवृत्तिकीजनकतास्वीकारकरेहुएयहविचारणीयहैक्यावहशास्त्र श्रवणादिकोंमेंसाक्षात्हीमुमुक्षुपुरुषोंकीप्रवृत्तिकरानाहै। अथवाश्रवण आदिकोंकेविधायकवाक्यका शेषरूपहोकरप्रवृत्तिकरानाहै?।प्रथमपक्ष तोनहींसंभवता।क्योंकितिसमेंविचारके विधानकरनेवालेपदकाअभाव है। औरयदिश्रवणादिविधिका अर्थवादरूपवहशास्त्रहैयहद्वितीयपक्ष मानो तोस्वार्थमें तिसकोप्रमाणतानहींहोगी ॥ शंका॥ जहांप्रमाण काविरोधहो। अथवाप्रमाणकासंवाद होतहांअर्थवादवाक्योंकोप्रमाण तानहींहोती ॥ औरयहांतोवहदोनोंहीनहीं याते “देवताअधिकरण न्याय” सेतिनकोस्वार्थमेंप्रमाणाताकैसेनहींहोसकती ॥ समाधान ॥ शुक्तिकेसाक्षात्कारहुए कार्यसहितअविद्याकाबाधहोताहै। औरशुक्ति केसाक्षात्कारकाअभावहुए सकार्यअविद्याकाबाधनहींहोता ॥ इस प्रकारका अन्वयव्यतिरेकरूपलौकिकप्रमाणहै। और (क्षीयंतेचास्यकर्माणि) इत्यादिवैदिकप्रमाणहै ॥ तिनदोनों

काविरोधहोनेसे देवताऽधिकरणन्यायकी यहांप्राप्तिनहीं होसकती यातेजीवन्मुक्तिकेप्रतिपादकशास्त्रकरविद्वान्केदेहकीस्थितिनहींकल्पनाकरसकते ॥ शंका ॥ जैसेधनुपसेछूटेहुए बाणकीक्रियाकाप्रारंभ कियेहुएवेगके नाशसेहीनाशहोताहै अन्यप्रकारसेनहीं । तैसेप्रारब्ध कर्मकाभोगरूपकार्यके नाशसेहीनाशहोताहै अन्यकिसीप्रकारसेनहीं। इसप्रकारशास्त्रकारोंने प्रारब्धकर्मकीस्थितिसिद्धकीहै । यातेजीवन्मुक्तिकासंभवहै ॥ समाधान ॥ दृष्टांतकीविपमताहोनेसेपूर्वकथन नहींसंभवता । क्योंकिदृष्टांतमें तोक्रियाकेउपादानभूतबाणकानाश नहींहुया ॥ यातेप्रारब्धवेगकेक्षयसे तिसकानाशसंभवताहै । और दार्ष्टांतमें तोप्रारब्धकर्मकेउपादानभूत अज्ञानकीभीनिवृत्तिहुईहै । यातेतिसकी स्थितिनहींसंभवती ॥ शंका ॥

❀ अनारब्धकार्यएवतुपूर्वतद्वधेः ॥ ३०मी०॥४॥१॥१५ ❀

अ० ॥ यहअधिकरणसूत्रहै। यहांअधिकरणरचनाऐसेहै ॥ ज्ञानजन्यजो कर्मकाविनाशहै वहक्यासकलरूपतासे कर्ममात्रकाहोता है । अथवा प्रारब्धकर्मसेभिन्नकर्मकाविनाशहोताहै? । यहसंशयहै । तहांपूर्वपक्षप्राप्तहुया ॥ (क्षीयन्तेचास्यकर्माणि) इसश्रुतिमें सामान्यरूपतासेसकलकर्मोंकाविनाशश्रवणहोताहै। यातेकर्ममात्रका विनाशहोताहै॥ इसप्रकारपूर्वपक्षकेप्राप्तहुए सिद्धांतनिरूपणकरतेहैं । जोपुरुषयथापापरूपकर्मइसदेहमेंसुखतथादुःखकेअनुभवअर्थप्रवृत्तहुए हैं वहप्रारब्धकार्यवालेकहेजातेहैं । तिनसेभिन्न जोअनारब्धकार्यवाले कर्मजोअनादिसंसारचक्रमेंज्ञानकी उत्पत्तिपर्यन्तसंचयकियेहैं वही विनाशकोप्राप्तहोतेहैं । प्रारब्धकर्मविनाशकोनहींप्राप्तहोते । क्योंकि

❀ तस्यतावदेवचिरंयावन्नविमोक्ष्येऽथसंपत्स्ये ॥❀

छा० उ० अ० द्वा० १३१२

अ० ॥ तिसविद्वान्कोतवतकहीविलंबहै जवतकप्रारब्धकर्मको भोगकर शरीरकोनहीं त्यागता । तिससेअनन्तर विदेहकैबल्यकोप्राप्त होताहै । इसश्रुतिसेविद्वान्के देहपातका अवधिसुनाजाताहै इस प्रकारसूत्रकारोंने जीवन्मुक्तिका उपपादनकियाहै । और

❀ नत्वारब्धकार्ये सामिसुक्तफले ❀

अ० ॥ आरब्धकार्यवालेजोकर्मजिनकाआधाफलभोगलियाहै तिनकाविनाशनहींहोता । इत्यादिग्रंथकरभाष्यकारोंनेभी जीवन्मुक्ति काप्रतिपादनकियाहै । और ॥

❀ नत्वारब्धविपाकंसंपादितजात्यायुर्वितेत्यादिना ❀

अ० ॥ जातितथाआयुऔरधनरूप फलकाजिनकर्मोंनेआरंभ कियाहै तिनकाज्ञानसेविनाश नहींहोता । इत्यादिग्रंथकरवाचस्पति मिश्रोंनेभीजीवन्मुक्ति प्रतिपादनकीहै ॥ तथा

❀ ननुकर्मणामपिनिवृत्तत्वात्कथंद्वैतदर्शनं ।

नैपदोपइत्यादिना ॥❀

अ० ॥ शंका ॥ ज्ञानसेसर्वकर्मोंकोभी निवृत्तहोनेसे पुनः विद्वान्कोद्वैतदर्शनकैसेभंभेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन्यहदोपनहीं इत्यादिग्रंथसे विवर्णाचार्योंनेभी जीवन्मुक्तिकथनकीहै ॥ और ॥

❀ आरब्धफलशेषैकहेतुत्वात्तदेहसंस्थितेः ।

रागादिप्रत्योद्भूतिरिपुचक्रादिवेगवत् ॥❀

अ०॥ प्रारब्धकर्मकेफलकाशेषही विद्वान्केदेहकीस्थितिकाएक हेतुहै इसीकारणसे तिसकोरागादि प्रत्ययोंकीउत्पत्तिकासंभवहै । यहाँरागादिकोंकीप्रतीति आभासरूपजाननी । जैसेप्रारब्धवेगवाले वाणकीक्रियाकावेगके नाशसेही नाशहोताहै। औरकुलालकेचक्रकी क्रियाकाभीप्रारब्धवेगकेनाशमेहीनाशहोताहै । तैसेविद्वान्केदेहका पातभीप्रारब्धकर्मकेफलभोगसे अनन्तरहीहोताहै । इत्यादिग्रंथकरके वार्तिककारोंनेभीजीवन्मुक्तिका उपपादनकियाहै । तिसजीवन्मुक्ति केनस्वीकारकरनेसे तिनसर्वमहानुभावोंकाकथन अयुक्तहोगा । क्योंकिअप्रामाणिकअर्थकाजोशास्त्रकारोंने उपपादनकरनाहैसोव्यर्थ है॥ औरजीवन्मुक्तिविषयक सर्वलोकोंकी प्रसिद्धिकाभीव्याघातनहीं होसकता। यातजीवन्मुक्तिसंभवहै॥ समाधान॥ शिष्यकोअविद्यावत्ता होनेकरगुरुविषयकअश्रद्धाहोजायेगी । तिसअश्रद्धाकीनिवृत्तिरूप प्रयोजनहोनेकर तिनमहानुभावोंकाकथननिष्फलनहीं किंतुसफलहै औरजीवन्मुक्तिमेंप्रमाणका अभावहोनेकर लोकप्रसिद्धितोअन्धपरं परारूपहोनेसे त्यागनेयोग्यहै । इसप्रकार सर्वदोषोंसे रहित रूपताकर उपपादनकियेहुए विदेहमुक्तिपत्रको समाप्तकरते हुए पूर्वपत्रकाफल निरूपणकरतेहैं ॥ पूर्वउक्तप्रकारसे विद्याको अविद्याकाउपमर्दक स्वभावहोनेकर विद्वान्कोज्ञान समकालही मुक्तिकेप्राप्तहुए उपदेशकेअभावसे विद्याकीउत्पत्ति किसहेतुसे होगी किंतुकिसीहेतुसेनहींहोगी । तिससेसंप्रदायकालोपप्राप्तहोगा। शंका ॥ विद्याकीउत्पत्तिमेंआचार्यक्याकरेगा। क्योंकिआपहीयह अधिकारीतर्कादिकोंसे विद्याकोसंपादनकरलेगा । यातेविद्याकी

उत्पत्तिसंभवेहै ॥ समाधान ॥ आचार्य्यकीअपेक्षासेविनाहीविद्या
उत्पन्नहोजायेगी यहकथननहींसंभवता । क्योंकिऐसामाननेसेवहुत
श्रुतिवचनोंकाविरोधप्राप्तहोताहै॥तथाहि (आचार्यवान्पुरुषोवेद)

अ० ॥ आचार्यवालापुरुषहीआत्माकोजानसकताहै ॥ और
[नैपातर्केणामतिराप्नेया] अ० ॥ हेनचिकेतायहआत्मविद्या
तर्कसेप्राप्तहोनेयोग्यनहीं और [प्राप्यवरान्निबोधत] अ० ॥
उत्कृष्टआचार्य्योंको प्राप्तहोकरतुमआत्मतत्त्वकोजानो ॥ और

❀ आचार्य्यस्तेगतिं वक्ता ङा० अ० ४ ख० १४ क० १ ❀

अ०॥ हेब्राह्मणआचार्यहीतुम्हकोमोक्षमार्गकाउपदेशकरेगा॥और

❀ अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्ति । प्रोक्तान्येनैव सु
ज्ञानाय प्रैष्ट ॥ क० उ० ॥ अ० १ ब० २ पं० ८६॥

अ० ॥ अभेदवादिआचार्यकर कथनकियेहुए आत्मतत्त्व
विषयकसंशयनहींहोता । और हेप्रियतमभेदवादीसेभिन्नब्रह्मवेत्ता
आचार्यकर कथनकियेहुए वेदान्तवाक्यअपरोक्षबोधकेअर्थहोतेहैं ॥
इत्यादिश्रुतिवचनोंनेआचार्यसापेक्षहीब्रह्मविद्याकीउत्पत्तिकथनकीहै ।
औरपूर्वउक्तरीतिसेआचार्यकाअभावहै । यातेविद्याकीउत्पत्तिनहींसंभ
वती ॥ इतिपूर्वपक्ष ॥ अथसिद्धांत ॥

❀ तात्कालिकमुक्तिपक्षकास्वीकारतथासंप्रदायके
लोपकापरिहार ॥

समाधान ॥ हेवादिन् ज्ञानसमकालहीविदेहकैवल्यकीप्राप्ति
विद्वान्कोहोतीहै।यहपक्षहीश्रेष्ठहै ॥ औरविद्याकीसंप्रदायकाअभाव

होनेकरविद्याकाअसंभ्ररूपदोषजोपूर्वपक्षीनेकहाथा।सोभीनहींसंभवता
क्योंकि स्वअज्ञानकर कल्पितआचार्यविद्यमानहै ॥ शंका ॥ हे
सिद्धांतिन् कल्पितजोमिथ्यारूपआचार्यहै।तिसको उपदेष्टापनाकैसे
संभवेगा । औरयदिमिथ्याकोभी उपदेष्टापनामानलें। तोअर्थक्रिया
काकर्ताहोनेसेतिसकोमिथ्यापनानहींसंभवेगा।क्योंकिमिथ्यापदार्थअर्थ
कासाधकनहींहोता ॥ अन्यथामरुभूमिकेजलसेभी पिपासाउपशम
-हुईचाहिये ॥ समाधान ॥

❀मू०॥ कल्पितोप्युपदेष्टास्याद्यथाशास्त्रंसमादिशेत् ।

नचाविनिगमोदोषोऽविद्यावत्त्वेननिर्णयात् ॥४२॥❀

स्वैयाच्छंद ॥ मिथ्यावेदसत्यजिमबोधक तिमकल्पितशुरुदेउपदेश ॥

असत्प्रतिबिंबविबसत्वबोधक वाट्यांतलखोरिदिदेश ॥

विनिगमविरहदोषनहि आवत यामेंहैइकहेतुविशेष ॥

अविद्यावानशिष्यहैकल्पकयानिर्णयतेतजोक्लेश॥३६॥

टी० ॥ हेवादिन् यद्यपिपूर्वआचार्यका अभावकथनकियाहै ।

तथापिकल्पितभी अचार्यसत्यकीन्याईसम्पकउपदेशकरसकताहै ॥

शंका ॥ तिसकल्पितआचार्यको उपदेष्टापनायुक्तनहीं । क्योंकिवह

निःस्वरूपहै॥ समाधान ॥हेवादिन् निःस्वरूपयदितुमत्तुच्छपदार्थको

कहो तोवहहमअंगीकारनहींकरते ॥ औरयदिमिथ्याकानामनिःस्व

रूपहै तोतिसकोउपदेशकर्तृत्वजनजायेगा । क्योंकिजैसेकल्पितभी

वेदस्वार्यकोबोधनकरदेताहै । तैसेकल्पितभीआचार्यउपदेशकरदेगा॥

औरतत्त्वसाक्षात्कारसे प्रथमअधिकारीको आचार्यनिष्ठमिथ्यात्वज्ञान

काअभावहै।औरतत्त्वसाक्षात्कारसेअनंतरआचार्यकीअपेक्षाकाअभाव

होनेसेकोईदोषनहीं ॥ औरशास्त्रकोअपौरुषेयहोनेसे तिसकोकल्पित पनानहींसंभवता यहजोमीमांसककहतेहैं । तिनकेप्रतिअन्यउदाहरण निरूपणाकरतेहैं ॥ जैसेकल्पितभीप्रतिविंब सत्यविंबकीप्रतीतिकाहेतु स्वीकारकियाहै। तैसेमिथ्याआचार्य्यभी सत्यवस्तुकाउपदेशकरसकता है ॥ यहांयहअनुमानजानना ॥

❀ विमतं विंबपूर्वकं प्रतिविंबत्वात् संमतवत् ❀

अ०॥ विवादकाविषयजोकोईप्रतिविंबहै वहविंबपूर्वकहै। जोजो प्रतिविंबहोताहै । सोसोविंबपूर्वकहीहोताहै । जैसेप्रमिद्धमुखकाप्रति विंबहै ॥ इति ॥ औरयदिऐसेकहो किविंबज्ञानमेंप्रतिविंबज्ञानहीकारण है प्रतिविंबनहीं । सोयहकथनभी ममीचीननहीं । क्योंकिज्ञानमात्र को तोहेतुताहैनहीं। किंतुप्रतिविंबाश्वच्छिन्नज्ञानकोहेतुताहै। औरप्रति विंबाश्वच्छिन्नज्ञानकोहेतुतामानेहुए प्रतिविंबकोभी विंबज्ञानकीहेतुता दूरनहींहोसकती॥ क्योंकिविशिष्टवृत्तिधर्मकोविशेषणमेंवर्तनेकानियम है ॥ यातेकोईअनुपपत्तिनहीं ॥ शंका ॥ एकद्वीजीवहै । इतरजीवा भासतिसकी अविद्याकरकल्पितहैं यहआपकामतहै । तिसमें शिष्यके अज्ञानकरगुरुकल्पितहै। अथवागुरुकेअज्ञान अशिष्यकल्पितहै? इसप्रकार काविनिगमना विरहदोषप्राप्तहुए शिष्यकी श्रवणादिकों में प्रवृत्तिका अभावहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् अज्ञानीकोहीकल्पकपनाहै । क्योंकितिसमेंकल्पनाका बीजभूतअज्ञानविद्यमानहै । औरविद्वान्में कल्पनाकेबीजभूतअज्ञानकाअभावहै । यातेविनिगमनाविरहदोषकी प्राप्तिकाअभावहोनेसे शिष्यकीश्रवणादिकों मेंप्रवृत्तिकासंभवहै । इस प्रकारसर्वअनात्मपदार्थोंको कल्पितपनाहै । औरभेदकानिरूपणभी

कोई करनेको समर्थ नहीं ॥ और प्रत्यक्षादिप्रमाणाभास भेदको विषय नहीं कर सकते ॥ और अविद्याका विद्याकर उपमर्दन होनेका स्वभाव है ॥ और अन्वयव्यतिरेकादिकोंसे शोधन किये हैं तत्त्वंपदार्थ जिसने ऐसे अधिकारीको गुरु उपदिष्ट तत्त्वमस्यादि महावाक्यसे भागत्याग लक्षण कर विद्याकी उत्पत्तिका भी संभव है । और उत्पन्न हुई विद्याकरके सच्चिदानंदस्वरूप ब्रह्मात्माके अभेदका आवरण जो अज्ञान तिसका बाध होता है ॥ तिससे निर्दोष तथा सच्चिदानंदस्वरूप ब्रह्म मैं हूँ इस प्रकारके स्वरूपसे अधिकारी अविद्यस्थित हूँ आकृतार्थताको प्राप्त होता है । इसरीतिसे अब इस आनंदपदकी व्याख्याको उपसंहार करते हैं । जिस कारणसे विनिगमनाविरहादि दोषोंका अभाव है । तिसी कारणसे शास्त्र तथा गुरुके प्रसादसे प्राप्त जो तत्त्वमस्यादि महावाक्य तिनसे उत्पन्न हुए आत्मसाक्षात्कारसे मोक्षके आविर्भावका प्रतिबंध जो अज्ञानतत्कार्य तिसका बाध होता है । तिससे अनंतर नित्य तथा शुद्ध अज्ञान तथा मुक्तस्वभाव और अद्वितीय तथा आनंदस्वरूप ब्रह्म मैं हूँ । ऐसे यह अधिकारी मानता है । तिससे अनंतर सर्वकर्तव्यका अभाव रूपकृतकृत्यताको प्राप्त होता है ॥ इसी कारणसे ग्रंथके आदिश्लोकमें श्रेष्ठ कथन किया है ।

✽ आत्मानमानंदं साक्षात् विनिश्चित्य ✽

अ० ॥ आनंदस्वरूप आत्माका श्रुतिसे साक्षात् निश्चय करके यह अधिकारी कृतार्थ होता है ॥ इति ॥ पूर्वकथनकी हुई युक्तियोंको श्रुतिमूलकता होनेकर तिनमें आभासपनेकी निवृत्तिकरनेके लिये आत्माकी आनंदस्वरूपता कथन करनेवाली श्रुतियोंको पठन करते हैं ।

✽ विज्ञानमानंदं ब्रह्म ✽ (बृ० उ० अ० (५) ब्रा० ६ कं० २८)

अ० ॥ विज्ञानतथाआनंदस्वरूपब्रह्म है ॥ और

❀ कोह्येवान्यात्कः प्राणयाद्यद्येपत्राकाशआनंदो
नस्यात् ॥ तै० उ० ब्र० व० अनु० ७) ❀

अ० ॥ यदिहार्दाकाशमें यहआनंदस्वरूपआत्मानहोतोअपान
चेष्टाकोकौनकरेतथा प्राणानचेष्टाकोकौनकरे। क्योंकिआनंदपूर्वकही
प्राणऔरअपानकी क्रियाहोतीहै ॥ और

❀ सैषानंदस्य मीमांसाभवति॥ तै० उ० ब्र० व० अनु० ८ ❀

अ० ॥ सोयहआत्माके आनंदस्वरूपका विचारहै ॥ इत्यादि
वाक्यसेलेकर ॥

❀ यश्चायं पुरुषेयश्चासावादित्येसएकएव ॥ ❀

(तै० उ० ब्र० व० अनु० ८)

अ० ॥ जोयहआनंदस्वरूपआत्माइसशरीरमेंहै। औरजोवहआनंद
स्वरूपआत्माआदित्यमंडलमें है वहएकहीहै । इत्यादिवाक्यपर्यंत
तैतरेयउपनिषद्गत आनंदवल्लीमें आत्माकीआनंदस्वरूपता कथन
कीहै । औरतिसीउपनिषद्गतभृगुवल्लीमें ॥

❀ भृगुर्वैवारुणिवरुणापितरमुपससार अधीहिभग
वोब्रह्मेति ॥ तै० उ० ब्र० व० अनु० १ ❀

अ० ॥ वरुणाऋषिकापुत्रभृगुऋषि अपनेवरुणापिताकेसमीप
प्राप्तहुआ । औरकहाहेभगवन्मुझेआपब्रह्मउपदेशकरो ॥ इत्यादि
वाक्यसेलेकर ॥

❀ आनंदोब्रह्मेतिव्यजानात् तै० उ० ब्र० व० अनु० ६ ❀

अ० ॥ आनंदस्वरूपब्रह्म है ऐसे भृगुने जाना इस वाक्यपर्यंत आत्माकी आनंदस्वरूपता कथनकी है । और छांदोग्य उपनिषद्के षष्ठम अध्यायमें भी ॥ (यो वै भूमा तत्सुखं नात्ये सुखमस्ति)

अ० । जो व्यापक वस्तु है वह सुखस्वरूप है । परिच्छिन्न वस्तुमें सुख नहीं है इत्यादि वाक्योंकर आत्माकी आनंदरूपता कथनकी है । यहां अनेक वेदकी शाखागत श्रुतियोंको पठन करनेवाले सिद्धांताने आत्माकी आनंदस्वरूपताके प्रतिपादक वाक्योंका स्वार्थमें तात्पर्य है । इसमें अभ्यास रूपलिंग दिखलाया है ॥ और केवल श्रुतिप्रमाणसे ही आत्माकी आनंदरूपता सिद्ध नहीं किंतु मैत्रेयी ब्राह्मणमें युक्तिकर भी आत्माकी आनंदरूपता सिद्ध है ॥ तथाहि ॥

❀ नवात्ररेपत्युः कामायपतिः प्रियो भवति आत्म
नस्तु कामायपतिः प्रियो भवति । ६० उ० मैत्रा० कं० ६

अ० ॥ अरे मैत्रेयीपतिकी कामनाके लिये स्त्रीको पतिप्यारानहीं किंतु अपनी कामनाके लिये पतितिसको प्यारा है । इत्यादि वाक्यसे लेकर

❀ नवात्ररे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति आत्मन
स्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति ॥ (६० उ० मै० ब्रा० कं० ६)

अ० ॥ अरे मैत्रेयीसर्वकी कामनाके लिये सर्वप्यार नहीं किंतु आत्माकी कामनाके लिये सर्वप्यारे हैं । इस वाक्यपर्यन्त आत्माकी आनंदस्वरूपता युक्तिसे कथनकी है याते पूर्व उक्त युक्तियें आभासरूप नहीं । इति । ४२

❀ अथ पूर्वपक्ष । आत्माकी आनंदरूपताकी
असिद्धि निरूपणा ❀

आत्माकी आनंदरूपताश्रुतियोंने प्रतिपादनकी है। ऐसे कथन करनेवाले सिद्धांतीने ब्रह्मरूप आत्मामें आनंदत्वधर्मकथन किया है। यह हमको प्रतीत होता है। तैसे सत्त्वित् आदिशब्दोंके प्रयोगकर्ता सिद्धांतीने ब्रह्मात्मामें सत्त्व तथा चित्त्वादिधर्मभी अर्थसे कथन किये हैं। यह भी प्रतीत होता है। तिसमें हम यह विचार करते हैं। हे सिद्धांतिन् आनंदत्वादिधर्म आत्मामें वर्तते हैं। अथवा नहीं वर्तते। आनंदत्वादिधर्म आत्मामें हैं। इस प्रथमपक्षमें यह विचारणीय है। क्या वह धर्म सत्य है अथवा आरोपित है प्रथमपक्षमें तो द्वैतकी प्राप्ति होगी और द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि वह आनंदत्वस्वरूप से ही कल्पित है। अथवा आत्मामें ही वह कल्पित है। यह विचारकर्तव्य है प्रथमपक्षमें तो धर्मोंको अनानंदरूपताकी प्राप्ति होगी। अर्थ यह कोई पदार्थ आनंदस्वरूप नहीं सिद्ध होगा ॥ अब द्वितीयपक्षको अन्य अर्थके कथन द्वारा निषेध करते हैं ॥ जैसे रजतत्व जिस अधिकरणमें आरोप किया जाता है वह अधिकरण रजतरूप नहीं होता ॥ तैसे आनंदत्व भी आत्मामें आरोपित है वह आत्मा आनंदस्वरूप नहीं हो सकता ॥ शंका ॥ हेवादिन् यह अनानंदत्व जो आत्मामें तुम आपादन करते हो सो क्या है। आनंदसे भिन्नको अनानंदत्व कहते हो। अथवा आनंदत्वके अनधिकरणत्वको अनानंदत्व कहते हो? प्रथमपक्षमें तो हमको आपाद्यकी अप्रसिद्धि है क्योंकि आनंदसे भिन्न घटादिक अनात्मा हैं। आत्मा आनंदसे भिन्न नहीं याते आपादन करने योग्य आनंदत्व तिसमें नहीं प्राप्त होता ॥ समाधान ॥ यद्यपि आनंद भिन्नत्वरूप अनानंदत्व सिद्धांतीके प्रति आपादन करने योग्य नहीं तथापि आनंदत्वानधिकरणत्वरूप अनानंदत्व तिसमें होनेकर आनंदरूपता सिद्ध नहीं हो सकती। इसी अर्थको सिद्ध करनेके

लिये प्रसंगसे आत्मामें आनंदत्व असत् है इस आद्यद्वितीयपक्षको भी दूषित करते हैं। और यह द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि आनंदत्वके अनधिकरणमें आनंदव्यवहारकहीं देखनेमें नहीं आता। अर्थ यह कि व्यवहारनाम शब्दप्रयोगका है। और आनंदपदकी आनंदत्वविशिष्टमें ही शक्तिग्रहणाकी है याते आनंदत्वके अनधिकरणघटादिकोंमें आनंदपदका प्रयोगलक्षणव्यवहार जैसे देखनेमें नहीं आता। तैसे आत्मामें भी आनंदपदका प्रयोगलक्षण व्यवहार नहीं होगा। इस प्रकार आनंदत्वानधिकरणत्वरूप अनानंदत्वही सिद्धांतीके प्रति आपादन करने योग्य है। शंका। हेवादि नृजहां प्रसिद्ध विषयानंदोंमें आनंदपदकी शक्तिग्रहणा होती है। तहां अनंत्यतथाव्यभिचारदोषके दूर करनेके लिये आनंदत्वविशिष्ट आनंदव्यक्तियोंमें आनंदशब्द प्रवृत्त हो परन्तु यह ब्रह्मानंदतो उपस्थित नहीं है। क्योंकि सर्वप्रमाणोंसे अतीत होनेकर अलौकिक है। तिस कारणसे आनंदत्वानधिकरणब्रह्मानंदमें लौकिकव्यवहारका अभाव आपादन करना हमको अनिष्ट नहीं। और (यौवैभूमातत्सुखम्) इस वैदिकसुखादिशब्दके प्रयोगसे परीक्षकपुरुषोंको तिस अलौकिक ब्रह्मानंदमें आनंदव्यवहार संभवता है। जैसे स्वर्गमें वैदिकसुखादिशब्दसे सुखव्यवहार परीक्षकोंको स्वीकारा है। याते आत्मा आनंदस्वरूप है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांति नृ अलौकिक आनंदके स्वीकारकरे हुए ब्रह्मानंदमें वैदिकशब्दोंसे आनंदव्यवहार सिद्ध हो जायेगा ऐसे कथन करनेवाले आप हमारे कर पूछने योग्य हो। क्या पदार्थरूपता करवेद अलौकिक आनंदको प्रतिपादन करता है। अथवा वाक्यका अर्थरूपताकर प्रतिपादन करता है? प्रथमपक्षकहो तो नहीं संभवता। क्योंकि लौकिक तथा वैदिक पदोंका एकही अर्थ है ॥ शंका ॥ लौकिक

आत्माकी आनंदरूपताश्रुतियोंने प्रतिपादनकी है। ऐसे कथन करनेवाले सिद्धांतीने ब्रह्मरूप आत्मामें आनंदत्वधर्मकथन किया है। यह हमको प्रतीत होता है। तैसे सतचित् आदि शब्दोंके प्रयोगकर्ता सिद्धांतीने ब्रह्मात्मामें सत्त्व तथा चित्वादिधर्मभी अर्थसे कथन किये हैं। यह भी प्रतीत होता है। तिसमें हम यह विचार करते हैं। हे सिद्धांतिन् आनंदत्वादिधर्म आत्मामें वर्तते हैं। अथवा नहीं वर्तते। आनंदत्वादिधर्म आत्मामें हैं। इस प्रथम पक्षमें यह विचारणीय है। क्या वह धर्म मत्त्य है अथवा आरोपित है प्रथम पक्षमें तो द्वैतकी प्राप्ति होगी और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि वह आनंदत्वस्वरूप से ही कल्पित है। अथवा आत्मामें ही वह कल्पित है। यह विचारकर्तव्य है प्रथम पक्षमें तो धर्माको अनानंदरूपताकी प्राप्ति होगी। अर्थ यह कोई पदार्थ आनंदस्वरूप नहीं सिद्ध होगा ॥ अत्र द्वितीय पक्षको अन्य अर्थके कथन द्वारा निषेध करते हैं ॥ जैसे रजतत्वजिस अधिकरणमें आरोप किया जाता है वह अधिकरणरजतरूप नहीं होता ॥ तैसे आनंदत्व भी आत्मामें आरोपित है वह आत्मा आनंदस्वरूप नहीं हो सकता ॥ शंका ॥ हेवादिन् यह अनानंदत्व जो आत्मामें तुम आपादन करते हो सो क्या है। आनंदसे भिन्नको अनानंदत्व कहते हो। अथवा आनंदत्वके अनधिकरणत्वको अनानंदत्व कहते हो? प्रथम पक्षमें तो हमको आपाद्यकी अप्रसिद्धि है क्योंकि आनंदसे भिन्न घटादिक अनात्मा हैं। आत्मा आनंदसे भिन्न नहीं पाते आपादन करने योग्य आनंदत्व तिसमें नहीं प्राप्त होता ॥ समाधान ॥ यद्यपि आनंद भिन्नत्वरूप अनानंदत्व सिद्धांतीके प्रति आपादन करने योग्य नहीं तथापि आनंदत्वानधिकरणत्वरूप अनानंदत्व तिसमें होनेकर आनंदरूपता सिद्ध नहीं हो सकती। इसी अर्थको सिद्ध करनेके

लिये प्रसंगसे आत्मा में आनंदत्व असत् है इस आद्यद्वितीयपक्षको भी दूषित करतें हैं। और यह द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि आनंदत्वके अनधिकरणमें आनंदव्यवहारकहीं देखने में नहीं आता। अर्थ यह कि व्यवहारनाम शब्दप्रयोगका है। और आनंदपदकी आनंदत्वविशिष्टमें ही शक्तिप्रहणकी है याते आनंदत्वके अनधिकरणघटादिकोंमें आनंदपदका प्रयोग लक्षणव्यवहार जैसे देखने में नहीं आता। तैसे आत्मा में भी आनंदपदका प्रयोग लक्षणव्यवहार नहीं होगा। इस प्रकार आनंदत्वानधिकरणत्वरूप अनानंदत्वही सिद्धांतीके प्रति आपादन करने योग्य है। शंका। हेवादिन्जहां प्रसिद्धविषयानंदोंमें आनंदपदकी शक्तिप्रहण होती है। तहां आनंत्यतथाव्यभिचारदोषके दूर करनेके लिये आनंदत्वविशिष्ट आनंदव्यक्तियोंमें आनंदशब्द प्रवृत्त हो परन्तु यह ब्रह्मानंदतो उपस्थित नहीं है। क्योंकि सर्वप्रमाणोंसे अतीत होनेकर अलौकिक है। तिस कारणसे आनंदत्वानधिकरणब्रह्मानंदमें लौकिकव्यवहारका अभाव आपादन करना हमको अनिष्ट नहीं। और (यो वैभूमात्सुखम्) इस वैदिकसुखादिशब्दके प्रयोगसे परीक्षकपुरुषोंको तिस अलौकिक ब्रह्मानंदमें आनंदव्यवहार संभवता है। जैसे स्वर्गमें वैदिकसुखादिशब्दसे सुखव्यवहारपरीक्षकोंको स्वीकार है। याते आत्मा आनंदस्वरूप है ॥ समाधान ॥ हे सिद्धांतिन् अलौकिक आनंदके स्वीकारके हुए ब्रह्मानंदमें वैदिकशब्दोंसे आनंदव्यवहार सिद्ध हो जायेगा ऐसे कथन करनेवाले आप हमारे करपूछने योग्य हो। क्या पदार्थरूपता करवेद अलौकिक आनंदको प्रतिपादन करता है। अथवा वाक्यका अर्थरूपताकर प्रतिपादन करता है? प्रथमपक्षकहो तो नहीं संभवता। क्योंकि लौकिकतथा वैदिक पदोंका एक ही अर्थ है ॥ शंका ॥ लौकिक

प्रमाणकीविषयतातथाअविषयताकर विषयानंदतथाब्रह्मानंदकीविलक्षणतापूर्वकथनकीहै ॥ समाधान ॥ इसअवांतरविषयतासे यदि लौकिक तथावैदिकपदोंका एकअर्थनहींमानोगेतोलोकवेदाधिकरणन्यायकाविरोधप्राप्तहोगा। औरजैसेनीलपीतादि अवांतरअनेकप्रकारकापटव्यक्तियोंकापरस्परभेदहुएभी सामान्यपटत्वरूपताकर उपस्थितहुए तिनसर्वपटोंकोपटशब्दकीवाच्यताहै ॥ तैसेसर्वआनंदव्यक्तियोंकापरस्परअवांतरभेदहुएभी सामान्यआनंदत्वरूपताकर वेष्टितकीहुई तिनसर्वआनंदव्यक्तियोंको आनंदपदकी वाच्यतायुक्तहीहै ॥ और यदिऐसेकहो कि लौकिक आनंदशब्दकीही आनंदत्वविशिष्टव्यक्तिमें शक्तिग्रहणकीहै वैदिकआनंदशब्दकीनहीं। सोयहकथनभी समीचीन नहीं । क्योंकिलौकिकतथावैदिक शब्दोंकाअभेदहै। औरतिनशब्दोंकेभेदकाकथन स्वरादिउपाधिप्रयुक्तहै । इसप्रकारआनंदत्वकेअनधिकरणयात्मामें आनंदव्यवहारनहींसंभवता । लोकवेदाऽधिकरणन्यायजोपूर्वकहाथा। सोपूर्वमीमांसाके प्रमाणलक्षणरूपप्रथमअध्यायमें स्थितहै ॥ तथाहि

❁ प्रयोगचोदनाभावादर्थैकत्वमविभागात् ॥❁

पृ० मी० ॥ १ ॥ ३ ॥ २६ ॥

अ० ॥ इमयाकृतिअधिकरणमें उपोद्घातरूपताकरलौकिक तथावैदिकपदपदार्थोंकाभेदतथाअभेद विचारकियाजाताहै ॥ तहांयह अधिकरणरचनाहै । लौकिकतथावैदिकपदपदार्थोंकाभेदहै । अथवा अभेदहै?। इममंगयंकहुएपूर्वपक्षप्राप्तहुआ लोकनयावेदमेंपदोंकाभेदहै । क्योंकिस्वर्गादिधर्मकाभेद प्रतीतहोताहै ॥ अंशपदोंकेभेदसेतिन

के अर्थका भी भेद है ॥ ऐसे पूर्वपक्षके प्राप्त हुए सिद्धांतनिरूपण करते हैं ॥ (अर्थेकत्वं) पद तथा पदार्थोंका अर्थभेद है। क्योंकि (अविभागात्) यहाँ प्रत्यक्षप्रत्यभिज्ञा होती है। जो ही वर्णलौकिक पदमें प्रतीत होते हैं वही वर्ण वैदिक पदमें प्रत्यभिज्ञाके विषय प्रतीत होते हैं ॥ और वर्णात्मक ही पद होता है। तिसकारणसे लौकिक पदसे वैदिक पदका भेद नहीं सिद्ध हो सकता ॥ और जो स्वरादि धर्मभेदसे पदोंका भेद पूर्वपक्षीने कहा था वह भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि अर्थके भेदका कारण जो धर्मभेद है वही पदके भेदका हेतु है ॥ और सर्वही धर्मभेदके हेतु नहीं संभवते ॥ क्योंकि विकल्पसे होने वाले स्वरादिकों में व्यभिचार है ॥ अर्थ यह तहां धर्मका भेद हुए भी पदका भेद नहीं है ॥ इस प्रकार लौकिक तथा वैदिक पद पदार्थोंका अर्थभेद माने हुए क्रिया तथा कारकका संबंधरूप प्रयोगविधियोंका भी संभव है ॥ और यदि तिनका एकत्व नहीं मानेंगे तो वैदिक पदार्थके ज्ञानका उपाय न होनेकर और संबंधको शास्त्रमात्रकर सिद्ध होनेसे (प्रयोगचोदनाभावात्) प्रयोगविधियोंका अभाव प्राप्त होगा। याते लौकिक तथा वैदिक पदार्थोंका अर्थभेद ही स्वीकार करने योग्य है। इस प्रकार पदार्थरूपताकर वेद अलौकिक आनंदको प्रतिपादन करता है यह प्रथमपक्ष नहीं संभवता। और वाक्यार्थरूपताकर वेद आनंदस्वरूपताको प्रतिपादन करता है यह द्वितीयपक्ष भी समीचीन नहीं। क्योंकि वाक्यार्थरूपताकर भी आनंदत्वका प्रतिपादन नहीं कर सकते। अखंडार्थमें वेदका तात्पर्य स्वीकार है। विशिष्ट अर्थमें नहीं। और हमारे मतमें तो लौकिक तथा वैदिक सर्ववाक्यों में वाक्यार्थ अलौकिक ही है। याते लोकवेदाधिकरणन्यायका विरोध नहीं। और ब्रह्मानंदको कामनाका विषय होनेसे भी अलौकिकपन नहीं। क्योंकि

सर्वप्रकारसे अलौकिक आनंदमें किसीको भी कामना नहीं संभवती। स्वर्गादिकोंको भी लौकिक सुखके सजातीय होनेसे ही पुरुषोंकी तिनमें कामना होती है। इस प्रकार दैतापत्ति आदिक दोषोंसे आनंदत्वका सत्तथा अस्त रूपताकर आत्मा में निरूपण होनेसे आत्मा आनंदरूप नहीं। इति पूर्वपक्षः॥

❀ अथ एकदेशी संक्षेप शारीरकाचार्यके मतसे

पूर्वपक्षका समाधान निरूपण । ❀

इस पूर्वपक्षका समाधान कोई एक आचार्य ऐसे कहते हैं। अनानंदकी व्यावृत्ति मात्र ही आनंदत्व है प्रसिद्ध विषयानंदस्वरूप ही आत्मानहीं। क्यों कि धर्म धर्मिभाव अनंगीकार है यह वार्ता सर्वज्ञात्ममहामुनियों ने कथन की है

❀ ब्रह्मेतराणि किल नास्य वपूषितेषां बुद्धौ स्फुरन्त्य
पररूपनिवृत्तिभावात्॥

अ० ॥ ब्रह्मसे भिन्न नित्यत्वादिक इस ब्रह्मका स्वरूप रूपताकर बुद्धिमें नहीं स्फुरण होते। क्योंकि तिन नित्यत्वादिकोंको कालपरिच्छेदादिकोंकी निवृत्तिरूपता है ॥ याते “आत्मानंदः” इसका क्या अर्थ है ऐसी अपेक्षाके हुए कहते हैं। अनानंदकी व्यावृत्ति मात्र ही आनंदपदका अर्थ है। तिसकारणसे अनानंदकी व्यावृत्तिरूप उपाधिसे आत्मा में आनंदशब्द प्रवृत्त होता है। आनंदत्वधर्मको सन्मुखरखकर आनंदशब्द आत्मा में नहीं प्रवृत्त होता ॥ याते पूर्वउक्त विकल्पोंका अवकाश नहीं। शंका ॥ आनंदत्वधर्मकी न्याई वह व्यावृत्ति भी क्या सत् है अथवा अस्त है? इस विकल्पसे दैतापत्यादि दोष पूर्वकी न्याई ही अवस्थित हैं। समाधान ॥ हेवादि नव्यावृत्तिसे दैतकी प्राप्ति नहीं होती ॥ क्योंकि तिस व्यावृत्तिको अधिष्ठान आत्मासे भिन्नपान नहीं है ॥ इस प्रकार आनंदत्वधर्मको लेकर जो दूषणवादीने

कहेथेतिनकोनिषेधकरके अतिसीन्यायसेज्ञानत्वादिधर्मप्रयुक्तदूषण
समुदायकोनिषेधकरतेहैं ॥ अज्ञानव्यावृत्तिहीज्ञानशब्दसेप्रतीतहोती
है ॥ यातेअज्ञानकीव्यावृत्तिस्वरूपआत्मामेंही ज्ञानशब्दकीप्रवृत्तिहै
ज्ञानत्वधर्मविशिष्टआत्मामें ज्ञानशब्दकीप्रवृत्तिनहीं ॥ यहरीति
सत्यादिशब्दोंमेंभीजानलेनी ॥ इति ॥

❀ अथ एकदेशीके मतकी असमीचीनताकानिरूपण ❀

सोयहएकदेशीकामतसमीचीननहीं। तथाहि । आत्मामेंआनंदादि
शब्दकीप्रवृत्तिमेंव्यावृत्तिक्याउपाधिहै। अथवाआनंदादिपदोंकावहवाच्य
है? प्रथमपक्षकहोतोवहनहीं संभवता। क्योंकिव्यावृत्तिकोआत्मासेभिन्न
तुमनेमानानहीं। इसीसेतिसकोउपाधिरूपतायुक्तनहीं । औरद्वितीयपक्ष
भीनहींसंभवता। क्योंकिव्यावृत्तिकिसीपदकाअर्थनहींहै। औरव्यावृत्तिको
पदार्थमानेहुएअपोहवादकीप्राप्तिभीहोगी॥ औरअन्योऽन्याश्रयदोषकी
प्राप्तिसेअपोहवादभीयुक्तनहीं। क्योंकिव्यावृत्तिकीसिद्धिअर्थव्यावर्तक
धर्मअवश्यकथनकरनेयोग्यहै। अन्यथाव्यावृत्तिकीही सिद्धिनहींहोगी
औरव्यावर्तकधर्मकीसिद्धिव्यावृत्तिकेआधीनहै ॥ औरयदिस्वरूपसे
व्यावृत्तिकीसिद्धिकहो तोयहभी समीचीननहीं। क्योंकिआत्माअव्या
वृत्तस्वरूपहै । यदिआत्माकोअव्यावृत्तस्वरूपनहींमानोगे तोवस्तुपरि
च्छेदयुक्तहोनेसे तिसकोअब्रह्मपनाप्राप्तहोगा ॥ यातेयहमतसमीचीन
नहीं ॥ इति ॥

❀ अथ एकदेशिविवरणाचार्यकीरीतिसेपूर्व

पक्षकासमाधान ❀

औरकोईअन्यथाचार्ययहकहतेहैं । आनंदत्वादिधर्म जिनमें

कल्पितहैं वहहीआनंदादिपदोंकेअर्थ लोकतथावेदमेंप्रसिद्धहैं॥शंका लोकमेंतोविषयजन्यसुखकोहीआनंदकहतेहैं। तिसमेंआनंदत्वकल्पित नहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन् तिसविषयसुखमेंभीआनंदत्वकल्पित है ॥ औरतिनकाधर्मधर्मिभावभेदाऽभेदरूपताकरननिरूपणाहोनेकर अयुक्तहै ॥ शंका ॥

❀ आत्माकल्पितःकल्पितधर्माऽधारत्वात् ।

मिथ्यारजतवत् ❀

अ०॥ आत्माकल्पितहै। कल्पितधर्मकाआधारहोनेसे । जोजो कल्पितधर्मकाआधारहोताहै । सोसोमिथ्याहोताहै । जैसेमिथ्यारजत है॥ इति ॥ इसअनुमानसेआत्माकोकल्पितपनामानेद्वुए पुरुषार्थरूप ताकरवहउपादेयनहींहोगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आनंदत्वको कल्पितमाननेकरआनंदरूपताकी किंचितमात्रभीहानिनहीं । क्योंकि धर्मकोअनुपादेयहोनेकरतिसके आश्रयभूतव्यक्तिकोहीपुरुषार्थरूपता सेउपादेयताहै। औरजोकल्पितधर्मकाआधारहोताहै सोकल्पितहोताहै इसव्याप्तिकाकल्पितरजतके आधाररूपशुक्तिखंडमें व्यभिचारहै । तिस कारणसेयहांयहअनुमानजानना ॥

❀ विमतःआत्माआनंदरूपःआनंदत्वाधिकरणात्वात्।

लौकिकानंदवत् ॥❀

अ० ॥ विवादकाविषयआत्मा आनंदस्वरूपहै।आनंदत्वका अधिकरणहोनेसे ॥ जोजोआनंदत्वकाअधिकरणहै।सोसोआनंदरूप है॥ जैसेप्रसिद्धविषयानंदहै ॥इति॥ इसप्रकारआनंदत्वधर्मकोसन्मुख रखकरआनंदशब्द आत्मामेंप्रवृत्तहोताहै ॥ औरतिसकोकल्पितहोने

करद्वैतकीप्राप्तिभीनहींहोती ॥ इति ॥

❀ अथएकदेशिकेमतकानिराकरणा ॥❀

सोयहएकदेशीकामतभी विनाविचारसे सुंदरवस्तुकीन्याई सुंदरभासताहै । विचारकरनेसे समीचीननहीं । यहांयहतात्पर्यहै । 'आनंदत्वधर्मआनंदशब्दकीप्रवृत्तिमें उपलक्षणहै।अथवाविशेषणहै?। प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिव्यक्तिमात्रमेंशक्तिहोनेसेअनंत शक्तियोंकीकल्पनाप्राप्तहोगी । औरआनंदपदसेकिसीविशेषव्यक्तिकी प्रतीतिभीनहींहोगी । क्योंकिआनंदत्वधर्म सर्वआनंदव्यक्तियोंका समानउपलक्षणहै । किसीविशेषव्यक्तिकाउपलक्षणहींमाना। याते प्रत्येकव्यक्तिकीसमानरूपतासे उपस्थितिहुए किसीविशेषव्यक्तिकी प्रतीतिआनंदपदसेनहींहोगी । औरद्वितीयपक्षमें यहविचारकर्तव्यहै क्याशुद्धव्यक्तिसेविशिष्टपदार्थभिन्नहै। अथवाअभिन्नहै?। इनमेंप्रथम पक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिविशिष्टकोहीआनंदपदका अर्थहोनेसे व्यक्तिमात्रमें आनंदपदकीवान्यताअनुपपन्नहै।औरतिसविशिष्टको आनंदपदकाअर्थमानेहुएअखंडवाक्यार्थकीअसिद्धिहोगी।औरद्वितीय पक्षभीनहींसंभवता॥ क्योंकिकल्पितआनंदत्वके आश्रयकोअनानंद त्वप्रसंगकीनिवृत्तिनहींहोसकती । 'इसाअर्थकोस्पष्टकरतेहैं ।' जो धर्म जिसअधिकरणमें स्वाभाविकनहीं । वहअधिकरणतिसधर्म वालापदार्थनहींहोसकता।यदिऐसेनहींमाने तोकल्पितरजतकेआधार शुक्तिकोभीरजतपदकीअर्थताहोगी। यहांयहतात्पर्यहै । कल्पितधर्म केआश्रयकोवास्तवसे तिसधर्मकीआधारतानहीं । यदिऐसेनमानेतो धर्मकोकल्पितपनाही नहींसिद्धहोगा ॥ किंवा ॥

❀ आत्माकल्पितः कल्पितधर्माधारत्वात् ॥

।मथ्यारजतवत् । ❀

इसपूर्वोक्तअनुमानसेआत्माकोकल्पितपनाभीहोगा।औरशुक्तिखंडमेंजोहेतुकाव्यभिचारपूर्वकहाथासोभीनहींसंभवता।क्योंकि कल्पितरजतकीआधारताशुक्तिकेस्वरूपप्रयुक्तनहीं।यदिआधारताकोशुक्तिकेस्वरूपप्रयुक्तमानोगेतोरजतकीनिवृत्तिहीनहींहोगी।औरअज्ञातशुक्तिकोहीआधारताहैशुद्धकोनहीं।औरअज्ञानविशिष्टशुक्तिकोशुद्धशुक्तिरूपताकाम्रभावहै।तिसकारणसेहेतुव्यभिचारीनहीं।इसप्रकारदोनोंएकदेशियोंकेमतोंकोनिषेधकरकेअवसिद्धांतीस्वमतकीरीतिसेपूर्वपक्षकासमाधाननिरूपणकरताहै॥

❀ अथसिद्धांतरीतिसे पूर्वपक्षकासमाधान ❀

मू०। उपाधिसंश्रयोह्यात्मा आनंदत्वंतदाश्रयः ।

विशिष्टशक्यपक्षेतु व्यक्तिर्वाशक्तिगाचरः ॥४३

तारकखंड ॥ यहआत्मदेवउपाधियुताहो,विवरूपधरेसुखआनंदतासो

इमवाच्यविशिष्टविषेयहरीता,पदवाचलव्यक्तिविषेसुनमीता।

टी०॥यदिल्लोकमेंआनंदत्वधर्मविशिष्टआनंदहीआनंदशब्दकाअर्थहैतोइसपक्षमेंभीआत्माहीआनंदपदार्थहै।क्योंकिविशिष्टपदार्थविशेषणतयाविशेषादिरूपहीहोताहै।तेसेमानेहुएविशेषणजोआनंदत्वसामान्यहै।औरतिसकाथाश्रयभूतजोआनंदव्यक्तिहैवहदोनोंआत्माहीहैं।आत्माकोउभयरूपताकिसप्रकारहै।ऐसीजिज्ञासाकेहुएकहतेहैंजिसेएकहीस्वरूपजोसर्वकल्पनासेरहितसुखतयाचन्द्रादिहैं॥तिनमेंविंशतयाप्रतिविंशतश्रीस्वरूपयद्दतीनप्रकारकाव्यवहारउपाधिमें

प्रविष्टत्वके आरोपसे अनन्तर देखनेमें आता है। यह पूर्व लक्षणस्थलमें कह आए हैं। तैसे सर्वकल्पनासे रहित एक ही आत्मा अंतःकरणकी वृत्तिविशेष रूपनाना उपाधियोंमें प्रतिविंबित होकर तिन वृत्तियोंकर अचिच्छिन्न हुआ व्यक्तिरूपताको प्राप्त होता है। और उपाधियोंकर भेदको प्राप्त हुई तिन आनंद व्यक्तियोंमें विंबकी न्याई अनुगत बुद्धिका उत्पादक होनेसे आत्मा ही आनंदत्वस्वरूप सामान्यको प्राप्त होता है। याते सर्वप्रकारसे मुख्य आत्मा ही आनंद पदका अर्थ है। इस प्रकार व्यक्ति ही अनुगत बुद्धिका कारण होनेसे सामान्यशब्दका वाच्य है। और विशेषाकार बुद्धिका हेतु होनेसे व्यक्तिशब्दका वाच्य है। यह वार्त्ता तंत्ररत्ननामग्रंथके कर्त्ताने भी कही है ॥

❀ नहिजातिनामव्यक्तेरर्थांतरभूतं किमपितत्त्व
मस्त्यपितुवस्त्वेव हि एकं व्यावृत्तानुगततया बुद्ध्यते।

अ० ॥ व्यक्तिसे भिन्न जातिनामकोई भी पदार्थ नहीं है ॥ किंतु एक ही पदार्थ भिन्न भिन्न तथा अनुगतरूपताकर जाना जाता है ॥ इति आत्माकी उभयरूपतालोकमें अग्रसिद्ध है इस अग्रिप्रयकोलेकर पक्षांतरको सिद्धांतीनिरूपण करता है। अथवा व्यक्ति ही लोकमें तथा वेदमें पदकी शक्तिका विषय है ॥ शंका ॥ व्यक्तिशक्तिवादमें सर्वव्यक्तियोंमें शक्तिका ग्रहण होता है। अथवा किन्ही विशेष व्यक्तियोंमें शक्तिका ग्रहण होता है? प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता। क्योंकि व्यक्तियोंको अनन्त होनेकर पदसे सर्वकी उपस्थिति अनुपपन्न है और द्वितीय पक्ष भी असंगत है। क्योंकि जिन विशेष व्यक्तियोंमें पदका वाच्य वाचकभाव संबंधग्रहण हुआ है तिनसे भिन्न व्यक्तियोंमें प्रवर्तमान हुआ शब्द अपने वाच्यार्थसे व्याभिचारी हो जायेगा। और यदि तिन व्यक्तियोंमें भी अन्यशक्तिकी कल्पना करें तो अनन्त शक्तियों

कीकल्पनाप्राप्तहोगी ॥ यातेव्यक्तिशक्तिपक्षत्रयुक्तहै ॥ समाधान ॥
हेवादिन्जहांदोनोपक्षोंमें तुल्यदोषहोतहांपरिहारकीभीतुल्यताहोती
है ॥ सोयहांविशिष्टशक्तिपक्षमेंभी आनंत्यतथाव्यभिचारदोषकीतुल्य
ताहै ॥ अबआनंत्यादिदोष विशिष्टशक्तिपक्षमेंभी उपपादनकरनेके
लिये सिद्धांतीविशिष्टकी अनेकरूपताकोनिरूपणकरताहै ॥ विशेषण
कोएकहुएभीविशेष्योंके भेदसे विशेष्यविशेष्यप्रतिविशिष्टकाभेदहै ॥
जैसेघटत्वरूप विशेषणकोएकहुएनी धटव्यक्तिरूपविशेष्यकोअनंत
होनेकर विशिष्टभीअनंतहैं ॥ औरयदिऐसेकहोकिविशेषणकोएकहोने
करविशिष्टकीभीएकतासंपादनहोसकतीहै सोयहकथनभीअयुक्तहै ।
क्योंकिअशक्यअर्थके संपादनकरनेकोकोईभीसमर्थनहींहोसकता ॥
औरवहविशिष्टकीएकता असत्होनेसेजाननेयोग्यभीनहीं ॥ याते
विशिष्टकोपदका वाच्यमाननेमेंभी आनंत्य तथाव्यभिचारदोष
अवश्यहीप्राप्तहोताहै ॥ शंका ॥ व्यक्तिकोनानाहुएअनुगतव्यवहार
कैसेसिद्धहोगा ॥ औरवाच्यभूतव्यक्तिकी अन्यअवाच्यपदार्थोंसे
भिन्नरूपताकाप्रतीतिकैसेहोगी । औरआनंत्यादिदोषकापरिहारकैसे
है ॥ समाधान ॥ हेवादिन्जिसकारणमें विशिष्टपक्षमेंभीदोषोंकी
तुल्यताहैतिसकारणसेआनंदपदकाअवाच्यजोवाच्यताकाअवच्छेदक
आनंदत्वहै तिसकरही अनुगत वाच्यव्यवहारतथा अवाच्यकी
व्यावृत्तिव्यवहारसंभवताहै ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन्अवाच्यजोवाच्यता
काअवच्छेदकहै तिसकरअनुगतादिव्यवहारहोताहैयहआपकैसेकथन
करतेहोजिसकारणसेगोपदसेगोत्वविशिष्टव्यक्तिकीहीउपस्थितिहोतीहै ।
याते तिसवाच्यता अवच्छेदकमेंभीपदकीशक्तिहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्

वाच्यता अथच्छेदकमेंशक्तिकल्पनाकरनेमें प्रमाणाकाअभावहै । जैसे कारणताकाअथच्छेदककारणकेस्वरूपसेवाह्यहोताहै । तैसेवाच्यताका अथच्छेदकभीवाच्यसेवाह्यहै । तिसमेंपदकीशक्तिनहीं ॥ औरगोपदसे गोत्वकीप्रतीति तोशक्तिसेविनाभीसंभवतीहै । क्योंकिगोपदकीगो व्यक्तिमेंशक्तिग्रहणसे उत्पन्नहुएसंस्कारकेवलसे गोत्वकीउपस्थिति होतीहै ॥ तिसमेंगोपदकीशक्तिनहीं ॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् इस प्रकारआपकोभी उक्तसंस्कारसहकृतआनंदादिपदसे आनंदत्वविशिष्ट आत्माकीप्रतीतिहोनेसे आनंदपदसेशुद्धकीउपस्थितिनीहोगी ॥ तिस सेअखंडवाक्यार्थ नहींसंभवेगा ॥ समाधान ॥ हेवादिन् आनंदत्वभी पूर्वउत्तरीतिसेआत्माहीहै । क्योंकिव्यक्तिसेभिन्न सामान्यअंगीकार नहींहै ॥ औरउपाधिकोवाच्यकोटिसे तदस्थहोनेकरआनंदादिपदसे शुद्धलक्ष्यार्थकीहीउपस्थितिसंभवतीहै ॥ यातेअखंडार्थकीअनुपपत्ति नहीं ॥ यहअर्थपूर्वनिरूपणकरआएहैं ॥ तिसकारणसेआत्माकी आनंदस्वरूपतामें कोईभीअनुपपत्तिनहीं ॥ इति ॥ ४३ ॥

❀ अथआचार्यकीकृतकृत्यताकानिरूपणा ❀

इसप्रकारआत्माकी आनंदादिरूपताश्रुतितथायुक्तिसे निर्णीत हुएतत्त्वमस्यादिमहावाक्यसेउत्पन्नहुए ब्रह्मात्माकेसाक्षात्कारसेआत्माके आवरकअज्ञानकेबाधितहुए स्वात्मारामजोआचार्य्य है वहअपनीकृत कृत्यता जिज्ञासुकेबोधकी दृढताअर्थप्रकटकरताहै ॥

मू० ॥ आनंदरूपमात्मानंसच्चिद्व्यतत्त्वकम् ।

अपूर्वादिप्रमाणोक्तंप्राप्याहंतद्वपुःस्थितः ॥४४॥

सैया ॥ जाहिनिमित्तसवीप्रियलागत तांहिबुआनदरूपवखाना ॥

बाधविहीनचिदेकसुभावजु आतमद्वैतविहीनलखाना।

श्रुतियुक्तिवखानतजाहसरूपह सोहमितीअपरोक्षपद्याना।

जानभलेनिजयातमकोतरूपअवस्थितमेंनिखाना॥२७॥

टी० ॥ श्रुतिप्रमाण औतिसकेअनुसारीयुक्तिनेजिसआत्माको सत्त्वित्आनंदतथाअद्वैतस्वरूप प्रतिपादनकियाहै ॥ वहसत्त्वित् आनंदतथाअद्वैतस्वरूपब्रह्ममेंहूँऐसेतिसआत्माकोसाक्षात्कारकरकेतिस आनंदादिरूपताकरही मैंस्थितहुआहूँ ॥४४॥ शंका ॥ द्वैतसहितको अद्वयस्वरूपतानहींसंभवती ॥ क्योंकिद्वैतग्राहिप्रमाणकाविरोधहै ॥ समाधान ॥

मू० ॥ योहमद्वयवस्त्वेवसद्वयेदृढनिश्चयः ।

प्राप्यचानंदमात्मानंसोहमद्वयविग्रहः ॥४५॥

नास्तिब्रह्मसदानंदमितिमेदुर्मतिःस्थिता ।

कगतासानजानामियदाहंतद्वयुःस्थितः ॥४६॥

स्व० ॥ द्वैतविहीनजुपूस्वमेंसदु तीयविषेदृढनिश्चितहुया।

आनंदआतमलाभभएअव मैंअदुतीयसरूपसुहुआ ।

सतआनंदआतमनासतभान सदोपसदाथिरमेमनहुआ ।

नहिजानपरेकहिंभागगयोजवहीततरूपअवस्थितहुआ॥३८॥

टी०॥ जोमैंप्रथमअद्वयवस्तुहुआहीभ्रांतिकरद्वैतविशिष्टस्वरूपमेंदृढ निश्चयवालाहुआथा अवआनंदस्वरूपआत्माको प्राप्तहोकरसोईमें अद्वैतस्वरूपस्थितहूँ।तात्पर्ययहहै।अद्वैतस्वरूपआत्माकोसतरूपताकर अधिष्ठानताहोनेसेतिससे भिन्नद्वैतकोअज्ञानकरकल्पितपनाहै। याते द्वैतप्रतीतिकोभ्रमपनाहोनेसे अद्वयस्वरूपतामें किसीप्रमाणकाविरो

धनहीं ॥ ४५ ॥ शंका ॥ ब्रह्मकोसत्स्वरूपहोनेसे अधिग्रानताहै यहकथननहींसंभवता ॥ क्योंकि “ब्रह्मनहीं है” यहप्रतीतिब्रह्मके असत्पनेकोविषयकरतीहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् “अस्तिब्रह्मेति चेद्वैद”इत्यादिश्रुतिजन्यबोधका विरोधहोनेसे वहप्रतीतिनहींसंभवती इसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं ॥ “सच्चिदानंदस्वरूपब्रह्मनहींहै” यहदुष्ट बुद्धिजोमेरेहृदयमेंस्थितथी जवमेंतिसब्रह्मरूपताकर स्थितहुआ तवमें नहींजानता जोवह दुर्बुद्धिकहांचलीगई ॥ ४६ ॥ शंका ॥ पूर्वोक्त दुर्मतिकेनाशहुएभी “देहोहम्” इत्यादिआंतरजगत्ब्राह्मजगत्की न्याईसत्तहै मिथ्यानहीं ॥ समाधान ॥ हेवादिन्यहलुम्हारा दृष्टांत असिद्धहै “तथाहि” ॥

मू०-पूर्णानंदाद्वयेतत्त्वे भेर्वादिजगदाकृतिः ।

बोधेऽबोधकृतैवासीदबोधःक्वगतोऽधुना ॥४७॥

संसाररोगसंग्रस्तो दुःखराशिरिवापरः ।

आत्मबोधसमुन्मेषादानंदाब्धिरहोस्थितः ॥४८॥

स्वै०॥ द्वैतविहीन सुषूनथानद तत्त्वविषेजगत्प्राकृतजोई ।

भासतर्था तमआतमकेवल बोधभएअवसोकतगोई ॥

जगरोगनतेवहुपीडितयो दुखराशिसमानभयोअधमोई ।

बोधनिजातमके प्रगोटअव आनदसिन्धुविषेधिरहोई ॥३६ ॥

टी०॥ पूर्णतथाआनंदथौद्वैतसेरहित अनारोपितस्वरूपआत्मा में मेरुआदिकब्राह्मजगत्काआकारजोभासताहैसोअज्ञानकाकार्यहोनेसे मिथ्याहै ॥ शंका ॥ प्रपंचको अज्ञानकाकार्य मानेहुएभीअज्ञानको अबाधितहोनेसे वहअज्ञानब्रह्मकीन्याईमत्यहै।पातेतत्सूलकजगत्भी

मिथ्यानहींकिंतुसत्यहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्जेसेदीपककेउदयहुए
 प्रतीतनहींहोता जोअन्धकारकहांभागगया ॥ तैसेब्रह्मात्माका
 साक्षात्कारउदयहोनेसे जानानहींजाता जोअज्ञानकहां चलागया ॥
 यातेज्ञानकरबाधकेयोग्य अज्ञानमिथ्याहै औरैतत्मूलकजगत्भी
 मिथ्याहै ॥४७॥शंका॥ ज्ञानतथाअज्ञानकाहीविरोधहै । तिसकारणसे
 सुखस्वरूपआत्माकाआवरक जोअज्ञानहै । तिसकीतत्त्वज्ञानसेनिवृत्ति
 हुएभीसंसारकीनिवृत्तिकैसेहोगी।क्योंकितिसकेसाथज्ञानकाविरोधनहीं
 ॥समाधान॥ हेवादिन्उपादानकीनिवृत्तिहोनेसे कार्यकीभीनिवृत्तिहो
 जातीहै । जेसेतंतुरूपउपादानकेनाशसे पटकानाशहोजाताहै ॥
 इसीअभिप्रायसेकहतेहैं । बोधसेपूर्वजोमेंसंसाररूपरोगसे अत्यंतग्रस्त
 हुआ दुःखकीराशिवत् अतिदीनहुआथा।अवथात्मबोधकेसम्यक्प्रकट
 होनेसेआनंदका समुद्रहुआ मेंस्थितहूं यहअत्यंतहर्षहै (४८) “आनं
 दाब्धिः” यहविशेषणपूर्वकारिकामें जोकहाथा तिसका फलउत्तर
 कारिकामें कहतेहैं ॥

मू० ॥ योहमल्पेपिविपयेरागवानतिविह्वलः ।

आनंदात्मनिसंप्राप्तेसरागःक्वगतोऽधुना ॥४९॥

यस्यमेजगतांकर्तुःकार्यैरपहृतात्मनः ।

आविर्भूतपरानंदआत्माप्राप्तःश्रतेर्वलात् ॥५०॥

स्वै० ॥ जुइमेंअतिअल्पविषेसुखमें अतिरागिव्याकुलभायफिरा।

सत्आनंदआत्मलाभभयेअवरागकहांवहजायधिरा ।

जगकेकरतासुभकोजुसरूप सुकारजनेवहुभांतिहिरा ।

अवआविर्भूतपरानंदआत्म लाभभयोवलवेदशिरा ॥४०

टी० ॥ जोमैं अत्यंततुच्छविषयसुखमेंप्रीतिवालाहुया अत्यंत व्याकुलचित्तहुआथा ॥ अबआनंदस्वरूपआत्माका सम्यक्लाभहुए जानानहींजाता । जोवहरागकहांचलागया । और रागमूलकही प्रवृत्तिहोतीहै । औरनिरतिशयसुखमेंसर्वविषयसुखोंका अंतर्भावहोनेसे निरतिशयसुखकेप्राप्तहुए वहसर्वविषयसुखप्राप्तहोजातेहैं। औरप्राप्तवस्तुमें कामनाकाअभावहोताहै।यातेविषयसुखकेअर्थप्रवृत्तिकाअभावसंभवता है॥४१॥ शंका ॥ अज्ञानकोआनंदस्वरूपआत्माकाआवरकपनानहीं संभवता ॥ क्योंकि सुषुप्तिकालमें अज्ञानकोविद्यमानहुएभीसुखकी प्रतीतिहोतीहै। यदिऐसेनमाने तो “सुखमहमस्वाप्सम्” यहस्मरणभी सुषुप्तिसेउठेहुएपुरुषको नहींहोगा ॥ समाधान॥ हेवादिन् कार्याकार परिणामकोप्राप्तहुयाअज्ञान सुखकेभानकाप्रतिबंधकहै । स्वरूपसे प्रतिबंधकनहीं । इसीअभिप्रायसेकहतेहैं । जिसमुक्तजगतकेअधिष्ठानकास्वरूपबोधसेपूर्व कार्याध्यासोंकरआच्छादितथा । अबश्रुति जन्यबोधसेवहीमेरापरमानंदस्वरूप निरावराणहुयाप्राप्तहुयाहै ॥५०॥ शंका ॥ हेसिद्धांतिन् आत्माप्रथमसर्वकोअपरोक्षभानहोताहै ॥ क्योंकि “अहमस्मि” यहप्रतीतिसर्वकोहोतीहै ॥ औरतिसआत्मासे भिन्नब्रह्मभीअपरोक्षहै । औरआत्मापूर्वउक्तरीतिसे भानहोताहीहै॥ तैसेमानेहुए ब्रह्मसाक्षात्कारतोप्रथमहीसिद्धहै। पुनःसंसारकाभानकैसे होताहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन् यहांआत्माकाज्ञानतुमकेसाकहतेहो क्या “मैंकर्ताहूँ” इसप्रकारकाआत्माकाज्ञानहै ॥अथवा “मैंशुद्धब्रह्म स्वरूपहूँ”ऐसाआत्माकाज्ञानहै।इनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता।क्योंकि वहज्ञानतोअनात्माको विषयकरनेवालाहै । तिससे संसारकीप्रतीति

दूरनहीं होसकती। औरद्वितीयपजभीनहींसंभवता क्योंकिविचारसेप्रथम
ऐसेआत्मसाक्षात्कारकी असिद्धिहै । इसीतात्पर्यसेकहतेहैं ॥

मू० ॥ परामृष्टोसिलब्धोसिप्रोपितोसिचिरंमया ।

इदानींत्वामहंप्राप्तोन्त्यजामिकदाचन ॥५१॥

त्वांविनानिःस्वरूपोहंमांविनात्वंकथंस्थितः ।

दिष्टयेदानींमयालब्धोयोसिसोसिनमोस्तुते५२

स्वे०॥ चिरकालवियुक्तहुते मुझसे अनवेपनतेअवलाभतुझे ।

तुझकोहुइप्रापतमेंअवही नहिदूरकरोंकवहींतुझे ।

किहुतोरविनाममरूपनहीं अरुमोरविनायितकैसतुझे ।

हमरेकरलब्धभए अवहो पुनजोतुम मोतुमवंदतुझे॥५१॥

टी० ॥ हे परमात्मन् दीर्घकालसे आपमेरेसेवियुक्तहुएथे।अब
वेदांतविद्यामेंआपकालाभहुआहै।अबआपकोमें अभेदरूपतासे प्राप्त
हुआ कदाचिनत्यागनहींकरेंगा ॥ ५१ ॥ शंका ॥ तुमत्यागकरदो
निममेकयादोपहैं ॥ समाधान ॥ हेपरमात्मन् आपसेविनामें निःस्व-
रूपहूं । क्योंकिब्रह्मकोमनरूपहोनेकर निगमेभिन्नको अमत्पनेकी
प्राप्तिहोगी । इसकागामेआपकात्यागनहींसंभवता । औरमुझसेविना
आपकीभीमिथिनि केमेसंभवेगी।क्योंकिब्रह्मको प्रत्यगात्मामेंभिन्नमाने
हुए जडताकी प्राप्तिहोतीहै । इसलिये आपकोभीमेरा त्यागनहीं
संभवता । अत्यंतहर्षहै जोआजमुझसे अभिन्नरूपताकरआपप्राप्तहुए
हो । इसकागामेजेमेआपहो वेमेआपहीहो अन्यकिसीको आपकी
तुल्यताका अभाव होनेमे आपउपमामे गड़ितहो । यदि आप
कोनमस्कोहैं ॥ ५२ ॥ मिथ्याबंधकोनिवृत्ति रूपउपकाररंजन

होनेसे आपनमस्कारके योग्यहो इसी अभिप्रायसे कहते हैं ॥

मू० ॥ देहेऽहं माननिगडैर्वद्धो ऽवोधाख्यतस्करैः ।

चिरंतेदर्शनादेवत्रुटितं वन्धनं क्षणात् ॥ ५३ ॥

विशुद्धोऽस्मि विमुक्तोऽस्मि पूर्णात् पूर्णात्तमाकृतिः

असंस्पृश्यतमात्मानमंतर्ब्रह्माण्डकोटयः ॥ ५४ ॥

स्वै० ॥ तन आत्म बुद्धि कुबंधहुते तमसंज्ञकचौरनबंधलयो ।

चिरसेतुमरेकरदर्शनदेव कुबंधनतूटछिनेकगयो ।

अतिशुद्ध विमुक्तसरूपअहं पुनपूरनतेअतिपूरभयो ।

ममरूपविपेजगकोटिवसे परताहिसपर्शनलेशभयो ॥ ४२ ॥

टी० ॥ अज्ञानादिकचौरोंने देहविषयकअहंबुद्धिआदिकदृढ
बंधनोंसेजोमेंचिरकालसेबांधाहुआथा। अबहेस्वप्रकारास्वरूपपरमात्मन्
आपके दर्शनमात्रसेही चौरोंकेसहित वहसकलबंधन एकक्षणमें
विनाशकोप्राप्तहोगये ॥ इसहेतुसे आपनमस्कारकेयोग्यहो ॥ ५३ ॥
शंका ॥ बद्धतथामुक्तमेंक्याविलक्षणताहै? ॥ क्योंकिआत्मातोदोनों
मेंतुल्यहै ॥ समाधान ॥ हेवादिन्बद्धतथामुक्तकीविलक्षणतालोकमें
हीप्रसिद्धहै ॥ क्योंकिबद्धपुरुषमें मलिनतातथान्मूनताऔरदीनता
देखनेमेंआतीहै ॥ औरबंधनसेरहितमुक्तपुरुषमें बद्धसेविलक्षणता
शुद्धतादिकदेखेजातेहैं । इसीअभिप्रायसेकहतेहैं ॥ मैंअविद्यादिमलसे
रहितविशुद्धहूँ ॥ क्योंकिद्वितीयवस्तुकाअभावहै । औरपूर्णजो
आकाशादिकहैं तिनसेभीमैंअतिपूर्णहूँ ॥ यातेत्रिविधपरिच्छेदसेमें
रहितहूँ ॥ इसनिरतिशयमहत्त्वकोहीस्पष्टकरतेहैं । मुझमेंआत्माको
नस्पर्शकरकेअनंतब्रह्मांडकल्पितरूपताकरमेरेअधिन्हैं। इसीसेमैंपूर्णसे

अतिपूर्णास्वरूपहं। इसप्रकार आत्माको समानहुए भीज्ञान तथा अज्ञानकृत विलक्षणतामुक्त तथा बद्धमेसंभवती है ॥५४॥ तत्त्वसाक्षात्कारका साधन जो अंतःकरणकी शुद्धि है तिसके हेतु भूतवेदाध्ययन तथा यागादि साधनों का अनुष्ठान भी आत्मसाक्षात्काररूप कार्यलिंगसे ब्रह्मवेत्तामें सिद्ध है । इसी अभिप्रायसे कहते हैं ॥

❀ मृ० ॥ तत्त्वमादिवचो जालमावृत्तमसकृतपुरा ।

इदानीं तत् श्रवादेव पूर्णानंदो व्यवस्थितः ॥५५॥

चौ० ॥ वेदवाक्यजो आह समस्ते । अनेकवार पूर्व अभ्यस्ते ॥

अवतत् श्रौतबोधतेकेवल । पूर्णानंदधिरामेंकेवल ॥४३॥

टी० ॥ पूर्वसकलवेदवचनोंका अनेकवारमेंने अभ्यास किया । यह वेदवचनोंका अभ्यास अन्यसाधनोंका भी उपलक्षक है। इसलिये अष्टा चत्वारिंशत्संस्काररूपवहिरंग तथा नित्यानित्यवस्तुका विवेक तथा वैराग्यादि अंतरंगसाधन भी मुझमें प्राप्त है ॥ अष्टाचत्वारिंशत्संस्कार यह हैं । गर्भाधान १ । पुंसवन २ । सीमंत ३ । जातकर्म ४ । नामकरण ५ । अन्नप्राशन ६ । चौल ७ । उपनयन ८ । चारवेद व्रत १२ । स्नान १३ । सह धर्मचारिणीसंयोग १४ ॥ यह गर्भा धानादिचतुर्दशसंस्कारकहेजाते हैं । चारवेदव्रत यह हैं । प्राजापत्य १ सौम्य २ । आग्नेय ३ । वैश्वदेव ४ ॥ और देवयज्ञ १ । भूतयज्ञ २ पितृयज्ञ ३ । ब्रह्मयज्ञ ४ । मनुष्ययज्ञ ५ ॥ यह पांच महायज्ञ हैं । और अष्टका १ । पार्वण २ । श्राद्ध ३ । श्रावणी ४ । आग्रहायणी ५ । चैत्री ६ । आश्वयुजी ७ ॥ यह सप्तसोमसंस्था हैं । और अग्न्या धान १ । अग्निहोत्र २ । दर्शपूर्णमास ३, ४ । आप्रवण ५ ।

चातुर्मास्य ६ । निरूढपशुबन्ध ७ । यहसप्तहविसंस्थाहैं ॥ और
 सौत्रामणि १। अग्निष्टोम २। अत्यग्निष्टोम ३। उक्थ ४। षोडशि ५।
 वाजपेय ६। अतिरात्र ७। यहसप्तपाकसंस्थाहैं। औरअन्नभक्षणकर
 केवेदसंहिताकाअध्ययन १ । प्रायण २ । कर्म ३ । जप ४ ।
 उत्क्रमण ५ । दैहिक ६ । भस्मकाएकत्रकरना ७ । अस्थियोंका
 संचयन ८ । यहपूर्वउक्तसर्वमिलाकरअष्टाचत्वारिंशत्संस्कारहोतेहैं ।
 सोब्रह्मवेत्तानेयहसर्वही पूर्वअनुष्ठानकरलियेहैंयहभावहै । इसप्रकार
 साधनसंपन्नहोकर गुरुशरणपूर्वकवेदांतविचारसेउत्पन्नहुआ जो आत्म
 साक्षात्कारतिससेहीसुक्तिहोतीहै कर्मसहितज्ञानसेनहीं ॥ इसलिये
 संन्यासकोभीआत्मसाक्षात्कारकीसाधनताहै ॥ इसअर्थकोसूचनकरने
 केलियेकहतेहैं । अबवेदांतश्रवणादिजन्यआत्मसाक्षात्कारसेहीपूर्ण
 तथाआनंदरूपताकर्मस्थितहुआहूँ ॥५५॥ इतिआनंदपदव्याख्या ॥

✽ अथआत्माकीआनंदरूपताकीअस्फुरतिमेंप्रतिबंधकनिरूपणाद्वाराअदृष्टद्वयपदकीव्याख्याकाप्रारंभ ।

अथपूर्वपक्ष ॥ हेसिद्धांतिन् पूर्वआत्माकीआनंदरूपताकथन
 की सोनहींसंभवती ॥ क्योंकिआनंदरूपताकरआत्माप्रतीतनहींहोता
 यहाँयहअनुमानजानना ॥

✽ आत्मानआनंदरूपःतद्रूपेणाप्रतीयमानत्वात् ।
 घटादिवत् ॥✽

अ०॥ आत्माआनंदस्वरूपनहींहै। आनंदरूपताकरनप्रतीतहोनेसे।
 जोआनंदरूपताकरनहींप्रतीतहोता। वहआनंदरूपनहींहोता । जैसे
 घटादिकहैं ॥इति ॥शंका ॥ यहपूर्वपक्षहीनहींसंभवता। क्योंकिअद्वयानंद

रूपताकरतिस आत्माको अज्ञानकी विषयता है ॥ इस स्थलमें पूर्वही आनंद
 ग्रंथको अज्ञानकर आवृत्तपना अस्फुरणमें कारण कथन किया है। याते पुनः
 तिसी अर्थका विचार करनेसे पुनरुक्तिदोप प्राप्त होगा ॥ समाधान ॥
 तथापि आवरण करनेवाले अज्ञानादिविषयक विचार द्वारा तिसी अर्थको
 अत्यंत दृढ़ करनेके लिये “स्थूणानि खननन्याय” से पुनः ग्रंथकर्ता
 आचार्य प्रवर्तमान होता है । याते पुनरुक्तिदोपकी प्राप्ति नहीं ॥ इसीसे
 यदि पूर्णानंदस्वरूप आत्मा है तो संसारकालमें सर्वको क्यों नहीं भान
 होता? ॥ यह पूर्वपत्र संभवता है ॥ शंका ॥ हेवादिन् (मानभूवम्
 किंतु भूयासमेव) अ० ॥ भेन होषो यहन हो किंतु मैं सर्वकाल होषो इस
 प्रकारकी निरुपाधिक इच्छाका विषयरूपताकर आत्मा प्रथम सर्वको भान
 होता है ॥ वही सुखका स्फुरण है ॥ तिससे भिन्न सुख नहीं हैं। भावयह परम
 प्रीतिका विषयरूपताकर जो आत्माका स्फुरण है। यही आनंदस्वरूपका
 स्फुरण है। याते “अप्रतीयमानत्व” हेतुस्वरूपामिद्ध है ॥ समाधान ॥
 हे सिद्धांतिन् । क्या वास्तवसे निरतिशय आनंदरूप आत्मा परम प्रीति
 का विषयरूपताकर भासता है ॥ अथवा निरतिशय आनंदस्वरूपमें हूं
 पेसा यह पुरुष अभिमान करता है? प्रथम पत्र तो हमका भी स्वीकार है । और
 द्वितीय पत्र नहीं संभवता ॥ क्योंकि तिम प्रकारके अभिमानका अभाव है।
 यद्यपि “सुखमहमस्वाप्नम्” इस पदगमरीमें सुखरूपताका यह पुरुष अभि
 मान करता ही है। क्योंकि अनुभवपूर्वक ही स्मृतिज्ञान होता है । तथापि
 एतस्यैवानंदस्याऽन्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति ।

(४० ३० अ० ६ भा० ३ कं ३२)

अ० ॥ इस आनंदस्वरूप आत्माके ही लेश मात्र आनंदको आश्रयण

करकेअन्यसर्वप्राणधारिजीवनको धारणकरतेहैं ॥ इत्यादिश्रुतिसे मोक्षकालमेंजैसाअनंदस्वरूपआत्मासुनाजाताहै।तैसेअनंदकाअभिमानकिसीकोभीनहींहोता ॥ शंका ॥ हेवादिन्जोसुखसुपुष्टिकालमेंभानहोताहैवहभीनिरतिशयसुखहीहै।क्योंकिनित्यआत्मसुखमेंकिसी प्रकारकीअतिशयतानहींसंभवती ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन्

❀ आनंदं ब्रह्मणो रूपं तच्च मोक्षे प्रतिष्ठितम् ❀

अ० ॥ जोआत्माकी आनंदस्वरूपताहै सोमोक्षकालमेंही अवस्थितहै। इसश्रुतिसेमोक्षकालमेंतिस नित्यअनंदकी अभिव्यक्ति श्रवणहोतीहै ॥ यातेसंसारअवस्थासेमोक्षकालमेंअनंदकीअधिकता होनेसे नित्यसुखमेंभी अतिशयताकासंभवहै॥ और“मैआनंदस्वरूप हूं” इसप्रकारकेअभिमानको ज्ञानविशेषहोनेकर सुपुष्टिकालमेंतिसका अभावहै। यातेतिसकालमें आनंदभासताहुआभी स्पष्टनहींभासता। शंका॥ हेवादिन्आत्माके आनंदस्वरूपकीजोअप्रतीतिहै। सोआत्मा कीअनानंदरूपतासेनहीं किलुसंसारअवस्थामें प्रतिबंधकेसद्भावसेहैइस कारणसेआत्माकीआनंदरूपताके भासमानहुएभी इसपुरुषकोविशेष अगिमाननहींहोता ॥ समाधान ॥

अथआनंदरूपताके अभानमेंप्रतिबंधककाविचार ।

हेसिद्धांतिन्वहप्रतिबंधककौनहै । क्याअज्ञानहै॥ अथवातिस काकार्यहै ? प्रथमपक्षमेंभीयह विचारणीयहै ॥ क्याजीवकायज्ञान आनंदरूपताकेभानमेंप्रतिबंधकहै।अथवापरमात्माकाअज्ञानप्रतिबंधकहै? अन्त्यपक्षतोनहींसंभवता । क्योंकिसर्वज्ञ तथानिर्दोष तिसपरमात्मा निष्ठअज्ञानकाअभावहै । औरप्रथमपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकि

❀ नान्योतोस्तिद्रष्टा।अननजीवेनात्मना।तत्त्वमासि।❀

अयमात्माब्रह्म ॥

इत्यादिकश्रुतिवचनोंसे तिसजीवात्माका परमात्माकेसाथअभेद श्रवणहोताहै॥ यातेतिसजीवमेंभी अज्ञानकाअभावहै॥ और्यदिऐसे कहो किजीवनिष्ठभीकल्पनामात्रसेहीअज्ञानहै वास्तवसेनहीं। सोयह कथनभीअसंगतहै। क्योंकिपरमात्मामेंभी अज्ञानप्राप्तहोगा। जिस कारणसेजीवकेसाथ तिसकाअभेदहै ॥ शंका ॥ हेवादिन् अज्ञान जीवात्मामेंभीनहीं है।तथाविंचरूपपरमात्मामेंभीनहीं है।किंतुनिर्विभाग चेतननिष्ठअज्ञानहै। यहपूर्वनिरूपणकियाहै। यातेवहअज्ञानसर्व रूपतासेआनंदकेभानकाप्रतिबंधकहींहै ॥ समाधान ॥ हेसिद्धांतिन् तिसअज्ञानसेआत्माकीआनंदरूपताकाजोप्रतिबंधहै।सोक्यावास्तवहै। अथवाअनवधानमात्रसेआनंदकीअप्रतीतिहोनेसेवहप्रतिबंधकल्पितहै? प्रथमपक्षतोनोंसंभवता॥ क्योंकियदिसंसारअवस्थामेंप्रतिबंधसेरहित आनंदकाभानहीनहींहोता तोकिसकीप्राप्तिसेबंधकीनिवृत्तिहोगी ॥ संसारीकीप्राप्तिसेतोसंसारकीनिवृत्तिनहींसंभवती। और्यदियहद्वितीय पक्षकहो किंसंसारअवस्थामेंभी वास्तवप्रतिबंधसेरहितआनंदविद्यमान हीहै परन्तुआनंदस्वरूपआत्मामें अज्ञानसे “अनवधान” अर्थात् प्रमादमात्रहीप्रतिबंधहै वास्तवसेकोईप्रतिबंधनहीं ॥ इसीअर्थकोउप पादनकरतेहैं।केवलअज्ञानसेउत्पन्नहुआ जोद्वैतरूपसंसार तिसकेअंतः पातिजोशब्दादिविषयरूपविष तिसकेआधीनहुआ जोपुरुषहै। पुनः तिनविषयोंकेदर्शनकालमेंभी तिनकीअत्यंतभावनासे प्रादुर्भावहुई जोविषयरूप छुंडितिसकर जिसकाहृदय आकर्षण कियाहुआहै ॥

पुनःपरमप्रियतमतथासर्व जगतके ईश्वरतथासर्व अंगोंमें थोत प्रोत रूपताकर अत्यंतसमीपस्वस्वरूपकेदर्शनकोक्षणमात्रभी जोप्राप्तनहीं होसकता।यहांपरयंहभी जानलेना (यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म) इसश्रुतिसेसिद्ध जो “अतिसमीपता” तिसकरएकतादर्शनकेयोग्यहै यहसूचनकिया ॥ और (योवैभूमातत्सुखम्) इसश्रुतिसे ब्रह्म कीसुखरूपताश्रवणहोतीहै।सो “परमप्रियतम”इसपदसेकथनकी।और

❀ आनंदोद्धेवखल्वेमानिभूतानिजायंते ❀

अ०॥ आनंदसेही यहदृश्यमानभूतउत्पन्नहोतेहैं । इसश्रुतिसे अनंदस्वरूपआत्माकोजगत् की कारणता श्रवण होनेसेईश्वरपनाभी कथनकिया।और “थोतप्रोत” पदसेउपादानताकथनकी। इति। तिस पूर्वउक्तविशेषणयुक्तपुरुषको विषयोंकेदर्शनसेआत्मामें सुखरूपताका अनवधानमात्रहीप्रतिबंधहै वास्तवसेकोई प्रतिबंधनहीं ॥ जैसेअपने कंठमेंस्थितमालादिकोंकाअज्ञानसेअनवधानमात्रही प्रतिबंधहोता है वास्तवनहीं ॥ शंका ॥ जैसेविषभीऔरपधादिकउपायनसेत्यागाजाता है।तेसेविवेकसे विषयरूपविषका त्यागभीसंभवता है ॥ समाधान ॥ तिन विषयोंके दर्शानादिकोंकीकामनावाले पुरुषको विवेकहीउदय नहींहोसकता । यातेतिसकात्यागनहीं संभवता ॥ शंका ॥ यद्यपि विवेकनहींसंभवता ॥ तथापिविषयानंदको क्षणिकहोनेसेही तिससे वैराग्ययुक्तहोनातोयोग्यहीहै। समाधान ॥ विषयोंकेदर्शनकरहीसर्व आयुकोपूर्णहोनेसेवैराग्यका होनाभीदुर्घटहै। यातेआत्माकीविस्मृति संभवती है । इसप्रकार अद्वैततथासुखस्वरूपआत्मामें दुःखादितथा द्वैतसाहित्यादिकोंकादर्शनहीप्रतिबंधहै । यहांअज्ञानकाकार्यप्रतिबंधहै

यहपूर्वकथनकियाहूयाद्वितीयपक्षइसीके अंतर्भूत जानलेना। सोयह द्वितीयपक्षभीनहीं संभवता ॥ क्योंकि द्वैतदर्शनरूपप्रतिबंधकेआश्रय कानिश्चयनहींहोसकता ॥ तथाहि ॥

❀ अथद्वैतद्रष्टाकेस्वरूपकाविचारऔरतिसकानिषेध ❀

वहद्वैतद्रष्टाकौनहै।क्यावहपरमात्माहै। अथवाजीवहै?। अथवाकोई अन्यहै?। इनमेंप्रथमपक्षतोनहींसंभवता। क्योंकि तिससर्वज्ञपरमात्मा निष्ठभ्रमकेकारणरूप अज्ञानका अभावहोनेकर तिसकोद्वैतदर्शनकी अनुपपत्ति है। और।

❀ यस्याज्ञानंभ्रमस्तस्यभ्रान्तः सम्यक्चवेतिसः ❀

अ० ॥ जिसकोअज्ञानहोताहै तिसीकोभ्रमहोताहै। औरभ्रम युक्तहुआवहीयथार्थजानताहै” ॥ इसन्यासेअज्ञानऔरभ्रमतथायथार्थ ज्ञानइनतीनोंकोसमानाधिकरणताका निश्चयहोनेसे अविद्यावालेमेंही तिनकासंभवहै ॥ अविद्यादिदोषसेरहित परमात्मामें इनकासंभव नहीं। इसलियेपरमात्मामें द्वैतद्रष्टृत्वनहींसंभवता। औरयदिअविद्या वालाजीवद्वैतकाद्रष्टाहै यह द्वितीयपक्षकहो तोयहभीनहींसंभवता। क्योंकि (नान्योतोऽस्तिद्रष्टा) इत्यादिश्रुतियोंमेंतिसजीव कापरमात्माकेसाथअभेदकथनकियाहै। इसकारणसेसर्वज्ञपरमात्मासे अभिन्नजीवनिष्ठभ्रमकेकारण रूपअज्ञानकाअभावहोनेसेतिसभ्रमका कियाहुआद्वैतदर्शनभीतिसकोनहींसंभवता।।शंका।।जैसे“तदेवेदंमुत्तम” इस प्रत्यभिज्ञासेविंव तथाप्रतिविंवकी एकताकेहुएभी श्यामतातथा लघुतादिधर्मप्रतिविंवमें भासतेहैं ॥ औरस्वच्छतातथाविशालतादि धर्मविंवमेंहोतेहैं ॥क्योंकिउपाधिकोप्रतिविंवके पक्षपातित्वकानियमहै

तैसे अज्ञानरूपउपाधिकृत द्वैतदर्शन तथा अल्पज्ञतादिधर्मजीव निष्ठहीहोतेहैं । सर्वज्ञपरमात्मानिष्ठनहींहोते। यातेजीवतथा ईश्वरका अभेदहुएभीविंवप्रतिविंवकीन्याई सर्वज्ञतातथाद्वैतदर्शनकीउपपत्तिहै । समाधान॥ यहांदृष्टांततथादार्ष्टांतकी विषमताहोनेसेपूर्वउक्तव्यवस्थानहींसंभवती । इसीकोस्पष्टकरतेहैं ॥ दृष्टांतमेंतोदर्पणरूपउपाधि प्रथमसिद्धहै । तिसमेंप्रतिविंवभावहोनेसेअनंतर मलिनतातथास्वच्छतादिधर्मोंकीव्यवस्थाकर उपपत्तियुक्तहै ॥ औरदार्ष्टांतमेंतोअन्योऽन्याश्रयदोषप्राप्तहोनेसे सर्वज्ञतादिधर्मोंकी व्यवस्थानहींसंभवती । क्योंकिद्वैतदृष्टिकरप्रकटहुआजो अज्ञानतत्कार्यरूपद्वैतहैतिसकोविंवप्रतिविंवभावकाउपाधिहोनेकर तिसमेंप्रवेशसे अनंतरतिसकेसंबन्धसेविंव प्रतिविंवभावकीकल्पना होतीहै॥ औरतिसकल्पनाकेहुए प्रतिविंवरूप जीवद्वैतकाद्रष्टाहै यहकल्पनाहोतीहै ॥ इसप्रकारद्वैतद्रष्टाप्रथमसिद्धहो तोअज्ञानादिरूपउपाधिकीसिद्धि औरउपाधिकेसिद्धहुएद्वैतदुष्टाकी सिद्धिहै । तिसउपाधिकीसिद्धिसेपूर्वद्वैतद्रष्टाके व्यवस्थापकीअनुपपत्तिहै ॥ यातेअन्योऽन्याश्रयदोषप्राप्तहोनेसे यहप्रकारनहींसंभवता । शंका। अनादिसिद्धअज्ञानरूपउपाधिमें प्रतिविंवरूपद्रष्टाकोभीअनादि होनेकर "तिसप्रतिविंवकल्पनासेपूर्व द्रष्टाकीव्यवस्थानहींसंभवती" यहवादीकाकथननहींसंभवता॥ यातेअन्योऽन्याश्रयदोषकीप्राप्तिनहीं होती ॥ समाधान ॥ पूर्वउक्तप्रकारसेजीवद्रष्टाहो परंतुवहसादिहै ॥ अथवाअनादिहै ? । यहविचारकर्त्तव्यहै ॥ प्रथमपक्षहोतोजीवको द्रष्टापनासिद्धनहींहोगा ॥ क्योंकिअनादिसिद्ध अज्ञानकेद्रष्टाको भीअनादिसिद्धताहीकहनेयोग्यहै । यातेप्रथमपक्षअसंगतहै।शंका॥

जीवसेभिन्नपरमात्माही अनादिसिद्धद्रष्टाहो॥समाधान॥ वहअनादि सिद्धद्रष्टाकथनकरनेके अयोग्यहै ॥ शंका द्वैतकद्रष्टाकाअभावतुम किसप्रकारकहतेहो जिसकारणसे साक्षीहीद्वैतकाद्रष्टाविद्यमानहै ॥ समाधान॥ वहसाक्षीक्यापरमात्माहै।अथवाजीवहै? प्रथमपक्षमेंभीयह कहाचाहिये ॥ क्यावहपरमात्मारूपसाक्षी स्वअविद्यादिकोंकाद्रष्टाहै अथवाजीवनिष्ठ अविद्यादिकोंकाद्रष्टाहै ? ॥ इनमेंप्रथमपक्षतो नहींसंभवता।क्योंकितिसर्वज्ञपरमात्मानिष्ठ स्वअविद्याकाअभावहोने करतिसकाद्रष्टापनाअनुपपन्नहै ॥ औरसर्वज्ञकोभीअन्यकीअविद्या काद्रष्टाहोनेसेकोईविरोधनहीं यदियहद्वितीयपक्षकहो तोतिसमें भीयह विचारकर्तव्यहै । क्याजीवब्रह्मकाभेदवास्तवहै अथवाअवास्तवहै? ॥ अन्त्यपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकिअपनेसेभिन्नजीवकीअविद्याका द्रष्टाहोनेकरपरमात्माको भ्रान्तपनाप्राप्तहोगा॥तात्पर्ययहहै।किस्वविषय कतोअविद्याकाअभावहै ॥ क्योंकिवहसर्वज्ञहै।औरअपनेसेभिन्नअन्य कोईअविद्याकाआश्रयनहींहै ॥ इसकारणसेस्वभिन्नमें अविद्याको देखतेहुएपरमात्मानिष्ठ भ्रान्तत्वप्रमंगअवश्यहोगा ॥ औरस्यदिव्रह्ममें भ्रान्तपनानिवारणकरनेकेलिये जीवब्रह्मकावास्तवहीभेदहै यहप्रथम पक्षस्वीकारकरो तोयहभीनहींसंभवता॥क्योंकि (नान्योतोस्ति द्रष्टा) इसशास्त्रकाविरोधप्राप्तहोगा ॥शंका ॥ परमात्माहीद्वैतका द्रष्टाहो।औरद्वैतकाद्रष्टामाननेसे सर्वज्ञताकाभीविरोधनहीं । क्योंकि अविद्याकेनिवर्तकप्रमाणजन्यज्ञानकी आश्रयताका नामसर्वज्ञतानहीं किंतुस्वरूपचेतनसेअपनेमेंअध्यस्तसर्वजगतकीप्रकाशकताहीसर्वज्ञता है॥औरस्वरूपचेतनअविद्याकाविरोधीभीनहीं।क्योंकितिसकोअविद्या

कासाधकपनाहै ॥ यातेपरमात्माहीद्वैतकाद्रष्टाहै ॥ समाधान ॥
 परमात्माकोद्वैतद्रष्टृत्वनहींसंभवता ॥ क्योंकि ॥ (निरवद्यनि
 रंजनं) अ० ॥ वहपरमात्माअविद्यासेरहितहै ॥ औरतत्कार्य
 सेभीरहितहै ॥ इसश्रुतिने अविद्यातत्कार्यकातिसमें निषेधकथन
 कियाहै । औरयदिऐसेकहो कियहवाक्यवास्तव अविद्याकानिषेध
 कहै ॥ कल्पितअविद्याका निषेधकनहीं । यातेअविद्याके निषे
 धकवाक्यकाअन्यविषय होनेकर कल्पितअविद्यादिकों के निषेध
 कोवहनहींकथनकरता ॥ सोयहकथनभीसमीचीननहीं । क्योंकि
 अविद्यामात्रमेंशक्तिवाला जोअविद्याशब्दहै तिसकोवास्तवअविद्या
 परमानेहुए लक्षणाकीप्राप्तिहोगी । औरमुख्यअर्थकीअनुपपत्तिसेविना
 लक्षणाकास्वीकारदोषरूपहै । किंवा ॥ वास्तवरूपअविद्याप्रसिद्धहै । वा
 नहीं? । प्रथमपक्षमेंतोद्वैतापत्तिहोगी । औरब्रह्मकीन्याईतिसकानिषेध
 भीनहींसंभवेगा । औरद्वितीयपक्षमेंभीनिषेधनहींसंभवता । क्योंकि
 अप्रसिद्धवस्तुकानिषेध कोईनहींकरसकता किंतुप्रसिद्धकाही निषेध
 कियाजाताहै ॥ इसप्रकारपरमात्माकोद्वैतद्रष्टृत्वनहींसंभवता ॥ और
 अनादिसिद्धजीवरूपसाक्षीद्वैतकाद्रष्टाहै । यहद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता
 क्योंकिजीवभावकोअविद्याकेउत्तरभावीहोनेकर अनादित्वकाअसंभव
 है ॥ औरयदिऐसेनमानेतोअविद्याकीनिवृत्तिहुएभीजीवभावकीनिवृत्ति
 नहींहोगी ॥ क्योंकिअनादिभावकीनिवृत्तिनहींहोती ॥ औरसंसारि
 भावकेअनिवृत्तहुएअनिर्मोक्षप्रसंगहोगा ॥ पूर्वजीवसादिहैवाअनादि
 है यहदोविकल्पकियेथे । तिनमेंअनादिपक्षका निराकरणइसपूर्वउक्त
 अनादिपक्षके निराकरणसेहीजानलेना ॥ इति ॥ अथअन्यहीकोई

द्रष्टा है इस तृतीयपक्षको निषेध करते हैं। और तृतीयपक्ष भी नहीं संभवता क्योंकि जीव तथा परमात्मासे भिन्न सर्व अनात्मपदार्थोंको जड़ होनेकर द्रष्टा पनेका ही असंभव है ॥ और यदि ऐसे कहो कि जीव तथा ईश्वर इन दोनोंमें अनुगत जो सामान्यचेतन है वही द्रैतका द्रष्टा है ॥ सो यह कहथन भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि तैसे माने हुए अविद्याको भी तिस अनुगतचेतननिष्ठ ही कहथन करना उचित है ॥ तिस कारणसे परमात्माकी न्याईं निर्दोष तथा भ्रमसे रहित जीवको भी अनायास सर्वज्ञता तथा नित्यमुक्तताकी प्राप्ति होगी क्योंकि तिसमें भी परमात्माकी न्याईं अविद्याका अभाव है ॥ किंवा जीव तथा ईश्वरमें अनुगत सामान्यचेतन द्रैतका द्रष्टा है । इसपक्षमें अन्योन्याश्रयदोषकी भी प्राप्ति होती है ॥ तथाहि ॥ तृतीयपक्षमें अनुगतचेतनको द्रष्टापना सिद्ध हुए तिमके आधीन उपाधिशब्दके वान्यरूप अज्ञानादिकोंकी सिद्धि है। और तिम उपाधिके सिद्ध हुए तिमके आधीन विवप्रतिविंबसंज्ञक परमात्मा तथा जीवरूपदोषकारके विभागकी अपेक्षाकर सामान्यचेतनरूप तृतीयपक्षकी सिद्धि है ॥ इस प्रकार अन्योन्याश्रयदोषकी प्राप्तिसे यह पक्ष भी समीचीन नहीं ॥ याने द्रैतद्रष्टाकी अमिद्धि होनेकर तिमके आश्रित रहनेवाला द्रैतदर्शनरूप प्रतिबंध भी अमिद्ध है ॥ इति ॥

ॐ अथ गुरुशिष्यके संवादद्वारा पुनः द्रैतद्रष्टाके स्वरूपका विचार ॐ

शंका ॥ हे शिष्य अविद्याको अनेगीकार करे हुए तिम विषयक प्रथम श्रौंथाक्षेप नहीं संभवता ॥ इससे तु भ्रमप्रकर्ता अथवा आक्षेपकर्ताको ही अविद्याका द्रष्टापना युक्त है ॥ यह वार्त्ता [प्रश्नस्य ज्ञानपूर्वत्वात्] इमं कागिकां कव्यायानमें जो अविद्याविषयक प्रश्न करनेवाला है वही

अविद्याकाद्रष्टाहै॥ ऐसेअर्थसेकथनकरआएहैं ॥अथवा।आज्ञापकरने
वालाहीतिसकाद्रष्टाहै। इसप्रकारद्वैतद्रष्टाकास्वरूपपूर्वनिरूपणकरनेसे
पुनःतिसविषयप्रश्नहींसंभवता।समाधान। हेभगवन्प्रद्युम्नसामान्यसे
सुभद्रैतद्रष्टाकास्वरूपपूर्वनिरूपणकियाहै। तथापितिसीसुभद्रैतद्रष्टाका
स्वरूपअत्रविशेषकरआपनेतत्त्वनिर्णयकेअर्थ कथनकरनाचाहिये। और
यदिआपऐसेकहोकिजोतुमअपनेआत्माकोभीनहींजानते“कियहमैहूँ”
औरस्यहमेंपूछताहूँ ॥ ऐसेतुमकोप्रश्नकरनाहीकैसेसंभवेगा । क्योंकि
कौनद्वैतकाद्रष्टाहै?इसप्रकारकाप्रश्नअविद्याकेद्रष्टातुमको अपनेस्वरूप
केनजाननेकरनहीं संभवता ॥ प्रश्नकेविषयकाअज्ञानद्वेष तिसविषय
कशब्दप्रयोगकीहीअयोग्यताहै । सोयहआपकाकथनभीसमीचीन
नहींप्रतीतहोता ॥ क्योंकिअज्ञातअर्थविषयकहीप्रश्नसंभवताहै। यदि
ऐसेनहींमानोगे तोप्रष्टव्यअर्थके ज्ञानसेतथाप्रष्टव्यअर्थके अज्ञानसे
प्रश्नकरनानहींसंभवेगा ॥ और

नापृष्टःकस्यचिद्ब्रूयान्नचान्यायेनपृच्छतः॥

जानन्नपिचमोधाविजडवल्लोकमाचरेत् ॥

अ० ॥ यहविद्वान्पूछाहुआ किसीकोनकथनकरे ॥ और
अन्यायसेअर्थात्केवलबुद्धिकी परीक्षाकेअर्थ प्रश्नकरनेवालेकोभीन
कथनकरे ॥ औरसर्वअर्थकोजानताहुआभी तथाअर्थकीस्मृतिवाला
हुआभीजडकीन्याईलोकमेंविचरे ॥ इसन्यायसे आपभीविद्वान्कथन
करनेकोअसमर्थहैं । यातेसर्वशास्त्रआरायका रोदनहोजायेगा ।
अर्थात्निष्फलहोगा ॥ शंका ॥ हेशिष्य प्रश्नकेविषयकाअज्ञानद्वेष
तिसविषयकशब्दका उच्चारणरूपशब्दरचना कैसेसंभवेगी॥ क्योंकि

तिसकारणसे शरीरही आत्मा है । ऐसे स्थूलदर्शि चार्वाकवैधकहते हैं । और कोई इन्द्रियोंको ही आत्मा कहते हैं क्योंकि ज्ञानके साथ इन्द्रियोंका अन्वयव्यतिरेक प्रतीत होता है ॥ जब इन्द्रियहाँ तो ज्ञान होता है मृतशरीरमें इन्द्रियनहीं होते तब ज्ञान भी नहीं होता ॥ इस प्रकारके अन्वयव्यतिरेकसे इन्द्रियोंको ज्ञानकी कारणता सिद्ध हुए उपादानको श्रेष्ठता होनेसे तिन इन्द्रियोंको द्रष्टा पना उचित है । और “अहंकाणः । अहंवधिरः” इत्यादि अहंप्रत्ययकी विषयता भी तिनमें होनेसे इन्द्रियही द्रष्टा है । और कोई एक ऐसे कहते हैं । स्वप्नमें इन्द्रियोंको स्वस्वव्यापारसे उपरत हुए मनकी तिसकालमें अनुवृत्ति होनेसे तथाबंध मोक्षादि सर्वव्यवहार मनके आधीन होनेकर और “अहंमनः” इस अहंप्रत्ययकी विषयतासे मन ही आत्मा है । यद्यपि “अहंमनः” यह प्रतीति स्पष्ट नहीं । तथापि “हर्षशोकवानहम्” यह प्रतीति सर्वको प्रसिद्ध है । और हर्षशोकादि धर्मवाला मन ही है । याते “अहंमनः” यह प्रतीति भी संभवती है । और क्षणिकविज्ञानवादी वैध तो यह कहते हैं । क्षणिकविज्ञानरूपबुद्धि में भिन्नमनका अभाव है क्योंकि बुद्धिके आधीन ही मनका व्यापार होता है । याते विज्ञान ही आत्मा है । यहां बुद्धिपर्यन्त पदार्थोंका जो कथन है वह अन्य अन्तरपदार्थोंका भी उपलक्षक है ॥ इसलिये यथायोग्य अंतर तथा अव्यभिचारिरूपासे जो संभव हो वह भी स्वस्वरूपकर ग्रहण करने योग्य है बुद्धिसे अंतर जो आनंद मयकोश है तिसको नैयायिक और भाट्ट तथा प्राभाकरमतवाले तथा शून्यवादी वैध आत्मा कहते हैं । याते इनमें किसी एकको अथवा इनके समुदायको तुम आत्मरूपताकर ग्रहण करो इस प्रकार श्री गुरुकरशिष्यका स्वरूप उपदेश किये हुए अवशिष्यतिन

सबकोनिषेधकरताहै ॥ समाधान ॥

✽ देहआत्मवादादिकोंका निराकरण ✽

हेभगवन् तिनशरीरादि पदार्थोंके मध्यकोईएकएक अथवा तिनके समुदायको आत्मस्वरूपताकी अनुपपत्तिहै । तिनको आत्मस्वरूपताकी अनुपपत्तिमें चारप्रकारका अन्वयव्यतिरेक हेतुरूपता करकहतेहैं ॥ जिसकारणसेशरीरादिकसर्वपदार्थ अज्ञानकाकार्यहैं इसीसेतिनकोव्यभिचारी होनेकर आत्मरूपतानहींसंभवती ॥ इस कथनसेकार्यकारणका अन्वयव्यतिरेकदिखलाया । यद्यपिअज्ञानही कारणहै आत्मानहीं यातेअज्ञानकोही आत्मरूपताहोगी । तथापि अज्ञानकीअधिष्ठानतासे आत्माकोकारणता पूर्वअनेकवार प्रतिपादनकरआएहैं । औरअहंप्रत्ययमी इनमेंउपचारिकहै ॥ क्योंकियह सर्वही ममप्रत्ययकाविषयहै । याते “ममेदंशरीरम्” इसभेदप्रतीतिसे आत्माकातथाशरीरका भेदप्रतीतहुए“अहंमनुष्यः” यहअभेदप्रतीति उपचारिकहै। औरयहजोपूर्वकहाथा॥ कि“ममात्मा”यहभेदप्रतीतिजैसे उपचारिकहै। तैसे “ममेदंशरीरं”यहभेदप्रतीतिभीउपचारिकहोजायेगी। सोयहविपरीतकथनभी समीचीननहीं ॥ क्योंकिदृष्टांतकीविषमताहै। तथाहि ॥ दृष्टांतमेंतोआत्मशब्दकी समीपतासे वहसंबंधप्रत्ययउपचारकेयोग्यहै । क्योंकिअपनेमें अपनाभेद नहींसंभवता । औरयहां दृष्टांतमेंतोआत्मशब्दकीसमीपताहैनहीं । यातेसंबंधप्रत्ययउपचारके योग्यनहींहोसकता ॥ औरदेहादिकोंमें अहंप्रत्ययतोआत्माकेअध्याससेभीसंभवताहै ॥ शंका ॥ अहंप्रत्ययकोदेहादिकोंमें आत्माके अध्याससेमानेहुए“ममेदंशरीरादि”यहांममपदसेउत्तरवर्तिपट्टिविभक्ति

सेकौनसंबंधप्रतिपादनकियाहै ॥ ममाधान ॥ हेभगवन्गेषोपि भावसंबंधकोही पण्डितविभक्तिबोधनकरतीहै। क्योंकिजैसेछत्रचामरादि इतरग्रनात्मपदार्थमेरेभोगकामाधनहैतैसेयहशरीरादिकभीमेरेभोगका साधनहै यातेग्रनात्माहै । औरइनकोमेरागेषहोनेमेभी ग्रनात्मताहै। इसहेतुसेइनमेकोईएक यथवाइनकासमुदाय मेरास्वरूपनहींहोसकता। क्योंकिग्रात्मवस्तु ग्रज्ञानतत्कार्यसे विलक्षणहै ॥ औरहेयउपा देयसेरहितस्वभावहै ॥ यहांग्रात्मामें ग्रहेयरूपता कहनेवालेशिष्यने तिसकीग्रानंदरूपताऔरशरीरादिप्रपंचनिष्ठ दुःखरूपतासचनकी। और इसकथनसे दुःखित्वतथापरमप्रेमास्पदत्वके ग्रन्वयव्यतिरेकभीदिखला दिये । औरसर्वविकारोंसेरहितहोनेसे ग्रात्माग्रनुपादेयहै । औरजैसे देहादिकों में यहप्रत्ययगौणहैतैसे ग्रात्मामेंवहप्रत्ययगौणही। क्योंकि ग्रात्मामेंममप्रत्यकी विषयताकाग्रभावहै। औरग्रात्मापरमप्रियतमहोने सेग्रन्यसर्वग्रनात्मपदार्थोंमें ग्रनुपसर्जनग्रथात्प्रधानहै । औरग्रपने सेभिन्नसर्वग्रनात्मपदार्थोंकाप्रकाशकहोनेसेमाक्षिस्वरूपहै। इसकथन सेसाक्षीतथामाक्ष्यके ग्रन्वयव्यतिरेकदिखलादिये। औरग्रज्ञानादिसर्व कल्पितपदार्थोंमेंग्रनुगतहोनेकर यह ग्रात्मा ग्रव्यभिचारिस्वभावहै ॥ और ग्रर्थसेदेहादि व्यभिचारिस्वभावहै । इस कथनसेग्रनुगततथा व्यभिचारिकाचतुर्थ ग्रन्वयव्यतिरेकभी दिखलादिया । इस प्रकार स्थूलशरीरसेलेकरबुद्धिपर्यन्तपदार्थ कोईभीमेरास्वरूपनहीं॥शंका॥हे शिष्यदेहसेआदिलेकरबुद्धिपर्यंतपदार्थोंसेभिन्नजोस्वरूपतुमनेपरिशेष कियाहै वहीतुमग्रपनास्वरूपनिश्चयकरो॥समाधान॥ हेभगवन्तिस प्रत्यक्चेतनकामुझकोग्रज्ञानहै । और यदिआप यहकहो किग्रज्ञान

कोत्यागकरके तिसकाविषयजोस्वरूपमात्र प्रत्यक्चेतनतत्त्वहैवहथप
नास्वरूपग्रहणकरनेयोग्यहै । सोयहकथनभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि
तिसप्रत्यक्चेतनकोभीजीवतथाईश्वरथ्रौतिनसेभिन्नशुद्धचेतनमात्ररूप
करनिर्णयकरनेकीअसामर्थ्यसेसंदेहकीविषयताहै॥शंका॥हेशिष्यजीव
तथाईशादिरूपताकरनिर्णयकरनेसेक्याप्रयोजनहैवस्तुकाजैसास्वरूपहै
वहुतमकोनिर्णीतहीहै ॥ समाधान॥ हेभगवन्सकलविशेषरूपतत्त्वके
जाननेकीइच्छावालेप्रतियहउत्तरनहींसंभवता॥यातेविशेषस्वरूपथापने
कथनकरनाचाहिये ॥ शंका ॥ हेशिष्य सामान्यविशेषभावसेरहित
आत्मवस्तुमेंविशेषकरजाननेकीइच्छाहीनहींसंभवती ॥ समाधान ॥
हेभगवन् तिससामान्यविशेषभावसे रहितवस्तुकास्वरूपही आपकर
कथनकरनेयोग्यहै ॥ शंका ॥ हेशिष्यजोसंदिग्धार्थहोताहै वही
जिज्ञासाकाविषयहोनाहै। औरअज्ञानपर्यंतपदार्थोंसेभिन्नरूपताकरपरि
शेषसेनिश्चितवस्तुमें संशयनहींसंभवता । औरसंशयके असंभवसे
जिज्ञासाकीअनुपपत्तिहै।यातेतिसकेस्वरूपविषयकप्रश्नसेक्याप्रयोजन
है ? ॥ समाधान ॥ हेभगवन् स्वरूपविषयकअज्ञानतोअवपर्यंतभी
निवृत्तनहींहुआ । यातेजिज्ञासाकासंभवहै ॥ शंका ॥ अज्ञानन
निवृत्तहो।परन्तुनिश्चितवस्तुमेंसंदेहकेनदेखनेसे जिज्ञासाकैसेसंभवेगी
समाधान॥अज्ञानकेस्थितहुएहीविवेकदृष्टिसेतिसअज्ञानसेभिन्नआत्मा
कास्वरूपनिर्णयहुएभी तिसहीअज्ञानकर विषयकीहुईवस्तुमेंसंदेहकी
उपपत्तिहै।क्योंकिविवेकज्ञानकोअन्वयव्यतिरेकरूपयुक्तिकरजन्यहोने
सेपरोक्षताहैयातेतिसको अपरोक्षसंशयादिकोंकानिवर्त्तकपनानहींसंभ
वता ॥शंका॥ अज्ञानादिकोंसे आत्मवस्तुको भिन्नरूपताकरनिश्चित

हुएभी यज्ञान औतत्प्रयुक्तसंशयहोताहै ॥ इसतुम्हारेकथनसेयज्ञानादिकोंकेविद्यमानहुए निश्चयहीनहींहोगा । औस्यदिनिश्चयतुम मानोंगे॥तोयज्ञानादिकोंका सद्भावनहीहोगा॥इसीअर्थकोस्पष्टकरते हैं । अथ्यस्तसेजोअधिष्ठानकाभेदहै इसीकोविवेककहतेहैं । और कल्पितयज्ञानकेस्वरूपकीस्थितिहुएतिसकेअधिष्ठानयात्माकाअन्यत्वरूपविवेककिसीप्रकारभी ज्ञातनहीहोसकता ॥ क्योंकिअथ्यस्तपदार्थकाअधिष्ठानकेसाथ तादात्म्यहोनेकर तिससेभिन्नअथ्यस्तकेस्वरूपकाअभावहै। औस्यदिविवेकदृष्टिसे अधिष्ठानरूपयात्मवस्तुनिश्चितहै तोतिसमेंअथ्यस्तयज्ञानअथवातिसकाकार्यतिससे भिन्नकरकेतिस अधिष्ठानमेंनहींहै ॥ ऐसेनिर्णयकरकेहीयात्मतत्त्वनिश्चयकरनेयोग्यहै ॥ तैसेमानेहुए तिसमें यज्ञानकेअभावसे संदेहकीअनुपपत्तिहै । औरसंशयकेअभावसे प्रशंभीनहींसंभवता ॥ समाधान ॥ हेमगवन् इतनेकथनसेभीद्वैतद्रष्टाकास्वरूप आपनेनहींकथनकिया । यद्यपिआपकरकथनकीहुईयुक्तिसेयज्ञानादिकोंकेनिषेधहुए मोक्षसंबंधीशुद्धविकासहितचेतनशेषरहताहै ॥ परन्तुअनिष्टप्राप्तिसे तिसकोद्वैतकाद्रष्टापनानहींसंभवता ॥ क्योंकियदिशुद्धकूटस्थचेतनकोद्वैतकाद्रष्टामानोंगे तोमोक्षकालमेंभी द्वैतदर्शनकीप्राप्तिहोगी।यहीअनिष्टप्रसंगहै ॥ शंका ॥ हेगिण्यमोक्षकोनित्यहोनेकर वहसर्वकालमें विद्यमानहै ॥ यातेसर्वहीकालमोक्षकालहीहै ॥ यद्यपिमोक्षकोज्ञानकरसाध्यहोनेसेतिसको नित्यपनाअसिद्धहै ॥ तथापि ॥

(विमुक्तश्चविमुच्यते) अ०॥ प्रथमभीमुक्तहीथा परंतुयज्ञानकेअभावसेअविमुक्तपनेकाभ्रमहुए तत्त्वसाक्षात्कारकरयज्ञानकेवाधित

हुएविमुक्तहोताहै ॥ ऐसाउपचारिककथनहोताहै ॥ इसशास्त्रसेमोक्ष
कोप्रथमहीसिद्धहोनेसेजन्यपनानहीं है ॥ औरयदितुमऐसेनहींमानोगे
तोमोक्षकोकादाचित्तहोनेसे अनित्यत्वप्रसंगहोगा ॥ औरअजन्यहोने
से मोक्षकोनित्यपनाहै ॥ यातेमोक्षकालमेंद्वैतकादर्शनअनिष्टनहींहै ॥
क्योंकिइसकालमेंद्वैतका दर्शनविद्यमानहै औरमोक्षभीविद्यमानहै ॥
समाधान ॥ हेभगवन्द्वैतदर्शनतथामोक्ष इनदोनोंकाएककालमें
होनाक्यालौकिकअनुभवकेवलसे आपकल्पनाकरतेहो ॥ अथवाश्रुतिके
बलसेकल्पनाकरतेहो ? ॥ प्रथमपक्षमेंतोलौकिक अनुभवकाविरोधप्राप्त
होगा ॥ क्योंकिद्वैतदर्शनकालमें कोईभीमोक्षकोनहींअनुभवकरता ॥
प्रत्युतसर्वलोकद्वैतकोही अनुभवकरतेहैं ॥ यातेप्रथमपक्षअयुक्तहै ॥
औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिसर्वलोकोंसेविरुद्धअर्थकोश्रुति
भीनहींप्रतिपादनकरसकती ॥ औरयदिलोकविरुद्धअर्थकोभीश्रुति
प्रतिपादनकरेगी ॥ तोशिलाप्लवनादिवाक्योंकोभी स्वार्थमेंप्रमाणाता
हुईचाहिये ॥ इसप्रकारसर्वलोकोंके अनुभवकाविरोधहोनेसे सर्वही
कालमोक्षकालहै यहकथननहींसंभवता ॥ तैसेमानेहूएद्वैत द्रष्टाका
स्वरूपभीनिर्णीतनहुआ ॥ यातेतिसकास्वरूपआपनेकथनकरनायोग्यहै
यहशिष्यकाअभिप्रायहै ॥ इतिपूर्वपक्ष ॥ (अथसिद्धांत ॥)
यहाँपर्यंतगुरुशिष्यकेसंवादद्वारापूर्वपक्षनिरूपणकिया ॥ अबगुरुशिष्य
केसंवादद्वाराहीसिद्धांतनिरूपणकरतेहैं ॥ द्वैतकेअनुभवकरनेवालेमोक्ष
कोनहींअनुभवकरसकते ॥ शिष्यकेइसकथनकोआधयणकरकेश्री
गरुडत्तरकथनकरतेहैं ॥ समाधान ॥ हेशिष्यअनुभवतयादर्शनशब्द
कोपर्यायहोनेसे जोसर्वद्वैतकेअनुभवकरनेवालेहैं वहीद्वैतद्रष्टाहैं ॥

यहतुमनेआपही निश्चयकरलियाहै । इसकारणसे अपनीबुद्धिकर
निश्चितअर्थमेंपुनःप्रश्नकरनाअतिआश्चर्यहै । औरतिसमेंहमारेनिरू
पणाकापरिश्रमभीपिष्टपेषणान्यायसेव्यर्थहै ॥ शंका ॥ हेभगवन्द्वैत
केअनुभवकरनेवालेहीद्वैतकेद्रष्टाहैं । ऐसेनिर्णयहुएभीमोक्षकोकादा
चित्कहोनेसे अनित्यत्वकीप्राप्तिमेंकौनउत्तरहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्य
इनकोजोद्वैतकादर्शनहै वहद्वैतदर्शनही सच्चिदानंदपरिपूर्णआत्मस्व
रूपमोक्षके अनुभवकाप्रतिबंधकहै । यहतुमनिश्चयकरो । तैसेमाने
हुएमोक्षनित्यहीहै । परन्तुप्रतिबंधकेवशसेपुरुषोंकोतिसका अनुभवनहीं
होता । जैसेग्रंथकाररूपप्रतिबंधसे गृहकेमध्यदेशमें अवस्थितहुए
घटादिकोंका अनुभवनहींहोता ॥ शंका ॥ हेभगवन् द्वैतदर्शनकोपूर्व
उक्तविशेषणयुक्तमोक्षकाप्रतिबंधकहुएजिनकोद्वैतदर्शनहैतिनकोप्रति
बंधहो । परन्तुमुझद्वैतकेनदेखनेवालेकोकिसकारणसेमोक्षकाअनुभव
नहींहोता?यातेद्वैतदर्शनमोक्षके याविर्भावकाप्रतिबंधकनहीं ॥ समाधान
हेशिष्यद्वैतकाअद्रष्टापना तुझकोअसिद्धहै । इसीअर्थकेसिद्धकरनेके
लियेहमतुमसेयहपूछतेहैं । क्यातुमद्वैतकेअनुभवकरनेवालेपुरुषोंसे
भिन्नहोजिसकरद्वैतकोनहीं देखते? ॥ शंका ॥ हेभगवन्इसमेंक्यासंशयहै।
अ्योंकिमेंतिनकोअपनास्वरूपनहींदेखता । जिसकारणसेतिनकेसुख
दुःखादिकोंकामुझकोलेपनहींहै । इसीसेमुझकोसुखदुःखादिकोंके
लेपकाअभावद्वैतद्रष्टाओंसेमेरेभेदविनाअनुपपन्नहुआ तिनसेमेरेभेदको
कल्पनाकराताहै । यातेभेदमेंसुखादिव्यवस्थाकी अनुपपतिरूपअर्था
पतिप्रमाणहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्यद्रष्टाओंकेभेदमें प्रमाणकथन
करनेवालेतुझने द्वैतकाअनुभवितृत्वअपनेमेंस्थापनकिया । इमीको

स्पष्टकरतेहैं । अतिआश्चर्य्यहै । अनेकप्रकारसेदेव तथातिर्य्यकथौ मनुष्यादिभेदकर भिन्न तिनद्वैतद्रष्टाओंको देखताहुआतू मैं द्वैतको नहींदेखता ऐसेकथनकरनेवालेतुम्हकावचनकैसे विश्वासकरनेयोग्य होगा ॥ किंतुमिथ्यावादिपनातुम्हकोप्राप्तहोगा॥ शंका ॥ हेभगवन् कथामेंप्रतिवादीके व्यामोहकरनेकेलिये अथथार्थभीकथनकरनेयोग्य होताहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्य मोक्षकीकामनावाले तथासंन्यासी औतत्त्वकेजाननेकी इच्छावालेतुम्हको यहमिथ्याभाषणकरनाउचित नहीं । पूर्वयहकथनकियाथा क्यातुंडनसेभिन्नहैं जिसकरद्वैतकोनहीं देखता? यहांक्याशब्दसेसूचनकियेहुएअभेदपक्षकोशिष्यग्रहणकरता है ॥ शंका ॥ हेभगवन्मैंआपसेअभिन्नहूं । यातेमुम्हको जोमिथ्या वादित्वआपकहतेहो । वहमिथ्यावादित्वआपमेंहीप्राप्तहोताहै ॥ यहांयहअभिप्रायहैजैसेदर्पणादिउपाधिकेभेदसे प्रतिविंबोंकेऔपाधिकेभेदकोग्रहणकरके चलनादिव्यवस्थाकी उपपत्तिहै । तैसेसुखादिव्यवस्थाकीअनुपपत्तिसेऔपाधिकभेदकोग्रहणकरकेव्यवस्थाकासंभवहै। यातेव्यवस्थाकीअनुपपत्तिकोस्वभावविकआत्माकेभेदकाप्रमापकपना नहीं ॥ इसहेतुसेमैंउपालंभके योग्यनहींहूं ॥ अबइसीपक्षकोस्वीकार करके श्रीगुरुउत्तरकथनकरतेहैं ॥समाधान॥ हे शिष्य यदिद्वैतद्रष्टा वास्तवसेतेरेसेभिन्ननहीं हैं किंतुतेराआत्माहीहैं।तोऐसेमानेहुएमुम्हको आत्मरूपदेखताहुआतूकैसेदेखताहै अर्थात्क्यामुम्हकोद्वैतसहितदेखता हैअथवाअद्वितीयरूपदेखताहैं। प्रथमपक्षमेंतोयहऔरदोपक्षकोप्राप्त होगा।क्योंकिजोमैंविद्वान्तथातेराही याचार्य्यऔरब्रह्मरूपतासेअवस्थित औरद्वैतकीवार्त्ताकोभी नजाननेवाले तिसमुम्हको तुमसद्वितीयरूप

कल्पनाकरतेहो ॥ कलंकरहितमेंकलंकदेखनामहानदोषहै । और
आत्माकोसद्वितीयदेखनेमें श्रुतिका विरोधभीप्राप्तहोगा ॥ क्योंकि

❀ एकमेवाद्वितीयं नहनानास्तिकिंचन । ❀

इत्यादिश्रुतियों में आत्माकी अद्वितीयरूपताही कथनकीहै ॥
यातेप्रथमपक्षनहींसंभवता । औरआपकोमें अद्वितीयरूप देखताहूं ।
यदिइसद्वितीयपक्षकोमानो तोइसपक्षमें यद्यपिपूर्वकथनकियेमिथ्या
भाषणादिदोषोंकी प्राप्तिनहींहोती । तथापिइसकालमें तुमने हमको
अद्वितीयआत्मरूपकिसहेतुसेजाना अर्थात्अवपूर्णात्माकादर्शनतुम्हें
कोकिसहेतुसेप्राप्तहुआ? ॥ शिष्यउवाच ॥ हेभगवन् पूर्वउक्तप्रत्युत्तर
रूपआपकेवचनसे मैंनेअद्वितीयआत्माकोजाना ॥ यद्यपिवचनको
युक्तिका प्रतिपादकहोनेसे उपजीव्यप्रमाणकीअपेक्षाहै । तथापिपूर्व
कथनकिया जो (एकमेवाद्वितीयम् ॥) इत्यादिशास्त्रयही
उपजीव्यप्रमाणहै ॥ श्रीगुरुवाच ॥ हेशिष्ययदियुक्तिसहकृत
शास्त्रसे अद्वैत आत्माकासाक्षात्कार तुमको उत्पन्नहोगया तोइससे
पश्चात्अन्यज्ञातव्यका अभावहोनेसे प्रश्ननहींसंभवता ॥ क्योंकि
आत्मवस्तुकेज्ञातहुए तिससेभिन्नअन्यअज्ञात वस्तुकोईनहींजो
प्रष्टव्यहो ॥ शंका ॥ हेभगवन्यद्यपिआत्माको ज्ञातहोनेसे तिस
विषयकप्रश्ननहींसंभवता । तथापिअनात्मातोअज्ञातहै तिसविषयक
प्रश्नसंभवताहै । समाधान ॥ हेशिष्यआत्माकादर्शनहुए इतरसर्व
अनात्मपदार्थका दर्शनहोजाताहै । यहवार्ताश्रुतिमेंप्रसिद्धहै ।

❀ आत्मनोवाच्यरेदर्शनेन श्रुत्यामत्याविज्ञानेनेदं
सर्वविदितं ॥ ❀ वृ० उ० अ० (४) मै० प्रा० (४) (५)

अ० ॥ अरैत्रेयीआत्माके दर्शनसेअर्थात् विचारकेसा एक
 आपातज्ञानसे और तिसकरसाध्यविचाररूप श्रवणसे तथामनन
 सेउत्पन्नहुए विज्ञान अर्थात् साक्षात्कारसेयहसर्वअनात्मपदार्थ
 जानेजातेहैं।इसश्रुतिसे आत्मज्ञानसे सर्वज्ञान कथनहोनेसे अज्ञात
 वस्तुकाअभावहोनेकर औरकोईजाननेयोग्य शेषनहींरहा ॥ याते
 प्रश्नहींसंभवता ॥ शंका ॥ हेभगवन् क्याश्रुतिने कथनकियाजो
 अर्थ वहीग्रहणकरनेयोग्यहै। अथवायोग्यअर्थ ग्रहणकरनायोग्यहै?।
 प्रथमपक्षतोनहींसंभवता ॥ क्योंकि (शिलाप्लवन्ति) अ० ॥
 शिलातरतीहैं । इत्यादिवाक्योंका अर्थभीस्वीकार करनेयोग्यहोगा ।
 औरयदिद्वितीयपक्षकहो तोतिसमेंयोग्यतानहींसंभवती । क्योंकिइतर
 सर्वअनात्मपदार्थआत्मासेभिन्नहैं।अथवाअभिन्नहैं?। यहविचारणीयहै
 प्रथमपक्षतोनहींसंभवता।क्योंकिअन्यकेज्ञानसे अन्यकेजाननेकोकोई
 भीसमर्थनहींहोता । जैसेघटकेदर्शनसे पटकाभीदर्शनहोजाताहै।ऐसे
 कथनकरनेकोकोईभीसमर्थनहीं । यदिऐसेनहींमाने तोघटऔंपटका
 अभेदप्राप्तहोगा । औरद्वितीयपक्षभी नहींसंभवता । क्योंकिप्रत्यक्
 तथापराकरूपतासे आत्मातथाअनात्माके स्वभावकाविरोधहै। किंवा
 आत्मा तथाअनात्माकाअभेदमानेहुए क्याआत्मामेंअनात्माकाअंत
 भाविहै। अथवाअनात्मामें आत्माकाअंतभाविहै? । प्रथमपक्षतोनहीं
 संभवता।क्योंकिपरमार्थसत्यस्वरूपआत्मासेअभिन्नअनात्माका(नेति,
 नेति)वाक्योंसेनिषेधकरनेकोअशक्यहोनेकरतिसकाबाधनहीं संभवेगा
 औरयदिद्वितीयपक्षमानो तोअनात्माकेअन्तर्भावहोनेकर आत्माका
 भीबाधहोजायेगा । तिससेशून्यहीशेषरहेगा ॥ यातेआत्माकेदर्शनसे

सर्वहीअनात्मपदार्थदेखेजातेहैं यहकथनअयुक्तहै ॥ इति ॥

❀ अथआत्मदर्शनसेसर्वजगत्कादर्शननिरूपण ❀

अधिष्ठानकास्वरूपही अद्यस्तकास्वरूपहोताहै।क्योंकिअधिष्ठान सेभिन्नरूपताकरतिसका निरूपणनहींहोसकता । यहवार्त्ताघटकी आत्मरूपताकेविचारादिकोंमें अनेकवारपूर्व निरूपणकीगईहै ॥ यातेअध्यस्तकीअधिष्ठानसे भिन्नसत्ताकाअभावहुए जगत्केअधिष्ठान आत्माकास्वरूपजानेहुए जगत्कास्वरूपभीजानाजाताहै॥ इसप्रकार जगत्काविदितपनाअर्थात्ज्ञानपनाव्रह्मात्माके अभेदज्ञानसेयुक्तिकर संभावनाकियाजाताहै ॥ तिमकीयोग्यताहोनेकर श्रुतितिसकोबोधन करतीहीहै ॥ ऐसेउत्तरकोश्रीगुरुकथनकरतेहैं ॥समाधान ॥

मू०॥ आत्मसत्तैवद्वैतस्यसत्तानान्यायतस्ततः ।

आत्मन्येवजगत्सर्वदृष्टेदृष्टंश्रुतश्रुतम् ॥५६॥

भूलना ॥ आत्मरूपहिद्वैतकोरूपदिजान नअन्यसरूपहैताहिकेरो । जासकेदेखनेजगतसबदृष्टहुइ श्रवणतेश्रवणहुइजातहेरो । मननतेमननहुइजातक्षणएकमें जानयहमरममनवेदकेरो । ज्ञातव्यअवशेषनहिरहयो कोईयाहेतुतेप्रश्ननवनेतेरो॥४४॥

टी० ॥ हेशिष्ययहपूर्वउक्तदोष नहींसंभवता ॥ क्योंकिआत्म सत्तासेभिन्नअज्ञानतत्कार्यरूपद्वैतकीसत्ताकाअभावहै ॥ जैसेरज्जुके स्वरूपकादर्शनहुएतिसमेंअध्यस्तमालादंडादिकोंका स्वरूपदेखाजाता है।तैसेआत्माकेदर्शनहुए सर्वअनात्मपदार्थदेखेजातेहैं॥यहवार्त्ताअनुप पन्ननहींकिंतुउपपन्नहै॥ यहांपरयहअर्थजानलेना॥ कारिकामेंकथन कियाहुआ “सत्ता” शब्दस्वरूपकावाचकहै । नेयायिकोंकोअभिमत

सत्तासामान्यकावाचकनहीं ॥ क्योंकितिससत्ताजातिकोविशेषव्यक्ति कीअपेक्षासहितहोनेकर परमार्थरूपताकीअनुपपत्तिहै। इसीकारणसे दृष्टांतमेंस्वरूपशब्दकाहीग्रहणकियाहै ॥ इति ॥

❀ अथविधिनिषेध उपदेशकीव्यवस्थानिरूपणा ❀

पूर्वउक्तयुक्तिसे आत्मासे भिन्नरूपताकर अभिमतसकल अनात्मपदार्थोंको आत्मरूपताकेसिद्धहुए तिससेभिन्नकरकेतिनका असत्त्वजानेहुए विधिनिषेधशास्त्रभीउपपन्नहोसकताहै ॥ अबइसी अर्थकोनिरूपणाकरतेहैं ॥ हेशिष्य आत्मस्वरूपसेइतरद्वैतकेस्वरूपका अभावहोनेसे विधिनिषेधशास्त्रकीभी अनुपपत्तिनहीं। तिनमेंप्रथम विधिशास्त्रको उदाहरणकरतेहैं ॥

❀ इदं सर्वं यदयमात्मा। सदेवसौम्येदमग्र आसीत्।

एकमेवाद्वितीयम् ॥ ऐतदात्म्यमिदं सर्वं । ब्रह्म

वाइदमग्र आसीत् । अहंमनुरभवंसूर्यश्च ॥

यत्र त्वस्य सर्वात्मैवामूत् । नारायणाएवेदं सर्वं

यद्भूतं यञ्चभाव्यम् ॥ ❀

अ० ॥ जोब्राह्मणत्वजातिआदिकसर्वजगत् प्रत्यक्षादिग्रमाण करउपस्थितअर्थात् प्रसिद्धहै वहसर्वजगत्आत्माहीहै ॥ औरहेप्रिय दर्शनश्वेतकेतो यहसर्वजगत् अपनीउत्पत्तिसे पूर्वकालमें एकसत् आत्मरूपहीथा यहकार्यजातकिंचित्मात्रमीनहींथा। आत्माकेभेद मेंजोनिमित्तहै तिसकोनिषेधकरतेहैं॥ वहआत्माद्वैतसेरहितहै। और यहसर्वजगत्आत्मस्वरूपहीहै। औरयहदृश्यमानजगत् उत्पत्तिसेपूर्व ब्रह्मात्मस्वरूपहीथा। औरमैंमनुहुआतथामैंहीसूर्यहुआ। औरजिस

निर्विशेषत्रयस्थामें इसविद्वान्कोसर्वजगत्त्र्यात्मरूपहीहुया ॥ और यहभूतभविष्यत् वर्तमानकालीनसर्वजगत् नारायणस्वरूपहीहै । इत्यादिकविधिशास्त्रहै ॥ अत्रनिषेधशास्त्रकोपठनकरतेहैं ।

❀ नेहनानास्तिकिंचन । अथातत्रादेशोनेतिनेति॥नह्ये

तस्मादितिनेत्यन्यत्परमस्ति । अतोऽन्यदार्त्तं ।
नतुतत्तद्वितीयमस्ति॥ नैवेहकिंचनाग्रथासति॥
नासदासीन्नोसदासीत् ॥ ❀ बृ० उ० ॥

अ० ॥ (अथ) सत्यस्वरूपकेनिरूपणासे अनंतर (अतः) जिसकारणसेसत्यकाजोसत्यहै वहीनिरूपणाकरनेयोग्य शेषरहताहै तिसीकारणसे (आदेशः) ब्रह्मकाउपदेशअर्थात्ब्रह्मकेस्वरूपका प्रतिपादनहै॥ तिसब्रह्ममें गुणक्रियादिकशब्दकी प्रवृत्तिकेनिमित्तोंका अभावहोनेसेवहयहीहै ऐसेकथनकरनेकी अयोग्यताकेहुएभीप्रपंचका अपवादकरके तिसनिषेधकाअवधिभूत अधिष्ठानब्रह्मस्वरूपहै ॥ इम प्रकारश्रुतिरूपशब्दकथनकरताहै ॥ तिसउपदेशकाहीस्वरूपकहतेहैं । (नेतिनेति)जोजोदृश्यरूपतासेप्राप्तहैवहब्रह्मनहीं।(हि) जिसकारण से (एतस्मात्नेतीति) इसनिषेधमुखउपदेशसे (नअन्यत्परमस्ति)और अधिकउपदेशब्रह्मकानहींसंभवता। तिसकारणसे यहीब्रह्मका उपदेश संभवताहै। औरइसब्रह्मात्मासेभिन्नसर्वजगत्मिथ्याहै। औरसुषुप्तिअवस्थामेंसाभासअंतःकरणरूपप्रमातृउपलक्षितद्वैतप्रपंचकाअभावहै। और इसअधिष्ठानब्रह्ममेंउत्पत्तिसेपूर्वकिंचित्तमात्रभीनहींथा। औरतिसकालमें सूक्ष्मप्रपंचनहींथा । औरस्थूलप्रपंचभीनहींथा । इत्यादिनिषेधशास्त्र है । यातेआत्मासेभिन्नद्वैतकाअभावमानेहुए यहदोनोंप्रकारकाउप

देशमीसमीचीनहोसकताहै। जैसेइसलोकमेंरज्जुरूपअधिष्ठानमेंमाला सर्पादिकोंके आरोपवालेपुरुषको विधितथानिपेधरूप दोप्रकारका उपदेशहोताहै। कियहसर्पमालादिकरज्जुस्वरूपहैं। वाइसमेंमालादिक नहींहैं। तैसेप्रकरणमेंभीजानना॥ शंका ॥ हेभगवन् यद्यपियात्मा कादोप्रकारकाउपदेशसंभवताहै। तथापिदोनोंप्रकारकेउपदेशोंमें कौन साउपदेशश्रेष्ठहै॥ समाधान ॥ हेशिष्य यद्यपिदोनोंप्रकारकेउपदेशों कोएकअर्थत्वकाही बोधकपनाहै। तथापिविधिसुखउपदेशमेंकिंचित् अतिशयताभीहै॥ तथाहि ॥तिसविधिसुखउपदेशमें दृश्यमानपदार्थों काजोस्वरूपहै मोआत्माहीहै। ऐसेकथनकरेहुए तिसआत्मासेभिन्न किंचित्मात्रभीनहीं किंतुआत्माही एकरसपरिपूर्णहै। यहज्ञान विधि वाक्यसेसाक्षात्ही उदयहोताहै। औरनिपेधसुखउपदेशसे तोसर्वदृश्य केनिपेधकरेहुएनिपेधकाअधिष्ठानरूपताकर आत्माकाज्ञान अर्थसेहोता है साक्षात्नहीं ॥ इतनेमात्रहीदोनों उपदेशोंकी विलक्षणताहै ॥ औरकोईविलक्षणतानहीं ॥ शंका ॥ हेभगवन् जचविधिसुखउपदेश कोअतिशयहोनेकरतिससेही परमपुरुषार्थकीप्राप्तिहोतीहै॥ तोपुनःदो प्रकारकेउपदेशकीप्रवृत्तिकैसेसंभवेगी ॥ समाधान ॥ हेशिष्य अधि करीभेदसेदोनोंप्रकारके उपदेशकीउपयोगताहै। इसीअर्थकोप्रथम दृष्टांतद्वारास्पष्टकरतेहैं जैसेकोईपुरुषरज्जुमें सर्पभ्रमकोप्राप्तहोकरभय सेकम्पायमानहोताहै। तिसकेप्रति रज्जुकेस्वरूपकाज्ञाताकोईदयालु पुरुष “नाज्यंसर्पः”ऐसानिपेधसुखउपदेशही प्रथमकथनकरताहै॥ और “अयंरज्जुरेव” ऐसाविधिसुखउपदेशनहींकरता ॥ तैसेजोपुरुषजन्मा दिसंसारदुःखसेअत्यंतभययुक्तहुया तिसकीनिवृत्तिकीहीप्रथमकामना

करता है ॥ तिसके प्रतिप्रथम निषेधवाच्य ही उपयोगी है ॥ और विधिवाक्य पश्चात् कहने योग्य है ॥ और जैसे रज्जु में सर्प भ्रम को प्राप्त होकर मणि मंत्र श्रौपधादिकों से तिसके प्रतीकार ज्ञान कर निर्भय हुआ जो पुरुष है वह रज्जु के ज्ञाता पुरुष से पूछता है ॥ यह पुरुषोक्ति पदार्थ क्या है ॥ तिसके प्रति "अयं रज्जुरेव" ऐसा ही उत्तर देना युक्त है ॥ "नाऽयं मर्षः" ऐसा निषेध रूप उत्तर युक्त नहीं ॥ तैसे जो पुरुष संसार से अत्यंत उद्वेग युक्त नहीं ॥ किंतु इस दृश्य मान जगत का वास्तव स्वरूप क्या है ॥ ऐसी जिज्ञासा करता है ॥ तिस पुरुष के प्रति [इदं सर्वं यदयमात्मा] इत्यादि विधिवाक्यों से ही उत्तर देना युक्त है ॥ और निषेध मुख उपदेश पश्चात् कहना योग्य है ॥ इस प्रकार अधिकारी के भेद से दोनों प्रकार के उपदेशों का उपयोग होने कर किसी को भी व्यर्थ नाना ही हो सकती ॥ इमहेतु से विधितथानिषेध रूप दोनों प्रकार के उपदेशों कर मत्तचित् यानंद परिपूर्ण स्वरूप प्रत्यक्ष आत्मा है ॥ यह अर्थ मिद्धुत्था ॥ इति ॥ ४६ ॥

[पुनः हेतुदृष्टाके स्वरूपका विचार] गंका ॥ हे भगवन् यद्यपि हेतुदृष्टा वास्तव मुक्तमभिन्न नहीं ॥ इमपन्नमं यद्वेत यात्मसाक्षात्कारको मिद्ध होने कर आत्मा मे भिन्न अनात्माके स्वरूपका अभाव होने से सर्व अनात्मपदार्थ भी विदित अर्थान् जाने जाते हैं ॥ याते पृच्छने योग्य अन्य पदार्थ को ईगपन ही गहा ॥ तथापि वह हेतुदृष्टा कौन है ॥ यह अत्र पर्यंत भी निर्णय नहीं हुआ ॥ ममाधान ॥ हे शिष्य यदि तुम हेतुदृष्टाओं से भिन्न नहीं हो तो तुम प्रश्न करने वाले ही हेतुके दृष्टा हो ॥ गंका ॥ हे भगवन् मम कौन हूं ॥ अर्थ यह ॥ क्या मैं ममागिम्बभाव हूं ॥ अथवा तिम से विलक्षण अयं ममागिम्बभाव हूं? ॥ यद्यपि देहादिकों की आत्मरूपता को

निषेधकरनेवालेऔरकर्तृत्वादि प्रपंचकोमिथ्यात्वबोधन करनेवाले शिष्यनेब्रह्मरूपताआत्माकी पूर्वनिर्णीतकीहै ॥ यातेतिसमेंपुनःउत्तर नहींसंभवता ॥ तथापिपदार्थशोधनद्वाराअर्थसे ब्रह्मात्माकीएकता सिद्धहोतीहै ॥ औरयहांतोसाक्षात्शब्दसे वहएकताकथनकरने योग्यहै ॥ यातेतिसकेअर्थ इसविचारकाआरंभसंभवताहै । इसप्रकार जिसनेतत्त्वंपदार्थशोधनकियेहैं । औरशरणागतहै । तिसअधिकारी केप्रति कृपापरवशहुएश्रीगुरु पुनः उत्तरनिरूपणकरतेहैं ॥ समाधान ॥ हेशिष्यतूअसंसारिब्रह्मस्वरूपहै ॥ शंका ॥

❀ द्वैतद्रष्टृपदार्थके अवयवनकानिरूपणा ॥ ❀

हेभगवन् यदिमुझद्वैतके द्रष्टाका ब्रह्मकेसाथअभेदहै । तोब्रह्म कोविकारिपनाप्राप्तहोगा। यद्यपिविकारसमूह अविद्याकाकार्यहोनेसे मिथ्याहै ॥ यहपूर्वअनेकप्रकारसे निरूपणकरआएहैं । तथापिअन्य प्रकारसेतिसकानिर्णयकरनेकेलिये इसविचारकाआरंभहै । समाधान । हेशिष्यब्रह्मकोद्वैतद्रष्टासे अभिन्नमानेहुए विकारिपनेकीप्राप्तिहोगी । ऐसेकथनकरनेवालेलुभको हमयहपूछतेहैं । यहांद्वैतद्रष्टामेंतीनपदार्थ वर्ततेहैं। द्वैतऔरतिसकीदृष्टि औरएकस्वरूपहै।तहांतिनमेंजोस्वरूपहै तिसकेसाथब्रह्मकाअभेदहोनेसेद्वैतद्रष्टाकेसाथअभेदमानेहुएविकारित्व कीप्राप्तिजोतुमअपादनकरतेहो सोसर्वप्रकारसे नहींसंभवती। क्योंकि वहविकारक्याहै।द्वैतहै अथवातिसकीदृष्टिहै?।यहवक्तव्यहैयदिद्वैतको विकारकहो तोयहपक्षसमीचीननहीं ॥ क्योंकिब्रह्मसेभिन्नसकलद्वैत का “नेतिनेति” यहश्रुतिनिषेधकरतीहै। शंका ॥ हेभगवन् “भूतले

घटोनास्ति” इस प्रकार निषेध किया हुआ भी घट जैसे मृत्तिका का विकार है ॥
 तैसे श्रुतिकर निषेध किया हुआ भी दैत किसी का विकार क्यों न हो ?
 समाधान ॥ हे शिष्य परमत की रीति से सर्वथा घटक निषेध नहीं । किंतु
 सन्मुखदेशवर्तिभूतलसे अन्यदेशमें घटविद्यमान है ॥ और प्रपंचतो
 अधिष्ठानब्रह्मसे अन्यस्थलमें है नहीं ॥ जो अधिष्ठानमें भी तिसका
 अभावबोधन किया तो असत् होने से वह किसी का परिणाम नहीं हो सकता ।
 इसमें उचित दृष्टान्त को कहते हैं जैसे असत् नरशृंग किसी का भी परिणाम नहीं
 शंका ॥ हे भगवन् नरशृंगसे दैत निष्ठविलक्षणता है ॥ क्योंकि नरशृंग
 किसी को प्रत्यक्ष नहीं प्रतीत होता ॥ और यह प्रपंचतो सर्वको प्रत्यक्ष प्रतीत
 होता है ॥ इस प्रकार दैतमें नरशृंगसे विलक्षणता का प्रयोजक धर्म दृष्टि है इसी
 हेतुसे दैतको विकारपना संभवता है ॥ समाधान ॥ हे शिष्य प्रपंचको नरशृंग
 से विलक्षणता माने हुए तिसके विकारपनेमें दैतत्व धर्म प्रयोजक नहीं ॥
 किंतु अपरोक्ष प्रतीतिरूप दृष्टिके साथ संबंधित्वरूप धर्म प्रयोजक है ॥
 तैसे माने हुए (सविशेषणो हि) इसन्यायसे दृष्टिके प्राप्त हुए दैत निष्ठ विकार
 पना प्राप्त होता है ॥ और दृष्टिके अप्राप्त हुए दैतमें विकारपना नहीं प्राप्त होता ।
 याते दृष्टि ही विकार है यह पक्ष तुमको मानना उचित है ॥ किंवा ज्ञान तथा
 ज्ञेय का भेद पूर्व निरास किया है ॥ याते परिशेषसे भी दृष्टिको ही विकार कहना
 योग्य है ॥ इस प्रकार श्रीगुरुकर अंगीकार कराये हुए दृष्टि निष्ठविकास्त्वपक्षको
 शिष्य अंगीकार करता है ॥ शिष्य उवाच ॥ हे भगवन् दृष्टि ही विकार है यह पक्ष
 मुझको स्वीकार है ॥ श्रीगुरु उवाच ॥ हे शिष्य दृष्टिशब्दसे क्या वृत्तिका
 ग्रहण है यथवा विषय निष्ठ अभिव्यक्त हुए फलनामवाले चेतन का ग्रहण है ? ॥
 इनमें प्रथम पक्ष कहो तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि वृत्तिको स्वभावसे जड

होनेकरप्रकाशकपनेकी अनुपपत्तिहै ॥ यातेतिसको दृष्टिपनानहीं
 संभवता । औरद्वितीयपक्षभीअसंगतहै । क्योंकिफलचेतनकोआत्म
 स्वरूपसेअभिन्नहोनेकर आत्माकेपरिमाणपनेकाअसंभवहै । जिस
 कारणसेअपनाआपही परिणामनहींसंभवता॥ किंवा ॥ यदिआत्मा
 भी परिणामकोप्राप्तहोताहै।तोक्यावहसर्वरूपतासेपरिणामकोप्राप्तहोता
 है।अथवाकिसीएकदेशसे परिणामकोप्राप्तहोताहै?प्रथमपक्षमेंतोआत्मा
 काहीअभावप्राप्तहोगा सोअनिष्टहै। यातेप्रथमपक्षअसंगतहै । और
 द्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिआत्मानिस्वयवहै॥ यातेकात्स्न्य
 तथाएकदेश विकल्पसंज्ञकदोपकी प्राप्तिहोनेकर परिणामपक्षनहींसंभ
 वता॥ शंका ॥हेभगवन् यहकात्स्न्यअर्थात् सर्वरूपता तथाएकदेश
 विकल्पाख्यदोपविवर्तपक्षमें भीतुल्यहीहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्य
 विवर्तकेस्वरूपकाहीतुम्हको अज्ञानहै।यदिविवर्तकास्वरूपतुमजानते
 तोयहदोपकीआशंका तुम्हकोनहोती ॥ क्योंकिअधिष्ठानकेस्वरूपसे
 भिन्नविवर्तकिंचित्मात्रभीवस्तुनहीं । जिसकोआश्रयणकरकेकात्स्न्य
 तथाएकदेशविकल्पाख्यदोपकी प्राप्तिहो किंतुअधिष्ठानहीदोपकेश
 सेविलक्षणकारसेभासमानहुआ विवर्तकहाजाताहै ॥ शंका ॥
 हेभगवन् वहविलक्षणकारहीकिसकाहै । यहआपनेकहाचाहिये ॥
 समाधान ॥ हेशिष्यक्याप्रातिभासिकआकारकिसकाहै यहतुमपूछते
 हो।अथवावास्तवआकारकिसकाहै यहपूछतेहो?॥ यदिप्रथमपक्षकहो
 तोवहप्रातीतिकआकार अधिष्ठानकाहीहै । यहहमअनेकबाधोपन
 करआएहैं । औरद्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिवास्तवआकार
 तोवहकिसीकाभीनहीं।जिसकारणसे आत्माकी वास्तवअनात्माकारता

निषेधवाक्योंकर बाधितहोनेसेनहींसंभवती॥ औरआत्मासेअन्यस्थल मेंतिसआकारकी अप्रतीतिहोनेसे वहांभी तिसकाअभावहै । याते वास्तवसेविलक्षणकार किसीकाभीनहीं यहसिद्धहुआ ॥ शंका ॥ हेभगवन् विवर्त्तवादकेव्याजअर्थात्त्वहानेसेअसत्ख्यातिवादकाहीयह आपनेउपपादनकियाहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्य असत्ख्यातिवाद कायहउपपादननहीं।क्योंकिअसत्ख्यातिवादीचार्वाकनेऐसेअंगीकार नहींकिया।तथाहि तिसकमतमेंतोज्ञानअध्यस्तनहीं । औरहमारेमतमें तोख्याति अर्थात्ज्ञानभीअध्यस्तहै । यातेसर्वरूपतासेसमतानहीं औरसमताकेअभावहुए परसिद्धांतकीप्राप्तिभीनहींहोसकती । और सर्वपदार्थोंकोशून्यकहनेवालेवादीकामत तोपूर्वहीनिरासकरआएहैं॥ शंका ॥ हेभगवन् ख्यातिनामस्वरूपचेतनकाहै । तिसकोअध्यस्त मानेहुए शून्यताकी प्राप्तिहोगी ॥ यातेख्यातिनिष्ठअध्यस्तपनाक्याहै समाधान॥ हेशिष्य स्वरूपसेरजतकीन्याई ख्यातिअध्यस्तहै यहहम नहींकहते ॥ किंतुवास्तवसेनिःप्रकारिकख्यातिकोअर्थात्प्रकारशून्य ख्यातिकोआकारांतररूपताकरभानहोनेसे वहअध्यस्तहै।ऐसेहमकहते हैं।यातेशून्यताकीप्राप्तिनहींहोती॥ शंका ॥हेभगवन् तिसआकारांतर कास्वरूपकहाचाहिये । यदिआकारांतरकोआपआत्मस्वरूपहीमानोगे तोआत्मरूपताकरही वहसर्वकोक्योंनहींप्रतीतहोता? ॥समाधान ॥ हेशिष्य द्वैतकावास्तवस्वरूपआत्माहीहै।यहप्रतीतिक्याआत्माकेअपरोक्षज्ञानवालेकोआपादनकरतेहो।अथवाअज्ञानीकेप्रतिआपादनकरतेहो? प्रथमपक्षमेंतोहमकोभीइष्टापत्तिहै । क्योंकिआत्माकेअपरोक्षज्ञानवाले पुरुषकोयहद्वैतनिर्विकल्पकख्यातिअर्थात्आत्मस्वरूपहीभासताहै ॥

और द्वितीयपक्ष भी नहीं संभवता। क्योंकि अन्यप्रकारके आकारकी प्रतीति कालमें स्वरूपप्रतीति का विरोध होनेसे भ्रान्त पुरुषको तिसकी अयोग्यता है ॥ शंका ॥ हे भगवन् भ्रमज्ञानका विषय अधिष्ठानसे भिन्न कोई है ? अथवा नहीं। यदि अन्त्यपक्षकहो तो तिसको भ्रान्तपना कैसे होगा। क्यों कि उसने अधिष्ठान ही देखा है। और यदि प्रथमपक्षकहो तो तिसविषयका स्वरूप आपकर कथन करने योग्य है। समाधान। हे शिष्य अधिष्ठानसे भिन्न किंचित् मात्र भी नहीं ॥ यद्यपि ऐसा माने हुए तिसको भ्रान्तपना नहीं होगा तथापि अन्यवस्तुविषयक प्रतीतिको अन्यविषयत्वके अभिमानसे ही तिसको भ्रान्तपना है। जैसे लोकमें रज्जुको देखता है। और “अयं सर्पः” ऐसे सर्पका अभिमान करता है ॥ तैसे आत्माको देखता है। और “इदं जगत्” ऐसा अभिमान करता है ॥ और यदि तुम यह कहो कि वह अभिमान क्या है। सो तुम श्रवण करो। परमार्थसे स्थित विषयको भासमान हुए भी जो तिसमें अस्तित्वनिश्चय अर्थात् भ्रम है वही अभिमान है ॥ शंका ॥ हे भगवन् यदि वास्तवसे पुरुषको रज्जुविषयक ही प्रत्यय होता है तो पुनः “यह सर्प है” ऐसे सर्पके उल्लेखवाला होकर वह प्रत्यय कैसे स्फुरण होता है ॥ समाधान ॥ हे शिष्य रज्जु तथा सर्पका सादृश्य है। तिसीसे सर्पकी प्रतीति होती है ॥ शंका ॥ हे भगवन् यदि सादृश्यदोषको आप अध्यास का कारण कहोगे। तो आत्मामें अन्याकारताकी प्रतीति नहीं हुई चाहिये। क्योंकि निस्वयव होनेसे तिसमें अनात्माके सादृश्यका अभाव है ॥ समाधान ॥ हे शिष्य आत्मामें तो अज्ञानरूपदोषके वशसे ही अन्याकारताकी प्रतीति संभव है। याते सादृश्यसे अथवा अज्ञानसे भ्रमप्रत्यय संभवता है। इस कारणसे ही “नायं सर्पः” इस वाधके उत्तर रज्जु ही मने

सर्परूपताकरदेखी।ऐसेयहपुरुषमानताहै । याते“अयंसर्पः” यहप्रत्यय
 असत्रूपहै ॥ शंका ॥ हेभगवन्क्यासर्पउसने देखाहीनहीं ? यदि
 आपइसअर्थको स्वीकारकरलोगेतो अनुभवकाविरोधप्राप्तहोगा ।
 क्योंकिभ्रमकालमें सर्पकाअनुभवसर्वपुरुषोंकोप्रसिद्धहै ॥समाधान॥
 हेशिष्यभ्रांतपुरुषके अनुभवकाविरोधहुएभी विरोधनहींहोता।क्योंकि
 तिसभ्रांतपुरुषकोक्याप्रतीतहुयाक्यानहींप्रतीतहुयाइसप्रकारकेविवेक
 का प्रभावहै ॥ औरभ्रांतिसरहितपुरुषकोऐसाअनुभवहोतानहीं इसी
 से अनुभवकाविरोधनहीं है ॥शंका॥ हेभगवन् “रज्जुहीमैनेदेखीसर्प
 नहींदेखा”ऐसेकथनकरेहुएप्रामाणिकपुरुषकेअनुभवकेअनुमारदृष्टान्तमें
 तोअधिष्ठानरज्जुऔरतिसकोविषयकरनेवालीप्रतीतियहदोपदार्थवर्ततेहैं
 सर्पतथासर्पकाज्ञानयहदोनोंनहीं हैं। क्योंकिभ्रांतपुरुषकीप्रतीतिआदर
 करनेयोग्यनहीं । औरभ्रांतिज्ञानऔरतिसकेविषयकाअसत्त्वपूर्वसमीप
 हीकथनकरआएहैं।औरदार्ष्टान्तमेंतोस्वप्रकाशचेतनआत्माहीअधिष्ठान
 है । तिसविषयकदूसरीप्रतीतिकास्वीकारनहीं । क्योंकिअधिष्ठानऔर
 तिसकीप्रतीतियहदोनोंआत्माहीहैं॥ऐसेमानेहुएअधिष्ठानहीस्वस्वरूप
 कोनत्यागकरकेरूपांतरसेभासमानहुआविवर्तहै। यहपक्षदूरहुया।क्यों
 किअधिष्ठानसेभिन्नविवर्तकास्वरूपदिखलानेकेअयोग्यहै । यातेरूपां
 तरकाअभावहोनेसे भानकर्तृत्वकाभीअभावहै । इससेस्वसिद्धांतका
 परित्यागअतिस्पष्टहै॥ समाधान ॥ हेशिष्य स्वसिद्धांतकात्यागनहीं
 होता ॥ क्योंकितिसविवर्तवादकोमध्यमअधिकारियोंकेप्रतिबोध
 मात्रप्रयोजनवालाहोनेकरउपनिषदोंकेतात्पर्यकी विषयतातिसमेंनहीं
 है ॥ तात्पर्ययहहै ॥ किजैसेमंदरकेशिखरपरआरूढहोनेकीइच्छा

बालापुरषसोपानके एकपर्वसे दूसरेपर्वपरचरणरखताहुआमंदरकेशिखर पर आरूढहोजाताहै । इससोपानारोहणन्यायसे अद्वितीयचेतनमें बुद्धि के प्रवेश अर्थ प्रपंचका प्रथम आरोपकरके निषेधकरतीहुई श्रुतिभगवती विवर्तमें पर्यवसानताको प्राप्तहोतीहै ॥ वास्तवसे अन्याकारप्रतीतिके सद्भावप्रतिपादनमें श्रुतिका तात्पर्यनहीं । अन्यथा समन्वय अधिकरण का विरोध प्राप्तहोगा ॥ क्योंकि तिसमिथ्याप्रतीतिको आत्माकी न्याई प्रमाण सिद्धहोनेकरतिससेही द्वैतकी प्राप्तिहोजायेगी । याते विवर्तमें भी वास्तवसे श्रुतिका तात्पर्यनहीं । इसीसे स्वसिद्धांतकी भीहानिनहीं ॥ शंका ॥ हे भगवन् वह द्वैतदृष्टिमिथ्याहीहै । याते दूसरी मत्त्वस्तु का अभावहोनेसे द्वैतकी प्राप्तिनहींहोती ॥ समाधान ॥ हे शिष्य द्वैतदृष्टिनिष्ठ यह मिथ्यात्व क्याहै ॥ क्यात्रैकालिक अमत्त्वका नाममिथ्यात्वहै । वा असत्पनेके तुल्यहुएभी कादाचित्कप्रतीति विषयत्वरूपमिथ्यात्वहै? द्वितीयलक्षण गतपदोंका प्रयोजन कहतेहैं ॥ यदि "असत्" मात्रही मिथ्यात्वकालक्षण कहतेतोगगनकमलादिकोंमें अतिव्याप्तिहोती । तिसके निवारण अर्थ "कादाचित्कप्रतीतिविषयत्व" यहपदकथनकियाहै । औरप्रतीतिभी यहां अयरोक्षही विवक्षितहै ॥ और असत्नामसद्विलक्षणकाहै । और यदि कादाचित्कप्रतीतिविषयत्वही मिथ्यात्वकालक्षणकहें तो वृत्ति व्याप्यत्वरूपताकर आत्मामें भी मिथ्यात्वप्राप्तहोगा ॥ तिसकी निवृत्ति अर्थ "असत्" यह विशेषणकथनकियाहै । आत्मासत्से विलक्षणनहीं किंतु सत् रूपहै ॥ याते तिसमें मिथ्यात्वके लक्षणकी अतिव्याप्तिनहीं होनी ॥ और "कादाचित्क" पदस्वरूपकथनपरहै । वह किसीका व्यावर्तक नहीं । याते लक्षणका यह निष्कर्ष सिद्धहुआ ।

सद्वैलक्षण्येसति अपरोक्षप्रतीतिविषयत्वांमिथ्यात्वम्।

अ० ॥ सतसेविलक्षणहुया अपरोक्षप्रतीतिकाजोविषयहोसो

मिथ्याहै ॥ इति ॥ इसप्रकारद्वितीयपक्षगतमिथ्यात्वका लक्षणकह

करअवत्रैकालिकअसत् रूपहीप्रतीतिनिष्ठमिथ्यात्वहै। इसप्रथमपक्षकोइष्टा

पत्तिसेदूषितकरतेहैं । प्रथमपक्षकहोतोवहहमकोभीस्वीकारहै। क्योंकि

श्रुतिभगवतीद्वैतका त्रैकालिकअत्यन्ताभाव बोधनकरतीहै। औरद्वितीय

पक्षभीनहीसंभवता । क्योंकितिसमिथ्याप्रतीतिसेभी अद्वैतकीहानि

पूर्वकीन्याईहीअवस्थितहै । इसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं । “अयंसर्पः”

इसप्रतीतिकोमिथ्या कथनकरनेवालेवादीनेतिस प्रतीतिविषयकऔर

प्रतीतिअवश्यकहनेयोग्यहै ॥ क्योंकिमिथ्यात्वकालक्षणप्रतीति

कर्मत्वअर्थात्प्रतीतिविषयत्वकरघटितहै नैसेमानेहुएवहप्रतीतिभि

क्यामिथ्याहै। अथवापारमार्थिकसत् रूपहै ॥ वातुच्छहै? ॥अन्त्यपक्ष

तोनहीं संभवता । क्योंकि अन्यप्रतीतिकीन्याई प्रथमप्रतीतिकोभी

तुच्छताप्राप्तहोगी ॥ औरमध्यमपक्षभीनहींसंभवता॥क्योंकिद्वैतकी

प्राप्तिहोतीहै । वहअनिष्टहै॥ औरअनवस्थादोषकीप्राप्तिहोनेसेप्रथम

पक्षभीअसंगतहै ॥ यातेपूर्वउक्तमिथ्यात्वकालक्षणनहींसंभवता ।

शंका ॥ हेभगवन् “अयंसर्पः” इसप्रथमप्रतीतिकेमिथ्यात्वकानिर्वाह

करनेकेलियेतिसविषयक अन्यप्रतीतिकास्वीकारहै ॥ औरतिसके

माननेसेअनवस्थादोषकीभीप्राप्तिनहींहोती ॥ क्योंकिवहअन्यप्रतीति

साक्षिरूपहै । औरतिसमाप्तीकोस्वप्रकाशताहोनेकर अन्यप्रतीतिकी

भीअपेक्षानहीं। औरतिसकोआत्मस्वरूपहोनेकरद्वैतकीभीप्राप्तिनहीं।

समाधान ॥ हेशिष्य (असंगोह्ययंपुरुषः) इसश्रुतिसेसाक्षि

निष्ठग्रसंगतहै । औरसंबंधसे विना प्रकाशकताका असंभवहै ॥
 औरसाक्षीमेंकादाचित्कपनेकीभी अनुपपत्तिहै । क्योंकिवहनित्यहै ॥
 इसीअर्थकोस्पष्टकरतेहैं। हेशिष्यसाक्षिशब्दसेअविद्याकीवृत्तिमेंआरूढ
 चेतनकाग्रहणहै।अथवाशुद्धचेतनमात्रकाग्रहणहै?। प्रथमपक्षतोनहीं
 संभवता ॥ क्योंकिविशिष्टपदार्थमिथ्याहोताहै ॥ यदिविशिष्टकोभी
 पारमार्थिकमानों तोविशेषणरूपवृत्तिकोभीपारमार्थिकत्वप्रसंगहोगा ॥
 औरविशिष्टकोमिथ्यामानेहुए अनवस्थादोषपूर्वकीन्याईहीअवस्थित
 है।औरयदिऐसेकहो किवृत्तिमेंप्रतिबिंबतचैतन्यस्वस्वरूप तथावृत्तिइन
 दोनोंकोप्रकाशकरदेगा।क्योंकिवहस्वप्रकाशस्वरूपहै ॥ सोयहकथन
 भीनहींसंभवता ॥ क्योंकिलक्षणमें प्रतीतिविषयत्वकथनकियाहै ॥
 औरएकहीपदार्थ मेंकर्तृकर्मविरोधहोनेसेप्रतीतिविषयत्वकाअसंभवहै ॥
 औरशुद्धचेतनमात्र साक्षिशब्दकाअर्थहै यहतृतीयपक्षयदिकहो तो
 तिसमेंयहविचारणीयहै वहसाक्षीस्वसंबंधिपदार्थकोप्रकाशकरताहै ॥
 अथवास्वअसंबंधीकोभीप्रकाशकरताहै?। प्रथमपक्षतोनहींसंभवता॥
 क्योंकितिसकाकिसीपदार्थसेसंबंधनहीं।यहअर्थश्रुतिमेंप्रसिद्धहै। और
 द्वितीयपक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकिप्रदीपादिकों मेंस्वसंबद्धअर्थका
 हीप्रकाशकपनादेखाहै ॥ स्वअसंबद्धकानहीं ॥ तेसेसाक्षीभीस्वअसं
 बद्धअर्थकोकैसेप्रकाशकरेगा किंतुनहींकरसक्ता ॥ किंवा ॥ द्वैत
 दृष्टिजोहै।सोक्याप्रमाणसिद्धहै।अथवाभ्रमसिद्धहै?। प्रथमपक्षतोनहीं
 संभवता । क्योंकिअद्वैतप्रतिपादकश्रुतिकाविरोधप्राप्तहोगा । और
 द्वितीयपक्षभीनहींसंभवता । क्योंकिभ्रान्तिसिद्धपदार्थनियमसेअसत्
 होताहै । औरयदिभ्रान्तिसिद्ध पदार्थकोभीसत्मानोगे । तोतिसको

भ्रांतिविषयत्वकाहीअभावहोगा । इसपूर्वकथनसेयहअर्थसिद्धहुआ
किआत्मानिष्ठद्वैतदृष्टिकदाचित्मीनहींसंभवती । इसीअर्थकोयह
श्रुतिभीकहतीहै ॥

❀ यद्वैतन्नपश्यति पश्यन्वतन्नपश्यति । ❀ वृ० ३०

अ०॥ जोयहआत्मासुषुप्तिकालमेंकिसीद्वैतपदार्थकोनहींदेखता
सोदेखताहुआहीनहीं देखता।तात्पर्य्यहहै॥ तिसकालमेंआत्मादेखता
नहीं इसहेतुसेजडहै ऐसेनहींजानना किंतुआत्मातोअलुप्तदृष्टिहै
परन्तुकोईअनात्मपदाथवहांहैनहीं यातेकिसकोदेखे॥ यहश्रुतिअलुप्त
दृष्टिरूपआत्मानिष्ठ द्वैतदृष्टिकोनिवारणकरतीहै ॥ और

❀ बालान्प्रतिविवर्त्तोऽयं ब्रह्मणः सकलंजगत् ।

अविवर्त्तितमानंदवर्त्ततेकृतिनःसदा ॥ १ ॥ ❀

अ० ॥ (बालान्) मध्यमअधिकारियोंकेप्रतियहसर्वजगत्ब्रह्म
काविवर्त्तकथनकियाहै । और (कृतिनः) उत्तमअधिकारियोंको
तोविवर्त्तसेरहितआनंदस्वरूपब्रह्मही सर्वदाकालवर्त्तमानहै ॥ १ ॥
यहस्मृतिभीआत्मानिष्ठद्वैतदर्शनका अभावहीमानतीहै । इसप्रकार
आत्मामेंद्वैतदर्शनका अभावश्रुतितथास्मृतिकरसिद्धहैइति॥ शंका ॥
हेभगवन्कार्यसहित अज्ञानरूपद्वैतकाआत्मामेत्रैकालिकअत्यंताभाव
है ॥ इसपक्षमेंनित्यमुक्ततथा असंसारीआत्माकोतत्त्वमस्यादिशास्त्र
करसाध्यप्रयोजनकाअभावहोनेसे शास्त्रकोनिष्फलताकीप्राप्तिहोगी।
तथाहितत्वमस्यादिशास्त्रक्याप्रत्यक्ब्रह्मके अभेदकोप्रकाशकरताहै ।
अथवातिसकेअज्ञानादिकोकी निवृत्तिकरताहै । प्रथमपक्षतो नहीं
संभवता । क्योंकिप्रत्यक्ब्रह्मका अभेदचेतन रूपहोनेसेस्वप्रकाशहै॥

औरद्वितीय पक्षभी नहींसंभवता ॥ क्योंकि अत्यंत असत्पदार्थ
नित्यही निवृत्तहै ॥ इसप्रकारदोनोंपक्षोंमें शास्त्रकीनिष्फलता है ॥
समाधान ॥

***अथअसत्कानिर्वर्त्तकरूपकरशास्त्रकीसफलता
कानिरूपणा ॥ ❀**

हेशिष्यनित्यमुक्त तथाअसंसारी आत्मानिष्ठ अत्यंतअसत्
संसारकानिर्वर्त्तकरूपनाकरही शास्त्रकीसफलताहै । और “नासी
दस्तिभविष्यति” इत्याकारकबाधका उत्पादकत्वहीसंसारकानिर्वर्त्तक
त्व शास्त्रनिष्ठजानना॥औरश्वंसकानामनिवृत्तिनहींहै।क्योंकितिसको
पूर्वनिषेधकरआएहैं॥ औरवहसंसारकानिर्वर्त्तकत्वभी शास्त्रकोप्रत्यक्ष
तथाब्रह्मकेअभेदगोचर अपरोक्षवृत्तिके उत्पादनद्वाराहीजानना। यह
भावहै ॥ शंका ॥हेभगवन्अत्यंतअसत् पदार्थकोनित्यहीनिवृत्तहोने
करतिसमेंशास्त्रकाव्यापार निष्फलहीहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्ययदि
शास्त्रअसत्कोनहींनिवृत्तकरता।तोअसत्कोनिवृत्तकरताहै। अथवा
अनिर्वचनीयको निवृत्तकरताहै? ॥ यहविचारणीयहै । प्रथमपक्षतो
नहींसंभवता । क्योंकिजैसेअसत्को शास्त्रनहीं निवृत्तकरता तैसे
सत्कोभीनिवृत्तनहींकरता। जिसकारणसे सत्कोशास्त्रनिवृत्तकरताहै
यहभीकहींनहींदेखा।अन्यथासत्आत्माकीभीनिवृत्तिहोगी॥औरयदि
अनिर्वचनीयकोशास्त्रनिवृत्तकरताहै।यहद्वितीयपक्षहोतोवहभीनहीं
संभवता । क्योंकितिसकीनिवृत्तिभीशास्त्रकर देखनेमेंनहींआती ॥
कारणयहहै।किअनिर्वचनीयपदार्थ निवृत्तहोताहै । इसवार्त्तामेंवादी
तथाप्रतिवादीकोनिर्णयितस्थलकोईभीनहीं ॥ यातेअनिर्वचनीयको

भीशास्त्रनहीं निवृत्तकरता ॥ शंका ॥ हे भगवन् जगत्को अत्यंत
असत् प्रापने कथन किया । और तिमकानि वर्तकशास्त्र है ॥ यह वार्त्ता
प्रापने नर्कसे प्रतिपादन की है ॥ प्रमाणकर सिद्ध नहीं । इस आशंकाको
श्रीगुरु निषेध करते हुए और शास्त्रकी सार्थकरूपतासे प्रमाणताको
उपसंहार करते हुए उत्तर कहते हैं ॥ ममाधान ॥ हे शिष्य जिस कारणसे
प्रपञ्च अत्यंत अमत् है इसी कारणसे

❀ विमुक्तश्च विमुच्यते । निवृत्तं च निवर्त्तते ॥ ❀

इत्यादि शास्त्रमें अत्यंत अमत् संसारका निवर्त्तकरूपता कर ही
शास्त्र निष्ठ प्रामाण्य की मीद्वि है । यह श्रुति अन्य अर्थ परहे इस आशंकाको
निवारण करनेवाला मंत्रेण शरीर फकाश्लोक पठन करते हैं ॥

❀ नित्यबोधपरिपीडितं जगद्विभ्रमं नुदति वाक्यजामतिः ।
वासुदेवनिहतं धनं जयो हन्ति कौरवकुलं यथा पुनः ॥❀

(अ० २ श्लो० ३८)

अ० ॥ नित्यज्ञानस्वरूप आत्मामें स्वप्रकाशस्वरूप बोधके प्रभाव
से यह जगत् रूप भ्रम "पीडित" कहिये अमत् है ॥ तिस नित्य निवृत्त संसारको
ही तत्त्वमस्यादि वाक्यसे उत्पन्न हुआ आत्मा का पुनः निवृत्त करता है । जैसे
श्रीकृष्ण भगवान् कहन न करे हुए कौरवकुलको पुनः अर्जुनहनन करता है ।
यह स्मृति भी नित्यबोधस्वरूप आत्मामें स्वरूपका विचार करके जगत् रूप
भ्रमके अत्यंत अमत्त्वको ही कथन करती है । याते अमत्की निवृत्ति करके
ही शास्त्रको मफलता है । यह अर्थ मीद्वि हुआ ॥ किंवा ॥ शास्त्रको अर्थकर
रूपता करके प्रामाण्यका जो प्रापादन है । मोक्ष्यादितवादीके प्रति है । अथवा
अद्वैतवादीके प्रति है । प्रथमपत्रमें होतो ब्रह्ममें भिन्न शास्त्रमत् रूप है ऐसे

माननेवालेवादियोंकेप्रतिशास्त्रनिष्ठप्रमाणताकीप्राप्तिरूपदोषहोगा ॥
 क्योंकिवहप्रमाणकोहीमुख्यमानतेहैं। औरअद्वैतवादियोंकेप्रतितिसदोष
 केआपादनकीअयोग्यताहै ॥ क्योंकिजोद्वैतकीवार्त्ताभीनहींजानते।
 किंतुसदाहीअद्वैतहै। ऐसामानतेहैं। तिनकोयहदोषकैसेप्राप्तहोसकता
 है। शास्त्रअथवातिसकीप्रमाणता ब्रह्मसेभिन्नतिनकोस्वीकारहीनहीं
 यदिब्रह्मसेभिन्नइनदोनोंकोमाने तोइनदोनोंकरहीअद्वैतकीहानिहोगी
 ॥ शंका ॥ हेभगवन् यदिवेदको आपथप्रमाणमानोगे तोआपको
 पाखंडत्वप्राप्तहोगा॥क्योंकिवहवेदकोप्रमाणनहींमानता॥ समाधान॥
 हेशिष्य वेदमेंहमअप्रमाणताभी नहींमानते॥ यातेपाखंडपनेकीप्राप्ति
 हमकोनहींहोती॥ औरवास्तवसेतोपाखंडत्वभी आत्मासेभिन्नअत्यंत
 असत्हीहै। अद्वैतवादीकेप्रतितिसकाआपादनहीनहींसंभवता॥ यहभाव
 है ॥ शंका ॥ हेभगवन् वेदकीअप्रमाणताके अनंगीकारकरेहुएभी
 तिसकीप्रमाणता आपअंगीकारकरतेहो। वानहीं? प्रथमपक्षमेंतोद्वैतकी
 प्राप्तिहोगी। योंकिब्रह्मसेभिन्न तिसकीप्रमाणताआपनेमानीहै। और
 द्वितीयपक्षमें ब्रह्मात्माकेअभेदकीअसिद्धिहोगी। क्योंकितिसमेंप्रमाण
 काअभावहै ॥ समाधान ॥

अथअद्वैतनिष्ठअप्रामाणिकत्वशंकाकापरिहारनिरूपण

हेशिष्य यहतुम्हाराविकल्प द्वैतदर्शिकेप्रतिहै। अथवाअद्वैतदर्शी
 केप्रतिहै? प्रथमपक्षकहो तोहमारीश्याहानिहै। क्योंकिप्रमाणके
 आधीनआत्माकी सिद्धिमाननेवाले द्वैतदर्शिकेप्रति तिसदोषकीप्राप्ति
 होगी। औरद्वितीयपक्षमें तोप्रमाणप्रमेयभावकीहीअसिद्धिहै॥क्योंकि
 [यत्रत्वस्यसर्वात्मैवाभूत्] इसश्रुतिनेअद्वैत आत्माकाही

प्रतिपादनकिया है ॥ किंवा ॥ प्रमाणका अन्वेषण तुम किसलिये करते हो। यदि यह कहो। कि अद्वैत आत्माकी प्रतीतिके अर्थ प्रमाणका अन्वेषण है तो यह कथन नहीं संभवता। क्योंकि स्वप्रकाशरूपता कर ही अद्वैत आत्माकी सिद्धि है ॥ यह अर्थ विस्तारसे पूर्व निरूपण कर आएँ ॥ और यदि अज्ञानकी निवृत्ति अर्थ प्रमाणकी अपेक्षा कहो तो भी अद्वैतको सिद्ध होने पर तिसमें प्रमाणकी अपेक्षा नहीं। याते अद्वैतको अप्रामाणिकताकी प्राप्ति नहीं हो सकती ॥ इति ॥ द्वैतदर्शिक प्रति तिसको दोषरूपता है यह पूर्व कहा था। तिसको ग्रहण करके पुनः शिष्यशंका करता है ॥

✽ अथ द्वैतदर्शित्वपदार्थके विचारनिरूपणपूर्वक द्वैत
निष्ठतुच्छत्वका प्रतिपादन ॥ ✽

शंका ॥ हे भगवन् द्वैतदर्शित्व क्या आत्माका धर्म है ॥ अथवा आत्माका स्वभाव है ॥ प्रथमपक्षमें भी पुनः यह विचारकर्तव्य है। वह धर्म क्या सत है अथवा असत है ॥ द्वितीयपक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि असत् बंध्याके पुत्रको किसीका धर्म पना दे खानहीं ॥ और प्रथमपक्ष कहोगे तो द्वैतकी प्राप्ति होगी ॥ और आद्यद्वितीयपक्षमें दर्शनका द्वैतको विशेषण पना ही कहने योग्य है उपलक्षण पना नहीं ॥ क्योंकि द्वैतको उपलक्षण माने हुए “दर्शित्व” ही आत्माका स्वभाव सिद्ध होगा। वह स्वदर्शित्वरूपता कर भी बन सकता है। याते द्वैतपदका ग्रहण व्यर्थ होगा। इससे यह अर्थ सिद्ध हुआ। कि द्वैतविशिष्टदर्शित्व आत्माका स्वभाव है ऐसे माने हुए सर्व द्वैतकी भी स्वतः सिद्धि होगी ॥ क्योंकि विशिष्टवृत्तिधर्मका विशेषणमें वर्तनेका नियम है ॥ समाधान ॥ हे शिष्य द्वैतको आत्माका स्वभाव माने हुए तिसकी भी स्वतः सिद्धि होगी। यह तुम्हारा कथन नहीं संभवता।

क्योंकि इसमें यह विचार कर्तव्य है। क्या आत्मा स्वरूप ही द्वैत है ऐसा अंगीकार करके तुम द्वैत की स्वप्रकाशता आपादन करते हो। अथवा स्वतंत्र रूपता कर द्वैत की स्वप्रकाशता कहते हो? प्रथम पक्ष में तो हमको भी इष्टा पत्ति है। क्योंकि आत्मा की स्वप्रकाशता स्वतः सिद्ध है। और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि (निवृत्तचनिवर्त्तते) यह श्रुति आत्मा से भिन्न सर्वको तुच्छता बोधन करती है। और पूर्ण आत्मा के प्रति पादक श्रुति वाक्य कर सिद्ध पूर्ण आत्म स्वरूप की अनुपपत्ति से भी द्वैत निष्ठ तुच्छता है। याते स्वतः अथवा परसे द्वैत की सिद्धि अयोग्य होने से द्वैत अत्यंत अलीक है ॥ इति श्रुति सिद्ध आत्मा के स्वरूप की अनुमाता से द्वैत को तुच्छ पना कथन किया ॥ तिसके उपपादन करने के लिये पुनः शिष्य आशंका करता है ॥

❀ अथ लौकिक तथा परीक्षक पुरुषों के तुच्छत्ववाद का अनंगीकार निरूपण ❀

शंका ॥ हे भगवन् आत्मा से भिन्न द्वैत औत्तिसका दर्शन यह दोनों तुच्छ है ॥ इसमें यह प्रष्टव्य है। कियह मत लौकिक पुरुषों को स्वीकार है। अथवा परीक्षक पुरुषों को स्वीकार है? ॥ यहां परशास्त्र संस्काररहित बुद्धि वाले पुरुष लौकिक कहे जाते हैं ॥ और शास्त्र संस्काररहित बुद्धि वाले पुरुष परीक्षक कहे जाते हैं ॥ यदि प्रथम पक्ष कहो तो वह नहीं संभवता ॥ क्योंकि तिन लौकिक पुरुषों को प्रपंच विषयक अज्ञातत्व बुद्धिक वी भी दूर नहीं होती तो तिसमें तुच्छत्व बुद्धि तो अत्यंत दूर से ही निरासर्की गई ॥ और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि सर्व परीक्षकों की एक मति नहीं है ॥ तथाहि ॥ तिनमें सर्व प्रमाण प्रमेय व्यवहार के लोप करने वाला प्रामाणिक जो सर्व शून्यवादी है ॥ तिसने सर्व पदार्थों का तुच्छ पना स्वी

कारकियाहै॥ और शून्यत्वसे विरुद्ध नित्य तथा अनित्यके विभाग कर कोई कथा काशादिक पदार्थ सकल कालमें सत्य हैं॥ और कोई कथटादि पदार्थ कादाचित्क सत्य हैं॥ इस प्रकार कणाद तथा गौतमादि प्रामाणिक पुरुषों ने स्वीकार किया है ॥ और दोनों प्रकारकी पदार्थोंकी सत्तासे विरुद्ध सर्व कालमें सर्व पदार्थोंकी सत्ता है । यह सांख्य तथा योगशास्त्रके कर्ता कपिल तथा पतंजलि महर्षिने स्वीकार किया है ॥ क्योंकि तिनके मतमें कार्य भी सत् है ॥ तथा हि प्रथम वह कार्य उत्पत्तिसे पूर्व भी अस्त नहीं । क्योंकि तिस कालमें भी सूक्ष्म रूपसे कार्य विद्यमान है ॥ और वर्तमान कालमें तो विद्यमान होने से ही कार्य अस्त रूप नहीं ॥ और ध्वंस भी तिरोधान मात्र रूप है अभावकानाम ध्वंस नहीं ॥ याते नाशसे अनन्तर भी तिरोधान हुआ कार्य विद्यमान है ॥ इस प्रकार सर्व कालमें सर्व पदार्थ सत् रूप हैं । यह सांख्य तथा पातंजलादिकोंका मत है ॥ इमरीतिसे सर्व परीक्षकोंका परस्पर विरोध होनेसे आत्मासे भिन्न सर्व अनात्मामें तुच्छता किसीको भी स्वीकार नहीं तैसे द्रुएल्लोकिक तथा परीक्षक पुरुषोंसे विरुद्ध जगत्का तुच्छत्व कैसे स्वीकार करनेके मार्गमें आरूढ होगा किंतु नहीं होगा । और यदि आप ऐसे कहो कि परीक्षकोंका मत भी परस्पर विरुद्ध होनेसे त्यागने योग्य है ॥ सो यह कहन भी नहीं संभवता । क्योंकि तिस तिस शून्य तथा सर्वदा सत्त्व तथा कादाचित्क सत्त्वादि जो पदार्थ हैं तिनमें एक एक परीक्षकका अंगीकार तो अव्याहत है अर्थात् अबाधित है । और तुच्छत्वपक्षमें तो किसीका भी अंगीकार नहीं । याते वही त्यागने योग्य है । और यदि सिद्धांती ऐसे कहे कि तुच्छत्वपक्षमें परीक्षकके अंगीकारका अभाव असिद्ध है । क्योंकि

मुझपरीक्षकका अंगीकारतिसमेंविद्यमानहै ॥ सोयहकथनभीअसं
गतहै । क्योंकितुझकोअप्रामाणिकपनाहैअर्थात्प्रमाणसेपरीक्षाकर
केव्यवहारकरनेवालेकानामपरीक्षकहै। औरतुच्छतामेंकोई प्रमाणनहीं
है । यदितुच्छतामेंभीकोईप्रमाण मानोगे तोतुच्छपनेकीहीहानि
होगी ॥शंका॥ वस्तुकेदोरूपनहींसंभवते । इसहेतुसेसर्वपक्षप्रामाणिक
कहीहैं । यहनहींकथनकरसकते । इसप्रकारसर्वको परस्परविरुद्ध
होनेकर इनमेंकौनपरीक्षकहै।औरकिसकामतसमीचीनहोनेसेउपादेय
है । औरकिसकामतअसमीचीनहोनेसे त्यागनेयोग्यहै । इसअर्थमें
नियामककाअभावहोनेसे एककाभी ग्रहणनहींहोगा । किंतुसर्वमतों
कात्यागहोगा ॥ समाधान ॥ नित्यतथानिर्दोषवेदमूलकताकेसद्भाव
तथाअसद्भावकोही इनकी विशेषतामें नियामकताहै ॥ अर्थात्
जिसकामतवेदमूलकहै।वहग्रहणकरनेयोग्यहै ॥ औरजिसकामतवेद
मूलकनहीं वहत्यागनेयोग्यहै । जैसेपाखंडियों कामतवेदमूलकन
होनेसेत्यागनेयोग्यहै। इसप्रकारशिष्यद्वारा पूर्वपक्षकेप्राप्रहुए श्रीयरु
द्वारासिद्धांतीउत्तर निरूपणकरताहै ॥ समाधान ॥

❀ अथश्रुतिप्रमाणसे तुच्छत्ववादकाउपपादन ❀

हेशिष्य यहतोअत्यंत हर्षकीवात्ताहै ॥ क्योंकिअंतकोजाकर
भीपुनःयदिश्रुतिपस्ही तुम्हाराविश्वासहै ॥ तोश्रुतिसिद्धजोनिर्दोष
मतहैवहीग्रहणकरनेयोग्यहै । तिससेभिन्नसर्वहीत्यागनेयोग्यहैं ॥
क्योंकिवहअप्रामाणिकहैं ॥ शंका ॥ हेभगवन् इतस्मतअप्राणिकहैं
यहकथनअयुक्तहै। क्योंकिइतरपक्षभी प्रत्यक्षादिप्रमाणमूलकहीहैं ।
समाधान ॥ हेशिष्य श्रुतिकविरोधहोनेसेप्रत्यक्षादिकप्रमाणआभास

रूपताको प्राप्त होते हैं। याते इतर मतोंमें अप्रमाणिकता सिद्ध है ॥ शंका ॥ हे भगवन् श्रुतिसान्नात प्रपंचकी तुच्छताके बोधनमें तात्पर्यवाली नहीं क्योंकि समन्वय अधिकरणका विरोध होगा। तिसमें सर्ववेदका तात्पर्य एक अद्वितीयवस्तुमें प्रतिपादन किया है। समाधान। हे शिष्य श्रुतियें तो आत्मासे भिन्न सर्व अनात्मपदार्थोंमें तुच्छताका अभिमान करते हैं। उन श्रुतियोंको ही पठन करते हैं ॥

❀ सदेव सोम्येदमग्र आसीत् एकमेवाद्वितीयं। नेह नाना स्ति किंचन। स एषनेति नेतीति। ❀

❀ अथ तस्यायमादेशः अत्र मात्राश्चतुर्थो व्यवहार्यः प्रपंचो पशमः शिवोऽद्वैतः ॥

अ० ॥ यह नित्य अरोक्ष आत्माकार्यकारण तथा स्थूलसुक्ष्मरूप नहीं। अथ तिसका यह निषेध मुखउपदेश है। तथाहि ॥ जो वस्तु प्रमाका विषय हो तिसको मात्रा कहते हैं। जो मात्रासे भिन्न हो सो अत्रात्र कहा जाता है। अथात् अत्रमेय है। अथवा ॥ मात्रानामत्रवयवका है तिससे रहित कानामत्र है। इस कथनसे स्वगतभेदकानिषेध आत्मामें सिद्ध हुआ ॥ और तुरीयचेतन कानामहीचतुर्थ है ॥ और (अव्यवहार्यः) कथनादिव्यापारका अविषय है ॥ तिस आत्माकी पुरुषार्थरूपताको कहते हैं ॥ (प्रपंचोपशमः) दुःखरूप प्रपंचका अत्यन्तभाव रूप है ॥ यहां आत्माको प्रपंचाभावरूपता तवी सिद्ध हो जब प्रपंच अस्त रूप सिद्ध हो। क्योंकि अस्तका अभाव अस्त रूप होता है। जैसे अस्त सर्पका अभाव अस्त रज्जु रूप है। इस कथनसे विजातीयभेदकामी आत्मामें निषेध किया तिस आत्माकी सुखरूपता कहते हैं। (शिवः) वह आत्मा सुखस्वरूप है।

और (अद्वैतः) सजातीयभेदसेरहितहै ॥ इसप्रकार त्रिविधभेदका निषेधकरनेसे श्रुतार्थापत्तिप्रमाणप्रपंचकात्रैकालिकअभावबोधनकरता है ॥ शंका ॥ इसप्रकारत्रैकालिकअभावकाप्रतियोगिरूपताकरजब श्रुतिबोधनकरेगी ॥ तोप्रपंचकीप्रमाणसेसिद्धिप्राप्तहोगी ॥ समाधान श्रौतिकरूपस्थितहुएपदार्थकोभी अभावकीप्रतियोगिता संभवतीहै यदिऐसेनमानें तो (नसुरांपिबेत्) अ० ॥ सुराकोयहपुरुषपान नकरे।इत्यादिनिषेधकवाक्योंसेभीसुरापाननिष्ठप्रामाणिकताहुईचाहिये जैसेरागसेप्राप्तसुरापानकेनिषेधकोश्रुतिबोधनकरतीहै।परन्तुतिसनिषेध काप्रतियोगिरूपताकरसुरापानप्रामाणिकनहींहोसकता॥ तैसेदाष्ट्यांत मेंभीजानना ॥ और “श्रुतियें अभिमानकरतीहैं” ॥ इसकथनसे समन्वयअधिकरणकाविरोधभीदूरहुआजानना ॥ क्योंकिसजातीय आदिकभेदसेरहितअद्वैतआत्माको श्रुतिबोधनकरतीहै। यदिप्रपंचकी उच्छ्रिताकोश्रुतिनमाने तोविवक्षितआत्माकी सिद्धिहीनहींहोगी ॥ इसप्रकारअद्वैतआत्माकीसिद्धिकेनिमित्तप्रपंचकीनकारश्रुतिमाननीचे। तात्पर्यतोअद्वैतआत्मामेंहीहै ॥ ॥ शंका ॥ हेभगवन् श्रुतिप्रपंचकीउच्छ्रिताकोहीक्योंमानतीहै ॥ जिस कारणसेउक्तआत्माके स्वरूपकीसिद्धितोप्रपंचको मिथ्यामाननेसेभी बनसकतीहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्य तिसआत्मासेभिन्नकिसीप्रकार काभी द्वैतमानेहुए अर्थात् मिथ्यारूपताकर अथवा सत्स्वरूपता करद्वैतकी सत्तामानेहुएभी अद्वैतसिद्धांतकी हानि होतीहै ॥ शंका ॥ हेभगवन्यदिप्रपंचकी उच्छ्रिताहीश्रुतिअनुसारीहै। तोविवर्त वादतथापरिणामवादका स्वीकारकिसलियेकियाहै ॥ समाधाना ॥

❀ विवर्तवादादिकोंकेस्वीकारकीव्यवस्था तथा जगत्कीतुच्छतानिरूपणाकाउपसंहार ❀

हेशिष्यजिसकारणसे प्रपंचकाकिसीप्रकारसेभी मत्त्वमानेहुए अद्वैतसिद्धांतकीहानिहोतीहै । तिसीकारणसेजगत्निष्ठतुच्छताश्रुति अनुसारीहै । औरविवर्तवादतथापरिणामवादको युक्तितथालौकिक प्रमाणमूलकहोनेसेवहभी अधिकारिभेदसे स्वीकारकियेजातेहैं। याते विरोधनहीं ॥ अर्थयह किमध्यमअधिकारीकेलिये विवर्तवादहै। और मंदअधिकारीकेलिये परिणामवादहै । यहअर्थगौडपादाचार्यों नेभीकहा है ॥

❀ तुच्छानिर्वचनीयाचवास्तवीचेत्यसौत्रिधा ।

ज्ञेयामायात्रिभिर्बोधैःश्रौतयौक्तिकलौकिकैः१॥❀

अ०॥श्रुतिजन्यतथायुक्तिजम्यऔरप्रत्यक्षादिप्रमाणजन्ययहजो तीनप्रकारकेबोधहैं। तिन्होंकरअज्ञानतत्कार्यतुच्छतथा अनिर्वचनीय औरपरिणामरूपताकर तीनप्रकारसेही जाननेयोग्यहै। अर्थात्जोपुरुष लौकिकप्रमाणकोआश्रयणकरनेवालेहैं। तिनकोतोअज्ञानतत्कार्यसत्य भासताहै ॥ यहपरिणामवादवेदांतवादकीप्रथमभूमिकाहै । और युक्तिको आश्रयणकरनेवालेनिपुणमतिपंडितोंको यहअज्ञानतत्कार्य अनिर्वचनीयभासताहै ॥ यहविवर्तवादवेदांतवादकीदूसरीभूमिका है । औरउत्तमभूमिकामें आरूढविद्वान् जिसकोश्रुतिजन्यबोधप्राप्त हुआहै तिसकोअज्ञानतत्कार्य तुच्छरूपतासे भासताहै ॥ इति ॥ इस प्रकारप्रपंचकीतुच्छतामें श्रुतिप्रमाणकोकथनकरके अत्रतिसमेंस्मृति कीसंमतिभीकहतेहैं । वसिष्ठभगवान्भी प्रपंचकीतुच्छताकोआश्च

र्यकीन्याईकथनकरतेहैं ॥

अहोनुचित्रं यत्सत्यं ब्रह्मतद्विस्मृतं नृणाम् ।

यदसत्यमाविद्याख्यं तत्पुरःपरिवल्गति ॥ १ ॥

अहोनुचित्रं पद्मोत्थैर्वद्वास्तंतुभिरद्रियः ।

अविद्यमानायाविद्यातथाविश्वंखिलीकृतम् ॥२॥

अ० ॥ हेरामबहुतआश्चर्यहै । जोसत्यब्रह्मथावहपुरखोंको विस्मृतंहोगया । औरजोअसत्यअविद्यातत्कार्यथा वहसन्मुखसत्य प्रतीतहोताहै ॥१॥ हेरामबहुतआश्चर्यहै । जैसेकमलसेउत्पन्नहुए तंतुओंकरपर्वतवांधेहुएहैं तैसेअविद्यमानअर्थात्असत्जोअविद्यातिस करही सर्वजगत्दृढक्रियाहुआहै ॥ इति ॥

❀ अथअदृष्टद्वयपदकी व्याख्याकाउपसंहार ❀

हेशिष्य जिसहेतुसेद्वैतार्थीतिसकादर्शन तुच्छहोनेसे असतहै तिसीहेतुसे स्वतःसिद्धशुद्धबुद्धऔंमुक्तस्वभावपरिपूर्णआनन्दस्वरूप आत्माकीअदृष्टद्वयता उपपन्नतरहै । अर्थयहजोअतिशयकरसंभवती है । तात्पर्ययहहै । द्वैतकोविवर्तमानेहुएभीअदृष्टद्वयताआत्माकीउप पन्नहै । अतःप्रपंचकोतुच्छमानेहुएवहउपपन्नतरहै । अदृष्टद्वयही आत्माकावास्तवस्वरूपहै इसअर्थमेंश्रुतिप्रमाणनिरूपणकरतेहैं ।

नानिरोधोनचोत्पत्तिर्नबद्धोनचसाधकः ।

नमुसुक्षुर्नवैमुक्तइत्येपापरमार्थता ॥१॥

तदेवनिष्कलंब्रह्मनिर्विकल्पंनिरंजनम् ।

तत्ब्रह्माहमितिज्ञात्वाब्रह्मसंपद्यतेभवम् ॥२॥

निर्विकल्पमनंतंचहेतुदृष्टान्तवार्जितम् ।

अप्रमेयमनादिंचयज्ज्ञात्वामुच्यतेषुधः ॥३॥

अ० ॥ नकोईप्रलयहे । औरनकोईउत्पत्तिहै । औरनकोईबांधा हुआहै ॥ औरनकोई वैदिककर्मके अनुष्ठानकरनेवाला साधकहै । औरनकोईमुमुक्षुहै ॥ औरनकोईमुक्तहै।यहीवास्तवसेसिद्धांतहै ॥(१) औरवहीब्रह्मतत्त्व(निष्कलं)निखयवहै।और (निर्विकल्पं) विशेषरूप नहीं । और (निरंजनम्) अविद्यादिदोषसेरहितहै । सोतत्पदकालक्ष्यार्थब्रह्ममेंहूँ।ऐसेसाक्षात्कारकरकेयह अधिकारिपुरुषआपही(ध्रुव) निश्चलकूटस्थब्रह्मभावकोप्राप्तहोताहै ॥२॥ औरजोब्रह्म(निर्विकल्पम्) गुणक्रियाजातिसेरहितहै । और (अनंतं) नाशसेरहितहै । और (हेतुवर्जितं) आपत्कार्यहै । और (दृष्टांतवर्जितं) अनुपमअर्थात् अपनीतुल्यतासेरहितहै॥ इसकथनसे सजातीयभेदकानिषेधकिया॥ और (अनादिं) आपकिसीकाकारणनहीं । और (अप्रमेयं) अविषय स्वभावहै।ऐसेब्रह्मस्वरूपकोयह अधिकारीआत्मरूपतासेसाक्षात्कारकरकेअविद्यातत्कार्यरूपबंधनसेमुक्तहोताहै ॥३॥ इत्यादिकश्रुतिवाक्य आत्मतत्त्वकोद्वैतदर्शनसेशून्यत्वहीप्रतिपादनकरतेहैं । यातेअदृष्टद्वय स्वरूपहीआत्माहै । यहअर्थसिद्धहुआ ॥[इतिअदृष्टद्वयपदव्याख्या] मू०। अथआत्मसाक्षात्कारकाफलतथातिसकोनिर्पेक्ष मोक्षकीसाधनताकानिरूपण

शंका ॥ हेभगवन् इसप्रकारकाआत्मतत्त्वहो।परन्तुतिससेक्या सिद्धहोताहै ॥ समाधान ॥

❀मू० ॥ सत्यंज्ञानमनंतंचपूर्णानंदविग्रहम् ।

मांत्रवीणाकमात्मानंविनिश्चित्यिवमुच्यते ॥५७॥

चौ ॥ सत्यज्ञानअनंतस्वरूपं । पूर्णआनंदरूपअनूपं ।

मंत्रउक्तआतमपहचाना । तांकरकियोबंधसबहाना ॥१४॥

टी० ॥ हेशिष्य जिसहेतुसेपूर्वउक्तवास्तववृत्तांतहै । तिसीसे

“सत्यंज्ञानमनंतंब्रह्म” इसमंत्रवर्णकरसिद्धसत्य तथाज्ञान औरअनंत तथापूर्णऔरआनंदस्वरूपआत्माको अपनेसेअभिन्न अर्थात् “सोई में हूं”ऐसेसाक्षात्कारकरके यहअधिकारीअविद्यादिबंधनसे विमुक्तहोताहै यातेआत्मसाक्षात्कारसे स्वस्वरूपावस्थानरूपफलसिद्धहोताहै ॥इति ॥१७॥शंका॥ हेभगवन् यदिऐसाज्ञानकिसीकोहो तोषटादिज्ञानकी न्याईतिसकीउपलब्धिभीहो । परन्तुसाधनकेअभावसेऐसाज्ञानकिसी कोउत्पन्नहीनहींहोता॥ समाधान ॥ हेशिष्यऐसाज्ञानकिसीकोउत्पन्न नहींहोतायहतुम्हाराकथनअसंगत है ॥ क्योंकि तिसकासाधनमहा वाक्यरूपप्रमाण विद्यमान है ॥ और अनुपलंभ काविरोधभी नहीं संभवता ॥ क्योंकि ॥

❀ पश्यन्प्रतिपेदे । योयोदेवानांप्रत्यबुद्ध्यत्
सएवतदभवत् ❀

इत्यादिश्रुतियोंसेवामदेवादिकों में तिसज्ञानकीउपलब्धिप्रसिद्ध है॥ और साधनों के विद्यमानहुएभी ज्ञाननहींउत्पन्नहोतायहकथन अयुक्त है॥ क्योंकि वेदाध्ययनादि साधनों के अनुष्ठानसे जिसको विविदिपाउत्पन्नहूई है ॥ और ॥

अथातोब्रह्मजिज्ञासा ॥ शा० । १ । २ । १॥

इससूत्रमेंअथशब्तसेसूचनकिये हुए विवेकादिचतुष्टयसाधन संपन्नजोपुरुष है ॥ तिसकोश्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुकरउपदिष्टमहावाक्य

केविचारसे अनंतरज्ञानकी उत्पत्ति देखनेमें आती है ॥ सूत्रका यह अर्थ है ॥ (अथ) साधनचतुष्टयसंपत्तिसे अनंतर (अतः) जिसकारणसे वेदही अग्निहोत्रादिकर्मोंका अनित्यफल और ब्रह्मज्ञानकानित्यफल बोधनकरता है ॥ इसी हेतुसे यह अधिकारी (ब्रह्मजिज्ञासा) ब्रह्मज्ञानके अर्थवेदांतविचारकरे ॥ इति ॥ शंका ॥ हे भगवन् जिन पुरुषोंने वेदान्त का श्रवण किया है ॥ तिनको भी संसारकी प्रतीति पूर्वकी न्याई ही देखने में आती है ॥ समाधान ॥ हे शिष्य असंभावना तथा विपरीत भावना यह दोनों आत्मसाक्षात्कारके प्रतिबंधक हैं ॥ तिनका निवर्त्तक मन तथा निदिध्यासन सहकृत औश्रुतिके तात्पर्यज्ञानके अनुकूल मानस व्यापाररूप ऐसा जो वाक्यका विचाररूप श्रवणतिसके अनुष्ठानसे प्रतिबंधसे रहित ज्ञान अवश्य उत्पन्न होता है ॥ यदि ऐसे नहीं माने तो तादृश आत्माके स्वरूपका प्रतिपादक जो शास्त्र है ॥ तिसको अप्रमाणाताकी प्राप्ति होगी ॥ शंका ॥ हे भगवन् ज्ञानसे मोक्ष होता है ॥ इस कथनका क्या अर्थ है ॥ क्या ज्ञान ही मोक्षका साधन है ॥ यह तिसका अर्थ है ॥ अथवा ज्ञान भी साधन है तथा अन्य कर्मादि भी साधन हैं ॥ यह तिसका अर्थ है? ॥ प्रथम पक्ष तो नहीं संभवता ॥ क्योंकि ॥

❀ विद्यां चाविद्यां च यस्वेदोभयं सह ❀ उ० ई० मं० (११)

अ०—ज्ञान तथा कर्म इन दोनोंके समुच्चयको जो जानता है ॥ इत्यादि समुच्चय प्रतिपादक वाक्यका विरोध होगा ॥ और द्वितीय पक्ष भी नहीं संभवता ॥ क्योंकि ॥

❀ कर्मणो वहिसं सिद्धिमास्थिता जनकादयः ❀

भ० गी० अ० ३ ॥ २० ॥

अ०—कर्मकरके ही जनकादिक अधिकारि पुरुष मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥

इत्यादिकेवलकर्मसे मोक्षप्रतिपादकवाक्योंका विरोधप्राप्तहोगा ॥
यातेजत्पन्नहुएज्ञानकोभीसाधनांतरकी अपेक्षाहोनेकरफलदेनेकेलिये
वहविलंबकरताहै ॥ समाधान ॥ हेशिष्यग्रहसमुच्चयवादनहींसंभवता
क्योंकि ॥

तद्धैतत्पश्यन्त्पिर्वामदेवः प्रतिपेदेऽहंमनुरभवं
सूर्य्यचेति । ब्रह्मवेदब्रह्मैवभवति । तरतिशोक
मात्मवित् ॥

अ०—(तत्) ब्रह्मको (एतत्) मैं हूँ ऐसे (पश्यन्) साक्षात्कार
करताहूँआइसदर्शनसेहीऋषिभावकोप्राप्तहूँआनामसेवामदेव(प्रतिपेदेह)
निश्चयकरआत्मज्ञानकाफलरूपसर्वात्मभावकीप्राप्तिकेप्रतिपादक “मैं
हीमनुहुँआ” तथा “मैंहीसूर्य्यहूँआ” ॥ इत्यादिमंत्रोंकोदेखतामयाइत्या
दिकश्रुतियोंसेआत्मज्ञानऔरतिसकेफलमोक्षकोएककालीनत्वकाकथन
होनेसेमध्यमेंअन्यसाधनतथाकालकेविलंबकाअभावप्रतीतहोताहै। जैसे
“भुंजन्तृप्यति” अ० भोजनकरताहूँआतृप्तहोता है ॥ यहाँ भोजन
औतृप्तिकेमध्यमेंऔरकोईकार्यनहींप्रतीतहोता ॥ तैसे “पश्यन्त्प्रतिपेदे”
यहाँभीदर्शनतथासर्वात्मभाव की प्राप्तिरूपफलकेमध्यकार्यांतरअर्थात्
अन्यकिसीसाधनकीप्रतीतिवर्त्तमानार्थिक “शतृ” प्रत्ययकेकथनसेनहीं
है। औरजिसकालमेंब्रह्मकोजानताहैतिसीकालमेंब्रह्मरूपहोताहै। इस
कथनसेब्रह्मज्ञानतथाब्रह्मरूपताहोनेको एककालमेंप्रतीतिहोनेसेकाल
काविलंबभीनहींप्रतीतहोता ॥ औरकर्महीमुक्तिके साधनहैं ॥ यह
कथनभीसमीचीननहीं ॥ क्योंकि

तमेवविदित्वाऽति मृत्युमेतिनान्यःपंथाविद्यतेऽयनाय

इत्यादिकश्रुतियेअन्यसाधनका निषेधकरतीहैं ॥ और पूर्व जोऽमृतिकाविरोधतुमने कहाथावहभीनहींसंभवता ॥ क्योंकि "संसिद्धि" शब्दसेवहांतत्त्वज्ञानकाहीग्रहणहै ॥ और

❀ कृपायेकर्मभिःपक्वेततोज्ञानं प्रवर्त्तते ॥ ❀

अ०॥ कर्मोंकेअनुष्ठानसे पापरूपमलकेनिवृत्तहुए तिससेअनं तरज्ञानप्रवर्त्तमानहोताहै॥इसशास्त्रसेकर्मोंकोतत्त्वज्ञानकाकारणभूतजो अंतस्करणकीशुद्धितिसकीहेतुताप्रतीतहोतीहै।इसकथनसेसमुच्चयप्रति पादकवाक्यकाविरोधभीनिवारणकिया।क्योंकितहांही (अविद्या मृत्युंतीर्त्वा) इसवाक्यशेषकरके मृत्युरूपपापोंका निवर्त्तकरही अविद्याशब्दकेवाच्य कर्मोंकोप्रतीतहोताहै ॥ यातेज्ञानहीमुक्तिरूप फलकासाधनहै । यहअर्थनिर्दोषसिद्धहुया ॥ यदिऐसेहै । अर्थात् आत्मज्ञानहीमुक्तिकासाधनहै । तोअवश्यहीजन्मादिसंसारदुःखसे भयभीतहुएपुरुषोंनेतिसंसारदुःखकी निवृत्तिकासाधन जोतत्त्वज्ञान वहश्रवणादिसाधनोंकर संपादनकरनेयोग्यहै यहअर्थप्रकरणकेउप संहारमिपसेकहतेहैं ॥ तिसहेतुसेसंन्याससहिततत्त्वज्ञानहीयत्नसेसंपादनकरनेयोग्यहै ॥ यहां ॥

❀ त्यागएवहि सर्वेषांमुक्तिसाधनमुत्तमम् ॥ ❀

अ० ॥ यज्ञदानादिजोपरंपरासे मोक्षकेसाधनहैं ॥ तिनसर्वके मध्यसंन्यासहीमोक्षका उत्तमसाधनहै । इसशास्त्रकोआश्रयण करकेसंन्याससहिततत्त्वज्ञानमोक्षका साधनकहाहै ॥ यत्नसेतिसके संपादनमेंयहहेतुहै कितिसतत्त्वज्ञानके अभावहुएमहान्हानिश्रुतिने

कथनकी है ॥ तहां श्रुति ॥ (नचेदिहावेदिर्महतीविनाष्टिः)

अ० ॥ यदिहमइससंसारमंडलमें ब्रह्मको अपना आत्मारूपनहीं जानेंगे तोतिससेहमब्रह्मात्मसाक्षात्कारसेरहितहोंगे। शंका। ब्रह्मसाक्षात्कारसे रहितहोजायेंतिसमेक्यादोषहै। समाधान। ब्रह्मसाक्षात्कारकेअभावहुए जन्ममरण।दिस्वरूपअनंतपरिमाणयुक्त विनाशप्राप्तहोगा ॥ तिसीसे अवश्यहीब्रह्मात्मसाक्षात्कारअधिकारिपुरुषोंने संपादनकरनायोग्यहै। इति ॥ ब्रह्मात्मसाक्षात्कारके उत्पन्नहुए संसारकीनिवृत्तिहोतीहै। इस अर्थमेंब्रह्मविदपुरुषोंका अज्ञानतत्कार्यकीनिवृत्ति रूपफलसहितउद्धार अर्थात्अनुभवभीप्रमाण रूपताकर स्मरणकियाजाताहै ॥ तथाहि।

❀ विद्याविग्रहमग्रहेणा पिहितं प्रत्यंचमुच्चैस्तरा ।

मुत्कृष्योत्तमपूरुषं मुनिधिया मुंजादिपीकामिवाकोशात्
कार्यकारणरूपविकृतात् पश्यामि निः संशयम् ॥

नासीदस्ति भविष्यति क्वनुगतः संसार दुखोदधिः ॥ ❀

स० शा० ४।५३ ॥)

अ०। स्वप्रकाशचिद्एकरसजोपुरुषोत्तमहै। सोअत्यंतउच्चैरूपता करअविद्यासेआच्छादितहै। सहस्रोंप्रकारकेयत्नोंमें जोआच्छादितपने कोडुर्भेद्यताहै। यहहीतिसिंधाननिष्ठ उच्चैस्तरस्वहै। औरवहीपुरुषोत्तम (प्रत्यक्) सर्वकाअंतरात्माहै निसको (मुनिधिया) श्रुतिअनुकूलमनन सेती दृष्टकिप्रेहुएविवेकज्ञानकरमुञ्जसे तूलीकीन्याईवाह्य अंतर्भावसे अनेकप्रकारकेविकारको प्राप्तहुएअन्नमयादिपंचकोशनसेपृथक्करके संशयसेरहित सोउत्तमपुरुषमेंहूँ । इसप्रकारमें देखताहूँ । जिसब्रह्म

दर्शनकेप्रभावसेयहसंसार दुःखकासमुद्रनपूर्वथा। औरनअवहै। औरन
आगेहोगा ॥ जानानहींजाता जोकहांगया। अर्थात्कभीहुआहीन
था ऐसेप्रतीतहुआ ॥ ५३ ॥ तथापिआभासरूपद्वैतअसंभावितभी
प्रतीतहोताहै ॥ यहकहतेहैं ॥

❀ पश्यामिचित्रामिवसर्वमिदं द्वितीयं। तिष्ठामिनिष्कल
चिदेकवपुष्यनंते । आत्मानमद्वयमार्चित्यसुखैक
रूपं पश्यामिदग्धरशनामिवचप्रपंचम् ❀ ॥

सं० शा० अ० ४ ॥ ५४ ॥

अ० ॥ सर्वइसद्वैतकोचित्रकीन्याईं मैंदेखताहूं । इतनेमात्रसे
अर्थात्आभासरूपजीवनसेमुक्तिकीकिंचितभीविकलतानहीं यहकहते
हैं (तिष्ठामीति) औरनिस्वयवतथाचेतनएकस्वरूपअनंतआत्मामें मैं
स्थितहूं ॥ औरद्वैतसेरहिततथामनकाअविषय औआनंदएकस्वरूप
आत्माकोमैंदेखताहूं ॥ शंका ॥ संसारदर्शन तथाब्रह्मदर्शनइनदोनों
कोविरुद्धहोनेसे एककालमेंतिनकी स्थितिकैसेहोगी॥ समाधान ॥
दग्धरज्जुकीन्याईंसप्रपंचकोमैंदेखताहूं ॥ यातेप्रतिभासमानद्वैतको
अर्थक्रियाकासामर्थ्यनहीं ॥ अर्थयह ॥ किअद्वैतदर्शनकरद्वैतप्रपंच
काबाधहीहोजाताहै ॥ यातेपूर्वउक्तशंकानहींसंभवती ॥ ५४ ॥
शंका ॥ द्वैतदर्शनसे अद्वैतदर्शनकाहीबाधक्योंनहो ॥ समाधान ॥

❀ अद्वैतमप्यनुभवामिकरस्थाविल्वतुल्यं शरीरमाहिनि
ल्वयनीववीक्षे । एवंचजीवनमिवप्रातिभासनंचनिः
श्रेयसाधिगमनंचममप्रसिद्धम् ॥ ❀ सं० शा० अ० ४।५५

अ० ॥ अद्वैतकोभीहस्तपरिस्थितविल्वफलकीन्याई मैं अनुभव करता हूँ । इसलिये अद्वैत अनुभवको कदाचित् भी परोक्षतानहीं ॥ और जैसे सर्पने परित्यागकी हुई जो त्वचा है वह सर्परूप भासती है । तैसे शरीरादि संसारवाधित हुआ भी भासता है । याते द्वैतदर्शनसे अद्वैतदर्शनका बाध नहीं होता । अन्यथा वस्तुके स्वभावका परित्याग प्राप्ति होगा । इस प्रकार जीवत कीन्याई प्रतीति तथा मोक्षकी प्राप्ति यह दोनों मुझको प्रसिद्ध हैं ॥ ५५ ॥ तत्त्वसाक्षात्कारकालमें शरीरवाधके योग्य है । यह तो क्या ही कथन करने योग्य है । परन्तु तत्त्वसाक्षात्कारसे पूर्व भी द्वैतप्रपञ्चकी प्रतीति जो मुझको हुई तिसमें भी मुझको आज आश्चर्यमान होता है ॥ अर्थात् प्रथम ही यह प्रपञ्चवाधित था यह कहते हैं ॥

❀ आश्चर्यमद्यममभातिकथं द्वितीयं नित्येनिरस्त
निखलो शिवाचित्प्रकाशे । आसीत्पुरेतिकिमिमाः
श्रुतयोनपूर्वं येन द्वितीयमभवत्ततिमिरप्रसूतम् ❀

सं० शा० अ० ४ ॥ ५७

अ० ॥ आज मुझको यह आश्चर्य भासता है कि जो नित्य तथा अज्ञानतत्कार्यसे रहित तथा आनन्द और स्वप्रकाश आत्मामें यह द्वैतपूर्व कैसे स्थित हुआ ॥ शंका ॥ इसमें क्या आश्चर्य है पूर्वकालमें श्रुति जन्य बोधनहीं था । और अब वह श्रुतिजन्य बोध विद्यमान है । याते तिस कर द्वैतवाधित होगया ॥ समाधान ॥ तत्त्वज्ञानके जनक वेदांतवाक्य क्या पूर्व नहीं थे जिसकर यह अज्ञानसे उत्पन्न हुआ द्वैत आत्मामें उपस्थित हुआ । अर्थात् अज्ञानके निवर्तक तत्त्वज्ञानके उत्पादक अथनादिसिद्ध निषेक्तकारणरूप वेदांतवाक्य पूर्वभी विद्यमान ही थे । तो भी अज्ञानादि द्वैत

प्रतीतहुआ यहहमकोआश्रय्यहै ॥ ५७ ॥ इसप्रकारशास्त्र और
आर्चय्यकेप्रसादसेजिसअधिकारीकोब्रह्मात्मतत्त्वकादृढसाक्षात्कारउदय
हुआहै ॥ तिसकेगुरुभक्तिकीप्रकटताभीस्मरणाकीजातीहै । क्योंकि
गुरुभक्तिसेभीयहब्रह्मविद्याउत्पन्नहोतीहै ॥ तथाहि ॥

त्वत्पादपंकजसमाश्रयणांविनामेसन्नप्यसन्निवपरः
पुरुषःपुरासीत् । त्वत्पादपद्मयुगलाश्रयणादिदानीं
नासीन्नचास्तिनभविष्यतिभेदबुद्धिः । यस्मात्कृपा
परवशोममदुश्चिकित्संसंसाररोगमपनेतुमसिप्रवृत्तः
त्वत्पादपंकजरजः शिरसादधानःत्वामाशरीरपतना
दहमप्युपासे ॥ म० शा० अ० ४ । ५८ । ५६॥

अ० ॥ हेभगवन् आपकेचरणविन्दोंकोसम्यक्आश्रयणकरने
सेविनासुभक्तकोपूर्वसर्व अनात्मासेउत्कृष्ट तथापूर्णरूपआत्मा सतभी
अमतकीन्याईप्रतीतहुआ । अबआपकेदोनोंचरणकमलोंकेआश्रयण
सेवहभेदबुद्धि नपूर्वथी औरनयवहै औरनयागेहोगी ॥ ५८ ॥
जिसकारणसे कृपापरवशहुए आपमेरे असाध्यरोगके निवृत्तकरनेको
अर्थात् संसारकेनाशकग्नेकोप्रवृत्तहुएहो । इसीकारणसेआपकेचरण
कमलोंकीरजशिरपरधारणकरताहुआमेंआपकोशरीरकेपातपर्यंतसेवन
करूंगा ॥ ५९ ॥ यातेब्रह्मविद्याकीकामनावाले जिज्ञासूजनोंनेगुरु
भक्तिअवश्यअनुष्ठानकरनीचाहिये ॥इति॥ शंका ॥

❀अथविद्यासेसंसारकीअनिवृत्तिनिरूपणा❀

हेसिद्धांतिन् विद्याकरअविद्याकाबाधहुएभी संसारकीनिवृत्ति

कैसे हो सकती है। कैसा यह संसार है। जो इस लोक तथा परलोक में संचार वाला है। तथा नाना प्रकार की योनियों की प्राप्ति तथा परिहार करके अनिक प्रकार के दुःख कर संयुक्त है। तिसकी विद्या कर निवृत्ति कैसे होगी। क्योंकि तिसके कारण काम कर्मादि तो पूर्व की न्याई ही स्थित हैं। और यदि आप ऐसे कहो कि कर्म संसार का उपादान कारण नहीं। किंतु अविद्या उपादान कारण है। वह अविद्या ज्ञान से निवृत्त होगई तब अविद्या मूलक संसार भी निवृत्त हो जायेगा। सो यह कहथन भी नहीं संभवता। क्योंकि जैसे वैशेषिक मत में उपादान कारण के नाश हुए भी एकक्षण पर्यंत कार्यपश्चात् अवस्थित रहता है। तैसे यहां भी उपादान कारण रूप अविद्या के नाश हुए प्रपंच की अविद्यत्त की शंका दूर नहीं हो सकती। और यदि ऐसे कहो कि द्वितीय क्षण में कार्य आप ही नाश हो जायेगा। या ते दोष नहीं। सो यह कहथन भी असंगत है। क्योंकि प्रथम क्षण की न्याई उत्तरक्षण में भी प्रपंच की अनुपपत्तिका अभाव अनुमान कर सकते हैं। सो अनुमान यह है ॥

❀ अविद्या निवृत्त्युत्तर तृतीय क्षणः प्रपंचानुपपत्त्या भाववान् । क्षणत्वात् । अविद्या निवृत्त्युत्तर द्वितीय क्षणावत् ॥ ❀

अ० ॥ अविद्या की निवृत्ति से उत्तरजो तृतीय क्षण है वह प्रपंच की अनुपपत्तिके अभाव वाला है। क्षण होने से। अविद्या की निवृत्ति से उत्तर द्वितीय क्षण की न्याई ॥ इति ॥ तिस कारण से अज्ञान के निवृत्त हुए भी संसार की निवृत्ति नहीं होगी ॥ क्योंकि तिसकी निवृत्ति में प्रमाणा का अभाव है। या ते प्रयत्न निष्फल है ॥ समाधान ॥

अथतत्त्वज्ञानसेसंसारकीनिवृत्तिकाप्रकारनिरूपण ।

हेवादिन् तत्त्वज्ञानका जैसेअज्ञानकेसाथविरोधहै । तैसेकर्मोंके साथभीतुल्यहीविरोधहै । यातेधर्मतथाअधर्मरूपकर्मभी तत्त्वज्ञानकर निवृत्तहोजातेहैं ॥ यहअर्थश्रुति तथायुक्तिप्रसिद्धहै ॥ तथाहि ।

मू० ॥ कर्ममूलमनर्थानांतच्च ज्ञानेनवाध्यते ।

क्षीयन्तचास्यकर्माणि तथाचश्रुतिशासनम् ॥५८॥

दो० ॥ कर्ममूलानर्थको कियोज्ञाननेराप ।

तज्ञकर्मसवनाशहुइ तैसेश्रुतिवचभाष ॥ ४५ ॥

टी० ॥ ज्ञानकेउत्पन्नहुएभी कर्ममूलकसंसारकीअनुवृत्तिहोगी यहजोवादीनेकथनकिया सोनहींसंभवता ॥ क्योंकिअविद्याकीन्याई अनर्थोंकेमूलभूतकर्मोंकाभी ज्ञानकरबाधहोजाताहै । जैसेज्ञानका अविद्याकेसाथविरोधहै तैसेतिसअविद्याकेकार्यकेसाथभीविरोधतुल्य हीहै । जैसेरज्जुकेसाक्षात्कारसे तिसकीअविद्याके निवृत्तहुए अविद्याकेकार्यसर्पादिकोंकीनिवृत्तिनहींहोती यहकथननहींसंभवता तैसेब्रह्मात्माके साक्षात्कारसे मूलाऽविद्याकी निवृत्तिहुए तिसकेकार्य प्रपंचकीअनुवृत्तिहोतीहै । यहकथनभीनहींसंभवता ॥ औरयदिलुम ऐसेकहोकि (यतोज्ञानमज्ञानस्यैवनिवर्त्तकम्) अ० ॥ जिसकारणसेज्ञानअज्ञानकाहीनिवर्त्तकहै । यहजोशास्त्रकारोंकाअवधारणहै । सोज्ञानकोकार्यकानिवर्त्तकमानेहुए अमभीचीनहोजायेगा सोयहकथनभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिअज्ञानकाकार्यअज्ञानसेभिन्न नहीं । अज्ञानकेअभावहुए तिसकीसत्तानहींप्रतीतहोती।यातेतिनके

कथनसेविरोधनहीं । औरतत्त्वज्ञानसे अज्ञानकेनिवृत्तहुएकर्मोंकी निवृत्तिमेंप्रमाणकाअभावहै यहवादीका कथनभीनहींसंभवता ॥ क्योंकिसाक्षात्श्रुतिही इसअर्थमेंप्रमाणहै ॥ तथाहि ॥

❀ भिद्यतेहृदयग्रंथिच्छिद्यतेसर्वसंशयाः ।

क्षीयन्तेचास्यकर्माणितस्मिन्टृष्टेपरावरे ॥ ❀

अ०॥परकहियेहिरायगर्भादि वहहैं “अपर”कहियेनिष्कृष्टजिससे तिसकानामपरावरअर्थात्परब्रह्महै।तिसपरब्रह्मकाअपनेआत्मासेअभिन्न रूपताकरसाक्षात्कारहुए इसविद्वान्पुरुषकीचिद्ब्रह्मग्रंथिअर्थात्देहादि कोंमेंजोआत्मबुद्धिवहनिवृत्तहोजातीहै । औरसर्वसंशयनाशहो जातेहैंऔरसर्वकर्मभी निवृत्तहोजातेहैं ॥ इति ॥ औरयदिवादी ऐसेकहे कियहवाक्यअशुभकर्मोंकी निवृत्तिकाबोधकहै ॥ सोयह कथनभीनहींसंभवता। क्योंकिकर्मशब्दशुभतथाअशुभमेंसाधारणहै । औरविद्याकासामर्थ्य दोनोंकेनाशमेंसाधारणहै ॥ और

❀ ब्रह्मात्मैकत्वविज्ञानंशाब्दंदेशिकपूर्वकम् ॥

बुद्धिपूर्वकृतंपापंकृत्स्नंदहातिवन्निवृत् ॥ १ ॥

अ० ॥ श्रोत्रिय तथाब्रह्मनिष्ठआचार्यकरउपदिष्टमहावाक्य रूपशब्दसेउत्पन्नहुआजोब्रह्मात्माके अमेदकाअपरोक्षज्ञानहै वहबुद्धि पूर्वककियेहुए सर्वपापकर्मोंकोदाह अर्थात् नाशकरताहै । जैसेअग्नि सर्वकाष्ठकोभस्मकरदेताहै । इसस्मृतिसे बुद्धिपूर्वककियेहुएपापकर्मों कानाशकथनकियाहै । और

❁ यथैधांसिसमिद्धो ऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ।

ज्ञानाऽग्निसर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा ।

(भ० गी० अ० ४ ॥ ३७ ॥)

अ० ॥ हे अर्जुन जैसे प्रज्वलित अग्नि सर्वकाष्ठोंको भस्मरूपकर देता है । तैसे तत्त्वज्ञानरूप अग्नि भी सर्वकर्मोंको नाशकरता है । इस वाक्यमें श्रीकृष्ण भगवान् जीने भी सर्वशब्दसे सकल पुराय पापकर्मोंको ग्रहण करके तिनसर्वकाज्ञान अग्निसे दाहनिरूपण किया है ॥ किंवा ॥ जिस विद्वान्के दर्शन मात्रमें अन्य पुरुषोंके पापनिवृत्त होजाते हैं तिस ब्रह्मरूप ब्रह्मवेत्ताके पापकर्मनाश होजाते हैं यह तो क्या ही कथन करना है । इसी अर्थको भगवान् वसिष्ठजीने भी कहा है ॥

❁ यस्यानुभवपर्यन्तं तत्वे बुद्धिः प्रवर्तते ।

तत्तद्दृष्टिगोचराः सर्वे मुच्यन्ते सर्वपातकैः ॥ ❁

अ०—जिस पुरुषकी अपरोक्ष अनुभवपर्यन्त बुद्धि आत्मतत्त्वमें प्रवर्तमान होती है तिसकी कृत्तव्यदृष्टिका विषय हुए सर्वजनसर्वपापोंसे मुक्त होजाते हैं ॥१॥ इति ॥ और तैसे ही कुलपवित्रत्वकी हेतुता भी ब्रह्मवेत्ताको स्मृतिमें कथनकी है ॥ तथाहि ॥

❁ कुलं पवित्रं जननीकृतार्था विश्वं भरापुण्यवती

चेतन । अपारसं वित्सुखसागरेऽस्मिन् त्नीनपरे

ब्रह्मणियस्य चेतः । ❁

अ०—देशकालादिपरिच्छेदसे रहित तथा चेतन औऽचानंदके समुद्रइसपरब्रह्ममें जिस पुरुषका चित्त लीन हुआ है ॥ तिसकी कुलपवित्र है और तिसकी माता भी कृतार्थ है ॥ और तिस ब्रह्मवेत्ता करवह पृथ्वी भी पुराय

वालीहोतीहै जहाँकिवहब्रह्मविद्पुरुषनिवासकरताहै ॥१॥इति॥५८॥

इसप्रकारपूर्वउक्तश्रुक्तिसे जैसाब्रह्मात्माकाअभेदविज्ञानकथन कियाहै। तिसकरयहअधिकारीपुरुषकृनार्थहोताहै ॥ इसअर्थमेंकिंचित् मात्रभीविवादकरनेयोग्यनहीं ॥इति॥[अर्वांतरप्रयोजननिरूपण तथा अर्थकाउपसंहार]अबमुमुक्षुपुरुषोंकीप्रवृत्त्यर्थग्रन्थकास्तवनकरतेहैं।

✽ प्रकाशानंदयतिना कृतिनाआत्मशुद्धये।

सिद्धांतमुक्तावल्येषा रचितारंधूर्वाजिता ॥१॥✽

अ०—ब्रह्मात्मसाक्षात्कारसंपन्न मुक्तप्रकाशानंदयतिनेअंतस्करणीकीशुद्धिकेअर्थदोषरूपद्विद्रसेरहितयहवेदांतसिद्धांतमुक्तावलीरचना कीहै ॥ १ ॥ यहमुक्तावलीकहाँसमर्पितहै ॥ ऐसीआकांक्षाकेदृष्ट कहतेहैं ॥

✽ अद्वैतानंदसंदोहा सत्यज्ञानादिलक्षणा ।

नारायणसमासक्ता श्रियासापत्न्यद्रूपिता ॥२॥✽

अ०—अद्वैततथाआनंदकेसमूहकीप्राप्तिहै जिससेऔरसत्यज्ञानादिस्वरूपआत्माकोबोधन करनेवाली जोयहसिद्धांतमुक्तावली सोनारायणमेंसम्यक् आसक्तहै अर्थात्समर्पितहै। औरस्लक्ष्मीके साथसपत्नीभावकरदूषितहै अर्थात् अन्यसर्वदोषसेरहितहै ॥२॥ अबग्रन्थकाअर्वांतरप्रकोजनकहतेहैं ॥

✽ शृणुप्रकाशराचितां सदैवतिमरापहां ।

वादीभकुंभनिभेदसिंहदंष्ट्राधरी कृताम् ॥३॥✽

अ० ॥ हेवादियोंकेजयकरनेकीइच्छावालेपुरुषमुक्तप्रकाशानंद

कररचनाकीहूईइससिद्धांतमुक्तावलीकोत्श्रवणकर कैसी यहसिद्धांत मुक्तावलीहै जोद्वैतकेसहितअज्ञानकोनाशकरनेवालीहै। तथावादी रूपहस्तियोंके मस्तकोंकोभेदनकरनेवालेमिंहकी दाढ़ेंभीजिसकरतिर स्कारकीगईहैं ॥ इसलियेवादियोंकेजयकरनेकीइच्छावालेपुरुषोंने इसीकाअभ्यासप्रयत्नसेकरनाचाहिये । यहभावहै ॥ ३ ॥ दुर्विज्ञेय अर्थमकलरूपतासेइसमेंकथनकियाहै यहकहतेहैं ॥

वेदांतसारसर्वस्वमज्ञेय मधुनातनैः ।

अशेषेणामयोक्तंतत्पुरुषोत्तमयत्नतः ॥ ४ ॥

अ० ॥ वेदांतोंकासर्वमार जोइदानीकालकेपुरुषोंकरजानना कठिनहै । वहसारअर्थसकलरूपताकर परमात्माकीप्रेरणासेप्राप्तहुए प्रयत्नकरमेंनेकथनकियाहै ॥ ४ ॥ ब्रह्मज्ञानमेंसर्वकर्मोंकाअंतर्भाव कहतेहुएअर्थकोसमाप्तकरतेहैं ॥

❀ स्नातंतेनसमस्ततीर्थसलिलेसर्वापिदत्तावनिः।यज्ञा नांचकृतं सहस्रमाखिलादेवाश्चसंपूजिताः॥ संसारा च्चसमुद्भृताःस्वपितरस्त्रैलोक्यपूज्योप्यसौ।यस्य ब्रह्मविचारणो क्षणमपिस्थैर्य्य मनःप्राप्नुयात्॥५❀

अ० ॥ जिसमाधनसंपन्नअधिकारीकाचित्तएकक्षणमात्रभीब्रह्म विचारमेंस्थिरताकोप्राप्तहुआहै ॥ तिसनेसर्वतीर्थोंकेजलोंमेंस्नानकर लिया ॥ औरसर्वपृथ्वीभीतिसनेदानकरदी ॥ औरहजारोंयज्ञोंका अनुष्ठानभी तिसनेकरलिया । औरसर्वदेवताओंकापूजनभी तिसने करलिया ॥ औरमंमारसेअपनेपितरोंकाउद्धारभी तिमनेकरलिया ॥

औरतीनलोकोंमेंस्थितप्राणियोंकरपूजनेयोग्यभीवहीहै । क्योंकि
ब्रह्मवेत्ताब्रह्मस्वरूपहै। औरब्रह्मविद्यामेंसकलकर्मतथाउपासनाकेफलका
अंतर्भावहै ॥ इसलियेब्रह्मविद्याकेअर्थमुमुक्षुजनोंनेसदाप्रयत्नकरना
यहभावहै ॥२॥ इति ॥अवटीकाकारश्रीनानादीक्षितविद्वान्स्वविनय
पूर्वकग्रंथकीसमाप्तिमेंनिर्युण्णवस्तुनिर्देशरूपमंगलकोकरतेहुएइसदीपिका
नाम्नीटीकाकोसमाप्तकरतेहैं ॥ यद्यपिवहमूलटीकायहांलिखीनहींगई
यातेइनश्लोकोंकीव्याख्याकरनीअयुक्तहै तथापिचहटीकासमग्र यहां
भाषामेंविद्यमानहै यातेइनश्लोकोंकीभाषाव्याख्यायुक्तहीहै ॥

❀ नानादीक्षितसंज्ञन विदुपेयंविनिर्मिता ।

सिद्धान्तमौक्तिकश्रेणीदीपिकात्मप्रकाशिका ॥१ ❀

अ० ॥ नानादीक्षितसंज्ञिकमुभविद्वान्नेयहसिद्धांतमुक्तावली
कीदीपिकानाम्नीटीकारचनाकीहै । कैसीयहटीकाहै जोआत्मतत्त्व
केप्रकाशकरनेवालीहै ॥ १ ॥ अबअगलेश्लोकमेंअपनीनप्रताको
प्रकटकरतेहैं ॥

❀ विदितसकल वेद्यैर्नप्रशंसंतिलोकेग्रथितमपिमहद्भिः

किंपुनर्मादृशेन। इतिविफलसमेऽस्मिन् वाङ्मयेऽहं

प्रवृत्तः स्वमातेविमूलतायैक्षन्तु महींतिसंतः॥२॥ ❀

अ० ॥ सकलवेदार्थकेजाननेवाले महानुभावपुरुषोंकररचनाकरे
हुएग्रंथोंकोभी सकलजनश्लाघानहींकरते।तोमुझजैसेमनुष्यकररचना
करेहुएग्रंथको लोगश्लाघानहीं करेंगेयहतोक्याहीकथनकरनाहै। इस
लियेनिष्फलतुल्यइसवाणीरूपग्रंथ रचनामें मैंप्रवृत्तहुआहूं । परन्तु
अपनेअंतःकरणकीशुद्धिकेअर्थमेरीप्रवृत्तिसफलहै।यातेशांतचित्तमहात्मा

मेरेदोषोंकोक्षमाकरनेकेयोग्यहैं। २। अथवस्तुनिर्देशरूपमंगलकोकरतेहैं।

यदज्ञानादिदंभातीयज्ज्ञानाच्च प्रलीयते ।

ब्रह्मस्यांतदहंनित्यं नित्यसंवित्सुखाद्वयम् ॥३॥

अ० ॥ जिसकेअज्ञानसेयहदृश्यमान जगत्मानहोताहै ।
औरजिसकेज्ञानसेअत्यंतनाशहोताहै ॥ सोनित्यतथाचेतनस्वरूप
औरआनंदतथाअद्वयस्वरूपब्रह्मसदामैंहूँ ॥ ३ ॥

अवटीकानिर्माणका स्थानकहतेहुएसमाप्तकरतेहैं ।

अधिकाश्रयुपविश्वेशमियं सिद्धांतदीपिका ।

निर्मिताराजतांश्वत्सदानंद प्रदायिनी ॥ ४ ॥

अ० श्रीकाशीजीमें विश्वेश्वरमहादेवजीकेसमीपयहसिद्धांत
दीपिकानाम्नीटीका रचनाकीहै। सोसुसुचुपुरुषोंको सदाआनंदकेदेने
वालीहुईनिस्तरविराजमानहो ॥ (४) इति ॥

गीयामा० ॥ विनाशजाको काहूविधसो नाहिकोऊपावहै ।

जोसर्वजगअवभासको आनंदपरमसुभाव है ॥

सजातीयआदिद्वैतजामेंदृष्टनांहिआवहै ।

सोआतमाहै रामरमियो निखल वेदवताव है ॥ १ ॥

क०॥ सोईशुद्धब्रह्मपर मायिकस्वरूपधर देवनकेहितकर जगप्रगटएहैं ।

नीलमेघसमश्याम तनद्यतिअभिरामअतिछवपिखकाममनमोल

जएहैं। नैनछवपिखमृग मौनमुग्धायरहे कंजखंजभृंगमन माहि

विसमएहैं। कमलसदोपपद कमलअदोपसदा ताहिंरघुनाथको

प्रणामहमकरेहैं ॥ २ ॥

तोटकर्षं०॥ वहरामभण्युरुनानकहैं, कलिदोपनदाहकपावकहैं ।

जहदर्शनतेनिस्थादिटे, पदकंजनताहिनमोहमरे ॥ ३ ॥

चौ०॥ श्रीगुरुअंगदजनहितकारी, अमरदासजनकेदुखदारी ।

रामदासगुरुपरमकृपालू, श्रीगुरुअर्जुनजनप्रतिपालू ॥ ४ ॥

तुरकननाशकहरीगोविंद, श्रीहरीरायभक्तवर्षिंद ।

श्रीहरीकृष्णजननसुखदान, धर्मकेतुगुरुनवममहान ॥ ५ ॥

दो० ॥ इनसवगुरुवनकेसदा चरणकलधरसीस ।

वंदोंविचकरजोरकर धरोंध्यानअहिनीस ॥ ६ ॥

१ स्वै०॥ मुखजाहिंशशीसमशोभतहै परदोषविहीनतिसैअधिकई ।

नैनसरोजसमंफिखिये परहैकरुणारसकीससाई ।

भुजदंडअहीसमशोभतहैं परदीननपालकताउचताई ।

तांगुरुगोविंदकेहरकेपद दुंदनमोममहोयसदाई ॥ ७ ॥

अनंगशेरा॥ रचाअगारभोगमोक्ष सेवकानहीतसे परोपकारवीचनीत

चीतकोहुलासहै।हनामहातमोजिने सतीमतीप्रकाशदेक्षमादयादमो

सुशीलजाहिमेंनिवासहै । रिदेअडोलधीर आस्यकंजहैविकाशजां

पिखेत्रितापशांतहोत दोषभीबिनासहै। हमेंअधारहैसदा धरोंसुचीत

ताहिके पदारविंदकोनमो जुमोरपूरआसहै ॥ ८ ॥

दो० ॥ वेदपादकेआदिके वर्णवामगतिसान।

ममसद्गुरुकोनामहै भक्तनकोसुखदान ॥ ९ ॥

शिषरखी० ॥ रचीजांकीलीला सकलजगमेंहै वचनकी । गुणावंती

शोभा अकथशशिजैसे वदनकी।महावानीजानी दुस्त

सबहूँकेदलनमें।नमोवाखारंभवतुलुमकोहैजननिमे ॥१०

सो० ॥ श्रीगुरुचरणध्यान भयोसहायकनीतमम ॥

कारजभयोमहान बुधजनकोजुहर्षप्रद ॥ ११ ॥

स्वैया ॥ मोक्षददोहरिनामनरोत्तम मित्रवरममनीतसहाई ।

तांहिकिप्रेरनधारहियेइस कारजकीमनमेंहुलसाई ।

सबसज्जनसंतनसोविनती ममदोषछमोंमतिमेंलघुताई ।

भयिआजसमाप्तमिरीशुक्रतावलि सीयपतिप्रतिदीनचढाई ॥१२

क०।मुक्तियुक्तिपुनसारमतिदेनवारीसारसुतीसमजगजानोमुक्तावली

संशयविपरीतज्ञानवादीतर्कानगिरिनाशवेकोकुलिशविडौजमुक्तावली

त्यागभोगथावलीकोधरेमुक्तावलीजोकटेदुखथावलीकोयहीमुक्तावली

आनंदभुवनमध्यदीपिकाप्रकाशयुतवेदकेसिद्धांतनकीलसेमुक्तावली॥

दो० ॥ सिद्धीदरशननाथशशि संवतफल्गुणमास ।

१३

श्वेतपक्षतिथिवेदशशि सुतथहिपूरविलास ॥ १४ ॥

सो० ॥ श्रीगुरुयर्जुनथान तरनतारनविख्यातजग ।

तहांरंभइतिजान रिषीकेशसुरमरितटे ॥ १५ ॥

इतिश्री १०८ मन्निर्मलमृताश्वतंसब्रह्मविदुत्तमहरिहरिपूज्यपाद

शिष्येणगुरुदत्तसिंहमाधुनाविरचितायांवेदांतसिद्धांतमुक्तावली

भाषायांउत्तराद्धम् ॥

इतिश्रीमत्परमहंमपरिब्राजकाचार्यस्वामिप्रकाशाऽनंदयतिवरविरचित

वेदांतसिद्धांतमुक्तावलीग्रंथस्य श्रीनानादीक्षितविरचितसिद्धांत

दीपिकाटीकोपेतस्य श्रीमन्निर्मलमृताश्वतंस ब्रह्मविदुत्तम

हरिहरिपूज्यपादशिष्येण गुरुदत्तसिंहसाधुनाविर

चिताऽनंदभुवनाख्याप्राकृतभाषाटीकासमाप्ता

॥ ओ३म् ॥

अथ श्रीवेदान्तसिद्धान्तमुक्तावली
मूलकारिकायाः शब्दार्थबोधिनी
भाषाटीकाप्रारम्भः ॥

—०—

१।० ॥ नैनवैनमनजानको नैनवैनमनजान ।

सोमै द्वैतविनाशविन चिदानंदनिश्चान ॥ १ ॥

स्वैया ॥ बन्दनदोकरजोकरों रघुनंदनकोसबदूपनिकन्दन ।

कन्दनदासनकेभवकन्धन हैजनतापमिटावनचन्दन ।

चन्दनतागकपावकथौरवि जोतिनजोतिकरेसचनन्दन ।

नन्दनहीननकोकरनन्दन हैममपालकवैरघुनन्दन ॥२॥

चौ० ॥ गुरुनानकगोविन्दहरिवरके । चरणाकमलकोबन्दनकरके ।

स्वगुरुपदपङ्कजधरध्यानूं । मूलकारिकाअर्थवखानूं ॥ ३ ॥

अदृष्टद्वयमानंदमात्मानं ज्योतिरव्ययम् ।

विनिश्चित्यश्रुतेः साक्षाद्युक्तिस्तत्राभिधीयते ॥१॥

भा० ॥ (अव्ययम्) विनाशसेरहित (ज्योतिः) स्वप्रकाश

(आनंदम्) परमपुरुषार्थ (अदृष्टद्वयम्) द्वैतदर्शनसेरहित (आत्मानम्)

आत्माको (साक्षात्श्रुतेः) साक्षात्उपनिषदसे (विनिश्चित्य) निश्चय

करके (तत्र) उक्तचतुष्टयविशेषणविशिष्टयात्मानं (युक्तिः) श्रुति

अनुसारीतर्क (अभिधीयते) निरूपणकियाजाताहै ॥ १ ॥

आत्मानित्योऽथवानित्यो भेदस्त्वाद्येस्फुटोमतः ।

अन्त्येतुकृतहानिः स्यादकृताभ्यागमस्तथा ॥२॥

भा० ॥ (आत्मानित्यः) आत्मानित्यहै (अथवा अनित्यः) अथवाअनित्यहै (तुआद्ये) प्रथमपक्षमें (भेदः) देहादिकोंसेआत्मा काभेद (स्फुटोमतः) स्पष्टहीअंगीकारहै । (तुअन्त्ये) औरद्वितीय पक्षमें (कृतहानिः) कियेहुयेकर्मनकाभोगसेविनानाश [तथा] और तैसेही (अकृताभ्यागमः) नकियेहुएकर्मनकेफलकी प्राप्तिरूपदोष (स्यात्) होगा ॥ २ ॥

जीवाश्रयाब्रह्मपदाह्यविद्या तत्त्वविन्मता ।

तद्विरुद्धमिदं वाक्यमात्मात्वज्ञानगोचरः ॥ ३ ॥

भा० (अविद्या) अज्ञान (जीवाश्रया) जीवकेअश्रितहै । और (ब्रह्मपदा) ब्रह्मकोविषयकरताहै। यहवार्ता (तत्त्ववित्तमता) यथार्थजाननेवालोंको अंगीकारहै।इसलिये [आत्मातुअज्ञानगोचरः] आत्माही अज्ञानकाविषयहै [इदंवाक्यम्] यहवादीका कथन (तत्त्वविरुद्धम्) तिनके कथनसे विरुद्धहै ॥ [हि] जीवआश्रित अज्ञानमानेहुएभीतिसकोउपाधिहोनेकरआत्माश्रयदोषनहींआता॥३॥

प्रत्यक्षादिप्रमाणानां प्रमात्वंपरतोयदि ।

अनवस्थास्फुटातत्र स्वतस्त्वेदोपसंशयः ॥ ४ ॥

भा० ॥ [प्रत्यक्षादिप्रमाणानाम्] प्रत्यक्षादिप्रमाणोंनिष्ठ [यदि] जोकदाचित् [परतोप्रमात्वम्] परतोप्रमात्वमानोंतो (तत्र) तिसपक्षमें [अनवस्थास्फुटा] अनवस्थादोषस्पष्टहीप्राप्तहोगा ॥ और

[स्वत स्त्वे] परमात्वको स्वतः ग्राह्यत्वमाननेमें (दोपसंशयः) दोषकी संभावना होगी ॥ ४ ॥

❖ जीवब्रह्मप्रयोगाभ्यामेकं वस्त्वथवा द्वयम् ।

आद्ये त्विष्टं ममैव स्यात् द्वितीये त्वन्मतक्षतिः ॥५॥

भा० ॥ (जीवब्रह्मप्रयोगाभ्याम्) जीव और ब्रह्म इन दो शब्दोंसे [एकं वस्तु] एक ही पदार्थ कहते हो [अथवा द्वयम्] अथवा दो पदार्थ कहते हो । [आद्ये] प्रथम पक्षमें [तु] ब्रह्मशब्दसे भी आत्मा का ही कथन होनेसे [ममैव] मेरा ही [इष्टम्] इष्टसिद्ध [स्यात्] होगा ॥ [द्वितीये] द्वितीय पक्षमें [त्वन्मतक्षतिः] तेरे मतकी हानि होगी ॥५॥

❖ अविद्यास्वाश्रयाभिन्नविषया स्यात्तमो यतः ।

यथा बाह्यं तमो दृष्टं तथा च यंत तस्तथा ॥६॥*

भा० ॥ [अविद्यास्वाश्रयाभिन्नविषया स्यात्] अविद्या अपने आश्रयसे अभिन्नको विषय करनेवाली है ॥ (यतः) जिसकारणसे (तमः) तमरूप है । (यथा) जैसे (बाह्यं तमः) बाह्य अन्धकार (दृष्टम्) अपने आश्रयसे अभिन्नको विषय करता हुआ देखा है । (तथा च इयम्) तैसे ही यह अविद्या (ततः) तमरूप होनेसे (तथा) स्वाश्रयाभिन्नविषयणी है ॥६॥

❖ ब्रह्मात्मनोर्विभिन्नत्वे भेदः स्वाभाविको यदि ।

औपाधिकोऽथवा भेदः सर्वथानुपपत्तिकः ॥७॥

भा० ॥ (ब्रह्मात्मनोर्विभिन्नत्वे) ब्रह्म और आत्मा का भेद माने हुए (यदि) क्या (स्वाभाविकः भेदः) तिनका स्वरूपप्रयुक्त भेद है (अथवा औपाधिकः भेदः) अथवा औपाधिप्रयुक्त भेद है ॥ (सर्वथा) सर्व

प्रकारसे (अनुपपत्तिकः) भेदनहींसंभवता ॥ ७ ॥

❁ लौकिकीवैदिकीचापिनाऽज्ञानेदृश्यतेप्रमा ।

कार्यदृष्ट्याऽथकल्प्यंचेल्लाघवादेकमेवतत् ॥८॥

भा० ॥ [अज्ञाने] अज्ञानमें [लौकिकी] लौकिकप्रत्यक्षादि प्रमाण [च] अथवा [वैदिकी] वेद [प्रमाअपि] प्रमाणभी [नदृश्यते] नहींदेखाजाता [अथचेत्] यदि [कार्यदृष्ट्या] प्रपंच रूपकार्यकोदेखकर [तत्] वहअज्ञान [कल्प्यम्] कल्पनाकरने योग्यहैतो [लाघवात्] लाघवसे [एकमेव] एकहीस्वीकारकरो॥८॥

❁ बन्धमोक्षव्यवस्थास्याज्जीवाभेदेकथंतव ।

यथादृष्टंतथैवास्तुदृष्टत्वात्स्वप्नदृष्टवत् ॥९॥❁

भा० प्र ॥ [तव] तैरेमतमें [जीवाभेदे] जीवको एकमानेहुए (बन्धमोक्षव्यवस्था)बन्धतथा मुक्तिकीव्यवस्था(कथंस्यात्) कैसेहोगी (उ०) (यथादृष्टम्) जैसेतैरेमतमेंव्यवस्थादेखीहै । (तथाएवअस्तु) तैसेहीहमारेमतमेंहो (दृष्टत्वात्) देखनेसे (स्वप्नदृष्टवत्) स्वप्नमेंबन्ध मुक्तिकीव्यवस्थाजैसेदेखीजातीहै तैसे ॥९॥

❁ अज्ञातसत्त्वंनेष्टंचेद्व्यवहारःकथंभवेत् ।

नह्यदर्शनमात्रेणाविपरणानाशनिश्चयात् ॥१०॥

भा० ॥ (चेत्) यदि (अज्ञातसत्त्वम्) प्रपंचनिष्ठअज्ञातसत्ता (नदृष्टम्) अंगीकारनहींतो (व्यवहारः) व्यवहार(कथंभवेत्) कैसेहोगा (हि) जिसकारणसे (अदर्शनमात्रेण) पुत्रादिकोंकेअदर्शनमात्रकर तिनका (नाशनिश्चयात्)अभावनिश्चयसेकोईभीपुरुष (विपरणःन)

विषादयुक्तनहींहोताइसवास्तेप्रपंचकीअज्ञातसौमाननीयोग्यहै॥१०

❖ सत्त्वत्रयंवदन्वादीप्रष्टव्योऽत्राधुनामया ।

सत्यंद्वैतमसत्यंवानासत्येत्रिविधंकृतः ॥११॥❖

भा० ॥ [सत्त्वत्रयम्] त्रिविधसत्ता (वदन्) कहताहुआ (वादी) एकदेशी (अत्र) यहां (अधुना) अब (मया)मेरेकर (प्रष्टव्यः) पूछनेयोग्यहै ॥ क्या (सत्यंद्वैतम्) द्वैतसत्यहै (वाच्यसत्यम्) अथवा अनिर्वचनीयहै ॥ (न) प्रथमपक्षनहींसंभवता । क्योंकिद्वैतापत्तिरूप दोषहै ॥ और (असत्ये) प्रातीतिक द्वैतमानेहुए (त्रिविधम्) तीन प्रकारकीसत्ता (कृतः)-किसहेतुसेहै ॥ ११ ॥

❖ द्वैतभेदेप्रतिज्ञानंप्रत्यभिज्ञाकथं वद ।

दशानांयुगपत्सर्पभ्रमेयद्वत्तथैवसा ॥१२॥❖

भा० प्र० ॥ (प्रतिज्ञानम्) ज्ञानज्ञानप्रति (द्वैतभेदे) द्वैतकाभेद मानेहुए (प्रत्यभिज्ञा) सोईयहप्रपंचहै यहप्रतिभिज्ञा (कथम्) किस प्रकारहोगी (वद) यहलुमकहो ॥ ३० ॥ (यद्वत्) जैसे (युगपत्) एककालमें (दशानाम्) दशपुरुषोंको (सर्पभ्रमे) सर्पभ्रमहुएभ्रमरूप प्रतिभिज्ञाहोतीहै (तथाएव) तैसेही (सा) वहप्रपंचगोचरप्रतिभिज्ञा भ्रमरूपहै ॥ (१२)

❖ सर्पभ्रमाद्विशेषोऽस्तिजाग्रद्वोधेऽन्यथाकथम् ।

इन्द्रियादेरुपादानंतदभावेयतो नधीः १३॥❖

भा० ॥ (सर्पभ्रमात्) सर्पभ्रमसे (जाग्रद्वोधे) जाग्रतज्ञानमें (विशेषःअस्ति) विलक्षणज्ञाहै । (अन्यथा) यदिऐसेनमाने तो

(इन्द्रियादेः) इन्द्रियादिकोंका (उपादानम्) ग्रहण (कथम्) कैसेहोगा (यतः) जिसकारणसे (तत्र्यभावे) इन्द्रियोंकेअभावहुए (धीः) जाग्रत ज्ञान (न) नहींहोता ॥ १३ ॥

❀ इन्द्रियाणांकारणात्वेभवेच्चोद्यंतदातव ।

स्वप्नभ्रमेयथातेषामन्वयव्यतिरेकधीः ॥१४॥❀

भा० ॥ हेवादिन् (इन्द्रियाणाम्) इन्द्रियोंको (कारणात्वे) जाग्रतज्ञानकेप्रतिकारणाताकेहुए [तदा] तव (तव) तेरा (चोद्यम्) विकल्प(भवेत्) होसकेपरंतुऐसेनहीं क्योंकि (यथा) जैसे(स्वप्नभ्रमे) स्वप्नभ्रममें (तेषाम्) इन्द्रियोंका (अन्वयव्यतिरेकधीः) अन्वयव्यतिरेकज्ञानभ्रमरूपहै तैसेजाग्रतज्ञानकेप्रतिजानो ॥ १४ ॥

❀ मृदादीनांकारणात्वंनचेदिष्टंघटंप्रति ।

अविद्यायाःकारणात्वंकथंसिद्धयेत्प्रमांविना ॥१५॥

भा० ॥ (चेत्) यदितुमको (मृदादीनाम्) मृत्तिकादिकोंकी (कारणात्वं) कारणाता (घटंप्रति) घटकेप्रति (इष्टं) स्वीकारनहींहै ॥ तो (प्रमांविना) प्रमाणसेविना (अविद्यायाः) अविद्याको (कारणात्वम्) प्रपंचकीकारणाता (कथम्) कैसे (सिद्धयेत्) सिद्धहोगी ॥ १५ ॥

❀ यथासतो जनिर्नैवमसतोपि जनिर्नच ।

जन्यत्वमेवजन्यस्यमायिकत्वसमर्पकम् ॥१६॥

भा० ॥ (यथा) जैसे (सतः) सत्की (जनिः) उत्पत्ति (न) नहींहोती । (एवं) इसी प्रकार (असतःअपि) असत्की भी (जनिः) उत्पत्ति (नच) नहींहोती ॥ इसवास्ते (जन्यस्य) कार्य

प्रपंचनिष्ठ (जन्यत्वंएव) कार्यपनाही (मायिकत्वसमर्पकम्) आविद्यक
पनेकाज्ञापकहै ॥ १६ ॥

❖ प्रतीतिमात्रसत्त्वंचेत् सत्त्वंप्रातीतिकंमतम् ।

अविरोधान्ममापीष्टं तद्भेदवदकाप्रमा ॥१७॥❖

भा० ॥ (वेत्) यदि(प्रातीतिकंसत्त्वम्) प्रातभासिकसत्ता(प्रतीति
मात्रसत्त्वम्) प्रतीतिमात्रसत्ताही(मतम्)स्वीकारहै। तोइसपक्षमें (अवि
रोधात्)विरोधकाअभावहोनेसे(ममअपि)सुझकोभी(इष्टम्)इष्टापत्तिहै॥
(तद्भेदे) औरज्ञानज्ञेयकेभेदमें(काप्रमा) कौनप्रमाणहै(वद) यहलुमकहो
अर्थात् ज्ञानज्ञेयकेभेदमें कोईभीप्रमाणनहीं ॥ १७ ॥

❖ प्रत्येतव्यप्रतीत्योश्चभेदः प्रामाणिकःकुतः ।

प्रतीतिमात्रमेवैतत् भातिविश्वंचराचरम् ॥१८॥❖

भा० ॥ (प्रत्येतव्यप्रतीत्योःच) ज्ञानऔरज्ञेयका (भेदः) भेद
कुतः) किसहेतुसे (प्रामाणिकः) प्रमाणसिद्धहै(किंतु)किसीहेतुसेनहीं ।
इसवास्ते (एतत्) यह (विश्वम्)संसार(चराचरम्)स्थावरजंगमरूप
जो (भाति) भानहोताहै। वह (प्रतीतिमात्रंएव) ज्ञानमात्रहीहै ॥१८॥

❖ ज्ञानज्ञेयप्रभेदेनयथा स्वाप्नंप्रतीयते ।

विज्ञानमात्रमेवैतत्तथा जाग्रच्चराचरम् ॥१९॥❖

भा० (यथा) जैसे(स्वाप्नं)स्वप्नकालीनजगत्विज्ञानमात्रस्वरूपहुया
भी (ज्ञानज्ञेयप्रभेदेन) ज्ञानतथाज्ञेयकेभेदविशिष्ट (प्रतीयते) प्रतीत
होताहै।(तथा) तैसेही (एतत्) यह (जाग्रत्चराचरं) जाग्रत्कालीन
स्थावरजंगमरूपजगत् (विज्ञानमात्रंएव) विज्ञानमात्रस्वरूपहीहै॥१९॥

तन्तोर्भेदेपटायद्वच्छून्य एवस्वरूपतः ।

आत्मनोपितथैवेदं भानमात्रंचराचरम् ॥ २० ॥

भा०॥ (यद्रत्) जैसे (तन्तोः) तंतुसे (भेदे) भिन्नकियेहुए (पटः) पट (स्वरूपतः) स्वरूपसे (शून्यःएव) असत्हीहोजाताहै ॥ (तथाएव)तैसेही(इदम्)यह(चराचरम्)स्थावरजंगमरूपजगत्(आत्मनः अपि) आत्मासेभिन्नकियाहुआभी असत्रूपहीहै ॥ क्योंकि (भान मात्रम्) विज्ञानमात्रस्वरूपहै ॥२०॥

रज्जुर्यथाभ्रान्तदृष्ट्यासर्प रूपाप्रकाशते ।

आत्मातथामूढबुद्ध्याजगद्रूपः प्रकाशते ॥ २१ ॥

भा० ॥ (यथा) जैसे (रज्जुः] जेवरी [भ्रान्तदृष्ट्या] भ्रान्त पुरुषकीदृष्टिसे[सर्परूपा] सर्परूप (प्रकाशते] प्रतीतहोतीहै । [तथा] तैसे (मूढबुद्ध्या) अज्ञानीकीदृष्टिसे [आत्मा] आत्माभी [जगत् रूपः] जगत् रूप [प्रकाशते] प्रतीतहोताहै ॥ २१ ॥

आत्मन्येवजगत्सर्वं दृष्टिमात्रमतत्त्वकम् ।

उद्भूयस्थितिमादाय विनश्यतिमुहुर्मुहुः ॥ २२ ॥

भा० ॥ (सर्वं जगत्) सकलप्रपंच (दृष्टिमात्रम्) प्रतीतिमात्र (अतत्त्वकम्) तथा अवास्तवरूप (आत्मनिएव) आत्मामेंही(उद्भूय) उत्पन्नहोकर तथा (स्थितिम्) स्थितिको (आदाय)ग्रहणकरके (मुहुः मुहुः) पुनः पुनः (विनश्यति) विनाशहोताहै ॥२२॥

पूर्णांनन्दाद्वयेशुद्धे पापदोषादिवर्जिते ।

प्रतिविंवमिवाभाति दृष्टिमात्रंजगत्त्रयम् ॥२३॥

भा० ॥ (पूर्णांदा द्रये) पूर्ण औ आनंद तथा दैतसे रहित.
 (शुद्धे) अविद्या मल रहित तथा (पापदोषादिवर्जिते) पाप औ
 रगादि दोषसेरहित आत्मामें (जगन्नृत्यम्) त्रयलोकात्मक प्रपंच
 (दृष्टिमात्रम्) प्रतीतिमात्र (प्रतिविंबंइव) प्रतिविंबकेसमान (आभाति)
 भासताहै ॥ २३ ॥

यत्तत्त्वंवेदगुप्तंपरमसुखतमं नित्यमुक्तस्वभावम् ।
 सत्यंसूक्ष्मातसुसूक्ष्मंमहदिदममृतंमुक्तमात्रैकगम्यम् ।
 यस्यांशेलेशमात्रंजगदिदमखिलंभ्रांतिमात्रैकदेहम् ।
 प्रत्यगज्योतिस्वरूपंशिवमिदमधुनाकथ्यतेयुक्तितोऽत्र २४

भा०॥ (यत्तत्त्वम्) जोअनारोपित आरमाहै(वेदगुप्तम्) वहवेद
 प्रमाणकरहीजाननेयोग्यहै । और,परमसुखतमम्) वहसर्वोत्कृष्टअत्यंत
 तसुखरूपहै । और (नित्यमुक्तस्वभावम्) सदाही अविद्याततकार्यसे
 रहितस्वरूपहै । और (सत्यम्) तीनोंकालमेंबाधशून्यहै । और(सूक्ष्मा
 त्सुसूक्ष्मम्) प्रधानादिकोंसे अत्यंतसूक्ष्महै । पुनः (महत्) वहनिपेक्ष
 व्यापकहै और (इदंअमृतम्) यहपूर्वोक्ततत्त्वहीमोक्षस्वरूपहै । और
 [मुक्तमात्रैकगम्यम्] केवलमुक्तपुरुषकरहीजाननेयोग्यहै ॥ और 'इदं
 शिवम्' यहहीईश्वररूपहै ॥ (यस्यांशे) जिसतत्त्वकेमायिकप्रदेशमें
 (भ्रांतिमात्रैकदेहम्) केवलमममात्रस्वरूप (इदम्) यह (अखिलम्) सर्व
 (जगत्) प्रपंच[लेशमात्रम्] लेशमात्रस्थितहै । (औरप्रत्यक्) सर्वसे
 अंतरहै। तथा (ज्योतिः) स्वप्रकाशस्वरूपहै । (अधुना) अब [युक्तिः]
 श्रुतिअनुसारीतर्कसे (अत्र)इसमें (कथ्यते)निरूपणाकियाजाताहै। २४।

❖ आत्मा ज्यं सर्वसंबद्धो भानुभासक उच्यते ।

नित्यो ज्यमविनाशित्वाद् उपादेयः कथं भवेत् २५ ॥ ❖

भा० ॥ (आत्मा अयम्) यह आत्मा (सर्वसंबद्धः) सर्वको साथ संबन्ध वाला है । और (भानुभासकः) आदित्यवत् प्रकाशक (उच्यते) श्रुति ने कहा है ॥ और [अविनाशित्वात्] अविनाशि होने से [अयम्] यह आत्मा (नित्यः) नित्य है । वह [उपादेयः] ग्रहण के योग्य [कथम्] किस प्रकार (भवेत्) हो किंतु नहीं हो सकता ॥ २५ ॥

❖ य आत्मा सर्ववस्तूनां यदर्थं सकलं जगत् ॥

आनंदाब्धिः स्वतंत्रो सावनादेयः कथं वद ॥ २६ ॥

भा० (सर्ववस्तूनाम्) सर्व अनात्मपदार्थों का [यः] जो [आत्मा] स्वरूप है । और (यत् अर्थम्) जिसके वास्ते [सकलं जगत्] सर्व जगत् है और जो [आनंदाब्धिः] आनंद का समुद्र है । और (स्वतंत्रः) स्वतंत्र है । (असौ) वह आत्मा (अनादेयः) ग्रहण के योग्य (कथम्) किस प्रकार हो सकता है हेवादिन् [वद] यह तू कथन कर ॥ २६ ॥

❖ यदन्यत् वस्तु तत् सर्वं यद्भेदेन रश्मृंगवत् ।

सत्ता सर्वपदार्थानामनादेयः कथं वद ॥ २७ ॥

भा० ॥ (यदन्यत्) जिससे भिन्न रूपता कर माना हुआ [तत् सर्वं वस्तु] वह सर्व अनात्मा [यत्भेदे] जिस आत्मा से भिन्न किया हुआ [रश्मृंगवत्] नरके शृंग सम अश्व हो जाता है ॥ और (सर्वपदार्थानाम्) सकल अनात्मपदार्थों का जो [सत्ता] स्वरूप है ! वह [अनादेयः] ग्रहण के योग्य [कथम्] किस प्रकार है [वद] यह तू कथन कर ॥ २७ ॥

❀ यद्वशे प्राणिनः सर्वे ब्रह्मादयः कृमयश्च ये ।

ईशानः सर्वभूतानामनादेयः कथं भवेत् ॥२८॥❀

भा० ॥ [ब्रह्मादयः] ब्रह्मासेयादिलेकर (कृमयः च) और कृमिप
पर्यन्त (ये) जो (सर्वे) सर्व (प्राणिनः) प्राणधारि हैं वह (यद्वशे)
जिसके वशमें वर्तते हैं । और (सर्वभूतानां) सर्वभूतोंका जो (ईशानः)
नियन्ता है (अनादेयः) वह अनुपादेय (कथं) किस प्रकार (भवेत्) हो
किंतु नहीं हो सकता ॥२८॥

❀ यच्चक्षुः सर्वभूतानां मनसो यन्मनो विदुः ।

यज्ज्योतिर्ज्योतिषां देवो नोपादेयः कथं विभुः ॥२९॥

भा० ॥ (यत्) जो आत्मा (सर्वभूतानाम्) सब लभूतोंका (चक्षुः)
प्रकाशक है । और (यत्) जो आत्मा (मनसः) मनका भी 'मनः' साक्षी
है, उसे (विदुः) ब्रह्मवेत्ता जानते हैं । और (यत्) जो आत्मा (ज्योतिषां)
सूर्यादिज्योतिषोंका भी (ज्योतिः) प्रकाशक है । वह (देव) स्वप्रकाश
(विभुः) व्यापक आत्मा (कथं) कैसे (उपादेयः न) उपादेय नहीं किंतु
वह उपादेय अर्थात् पुरुषार्थरूप है ॥२९॥

❀ मोदप्रमोदपक्षाभ्यामनंदात्मा तमोगतः ।

जीवयत्यखिलालोकान्नोपादेयः स्वयंकुतः ॥३०॥❀

भा० ॥ (यानंदात्मा) यानंदस्वरूप आत्मा ही (तमोगतः)
यज्ञानोपहितदृष्ट्या (मोदप्रमोदपक्षाभ्याम्) मोद और प्रमोद इन दोनों
पक्षोंकरके (अखिलालोकान्) सर्वलोकोंको (जीवयति) जीवावता
है । वह (स्वयं) आप (कुतः) किसहेतुसे (उपादेयः न) पुरुषार्थ
रूप नहीं ॥ ३० ॥

❀ यस्यानंदसमुद्रस्यलेशमात्रंजगतगतम् ।

प्रसृतं ब्रह्मलोकादौ सुखाविधिकः परित्यजेत् ॥३१॥❀

भा० ॥ (यस्य) जिस (आनंद समुद्रस्य) आनंदसमुद्रका (लेशमात्रं) लेशमात्रआनंद (जगतगतम्) जगतमें प्राप्त है और (ब्रह्म लोकादौ) ब्रह्मलोकादिकों में (प्रसृतं) फैला हुआ है । तिस 'सुखाविधिकं' सुखसमुद्रको (कः) कौन (परित्यजेत्) परित्याग करे किंतु कोई नहीं त्यागता ॥ ३१ ॥

❀ हेररायगर्भमैश्वर्य्ययस्मिन् दृष्टे तृणायते ।

सीमासर्वपुमर्थानामपुमर्थः कथं भवेत् ॥३२॥❀

भा० ॥ (यस्मिन् दृष्टे) जिस आत्माके साक्षात्कार हुए (हेरराय गर्भमैश्वर्य्य) हेररायगर्भका ऐश्वर्य्य (तृणायते) तृणके समान हो जाता है । और जो (सर्वपुमर्थानां) सर्वपुरुषार्थोंकी (सीमा) अवधि है । वह (अपुमर्थः) अपुरुषार्थरूप [कथं] कैसे (भवेत्) हो किंतु नहीं हो सकता ३२

❀ यत्कामा ब्रह्मचर्य्यन्त इन्द्रादयः प्राप्तसंपदः ।

स्वस्वभोगंत्यजंत्येवमपुमर्थः कथं नृणाम् ॥३३॥❀

भा० ॥ (प्राप्तसंपदः) संपदाकी प्राप्तिवाले (इन्द्रादयः) इन्द्रादिक 'यत्कामाः' जिस आत्माकी कामनावाले हुए (ब्रह्मचर्य्यन्तः) ब्रह्मचर्य्य को धारण करते हुए (स्वस्वभोगम्) अपने अपने भोगको (त्यजन्ति) त्यागते भये । तो (एवम्) इस प्रकार (नृणाम्) मनुष्योंको वह आत्मा (अपुमर्थः) अपुरुषार्थरूप (कथम्) किस प्रकार हो सके किंतु नहीं हो सकता ॥ ३३ ॥

❖ यद्दृक्षाफलाः सर्वा वैदिक्यो विविधा क्रियाः ।

या गाद्या विहितास्तास्मिन्नुपेक्षावदते कथम् ॥ ३४ ॥ ❖

भा० ॥ (सर्वाः) सर्व (वैदिक्यः) वेदोक्त (विविधाः) नाना प्रकारकी (या गाद्याः) यागादिरूप (क्रियाः) क्रियायें (विहिताः) जो विधानकी हैं । कैसी वह क्रियायें हैं (यद्दृक्षाफलाः) जिस आत्माके दर्शनकी इच्छा ही फल है जिन्होंका (तास्मिन्) तिस आत्मामें 'ते' तुम्हको [कथम्] किस प्रकार [उपेक्षा] अनुपादेयता है [वद] यहतू कथन कर ॥ ३४ ॥

❖ यद्दृष्टिमात्रतः सर्वाः कामाद्याः दुःखभूमयः ।

विनश्यन्ति क्षणेनासावुपादेयः कथं न ते ॥ ३५ ॥ ❖

भा० ॥ (यद्दृष्टिमात्रतः) जिसके दर्शन मात्रसे (कामाद्याः) कामादिक (सर्वाः) सर्व (दुःखभूमयः) दुःखके कारण 'क्षण' एक क्षण मात्रसे 'विनश्यन्ति' विनाश हो जाते हैं 'असौ' वह आत्मा 'ते' तुम्हको 'कथम्' किस प्रकार 'न उपादेयः' पुरुषार्थरूपनहीं यहतू कथन कर ॥ ३५ ॥

❖ अहलाद रूपतायस्य सुपुत्रे सर्वसाक्षिकी ।

तत्रापेक्षा भवेद्यस्य तदन्यस्यात् पशुः कथम् ॥ ३६ ॥ ❖

भा० ॥ 'यस्य' जिस आत्माकी 'अहलाद रूपता' आनंदस्वरूपता 'सुपुत्रे' सुपुत्रिमें 'सर्वसाक्षिकी' सर्वपुत्रोंके अनुभव सिद्ध है । 'तत्र' तिस आत्माविषयक 'यस्य' जिसको 'उपेक्षा भवेत्' अनुपादेयता हो 'तदन्यः' तिमसे भिन्न 'कथम्' और किस प्रकार 'पशु' स्यात्' पशुहोगा किंतु वही पशु है ॥ ३६ ॥

❖ विरुद्धयोरभेदोहिनवेदेनप्रमीयते ।

अनन्यगतिकत्वेनमानान्तरस्यवाधनम् ॥३७॥❖

भा० ॥ 'विरुद्धयोः' विरुद्धधर्मवालोंका 'अभेदः' एकत्व 'हि' जिसकारणसे 'वेदेन' वेदने 'नप्रमीयते' नहींबाधनकियाहैइसीसे 'अनन्यगतिकत्वेन' अन्यगतिकायभावहोनेकर 'मानान्तरस्य' अन्यप्रमाणका 'वाधनं' बाधयुक्तहै अन्यथानहीं ॥ ३७ ॥

❖ ब्रह्माऽज्ञानाज्जगज्जन्मब्रह्मणोऽकारणात्त्वतः ।

आधिष्ठानत्वमात्रेणकारणांब्रह्मगीयते ॥३८॥

भा० ॥ 'ब्रह्मणः' ब्रह्मको 'अकारणात्त्वतः' अकारणहोनेसे 'ब्रह्मअज्ञानात्' ब्रह्मकेअज्ञानसे 'जगत्जन्म' प्रपंचकीउत्पत्तिहोती है । और 'आधिष्ठानत्वमात्रेण' प्रपंचकाअधिष्ठानमात्रहोनेकर 'कारणांब्रह्म' ब्रह्मकारणहै । ऐसा [गीयते] वेदान्तोंमेंकथनकियाहै ॥३८॥

❖ प्रश्नस्यज्ञानपूर्वत्वादाक्षेपेप्रतियोगिधीः ।

अवश्यंभाविनीपूर्वाविरोधःस्यादितोऽन्यथा ॥३९॥

भा० ॥ [प्रश्नस्य] प्रश्नको [ज्ञानपूर्वत्वात्] ज्ञान पूर्वकहोनेसे ज्ञातमेंप्रश्नव्यर्थहै । और [आक्षेप] निषेधमें [प्रतियोगिधीः] प्रतियोगिज्ञान (अवश्यंभाविनीपूर्वा)अवश्यपूर्वहोताहै ॥ [इतः] इससे 'अन्यथा' अन्यप्रकारमानेहुए 'विरोधःस्यात्' विरोधहोगा ॥३९॥

❖ साक्षात्कृतेत्वधिष्ठानेसमनन्तरनिश्चितिः

अध्यस्यमानंनस्तीतिवाधइत्युच्यतेबुधैः ॥४०॥❖

भा० ॥ [तुअधिष्ठानेसाक्षात्कृते] अधिष्ठानकेसाक्षात्कार

हुएपुनः [समनंतरनिश्चितिः] तिससेअनंतरजोनिश्चयउत्पन्नहोता हैकि [अध्यस्यमाने] कल्पितपदार्थ [नास्ति] अधिष्ठानमेंकालत्रय मेंनहींहै [बाधःइति] यहीबाध [बुधैः] विद्वानोंने [उच्यते] कथन कियाहै ॥ ४० ॥

❖ उपमर्द्यस्वभावत्वमविद्यायाविरोधिता ।

तत्कर्तृत्वंतुविद्यायाःप्रकाशतमसोरिव॥४१॥❖

भा०॥ [उपमर्द्यस्वभात्वे] उपमर्दकेयोग्यस्वभाव[अविद्यायाः] अविद्यानिष्ठ (विरोधिता) विरोधिपनाहै । (तु) और (तत्कर्तृत्वं) उपमर्दकत्वरूपविरोधिपना [विद्यायाः] विद्यानिष्ठहै ॥ [प्रकाश तमसोःद्वयं] जैसेप्रकाशऔरअन्धकारकाविरोधहै ॥ ४१ ॥

❖ कल्पितोप्युपदेष्टास्याद्यथाशास्त्रंसमादिशेत् ।

नचाविनिगमोदोषोऽविद्यावत्त्वेननिर्णयात्॥४२॥

भा०॥ 'यथाशास्त्रम्' जैसेकल्पितभीशास्त्र 'स्यात्' बोधनकरता है। तैसे 'कल्पितःअपि' कल्पितभी 'उपदेष्टा' आचार्य्य 'समादिशे' सम्यक्उपदेशकरसकताहै। 'अविद्यावत्त्वेन' शिष्यकोअज्ञानीहोनेकर 'निर्णयाव' निर्णयहोनेसे 'अविनिगमःदोषःनच' विनिगमनाविरह दोषनहींप्राप्तहोसकता ॥४२॥

❖ उपाधिसंश्रयोह्यात्माआनंदत्वंतदाश्रयः ।

विशिष्टशक्यपक्षेतुव्यक्तिर्वाशक्तिर्गोचरः ॥४३॥❖

भा० ॥ 'विशिष्टशक्यपक्षे' आनंदत्वविशिष्टआनंदआनंदपद कावाच्यहै इसपक्षमें 'उपाधिसंश्रयः' उपाधियुक्तहुआ 'हियात्मा'

आत्माही 'आनंदत्वं' आनंदत्वधर्म 'तु' और 'तवयाश्रयः' तिसका आश्रयआनंदव्यक्तिरूपहै 'वा' अथवा 'व्यक्तिः' आनंदव्यक्ति 'शक्तिगोचरः' आनंदपदकीशक्तिकाविषयहै । इसपत्रमेंभीकोईदोष नहीं ॥ ४३ ॥

❀ आनंदरूपमात्मानंसच्चिदद्वयतत्त्वकम् ।

अपूर्वादिप्रमाणोक्तंप्राप्याहंतद्वपुःस्थितः ॥४४॥❀

भा० ॥ 'अपूर्वादिप्रमाणोक्तम्' श्रुतियादिकप्रमाणकर सिद्ध 'आनंदरूपम्' आनंदस्वरूपतथा (सच्चित्तद्वय तत्त्वकम्) सच्चित्तद्वयस्वरूप (आत्मानम्) आत्माको (प्राप्य) साक्षात्कारकरके (नद्वपुः) आनंदादिस्वरूपही (अहम्) में (स्थितः) स्थित हुआहूँ ॥ ४४ ॥

❀ योहमद्वयवस्त्वेवसद्वयेदृढनिश्चयः ।

प्राप्यचानंदमात्मानंसोहमद्वयविग्रहः ॥४५॥❀

भा० (यःअहम्)जोमैं (अद्वयवस्तुएव) अद्वैतवस्तुही [सद्वये] दृढविशिष्टमें [दृढनिश्चयः] दृढअभिमानवालाहुआथा [सःअहम्] जोमैं (च)पुनः (आनंदंआत्मानम्) आनंदस्वरूपआत्माको (प्राप्य) प्राप्तहोकर (अद्वयविग्रहः) अद्वैतस्वरूपस्थितहुआहूँ ॥ ४५ ॥

❀ नास्तिब्रह्मसदानंदमितिमेदुर्मतिःस्थिता ।

कगतासानजानामियदाहंतद्वपुःस्थितः ॥४६॥❀

भा० ॥ (सत्आनन्दम्) सत्ययाँआनन्दस्वरूप (ब्रह्मनास्ति) ब्रह्मनहींहै । (इतिदुर्मतिः) यहहुष्टुष्टुदि (मेस्थिता) मुझमेंस्थितथी।

(यदा) जिसकालमें [अहम्] में (तद्रूपः) सत्यादिस्वरूप (स्थितः) स्थितहुआ [साक्वगता) वहकहांगई (नजानामि) यहमेंनहीं जानताहूं ॥ ४६ ॥

*पूर्णानन्दाद्वयेतत्त्वेमेर्वादिजगदाकृतिः ।

बोधेऽबोधकृतैवासीदबोधःकगतोऽधुना ॥४७॥*

भा० ॥ [पूर्णानन्दाद्वयेतत्त्वे) पूर्णतथाअद्वयानन्दस्वरूपमें [मेर्वादिजगत्त्रयाकृतिः) सुमेरुआदिकजगतकाआकार [अबोधकृता एवआसीत्) अज्ञानकृतहीया (अधुना) अब (बोधे) आत्म साक्षात्कारकेदुए (अबोधः) वहअज्ञान (क्वगतः) कहांगया ॥४७॥
*संसाररोगसंग्रस्तोदुःखराशिर्वापरः ।

आत्मबोधसमुन्मेपादानन्दाब्धिरहोस्थितः ॥४८॥*

भा० ॥ (संसाररोगसंग्रस्तः) जो में संसाररूप रोग कर सम्यक् प्रसाहूआया और (दुःखराशिःइवअपरः) दुःखराशिकी न्याईनिकृष्टया [आत्मबोधसमुन्मेपात] अबआत्म साक्षात्कारके सम्यक्उदयहोनेसे (आनन्दाब्धिः) आनन्दकाममुद्र (स्थितः) में स्थित हुआहूं (अहो) यहबहुतआश्चर्यदे ॥ ४८ ॥

*योऽहमल्पेपिविषयेरागवानतिविह्वलः

आनन्दात्मनिसंप्राप्तिसरागःक्वगतोऽधुना ॥४९॥*

भा० ॥ (यःअहम्) जोमें (अल्पेअपिविषये) तुच्छविषयजन्य सुखमेंही (रागवान्) प्रीतिवालाथी (अतिविह्वलः) अत्यंतदुःखीहुआया (अधुना) अब (आनन्दात्मनिसंप्राप्तिं) आनन्दस्वरूपआत्माके सम्यक्प्राप्तकेद (रागवान्) रागवान् (क्वगतः) कहांगया ४९ ॥

भा० ॥ [अबोधाल्यतस्करैः] अज्ञानसंज्ञिकचौरैर्ने [दिहे] शरीर
 में (अहंमाननिगडैः) अहंअभिमानरूपीबन्धनोंकर (चिरंबद्धः) दीर्घ
 कालसेमेंपूर्ववांधाहुयाथाअव(दिव) हेस्वप्रकाशात्मन् (तेदर्शनातएव)
 तैरेसाक्षात्कारमात्रसे (बन्धनम्) वहबन्धन (क्षणतद्भ्रुटितं) एक
 क्षणमात्रसेतूटगया ॥ २३ ॥

❖ विशुद्धोऽस्मि विमुक्तोऽस्मि पूर्णात् पूर्णात्तमाकृतिः ।

असंस्पृश्यतमात्मानमन्तर्ब्रह्माराडकोटयः ॥२४॥ ❖

भा० ॥ (विशुद्धः अस्मि) मैंअविद्यादिमलसेरहितहूँ। (विमुक्तः
 अस्मि) औरबन्धनसेरहितहूँ॥ (पूर्णात् पूर्णात्तमाकृतिः) औरआकाशादि
 सेअतिपूर्णस्वरूपहूँ॥ [तंत्रात्मानम्] तिसमेरेस्वरूपको (असंस्पृश्य)
 नस्पर्शकरके (ब्रह्माराडकोटयः) अनंतब्रह्मांड (अन्तः) मुझमेंनिवास
 करें तोमेरीक्याहानिहै ॥ २४ ॥

❖ तत्त्वमादिवचो जालमावृत्तमसकृत्पुरा ।

इदानींतत् श्रवादेव पूर्णानन्दो व्यवस्थितः ॥२५॥ ❖

भा० ॥ (पुरा) पूर्व (तत्त्वं आदिवचः) तत्त्वं आदिक
 वचनोंका (जालं) समूहअर्थात्संपूर्णवेदका (असकृत्) अनेक
 बार (आवृत्तं) मैंनेअभ्यासकिया (इदानीं) अब (तत् श्रवात्एव) वेदांत
 विचारजन्यसाक्षात्कारसेही (पूर्णानन्दो व्यवस्थितः) पूर्णआनन्दस्वरूप
 मैंस्थितहुआहूँ ॥ २५ ॥

❖ आत्मसत्तैव है तस्य सत्तानान्यायतस्ततः ।

आत्मन्येव जगत्सर्वदृष्टे दृष्टं श्रुते श्रुतम् ॥२६॥ ❖

❀ यस्यमेजगतांकर्तुःकार्यैरपहृतात्मनः ।

आविर्भूतपरानन्दआत्माप्राप्तःश्रुतेर्वलात् ॥५०॥

भा० ॥ पूर्व (यस्यमे) जिसमुझ (जगतांकर्तुः) सकलजगत्के अधिष्ठान (कार्यैःअपहृतात्मनः) तथाकार्याऽऽयासोंकरआच्छादित स्वरूपको (श्रुतेःवलात्) अबश्रुतिजन्यबोधसे (आविर्भूतपरानन्दः) निरावरणपरमानन्द (आत्माप्राप्तः) स्वरूपप्राप्तहुआ ॥ ५० ॥

❀ परामृष्टोऽसिलब्धोऽसिप्रोपितोऽसिचिरंमया ।

इदानींत्वामहंप्राप्तोनत्यजामिकदाचन ॥५१॥

भा० ॥ (मया) मेरेसे (चिरम्) दीर्घकालसे (प्रोपितःअसि) त्वियुक्तथा (परामृष्टःअसि) अबतुपरामर्शक्रियागयाहैं । इसीसे (लब्धःअसि) तृप्त्यजहुआहैं । (इदानीं) अब (त्वांअहंप्राप्तः) तुझ कोमैंप्राप्तहुआ (कदाचन) कवी(नत्यजामि) नहींत्यागताहूं ॥५१॥

❀ त्वांविनानिःस्वरूपोऽहंमांविनात्वंकथंस्थितः ।

दिष्टयेदानींमयालब्धोयोऽसिसोऽसिनमोऽस्तुते ॥५२॥

भा० ॥ (त्वांविना) तेरेविना (अहंनिःस्वरूपः) मैंनिःस्वरूपहूं। और (मांविना) मेरेविना (त्वं) तू (कथंस्थितः) कैसेस्थितहोसकता हैं । (दिष्ट्या) बडाहर्षहै (इदानीं) अब (मया) मेरेकर (लब्धः) तू लब्धहुआहैं (यःअसि) जोतूहैं (सःअसि) सोतूहैं (तेनमःअस्तु) तेरेताईनमस्कारहो ॥ ५२ ॥

❀ देहेऽहंमाननिगडैर्वद्धोऽवोधाख्यतस्करैः ।

चिरतेदर्शनादेवत्रुटितं वन्धनंक्षणात् ॥ ५३ ॥❀

भा० ॥ [अवोधाख्यतस्करैः] अज्ञानसंज्ञिकचौरैर्ने [दिहे] शरीर
 में (अहंमाननिगडैः) अहंअभिमानरूपीबन्धनोंकर (चिंत्तद्धः) दीर्घ
 कालसेमैंपूर्वबांधाहुआथाअब(दिव) हेस्वप्रकाशात्मन् (तेदर्शनात्एव)
 तैसाक्षात्कारमात्रसे (बन्धनम्) वहबन्धन (ज्ञात्तुष्टिनं) एक
 क्षणमात्रसेतूटगया ॥ ५३ ॥

❀ विशुद्धोऽस्मि विमुक्तोऽस्मि पूर्णात् पूर्णतमाकृतिः ।

असंस्पृश्यतमात्मानमन्तर्ब्रह्माराडकोटयः ५४ ॥ ❀

भा० ॥ (विशुद्धःअस्मि) मैंअविद्यादिमलसेरहितहूं। (विमुक्तः
 अस्मि) औरबन्धनसेरहितहूं॥ (पूर्णात्पूर्णतमाकृतिः) औरआकाशादि
 सेअतिपूर्णस्वरूपहूं॥ [तंत्रात्मानम्] तिसमेरेस्वरूपको (असंस्पृश्य)
 नस्पर्शकरके (ब्रह्माराडकोटयः) अनंतब्रह्मांड (अन्तः) मुझमेंनिवास
 करें तोमेरीक्याहानिहै ॥ ५४ ॥

❀ तत्त्वमादिवचो जालमावृत्तमसकृत्पुरा ।

इदानीं तत् श्रवादेव पूर्णानन्दो व्यवस्थितः ॥ ५५ ॥ ❀

भा० ॥ (पुरा) पूर्व (तत्त्वंआदिवचः) तत्त्वं आदिक
 वचनोंका (जालं) समूहअर्थात्संपूर्णवेदका (असकृत्) अनेक
 बार (आवृत्तं) मैंनेअभ्यासकिया (इदानीं) अब (तत्श्रवात्एव) वेदांत
 विचारजन्यसाक्षात्कारसेही (पूर्णानन्दोव्यवस्थितः) पूर्णआनन्दस्वरूप
 मैंस्थितहुआहूं ॥ ५५ ॥

❀ आत्मसत्त्वद्वैतस्य सत्तानान्यायतस्ततः ।

आत्मन्येव जगत्सर्वदृष्टदृष्टं श्रुते श्रुतम् ॥ ५६ ॥ ❀

भा० ॥ (यतः) जिसकारणसे (द्वैतस्यसत्ता) द्वैतकीजोसत्ताहै वह (आत्मसत्ताएव) आत्मसत्ताहीहै (नअन्या) भिन्नसत्तानहीं ॥ (ततः)तिसीकारणसे (आत्मनिदृष्टेएव)आत्माकेदर्शनहुएनिश्चयकर (जगत्सर्वदृष्टम्) सर्वजगत्देखाजाताहैऔर [श्रुते] आत्माकेश्रवण हुए (श्रुतं) सर्वजगत्सुनाजाताहै ॥ ५६ ॥

❀सत्यंज्ञानमनन्तंचपूर्णांनन्दविग्रहम् ।

मान्त्रवर्णिकमात्मानंविनिश्चित्यविमुच्यते॥५७॥ ❀

भा० ॥ (सत्यं) सत्यऔर (ज्ञानं) चेतनऔर (अनन्तं) त्रिविध परिच्छेदरहित (च) और (पूर्णांनन्दविग्रहम्) पूर्णआनंदस्वरूप [मान्त्रवर्णिकम्]मंत्रप्रतिपाद्य [आत्मानम्] आत्माको [विनिश्चित्य] साक्षात्कारकरके [विमुच्यते] विशेषकरमुक्तहोताहै ॥ ५७ ॥

❀कर्ममूलमनर्थानांतच्चज्ञानेनवाध्यते ।

क्षीयन्तेचाऽस्यकर्माणितथाचश्रुतिशासनम् ॥५८॥

भा० ॥ [अनर्थानाम्] जन्मादिअनर्थोंका [कर्ममूलम्] मूलजोकर्म है ॥ [तत्च] पुनःवहकर्म [ज्ञानेन] ज्ञानकर [वाध्यते] बाधितहोजाताहै (तथाच) तेसेही [श्रुतिशासनम्] श्रुति मेंकहाहै [चअस्य] औरइसब्रह्मवेत्ताके [कर्माणि] कर्म [क्षीयन्ते] क्षयहोजातेहैं ।इमसेपुनः वहमंसारकोनहींप्राप्तहोता। किंतुस्वस्वरूप भूतमहिमामेंअवस्थितहोताहै ॥५८॥

दो० ॥ ब्रह्मरिपिग्रहत्र्यञ्जलखसंवतत्र्यश्विनमास ।
 सितदशमीं अहिकलानिधिइतियहवाकविलास ॥१॥
 रधुनन्दननन्दनपुरेभयोरंभयहजान ।
 लवपुरमेंपूरनभयोबुधजनकोसुखदान ॥ २ ॥

शा० ॥ यःप्रह्लादपरानुरागवशगः स्तम्भेनृसिंहाकृतिः ।
 त्रेतायामसुरेशनाशनपट्टरामोऽभिसमोवपुः ।
 कंसादीन्हननायविश्वजनकःकृष्णोऽभवद्यः प्रभुः ।
 योवैश्रीयुरुनानकः कलियुगेतंदेवदेवंभजे ॥ १ ॥

इतिश्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यस्वामिप्रकाशाऽनंदयतिवरविरचित
 वेदान्तसिद्धान्तमुक्तावलीमूलकारिकायाःश्री१०८ मन्निर्मलसृता
 वर्तन्सब्रह्मविदुत्तम हरिहरिपूज्यपादशिष्येण युरुदत्तसिंह
 साधुनाविरचिताशब्दार्थबोधिनीभाषाटीकासमाप्ता॥

॥ ओ३म् ॥

॥ श्रीरामार्पणमस्तु ॥



भा० ॥ (यतः) जिसकारणसे (द्वैतस्यसत्ता) द्वैतकीजोसत्ताहै वह (आत्मसत्ताएव) आत्मसत्ताहीहै (नयन्या) भिन्नसत्तानहीं ॥ (ततः)तिसीकारणसे (आत्मनिदृष्टेएव)आत्माकेदर्शनहुएनिश्चयकर (जगत्सर्वदृष्टम्) सर्वजगत्देखाजाताहैऔर [श्रुते] आत्माकेश्रवण हुए (श्रुतं) सर्वजगत्सुनाजाताहै ॥ ५६ ॥

❀सत्यंज्ञानमनन्तंचपूर्णांनन्दविग्रहम् ।

मान्त्रवर्णिकमात्मानंविनिश्चित्यविमुच्यते॥५७॥❀

भा० ॥ (सत्यं) सत्यऔर (ज्ञानं) चेतनऔर (अनन्तं) त्रिविध परिच्छेदरहित (च) और (पूर्णांनन्दविग्रहम्) पूर्णआनन्दस्वरूप [मान्त्रवर्णिकम्]मंत्रप्रतिपाद्य [आत्मानम्] आत्माको [विनिश्चित्य] साक्षात्कारकरके [विमुच्यते] विशेषकरमुक्तहोताहै ॥ ५७ ॥

❀कर्ममूलमनर्थानांतच्चज्ञानेनवाध्यते ।

क्षीयन्तेचाऽस्यकर्माणितथाचश्रुतिशासनम् ॥५८॥

भा० ॥ [अनर्थानाम्] जन्मादिअनर्थोंका [कर्ममूलम्] मूलजोकर्म है ॥ [तच्च] पुनःवहकर्म [ज्ञानेन] ज्ञानकर [वाध्यते] बाधितहोजाताहै (तथाच) तैसेही [श्रुतिशासनम्] श्रुति मेंकहाहै [चअस्य] औरइसब्रह्मवेत्ताके [कर्माणि] कर्म [क्षीयन्ते] क्षयहोजातेहैं ।इससेपुनः वहसंसारकोनहींप्राप्तहोता। किंतुस्वस्वरूप भूतमहिमामेंअवस्थितहोताहै ॥५८॥

दो० ॥ ब्रह्मरिपिग्रहं त्र्यञ्जलखसंवतश्चिन्ममास ।
 सितदशर्मा अहिकलानिधिइतियहवाकविलास ॥१॥
 रघुनन्दननन्दनपुरेभयोरंभयहजान ।
 लवपुरमेंपूरनभयोबुधजनकोसुखदान ॥ २ ॥

शा० ॥ यःप्रह्लादपरानुरागवशगः स्तम्भेनृसिंहाकृतिः ।
 त्रेतायामसुरेशनाशनपट्टरामोऽभिरामोवपुः ।
 कंसादीन्हननायविश्वजनकःकृष्णोऽभवद्यः प्रभुः ।
 योवैश्रीयुरुनानकः कलियुगेतंदेवदेवंभजे ॥ १ ॥

इतिश्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्वामिप्रकाशाऽनंदयतिवरविरचित
 वेदान्तसिद्धान्तमुक्तावलीमूलकारिकायाःश्री१०८ मन्निर्मलसृता
 वर्तन्सब्रह्मविदुत्तम हरिहरिपूज्यपादशिष्येण गुरुदत्तसिंह
 साधुनाविरचिताशब्दार्थबोधिनीभाषाटीकासमाप्ता ॥

॥ ओ३म् ॥

॥ श्रीरामाऽर्पणमस्तु ॥

—०—




अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
कर	०	२	१२	प्र	प्रा	२५	६
दया	द्या	८	१०	है	०	२६	६
क	का	१२	८	ए	ऐ	२७	१३
पूर्वा	पूर्व	१२	१६	जे	तै	३४	१६
पदार्थों	पदों	१३	५	ति	वि	३७	२
ज्ञ	ज्ञा	१६	१२	न्ये	न्यो	३८	२२
०	से	१८	६	ल्य	ल्य	५१	५
य	प	१६	७	स	से	६३	६
विद्वान्	विद्वान्	२०	६	ष्ठा	ष्ठ	६४	८
से	स	१	६	वानी	मानी	६६	८
० सूचकइसलक्षणयुक्त सूत्रोंके				दे	हे	६६	१६
ज्ञ	ज्ञा	५	१६	श	श्य	६८	१३
०	यहां	७	१६	न	स	६८	१५
न	न्	१५	५	घा	धा	७७	१७
ई	इ	१५	१७	तैसी	तैसी	७६	१०
।	र	१६	१५	द	दे	७६	१५
त	त्त	२३	६	०	व	७६	२२
छ	द्धि	२५	३	किया	क्या	८०	१८
प्र	प्रा	२५	८	मकौ	मेंको	८०	१६
ह	हो	२५	८	त्य	स्य	८१	२
				त	त्त	८१	११

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
य	व	८१	१६	क	०	११६	१५
प्र	प्रा	८२	२०	क्तुश्रु	क्तुश्रु	१२५	२
या	पा	८२	२२	त	ता	१२५	११
मेंभी	मेंभी	८८	६	०	है	१२५	१२
कसें	केसं	९२	२१	त	तू	१३६	१६
मेंकौ	मेंकौ	९४	२	द	न	१४३	६
ह	है	९४	६	किंतु	याते	१४४	६
हि	ह	९६	६	अथ	अर्थ	१४६	२
विभवि	विं	९८	१२	ओ	ओ	१४६	११
हि	ह	९८	२२	ओ	ओ	१४६	१८
०	र	१००	१०	यीं	यों	१५०	८
व्यव	व्याव	१००	१२	सस	सम	१५१	७
त्रै	त्रि	१०१	१०	का	क	१६४	६
व्यव	व्याव	१०१	१३	राय	रा	१६४	११
एक	०	१०२	१५	०	ट	१६४	१३
द्वितीय	प्रथम	१०६	२०	तित्त्व	तित्व	१६४	१४
आ	गरा	१०७	१०	०	प्र	१६५	५
की	का	१०८	२२	य	व	१६५	११
ज्ञ	ज्ञा	१११	१५	०	निन	१६६	४
ज्ञ	ज्ञा	११६	१५	द	द	१६६	२१
को	की	११८	६	दृ	दृ	१६८	७
गा	गा	११६	१३	भ्य	भ्य	१६८	२२

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
तैते	तैसे	१६१	११	०	वि	२३१	२२
।	ज्ञा	१७२	१३	छे	ब्छे	२३२	१२
।	ज्ञा	१७५	२२	सतं	स्तं	२३६	२
तन्च	तंत्र	१७७	१४	नि	ति	२३८	६
ह	है	१७८	१	च	चि	२३८	८
०	त	१७८	१७	ण	णि	२४१	१
०	व	१७८	१६	आत्म	आत्मा	२४२	१६
०	को	१८१	२२	त	त्	२४६	५
ता	त	११४	१७	ध्य	व्य	२४१	१
०	र	११४	२२	०	य	२५०	२१
त्प	ल्य	११७	१५	अ	आ	२५५	२२
का	क	२०२	११	घ	ध	२५७	७
मि	मृ	२०१	१	क	के	२५८	६
व	वि	२०१	१५	प	०	२५८	११
व	वि	२०१	११	त्स	त्सा	२५८	१२
त्स	त्सा	२१०	२	सुसु	सुसु	२५८	२१
नि	सि	२१०	२२	प्र	प्रा	२६४	७
मानेहुए	०	२१३	१६	क	०	२६६	१०
०	मानेहुए	२१३	१७	श्य	शय	२७१	१
आ	अ	२१६	१४	र्म	र्भ	२७४	८
अ	गृ	२२७	११	ना	न	२८६	१५
अ	गृ	२२७	१२	न	न्	२९१	१७

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ पंक्ति
त्मा	त्म	२१६ ६	प	पि	३७८ १३
करता	करणाता	२१८ १४	०	य	३७९ ६
त्क्ष	त्यक्ष	२१८ १६	०	प्रथम	३८४ १०
कृत्ते	कर्त्तृ	२१९ २२	प्रथम	०	३८४ ११
त्य	त्प	३११ ७	द्ध	घ	३८६ ५
अ	आ	३१४ २२	सां	सा	३८७ १६
यों	क्यों	३१९ ४	या	क्या	३९१ ६
संभति	संभवति	३२३ १०	म	०	३९३ १
अनुप	अनुपप	३२५ ११	०	अ	३९३ १३
अभे	अभेद	३२५ १७	व	स्व	३९४ ८
अनुग	अनुगत	३२९ १०	०	म	३९४ २२
त्य	त	३२९ १९	बु	बु	३९६ ६
त	ता	३४२ ११	क	०	३९९ ७
द	दू	३४४ १	०	य	४०० १४
त	०	३४८ १५	अया	आय	४०० १६
घोभ	धभे	३४८ १६	प्रा	म	४०० १८
त्मा	त्म	३५० १५	०	वा	४०५ १७
श	श्य	३५२ १०	०	के	४०८ २
०	न	३६३ १३	व्य	व्य	४२५ २२
०	कि	३६८ ११	भंभे	संभवे	४२६ १८
द्वि	द्वि	३७३ १९	यों	यों	४२६ १९
लन	बल	३७७ १८	आनं	अनानं	४३४ १९

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ पंक्ति
०	न	४३८ ४	मुसु	मुसु	५०१ १६
ध्या	ध्या	४४० ६	त्याव	त्यवि	५०२ २२
पा	प्या	४४२ १८	ति	त	५०५ १६
द्वे	द्वे	४४७ ४	न्त	न्ते	५१२ ११
ति	ण	४५३ १३	अ	०	५१३ ११
०	में	४५४ ६	तत्वे	तत्त्वे	५१४ ११
द्वे	द्वये	४५७ ७	चेत	चते	५१४ १८
दु	दु	४५६ १३	भे	भें	५१५ २०
द्वि	द्वि	४६४ ५	मूल कारिका		
स्वा	स्वना	४६४ ६	य	०	३ १२
धि	धि	४६६ ६	प्रात	प्राति	७ ५
द	द	४७६ १२	दा	दो	८ ६
ञ्व	ञ्व	४७७ १५	त्रत्	त्र	६ ३
०	र	४७७ २२	त	त्	६ ७
अ	आ	४८१ १८	ग	ग्	६ ६
माण	णाम	४८३ ३	त	त्	६ १२
त	ता	४८६ १	को	के	१० ३
तृ	द्वि	४८६ १२	०	त्	१५ १४
आर	और	४९७ ६			
त्मा	त्म	४९५ १			
०	मा	४९७ २०			
जम्य	जन्य	५०० १२			